भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ग्रन्थावली

[redacted]

सम्पादक

ओमप्रकाश सिंह

5

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र हिन्दी साहित्य में आधुनिक काल के प्रवर्तक के रूप में समादृत हैं। इनका जन्म इतिहास विख्यात सेठ अमीचन्द के घराने में हुआ था। भारत में अंगरेजों का साथ देने, पर लूट का माल न पाने के कारण अमीचन्द पागल होकर मरे थे। अमीचन्द के बेटे फतेहचन्द कलकत्ता से आकर काशी में बसे। इनके बेटे हर्षचन्द और हर्षचन्द के बेटे गोपालचन्द हुए। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र इन्हीं गोपालचन्द के बेटे थे।

इस अंगरेज भक्त परिवार में भारतेन्दु 'विष बेलि अमी फल लागि रही' की तरह थे। उन्होंने अपना पूरा जीवन साहित्य की श्रीवृद्धि में झोंक दिया। आधुनिक साहित्य की समृद्धि में अद्वितीय योगदान के कारण ही इन्हें 'आधुनिक हिन्दी का जनक' कहा जाता है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एक तरफ तो अपने नाटकों, निबन्धों, लेखों, कविताओं, यात्रावृत्तान्तों, जीवनियों तथा इतिहास और पुरातत्त्व पर लिखी पुस्तक-पुस्तिकाओं के लिए प्रसिद्ध हैं तो दूसरी तरफ प्रारम्भिक हिन्दी पत्रकारिता के विकास में महत्त्वपूर्ण योग देने वाले पत्रकार-सम्पादक के रूप में स्मरणीय हैं। यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की सर्जनात्मक प्रतिभा से ही हिन्दी भाषा, साहित्य और पत्रकारिता को नयी प्रेरणा तथा उचित दिशा-बोध प्राप्त हुआ।

भारतेन्दु साहित्य का अधिकांश भाग अब तक संकलित संगृहीत हो चुका है। यह जरूर है कि ये संकलन अब बाजार में मौजूद नहीं है। ब्रजरत्न दास द्वारा सम्पादित भारतेन्दु ग्रन्थावली अब आसानी से नहीं मिलती। पूरी ग्रन्थावली की योजना बनाकर शिवप्रसाद मिश्र 'रुद्र' केवल पहला खंड ही सम्पादित कर सके थे। हेमन्त शर्मा द्वारा सम्पादित 'भारतेन्दु समग्र' बाजार में उपलब्ध है। भारतेन्दु की अनेक रचनाएं, टिप्पणियां, भूमिकाएं, पत्रों आदि का सम्पादन न होने के कारण अब यह सामग्री दुर्लभ हो गयी है। भारतेन्दु की पत्रिकाएं पुस्तकालयों में उपलब्ध नहीं हैं। अब स्थिति यह हो गयी है कि भारतेन्दु की अनेक रचनाएं प्राप्त होने वाली नहीं हैं। भारतेन्दु की सभी रचनाएं इस ग्रन्थावली में हैं, यह मेरा दावा नहीं है। हां, यह दावा जरूर है कि अब दो-एक रचनाएं और कुछ सम्पादकीय टिप्पणियां ही इस ग्रन्थावली से बाहर हैं।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की यह ग्रन्थावली छह खंडों में तैयार की गयी है। इसमें तमाम ऐसी रचनाएं और टिप्पणियां हैं, जो अब तक कहीं भी संकलित नहीं थीं। ग्रन्थावली में भारतेन्दु साहित्य को इस क्रम से रखा गया है कि अनेक आरोपों-प्रत्यारोपों का स्वतः जवाब मिल जाएगा।

143764

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र
ग्रन्थावली-5

[धार्मिक, पुरातात्त्विक एवं ऐतिहासिक महत्त्व की रचनाएं]

सम्पादक

ओमप्रकाश सिंह

[redacted]

प्रकाशन संस्थान
नयी दिल्ली-110002

143764

प्रकाशक
प्रकाशन संस्थान
4715/21, दयानन्द मार्ग, दरियागंज
नयी दिल्ली-110 002

R
022
सिंह-भ

मूल्य : 4800.00 रुपये (छह खंड)
प्रथम संस्करण : सन् 2008
ISBN 81-7714-312-3
आवरण : जगमोहन सिंह रावत

शब्द-संयोजन : कम्प्यूटेक सिस्टम, दिल्ली-110032
मुद्रक : बी. के. ऑफसेट, दिल्ली-110032

इस खंड में

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ग्रन्थावली का यह पांचवां खंड है। इस खंड में भारतेन्दु की धार्मिक, पुरातात्त्विक और ऐतिहासिक महत्त्व की रचनाएं संकलित हैं। सर्वविदित तथ्य है कि भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने धर्म, पुरातत्त्व और ऐतिहासिक महत्त्व के विषयों पर काफी कुछ लिखा था। वे घोषित वैष्णव थे। तदीय समाज के संस्थापक थे और 'अनन्य वैष्णव वीर' की उपाधि से विभूषित थे। धर्म के सम्बन्ध में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की जो मान्यताएं थीं, उन्हें लेकर वे किसी तरह के ऊहापोह में नहीं थे। यही कारण है कि बिना किसी लाग-लपेट के धर्म सम्बन्धी अपनी मान्यताओं के प्रकटीकरण में उन्हें कोई परेशानी नहीं हुई है।

धर्म, धार्मिक विश्वासों और तौर-तरीकों के बारे में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने प्रचुर मात्रा में लेखन कार्य किया है। संस्कृत-ग्रन्थों के वे गहरे अध्येता थे, भारतीय संस्कृति में उनकी दृढ़ आस्था थी। संस्कृत की भक्ति सम्बन्धी अनेक रचनाओं की उन्होंने टीका लिखी थी। महीनों के माहात्म्य पर, उपासना पद्धतियों आदि पर या मत-मतान्तर सम्बन्धी मान्यताओं पर उन्होंने प्रचुर मात्रा में लिखा था। यहां पर भारतेन्दु के ऐसे लेखन को एक साथ रख दिया गया है।

इसी तरह पुरातात्त्विक महत्त्व के विषयों में भारतेन्दु की गहरी दिलचस्पी थी। उनके जीवन की अनेक घटनाओं से यह स्पष्ट होता है कि उन्हें ऐसी चीजों या सूचनाओं की तलाश रहती थी। पुरातात्त्विक महत्त्व की चीजों के संरक्षण में भी उनकी दिलचस्पी कम न थी। सोने पर सुहागा यह कि काशी नगरी ऐसी चीजों का अक्षय भंडार थी। वहां के मुहल्लों और गलियों में ऐसी तमाम चीजें बिखरी पड़ी थीं। हां, उन्हें देखने की दृष्टि चाहिए और भारतेन्दु इस दृष्टि से सम्पन्न थे। वे वहां के और दूसरी जगहों के अन्य अनेक ऐसे स्थलों के बारे में बखूबी जानते थे। इसी क्रम में पुरातात्त्विक महत्त्व के जिन विषयों पर उन्होंने लिखा था, उसे यहां संकलित कर दिया गया है। भारतेन्दु द्वारा लिखित पुरातात्त्विक महत्त्व के अधिकांश लेख 'हरिश्चन्द्र मैगजीन' से लिये गए हैं। कुछ लेख 'भारतेन्दु समग्र' और ब्रजनन्दन सहाय द्वारा सम्पादित ग्रन्थावली से भी लिये गए हैं।

भारतेन्दु की ऐतिहासिक महत्त्व की रचनाओं में वैविध्य है। एक तरफ तो

उन्होंने रामायण के समय पर बात की है तो दूसरी तरफ अगरवालों और खत्रियों की उत्पत्ति पर। महाराष्ट्र, काश्मीर, उदयपुर और बूंदी के इतिहास पर उन्होंने खोजपूर्ण लेखन किया है। बादशाहदर्पण और कालचक्र जैसी रचनाएं भारतेन्दु की गहरी ऐतिहासिक समझ की परिचायक हैं। उनकी दृढ़ मान्यता थी कि इतिहास की सही समझ न होने के करण ही हम धार्मिक-साम्प्रदायिक आधार पर बंटे हुए हैं। इससे बचने के लिए ही उन्होंने 'पंच पवित्रात्मा' नामक पुस्तक लिखी थी। हालांकि इस पुस्तक में पांच जीवनियां हैं पर उनमें भारतेन्दु की गहरी ऐतिहासिक समझ अनुस्यूत है। तथ्यों को प्रामाणिक ढंग से प्रस्तुत करना वे भलीभांति जानते थे।

इस खंड के सम्पादन में दोहरी कठिनाई थी। एक तरफ तो भारतेन्दुयुगीन शब्दावली, वर्तनी और शब्दों के स्वरूप निर्धारण का कार्य तो कठिन था ही, दूसरी तरफ संस्कृत भाषा के टेक्स्ट से एक नयी मुश्किल आन पड़ी। यह मुश्किल टेक्स्ट निर्धारण में तो कम हुई पर प्रूफ रीडिंग में अधिक। खैर, कठिनाई जरूर बढ़ी पर संस्कृत के टेक्स्ट को प्रामाणिकता प्रदान की गई, इसकी खुशी भी हुई। इस खंड का पाठ मूलग्रन्थों से मिला लिया गया है। आपके सम्मुख शुद्ध पाठ रखने की पूरी कोशिश की गई है। ॥ इति ॥

—ओमप्रकाश सिंह

अनुक्रम

धार्मिक रचनाएं

दूषणमालिका 3
तहकीकात पुरी की तहकीकात 13
पुरुषोत्तममास विधान 23
कार्त्तिक कर्म्मविधि 35
कार्त्तिक नैमित्तिककृत्य 65
मार्गशीर्षमहिमा 85
माघस्नान विधि 101
अथ श्री पुरुषोत्तमपंचक 107
भक्तिसूत्र वैजयन्ती 111
तदीयसर्व्वस्व 137
श्रुति रहस्य 185
श्रीवल्लभीय सर्व्वस्व 191
वैष्णवसर्व्वस्व 203
उत्सवावली 219
अष्टादशपुराण की उपक्रमणिका 229
हिन्दी कुरानशरीफ 257
श्रीवल्लभाचार्यकृत चतुश्लोकी 267
इशुखृष्ट और ईशकृष्ण 271
वैष्णवता और भारतवर्ष 277
श्रीयुगुलसर्व्वस्व 289

पुरातात्त्विक रचनाएं

मणिकर्णिका 333
काशी 335

नागमंगला का दानपत्र 341
शिवपुर का द्रौपदी कुंड 345
प्राचीनकाल का सम्वत् निर्णय 346
कन्नौज का दानपत्र 348
पम्पासर का दानपत्र 350
कन्नौज के राजा का दानपत्र 353
राजा जनमेजय का दानपत्र 355
चित्रकूटस्य रमाकुंड प्रशस्तिः 357
गोविन्ददेवजी के मन्दिर की प्रशस्ति 358
मंगलीश्वर का दानपत्र 360
अकबर और औरंगज़ेब 361
क्वीन्स कॉलिज के फाटकों का लेख 367
सारनाथ आदि के लेख 369
इंडियन म्यूजियम, अशोक की चारदीवारी तथा बोधगया के लेख 371

ऐतिहासिक रचनाएं

अगरवालों की उत्पत्ति 381
महाराष्ट्र देश का इतिहास 387
दिल्ली दरबार दर्प्पण 397
उदयपुरोदय 421
बूंदी का राजबंश 445
खत्रियों की उत्पत्ति 451
काश्मीर कुसुम 465
काश्मीर की संक्षिप्त वंशपरम्परा 471
हर्षदेव 477
रामायण का समय 503
पंच पवित्रात्मा 515
बादशाहदर्पण 539
मुसलमान-राज्यत्व का संक्षिप्त इतिहास 570
कालचक्र 589

धार्मिक रचनाएं

दूषणमालिका

श्री श्रीवल्लभोविजयते।

भूमिका

अथ दयानन्दनामी क्या जानै कौन जाति वा किस आश्रम के कोई नग्न पुरुष सब देशों में भ्रमण करते हुए सनातन सधर्म्म रूपी सूर्य्य को राहु की भांति ग्रास करते हुए मूर्खों और आलस्य से भरे हुए जीवों के हृदय-वस्त्र को अपने रंग में रंगते हुए इसी बहाने अपना नाम लोगों में विदित करते हुए और अपने वाक्य बना के आडम्बर से साधु लोगों का हृदय दहन करते हुए काशी में आए और दुर्गाकुंड निवासियों के सहवासी हुए और उनने जो व्यर्थ उपद्रव किए वह सब पर विदित है। अब उनने एक छोटी सी पुस्तक छपवाकर लोगों पर यह विदित करना चाहा है कि मैं हारा नहीं इस से मैंने ऐसा विचार किया कि ऐसे मनुष्य से सम्भाषण करना उचित नहीं और पत्र द्वारा शास्त्रार्थ करना जिस में सब लोगों पर सदसत् का प्रकाश और हारने जीतने का निश्चय हो जाय इस हेतु यह दूषणमालिका उन के गले में पहिनाई जाती है। उन को उचित है कि इन सब प्रश्नों का प्रति पद उत्तर दें और इसी प्रकार से बराबर पत्र द्वारा शास्त्रार्थ होय और इतने प्रश्नों का एक जीतने के इश्तिहार की भांति उत्तर न दिया जाय क्योंकि इन शब्दों के प्रति शब्द का उत्तर न देने से परास्त समझे जायंगे और प्रश्नोत्तर करते करते जो थक जाय और जिस की बुद्धि में उत्तर की युक्ति न आवै वह हारा समझा जायगा।

हरिश्चन्द्र

1870 ई.
काशी

दूषणमालिका

1. आप ने जो पुस्तक छपवाई है उस में वेद के मन्त्र हैं सो वेद के मंत्र शूद्रों तथा म्लेच्छादिकों के हाथ में देने से आप को दोष हुआ कि नहीं।

2. आप कौन आश्रम और किस जाति के हैं, और किस धर्म्म को मानते हैं जो कहिए कि हम वेदधर्म्म को मानते हैं तो वेदधर्म्म को मानना इस में क्या प्रमाण और ख़्रीष्ट और मुहम्मदी मत को न मानना इस में क्या प्रमाण। जो कहिए कि हम उसी कुल में उत्पन्न हैं इस से यही धर्म्म मानना योग्य है तो आप मूर्त्ति पूजक के वंश में हो किं नहीं?

3. जो आप कहैं कि हम अमुक जाति के थे अब योगी हुए हैं तो आप के पिता पुरुषा सब उसी जाति में उत्पन्न हुए, इस को किसने देखा है और उस में क्या प्रमाण है?

4. जो कहिये कि शिष्टाचार प्रमाण है और हम सुनते आते हैं कि हम अमुक वंशीय हैं तो इसी भांति मूर्ति पूजनादि शिष्टाचार क्यों नहीं मानते?

5. जो कहो कि वेद नहीं है तो दयानंद स्वामी अमुक वंश में भये यह वेद में कहां है?

6. आपने सम्पूर्ण वेद देखा हैं।

7. जो कहिए कि वेद बहुत हैं और लुप्तप्राय हैं इस से सब नहीं देखा है तो वेद में अमुक वस्तु नहीं यह कहना व्यर्थ हो जाता है।

8. जो आप वेद जानते हैं तो उन के भेद कहिए।

9. बारहों उपनिषत् किन किन ब्राह्मणों वा संहिता के अन्त भाग हैं?

10. जो कहिये कि अमुक के हैं तो वे सब वेद के भीतर हैं या बाहर? जो भीतर हैं तो अश्वमेध प्रकरण में जब एक बेर सब वेदों को गिनाए गए तो फिर वेद के बाहरवाली कौन ब्रह्मविद्या थी जिसे पुराण के नाम से चर्व्वित चव्वर्ण किया?

11. अश्वमेध प्रकरण में पुराण शब्द का अर्थ ब्रह्मविद्या है, इस में कौन सा प्रमाण है और बसुरुद्रादि शब्द का अर्थ परमेश्वर ही है लिंगधारी देवता नहीं इस में क्या प्रमाण और वेद में जहां सहस्रनयन वज्रपाणि इत्यादि विशेषण दिए वहां क्या

व्यवस्था और जो व्यवस्था आप करैं वही ठीक इस में क्या प्रमाण?

12. और भी कई स्थान पर पुराण का अर्थ प्राचीन और इतिहास ही है, इस का प्रमाण?

13. ऋग्वेद के कै विभाग हैं और इस में कितनी शाखा और कितनी संहिता और कितने उपनिषत् और कितने ब्राह्मण इत्यादि हैं, कहिए।

14. और इन सब के आदि अन्त के मन्त्र सूचना के हेतु कहिए और इन की पुस्तकें कहां लब्ध होंगी और आप ने इन सबों को किससे अधीत किया है।

15. इसी भांति यजुर्वेद का सब वृत्तान्त कहिए।

16. ऐसे ही सामदेव का कहिए।

17. इसी प्रकार ब्यौरेवार अथर्ववेद का सम्पूर्ण वृत्तान्त कहिए।

18. जो कहियेगा कि एक मनुष्य सब नहीं जान सकता, इस से हम सब नहीं जानते, तो 7वें प्रश्न का दोष आप के माथे पड़ैगा।

19. इन चारों वेदों को कौन स्वर से पढ़ना चाहिए और उन के स्वर की रीति वेद में किस स्थान पर लिखी है?

20. वे सब स्वर जो आर्ष रीति के हैं सोई हैं या कुछ पलट गए। जो कुछ पलट गए तो इन के पलट जाने में क्या प्रमाण और जो वे ही हैं तो उन के वे ही होने में और न पलट जाने में क्या प्रमाण?

21. वेदों के या मन्त्रों के आप जो अर्थ करैं सोई अर्थ है, दूसरा अर्थ नहीं इस में क्या प्रमाण?

22. आपने 11 ग्रन्थ माने उनके अतिरिक्त ग्रन्थ अप्रमाण हैं, इस में क्या प्रमाण?

23. ऋग्वेद का उपवेद आयुर्वेद है इस में क्या प्रमाण और जो आयुर्वेद प्रचलित है वही प्राचीन है इस में निश्चायक क्या?

24. जो कहिए कि उसका प्रमाण उसी में है तो सब पुराणों में भी पुराणों की प्रशंसा है इस हेतु इस में श्रुति प्रमाण दीजिए।

25. चरक आर्ष है इस में श्रुति प्रमाण दीजिए।

26. सुश्रुत आर्ष है इस में श्रुति प्रमाण दीजिए।

27. धनुर्वेद ही यजुर्वेद का उपवेद है इस में क्या प्रमाण?

28. धनुर्वेद का अब कौन ग्रन्थ मिलता है बताइये और जो मिलता है तो वही आर्ष है इस में प्रमाण दिखलाइए?

29. जो कहिए कि धनुर्वेद के ग्रन्थ लुप्त हो गए तो आप इस विषय के अज्ञ ठहरे तो फिर 7 प्रश्न का दोष पड़ा।

30. सामवेद का उपवेद गान है इस में श्रुति प्रमाण दीजिए।

31. गान विद्या के कौन ग्रन्थ आर्ष इस में भी श्रुति पूर्व्वक कहो।

32. अथर्ववेद का उपवेद शिल्प है इस में श्रुति प्रमाण दीजिए।

33. शिल्प विद्या में कौन-कौन ग्रन्थ मिलते हैं और वे श्रुति संमत भी हैं इस में प्रमाण कहिए।

34. चारों उपवेद जो आप न जानते होंगे तो उस विषय के अज्ञ होने से 7 प्रश्न का दोष पडेगा।

35. शिक्षा का कौन ग्रन्थ और उसके आर्ष होने में श्रुति प्रमाण दीजिए।

36. कल्प जो प्रचलित है सोई आर्ष है इस में श्रुति प्रमाण दीजिए और कल्प के कौन ग्रन्थ मिलते हैं कहिए?

37. अष्टाध्यायी आर्ष है इस में श्रुति प्रमाण कहिए।

38. महाभाष्य प्रमाण है इस में श्रुति प्रमाण कहिए।

39. निरुक्त कौन ग्रन्थ प्रचलित है और वही आर्ष भी इसमें युक्ति और प्रमाण दीजिए।

40. छन्द के कौन ग्रन्थ आर्ष हैं और उनके आर्ष होने में क्या प्रमाण और उनके स्वरूप बदलते नहीं इस में श्रुति प्रमाण दीजिए।

41. भृगुसंहिता आर्ष है इस में श्रुति प्रमाण दीजिए और प्रचलित भृगुसंहिता वही प्राचीन भृगुसंहिता है, इस में युक्ति कहिए।

42. ये बारह उपनिषुत् वेदान्त शास्त्र है यह बात कहां लिखी है इस में श्रुति प्रमाण दीजिए।

43. शारीरिक सूत्र आर्ष हैं, इसमें प्रमाण दीजिए और यह वही सूत्र है जो व्यास ने कहा इस में युक्ति कहिए।

44. कात्यायन आदि सूत्र आर्ष हैं इन में प्रमाण कहिए और आदिपद से आप और किसे लेते हैं।

45. योगभाष्य आर्ष है इस में श्रुति प्रमाण दीजिए।

46. मनुस्मृति यह वही है जो मनु ने कहा है। कालबल से बदली नहीं, इस में युक्ति और श्रुति प्रमाण दीजिए।

47. मनुस्मृति में जिन वाक्यों को आप नहीं मानते वे कल्पित हैं, इस में प्रबल युक्ति और श्रुति प्रमाण दीजिए।

48. यही महाभारत महाभारत है इस में क्या प्रमाण और कौन सी युक्ति है?

49. महाभारत में जिन श्लोकों को आप कल्पित मानते हैं उन के कल्पित और बाकी आर्ष होने में कौन प्रमाण और कौन सी युक्ति है?

50. श्रीमद्भगवद्गीता में श्रीभगवान ने जो 'मे' मत् 'मां' इन शब्दों से अपनी भक्ति यही परम धर्म्म है यह कहा है यह प्रमाण है या नहीं?

51. जो कहो कि 'मे' इत्यादि शब्दों का अर्थ आत्मा है तो और सौ स्थान पर जहां ये शब्द आए हैं वहां इनका आत्मा अर्थ क्यों नहीं होता और दूसरे स्थान पर इन शब्दों का अर्थ अपना मुझे होय श्रीमद्भगवद्गीता ही में आत्मा अर्थ होय

इस में प्रमाण और प्रबल युक्ति दीजिए।

52. इन ऊपर के लिये हुए ग्रन्थों को आप सब भांति से जानते हैं कि नहीं। जो सब को न जानियेगा तो सर्वज्ञ न ठहरिएगा और जो सर्व्वज्ञता बिना कोई बात कहिएगा तो 7 प्रश्न का दोष पडैगा।

(इन ऊपर लिखे ग्रन्थों को दयानन्द प्रमाण मानते हैं)

53. शिष्टाचार प्रमाण है कि नहीं।

54. जो कहिए कि जो अविरुद्ध अर्थात् वेद में लिखा है वह प्रमाण बाकी अप्रमाण तो आप नित्य उठ के सब वेद में लिखी हुई बातैं करते हैं तो इन सब बातों को वेद से सिद्ध कीजिए कि आप मट्टी लगाते हैं सो वेद में कहां लिखा है, आप कौपीन धारण करते हैं यह कहां लिखा है, मैं एक दिन आप के दर्शन को गया था उस दिन आप बाजार के लड्डू और गुलाबजामुन खाते थे यह कहां लिखा है और उस दिन आप पीतल की लोटिया में जल पीते थे यह वेद में कहां लिखा है, आप मूर्ति पूजन और पुराणों का निषेध करते हैं यह कहां लिखा है?

55. जो कहिए यह तो मनुष्य की परम्परा प्राप्त ही है तो मूर्त्तिपूजन भी परम्परा प्राप्त है और शिष्टाचार अवश्य माननीय है और भी इसमें यह बात है कि मूर्त्ति पूजन का यद्यपि इस लोक में कुछ फल न हो तथापि यदि परलोक में इसका फल सत्य हुआ तो आप फिर महापाप के भागी हुए और जो न सत्य हुआ तो हम लोगों की कुछ हानि नहीं बल्कि शिष्टाचार मानने से हमारी प्रशंसा ही होगी।

56. ये यथा माम्प्रपद्यन्ते तो स्तथैव भजाम्यहं। इस भगवत् प्रतिज्ञा का क्या आशय है और यथा शब्द के अन्तर देवतादिक और मूर्त्ति आदिक नहीं है, इसमें प्रमाण पूर्व्वक नियम कहिए।

57. कालाग्निरुद्रोपनिषत् और तापनीयादिक श्रुति को आप क्यों नहीं मानते? इस में श्रुति प्रमाण दीजिए।

58. सब त्रैवर्ण के वंश वे ही हैं इस में क्या प्रमाण? युक्ति पूर्व्वक कहिए।

59. सब वेद की पुस्तकें और उनके सब मन्त्र वे ही हैं जो ईश्वर से निकले और इतने काल तक उनका स्वरूप कुछ नहीं बदला और ये सब वे ही आर्ष अक्षर हैं इस में किसी ने कपोल कल्पित मन्त्र नहीं मिलाए इस में क्या प्रमाण और क्या युक्ति है, कहिए।

60. जो कहिए कि परम्परा प्राप्त हैं तो परम्परा प्राप्तता से वेद का तो निश्चय होय और परम्परा प्राप्त मूर्तिपूजन न माना जाय इस में क्या प्रमाण और जो आप कहिए कि हम अपनी बुद्धि से समझते हैं कि ये वेद वे ही हैं तो आप की बुद्धि ठीक है, इसमें क्या प्रमाण और कौन सी युक्ति है।

61. बात सौ पंडित लोगों की मानैं कि एक आप की?

62. जो कहिए कि ऐसा लिखा है कि एक पंडित सौ मूर्ख इतना होता है तो यह सब अज्ञ हैं, हम पंडित हैं, हमारी बात मानो तो इस में क्या प्रमाण है और

क्या युक्ति है कि आप ही पंडित हैं और ये सब अज्ञ हैं?

63. वेद की पुस्तक पर जो कोई लात रख दे तो आप उस को दोष भागी कहैंगे तो वह दोष भागी कैसे होगा क्यौंकि मूर्तियों में तो आप कहते हैं वहां क्या है पत्थर है तो उस वेद की पुस्तक में क्या है कागज और सियाही है जो हमारे हाथ की बनाई है और हमारे हाथ का लिखा है और अक्षर है सो एक प्रकार का संकेत है तो ऐसी जड़ वस्तु के अनादर से क्या दोष है? जो कहिए उन से वे ही मन्त्र समझे जाते हैं जो हमारे धर्म्म स्वरूप हैं इस से आदर के योग्य हैं तो वे मूर्त्तियां जिन से हमारे पूज्य देवता के आकार का स्मरण होता है क्यौं नहीं मानने के योग्य हैं।

64. आप के पिता या किसी पुरुषा का मृत देह या उन के चित्र जिस से उन के स्वरूप का ज्ञान हो या कागज पर उन का नाम लिख के इन सब का अनादर करैं और इन पर बुरी वस्तु डालैं तो आप को बुरा लगैगा कि नहीं क्यौंकि ये सब तो पृथ्वी तत्त्व के अंश और जड़ वस्तु हैं।

दयानन्द जी ने 4 प्रश्न किए थे इस हेतु उन के चार को चार बेर चौगुन कर के चौंसठ प्रश्न किए हैं। इन का उत्तर उन को अक्षरशः देना उचित है।

[रचनाकाल—सन 1870 ई.]

तहकीकात पुरी की तहकीकात

तहकीकात पुरी की तहकीकात

इस के पूर्व्व में कि मैं 'तहकीकात पुरी' पर कुछ अपनी अनुमति प्रकट करूं, मैं उसी तहकीकात पर कुछ विचार करता हूं जिसे देख के लोग उसका संपूर्ण वृत्तांत जान जायं और धोखा न खायं।

अब पहिले ही से विचार कीजिए इसका नाम 'तहकीकात पुरी' है धर्म्म विचार की तो पुस्तक और सबके पहिले फारसी शब्द 'बिस्मिल्ला गलत'। इस को जाने दीजिए पुस्तक से आरम्भ कीजिए।

इस पुस्तक में पहिले ही लिखा है 'काशी धर्म सभा निर्णयः' अब कहिए किस मिती की धर्म्म सभा में निर्णय हुआ है कुछ दिन मिती भी है कि यों ही धर्म्म सभा का ध्यान कर के निर्णय किया गया है। जो हो। आगे उस में लिखा है, यथा नियमित भोगराग वितरण संरभ्रणाय श्री जगन्नाथ मंदिरे श्री जगन्नाथ समकाल स्थापित भैरवोत्पाटनं-कैश्चिद्विद्वेषिभिः कृतनतत्स्थापनाय यत्र श्री मोहनलाल शर्मा पुरींगत्वा इत्यादि। वाह वाह क्या सुन्दर संस्कृत वैयाकरण लोगों के देखने योग्य है क्या कहूं स्थान थोड़ा है नहीं तो प्रति पद उद्धृत कर के दिखा देता। इसका अर्थ यह है कि भैरव की मूर्ति श्री जगन्नाथ जी के समकाल से स्थापित थी सो सब उच्छिन्न हो गई। पंडित जी ने बिना जगन्नाथ माहात्म्य देखे इतना परिश्रम क्यौं व्यर्थ किया भला प्रत्यक्ष नहीं तो सपने में तो देख लेते। हाय मुझे इन के इस व्यर्थ परिश्रम का सोच होता है और सुनिए इस व्यवस्था के नीचे लिखा है कि 'गवर्नमेंट को इस में सहायता देनी उचित है, छिः छिः गवर्नमेंट को क्या पड़ी है कि इस के बीच में कूदेगी। यह दशा तो जितने पृथ्वी पर मंदिर हैं सब में है। जब गवर्नमेंट सब पर हाथ लगावैगी तब इधर भी देखैगी, यह भी हुआ इस के नीचे श्री काशी धर्म्म सभासद पं. बस्ती राम जी को सम्मति है। अब मैं फिर पंडित जी से पूछता हूं कि संसार में जितनी सभा हैं उन की यह रीति है कि लेखाध्यक्ष वा सभापति का अन्त में हस्ताक्षर होता है सो यह धर्म्म सभा के किस नियम में लिखा है कि एक सभासद भी सम्मति कर सकता है और किस सभा में आप ने इस व्यवस्था पर सभासदों में सम्मति ली थी। जो कहिए कि मैंने आप ही लिक्खा है तो बताइए कि धर्म्म सभा के प्रत्येक सभासद को कितनी व्यवस्था देने का अधिकार है और आप की धर्म्म सभा के कितने सभासद

हैं। वाह वाह रे धर्म्म सभा जिसके ऐसे मनमाने नियम, इस को भी जाने दीजिए। इस के आगे एक दूसरी संस्कृत व्यवस्था है जिस में दो प्रश्नों के उत्तर हैं—पहिला जो कोई औद्धत्य से किसी देव मूर्त्ति को उखाड़ दे तो उस को क्या दोष है। इसका उत्तर देने के पहिले मैं पूछता हूं कि वह देव मूर्त्ति स्थापित थी इस में कौन प्रमाण या बिना बात ही कहना कि विश्वनाथ जी के सिर पर एक गरुड़ की मूर्ति थी। उस को शैवों ने तोड़ के फेंक दिया हम फिर बैठावैंगे। जो कहो कि प्राचीन काल से न थी तो किसी को उस का उखाड़ना भी तो अयोग्य है। मैं कहता हूं कि पहिले तो किसी की स्थापना ही में प्रमाण नहीं और जो किसी ने स्थापना किया तो वह योग्य है वा अयोग्य। जैसा किसी शिव जी से बड़े देवता के ऊपर किसी क्षुद्र देवता या किसी विष्णु गण की मूर्ति बल से बैठा दे तो वह योग्य होगी वा अयोग्य। मैं कहता हूं अयोग्य ही होगी। इस में प्रमाण यही है कि किसी बड़े देवता के सिर पर या परम निकट किसी क्षुद्र देवता की मूर्ति अंगी भाव से देखने में नहीं आती। जाने दीजिए इस संस्कृत व्यवस्था का विचार मत कीजिए क्यौंकि इस पर बड़े बड़े लोगों के हस्ताक्षर हैं और आगे विचार कीजिए। इस तहकीकात की हिन्दी के पूर्व्व दो श्लोक लिखे हैं जिनमें पहिले का यह अर्थ है। हम लोग अद्वैतवादी विष्णु, शिव के ईश्वरता का विचार नहीं करते पर जो लोग शिव जी से द्वेष करते हैं उस की हम दुरुक्ति काटते हैं। इस में कोई विष्णु द्वेष की शंका न करै। महाराज अद्वैतवादी जो आप पक्के नहीं है अभी कच्चे अद्वैतवादी है क्यौंकि आप अभी-साहेब लोगों के संग नहीं खाते। हां और यह तो कहिए कि जब आप अद्वैतवादी हैं तब आप को दुरुक्ति और उस का काटना और विष्णु द्वेष की शंका की डर कहां से आई क्यौंकि-का विधिः को निषेधः। स्मरण कीजिए आप जैसे हों उस से मुझे कुछ काम नहीं परन्तु पंडितों की तो समान दृष्टि चाहिए। शुनिचैवश्व पाके च पंडितास्समदर्शिनः आप तो समान दृष्टि वाले हैं। आप से और दुरुक्ति छेदन से क्या काम और फेर यह तो कहिए कि आप श्री जगन्नाथ जी के भोग का प्रबन्ध करते हैं कि शिव विष्णु का भेदाभेद करते हैं। यहां शिव का द्वेषी कौन है जिस की दुरुक्ति काटने को आप प्रवर्त्त भए हैं। जो कहिए कि महन्त और पंडे तो आप उनकी दुरुक्ति काटते हैं कि उनकी जीविका काटते हैं, यह केवल उन की मनोवृत्ति इसी बहाने प्रकट हो गई।

जो हो अब मैं आगे इस पुस्तक की भाषा पर विचार करता हूं। पर इस से कोई यह न समझै कि मैं केवल द्वेष बुद्धि से लेखनी लिये हूं। ऐसा कदापि नहीं क्यौंकि जो विषय कि मैं इस स्थान पर नहीं खंडन करता उन से समझिए कि मेरी सम्मति है, मुझे केवल इस पुस्तक के सब दफों में से केवल 2, 3 और 9 दफे में कुछ कहना है। और शेष पर मैं पूर्ण रीति से सम्मति करता हूं क्यौंकि पुरी के और सब अन्याय उस में ठीक ठीक लिखे हैं। जैसा दूसरे दफे में लिखते हैं कि 'श्री जगन्नाथ जी के मंदिर में रत्न सिंहासन पर प्राचीन काल से 5 मूर्ति स्थापित थीं जैसा श्री

जगन्नाथ 1 बलभद्र 2 सुभद्रा 3 सुदर्शन 4 भैरव 5। और उस मूर्ति को वैष्णवों ने बंगला सन् 1208 में उखाड़ के फेंक दिया।'

तीसरे दफा में फिर लिखते हैं कि पं. बस्तीराम जी के बयान से जाना गया कि मूर्ति पहिले से थी पर किसी भांति उस का अंग भंग हो गया तब महाराज मानसिंह ने जीर्णोद्धार किया। उसी को आचारियों ने तोड़ा। इस दफे में सांप्रत काल के श्री महाराज सवाई रामसिंह की स्तुति भी है।

अब मैं इस का विचार करता हूं, सुनिए। पहिले तो विष्णु के समान कोई देवता बैठ ही नहीं सकता। क्योंकि विष्णु के समान अन्य देव तुलना करने से बड़ा दोष होता है जैसा वशिष्ठ—श्री महाविष्णुमन्येन हीनदेवनदुर्मतिः। साधारणं सकृद्ब्रूते मोंत्यजोर्नात्यजोंत्यजः। और भी वासुदेवं परित्यज्य योन्यदेवमुपासते। जान्हवीतीरे कूपङ्खनति दुर्मतिः।

दूसरे कहीं भैरव और विष्णु को एक संग बिठाने की विधि नहीं है। तीसरे शैव पुराणों से ज्ञात हुआ कि भैरव विष्णु का अवतार है इस से जब साक्षात् विष्णु विराजते हैं तब भैरव का क्या काम है। चौथे जगन्नाथ माहात्म्य के देखने से जाना गया कि जगन्नाथ जी नृसिंह के स्वरूप हैं और नृसिंह से भैरवादिक डरते हैं जैसा इस वाक्य से स्पष्ट है। डाकिनी शाकिनीभूत प्रेतविघ्नपभैरवा। नृहरेर्गर्ज्जनंश्रुत्वा पलायन्तेपराङ्मुखाः।

पांचवें तामस देवताओं की पूजा का निषेध है इस से भैरव सात्विकों के पूजने योग्य नहीं जैसा श्रीमद्भागवत में लिखते हैं। मुमुक्षवोघोर रूपान् हित्वाभूतपतीनथ। नारायण कलाश्शान्त भजन्तिह्यनुसूयवः।

छठे पंचायतन बिना केवल दो देवता की विधि किसी शास्त्र में देखने में नहीं आती।

सातवें विष्णु के आवरण में जहां भैरव की पूजा का विधान है वहां भैरव को बराबर बिठाना नहीं लिखा है। दुर्गा और भैरव की पूजा नीचे करनी लिखी है।

आठवें जो आवरण पूजा में भैरव वहां हैं तो दुर्गा गरुड़ विष्वक्सेन नारदादिक क्यों नहीं हैं।

नवें बहुभक्त होना यह बड़ा दोष है। एकोदेवः केशवो वा शिवो वा। अत्रिस्मृति श्लोक 338। बहुभक्तोदीनमुखो मत्सरीक्रूर बुद्धिमान्। एतेषानैवदातव्यः कदाचिच्च परिग्रहः।

दसवें एक भगवान सर्व व्यापी है उसी की पूजा में सब की पूजा हो जाती है जैसा—श्रुति। एकोदेवस्सर्व्वभूेषु मूढः सर्व व्यापी भूतान्तरात्मा। कर्माध्यक्षस्सर्वभूताधिवासस्साक्षी चेता केवलो निर्गुणश्च।

अनेक नाम उसी के हैं जैसा श्रुति। सुपर्ण विप्राः कवयोवचोभिरेकं संतं बहुधा कल्पयति। जैसा दूसरी श्रुति में। इन्द्रं मित्रम्बरुणमग्निमाहुरथा दिव्यः ससुपर्णो गरुत्मान। और यह एक देव भगवान नारायण ही हैं जैसा श्रुति स्मृति कहती हैं। एको ह्वै

नारायणो आस। सर्वे वेदायत्पद मा मनन्ति। वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यः। मत्तः परतरं नान्य् किंचिदस्ति धनंजय इत्यादि वाक्यों से स्पष्ट है तो अलग भैरव की पूजा अप्रयोजन है। उसी की पूजा में सब की पूजा आ गई। जैसा पुराण में लिखते हैं—यथाहि स्कन्द शाखानान्तरोर्मूलावसेचनं। विष्णोराधनं तद्वत्सर्वेषामात्मनश्चहि। इत्यादि।

ग्यारहवें भैरव शिव के स्वरूप हैं इनकी पूजा बिना भस्म त्रिपुंड के नहीं जैसा बिना भस्म त्रिपुंड्रेण बिना रुद्राक्ष मालया। पूजितोपि महा-देवो न स्यात् पुन्य फलप्रदः इत्यादि और विष्णु पूजन में त्रिपुंड का निषेध है। जैसा आचार माधव के दूसरे अध्याय में बोधायन। ब्राह्मणनामयन्धर्मो यद्विष्णोलिंग धारणं। मदन पारिजात में ब्रह्म-पुराण का वाक्य है उर्द्धपुंड्रन्द्विजः कुर्यात्। ब्रह्मरात्र का वाक्य— धारयेत्क्षत्रियाद्योपिविष्णुभक्तोभवेद्यदि। निर्णय सिंधु मदन पारिजात। पृथ्वी चंद्रोदय में भी—उद्र्ध्वंचतिलकंकुर्य्यान्नकुर्य्याद्वि त्रिपुंड्रकं! आचारार्क कमलाकराह्निक में भी उद्र्ध्वपुंड्रविहीनस्य स्मशान सदृशम्मुखं। सार संग्रह में। ब्रह्मरात्र में भगवान का वाक्य योनधारयते मर्त्यो मामकं चिन्हमीदृशं। तं त्यजामि दुरात्मानंमदीयाज्ञाऽतिलंघिनं। तो इन वाक्यों से वैष्णवों और विष्णुपूजन में ऊर्ध्वपुंड्र अवश्य आया 'भस्मी भवति तत्सर्व्वमूर्ध्वपुंड्रेविनाकृते' और भैरव के पूजन में त्रिपुंड्र की नित्यता तो अब कहिये एक कालावच्छिन्न पूजा कैसे कीजिएगा और एक साथ पर भैरव विष्णु की मूर्ति कैसे बैठाते हो।

बारहवें भैरवादिक उग्र देवता की पूजा तो सब लोगों को करनी ही अयोग्य है फिर उन को रत्न सिंहासन पर बिठाना और जगन्नाथ जी के संग पूजा करना कहां हो सकता है जैसा श्रीमद्भागवत में। मुमुक्षवो घोररूपान् हित्वा भूतपतीनथ। नारायण कलाश्शान्ता भजन्तिह्यनुसूयवः ॥25॥ रजस्तमः प्रकृतयस्सम—शीलाभजन्तिवै। पितृभूत प्रजेशादीन श्रियैश्वर्य्य प्रजेप्सवः॥26॥ तथा सार संग्रह में वशिष्ठस्मृति। रजस्वलांसूतिकांच श्वानंकाकं चगर्द्दभं। कुक्कुटम्विडबराहञ्च पूपपाखंडिनन्तथा। वहिर्देवालकं स्पृष्ट्वा सबासाजलमाविशेत्। गणेशंभैरवं दुर्ग्गा रुद्रादीनुग्रदेवतान्। योर्चयेद्भक्तिमान्विप्रो सवैदेवा लकस्मृतः। और भैरवादिकों के पूजन से वैसी ही गति मिलती है परम पद नहीं मिलता है जैसा श्रीमुख से आज्ञा करते हैं। 7 अध्याय में। कामैत्तस्तैर्हृतज्ञानाः प्रपद्यन्तेऽन्य देवता। तंतंनियममास्थाय प्रकृत्यानियताः स्वया ॥20॥ योयो यांयांतनुं भक्तः श्रद्धयार्चितुमिच्छति। तस्तस्याचलीं श्रद्धां तामेवविदधाम्यहं ॥21॥सतायाश्रद्धयायुक्तास्याराधनमीहते। लभतेच ततः कामान् मयैव, विहितान्हितान् ॥22॥ अंतवत्तुफलंतेषां तद्भवत्यल्पमेधसः। देवानदेवयजोयान्ति मद्भक्तायान्तिमामपि ॥23॥ इससे मोक्ष की कामनावाले को दूसरे देवता की पूजा सर्वथा अयोग्य ही है और मोक्ष दान शक्ति केवल भगवान् ही को है जैसा आचार प्रकाश से मत्स्यपुराण का वचन। आरोग्यं भास्करादिच्छे् धनमिच्छेत् हुताशनात्। ज्ञानम्महेश्वरादिच्छेन्मोक्ष मिच्छेज्जनार्दनात्॥ दक्ष स्मृति में भी अंत दशा में। योगमभ्यसमानस्य ध्रुवंकश्चिद्दुपद्रवः। विद्यावायदिवाविद्या शरणन्तु जनार्द्दनं। श्रुति भी कहती है यो ब्रह्माणं विदधाति पूर्व्व यो वै वेदांश्च प्रहिणोति तस्मै तंहदेवमात्म बुद्धि प्रकाशं

मुमुक्षुवैशरणमहम्प्रपद्ये। इससे एकान्त चित्त होकर भगवतसेवा ही मुख्य है। बिना अनन्यता के फल नहीं होता जैसा श्री मुख से गाते हैं। 9वें अध्याय में। महात्मनस्तुमाम्पार्थ दैवीं-प्रकृतिमाश्रिताः। भजन्त्यनन्य मनसो ज्ञात्वाभूतादिमव्ययं॥13॥ अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्य्युपासते। तेषान्नित्याभियुक्तानां योगक्षेमंवहाम्यहं॥2॥ अपिचेत्सु दुराचार भजतेमामनन्यभाक्। साधुरेव समन्तव्यस्सम्यग्व्यवहितोहिसः॥30॥ तो इन बातों से यह निश्चय है कि लोग मोक्ष चाहने वाले सर्व्व देव मय सर्वाराध्य मुमुक्षु शरण श्रीकृष्णचंद्र ही की पूजा उपासना करैं और आग्रह कलुष से कलंकित चित्त को इन वाक्यों से स्वच्छ करैं और जो किसी प्रकार की कामनादिक हो तो अपने घर में चाहैं जिसकी पूजा करैं। श्री जगन्नाथ जी के रत्न सिंहासन पर तो भैरव बैठाने का मनोर्थ चित्त से दूर करैं क्योंकि उपास्य एक भगवान कृष्ण चंद्र ही हैं दूसरा सर्वथा नहीं है जो इतने पर भी मेरी बात न मानै तो इन वाक्यों के समूह को कान खोल के सुनैं। सार संग्रह में प्रजापति स्मृति। नारायणं परित्यज्य हृदिस्थं प्रभुमीश्वरं। योन्यमर्च्चयतेदेवः परबुध्यासपापभाक्॥ वशिष्ठ भी। नारायणः पर ब्रह्म ब्राह्मणानांहिदैवत। भारत में भी। ब्रह्मणंशितिकठं च याश्चान्याः देवतास्मृताः। प्रतिबुद्धान सेवन्ते यस्मात्परिमितम्फलं। पद्मपुराण में भी नारायणः परब्रह्म विप्राणां दैवतं हरिः। स एवपूज्योविप्रानां पुरुषर्षभनेतरः। नान्यदेवंनिरीक्षेत नान्यदेवञ्चपूजयेत्। न चान्यंप्रणा मेद्विप्रो नान्यदायतनम्विशेत्। वाराह पुराण में—यत्सत्वंसहरिर्देवो हरिस्तत्परमंपदं। सत्वं रजस्तमञ्चेति तृतयंचैतदुच्यते। और कहां तक लिंगपुराण में भी प्रसिद्ध वाक्य देख लीजिए। उसका प्रसाद कौन लेगा क्यौंकि वह तो रुद्रांश है और रण्यगर्भोरसजा तमसा शंकरः स्वयं। सत्वेनसर्वगोविष्णुस्सर्व्वात्मा सदसन्मयः। सात्विकैस्सेव्यविष्णुस्तामसैरेव शङ्करः। राजसैस्सेव्यते ब्रह्मा संकीर्णैश्च सरस्वी। इस वाक्य को दोनों कानों से सुनिए। यौद्धोरुद्रस्तथावायुर्दुर्गागणपभैरवाः। यमस्कन्दौनैर्ऋतश्च तामसा देवता स्मृताः। फिर पद्म पुराण में। यक्षराक्षसभूताद्या कूष्माण्डागणभैरवाः। नार्चनीयासदादेवि विष्णु लोकमभीप्सभिः। रजस्तमोभिभूताना-मर्च्चनं प्रतिबिध्यते। रौरवन्नरकं यान्तियक्षभूतगणार्च्चना्। और भैरव तो कापालिकों के देवता हैं उसका पूजन तो वैष्णव स्मार्त सब को निषिद्ध है जैसा महामेरुतन्त्र में सम्प्रदाय देवता प्रसंग में। कुलाचार्य्यस्तुवामानां सिद्धानाम्मुण्डऽमालिनी। तथा कापालिका देवता भैरव स्वयं। और कापालिकों के देवता भैरव हैं यह प्राचीन काव्यों में भी प्रसिद्ध है जैसा प्रबोध चन्द्रोदय नाटक में तीसरे अंक में कापालिक का वाक्य। मस्तिष्काक्तबसाभिधारित महामांसाहुतिर्जुह्वतां। वह्नौ ब्रह्म कपाल कल्पित सुरापानेननः पारणा। सद्यः कृत्त कठोर-कंठ बिगलत्कीलालधारोज्वलै। रच्योंनः पुरुषोपहार बलिभिर्देवो महाभैरवः॥1॥ इस हेतु सतोमय श्रीकृष्ण की उपासना करो और वह आग्रह छोड़ो।

तेरहवें जो भैरव रत्नसिंहासन पर बैठेगा तो फिर श्रीकृष्णातिरिक्त और देवता का विशेष करके रुद्र का प्रसाद निर्माल्य ग्रहण का निषेध है। जैसा नारायण भट्ट कृत धर्म प्रवृत्ति में। पवित्रम्विष्णुनैवेद्यं सुर सिद्धर्षिभिस्मृतं। अन्यदेवस्य नैवेद्यम्भुक्त्वाचान्द्रायणं चरेत्। तथा स्कंदपुराण के मार्गशीर्ष माहात्म्य में भगवद् वाक्य। अन्येषान्देवतानजांच

न गृह्लीयाच्चभक्षितं। अभक्तानांचपक्वान्नं भुक्त्वा वैनरकं व्रजेत्। फिर स्मृत्यर्थ सार में और धर्मसिंधु के तीसरे परिच्छेद में। शैव सौर निर्माल्य भक्षणोचान्द्रायणी·। प्रायश्चितेन्दु शेषर में भी। रुद्रनिर्म्माल्यस्पर्श सचैलस्नानं शैव सौर निर्म्माल्य भक्षणो चान्द्रं। इत्यादि। स्मृत्यर्थ सार में भी तथा श्राद्ध हेमाद्रि में स्कंदपुराण का वाक्य। स्पृष्ट्वारुद्रस्य निर्म्माल्यं बाससाआप्लुतश्शुचिः। प्रायश्चित्त मयूष में भी कालिका पुराण का यही वाक्य यों है। रुद्रस्यनिर्म्माल्यं सबासाआप्लुतश्शुचिः। शिवपुराण में भी शिव का वाक्य अनर्हम्ममनैवैछस्पत्रम् पुष्पम्फलज्जलं। इत्यादि वाक्यों से स्पष्ट है कि जो भैरव रत्न सिंहासन पर बैठेगा तो फिर महा प्रसाद कोई न लेगा और फिर भैरव की तृप्ति भी इन अन्नों से नहीं होनी है उसकी तो मदिरा और मांस से होती है बिना वह दिये भैरव कभी न तृप्त होगा और जो मांस मदिरा दोगे तो भगवान विष्णु वहां न रहैंगे। देखो भैरव का मांस प्रिय होना कुल धर्म सार तंत्र के वाक्य से स्पष्ट है। किं वेदैः किं पुराणैश्च किम्मन्त्रैश्चैवतर्प्पितः। चतुःषष्ट्युपचारैः किंतथास्तवनादिभिः। बिनाकुलोक्तविधिना रुदोभूतगणेश्वरः। न प्रीयते महादेवो भैरवः कुल कैरवः। शोणशोणितधारेण विमलेनपलेन च। प्रस्वदमेदपंकेन तथास्थिनिचयेन च। छिंधिभिन्धीतिवाक्येन खड्गनांचालनेनच। मुण्डानांकर्त्तनेनैव रुण्डानांनर्त्तनेनहि। चटाचटेतिशब्देन अंगानङ्कन्दुकेनच। मदिराया प्रवाहेन मधुकुंडेनवै तथा। वाल्वीसरितयाचैव मासवेनाधरस्यच। श्यामानांदर्शनेचैव विलोमभगचुम्बने। मैथुनेमानिनीनां च कान्यानां कुचमर्द्दने। मुद्राणां भक्षणेचैव मत्स्यानाम्भोजनेनहि। गायकानान्तुगानेन नर्त्तकीनर्त्तनेन च। मृदंगवेणुढक्कानां वाद्येनतुमुलेन च। जय भैरव घोषेण प्रोतस्याच्चण्डिकापतिः। विनापञ्चमकारेण कुलस्यविधिनाविना। सर्व्वतः पूजितश्चापि नस्यात्तस्यफलप्रदः। तस्मात्सर्व्व प्रयत्नेन मांसमुद्रादिभिश्शिवं। नित्यं मां पूजयेद्देवि भैरवं भय नाशनं। इति।

अब हम इन बातों को छोड़ के शुद्ध जगन्नाथमाहात्म्य से इस व्याख्या का विचार करते हैं। श्री जगन्नाथ माहात्म्य दो प्रचलित हैं एक तो छोटा लीलादि महोदय धृत सूत संहिता का दूसरा स्कन्दपुराण से उत्कल खंड का। अब इन दोनों में तो कहीं रत्न सिंहासन पर भैरव का नाम नहीं है। इसके अतिरिक्त मनोरथ ग्रन्थ धृत मिथ्या पुराण के आग्रह खंड के भैरव माहात्म्य में कहीं लिखा हो तो लिखा हो। अब इस स्थान पर मैं इन वाक्यों को लिखता हूं, सुनिए। सूत संहिता के माहात्म्य में तो रत्न सिंहासन पर सात मूर्ति लिखी हैं जैसा बलभद्र 1 सुभद्रा 2 श्री जगन्नाथ 3 चक्र 4 माधव 5 लक्ष्मी 6 सत्यभामा 7 'एवं सप्तविधामूर्ति ब्रह्मणः करयोगतः' 'अयंसप्तविधामूर्तिविधायभगवान् प्रभुः। अवतीर्णसस्वयंवेद वेद्यश्चचतुर्भुजः।' इत्यादि वाक्य प्रसिद्ध हैं और उस के पांचवें अध्याय के अन्त भाग में और छठे अध्याय के पूर्व में लिखे हैं, पुस्तक लेके देख लीजिए। अब उत्कल खंड के माहात्म्य का वाक्य सुनिए। 5 अध्याय। एकदारुसमुत्पन्नाचतुर्द्धासम्भविष्यति। फिर उसी अध्याय में। नीलाचलगुहासंस्थै विभ्रद्दारुमयम्बपुः। अस्तिलोकोपकाराय बलेन च सुभद्रया। सुदर्शनेन

R
0८१
सिंह-५५

चक्रेण दारुनानिर्म्मितेन च । फिर सातवें अध्याय में । तदादेशाद्दारुमयं प्रभोलिङ्गचतुष्टयं । फिर अठारहवें अध्याय में चतुर्मूर्तिस्सभगवान् यथापूर्वमयोदितः । फिर भी । ऋक्वेदरूपीहलधृक् सामरूपोनृकेशरी । यनुसृष्टिस्त्वियम्भद्राचक्रमाथर्व्वनस्मृतं । भेदेचतुर्द्धा भेष्टो यमेकराशिरभेदतः । इत्यादि इस इतने बड़े माहात्म्य में पुस्तक भर में भैरव का नाम कहीं नहीं है केवल एक स्थान पर पूजाङ्ग में क्षेत्रपालादि को बलिदान लिखा है दूसरे तीसवें अध्याय में मार्कंडेय की यात्रा में मार्कंडेय के मन्त्र में भैरव शब्द पड़ा है और कहीं नहीं है फिर रत्नसिंहासन पर भैरव बैठना कहां रहा।

और जो आप कहते हैं कि पूजा शाक्त मत से होनी चाहिए यह तो केवल आप की तोतली बोली है नहीं तो विष्णु पूजा शाक्त रीति से आप न कहते और जगन्नाथ जी में वैष्णवी विधि तो उक्त माहात्म्य के इस वाक्य से सिद्ध हैं। यत्सर्व्वम्वैष्णवङ्कर्म्म प्रतिमारिक कल्पनं । फिर । तेतुवैष्णवमार्ग्गोक्ताः महाभोगोपृथग्विधा इत्यादि और भैरवी विधि और भैरव देवता तो चांडालों के अत्यजों के हैं। इस बात को सुन के क्रोध मत कीजिए। ये कृत्य कल्पतरु नामक प्रसिद्ध स्मार्त्त ग्रन्थ के धरे हुए देवी पुराण के वाक्य को सुनिए। वर्णाश्रसविभेदेन देवास्थाप्य तु नान्यथा। ब्रह्मातुब्रह्मणैस्थाप्यो गायत्री सहितः प्रभुः । चतुर्वर्णैस्तथा विष्णुः प्रतिष्ठाप्यस्सुखार्थिभिः । भैरवोपियथावर्णैरन्त्यजानान्तथामतं॥ इत्यादि ।

महाप्रसाद को सब लोग छूते हैं, कुछ विचार नहीं करते, यह सोचना तो केवल कूपमंडूकता है क्योंकि दक्षिण में बरदराज शेषशायी इत्यादि जितने वैष्णव तीर्थ हैं सब में क्षेत्र के भीतर स्पर्शास्पर्श नहीं मानते तो कहिए अब कहां आप भैरवी क्षेत्र बनाइएगा। थोड़ा सा द्रव्य व्यय कर के दक्षिण की यात्रा कीजिए तो महाप्रसाद की महिमा प्रगट हो और प्रसाद की ऐसी महिमा तो श्राद्ध सिद्ध ही है इस में कौन सा सन्देह हो सकता है जैसा सार संग्रह में पद्मपुराण का वाक्य। विष्णोर्न्निवेदितानन्यो नश्नातिस्पर्शशंकया। वायसोविड्वराहश्च विष्टायांजायतेकृमिः॥ तथा नारायणभट्ट कृत धर्मप्रवृत्ति में–पवित्राम्विष्णुनैवेद्यं सुर सिद्धर्षिभिः कृतं। नैवेद्य भक्षणा विचार ग्रन्थ में पद्मपुराण का वाक्य। रमाब्रह्मादयो देवास्सनकाद्याशुकादयः। श्री नृसिंह प्रसादोयं सर्व्वेगृह्णान्तु देवता॥ उत्कल खंड के माहात्म्य के 38 वें अध्याय में। पाकसंस्कारकर्तृणां सम्पर्काचनदुष्यति। पद्मायास्यन्निधानेन सर्व्वेतैशुचयस्मृताः॥ सार संग्रह में वाराह पुराण। नैवेद्यं जगदीशस्य चान्नपानादिकन्तुयत्। भक्ष्याभक्ष्यविचारस्तु नास्तितद्भोजनेद्विजाः। ब्रस्मवन्निर्विकारं हि यथाविष्णुस्तथैव सः। विचार ये प्रकुर्वन्ति ते नश्यन्तिनराधमाः। उत्कल खंड के माहात्म्य के 31 अध्याय में। चिरस्थमपिसंशुद्धं नीतंचदूर देशतः। नीलाद्रिमहोदय के माहात्म्य के अध्याय में। किमुक्तेनाचबहुनाचाण्डालस्पृष्टमेवहि। कुक्कुरस्यमुखाद्भ्रष्ट तग्राह्यन्दैवतैरपि। तस्मात्तदन्नं सहसा प्राप्तमात्रतदाग्नियात्। विचारस्यनकर्तव्या न कर्तव्या कथंचन। [redacted] देशान्तरे जनोयस्तु भक्षेत्प्रतिदिनंद्विजा। सर्वपापवि तत वाक्यों से आग्रहियों का

हृदयान्धकार नाश होय और साधु लोगों को आनन्द होय और सर्व्वात्मा भगवान संसार की रक्षा करै।

सज्जन लोग इस में की दुरुक्तियों को क्षमा करैं क्योंकि यह तो प्रति उत्तर है स्वयं कथन नहीं है।

हरि ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः

[सन 1871 ई. में लाइट प्रेस बनारस से प्रकाशित]

वृहन्नारदीय पुराण से संगृहीत

पुरुषोत्तममास विधान

('तत्कर्महरितोषं यत् सा विद्या तन्मतिर्यया')

पुरुषोत्तममास विधान

मृगमद मुद्रित चारु कपोलम्। मृगमद मोचन लोचन लोलम्॥
मृगमद मेचक सुन्दर रूपम। नौमि हरिं वृन्दावन भूपम्॥1॥

दोहा

श्री पुरुषोत्तम राधिका, चरण शरण रहु आय।
कटि जैहैं भवभोग भय, रोग कुसोग बलाय॥1॥
जिन पुरुषोत्तम नाम सुभ, सहस कहे रचि गाय।
सो पुरुषोत्तम बदन बपु, वल्लभ होहु सहाय॥2॥
पुरुषोत्तम पद जुग सुमिरि, धरि हिय परम अनन्द।
पुरुषोत्तम की विधि लिखी, पुरुषाधम हरिचन्द॥3॥

एक समय अनेक देवर्षि राजर्षि शिष्य प्रशिष्य समेत लोकोपकारशील स्वयम्, तीर्थरूप तीर्थपाद चरणारविन्द मधुव्रत तीर्थ यात्रा के मिस नैमिषक्षेत्र में एकत्र हुए और वहां महाभागवत सूत पौराणिक भी आए। सूतजी से ऋषियों ने इस असार संसार के पार जाने का उपाय और श्रीकृष्ण की लीला का प्रश्न किया। सूतजी बोले मैं अनेक तीर्थों में भ्रमण करता हुआ श्रीगंगाजी के किनारे भगवान श्री शुकदेव जी के मुखारविन्द से श्री मद्भागवत रूपी मधुर सुधारस का पान कर के आया हूं, जो आज्ञा हो वह कथा आप लोगों को सुनाऊं। ऋषियों ने कहा, सहज उपाय से भगवत् प्राप्ति का जो साधन हो वह कहिए। सूतजी बोले—एक दिन भगवान नारद जी चारों ओर घूमते हुए बद्रिकाश्रम में भगवान नारायण के पास गए और यही प्रश्न किया कि भगवान् कलियुग के जीवों को स्वल्प साधन में भगवान की प्राप्ति का उपाय कहिए। यह सुन कर भगवान नारायण ने पुरुषोत्तम मास का माहात्म्य कहा। पांडवों को वन में अत्यन्त क्लेशित देख कर उन के दुख के छूटने के हेतु भगावन श्री कृष्णचन्द्र ने पुरुषोत्तम माहात्म्य सुनाया। सब मासों के एक एक देवता नियत हैं, इस से जब पहले मलमास पड़ा तब उस का कोई देवता नहीं था और इस कारण लोग उसकी निन्दा करते थे। मलमास इस बात से अत्यन्त दुखी होकर भगवान के पास गया और भगवान वैकुंठनाथ उस को लेकर गोलोक में गए। पूर्ण परब्रह्म सच्चिदानन्द घन

भगवान श्रीकृष्ण चन्द्र मलमास का दुख सुन कर बोले, मैं पुरुषोत्तम तेरा स्वामी हूं अतएव तेरा नाम आज से पुरुषोत्तम मास होगा और सब मासों से तेरा फल विशेष होगा। जो साधन लोग कार्त्तिकादि पुण्य मासों से अनेक वर्ष में भी कर के फल न पावैंगे, वह पुरुषोत्तम मास में थोड़े साधन में फल पावैंगे।

भगवान श्रीकृष्ण धर्म्मराज जी से कहते हैं कि पूर्व्व जन्म में जब द्रौपदी मेधावी ऋषि की कन्या थी तब दुर्वासा ऋषि ने इसे पुरुषोत्तम मास का व्रत करने को कहा था परन्तु स्त्री बुद्धि से इस ने पुरुषोत्तम मास का अनादर किया और शिवजी का व्रत कर के पांच बेर पति मांग कर तुम पांचों को पति पाया, परन्तु पुरुषोत्तम के अनादर से बारह वर्ष की विपत्ति भोगनी पड़ी। सो तीन महीने पीछे पुरुषोत्तम मास आनेवाला है, सो इस में तुम लोग अवश्य व्रत करना।

भगवान श्रीकृष्णचन्द्र की आज्ञानुसार पांडवों ने पुरुषोत्तम मास का व्रत किया और विपत्ति से छूट कर भगवान की कृपा से उत्तरोत्तर अनेक शुभ फल पाया।

नारद जी से भगवान नारायण बोले—पूर्व काल में सत्ययुग में हैहय देश का राजा दृढ़धन्वा राजा था। पुष्करावर्त्त नगर उस की राजधानी थी और विदर्भ नगर के राजा की कन्या गुणसुन्दरी उस की रानी थी। चारुमती कन्या और चित्रवाक्, चित्रबाहु, मणिमान् और चित्रकुंडल यह चार पुत्र थे। इस राजा का पुण्य प्रताप ऐश्वर्य सब महान अखंडित था। एक दिन राजा को अकस्मात् चिन्ता हुई कि किस पुण्य से हम को ऐसा अखंड ऐश्वर्य मिला। इसी चिन्ता में राजा शिकार खेलता हुआ एक मृग के पीछे गहन वन में घुस गया और एक वृक्ष के नीचे थक कर विश्राम करने लगा, तो वहां एक सुग्गे को यह पढ़ते हुए सुना—

पाय जगत में सकल सुख, करत न तत्त्व विचार।
असत् विषय मूल्यो फिरत, किमि लहिहै भव पार॥3॥

सुग्गे को मनुष्य की बोली बोलते और परम तत्त्व के पूर्वोक्त वाक्य को पढ़ते सुन कर राजा को अत्यन्त आश्चर्य और मोह हुआ। यहां तक कि घर आकर सब कामकाज छोड़ कर रात दिन उसी सुग्गे का वाक्य सोचने लगा। एक दिन भगवान वाल्मीकि इस राजा के घर पर आए और राजा ने बड़ी नम्रता से सुग्गे के वाक्य का आशय पूछा। वाल्मीकि जी ध्यान करके बोले—पूर्व जन्म में आप ताम्रपर्णी के निकट सुदेव नामक ब्राह्मण थे। अपनी स्त्री गौतमी सहित पुत्र के हेतु आप ने भगवान की बड़ी तपस्या किया। यद्यपि सुदेव के सात जन्म में भी पुत्र नहीं लिखा था तथापि भगवान के वाक्य से गरुड़नी ने सुदेव को पुत्र का वरदान दिया। सुदेव ने शुकदेव नामक सर्व्वगुण सम्पन्न पुत्र पाया परन्तु देवल ऋषि के कहे हुए फल के अनुसार बारह वर्ष की अवस्था में वह बावली में डूब कर मर गया। सुदेव पुत्र-शोक से अत्यन्त व्याकुल हो कर रोने लगा और यहां तक कि संयोग से उस समय आया हुआ पुरुषोत्तम

मास उस ने बिना अन्न जल के बिता दिया। इस व्रत से भगवान प्रसन्न हो कर प्रकट हुए और कहा कि तुम ने हठ कर के पुत्र का वरदान लिया था, इस में धनुश्शर्मा ब्राह्मण की भांति अन्त में दुख पाया। अब हमारे प्रसाद से तुम्हारा पुत्र जी जाएगा और तुम बारह हजार वर्ष पुत्र सहित इस शरीर में रह कर अन्त में सुधन्वा नामक राजा होगे और चार पुत्र, एक कन्या और राज्य का अखंड ऐश्वर्य पाओगे। सो उसी पुण्य से आप ने यह राज्य और ऐश्वर्य पाया है।

वह सुग्गा आप का पूर्व जन्म का शुकदेव नामक पुत्र था, जो आप को राज काज में मग्न देख कर आप के हित के हेतु सुग्गे के रूप में आप को चेतावनी का शुभ वाक्य सुना गया।

वाल्मीकि जी से अपने पूर्व्व जल्म का चरित्र और पुरुषोत्तम का विचित्र माहात्म्य सुनकर सुधन्वा ने उन से पुरुषोत्तम मास की विधि पूछी। ऋषि बोले—पुरुषोत्तम मास में ब्राह्म मुहूर्त्त में उठ कर शौच कर के और दंत धावन कर के तीर्थ में स्नान करे फिर गोपी चन्दन का ऊर्ध्व पुंड्र और शैव हो तो त्रिपुण्ड्र तिलक लगा कर भुजा पर शंख चक्र का चिह्न लगा कर सन्ध्या करैं। फिर पवित्र स्थान में चावल का अष्ट दल बनाकर उस पर सोने, चांदी, तामे पीतल वा मिट्टी का कलश रक्खे, कलश में इन मन्त्रों से जल भरैं—

कलशस्य मुखे विष्णुः कंठे रुद्रः समास्यितः।
मूले तत्रय स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः॥
कुक्षौतु सागराः सर्व्वे सप्तद्वीपा वसुन्धरा।
ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदस्सामवेदो ह्यथर्वणः।
अङ्गैस्तु सहिताः सर्वे कलशं हि समाश्रिताः॥
गंगा गोदावरी चैव कावेरी च सरस्वती।
आयान्तु मम शान्त्यर्थमू दुरितक्षयकारका॥

इस मन्त्र से कलश की प्रतिष्ठा कर के, कलश का पूजन कर के एक तन्दुल पूर्णपात्र कलश के ऊपर रक्खें। उस पर पीला कपड़ा बिछा कर श्री राधिका सहित भगवान की सोने की मूर्त्ति स्थापन कर के पुरुषोत्तम बीज और नीचे लिखे हुए मन्त्रों से प्राणप्रतिष्ठा करैं।

ॐ तद्विश्रीः परमम्पदं सदा पश्यन्ति सूरयः दि़वीव चक्षुराततं स्वाहा
ॐ अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाः क्षरन्तु अस्यै देवत्व संख्यायै स्वाहा

जो वेद मन्त्र का अधिकार न हो तो श्री राधिका सहित पुरुषोत्तमाय नमः स्वाहा—इस मन्त्र से प्राणप्रतिष्ठा कर के नीचे लिखी हुई विधि से पूजा करैं।

आगच्छ देवे देवेश श्रीकृष्ण पुरुषोत्तम।
राधया सहितश्चात्र गृहाण पूजनं मम॥1॥

श्रीराधिका सहित पुरुषोत्तमायनमः आवाहनं समर्पयामि इत्यावाहनं।

नाना रत्नसमायुक्तं कार्त स्वरविभूषितं।
आसनं देव देवेश गृहाण पुरुषोत्तम॥2॥

श्री राधा. आसनं.

गंगादि सर्व्व तीर्थभ्यो मया प्रार्थनयाहृतं।
तोयमेतत्मुखस्पर्शं पाद्यार्थं प्रतिगृह्यताम्॥3॥

इति पाद्य

नन्दगोपगृहेजातो गोपिकानन्दहेतवे।
गृहाणार्घ्यं मया दत्तं राधया सहितो हरे॥4॥

इत्यर्घ्यं

गंगाजलं समानीतं सुवर्णकलशस्थितं।
आचम्यतां हृषीकेश पुराणपुरुषोत्तम॥5॥

इत्या चमनं

कार्य्यं मे सिद्धिमायातु पूजिते त्वयिधातरि।
पञ्चामृतैर्मया नीतै राधिकासहितो हरे॥6॥

इति स्नान

पयोदधिघृतं गव्यं माक्षिकं शर्करा तथा।
गृहाणेमानि द्रव्याणि राधिकानन्ददायक॥7॥

इति पंचामृत स्नानं

योगेश्वराय देवाय गोवर्द्धनधराय च।
यज्ञानांपतये नाथ गोविन्दाय नमोनमः॥8॥
गंगाजलः समम् शीतं नन्दितीर्थसमुद्भवं।
स्नानं दत्तं मया कृष्ण गृह्यता नन्दनन्दन॥9॥

इति पुनः स्नान

पीताम्बर युगं देवसर्वकामार्थसिद्धये।
मया निवेदितं भक्त्या गृहाण सुरसत्तम॥10॥

इति वस्त्रं आचमनञ्च

दामोदर नमस्तेस्तु त्राहि मां भवसागरात्।
ब्रह्मसूत्रं सोत्तरीय गृहाण पुरुषोत्तम॥11॥

उपवीतं आचमनं

श्रीखण्ड चन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरं।
विलेपनं सुरश्रेष्ठ प्रीत्यर्थं प्रतिगृह्यतां॥12॥

चन्दनं

अक्षतास्तु सुरश्रेष्ठ कुम्कुमाक्ताः सुशोभिताः।
मया निवेदिता भक्तया गृहाण पुरुषोत्तम॥13॥

इत्यक्षतान्

माल्यादीनि सुगन्धीनि मालत्यादीनि वै प्रभो।
मया हृतानि पूजार्थं पुष्पाणि प्रतिगृह्यतां॥14॥

इति पुष्पाणि।

ततोङ्ग पूजा

नन्दात्मजो यशोदायास्तनयः केशिसूदनः।
भूभारोत्तारकश्चैव ह्यनन्तो विष्णुरूपधृक्॥15॥
प्रद्युम्नश्चानिरुद्धश्च श्रीकण्ठः सकलास्त्र दृक्।
वाचस्पतिः केशवश्च सर्वात्मेति च नामतः॥16॥
पादौ गुल्फौ तथा जानू जघने च कटी तथा।
मेढ्रं नाभिं च हृदयं कंठं वाहू मुखं तथा॥17॥
नेत्रे शिरश्च सर्वाङ्ग विश्वरूपिणमर्चयेत्।
पुष्पाण्यादायक्रमशश् चतुर्थ्यंतैर्जगत्पतिं॥18॥
प्रत्यंग पूजां कृत्वातु पुनश्च केशवादिभिः।
चतुर्विंशति मन्त्रैश्च चतुर्थ्यंतैश्च नामभिः॥19॥

पुष्पमादाय प्रत्येकं पूजयेत् पुरुषोत्तमं।।20।।
वनस्पति रसो दिव्यो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः।
आघ्रेयः सर्व देवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यतां।।21।।

इतिधूपं

त्वं ज्योतिः सर्वदेवानां तेजसां तेज उत्तमं।
आत्म ज्योतिः परंधाम दीपोयं प्रतिगृह्यतां।।22।।

इति दीपं

नैवेद्यं गृह्यतां देव भक्तिं मे ह्यचलां कुरु।
ईष्सितं मे वरं देहि परत्र च परागति।।23।।

इति नैवेद्यं

मध्ये पानीयं उत्तरापोशनं।
गंगाजलं समानीतं सुवर्णकलशस्थितं।
आचम्यतां हृषीकेश त्रैलोक्यव्याधिनाशन ।।24।।

इत्या चमनं

इदं फलं मया देव स्थापितं पुरतस्तव।
तेन मे सफलावाप्तिर्भवेज्जन्तमनि जन्मनि।।25।।

इति श्रीफलं

गन्ध कर्पूर संयुक्तं कस्तूर्यादि सुवासितं।
करोद्वर्तनकं देव गृहाण परमेश्वर।।26।।

इति करोद्वर्तन

पूंगीफल समायुक्तं सकर्पूरं मनोहरं।
भक्तया दत्तं मया देव ताम्बूलं प्रतिगृह्यतां।।27।।

इति ताम्बूलं

हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीजं विभावसोः।
अनन्त पुण्यफलद मतः शान्तिं प्रयच्छमे।।28।।

इति दक्षिणां

शारदेंदीवरश्यामं त्रिभङ्गललिताकृतिं।
नीराजयामि देवेशं राधया सहितं हरिं॥29॥

इति नीराजनम्

रक्षरक्ष जगन्नाथ रक्ष त्रैलोक्यनायक।
भक्तानुग्रहकर्त्ता त्वं गृहाणस्मत् प्रदक्षिणां॥30॥

इति प्रदक्षिणां

यज्ञेश्वराय देवाय तथा यज्ञोद्भवाय च।
यज्ञानान्पतयेनाथ् गोविन्दाय नमो नमः॥31॥

इति मन्त्र पुष्पम्

विश्वेश्वराय विश्वाय तथा विश्वोद्भवाय च।
विश्वस्यपतये तुभ्यं गोविन्दाय नमो नमः॥32॥

इति नमस्कारान्

मन्त्रहीनेति मन्त्रेण क्षमाप्य पुरुषोत्तम।
स्वाहान्तैर्नाम मन्त्रैश्च तिल होमो दिनेदिने॥33॥

इति

पूजन करके हविष्यान्न भोजन करे। मांस और मादक वस्तु, द्विदल, तैल पक्व बड़ी उर्द, मसूर इत्यादि वस्तु न खाय। भाव दुष्ट, क्रिया दुष्ट और शब्द दुष्ट वस्तु का वर्जन करें। पराए का द्रोह, अन्न, स्त्री और धन से दूर रहैं। बिना तीर्थ परदेश न जाए, निन्दा न करैं, जम्मीरी नीबू, बासी अन्न, ब्राह्मण का बेचा हुआ रस, भूमि से उत्पन्न लवण, ताम्रपात्र में रक्खा हुआ गव्य, चमड़े के बर्तन का जल, ये सब मांस के तुल्य हैं। रजस्वला, म्लेच्छ, पतित, व्रात्य और देव ब्राह्मण द्रोही से पुरुषोत्तम में सम्बन्ध न रक्खे। इनका और कौवे का, सूतकवाले का छूआ हुआ अन्न और दो बेर पकाया हुआ तथा जला हुआ अन्न न खाए। प्याज, लहसुन, मोथा, छत्रांक, गाजर, मूली, सिंगरी इत्यादि भी न खाए। प्रतिपदा से पूर्णिमा तक कूष्मांड आदिक का वर्जन करैं और जो वस्तु छोड़े वह वस्तु ब्राह्मण को दान दे। केवल दूध पीकर वा घी पीकर फलाहार कर के वा अयाचित खाकर उपवास, एक नक्त वा नक्त व्रत जो बन पड़े और बिना कष्ट निबहै वह करैं। शालिग्राम का पूजन करैं, श्रीमद्भागवत सुनैं और

सायंकाल को दीपदान करैं।

राजा दृढ़धन्वा ने वाल्मीकि ऋषि से दीपदान का माहात्म्य पूछा, इस पर वाल्मीकि जी ने कहा–प्राचीन काल में सौभाग्य नगर में एक चित्रभानु नाम राजा था और चन्द्रकला नामक उस की रानी थी। यह राजा धन धान्य सब प्रकार से सुखी था। एक दिन इस के यहां अगस्त ऋषि आए और राजा ने अपने पूर्व जन्म का वृत्तान्त पूछा। मुनि ने कहा–तुम बड़े दुष्ट मणिग्रीव नाम शूद्र थे और यह रानी तुम्हारी पतिव्रता स्त्री थी। कुकर्म में सब धन खो कर शिकार खेल कर अपनी जीविका करते थे। एक दिन घोर वन में मार्ग भूले हुए उग्रदेव नामक थके ब्राह्मण की तुम लोगों ने बड़ी सेवा किया और उन से अपना दुःख निवेदन किया। इस से प्रसन्न हो कर ऋषि ने पुरुषोत्तम मास में दीपदान करने का उपदेश किया और मणिग्रीव ने वन में इंगुदी के तेल से दीपदान किया, जिससे भगवान ने प्रसन्न हो कर तुम को वरदान दिया और इस जन्म में तुम को सब सुख मिलें।

दीपदान का माहात्म्य सुनकर दृढ़धन्वा ने पुरुषोत्तम के उद्यापन की विधि पूछा। वाल्मीकि जी ने उत्तर दिया कि कृष्णपक्ष की चतुर्दशी वा नौमी वा अष्टमी को उद्यापन करना। तीस सपत्नीक ब्राह्मण को न्यौता देना और पंचधान्य को सर्वतोभद्र बनाकर चारों दिशा में चार कलशों पर वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध का स्थापन करना। बीच में नित्य पूजित श्री राधिका सहित श्री पुरुषोत्तम का स्थापन करना। एक वैष्णव ब्राह्मण को आचार्य्य और चार ब्राह्मणों को जप की वरणी देकर चारों दिशा में दीपदान कर के चतुर्व्यूह का जप करना और भगवान की पूजा करना। पंचरत्न और फल से भगवान को भक्तिपूर्वक अर्घ्य देना।

अर्घ्य मन्त्रः

देवदेव नमस्तुभ्यम्पुराणपुरुषोत्तम।
गृहाणार्घ्यम्मयादत्तं राधया सहितो हरे॥
वन्दे नवघनश्यामं द्विभुजं मुरलीधरम्।
पीताम्बरधरं देवं सराधं पुरुषोत्तमम्॥

फिर तिल से श्री राधिका सहित पुरुषोत्तमायनमः स्वाहा इस मन्त्र से होम करना और तर्पण मार्जन के पीछे भगवान का नीराजन करना।

मन्त्रः

नीराजयामि देवेशमिन्दीवरदलच्छविम्।
राधिकारमणंप्रेम्णा कोटिकन्दर्प्पसुन्दरम्॥

फिर क्षण भर भगवान का ध्यान करना–

अन्तर्ज्योतिरनन्तरत्नरचिते सिंहासने संस्थितम्।
वंशीनादविमोहित व्रजवधू वृंदावने सुन्दरम्॥
ध्यायेद्राधिकया सकौस्तुभमणि प्रद्योतितोरस्थलम्।
राजद्रलंकिरीटकुण्डलधरं प्रत्यग्र पीताम्बरम्॥

फिर पुष्पांजलि देना और प्रणाम करना।

मन्त्रः

नौमि नव्यघनश्यामं पीतवाससमच्युतम्।
श्रीवत्सभासितोरस्कं राधिकासहितं हरिम्॥

फिर ब्रह्मा को पूर्णपात्र दान करके गोदान करना और घृतपात्र, तिलपात्र, उमा महेश्वर, सोहागपिटारी, वस्त्र, पद इत्यादि दान करना और जो श्रीभद्भागवत् करे तो बड़ा ही पुण्य है। पुरुषोत्तम मास में श्री भागवत दान की समता अन्य दान नहीं कर सकते।

और तीस कांसे की थाली में तीस तीस पूआ रख कर ब्राह्मणों को दान देना और भी अन्न दानादि जो बन पड़े, वह देना। अमावस्या की रात को जागरण करके सबेरे पूजा पीठ और सोने की मूर्त्ति दान देना।

मन्त्रः

श्रीकृष्ण जगदाधार जगदानन्ददायक।
ऐहिकामुष्मिकानूकामान् निखिलान् पूरयाशु मे॥1॥
मन्त्रहीनम् क्रियाहीनम् विधिहीनम् जनाद्र्दन।
व्रतं सम्पूर्णतां यातु त्वत्प्रसादाद्दयानिधे॥2॥

फिर जो वस्तु का त्याग किया हो, उस का यथाक्रम दान करना। यथा—नक्त व्रत में भोजन, अयाचित में स्वर्णदान, धात्री स्नान में दधि, फल न खाया होय तो फल, तेल छोड़ा होय तो घी, घी छोड़ा होय तो दूध, अन्न छोड़ा होय तो अन्न, भूमि शयन लिया होय तो सेज, पत्र भोजन किया होय तो घी चीनी, मौन लिया होय तो घण्टा, तिल और सोना। क्षौर व बनवाया हो तो दर्पण, जूता छोड़ा होय तो जूता, नमक छोड़ा होय तो घी, गुड़, तेल और नमक, दीपदान का नेम लिया होय तो तांबे का दिया और सोने की बत्ती और एकान्तर उपवास किया होय तो वस्त्र सहित आठ कुम्भ दान करैं। पुरुषोत्तम मास में एक अन्न भोजन करने का बड़ा पुण्य है।

वाल्मीकि जी से पूर्व जन्म का वृत्तान्त और पुरुषोत्तम माहात्म्य सुन कर राजा

स्त्री सहित वन में जाकर तपस्या कर के अन्त में गोलोक में गया।

नारायण नारद जी से कहते हैं कि कन्दर्प नामक ब्राह्मण बड़ा पापी था, जन्म भर में केवल एक वैश्य को पुरुषोत्तम की पूजा करते दर्शन किया था और कोई पुण्य नहीं किया था। इसी पाप से एक जन्म में प्रेत और दूसरे में वह बन्दर हुआ परन्तु पुरुषोत्तम के पूजा के पुण्य से इन्द्रनिर्मित मृगतीर्थ पर उसका निवास हुआ और किसी समय पुरुषोत्तम मास में एक बेर उस ने दुःखित हो कर तीन दिन तक कुछ न खाया, न पीया और उसी तीर्थ पर प्राण त्याग किया और पुरुषोत्तम के प्रभाव से अन्त में गोलोक गया।

नारद जी के प्रश्न पर श्रीनारायण दिनचर्य्या कहते हैं।

प्रातःकाल की क्रिया समाप्त कर के पंचभूत देव पितृ बलि देकर अतिथि को भोजन कराकर दो वस्त्र से अकेले एक पात्र में पूर्वा पर आचमन संयुक्त भोजन करना। भोजन के पीछे पान खाकर भगवान के ध्यानपूर्वक भक्तिशास्त्र का विचार करना। तीसरे पहर धर्म्माविरुद्ध व्यवहार करना। सांझ को तीर्थ पर देह शुद्धि पूर्वक सन्ध्या कर के दीपदान कर के भगवान का स्मरण कर के शयन करना।

इस के पीछे नारायण ने पतिव्रता के धर्म्म और पुरुषोत्तम की विशेष महिमा कहा। और विधान किया कि–

मन्त्रः

गोवर्धनधरम् वन्दे गोपालम् गोपरूपिणम्।
गोकुलोत्सवमीशानम् गोविन्दम् गोपिकाप्रियम्॥1॥

इस मन्त्र का पुरुषोत्तम मास में बारम्बार जप करना।

दोहा–श्री पुरुषोत्तम पद सुमिरि, धारि हृदय आनन्द।
यह पुरुषोत्तम विधि लिखी, कविवर श्री हरिचन्द॥1॥
प्रान पियारे प्रेमनिधि, प्रेमिन जीवन प्रान।
तिनके पद अरपन कियो, यह मलमास विधान॥2॥

श्री वृहन्नारदीय पुराण से संगृहीत पुरुषोत्तम
माहात्म्य समाप्त हुआ।

[रचनाकाल सन 1872 ई., प्रकाशन काल सन 1873 ई.]

कार्त्तिक कर्म्मविधि

लोकानाम्पापरूपप्रबलतमतमोनाशनायाशु शस्तं
हन्तुं तीक्ष्णं त्रितापं पटुतरमनिशं यः परं दुःखहेतुः॥
दातुं शक्तं त्रिलोकैरसुलभममृतं कार्त्तिकं कर्म्म वैधं
राकाज्योत्स्नास्वरूपं विलसतु जगति श्री हरिश्चन्द्रचन्द्रात॥1॥

श्रीराधाकृष्णाय नमः

श्रीराधादामोदराय नमः

कार्त्तिक कर्म्मविधि

जै जै श्री नन्दनन्द श्रीराधारसबस रसिक।
दामोदर ब्रजचन्द गोपीनाथ अनाथगति।।1।।
रासरसिक राधारमण मनमोहन घनश्याम।
कोटि कोटि मनमथ मथन सुन्दर सब सुखधाम।।2।।
बदौं कातिक मास दामोदर प्रिय पुण्यप्रद।
नासत यम की त्रास हिय हुलास कर अतिसुखद।।3।।

श्लोकः

श्रीकृष्णं करुणाकरं कविवरं कान्तापतिं कामदं
गोपीनां नयनोत्सवं गुणानिधिं गो-गोपवृन्दप्रियं।
राधाराधितविग्रहं रतिरतं रामानुजं रासगं
मानार्थं मथुराधिपं मनहरं मान्यं मनोज्ञं भजे।।1।।

इस संसार में जन्म ले के मनुष्यों को भगवत्स्मरण और स्नान-दानादिक करना यही मुख्य धर्म्म है, क्यौंकि बड़े बड़े पर्वों में स्नान-पूजा-व्रत-दानादिक करने से पाप नाश होते हैं और मुक्ति मिलती है और पर्व और व्रत इत्यादि तो अनेक हैं और नित्य ही स्नानादिक का बड़ा फल है परन्तु मार्गशीर्ष, कार्त्तिक, माघ, वैशाख सब महीनों में उत्तम गिने जाते हैं, तिस में भी कार्त्तिक-स्नान का फल विशेष है। यह बात सब शास्त्र में प्रसिद्ध है कि कार्त्तिक के महीने में काशी में पंचगंगा-स्नान का बड़ा पुण्य है।

यथा काशीखंडे

कार्त्तिकेमासि मे यात्रा यैः कृता भक्तितत्परैः।
बिन्दुतीर्थे कृतं स्नानं तेषाम्मुक्तिर्न दूरतः।।1।।

शतं समास्तपस्तत्वा कृते यत्प्राप्यते फलं।
तत्कार्त्तिके पंचनदे सकृत्स्नानेन लभ्यते॥2॥
कार्त्तिके बिन्दुतीर्थे यो ब्रह्मचर्य्यपरायणाः।
स्नानमर्धोदिते भानौ भानुजात्तस्य भी कुतः॥3॥

यथा पाद्मे, भार्गवार्चनचन्द्रिकायां च

आश्विनस्य तु मासस्य या शुक्लैकादशी भवेत्।
कार्त्तिकस्य ब्रतानीह तस्यां वै प्रारभेत्सुधीः॥4॥

यथा विष्णुरहस्ये

प्रारभ्यैकादशीं शुक्लामाश्विनस्य तु मानवः।
प्रातः स्नानम्प्रकुर्वीत यावत् कार्त्तिकभास्करः॥5॥

यथा मदनपारिजाते विष्णुः, तथा नारदीये च

कार्त्तिकं सकलं मासं नित्यस्नायी जितेन्द्रियः।
जपन् हविष्यभुक् शान्तः सर्व्वपापैः प्रमुच्यते॥6॥

इन वाक्यों का सारांश अर्थ यह है कि आश्विन शुक्ल एकादशी से आरम्भ कर के जो कार्त्तिक में जितेन्द्रिय होकर और व्रतादिक कर पंचगंगा में प्रातः स्नान करता है वह मुक्तिभागी होता है और उस को यमराज का भय नहीं रहता और भी इस का महाफल लिखते हैं।

तथा पुराणसारोद्धारे, नारदीये च

प्रयागे माघमासे तु सम्यक् स्नानस्य यत्फलम्।
तत्फलं कार्त्तिके काश्यां पंचनद्यां दिनेदिने॥7॥
कृते धर्म्मनदं नाम त्रेतायां धूतपापकं।
द्वापरे बिन्दुतीर्थं च कलौ पंचनदं स्मृतम्॥8॥
अव्रतः कार्त्तिको येषां गतो मूढधियामिह।
न तेषाम्पुण्यलेशोपि दुष्टानां शूकरात्मनां॥9 इति॥

माघ महीने में प्रयाग नहाने का जो फल है वह कार्त्तिक में पंचगंगा में एक दिन स्नान से मिलता है। सत्ययुग में धर्म्मनद, त्रेता में धूतपापा, द्वापर में बिन्दुसर, कलियुग में पंचगंगातीर्थ ही मुख्य हैं। जो लोग कार्त्तिक में स्नान-व्रतादिक नहीं करते वे मूढ़बुद्धि हैं, उन्हें किसी पुण्य का फल नहीं होता।

यथा पद्मपुराणे कार्त्तिकमहात्म्ये सत्यभामां प्रति श्री श्रीकृष्ण वाक्यम्

कार्त्तिके मासि ये नित्यं तुलासंस्थे दिवाकरे।
प्रातः स्नास्यन्ति ते मुक्ताः महापातकिनोपि वा॥10॥
स्नानं जागरणं दीपं तुलसीवनपालनं।
कार्त्तिके ये प्रकुर्वन्ति ते नरा विष्णुमूर्त्तयः॥11॥
कार्त्तिकव्रतिनां पुंसां विष्णुवाक्यप्रणोदिताः।
रक्षां कुर्वन्ति शक्राद्याः राजानं किंकरा यथा॥12॥
विष्णुप्रियं सकलकल्मषनाशनं यत्
सर्वत्र धर्म्मधनधान्यविवृद्धिकारि।
ऊर्जव्रतं सनियमं कुरुते मनुष्यः
किं तस्य तीर्थपरिशीलनसेवया च॥13॥
ते धन्यास्ते सदापूज्यास्तेषां च कुलमेव च।
विष्णुभक्तिपरा ये स्युः कार्त्तिकव्रतकादिभिः॥14॥

तुला के सूर्य्य में कार्त्तिक में जो लोग प्रातः स्नान करते हैं वे महापातकी हों तो भी मुक्त होते हैं। स्नान, जागरण, दीपदान, तुलसीपूजन इत्यादिक जो लोग करते हैं वे सब विष्णु के स्वरूप हैं। कार्त्तिक के व्रती लोगों की इन्द्रादिक देवता ऐसी रक्षा करते हैं जैसे राजा की सेवक रक्षा करै क्योंकि उन को श्रीविष्णुभगवान की यही आज्ञा है। विष्णु का प्यारा, कल्मष नाश करने वाला, और सब धर्म्म धान्य धन को बढ़ाने वाला कार्त्तिक व्रत जो लोग करते हैं उन को तीर्थों में घूमने से और उस की सेवा से क्या है अर्थात् वह सब कुछ कर चुके। वह और उन के कुल धन्य हैं और पूज्य हैं जो कार्त्तिक में व्रतादिक से विष्णु की भक्ति करते हैं।

तथा सनत्कुमारसंहितायां कार्त्तिकमाहात्म्ये

न कार्त्तिकसमं धर्म्ममर्थ्यं नो कार्त्तिकात्परं।
न कार्त्तिकसमं काम्यं मोक्षदानं च कार्त्तिकात्॥15॥
तस्मात्सौरैश्च गाणेशैः शाक्तैः शैवैश्च वैष्णवैः।
कर्त्तव्यं कार्त्तिकस्नानं सर्व्वपापापनुत्तये॥16॥
न कार्त्तिकसमो मासो न काशीसदृशी पुरी।
न प्रयागसमं तीर्थं न देवः केशवात् परः॥17॥
प्रसंगाद्वा बलाद्वीपि ज्ञात्वाऽज्ञात्वा कृतन्तु यत्।
स्नानं कार्त्तिकमासस्य न पश्येद्यमयातनां॥18॥
तावद्गर्ज्जन्ति पापानि ब्रह्महत्यादिकानि च।
न कृतं कार्त्तिके स्नानं यावज्जन्तुभिरादरात्॥19॥

तीर्थराजादितीर्थानि प्राप्ते कार्त्तिकमासके।
स्नानार्थं पंचगंगान्तु समयान्ति न संशयः॥20॥
दुर्लभो मानुषो देहो दुर्लभा काशिका पुरी।
तत्रापि कार्त्तिके मासि पंचगंगं सुदुर्लभम्॥21॥

कार्त्तिक के समान न कोई धर्म्म है, न अर्थ है, न काम है, न मोक्ष है, न दान है। सब एक ही हैं इस से शैव, वैष्णव, शाक्त और गाणपत्य सब को कार्त्तिक स्नान करना चाहिए। काशी के समान कोई पुरी नहीं, प्रयाग के समान कोई तीर्थ नहीं। केशव के समान कोई देवता नहीं और कार्त्तिक के समान कोई महीना नहीं है। संग साथ से वा बल से, जाने वा बिना जाने, भी जिस ने कार्त्तिकस्नान किया है उस को यम का भय नहीं है। ब्रह्महत्यादिक पाप तभी तक गर्ज्जना करते हैं जब तक जीव ने कार्त्तिकस्नान नहीं किया। प्रयागादिक सब तीर्थ कार्त्तिक में पंचगंगा स्नान को आते हैं। एक तो मनुष्य का देह दुर्लभ है, दूसरे काशी पुरी दुर्लभ है तिस में भी कार्त्तिक महीने में पंचगंगा तीर्थ अति दुर्लभ है।

और भी इस का महिमा बहुत लिखा है।

यथा पद्मपुराणे स्वर्गखंडे तृतीयाध्याये
तथा नारदीये रुक्मांगदोपाख्याने

प्रातः स्नानं नरो यो वै कार्त्तिके श्रीहरप्रिये।
करोति सर्व्वतीर्थेषु यत् स्नात्वा तत्फलं लभेत्॥22॥

सब तीर्थों में स्नान करने का जो फल है वह कार्त्तिक में प्रातः स्नान से मिलता है।

तथा तत्रैव विंशतितमेध्याये

श्रेष्ठं विष्णुव्रतं विप्र तत्तुल्या न शतं मखाः।
कृत्वा व्रत व्रजेत् स्वर्गं बैकुण्ठं कार्त्तिकव्रती॥23॥

श्रीविष्णु भगवान का व्रत सब व्रतों में उत्तम है, सौ यज्ञ भी उस के समान नहीं हैं, जो लोग इस कार्त्तिक का व्रत करते हैं वे व्रती लोग वैकुंठ नामक स्वर्ग में जाते हैं।

तथा वायुपुराणे

यदीच्छेद्विपुलान् भोगान् चन्द्रसूर्य्यग्रहोपमान्।
कार्त्तिकं सकलम्प्राप्य प्रातःस्नायी भवेन्नरः॥

कार्त्तिक का माहात्म्य सब शास्त्रों में बहुत कहा है, कहां तक लिखें। इस कार्त्तिक में एक व्रत और भी होता है, जिस का नाम मासोपवास है।

यथा हेमाद्रौ विष्णु रहस्ये

व्रतमेतत्तु गृह्णीयाद्यावत्त्रिंशद्दिनानि तु।
आश्विनस्यासितेपक्षे एकादश्यामुपोषितः॥24॥
वासुदेवं समुद्दिश्य कार्त्तिके सकले नरः।
मासं चोपवसेद्यस्तु स मुक्तिफलभाग् भवेत्॥25॥
कृत्वा मासोपवासं च विचार्य्य विधिवन्मुने।
कुलानां शतमुद्धृत्य विष्णुलोकं व्रजेन्नरः॥26॥ इत्यादिक

यह कार्त्तिक का मासोपवास व्रत अत्यन्त पवित्र है। इस की विशेष विधि व्रतार्क में लिखी है। कार्त्तिक का माहात्म्य सूचन कर के अब कुछ उस के नियम लिखे जाते हैं जिस से विदित हो कि कार्त्तिक व्रत कब से करना और किस किस वस्तु का त्याग करना इत्यादि। कार्त्तिक स्नान आश्विन सुदी 11 एकादशी से प्रारम्भ करना, इस के वाक्य ऊपर लिख आए हैं।

यथा स्कान्दे तथा ब्रह्मपुराणे च

वैष्णवं वैष्णवानां यद्व्रतंविष्णुपदप्रदं।
आश्विनस्यासितेपक्षे एकादश्यां द्विजोत्तमैः।
वैष्णवैः कल्पनापूर्वम्प्रारम्भोस्य विधीयते॥27॥

विष्णुपद का देने वाला यह वैष्णवों का परम वैष्णव व्रत कुंवार सुदी एकादशी से वैष्णव लोगों को कल्पना पूर्वक प्रारम्भ करना चाहिए तथा कार्त्तिक में खाने पीने का संयम और ब्रह्मचर्य्य तो अवश्य ही करना चाहिए।

प्रमाणं नारदीये

अव्रतेन क्षतेद्यस्तु मासं दामोदरप्रियं।
तिर्य्यग्योनिमवाप्नोति नात्र कार्य्याविचारणा॥28॥

तथा काशीखंडे

ऊर्ज्जे यवान्नमश्नीयाद्द देवान्नमथवा पुनः।
वृन्ताकं शूरणं चैव शूकशीर्वीश्च वर्जयेत्॥29॥

स्कन्दे

कार्त्तिके वर्ज्जयेत्तद्वद्विदलं बहुबीजकं।
माष मुद्ग मसूरांश्च चणाकांश्च कुलत्थकान्॥30॥

कार्त्तिक का महीना जो लोग बिना व्रत के बिताते हैं वे पशु योनि पाते हैं। कार्त्तिक में यव और पवित्र हविष्यान्न खाना और भंटा, सूरन और सेम इत्यादि नहीं खाना। कार्त्तिक में द्विदल, बहुत बीया वाली वस्तु, उड़द, मोठ, मसूर, चना और कुलथी इत्यादि खाना।

तथा नारदीये स्कान्दे च

कार्त्तिके वर्जयेत्तैलं कार्त्तिके वर्जयेन्मधु।
कार्त्तिके वर्जयेत्कांस्यं कार्त्तिके शुक्लसन्धितं॥31॥

कार्त्तिक में तेल, मधु, कांस्यपात्र में भोजन, बासी अन्न, और खारे शाक ये सब वर्जित हैं।

कार्त्तिक के व्रत में ब्रह्मचर्य्य और हविष्यभोजन ही मुख्य है जैसा कि ऊपर लिख आए हैं "जपन्हविष्यभुक् शान्तः"। अब हविष्य में कौन कौन वस्तु है सो लिखते हैं और कार्त्तिक में किस किस वस्तु का त्याग है वह भी लिखते हैं।

यथा सनत्कुमारसंहितायां कार्त्तिकमाहात्म्ये

तथा पुराणसारोद्धारे च पुराणसमुच्चयेपि भविष्योक्ते
हैमांतिकं सिता स्विन्नं धान्या मुद्गास्तिला यवा॥

कलाय कंगु नीवारा वास्तुकं हिलमोचिकां।
षष्ठिका कालशाकं च मूलकं केमुकोत्तरं॥32॥
कन्दं सैंधव सामुद्रो लवणो दधि सर्पिषी।
पयानुद्धृतसारं च पनसाम्रौ हरीतकी॥33॥
कदली लवली धात्री फलान्यगुड़मैक्षवं।
पिप्पली जीरकं चैव नागरंगकतित्तणी।
अतैलपक्वं मुनयो हविष्यान्नम्प्रचक्षते॥34॥

तथा हेमाद्रौ छान्दोग्यपरिशिष्टेकात्यायनः

हविष्येषु यवाः मुख्यास्तदनु व्रीहयः स्मृताः।
माषकोद्रवगौरादीन् सर्वाभावेपि वर्ज्जयेत्॥35॥

तत्रैव अग्निपुराणे

व्रीहि षष्टिक मुद्राश्च कलायाः सलिलम्पयः।
श्यामाकाश्चैव नीवारा गोधूमाद्याव्रते हिताः॥36॥

हविष्य में इतनी वस्तु लेना। जाड़े का सफेद चावल, धान, मूंग, तिल, यव, मटर, कंगुनी, तिन्नी का चावल, बथुआ का शाक, हेला का शाक, कालिका का शाक, केमुका का शाक, साठी का चावल, सेंधा नोन और समुद्र का नोन, दही, घी, बिना घी निकाला दूध, कटहर, आम, हर्रे, केला, हारफारेवड़ी, आंवला, चीनी मिश्री (गुड़बिना), पीपल, जीरा, नारंगी, इमली, तैल में न किया होय ऐसे अन्न को मुनि लोग हविष्य कहते हैं। हविष्य में जव मुख्य है वा नहीं तो धान भी ग्राह्य है परन्तु उड़द, कोदो, सफेद गेहूं तो कुछ अन्न न मिलता होए तो भी नहीं लेना। धान, साठी का चावल, मूंग, कलाई, जल, दूध, सांवां, तिन्नी, लाल गेहूं ये व्रत में लेना। भोजन करने की वस्तु लिख के अब न खाने वाली वस्तु लिखते हैं।

यथा सनत्कुमारसंहितायां कार्त्तिकमाहात्म्ये

सर्वथैव न भोक्तव्यामामिषान्नं तु कार्त्तिके।
तत्सर्वदा वर्जनीयं कार्त्तिके तु विशेषतः॥37॥
दग्धमन्नं द्विपक्कं च मसूरान्मं सवल्कलं।
उद्दालकाः पर्युषितमन्नमामिष उच्यते॥38॥
वृन्ताकानि पटोलानि तुम्बिका च कलिंगकं।
बिम्बीफलानि त्रपुमं फलशाकेषु चामिषं॥39॥
दोरका तुलसी चिल्ली छत्राकं पुत्र पत्रकं।
चक्रवर्ती राजगिरिः पत्रशाकेषु चामिषं॥40॥
गंजरं रक्तमूलं च पलांडुर्लशुनं तथा।
सर्व्देवामिषाणिस्युः कार्त्तिके स्मरणं त्यजेत्॥41॥
परमांसैः स्वमांसानि यः पुष्णाति नराधमः।
परजन्मनि तस्यैव विष्ठायां जायते कृमिः॥42॥
बालान्मृगान् पक्षिणो वा तथा बालफलानि च।
घातयन्ति दुरात्मानो जायन्ते मृतबालकाः॥43॥
सर्वाण्येकत्रदानानि सर्वतीर्थान्यथैकतः।
सर्वव्रतान्येकतश्च ह्यहिंसाकलया सम॥44॥
एवं विचार्य्य भुंजीत स्वान्नं विष्णुनिवेदितम्।

कार्त्तिक में मांस और उस के समान जितनी वस्तु हैं वह सब सर्व्वथा न खाना और यह मांस तो सर्व्वदा वर्जनीय है परन्तु कार्त्तिक में विशेष कर के अर्थात् मांस इत्यादिक बुरी वस्तु कभी नहीं खाना और कार्त्तिक में सर्व्वथा नहीं खाना! जला अन्न, दो बेर किया हुआ अन्न, मसूर, कुरथी, बासी अन्न ये सब भी मांस कहलाते हैं। भंटा, परवल, तुम्बी फल, तरबूज, कुन्दुरू और ककड़ी, ये सब फल के शाक में मांस

के तुल्य हैं। तुलसी, छाता शाक, पोई, चकोंड़, राजगीरा ये सब पत्ते के शाक में आमिष के तुल्य हैं। गाजर, लाल मूली, लहसुन, गोभी, प्याज इत्यादि मांसवत् सर्व्वदा ही त्याग करना और कार्त्तिक में तो इन का स्मर्ण भी नहीं करना। दूसरे जीवों के मांस से जो पापी अपने मांस को पुष्ट करता है अर्थात् जो लोग बल पुष्टता वा स्वाद के लोभ से किसी पशु पक्षी का मांस खाते हैं, वे मनुष्याधम दूसरे जन्म में उसी जीव के (जिस का मांस खाया है) विष्टा के कीड़े होते हैं। छोटे पशुओं को, छोटे पक्षियों को जो मारते हैं, जो कच्चे फलों को तोड़ते हैं, वे लोग दूसरे जन्म में मरे बालक होते हैं। सब व्रत और सब दान और सब तीर्थ का एकत्र फल और अहिंसा का फल बराबर है ऐसा विचार के सुन्दर प्रसादी अन्न ही भोजन करना, मांसादिक सर्व्वथा नहीं खाना। इति

तथा पाद्मे कार्त्तिकमाहात्म्ये

परान्नं परशय्यां च परवादं परांगनां।
सदा च वर्ज्जयेत्प्राज्ञो कार्त्तिके तु विशेषतः॥45॥
वेद देव द्विजानां च गुरु गो व्रतिनान्तथा।
स्वराजोपहतां निन्दां वर्ज्जयेत्कार्त्तिकेव्रती॥46॥

दूसरों का अन्न, दूसरों की सेज, दूसरों की निन्दा, दूसरों की स्त्री इन को सदा बचाना चाहिए, कार्त्तिक में विशेष कर के। वेद देव, तीनों वर्ण अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य, गुरु, गऊ, व्रत करने वाले जिन का राज्य अर्थात् सम्पदा नाश हो गई है इन लोगों की निन्दा नहीं करना। इस का भावार्थ यह है कि कार्त्तिक में जहां तक बन सकै दूसरों का अन्न नहीं खाना और दूसरों की शैया से बचना अर्थात् दूसरों की स्त्री से बचना, दूसरों की निन्दा नहीं करना। अब इस काल में लोग लोगों की निन्दा बहुत करते हैं और दूसरों की निन्दा करना महापाप है क्यौंकि जो लोग दूसरों की निन्दा करते हैं वे लोग जिन की निन्दा करते हैं उन का सब पाप आप ले लेते हैं तथा दूसरों की स्त्री को कुदृष्टि से देखना कार्त्तिक में विशेष कर के वर्जित है और अब कार्त्तिक में बहुत स्त्रियों के नहाने जाने से कितने ही पुरुष भी सबेरा भया कि कार्त्तिक नहाने के बहाने उन का दर्शन करने जाया करते हैं उन लोगों को चाहिए कि इस वाक्य को कान खोल के सुनैं। इति

कार्त्तिक के व्रत और उस के नेम लिख के अब कार्त्तिक स्नान की विधि और मंत्रादिक लिखते हैं जिस का प्रमाण और विशेष विधि पुराण सारोद्धार, पुराण समुच्चय, निर्णय सिन्धु, स्कन्दपुराणांतर्गत कार्त्तिक-माहात्म्य, पद्मपुराणातर्गत कार्त्तिकमाहात्म्य, ब्रह्मपुराण आदिक ग्रन्थों में लिखा है। विशेष कर के इस का विस्तार पूर्व्वक विधान सनत्कुमार-संहिता के कार्त्तिक माहात्म्य में है, जिस में से आवश्यक कर्म्म यहां पर लिखे जाते हैं। प्रातः काल उठ के धर्म्म चिन्तवन करके भगवान का ध्यान करना,

जैसा सनत्कुमार संहिता में ध्यान लिखा है।

प्रात स्मरामि भवभीतिमहार्तिशान्तयै
नारायणं गरुडवाहनमब्जनाभं।
ग्राहाभिभूतवरवारणमुक्तिहेतुं
चक्रायुधं तरुणवारिजपत्रनेत्रम्॥47॥
प्रातर्नमामि मनसा वचसा च मूर्ध्ना
पादारविन्दयुगलं परमस्य पुंसः।
नारायणस्य नरकार्णवतारकस्य
पारायणप्रवणविप्रपरायणस्य॥48॥
प्रातर्भजामि भजतामभयं करंतं
प्राक् सर्व्वजन्मकृतपापभयापहत्यै।
योग्राहवक्त्रपतितान्घ्रि गजेन्द्रघोरं
शोकार्त्तिनाशनकरोधृतशंखचक्रः॥49॥
श्लोकत्रयमिदम्पुण्यं प्रातः प्रातः पठेन्नरः।
लोकत्रयगुरुस्तस्मै दद्यादात्मपदं हरिः॥50॥

और भी जो कुछ हो सके भगवान का स्मरण कर के अपने गुरु का ध्यान करना।

यथा गार्ग्यां

ज्ञानमुद्रापरं ध्यायेत् श्रीगुरुं स्वस्तिकामनं।
ध्यात्वा कृष्णं परं ध्यायेत् भक्तो एकाग्रमानसः॥51॥
किशोरं कोमलं श्यामं वंशीवेत्रविभूषितं।
एवं कृत्वा हरेर्ध्यानं पुनर्गच्छेद्धरिस्थलम्॥52॥

पलथी मारे बैठे ज्ञानमुद्रा से उपदेश कर रहे हैं ऐसा अपने श्रीगुरु का ध्यान कर के फेर श्रीकृष्णचन्द्र का ध्यान करना। कोमल अंग किशोर स्वरूप श्यामसुन्दर वंशी छड़ी धारण किए ऐसे श्री भगवान् का ध्यान कर के फेर महादेव इत्यादिक देवता, गंगादिक नदी, नारदादि ऋषि, पृथ्वी, सप्तसमुद्र, नवग्रह इत्यादिक का ध्यान करके, वैष्णवन का ध्यान कर के अपना हाथ देखना वा दूब, ऐना, सोना, गऊ इत्यादिक मंगल-वस्तुओं को देख लेना, जिस में दुष्ट मुख दर्शन का दोष नाश हो जाय। फेर यह मन्त्र पढ़ के पृथ्वी पर पैर रखना—

समुद्रमेखले देवि पर्वतस्तनमंडिते।
विष्णुपत्नि नमस्तुभ्यं पादस्पर्श क्षमस्व मे॥53॥

फेर मन्दिर में जा कर श्री श्रीभगवान् को दंडवत करना। फेर नगर के बाहर शौच कर के पवित्र होना नदी के, तलाव के वा कोई जलाशय के किनारे मल त्याग नहीं करना, इस का महादोष है; और भी अन्न के खेतखलिहान में, देवालय में, राजमार्ग में मलत्याग नहीं करना, इस का माघ-माहात्म्य में बड़ा पाप लिखा है और जहां मल त्याग करना वहां तृण विछाय के और मुख के आगे वस्त्र को आड़ कर के सूर्य्य और चन्द्रमा की ओर मुख फेर कर के मल त्याग करना। ऐसे मल त्याग कर के फेर मृत्तिकास्पर्श कर के पवित्र होना, जिस की विधि सब स्मृतियों और पुराणों में लिखी है। "एकालिंगे गुदेपंच इत्यादि।" यह वाक्य पृथक् पृथक् पुस्तकों में अनेक चाल से मिलता है और गिनती में परस्पर विरोध पड़ता है, परन्तु यहां हम वही वाक्य लिखते हैं जो सनत्कुमारसंहिता के कार्त्तिक माहात्म्य में है, क्यौंकि यहां प्रसंग कार्त्तिक का है। यथा,

एकालिंगे गुदे सप्त दश वामकरे तथा।
उभयोः सप्तदातव्याः पादयोर्मृत्तिकाद्वयम्॥54॥

लिंग में एक, गुदा में सात, बाएं हाथ में दश, फिर दोनों हाथ में सात सात, पैर में दो दो बेर मिट्टी लगा के धोना। ब्रह्मचारी को इसकी दूनी, वानप्रस्थ को तिगुनी और जति को चौगुनी यह क्रम है। फेर

अश्वक्रान्ते रथक्रान्ते विष्णुक्रान्ते बसुन्धरे।
मृत्तिके हर में पापं यन्मया दुष्कृतं कृतं॥55॥

इस मन्त्र से शुद्ध मृत्तिका से हाथ पैर धो के फिर दतुअन करना।

यथा गार्ग्यां

कंटकी क्षीर कार्पास निर्गुंडीबृह्मबृक्षिका।
वटै रंड विगंधाढ्यान्न कुर्य्याद्दन्तधावनम्॥56॥

बबूल, बैर, कपास, निर्गुंडी, पलाश, बड़, रेंड, दुर्गन्ध के वृक्ष इस की लकड़ी से दतुअन नहीं करना तथा दतुअन करने के समय यह मन्त्र पढ़ना।

तत्रैव

आयुर्बलं यशो वर्चः प्रजा पशु वसूनि च।
ब्रह्मप्रज्ञां च मेधां च त्वनो देहि वनस्पते॥57॥

फेर कुल्ला करना। उपवास, नवमी, छठ, श्राद्ध के दिन, अमावस, आदित्यवार, इतने दिन दतुअन नहीं करना। मिट्टी वा और किसी वस्तु से मुख शुद्ध कर लेना

और बारह कुल्ला करने से मुख की शुद्धि हो जाती है। फेर श्रीगंगा स्नान करने जाना। उस समय चित्त एकाग्र कर के जाना, मुख में भगवान का यश गावते जाना। जो लोग श्रीगंगा स्नान करने जाते हैं उन को पैर-पैर पर अश्वमेध और वाजपेय यज्ञ का फल होता है।

यदुक्तं श्रीमद्भागवते पंचमस्कन्धे

यस्यां स्नानार्थं चागच्छतःपुंसःपदेपदेऽश्वमेधराजसूय फलंदुर्लभमिति॥58॥

ऐसे श्रीगंगा जी के स्नान को मन अति शुद्ध कर के जाना, सो जाने के पहले श्रीगंगा जी के तट पर दीपदान करना और भी देवालय तुलसीवृक्ष के निकट दीपदान करना।

यथा सनत्कुमारसंहितायां कार्त्तिकमाहात्म्ये

देवालये नदीतीरे राजमार्गे विशेषतः।
निद्रास्थाने दीपदाता तस्य श्रीः सर्व्वतोमुखी॥59॥

फेर श्रीगंगा जी के निकट आए के बाल झारना। प्रमाण स्मृति में–

अशोधितेषु केशेषु स्नानं यः कुरुते नरः।
सम्यक् पुण्यं न लभते तस्मात्केशांश्च शोधयेत्॥60॥

फेर संकल्प करै ''कार्त्तिकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुक वासरे अमुकगोत्रोत्पन्नो अमुकशर्म्माहं अचिन्त्यफल प्राप्त्यर्थे श्रीगंगास्नानमहंकरिष्ये।''

ऐसे संकल्प कर के फिर प्रतिज्ञा करना इस मन्त्र से–

कार्त्तिकेऽहं करिष्यामि प्रातःस्नानं जनार्द्दन।
प्रीत्यर्थं तव देवेश दामोदर मया सह॥61॥

यह प्रतिज्ञा का मन्त्र पढ़ना (यह मन्त्र सब कार्त्तिकमाहात्म्य में लिखा है) फेर अर्घ्य इन मन्त्रों से दीजिए।

यथा स्कान्दे पाद्मे ब्राह्मे सनत्कुमारसंहितायां च

नमः कमलनाभाय नमस्ते जलशायिने।
नमस्तेस्तुहृषीकेश गृहाणार्घ्य नमोस्तुते॥
नित्ये नैमित्तिके कृत्ये कार्त्तिके पापशोधने।
गृहाणार्घ्यं मया दत्तं राधया सहितो हरे॥62॥
व्रतिनः कार्त्तिके मासि स्नातस्य विधिवन्मम।

गृहाणार्घ्यं मया दत्तं दनुजेन्द्रनिषूदन॥63॥
दामोदर जगन्नाथ शंखचक्रगदाधर।
राधाकान्त गृहाणार्घ्यं प्रसीद परमेश्वर॥64॥
द्रवरूपेण देवेश वर्त्तते गंगवारिषु।
इदमर्घ्यं गृहाणत्वं स्वीकृत्य करुणां कुरु॥65॥

ऐसे अर्घ्य प्रदान कर के फेर बाल में आंवला, तिल और तुलसी की मट्टी लगाना और जिस दिन आंवला तिल न लगाना हो उस दिन केवल तुलसी की मट्टी लगाना। फेर श्रीगंगा जी के मृत्तिका का तिलक (अश्वक्रान्ते रथक्रान्ते) इस मन्त्र से कर के हाथ जोड़ के दंडवत् कर के प्रार्थना करना।

किरणा धूतपापा च पुण्यतोया सरस्वती।
गंगा च यमुना चैव पंचनद्यः पुनन्तुमां॥66॥
अयोध्या मथुरा माया काशी कांची अवन्तिका।
पुरी द्वारावती चैव सप्तैता मोक्षदायकाः॥67॥
विष्णोराज्ञामनुप्राप्य कार्त्तिकव्रतकारिणः।
रक्षन्ति देवास्ते सर्व्वे मां पुनन्तु सवासवाः॥68॥
वेदमन्त्राः सबीजाश्च सरहस्यामखान्विताः।
कश्यपाद्याश्च मुनयो मां पुनन्तुसदैवते॥69॥
नमस्ते देवदेवेश शंखचक्रगदाधर।
देवदेहिममानुज्ञां युष्मत्तीर्थनिसेवणे॥70॥
नन्दिनीत्येष ते नाम देवेषु नलिनीतिच।
दक्षा पृथ्वी च विहगा विश्वनाथा शिवा सती॥71॥
विद्याधरी सुप्रसन्ना तथा लोकप्रसादिनी।
क्षेमावती जाह्नवी च शान्ता शान्तिप्रदायिनी॥72॥
एतानि पुण्यनामानि स्नानकाले प्रकीर्तयेत्।
भवेत्सन्निहिता तत्र गंगा त्रिपथगामिनी॥73॥

फेर हाथ जोड़ के यह मन्त्र पढ़िए।

स्वर्गारोहणसोपानं त्वदीयमुदकं शिवे।
अतः स्पृशामि पादाभ्यामपराधं क्षमस्व मे॥74॥

ऐसे प्रार्थना कर के मौन होय के स्नान करना, भगवान का नाम लेना। श्री गंगाजी के निकट कुल्ला नहीं करना। ऐसे स्नान कर के सीढ़ी पर एक अर्घ्य देना।

मन्त्र

यन्मया दूषितं तोयं शारीरमलसम्भवैः।
तद्दोषपरिहारार्थं यक्ष्माणं तर्पयाम्यहम्॥75॥

फेर शुद्ध दो वस्त्र पहिन के सन्ध्यादिक करना। स्कन्द पुराण में लिखा है कि श्रीगंगा जी में ये तेरह कर्म्म नहीं करना। शौच, कुल्ला, जूठा फेंकना, मल करना, तेल लगाना, निन्दा, प्रतिग्रह, रति, दूसरे तीर्थ की इच्छा तथा दूसरे तीर्थ की प्रशंसा, वस्त्र धोना, उपद्रव, ये सब कर्म्म श्रीगंगा जी में नहीं करना। फिर श्री गंगाजल माथे पर छिड़क कर अघमर्षण करना, फेर वस्त्रांग आचमन कर के शिखा बांधना फेर तिलक करना बिना तिलक सन्ध्यादिक नहीं करना।

यथा पाद्मे

यज्ञो दानं तपो होमं स्वाध्यायः पितृतर्पणं।
भस्मीभवति तत्सर्व्वं ऊर्ध्वपुंड्रविनाकृतम्॥76॥

यज्ञ, दान, तप, होम, स्वाध्याय़, पितृतर्पण इत्यादिक सब कर्म्म उर्ध्वपुंड्र किए बिना जो करते हैं उनका निष्फल होता है। ऊर्ध्वपुंड्र ही लगाना और तिलक न लगाना इस का सिद्धान्त श्रीश्रीगिरिधरदेव चरण ने ऊर्ध्वपुंड्र मार्तंड में किया है। ऐसे ही सर्व्वदा तुलसी की माला धारण करना और जो सब दिन धारण न करते हों तो कार्त्तिक में अवश्य धारण करना।

यदुक्तं निर्णयसिन्धौ। अथ मालाधारणम्। तत्र

स्कान्दे द्वारकामाहात्म्ये

निवेद्य केशवे मालां तुलसीकाष्ठसम्भवां।
वहते यो नरो भक्त्या तस्य नैवास्ति पातकम्॥77॥
न जह्यात्तुलसीमालां धात्रीमालां विशेषतः।
महापातक संहन्त्रीं सर्व्वकामार्थदायिनीम्॥78॥

विष्णुधर्म्मे

स्पृशेत्तु यानि लोभानि धात्रीमाला कलौ नृणां।
तावद्वर्ष सहस्राणि वैकुण्ठ वसतिर्भवेत्॥79॥
मालायुग्मं तु यो नित्यं धात्री तुलसीसम्भवां।
वहते कंठदेशे तु कल्पकोटिदिवं वसेत्॥80॥

मन्त्र

तुलसी काष्ठसम्भूते माले कृष्णजनप्रिये।
विभर्मि त्वामहं कंठे कुरु मां कृष्णवल्लभम्॥81॥
एवं सम्प्रार्थ्य विधिवन्मालां कृष्णगलेऽर्पितां।
धारयेत् कार्त्तिकेय यो वै स गच्छेत् वैश्णवम्पदमिति॥82॥

निर्णयसिन्धु ग्रन्थ में माला-धारण लिखते हैं। यहां स्कन्द-पुराण का यह वचन है कि तुलसी के काठ की माला भगवान की प्रसादी जो लोग भक्ति से पहिनते हैं उनके एक पाप भी नहीं बचते। महापापों के दूर करने वाली सब कामों के देने वाली तुलसी का माला वा आंवले की माला को कभी भी नहीं त्यागना। विष्णुधर्म्म में। कलियुग में आंवले की माला से जितना रोआं छू जाता है उतने हजार बरस उस मनुष्य को स्वर्गवास मिलता है। ऊपर जो मन्त्र लिखा है उस से जो विधि पूर्व्वक माला सदा धारण करते हैं वा श्रीकृष्ण की प्रसादी माला जो लोग कार्त्तिक में धारण करते हैं उनको वैष्णव पद मिलता है।

इस रीति से तिलक माला धारण कर के क्या करना चाहिए, सो लिखते हैं।

यथा सनत्कुमारसंहितायाम्

ततः सन्ध्यामुपासीत स्वसूत्रोक्तेन कर्मणा।
ततः कार्य्यो जपो देव्या यावत्सूर्य्योदयो भवेत्॥83॥

फेर अपने सूत्र के अनुसार सन्ध्या करना, फेर जब तक सूर्य्योदय न होय तब तक गायत्री देवी का जप करना।

निर्णयसिन्धु बनाने वाले ने यह निर्णय किया है कि कार्त्तिक के महीने में बिना अरुणोदय भी सन्ध्या करने का दोष नहीं है।

माया कृतं सूत्रपुरीषशौचं स्नानं च गंडूषणमेहनं च।
वस्त्रस्यसंक्षालनमेवदोषान् क्षमस्व गंगे मम सुप्रसीद ॥84॥

श्रीगंगाजी की प्रार्थना इस मन्त्र से करना। अब सूर्य्योदय पीछे जो करना चाहिए वह लिखते हैं।

तत्रैव

विष्णोः सहस्त्रनामाद्यं सन्ध्यान्ते च पठेन्नरः।
देवालये समागत्य पुनः पूजनमारभेत्॥85॥

सन्ध्या करके विष्णुसहस्र नाम इत्यादिक ग्रन्थों का पाठ करके फेर भगवान

की पूजा को आरम्भ करना। तहां फूल से भगवान की पूजा करना, इसका माहात्म्य लिखते हैं।

यथाभार्गवार्चनदीपिकायां नृसिंहपुराणे

अगस्त्यकुसुमैर्देवं योर्चयेच्च जनार्द्दन।
दर्शनात्तस्य देवर्षे नरकं नार्हते नरः॥86॥
विहाय सर्व्वपुष्पाणि मुनिपुष्पेण केशवं।
कार्त्तिके योऽच्चयेद्भक्त्या वाजपेयफलं लभेत्॥87॥

स्कान्दे

मालतीमालया विष्णुः केतक्या चैव पूजितः।
समाः सहस्रं सुप्रीतो भवेत्स मधुसूदनः॥88॥

पृथ्वीचन्द्रोदये पाद्मे

कार्त्तिके नार्चितो यैस्तु कमलैः कमलेक्षणः।
जन्मकोटिषु विप्रेन्द्र न तेषां कमला गृहे॥89॥
कार्त्तिके केशवे पूजा येषां नाम्ना सुतैः कृता।
ते निर्भर्त्स्य रवेः पुत्रं वसन्ति त्रिदिवे सदा॥90॥
तुलसीदललक्षेण कार्त्तिके योर्चयेत् हरिं।
पत्रे पत्रे मुनिश्रेष्ठ मौक्तिकं लभते फलम्॥91॥

अगस्त के फूल से जो भगवान की पूजा करते हैं उन के दर्शन से नरक नहीं मिलता। सब फूलों को छोड़ के कार्त्तिक में जो अगस्त के फूल से भक्तिपूर्व्वक पूजा करते हैं उन्हें वाजपेय का फल होता है। कार्त्तिक में जिन्नै कमल से श्रीभगवान की पूजा नहीं किया उनके घर कोटि जन्म तक लक्ष्मी नहीं आती। जो कार्त्तिक में भगवान के नाम से पूजा करते हैं वे लोग जम को अनादर दे के स्वर्ग में रहते हैं और जो लोग लाख तुलसी दल भगवान को अर्पण करते हैं वे एक एक पत्ते में मोती समर्पण का फल पाते हैं वा एक एक पत्ते में मुक्ति का फल पाते हैं। इति।

मन्त्र

नमस्तुलसि कल्याणि गोविन्दचरणप्रिये।
केशवार्थे विचिन्वामि वरदा भव शोभने॥92॥

ऊपर लिखे हुए मन्त्र से तुलसी तोड़ कर श्रीभगवान की पूजा करने का अकथनीय फल है। अब पूजा करने की विधि लिखते हैं। वह पूजा दो प्रकार की है—जिस में

नियम नहीं और परमभावात्मिका उस का नाम सेवा और जिस में नियम होय चाहे नित्य होय चाहै नैमित्तिक होय, उसका नाम पूजा। इस के भेद और प्रकार आदि पुराण और गर्गसंहिता में और भी सम्प्रदाय के ग्रन्थों में विस्तार पूर्व्वक लिखे हैं। अब हम इस स्थान पर पूजा करने की विधि लिखते हैं। श्रीभगवान की पूजा में चित्त एकाग्र रखना, पहिले मन्दिर में जा कर के उसके प्रभु को जगाना, फिर षोडशोपचार पूजा की सामग्री ले के पूजा आरम्भ करना तहां पहिले आवाहन करना।

मन्त्र

गोलोकधामाधिपते रमापते गोविन्ददामोदर दीनवत्सल।
राधापते माधव सात्वतां पते सिंहासनेस्मिन्मम सम्मुखो भव॥93॥

अथ आसनम्

श्रीपद्मरागस्फुरदूर्ध्वपृष्ठ महार्हवैदूर्य्यखचितपदाब्जं।
वैकुण्ठ वैकुण्ठपते गृहाण पीतं तड़िद्भ्राजकवस्त्रयुक्तम्॥94॥

अथ पाद्यम्

परिस्थितं निर्मलमैक्यपात्रे समागतं विष्णुसरोवराद्धि।
योगेश देवेश जगन्निवास गृहाण पाद्यं प्रणमामि पादौ॥95॥

अथ अर्घ्यम्

नमस्ते देवदेवेश नमस्ते धरणीधर।
नमस्ते कमलाकान्त अर्घ्यं नः प्रतिगृह्यताम्॥96॥

अथाचमनम्

कर्पूरवासितं तोयं मन्दाकिन्याःसमाहृतं।
आचम्यतां जगन्नाथ मया दत्तं हि भक्तितः॥97॥

अथ स्नानम्

काश्मीरपाटीरविमिश्रितेन स्वमक्षिकोशीरवताजलेन।
स्नानं कुरु त्वं यदुनाथ देव गोविन्दगोपालक तीर्थपाद॥98॥

अथ मधुपर्कम्

मध्याह्नचंडार्कभवश्रमापहं सितांगसम्पर्क्कमनोहरं परं।
गृहाण विष्णो मधुपर्क्कमासनं श्रीकृष्ण पीताम्बरसात्वताम्पते॥99॥

अथ वस्त्रम्

विभो सर्वतो प्रस्फुरत् प्रोज्चलंतं महत् स्वर्णसूत्रांकितं दुर्लभं च ।
स्वतोनिर्म्मितंपद्मकिंजल्कवर्णंगृहाणाम्बरंदेवपीताम्बराख्यम् ॥100॥

अथ भूषणम्

कनकरत्नमयं मयनिर्मितं मदनरुक्कदनं सदनं रूचाम॥
उषसि सर्वसुवर्णविभूषणं सकललोकविभूषणं गृह्यताम्॥101॥

अथ यज्ञोपवीतम्

सुवर्णाभमापीतवर्णं सुमन्त्रैः वरं प्रोक्षितं वेदवन्निर्म्मितं च ।
शुभं पंचकार्य्येषु नैमित्तिकेषु प्रभो यज्ञ यज्ञोपवीतं गृहाण ॥102॥

अथ गन्धम्

संध्येन्दुशोभं बहुमंगलं श्री काश्मीरपाटीरकपंकपंकं ।
स्वमंडनं गन्धचयं गृहाण समस्त भूमंडलभारहारिन् ॥103॥

अथ अक्षतम्

ब्रहमावर्ते ब्रह्मणां पूर्व्वमुक्तं ब्राह्मैस्तोयैः सिंचितं विष्णुना च ।
रुद्रेण रौद्राक्षितो राक्षसेभ्यः साक्षाद्भूमावक्षतं त्वं गृहाण ॥104॥

पुष्पम्

मन्दारसन्तानकपारिजात कल्पद्रुम श्रीहरिचन्दनानां ।
गृहाणपुष्पाणि हरे तुलस्या मिश्राणि साक्षान्नवमंजरीभिः ॥105॥

अथ धूपम्

लवंगपाटीरजचूर्णमिश्रं मनुष्य देवासुर सौख्यदं च ।
सद्यः सुगन्धी कृतहर्म्यदेशं द्वारावतीभूप गृहाण धूपम् ॥106॥

अथ दीपम्

तमोहारिणं ज्ञानमूर्तिं मनोज्ञे लसद्वर्त्तिकर्पूरयुक्तं गवाज्यं ।
जगन्नाथ देवेश ज्योतिस्वरूप स्फुरज्ज्योतिकं दिव्यदीपं गृहाण ॥107॥

अथ नैवेद्यम्

सर्वैं रसैर्वेदविधिव्यवस्थितं रसै रसान्यं च यशोमतीकृतं ।
गृहाण नैवेद्यमिदं स्वरोचिषं गव्यामृतं सुन्दरनन्दनन्दन॥108॥

अथ जलम्

गंगोत्तरीवेगबलात्समुछ्रितं सुवर्णपात्रेण हिमांशुशीतलं।
सुनिर्मलाभं ह्यमृतोपम जलं गृहाण राधावर दीनवत्सलं॥109॥

अथ आचमनम्

कंकोलजातीफलपुष्पवासितं परं गृहाणाचमनं दयानिधे।
राधापते श्रीगिरिजापते प्रभो श्रियःपते सर्व्वपते च भूपते॥110॥

अथ ताम्बूलम्

जातीफलेलासुरपुष्पयुक्तं यावित्रिपूंगीफलपत्रवृन्दं।
मुक्ताफलाखादिररोचनार्थं गृहाण ताम्बूलमिदं नृपेश॥111॥

अथ दक्षिणा

नाकपालवसुपालमौलिभिः वन्दितांघ्रियुगल प्रभो हरे।
दक्षिणां परिगृहाण माधवयज्ञरूपप्रभु दक्षिणापते॥112॥

अथ प्रदक्षिणा

यानिकानि च पापनि जन्मान्तर कृतानि च।
तानि सर्व्वाणि नश्यन्तु प्रदक्षिण पदेपदे॥113॥

अथ नीराजनम्

प्रस्फुरत्परमदीप्तमंगलं गोघृताक्तनवपंचवर्त्तिकं।
आर्त्तिकं परिगृहाण चार्त्तिहनूपुण्यकीर्त्तिविशदीकृता वने॥114॥

अथ प्रार्थना

हरे मत्समः पातकी नास्ति भूमौ
तथा त्वत्समो नास्ति पापापहारी॥
इति त्वां च मत्वा जगन्नाथ देव
यथेच्छा भवेत्ते तथा मां कुरु त्वम्॥115॥

अथ नमस्कारः

नमोस्त्वनन्ताय सहस्रमूर्त्तये सहस्रपादाक्षिशिरोरुवाहवे।
सहस्रनाम्नेपुरुषायशाश्वते सहस्रकोटीयुगधारिणे नमः॥116॥

इस प्रकार से भगवान की पूजा कर के तब तुलसी पूजन करै। तुलसी पूजन की विधि लिखते हैं।

यथा सनत्कुमारसंहितायां कार्त्तिकमाहात्म्ये

तुलस्यां सर्व्वतीर्थानि तुलस्यां सव्वदेवताः।
कार्त्तिकेमासि तिष्ठन्ति नात्र कार्य्या विचारणा॥117॥

कार्त्तिक के महीने में श्रीतुलसीजी में सब देवता और सब तीर्थ निवास करते हैं।

तथा पद्मपुराणे कीर्त्तिकमाहात्म्ये।
तुलसीकाननं राजन्! गृहे यस्यावतिष्ठते।
तद्गृहं तीर्थरूपन्तु न यान्ति यमकिंकराः॥118॥
रोपणात्पालनात्स्पर्शान्नृणाम्पापहरा तथां।
तुलसी दहते पापं वाङ्मनःकायसम्भवम्॥119॥

तुलसी का वन जिस घर में रहता है उस तीर्थ रूप घर को यम के दूत नहीं देखते। वृक्ष लगाने से, पालने से, स्पर्श करने से, तुलसीजी कायिक, वाचिक और मानसिक तीनों पापों को दूर करती हैं।

तथा काशीखण्डे दूतान् प्रति यमवाक्यम्

तुलस्यलंकृता ये ये तुलसीनामजापकाः।
तुलसीवनपाला ये ते त्याज्या दूरतो भटाः॥120॥

यमराज दूतों से आज्ञा करते हैं कि दूत लोग, हमारी बात सुनो, जो तुलसी की कंठी पहिनते हैं, जो लोग तुलसी का नाम जपते हैं, जो लोग तुलसी के वन की रक्षा करते हैं उन को तुम लोग दूर ही से छोड़ देना।

तथा स्कन्दपुराणे कार्त्तिकमाहात्म्ये

तुलसीगन्धमादाय यत्र गच्छति मारुतः।
दिशा दश च ताः पूताः भूतग्रामं चतुर्विधम्॥121॥

तुलसीजी की सुगन्ध लेकर जहां जहां वायु जाता है वहां की दिशा और वहां के चारों प्रकार के जीव पवित्र हो जाते हैं।

अब तुलसीपूजा के मन्त्र लिखते हैं—

अथ ध्यानम्

ध्यायेच्च तुलसीं देवीं श्यामां कमललोचनां।
प्रसन्नामलकल्हार वराभय चतुर्भुजाम्॥122॥
किरीटहरकेयूरकुण्डलादिविभूषितां।
धवलांशुकसंयुक्त पद्मासननिषेविताम्॥123॥

अथ आवाहनम्

देवि त्रैलोक्यजननि सर्वलोकैकपावनि।
आगच्छ भगवत्यत्र प्रसीद श्रीहरिप्रिये॥124॥

अथासनम्

सर्वलोकमये देवि सर्व्वदा विष्णुवल्लभे।
देवि स्वर्णमयं दिव्यं गृहाणासनमव्ययम्॥125॥

अथार्घ्यम्

सर्वदेवदलाकारे सर्व्वदेवनमस्कृते।
दत्तं पाद्यं गृहाणेदं तुलसी त्वं प्रसीद मे॥126॥

अथाचमनीयम्

सर्वलोकस्य रक्षार्थं सदा कल्याणकारिणी।
गृहाण तुलसी प्रीत्या इदमाचमनीयकम्॥127॥

अथ स्नानम्

गंगादिभ्यो नदीभ्यश्च समानीतमिदं जलं।
स्नानार्थं तुलसीदेवि प्रीत्या तत् प्रतिगृह्यताम्॥128॥

अथ वस्त्रम्

क्षीरोदमथनोद्भूते लक्ष्मी चन्द्रसहोदरे।
गृस्यतां परिधानार्थमिदं क्षौमाम्बरं शुभे॥129॥

अथ गन्धम्

श्रीगन्धकुम्कुमं दिव्यं कर्पूरागरुसंयुतं।
कल्पितं ते महादेवि प्रीत्यर्थं प्रतिगृह्यताम्॥130॥

अथ पुष्पम्

नीलोत्पलसुकल्हारमालत्यादीनि शोभने।
पद्मादि गन्धवत्शीते पुष्पाणि प्रतिगृह्यताम्॥131॥

अथ धूपम्

धूपं गृहाण देवेशि मनोहरि सुमंगलं।
आज्यमिश्रंतु तुलसी भक्तस्याभीष्टदायिनि॥132॥

अथ दीपम्

अज्ञानतिमिरान्धेभ्यो ज्ञानदीपप्रदायिनि।
दत्तः तुलसि प्रीत्यर्थं दीपोयं प्रतिगृह्यताम्॥133॥

अथ नैवेद्यम्

नमस्ते जगतांनाथे प्राणिनां प्रियदर्शने।
ययाशक्ति मया दत्तं नैवेद्यं देवि गृह्यताम्॥134॥

अथ जलम्

नमो भगवति श्रेष्ठे नारायणि जगन्मये।
तुलसि त्वरया देवी पानीयं प्रतिगृह्यताम्॥135॥

अथ ताम्बूलं

अमतेऽमृतसंभूते तुलस्यमृतरुपिणि।
एलाकर्प्पूरसंयुक्तं ताम्बूलं प्रतिगृहयतां॥136॥

अथ फलम्

इदं फलं मया देवी स्थापितं पुरतस्तव।
अनेन सफला वाप्तिर्भवेज्जन्मनि जन्मनि॥137॥

अथ प्रदक्षिणा

दक्षिणे दक्षिणकरे त्वद्भक्तानाम्प्रियंकरि।
करोमि ते सदाभक्त्या विष्णुकान्ते प्रदक्षिणाम्॥138॥

अथ नमस्कार, पुष्पांजलिः

नमोनमो जगद्धात्र्यै जगदाद्यै नमोनमः।
नमोनमो जगद्भूत्यै नमस्ते परमेश्वरि॥139॥
नमस्तुलसि कल्याणि नमो विष्णुप्रिये शुभे।
नमो मोक्षप्रदे देवि नमः सम्पत्प्रदायिनि॥140॥
तुलसी पातु मां नित्यं सर्व्वापद्भ्योपि सर्व्वदा।
कीर्त्तिता वा स्मृता वापि या पावयति मानुषान्॥141॥
महाप्रसादजननि सर्व्वपापप्रणाशिनि।
आधिव्याधिहरे देवि तुलसि त्वां नमाम्यहम्॥142॥
या दृष्टा निखिलाघसंघशमनी स्पृष्टा वपुःपावनी।
रोगाणामभिवन्दिता निरसनी सिक्तान्तकत्रासिनी॥
प्रत्यासत्तिविधायिनी भगवतः कृष्णस्य संरोपिता।
न्यस्ता तच्चरणे विमुक्तिफलदा तस्यै तुलस्यै नमः॥143॥

अथ प्रार्थना

प्रसीद मयि देवेशि कृपया परया सदा।
अभीष्टफलसिद्ध्यर्थं कुरु मे माधवप्रियं॥144॥

इस रीति से नित्य तुलसी पूजन करना और तुलसी के पत्र से विष्णु का पूजन करना।

यथा गारुड़े

गवामयुतदानेन यत्फलं लभते खग।
तुलसीपत्रमेकेन तत्फलं कार्त्तिके स्मृतम्॥145॥

अयुत गोदान करने का जो फल है वह कार्त्तिक में एक तुलसी पत्र चढ़ाने से मिलता है, यह आप श्रीमुख से आज्ञा करते हैं गरुड़जी से। इति।

इस भांति तुलसी पूजन कर के फिर आंवला की पूजा करना तथा कार्त्तिक में आंवला की माला भी पहिरना।

यथा स्कान्दे कार्त्तिक माहात्म्ये पुराणसारोद्धारे च

सर्व्वदेवमयी धात्री वासुदेवमनःप्रिया।
आरोपणीया सेव्या च पूजनीया सदा बुधैः॥146॥
धात्रीफलविलिप्ताङ्गो धात्रीफलविभूषितः।
धात्रीफलकृताहारो नरो नारायणो भवेत।॥147॥

धात्री छायां समाश्रित्य कुर्य्याच्छ्राद्धन्तयो मुने।
मुक्तिं प्रयान्ति पितरः प्रसादात्तस्य वै हरेः॥148॥
कार्त्तिकेमासि विप्रेन्द्र धात्रीवृक्षोपशोभिते।
वने दामोदरं विष्णुञ्चित्रान्नैस्तोषयेद्विदभुम्॥149॥ इति।

श्रीवासुदेव के मन की प्यारी सब देव मयी धात्री पण्डित लोगों को सदा लगाना चाहिए, सेवा करना चाहिए और पूजना चाहिए। आंवला जिसने देह में लगाया है वा उसकी माला पहिनते हैं वा जो लोग आंवला का फल खाते हैं वे मनुष्य नारायण होते हैं। आंवले की छाया में जो श्राद्ध करता है भगवान की कृपा से उस के पितर स्वर्ग में जाते हैं। कार्त्तिक के महीने में आंवले के बगीचे में भगवान दामोदर की चित्रान्न से पूजा करना। इत्यादि बहुत माहात्म्य लिखा है। इस से नित्य आंवला का पूजन करना तथा आंवले के नीचे ब्राह्मण भोजन कराना। इस भांति आंवला की पूजा कर के फेर श्रीमद्भागवत इत्यादिक भगवान की कथा सुन्ना और यथाशक्ति दान कर के ब्राह्मण भोजन कराना।

यथा सनत्कुमारसंहितायां कार्त्तिकमाहात्म्ये

नृत्यगानादिकार्य्येषु प्रहरं दिवसं नयेत्।
ततः पुराणश्रवणं यामार्द्धं सम्यगाचरेत्॥150॥
सम्पूर्ण कार्त्तिके यस्तु सम्पूज्यामलकींशुभां।
राधादामोदरःप्रीत्यै भोजयेच्चैव दम्पतीन्॥151॥
पश्चात्स्वयं सुभुंजीत न श्रीस्तस्य क्षयं व्रजेत्।
कृत्वामाध्याह्निकंकर्म्मभुंजीतद्विदलोज्झितम्॥152॥
ब्रह्मांशकसमुद्भूते पलाशे यस्तु भोजनं।
कुर्य्यात्कार्त्तिकमासे सौ विष्णुलोकंप्रयास्यति॥153॥

प्रहर दिन चढ़े तक भगवान के मन्दिर में नाचना गाना, फिर आधे पहर कथा सुनना, फिर आंवले के नीचे दम्पती ब्राह्मण भोजन कराय के मध्याह्न सन्ध्या कर के ऊपर जिन वस्तुओं का निषेध लिखा है उन्हें छोड़ के महा प्रसादी अन्न भोजन करना। जो कार्त्तिक में नित्य ऐसा करते हैं उन्हैं लक्ष्मी त्याग नहीं करती। ब्रह्मा के अंश से उत्पन्न भया है ऐसे पलाश के पत्ते में जो भोजन करते हैं वे लोग विष्णुलोक पाते हैं। ॥इति॥

इस भांति दिन का कर्म्म लिख के अब सन्ध्या का कर्म्म लिखते हैं। रात्रिकर्म्म में तीन कर्म्म मुख्य हैं, एक तो आकाश दीपदान, दूसरा भगवन्मन्दिर वा श्री गंगा जी वा तुलसी के निकट दीपदान, तीसरा नाम संकीर्तन। अब तीनों का फल और विधि लिखते हैं।

यथा ब्रह्मांडे

विष्णुवेश्मनियोदद्यात्तुलायां नभदीपकं।
अग्निष्टोमसहस्त्रस्य फलमाप्नोति मानवः॥154॥

तथा निर्णयामृते निर्णयसिन्धौ च पुष्करपुराणे

तुलायान्तिलतैलेन सायङ्काले समागते।
आकाशदीपं योदद्यान्मासमेकं हरिं प्रति॥155॥

महतीं श्रियमाप्नोति रुपसौभाग्यसम्पदामिति।

जो भगवनमन्दिर में आकाशदीप देते हैं उन्हैं हजार अग्निष्टोम (यज्ञ) का फल होता है। कार्त्तिक के महीने भर जो लोग श्रीकृष्ण के प्रति सन्ध्या को आकाशदीप देते हैं वे लोग बड़ी लक्ष्मी और बहुत सम्पदा और रूप सौभाग्य पाते हैं।

तथा हेमाद्रौ आदिपुराणे

दिवाकरेऽस्ताचलमौलिभूते गृहाददूरे पुरुषप्रमाणं।
यूपाकृतिं यज्ञिय वृक्षदारुमारोप्यभूमावथतस्य मूर्ध्नि॥156॥
यवांगुलच्छिद्रयुतास्तु मध्ये द्विहस्तदीर्घा अथ पट्टिकास्तु॥
कृत्त्वा चतस्रोष्टदलाः कृतास्तु याभिर्भवेदष्टदिशानुसारि॥157॥
तत् कर्णिकायान्तु महाप्रकाशो दीपाः प्रदेया दलगास्तथाष्टौ॥
निवेद्य धर्म्माय हराय भूम्यै दामोदरायाप्यथ धर्म्मराज्ञे॥
प्रजापतिभ्यस्त्वथसत्पितृभ्यः प्रेतेभ्य एवाथतमः स्थितेभ्यः॥158॥

जब सन्ध्या होय तब घर के पास मनुष्य के बराबर पवित्र लकड़ी गाड़ के उस के ऊपर दो हाथ का बांस लगाना, उस पर चौमुखा वा अठमुखा दीया रख के आठ बत्ती वा आठ पत्ती पर आठ दीया बालना। इन आठों के निमित्त 1 धर्म्म 2 महादेव, जी 3 पृथ्वी 4 श्री राधादामोदर 5 धर्म्मराज 6 प्रजापतिगन 7 पितृगन 8 अंधेरे में रहने वाले प्रेत। इन आठों के निमित्त दीपदान करना और वैष्णवों के मन्दिर में ऊंचा बांस गाड़ के उस पर इस मन्त्र से दीपदान करना।

दामोदराय नभसि तुलायां दोलया सह।
प्रदीपं ते प्रयच्छामि नमोनन्ताय वेधसे॥159॥

कार्त्तिकमाहात्म्य में 20 वा 9 वा 5 हाथ का बांस लिखा है। इस प्रकार आकाश दीपदान करके फिर भगवनमन्दिर में, राजमार्ग में, गंगाजी के तट पर दीपदान करना।

यथा सनत्कुमारसंहितायाम्

कार्त्तिकेमासि सम्प्राते गगने स्वच्छतारके।
रात्रौ लक्ष्मी समायाति द्रष्टुम्भवनकौतुकम्॥160॥
यत्रयत्र च दीपान्सा पश्यत्यब्धिसमुद्भवा।
तत्र तत्र रतिं कुर्य्यान्नान्धकारे कदाचन॥161॥
देवालये नदीतीरे राजमार्ग्गे विशेषतः।
निद्रास्थाने दीपदाता तस्य श्रीःसर्व्वतोमुखी॥162॥
कीचकंटकसंकीर्णे विषमे दुर्गमस्थले।
कुर्य्याद्यो दीपदानानि नरकं स न गच्छति॥163॥

कार्त्तिक महीने की रात को जब स्वच्छ तारे निकले रहते हैं तब लक्ष्मीजी घर का कौतुक देखने को आती हैं, सो वह जहां जहां दिए बलते देखती हैं वहां प्रसन्न हो कर निवास करती हैं और जहां अन्धकार देखती हैं, उस स्थान को त्याग करती हैं। देवता के मन्दिर में नदी के तीर पर, राजमार्ग में विशेष कर के और निद्रा की जगह दीया बालनेवाले लोगों को लक्ष्मी जी सर्व्वतोमुख रहती हैं। कीच में, कांटे की जगह में, ऊंची, नीची, सकरी दुर्ग्गम जगह में जो लोग दीपदान करते हैं वे नरक में नहीं जाते। इति॥

इस मन्त्र से दीपदान करना

मन्त्रहीनं क्रियाहीनं जपहीनं जनाद्दर्दनः।
व्रतंसम्पूर्णतां यातु कार्त्तिके दीपदानतः॥164॥

और जो विद्यार्थी को पढ़ने के वास्ते तेल देते हैं उन्हें भी बड़ा पुण्य होता है।

यथा तत्रैव

यो वेदाभ्यासिने दद्याद्दीपार्थे तैलमुत्तमं।
कार्त्तिकेमासि सम्प्राप्ते समुक्ति फलभागूभवेत्॥165॥

जो कार्त्तिक में पढ़नेवाले विद्यार्थी को दीए का तेल देते हैं वे मुक्तिफल पाते हैं।

और कार्त्तिक सुदी सप्तमी की कामना होय तो कार्तवीर्य के वास्ते दीपदान करना, यह सब कामना का पूर्ण करनेवाला है।

यथा प्रयोगत्नाकरे। उडडामरतन्त्रे च

ऊर्जे मासि सितेपक्षे सप्तम्याम्भानुवासरे।
श्रवणर्क्षे व्यतीपाते विष्णोश्चक्रावतारिणः।
दीपदानं प्रकर्त्तव्यं सर्व्वसौख्यविवृद्दये॥166॥

कार्त्तिक सुदी सप्तमी मंगलवार श्रवण नक्षत्र व्यतीपात के दिन विष्णुचक्र के अवतार को दीपदान करना इस से सब सौख्य बढ़ते हैं। इस प्रकार से दीपदान कर के पहर रात तक भगवान का गुणगान करना जहां भक्त लोग कीर्तन करते हैं वहां श्रीभगवान आप निवास करते हैं।

यथा पाद्मे कार्त्तिकमाहात्म्ये

नाहं वसामि वैकुण्ठे योगिनां हृदये न च।
मद्भक्ता यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद॥167॥

नारदजी से आप आज्ञा करते हैं कि हे नारद, हम न तो वैकुण्ठ में रहते हैं और न जोगियों के हृदय में रहते हैं, जहां हमारे भक्त गाते हैं हम वहीं बैठते हैं। इति॥

यह जो ऊपर लिख आए हैं ये कार्त्तिक के नित्य कर्म्म हैं और भी कार्त्तिक की एकादशी से लेकर के पुनवासी तक के पांच दिन को भीष्मपंचक कहते हैं इस में इस मन्त्र से भीष्मतर्पण करना।

वैयाग्रपदगोत्राय जलं वीराय वर्म्मणे।
सत्यव्रताय शुचये गाङ्गेयाय महात्मने।
भीष्मायैतद्ददाम्यर्घ्यं आबालब्रह्मचारिणे॥168॥

इस प्रकार पाँच दिन भीष्मपंचक में तर्पण और स्नान करना। इति। कार्त्तिक में गर्गसंहिता सुन्ने का बड़ा माहात्म्य है।

यथा–

यःकार्त्तिकेमासिनृपश्रियायुतोश्रृणोतिशश्वन्मुनिगर्ग्गसंहिताम्।
स चक्रवर्ती भविता न संशयो नरेन्द्रहस्तोद्दृतपादपादुकः॥169॥
मनोजवैः सिन्धुतुरङ्गमैनविद्दिदपैश्च विन्ध्याचलसम्भवैः परैः।
वैतालिकोद्गीतयशा महीतले निषेवितो वारवधूजनैस्सह॥170॥

हे लक्ष्मीसंयुक्त नृप, जो कार्त्तिक में गर्ग्गमुनि की संहिता विधिपूर्वक सुनै तो वह ऐसा चक्रवर्ती होय कि राजा लोग उस की खड़ाऊं उठावैं। हवा के वेग ऐसे सिन्धी नए घोड़ों से और ऊंचे और विन्ध्याचल की तराई के हाथियों से और पृथ्वी

के वैतालिकों के गीत रूपी अपने यश से और वारांगनाओं से सदा सेवित रहैं। इस प्रकार कार्त्तिक का नित्य कर्म्म कर के पूर्णिमा को यह व्रत समाप्त करै, यथाशक्ति दान दे, ब्राह्मणों का जोड़ा भोजन करावै। इति।

लोकानाम्पापरूपप्रबलतमतमोनाशनायाशु शक्तं।
हन्तुन्तीक्ष्णन्त्रितापम्पटुतरमनिशं यः परन्दुःखहेतुः॥
दातुं शक्तं त्रिलोकैरसुलभममृतङ्कार्त्तिकङ्कर्म्मवैधं।
राकाज्योत्सनास्वरूपम्बिलसतु जगति श्रीहरिश्चन्द्रचद्रात्॥

दोहा

जै जै श्रीबल्लभ सदा, श्रीबिट्ठल द्विजराज।
कृपा करत सब भय हरत, तारत पतित समाज॥1॥
नमो नमो कविमुकुटमणि, पितुपदकमल पुनीत।
जाकी कृपा अपार तें, समुझि परी यह रीत॥2॥
जानि परम उपकार पुनि, देखि शास्त्र को पन्थ।
जगहित श्रीहरिचन्द किय, कार्त्तिक विधि को ग्रन्थ॥3॥

॥ इति ॥

[रचनाकाल—सन 1872 ई. से पूर्व अनुमानित। बाबू शिवनन्दन सहाय ने इसका रचनाकाल सन 1868 ई. माना है। कार्त्तिक नैमित्तिककृत्य के मुख पृष्ठ पर इस रचना का उल्लेख है। जाहिर है कि यह उससे पूर्व की रचना है]

कार्त्तिक नैमित्तिककृत्य

भूमिका

मेरे प्यारे मित्र, यद्यपि तुम्हारे प्रेम मार्ग में यावत् कर्म्ममात्र निष्फल हैं तथापि तुम्हारे मिलने के साधन रूप कर्म्म तो कर्त्तव्य ही हैं, इसी आशय से यह विधि लिखी गई है। इस को देख कर कई पंडित रुष्ट होंगे पर यह तो समझें कि पंडितों के हेतु तो संस्कृत पुस्तकें बनी ही हैं, यह तो केवल उन्हीं के आनन्दार्थ हैं जो श्रद्धावान हैं परन्तु संस्कृत ग्रन्थों को नहीं देखते। इस में श्री रामार्चन चन्द्रिका, निर्णय सिन्धु धर्म्म सिन्धु, जयसिंह कल्पद्रुम, भगवद्भक्तिविलास और कार्त्तिक माहात्म्यादिक ग्रन्थों का सारांश लिखा है। जो हो, तुम इस से प्रसन्न हो, यही इस का फल है अतएव प्यारे! यह तुम्हारे चरणों में समर्पित है अंगीकार करो।

तुम्हारा रसिक
हरिश्चन्द्र

कार्त्तिक नैमित्तिककृत्य

श्री राधादामोदराय नमः

दोहा

जेहि लहि फिर कछु लहन की आस न चित में होय।
जयति पवित्री जग करन प्रेम बरन यह दोय॥1॥

छप्पय

जदपि पान करि परम अमृत मय प्रेम भरयौ रस।
जड़ उनमत्त समान होइ बिचरत गत कलमस॥
सकल कर्म्म को जाल सिथिल किय परम प्रीति सों।
रह्यौ न कछु कर्त्तव्य शेष कुल वेद रीति सों॥
पै जानि भागवत धर्म्म एहि सूझत सो पथ जेहि लहत।
लखि दीन जीव संसार के परम कृपा गहि कछु कहत॥

कार्त्तिकि धर्म्म यहां क्यौं विधान करते हैं? इस हेतु भी कहा कि सब धर्म्मों में भगवद्धर्म्म मुख्य है और यही श्रीमुख से है–

''मन्मनाभवमद्भक्तो मद्याजीमान्नमस्कुरु मावेवैष्यसिकौन्तेय''

इत्यादि॥

विशेषतः कलियुग में भगवद्धर्म्म ही की नित्यता है, यह भीं निश्चय है।

यथा हेमाद्रौ श्री भागवद्वाक्यम्

कलौ सभाजयन्त्यार्य्याः गुणज्ञास्मारभागिनः।
यत्र संकीर्त्तनेनैव सर्व्व स्वार्थोभिलभ्यते॥

अनेक निबन्धेषु महाभारते

कलौ कलिमलध्वंस सर्व्वपापहरं हरिम्।
येऽर्च्चयन्ति नरा नित्यं तेपिवन्द्या यथा हरिः॥

मदन पारिजाते योगि याज्ञवल्क्यः

विष्णुर्ब्रह्माचरुद्रश्च विष्णुर्द्देवोजनार्द्दनः।
तस्मात्पूज्यतमंनान्यमहंमन्ये जनार्द्दनात्॥इत्यादि

और इस में विशेषता यह है कि एक श्री भगवान के पूजन में सब का पूजन आ जाता है—यथा श्री मद्भागवते—

यथा तरोर्मूलनिषेचनेन तृप्यन्ति तत्स्कन्दभुजोपशाखाः।
प्राणोपहाराच्च तथेन्द्रियाणां तथैव सर्व्वार्हणमच्युतेज्या॥

और इस भगवद्धर्म्म के सब अधिकारी हैं; यह श्री मुख गाया है—

स्त्रियोवैश्यास्तथा शूद्रास्तेपियान्ति पराङ्गतिम्।

ऐसा ही परम भक्त श्री प्रह्लादजी ने भी कहा है—

नालं ऋषित्वं देवत्वं द्विजत्वं वाऽसुरात्मजाः।
प्रीणनाय मुकुन्दस्य न धनं न बहुज्ञता॥ इत्यादि

इस्से सर्व्व साधारण को और अनेक धर्म्मों को छोड़ कर केवल भगवद्धर्म्म मुख्य हुआ तो भगवद्धर्म्मों में परम पुनीत कार्त्तिक व्रतादि यहां दिखाते हैं।

कार्त्तिक सब मासों में पवित्र है और उस की नित्य क्रिया क्या है यह कार्त्तिक कर्म्म विधि नामक निबन्ध में लिख चुके हैं। यहां वे धर्म्म लिखे जाते हैं जो नैमित्तिक हैं और जैसे कार्त्तिक स्नान आश्विन शुद्धा 11 से आरम्भ होता है, इस से नैमित्तिक कृत्य भी उसी दिन से लिखते हैं।

अथ आश्विन शुद्धा, 11—इसी एकादशी से कार्त्तिक के सब व्रत आरम्भ करना। इस एकादशी का नाम पापाङ्कुशा है। इस में भगवान की पद्मनाभ नाम से पूजा करें।

अथ आश्विन शुद्ध 15—यदि एकादशी से कार्त्तिक स्नान न आरम्भ किया हो तो इस दिन से करना। इस पूर्णिमा में दो कर्म्म हैं—प्रथम रासोत्सव, द्वितीय कोजागर व्रत।

रासोत्सव जिस दिन सायंकाल में पूर्ण चन्द्र हो उस दिन करना क्योंकि, "कलाहीने शशाङ्के तु न कुर्य्याच्छारदोत्सवम्" इस वाक्य में हीन चन्द्र का निषेध है और भगवान को श्वेत वस्त्र, श्वेताभरण, श्वेत नैवेद्य समर्पण करना और चांदनी में शृंगार सहित बैठ कर रासलीला के भजन गाना इस दिन श्रीमद्भागवत की रासमंचाध्यायी का पाठ बहुत पुण्य देनेवाला है और किसी ग्रन्थकार ने यह भी लिखा है कि रात्रि को चन्द्रमा की चांदनी में सुई में डोरा पिरोना और कुछ अक्षर पढ़ना,

इस्से नेत्र की जोति बढ़ती है।

कोजागर व्रत जिस दिन आधीरात को पूर्णिमा हो, उस दिन करना। सांझ से लक्ष्मी और इन्द्र का स्थापन कर के पूजा करना और नारियल का जल लक्ष्मी को भोग लगा कर पीना। आधीरात के समय लक्ष्मी जी यह कहती हुई निकलती हैं कि जो जागता मिलैगा और जुआ खेलता होगा, मैं उसे धन दूंगी। कमल पर बैठी हुई लक्ष्मी का ध्यान करना और 'ॐ लक्ष्म्यै नमः' इस मन्त्र से सब पूजा कर के इस मन्त्र से पुष्पांजली देना।

नमस्ते सर्व्व देवानां वरदासि हरिप्रिये।
यागतिस्त्वत्प्रपन्नानां सामेभूयात्त्वदर्च्चनात्॥

इन्द्र को भी चार दांत के श्वेत हाथी पर बैठे ध्यान कर के 'इन्द्राय नमः' इस मन्त्र से पूजा कर के पुष्पांजली इस मन्त्र से देना।

विचित्रैरावतस्थाय भास्वत्कुलिशपाणये।
पौलोम्यालिंगितांगाय सहस्राक्षाय ते नमः॥

इसी पुनवासी को बड़े पुत्र की आरती और तिलक करना और रात को जागरन करना।

अथ कार्त्तिक कृष्णा 4—इस चतुर्थी को कर्क चतुर्थी का व्रत है। इसी चतुर्थी में रानियों सहित राजा दशरथ की पूजा करना।

अथ कार्त्तिक कृष्णा 8—इस अष्टमी का नाम राधाष्टमी है यह अष्टमी अरुणोदय व्यापिनी लेना और अरुणोदय की समय न मिलै तो सूर्य्योदय व्यापिनी मानना इस अष्टमी को श्री राधाकुंड में स्नान करना और श्री राधिका का पूजन करना। इस दिन श्री राधा सहस्रनाम पाठ का बड़ा पुन्य लिखा है। इस दिन पुत्रवती स्त्री को गो पूजन का, दाम्पत्य और शिव पूजन का विधान भी कोई ग्रन्थकार लिखते हैं।

अथ कार्त्तिक कृष्णा 11—इस एकादशी का नाम रमा है। इस्में व्रत और जागरन और श्री राधादामोदर का पूजन करना और रात्रि को दीपदान करना।

अथ कार्त्तिक कृष्ण 12—इस को वत्स द्वादशी कहते हैं—यह द्वादशी सायंकाल व्यापिनी मानना और इस में नक्त व्रत करना। ब्रह्मचर्य्य से रहना और उड़द का भोजन करना, पृथ्वी पर सोना, सांझ की समय गऊ की पूजा करना। वह गऊ सीधी और दूध देने वाली हो और उस्का बच्चा भी उसी रंग का हो। सब पूजा कर के तामे के अरघे में इस मन्त्र से अर्घ देना।

क्षीरोदार्णवसम्भूते सुरासुरनमस्कृते।
सर्वदेवमयेमातर्गृहाणार्घ्यं नमोस्तुते॥

फिर इस मन्त्र से गोग्रास देना।

सर्व्वदेवमयेदेवि सर्व्वदैवैरलंकृते।
मातर्ममाभिलषितं सफलंकुरुनन्दिनि॥

इसी दिन गऊ का घी, दही और मठा तथा तेल का और कढ़ाई का किया भोजन न करना। इस द्वादशी से पांच दिन तक सांझ पीछे देवता, ब्राह्मण, गऊ, अपने से बड़े मनुष्य, मातादिक अपने से बड़ी स्त्री, हाथी और घोड़े की आरती करना और सांझ को दीए बालना। उत्तर मुख नव वा विशेष दीए बाल कर शुभाशुभ विचारना। दीया बालने का मन्त्र।

सूर्य्यांशसम्भवादीपा अन्धकार विनाशकाः।
त्रिकालेमांदीपयन्तु दिशन्तुचशुभाशुभम्॥

अथ कार्तिक कृष्णा 13—इस दिन सांझ को यम का दीया द्वार के बाहर देना। मन्त्र—

मृत्युनापाशदंडाभ्यां कालेनश्यामयासह।
त्रयोदश्यांदीपदानात् सूर्य्यजः प्रीयतां मम॥

इसी तेरह के दिन गो व्रत भी होता है।

अथ कार्तिक कृष्णा 14—इस चतुर्दशी में जो मंगलवार पड़े तो श्री महादेव जी का व्रत और पूजा करना। यह चतुर्दशी स्नानवाले चन्द्रोदय व्यापिनी मानैं और सर्व्वसाधारण इस में अवश्य स्नान करै, क्यौंकि जो इस में तेल लगा के सिर मल के नहीं नहाते उन को बड़ा दोष होता है। स्नान की समय खेत की हल से निकाली मिट्टी, चिचिड़ा, भटकटैया और तुम्बी तीन बेर अपने ऊपर से फिरावै और स्नान करके तिलक कर के तब नित्य का कार्तिक स्नान करै। चिचिड़ा घुमाने का मन्त्र—

सीतालोष्ट समायुक्त संकटकदलान्वित।
हरपापमपामार्ग भ्राम्यमाणः पुनः पुनः॥

नित्य स्नान करके यम तर्पण करे। यह तर्पण जिसका पिता जीता हो वह भी करे। मन्त्र—

यमाय नमः, धर्म्मराजाय नमः, मृत्यवे नमः, अन्तकाय नमः, वैवस्वताय नमः, कालाय नमः, सर्व्वभूतक्षयाय नमः, औदुम्बराय नमः, दध्नाय नमः, नीलाय नमः, परमेष्टिने नमः, वृकोदराय नमः, चित्राय नमः, चित्रगुप्ताध्य नमः।

इस मन्त्र से तीन तीन अंजली जल तिल समेत दें। इस चतुर्दशी से प्रतिपदा तक महाराज बलि का राज रहता है, इस्से इन तीनों दिन घर स्वच्छ रक्खै, दीए बालै,

उज्ज्वल वस्त्र पहिने और गीतादिक से चित्त प्रसन्न रक्खैं। रात को चौमुखा दीया, नरक के नाम का, इस मन्त्र से निकाले।

दत्तो दीपञ्चतुर्दश्यां नरकप्रीतये मुदा।
चतुर्वत्तिसमायुक्त स्सर्वपापापनुत्तये॥

पीछे हाथ में जलती लकड़ी वा पलीता लेकर पितरों का मार्ग दिखावे। मन्त्र—

अग्निदग्धाश्च ये जीवा येप्यदग्धाः कुले मम।
उज्ज्वलज्योतिषादग्धास्ते यांतु परमां गतिम्॥
यमलोकम्परित्यज्य आगता ये महालये।
उज्ज्वलज्योतिषावर्त्म प्रपश्यन्तु व्रजन्तुते॥

इसी रात्रि को कोई काली पूजन भी करते हैं और हनुमानजी का जन्मोत्सव भी इसी रात्रि को होता है और इसी रात्रि में वीरों का पूजन, कुमारी पूजन और तन्त्रोक्त मन्त्रों की सिद्धि भी होती है पर यह अधिकारी-परत्व है। सतोगुनी भक्तों को तो परम भागवत हनुमानजी का ही पूजन ग्राह्य है। हनुमानजी को तुलसी दल पर श्री राम नाम लिखकर चढ़ाना और लड्डू का भोग रखकर रामायण का पाठ वा और कुछ रामचरित सुनाना।

मन्त्र—यत्र यत्र रघुनाथकीर्त्तनं तत्र तत्र कृत मस्तकांजलिम्।
वाष्पवारि परिपूरित लोचनं मारुतिन्नमतराक्षसान्तकम्॥

इस चतुर्दशी को नक्तव्रत करना वा उड़द के पत्ते शाक का फल विशेष है। जो इस चतुर्दशी को मंगलवार पड़े तो चित्राव्रत और शिव पूजन करना।

अथ कार्त्तिक कृष्णा 30—यह दीपावली अमावस्या है, इसमें दिन को व्रत करना। सांझ को भगवान के मन्दिर में दीपदान करना और दीए के वृक्ष बनाना और अनेक प्रकार के भोग समर्पण करके हटरी में बैठाना। सांझ को अपना घर सब स्वच्छ करके यथाशक्ति उसकी शोभा करना। सड़कों को राजा आज्ञा देकर स्वच्छ करावै और तोरणादिक सड़क के बाहर लगाना, दूकान पर वस्तु रखना और घर में सब स्थानों पर दीया बाल के लक्ष्मी और बलि का पूजन करना, लक्ष्मी को खोए का लड्डू भोग लगाना और इस मन्त्र से दीपदान करना।

त्वं ज्योतिः श्री रविश्चन्द्रो विद्युत्सौवर्ण तारकाः।
सर्वेषां ज्योतिषांज्योतिर्दीपज्योतिर्नमोस्तुते॥

रात को राज मार्ग में, श्मशान में, नदी के वा तड़ाग के तटों पर, मन्दिरों में शिखरों में, गलियों में और दुर्गम स्थानों में राजा दीया बालने की आज्ञा दे। सब लोग शृंगार कर के, सुगन्ध लगा के, पान खाते बाहर निकलैं और मित्रों से सम्बन्धियों

से मिलैं। वारांगना और नटनर्तकादिक नृत्य गीत करैं। राजा (यदि हिन्दू हो) इस बात की डौंड़ी पिटवा दे कि आज महाराज बलि का राज्य है, कोई दुखी न हो, सब अपना मनमाना करैं। जीवहिंसा, सुरापान, अगम्यागमन, चोरी और विश्वासघात ये पांच पाप छोड़कर छूई हुई वस्तु का भोजन, वारांगनासेवन, द्यूत और सब जाति के संग बैठना यह सब राजा बलि के राज में पाप नहीं है।

गोप लोग गऊ का शृंगार करैं और सब लोग गऊ को भोजन दें। मल्ल लोग मल्लयुद्ध करैं। घोड़े वाले घोड़ा नचावैं। रात को राजा नगर के बाहर निकलै और बालकों को एकत्र कर के उनका खेल देखै और उनको खिलौना मिठाई दे। सब लोग बाजे बजावैं और आनन्द की बातैं करैं। रात को स्त्रियों के वा ब्राह्मणों वा स्नेहियों के संग जूआ खेलैं। इसमें पूर्व पूर्व मुख्य है। आधी रात को जब पुरुष सोने लगैं तब स्त्रियां सूप और डौंड़ी पीटती हुई दरिद्रा को घर से बाहर निकालैं। इस दिन भी अभ्यंग की विधि है।

अथ कार्तिक शुद्धा 1—इसमें श्री गोबर्द्धन पूजन, बलि पूजा, दीपोत्सव, गोक्रीड़ा, मार्गपालीबन्धन, वृष्टिकाकर्षण, नया वस्त्र पहिरना, उत्सव जुआ खेलना, मंगल मालिका और स्त्रियों की आरती करना ये मुख्य कर्म्म हैं। उसमें प्रथम श्री गोबर्धन पूजन है। यह उत्सव अवश्य माननीय है क्यौंकि इसके हेतु श्री मुख वाक्य है।

एतन्ममतन्तात क्रियतां यदि रोचते।
अयं गोब्राह्मणादीनाम्मह्यञ्च दयितोमखः॥

इस में प्रेम मार्ग में वा और अन्य मार्ग में जैसी जिसकी रीति हो वह पूजन करै। अब साधारण लोगों के हेतु यह रीति लिखी जाती है। जहां साक्षात श्री गोबर्द्धन पर्व्वत है वहां तो उन्हीं की और जहां गोबर्द्धन नहीं है वहां गऊ के गोबर का पर्व्वत बनाना, उत्तर मुख रखना और एक कन्दरा बनाना। वहां भगवान की मूर्ति रखकर षोडशोपचार पूजन करना और अन्नकूट भोग लगाना। जहां गिरिराज की शिला हो वहां तो गिरिराज की शिला कन्दरा में रखकर पूजन करना। जहां शिला न हो वहां शालग्राम वा छोटे श्री ठाकुरजी की मूरत रखकर पूजा करनी और गऊ गोप की भी पूजा करनी। पहिले भगवान की पूजा करनी, उसके मन्त्र—

बलिराज्ञो द्वारपाल भवानद्यभवप्रभो।
निज वाक्यार्थनार्थाय सगोबर्द्धन गोपते॥
गोपालमूर्ते विश्वेश शक्रोत्सव विभेदक।
गोबर्द्धनकृतच्छत्र पूजां मे हरगोपते॥
देवे वर्षति यज्ञविप्लवरुषा वर्षाश्मपर्षानिलैः।
सीदत्पालपशुस्त्रियात्मशरणं दृष्ट्वानुकमूपुत्स्मयन्॥

उत्पाटयैक करेणशैलमवलो लीलोच्छिलीध्रं यथा।
विभ्रद्‌गोष्टमपान्महेन्द्रमदभित् प्रीयान्नइन्द्रीगवां॥
इति भगवत् प्रार्थना मन्त्र।
गोवर्द्धनधराधार गोकुलत्राणकारक।
विष्णुवाहुकृतच्छाय गवांकोटिप्रदोभव॥
एषोऽवजानतेमर्त्यान् कामरूपी वनौकसः।
हन्तह्यस्मै नमस्यामः शर्म्मणे आत्मनोगवाम्॥
हन्तायमद्रिरवला हरिदासवर्य्यो। यद्रामकृष्णचरणस्पर्श प्रमोदः॥
मानन्तनोति सहगोगणयोस्तयोर्यत्॥ पानीयसूयवसुकन्दरकन्दमूलैः॥
इति गिरिराज प्रार्थना मन्त्र।
या लक्ष्मीर्लोकपालानां धेनुरूपेण संस्थिता।
घृतं वहतियज्ञार्थे ममपापं व्यपोहतु॥
अग्रतस्सन्तु मे गावो गावो मे सन्तु पृष्ठतः।
गावो मे हृदये सन्तु गवाम्मध्ये वसाम्यहम्॥
इति गो प्रार्थना मन्त्रौ।

अहोभाग्यमहोभाग्यां नन्दगोप ब्रजौकसाम्।
यन्मित्रम्परामानन्दं पूर्णब्रह्मसनातनं॥
आसामहोचरण - रेणुजुषामहंस्यां
वृन्दावनेकिमपि गुल्मलतौषधीनां॥
यादुस्त्यजंस्वजन आर्य्यपथंविहाय
भेजुर्मुकुन्दपदवीं श्रुतिभिर्विमृज्ञां॥
यावैश्रियार्चितम - जादिभिराप्तकामैः
योगेश्वरैरपिदयात्म निरासगोष्ठयां।
कृष्णस्य तद्‌भगवतश्चरणरविन्दे
न्यस्तं स्तनेषुविजहुः परिरभ्यतापं॥
बन्दे नन्द व्रजस्त्रीणां पादरेणूसभीक्षणशः।
यासांहरिकथोद्‌गीतं पुनातिभुवनत्रयम्॥
इति गोप-गोपी-प्रार्थना मन्त्रः
धन्येयमद्यधरणी तृणवीरुधस्त्वत्।
पादस्पृशो द्रुमलता करजाभिमृष्टाः॥
नद्योद्रयः खगमृगास्मदयावलोकैः।
गांप्योंतरेण भजयोरपियत्पृहाश्रीः॥
इति व्रजप्रार्थना मंत्रः

इन मंत्रों से गोबर्द्धन-पूजन कर के अन्नकूट भोग भगवान को समर्पण कर के नमस्कार करना। इति।

इस प्रकार गोबर्द्धन-पूजा कर के महाराज बलि की पूजा करै। घर के एक कोने में महाराज बलि की और रानी विंध्याबलि की मूर्ति पाँच रंग से लिखै। जीभ, ओंठ, हथेली, तलवा और आँख के कोने लाल रंग से, बाल काले रंग से और सब अंग पीले रंग से, कपड़े श्वेत रंग से और आयुधादिक नीले रंग से लिखैं। दो भुजा बनावै और राजाओं के सब चिह्न बनाकर अक्षत और षोडशोपचार से पूजा करै। मंत्र–

बलिराजनमस्तुभयं विरोचनसुतप्रभो।
भविष्येन्द्र सुराराते पूजेयं प्रतिगृह्य तां॥

बलि राजा की पूजा कर के कुबेर और लक्ष्मी की पूजा करनी। पूजा के पीछे स्त्रियां आरती करैं।

तीसरे पहर कास और कुस की मार्ग पाली बनाकर नगर के बाहर वृक्ष में बांधना और नीचे लिखे हुए मन्त्र से उसको नमस्कार करके सब लोग वाहनादि समेत उसके नीचे से निकलैं। इससे वर्ष भर कुशल होती है। मन्त्र–

मार्गपालिनमस्तेस्तु सर्व लोक सुखप्रदे।
विधेयैःपुत्रदाराद्यैः पुनरेहि व्रतस्य मे॥

सांझ को कुश काश की मोटी रस्सी बनाना और उसको एक ओर से राजपुत्रादिक एक ओर से नीच लोग खींचे। जो नीच लोग खींच ले जाएं तो जानना कि राजा की जय होगी।

रात को जुआ खेलना। यद्यपि जुआ खेलने का विधान तीनों दिन है परन्तु इस दिन मुख्य है। रात को जुआ स्त्रियों से खेलना और दीपदान करना, ब्राह्मणों को और मित्रों को वस्त्र और पान देना। इति।

अथ कार्त्तिक शुक्ला 2–इसका नाम यम द्वितीया है। इसमें प्रातः काल श्री यमुना स्नान। जहां श्री यमुना जी न हों वहां श्री यमुना जलपान वा मार्जन करना। काशीवासियों को यम तीर्थ स्नान और यमेश्वर का दर्शन करना। इस दिन अपने घर नहीं खाना, मुख्य करके छोटी बहिन के घर भोजन करना। छोटी बहिन न हो तो बड़ी के घर भोजन करना। वह भी न हो तो बूआ के घर वा नाते की बहिन के घर खाना। जो नाते की भी कोई बहन न हो तो मानी हुई बहिन वा मित्र की बहिन के घर खाना और बहन की पूजा करना। अपने घर कभी नहीं खाना। बहिन खिलाते समय इस मन्त्र से भाई की प्रार्थना करे।

भ्रातस्तवानुजाताहं भुंक्षभक्तमिदंशुभं।
प्रीतयेयमराजस्य यमुनाया विशेषतः॥

इस दिन श्री यमुनाजी ने यमराज को भोजन कराया है, इससे यमराज ने बरदान दिया है कि आज के दिन जो यमुना स्नान करे गा और बहिन का आदर कर के बहिन के घर खाएगा, उसको यम दण्ड न होगा। तीसरे पहर यमराज, यमी, यमुना, चित्रगुप्त और यमदूतों का पूजन करना। 'यमायनमः' इस मन्त्र से षोड़शोपचार पूजन कर के इन मन्त्रों से पुष्पांजलि देना।

यमाय नमः, निहंत्रे नमः, पितृराजाय नमः, धर्म्मराजाय नमः, वैवस्वताय नमः, दण्डधराय नमः, कालाय नमः, भूताधिपाय नमः, दत्तानुमारिणे नमः, कृत्तानुसारिणे नमः।

इन नाम मन्त्रों से पूजा करके अर्घ देना, उसका मन्त्र—

एह्येहिमार्तंडजपाशहस्त यमांतकालीकधरामरेश।
भ्रातृद्वितीयाकृतदेवपूजां गृहाणचार्ध्यभगवन्नमस्ते॥

अथ कार्त्तिक शुद्धा 4—इस दिन शेषादिक महानागों की पूजा करना।

अथ कार्त्तिक शुद्धा 5—इस दिन जया व्रत करना, विष्णु की जया सहित पूजा करना, श्वेत वर्ण द्विभुज जया का ध्यान करके विष्णु और जया की प्रत्यंग पूजा करके बांस के पात्र में सप्तधान दान करना और "येन बद्धो बली राजा" इस मन्त्र से रक्षाबन्धन करना।

अथ कार्त्तिक शुद्धा 6—जो मंगलवार हो तो अग्नि का पूजन करके ब्राह्मण भोजन कराना।

अथ कार्त्तिक शुद्धा 7—इस दिन कार्त्तवीर्य्य की पूजा करके उनका दीप दान करना।

अथ कार्त्तिक शुद्धा 8—इस दिन गऊ का पूजन, गोग्रास दान करना और इसी में शाक व्रत है। नक्तव्रत करना, शाक खाना और शाक ही ब्राह्मण को देना।

अथ कार्त्तिक शुद्धा 9—इस दिन श्री वृन्दावन की परिक्रमा करना। यह नवमी द्वापर की युगादि भी है। इसमें कूष्मांड दान करना और जगद्धात्री का पूजन करना। तुलसी के विवाह का उत्सव इसी दिन से आरम्भ होता है। जो तुलसी विवाह करै वह तीन दिन का व्रत करै। यद्यपि धात्री पूजन कार्त्तिक में नित्य ही है तथापि जो और दिन न किया हो तो इस दिन करैं। 'ॐ धात्र्यै नमः' इस मन्त्र से षोडशोपचार पूजा करै और आठ दीए आठ ओर बाल कर यह मन्त्र पढ़ै—

इमेदीपां मयादत्ता प्रदीप्ताघृतपूरिता।
धात्रिदेवि नमस्तुभ्यमतशान्तिम्प्रयच्छ मे॥

फिर भोगादिक समर्प्पण कर के इन मन्त्रों से पुष्पांजलि चढ़ावें—

धात्रिदेवि नमस्तुभ्यं सर्व्वपापक्षयंकरि।
पुत्रां देहिमहाप्राज्ञे यशोदेहि बलञ्च मे॥
प्रज्ञांमेधाञ्च सौभाग्यं विष्णु भक्तिञ्चशाश्वतीम्।
निरोगंकुरु मां नित्यं निष्पापं कुरु सर्व्वदा॥
सर्वज्ञङ्कुरुमादेवि धनवन्तन्तथा कुरु।
सम्वत्सरकृतं पापं दूरी कुरु ममाक्षये॥

फिर इस मन्त्र से सूत्र लपेटकर फेरी करै।

दामोदरनिवासायै धात्र्यै देव्यै नमो नमः।
सूत्रेणानेनबध्यामि सर्व्वदिवनिवासिनीम्॥

फिर इन मन्त्र से फूल चढ़ावै। धात्रयै नमः, शान्त्यै नमः, कान्त्यै., मेधायै., प्रकृत्यै. विष्णुपत्न्यै., महालक्ष्म्यै., रमायै., कमलायै., इन्दिरायै, लोकमात्रे., कल्याण्यै., कमनीयायै., सावित्र्यै., जगद्धात्र्यै., गायत्र्यै., सुधृत्यै., अव्यक्तायै., विश्वरूपायै., सुरूपायै., अब्धिभवायै नमः इन मन्त्रों से फूल चढ़ाना, धात्री के मूल में तर्पण करना।

पितापितामहाश्चान्ये येऽपुत्रा येप्यंगोत्रिणाः।
तेपि वन्तु मया दत्तं धात्रीमूलेऽक्षयम्पयः॥

आब्रह्मस्तम्ब पर्य्यन्तमित्यादि से फिर तर्पण करैं। यह तर्पण सव्य ही से करैं। धात्री के नीचे दामोदर भगवान की पूजा करैं, चित्रान्न, चित्रवस्त्र समर्पे, ब्राह्मणों का जोड़ा खिलावैं, भगवान की षोडशोपचार पूजा करके इस मन्त्र से अर्घ दें।

अर्घ्यं गृहाण भगवन् सर्व्वकामप्रदोभव।
अक्षय्यासन्ततिमेस्तु दामोदर नमोस्तुते॥ इत्यादि

अथ कार्त्तिक शुद्धा 10—इस दशमी को सार्व्वभौम व्रत होता है।

अथ कार्त्तिक शुद्धा 11—इस एकादशी का नाम प्रबोधिनी है। इस दिन भगवान सो कर उठते हैं, इससे यह परम मंगल दिन है। इस दिन जिस समय मुहूर्त अच्छा हो उस समय भगवान को जगाना। पहिले नीचे पृथ्वी में अनेक रंगों से मंगल मंडप, साथिया, चक्र इत्यादिक बना कर उसपर चौंसठ ऊख का चार खम्भा बनाकर खड़ा करना, उसके नीचे भगवान को बिठाना और फिर घंटा शंख बजाते हुए इन मन्त्रों से जगाना।

ब्रह्मेन्द्ररुद्राग्नि कुवेरसूर्य सोमादिभिर्वन्दित वन्दनीय।
बुद्धयस्व देवेश जगन्निवास मन्त्रप्रभावेन सुखेन देव॥
इयं च द्वादशी देव प्रबोधार्थंतु निर्मिता।
त्वयैवसर्वलोकानां हितार्थं शेषशायिना॥
उत्तिष्ठोत्तिष्ठ गोविन्द त्यजनिद्राम्जगत्पत।
त्वयिसुप्तेजगत्सुप्तमुत्थितेउत्थितं जगत्॥
उत्तिष्ठोत्तिष्ठ गोविन्द उत्तिष्ठ गरुड़ध्वज।
उत्तिष्ठपुण्डरीकाक्ष त्रैलोक्ये मङ्गलंकुरु॥

तथा जो निकुंज के परम रस के अधिकारी हों वह इन मन्त्रों से जगावैं।

विगता रजनी नाथ प्रमदानां सुखप्रदा।
उदेत्यंदिनमणिर्वियोगी जनवंचकः॥
प्राणनाथ जगन्नाथ गोपीनाथ कृपानिधे।
चिरसुप्तोसि जागृष्व सुरतश्रम कर्षितः॥
ललितावाद्यतेवीणां विशाषा नृत्यतेंगणे।
गायन्तिगोपिकास्सर्व्वा स्तावकंनिर्म्मलंयशः॥
वयस्या द्वारि सम्प्राप्ताः क्रीड़ार्थंतवमानद।
हय्यंगवीनहस्ता सात्वांयशोदाऽभिवांछति॥
वियुक्ताश्चक्रवाकिन्यः पक्षिणोकुर्व्वतेरवम्।
वाति वायुस्सुखस्पर्शो दीपोयंमन्दतां गतः॥
उत्तिष्ठोत्तिष्ठ प्राणेश उत्तिष्ठोत्तिष्ठ वल्लभ।
मुखन्दर्शय मे नाथ वियोगं शमयप्रिय॥
त्वयि सुप्ते जगन्नाथ जगत्सुप्तम्भवेदिदम्।
उत्थिते चेष्टते सर्व्वमुत्तिष्ठोतिष्ठ माधव॥

इन मन्त्रों से जगा के पंचामृत स्नान कराना और चन्दनादिक से उद्वर्त्तन करके शीत के नए वस्त्र समर्पण करके पुष्पादिकों से पूजन करना। मन्त्र–

गतामेधा वियच्चैव निर्म्मलंनिर्म्मलादिशः।
शारदानिच पुष्पाणि गृहाण मम केशव॥

इस भांति पुष्प, गन्ध, अक्षत, धूप, दीप, नैवेद्य, ताम्बूल, फलादिक अर्पण कर के आरती कर के इन मन्त्रों से स्तुति करना।

योऽविद्ययाऽनुपहतोपिदशार्द्धवृत्या
निद्रामुवाह जठरीकृतलोकयात्रः।

अन्तर्जलेहि कशिपुस्पर्शानुकूलाम्
भीमोर्मिमालिनि जनस्य सुखं विवृण्वन्॥
सोसावदभ्र करुणो भगवान् विवृद्ध
प्रेमस्मितेन नयनाम्बुरुहं विजृम्भन्।
उत्थाय विश्वविजयायचनोविषादम्
माध्व्यागिराऽपनयतात्पुरुषः पुराण॥
यन्नाभिपद्मभवनादज आविरासीत्
लोकत्रयोपकरणो यदनुग्रहेण।
तस्मै नमस्त उदरस्थ भवाय योग
निद्राऽवसान विकसन्नलिनेक्षणाय॥

प्रार्थना कर के दंडवत प्रदक्षिणा कर के कार्त्तिक के सब व्रत भगवान के सामने समाप्त करै। इस दिन श्री ठाकुरजी को रथ पर बिठा कर नगर में घुमाने का महापुण्य है। भगवान को रथ पर बैठा कर मंगलपाठ वेदपाठ बाजा शंख घंटा बजाते हुए नगर में घुमावैं और जहां जहां रथ जाय वहां वहां लोग पूजा करैं। मन्त्र–

यद्रोषविभ्रम विवृत्तकटाक्षपात
सम्भ्रान्त नक्रमकरो भयगीर्ण घोषः।
सिन्धुशिशरस्यर्हणं परिगृह्य रूपी
पादारविन्दमुपगम्य वभाष एतत्॥
नत्वावयं जड़धियोरुविदाम एतत्
कूटस्थमादिपुरुषं जगतामधीशं॥
यत्सत्वमस्सुरगणा रजसः प्रजेशा
अन्ये च भूतपतय स्सभवात् गुणेशः॥
कामम्प्रयाहि जहि विश्रवसोवमेहं
त्रैलोक्य रावणमवाप्नुहि वीर पत्नीम्॥
वधीहि सेतुमिहिते यशसो वितत्यै
गायन्ति दिग्विजयिनो यमुपेत्य भूपाः॥
स्वस्त्यतु विश्वस्य खलः प्रसीदताम्
ध्यायन्तु भूतानि शिवम्मिथोपिवा।
मनश्चभद्रम्भजता दधोक्षजे
आवेश्य तान्नो मतिरप्य हैतुकी॥
युक्तश्शैव्यादिवाहैर्मरकतसुरणत्किरणत्किङ्किणीजालमाला।
रत्नोघैमौंक्तिकानामविरलमणिभिस्सम्भृतैश्चैवहारैः॥

हेमैः कुम्भैः पताका शिवतर रुचिभिर्भूषितः केतु मुख्यैः ।
छत्रैर्ब्रस्मेशवन्धो दुरित हरहरेः पातु जैत्रो रथोव॥
वक्त्रं नीलोत्पलरुचि लसत् कुण्डलाभ्यां सुमृष्टम् ।
चन्द्राकारं रचित तिलकं चन्दने नाक्षतैश्च॥
गत्यां लीला जनसुखकरीं प्रेक्षणेनामृतौघम् ।
पद्मावासंसृततमुरसा धारयन् पातु विष्णुः॥
मोदन्तां सुजनास्तवनिन्दितधियस्त्यक्ताखिलोपद्रवाः ।
स्वस्थास्सुस्थिरबुद्धयः प्रतिहता मित्रारमन्तां सुखम्॥
रे दैत्यागिरिगह्नराणि गहनान्याशु व्रजध्वं भयात् ।
दैत्यारिर्भगवान यन्नरहरिं यानं समारोहति॥
पलायध्वम्पलायध्वं रेरे दनुज दानवाः ।
संरक्षणाय लोकानां रथारूढ़ो नृकेशरी॥

इन मन्त्रों को पढ़ते और भगवान का चरित्र गाते हुए रथ को घुमावै। रथ के खींचने का, रथ के संग चलने का, रथ पर बैठे भगवान् के दर्शन करने का, तथाच पूजा करने का अनन्त माहात्म्य है। विस्तार भय से यहां नहीं लिखा। इसी दिन तुलसी जी का विवाह भी है। तुलसी विवाह की विधि विशेष और ग्रन्थों में लिखी है, देख लो। संक्षेप से यहां लिखते हैं। तुलसी अपने हाथ से घर वा बगीचे में लगाना, जब तीन महीने का वृक्ष हो तब उसका पूजन आरम्भ करना और फिर शुभ मुहूर्त्त देखकर विवाह करना। मंडप, कलश स्थापन, वेदी इत्यादि सब विवाह की भांति बनाकर नवग्रह, मख, मातृका पूजन नान्दी श्राद्ध करके दान करना। जो लग्न कोई अच्छी मिले तो उस लग्न में, नहीं तो गोधुली लग्न में विवाह करना। अन्तरपट करके ''वासश्रुतः'' इस मन्त्र से वस्त्र पहिराना। ''यदावध्ने'' इस मन्त्र से कंकण बान्धना और मंगलाष्टक पाठ करके अन्तरपट हटाकर ''मयासम्बर्द्धिता यथाशक्त्यलंकृतामिमांतुलसीं देवी दामोदराय वराय तुभ्यमहं सम्प्रददे'' यह संकल्प करके जल भगवान के सामने छोड़ना और तुलसी को भगवान से छुला देना। उस समय यह मन्त्र पढ़वाना ''कोदात्क स्माअदात'' इत्यादि। फिर होम करना ''पंचत्वनो अग्ने इत्यादि'' मन्त्र से नव आहुति देकर फिर होम इन मंत्रों से करना। पहिले द्वादशाक्षर से फिर वासुदेवायनमः स्वाहा, नारायणाय., माधवाय., गोविन्दाय., विष्णवे., मधुसूदनाय., त्रिविक्रमाय., वामनाय., श्रीधराय., हृषीकेषाय., पद्मनाभाय., दामोदराय, उपन्द्राय, वासुदेवाय, अनिरुद्धाय, अच्युताय, अनन्ताय., गदिने., चक्रिणे., विष्वक्सेनाय., वैकुण्ठाय., जनार्दनाय., मुकुन्दाय., अधोक्षजाय, इन मन्त्रों से होम करके दक्षिणा, भूयसी दक्षिणा, आचार्य दक्षिणा, शय्यादानादिक करके इस मन्त्र से प्रार्थना करना।

त्वन्देवि मेग्रतो भूया तुलसी देवि पार्श्वतः।
देवित्वं पृष्ठतो भूयास्त्वद्दानात् मोक्षमाप्नुयाम्॥

विवाह के समय स्त्रियां गीत गावैं।

इति तुलसी विवाह॥

इस एकादशी को व्रत करके रात को जागरण करना। इस रात को जागरण का, दीपदान का बड़ा पुण्य है। जो इस एकादशी को सोमवार और उत्तरा भाद्रपद नक्षत्र हो तो बड़ी फलदात्री हो। इसी दिन से भीष्म पंचक का व्रत करना। 108 द्वादशाक्षर मन्त्र जप करके भगवान को पंचामृत स्नान कराके 'ॐ विष्णवे नमः' इस मन्त्र से 108 आहुति देकर व्रत करना, पृथ्वी पर सोना, भीष्म तर्पण करना। पहिले दिन तुलसी से चरण पूजन करके गोबर प्राशन करना, दूसरे दिन विल्वपत्र से जांघ की पूजा करके गोमूत्र प्राशन करना, तीसरे दिन भंगरैया से नाभि पूजन करके दूध प्राशन करना, चौथे दिन कनैल से कन्धा पूजन करके दही प्राशन करना, पांचवें दिन की विधि पूर्णमासी की विधि में देखो। इसी दिन मत्स्य भगवान को घी के घड़े पर रख के स्वर्ण की मूर्ति बनाकर पूजा करना भी किसी का मत है। पूजा कर के इस मन्त्र से घड़ा दान कर देना।

जगद्योनिर्जगद्रूपो जगदादिरनादिमान्।
जगदाद्यो जगद्बीजो प्रीयतां मे जनार्द्दन॥

अथ कार्त्तिक शुद्धा 12—यह मन्वंतरादि है। इसमें दीपदान, प्रातः समय नीराजनादिक करना।

अथ कार्त्तिक शुद्धा 14—इसका नाम बैकुण्ठ चतुर्दशी है। यह परम पुण्य दिन है। इसमें स्नान दानादिक करना। इसी चतुर्दशी में ब्रह्मकूर्चक व्रत और पाषाण होते हैं। इसमें विश्वेश्वर का दर्शन और पूजन होता है। इसमें रात को जागरण करना और कार्त्तिक का उद्यापन करना।

अथ कार्त्तिक शुद्धा 15—यह बड़ी पवित्र तिथि है। इसमें जो विशाखा के सूर्य्य और कृर्त्तिका के चन्द्रमा हों तो पद्मक नामक बड़ा पवित्र योग हो। इसमें पुष्कर स्नान वा श्री यमुना स्नान वा श्रीगंगा स्नान करके गोदान करना। इसमें जो भरणी, कृत्तिका वा रोहिणी नक्षत्र हों तो बड़ा फल है। इसी पूर्णिमा में मत्स्य जयन्ती मत्स्य भगवान का पूजन करके दानादिक करना। इसी में सांझ को त्रिपुरोत्सव करना। सांझ को इस मन्त्र से दीपदान करना—कीटाः पतंगाः मशकाञ्च वृक्षाः जले स्थले ये विचरन्ति जीवाः। दृष्टवा प्रदीपं नव जन्म भागिनो भवन्तु नित्यं श्वपचाश्च विप्रा॥

इस पूर्णिमा को कार्त्तिकेय का दर्शन करना। यह मन्वादि भी है इसमें नक्तव्रत वा उपवास करना। सांझ को कृत्तिका का पूजन करना, मन्त्र शिवायै नमः, सम्भूत्यै

नमः, प्रीत्यै नमः, सन्तत्यै नमः, अनुसूयायै नमः, क्षमायै नमः, कर्त्तिकेयाय नमः, खड्गिने नमः, वरुणाय नमः, हुताशनाय नमः। इन मन्त्रों से कृत्तिका और कार्त्तिकेय का पूजन करना। पूजा करके क्षीरसागर दान करना। चौबीस अंगुल का क्षीरसमुद्र बना कर गऊ का दूध भर कर सोने की मछली और मोती की आंख बनाकर दान करना। जो एकादशी को व्रत न समाप्त किया हो तो कार्त्तिक व्रत इस मन्त्र से समाप्त करना।

इदं व्रतं मयादेव कृतं प्रीत्यै तव प्रभो।
न्यूनं सम्पूर्णतां यातु त्वत् प्रसादाज्जनार्दन॥

इसी पूर्णिमा में नील वृषभ दान करना और इसी में सन्तान व्रत, राशि व्रत और मनोरथ पूर्णिमा व्रत होता है। इसी पूर्णिमा में चातुर्मास के व्रत समाप्त करना। उस व्रत के दान लिखते हैं। नक्त व्रत में दो वस्त्र दान करना। एकान्तर उपवास में गऊ। भू शयन में शय्या। एक बेर खाने से गऊ देना। जो अन्न छोड़ा हो, तो वह सोने का बनाकर देना। कृच्छ किया हो तो दो गऊ देना। शाकाहार किया हो वा दूध छोड़ा हो वा दूध पीता हो वा और कोई गोरस छोड़ा हो तो गऊ देना। ब्रह्मचर्य्य लिया हो तो सोना देना। पान छोड़ा हो तो दो वस्त्र देना। मौन लिया हो तो घी का घड़ा, दो वस्त्र और घंटा देना। जो नित्य रंग से मन्दिर में स्वस्तिकादिक बनाते हो तो गऊ और सोने का कमल देना। दीपदान में दीए और दो वस्त्र देना। गऊग्रास देते हों तो गऊ और बैल देना। पृथ्वी पर भोजन करता हो तो काँसे की थाली और गऊ देना। सौ फेरी देते हों तो वस्त्र। अभ्यंग छोड़ा हो तो तेल का घड़ा। केश न बनवाया हो तो मधु, चीनी, सोना। गुड़ छोड़ा हो तो ताम्र का पात्र और गुड़ और सोना देना। ऐसे ही जिस वस्तु को छोड़ा हो वह स्वर्ण समेत देना। जो लाख तुलसी चढ़ाया हो तो उद्यापन करना। सांझ को इस मन्त्र से दीपदान करना।

नमः पितृभ्यः प्रेतेभ्यो नमो धर्माय विष्णवे।
नमो याम्याय रुद्राय कान्ताय पतयेनमः॥

इस मन्त्र से दीपदान करना। यह पूर्णिमा परम फलदात्री है। इसमें जो कुछ सुकृत हो सो करना। भीष्म पंचक का व्रत इसी दिन समाप्त करके कालपुरुष का दान करना, होम करना। यह तिथि श्री राधिकाजी को बहुत प्यारी है, इससे वैष्णवों को इस तिथि में श्री राधासहस्रनाम पाठ, श्री राधिका मन्त्रजप और राधिका पूजन करना। इसी पूर्णिमा को गोलोक में श्री ठाकुरजी ने श्रीराधिकाजी का पूजन किया था और उस समय श्री महादेव जी ने ऐसा गान किया कि श्रीराधिकाजी सहित भगवान द्रव हो गए। इससे इसी पौर्णमासी को गंगाजी का जन्म है, अतएव इस दिन गंगा स्नान का बड़ा फल है और तुलसी का भी जन्म दिन यही है, यह देवी पुराण में लिखा है, इससे तिथि में तुलसी पूजन और भगवान को तुलसी समर्पण की मुख्यता है। विशेष कहां तक कहैं, यह कार्त्तिक

ऐसा पवित्र महीना है, इस में भी यह पूर्णिमा ऐसी पवित्र तिथि है कि इस में स्नान, दान, जप, तप, व्रत, जागरण, दीपदान इत्यादि सब कर्म्म अक्षय होते हैं।

दोहा

प्राणनाथ पद रज सुमिरि धारिहृदय आनन्द।
परम प्रेमनिधि रसिक बर बिरची श्री हरिचन्द्र॥
प्राणपियारे प्रेमनिधि प्रेमिन जीवन प्राण।
तिनके पद अरपन कियो यह कारतीक बिधान॥

॥ इतिश्री ॥

[लाइट प्रेस बनारस से सन 1872 ई. में प्रकाशित]

मार्गशीर्षमहिमा

(मासानाम्मार्गशीर्षोऽहं)

श्रीगोपीगोविन्दाय नमः

मार्गशीर्षमहिमा

श्लोकप्राचीन

नूतनजलधररूचये गोपवधुटीदुकूल चौराय।
तस्मै कृष्णाय नमः संसार महीरुहस्य बीजाय॥

श्लोक नवीन

व्रजजन सुखकारी । गोपिकावस्त्रहारी॥
सकल भुवन भारी। नित्यलीलावतारी॥
व्रजभुविपरिचारी । गोपनारीविहारी॥
दनुजतनुविदारी । पातुनश्चक्रधारी॥
सोरठा–प्रातहिअगहनन्हात, तिनगोपि-हकोचीरलै ।
तरु कदम्ब चढ़ि जात, चोरि चोरि नित प्रातही॥
दोहा– रासरसिक फल देन हित, तिनकों करत बिहार।
ऐसे प्रभु के पद कमल, बिनवत बारम्वार॥
सोरठा–पुनि बन्दौं सुखरास, भुक्ति मुक्ति पद सहज हीं।
जगहित अगहन मास, कृष्ण रूप गोपिन सुखद॥

विदित हो कि इस दास ने परोपकारार्थ जो कार्त्तिक कर्म्म विधि लिखी थी, उसे हमारे एक मित्र ने बहुत प्रसन्नतापूर्वक अंगीकार किया। इस हेतु ऐसी इच्छा हुई कि इसी भांति मार्गशीर्ष की भी विधि लिखी जाय तो बहुत लोकोपकार होगा क्यौंकि इस परम पवित्र मास का माहात्म्य बहुत कम लोग जानते हैं और यह अगहन महीना श्री भगवान का स्वरूप है जैसा आपने श्री मत् भगवतगीता और श्री मत् भागवत् में आज्ञा किया है और व्रज की कुमारिकागण ने श्री भगवान के प्राप्ति के अर्थ इसी अगहन का स्नान किया था, जिस से उन्हें श्री कृष्ण मिले। इस अगहन का माहात्म्य स्कन्दपुराण में लिखा है, जिसमें से नित्य विधि अध्याय क्रम से लिखते हैं। ब्रह्मा श्री भगवान से पूछते हैं कि आपने श्रीमद्गीता वा श्रीभागवत में आज्ञा किया है कि अगहन हमारा स्वरूप है, इस हेतु हम उसका माहात्म्य अच्छी भांति सुनना चाहते हैं।

श्री भगवानुवाच

अन्यैर्धर्म्मादिभिः कृत्वा गोपितं मार्गशीर्षकं।
मत् प्राप्तेः कारणं मत्वा देवैः स्वर्गनिवासिभिः॥

श्री भगवान आज्ञा करते हैं कि सब धर्म्मों कर के मार्गशीर्ष को स्वर्गनिवासी देवताओं ने हमारे प्राप्ति का कारण जान के छिपाय दिया है।

येक्रेचित्पुण्यकर्माणो ममभक्तिपरायणाः।
तेषामवश्यं कर्तव्यं मार्गशीर्षमघापहं॥

परन्तु जो कोई पुण्यकर्मा हमारे भक्त होयं उनको हमारे स्वरूप अगहन मास का व्रत अवश्य करना चाहिए।

उषस्युत्थाय योमर्त्यः स्नानं विधिवदाचरेत्।
तुष्टोहं तस्य यच्छामि आत्मानमपि पुत्रक॥

हे पुत्र, अगहन में जो चार घड़ी रात रहे उठ के नहाते हैं उनको हम अपनी आत्मा भी दे देते हैं॥

इत्यादि प्रथमाध्याये

श्री भगवान आज्ञा करते हैं

प्रथमाध्याय

अब स्नान की विधि लिखते हैं। बड़े सबेरे उठ के गुरु को नमस्कार कर के हमारा ध्यान करै और सहस्रनाम इत्यादि पढ़ के, गांव के बाहर मल त्याग कर के, शौच से शुद्ध होके, आचमन कर के, दतुअन कर के स्नान करै। तुलसी जी के जड़ की मिटी और उनका पत्ता लेकर के मूल मन्त्र पढ़ के वा गायत्री पढ़ के शरीर में लगाय के स्नान करे। स्नान के समय इन मन्त्रों से श्री गंगाजी का आवाहन करै।

विष्णुपादप्रसूतासि वैष्णवी विष्णु देवता।
त्राहि पापात्समस्तान्माजन्ममरणांतिकात्॥
तिस्रः कोट्योर्ध कोटिश्चतीर्थानां वायुरब्रवीत्।
दिविभुव्यन्तरिक्षेचतानिते सन्तु जाह्नवि॥
नन्दिनीत्येवते नाम देवेषुनलनीतिच।
दक्षापृथ्वी च विहगाविश्वनाथाशिवासती॥

विद्याधरी सु प्रसन्ना तथा लोकप्रसादिनी।
क्षेमावती जाह्नवी च शान्ताशान्तिप्रदायिनी।।
एतानि पुण्य नामोनि स्नानकाले प्रकीर्तयेत्।
भवेत्सन्निहितातत्र गंगा त्रिपथगामिनी।।

इन मन्त्रों को पढ़ के फिर श्री गंगा जी की मृत्तिका इस मन्त्र से सिर में लगाना।

मन्त्र

अश्वक्रान्ते रथक्रान्ते विष्णुकान्ते वसुन्धरे।
मृत्तिके हर मे पापं यन्मया दुष्कृतं कृतं।।
उद्धृतासिवराहेण कृष्णेन शतबाहुना।
नमस्ते सर्व देवानां प्रभवारणि सुव्रते।।

इस मन्त्र से मृत्तिका शिर में लगाय के स्नान करै। स्नान कर के जल में वस्त्र न निचोड़े। फिर आचमन करके कपड़ा पहन के फिर आचमन करै। फिर सन्ध्या तर्पण आरम्भ करै, तिसमें पहले ऊर्ध्वपुंड्र धारण करके सिर सन्ध्यादिक कर्म्म करै।

इत्यादि द्वितीयाध्याये

श्रीभगवान आज्ञा करते हैं कि तुलसी की मृत्तिका वा गोपी चन्दन वा प्रसादी कुंकुम चन्दनादि से तिलक लगाने का बड़ा पुण्य है और गोपी चन्दन से शंख चक्रादिक चिह्न हृदय बाहुमूल इत्यादिक अंगों में धारण करना।

इत्यादि तृतीयाध्याये

श्री भगवान कहते हैं कि तुलसी के काठ की माला जो धारण करते हैं वे चाहे भले हों चाहे बुरे, हमारे ही होते हैं। तुलसी की काठ की वा आंवले की माला जो लोग पहिनते हैं वे हमारे स्वरूप हैं। इस भांति तिलक धारण कर के, फिर सन्ध्या कर के, गुरु को भेंट कर के, साष्टांग दंडवत करके, हमारी मानसी पूजा कर के फिर विधिपूर्व्वक षोडशोपचार पूजा करै।

इत्यादि चतुर्थाध्याये

श्री भगवान आज्ञा करते हैं कि जो लोग हमें अगहन में पंचामृत से स्नान कराते हैं वे लोग कोटिन गोदान का फल पाते हैं। जो लोग शंख से हमें स्नान कराते हैं वे जीवनमुक्त हैं। जिनके घर शंख की पूजा होती हैं वे धन्य हैं।

इत्यादि पंचमाध्याये

आप कहते हैं कि जो लोग हमारे सामने घंटा बजाते हैं उनकी पूजा का करोड़

गुना फल होता है क्यौंकि घंटा पर गरुड़ जी रहते हैं और गरुड़जी के पक्ष से सामवेद निकलता है, इस से जो पूजा की समय घंटा बजाता है उसको बहुत फल होता है। जो लोग हमारी पूजा में नृत्य गान इत्यादिक करते हैं वे लोग अपने पित्रों के सहित बैकुण्ठ पाते हैं। जो लोग हमैं तुलसी का काठ का चन्दन चढ़ाते हैं वे हमारे प्रिय होते हैं।

तुलसी दमनकं मह्यं दत्वा यस्सेवते पुनः।
मार्गशीर्षे सदा भक्त्या स लभेद्वांच्छितं फलं॥1॥

इत्यादि षष्ठाध्याये

श्री भगवान आज्ञा करते हैं कि जो लोग हमैं अगहन में कमल का फूल चढ़ाते हैं वे लोग हमारे वल्लभ होते हैं। हमको बिना सुगन्धि के फूल और कीड़े का चाटा फूल नहीं चढ़ाना। सब फूलों में जाती फूल का विशेष माहात्म्य है, इस हेतु आप आज्ञा करते हैं।

यथा–

सर्वासाम्पुष्पजातीनां जातीपुष्पमिहोत्तमं।
जातिपुष्पसहस्राणां यक्षेमालां सुशोभनां॥
मह्यं यो विधिवद्दद्यात्तस्यपुण्यफलं शृणु।
कल्पकोटि सहस्राणि कल्पकोटिशतानि च॥
मत्पुरे वसते श्रीमान् ममतुल्य पराक्रमः।
सर्वेषां पत्र पुष्पाणां तुलसी मम वल्लभा।
अन्येषामपिदेवानां न निषिद्धाकदाचन॥2॥

सब फूलों में जातीफूल की विशेष महिमा है। हजार जाती फूल माला जो हमको समर्पण करता है वह हजार करोड़ कल्प और सौ करोड़ कल्प हमारे लोक में हमारे तुल्य पराक्रम हो कर वास करता है और सब फूलों से तुलसी हमको बहुत प्यारी है दूसरे देवताओं की पूजा में भी तुलसी निषिद्ध नहीं है।

इत्यादि सप्तमे

श्री भगवान आज्ञा करते हैं कि तुलसी हमको अत्यन्त प्रिय है।

यथा–

श्रीमत्तुलस्यार्चयते सकृद्धिमांपत्रैः सुगन्धैर्विमलैरखंडितैः।
यत्तस्यपापंघटसंस्थितं तदानिरीक्षयित्वा परिमाजयेद्यमः॥
तुलसीनयेषां ममपूजनार्थं सम्पादितैकादशिपुण्य वासरे।
धिग्यौवनं जीवितमर्थ सन्ततिं तेषाम्मुखंनेहचदृश्यते परैः॥

जो कोई श्री तुलसी से हमारी पूजा करता है और उस के विमल और बिना टूटे दल हमको समर्पण करता है उसके हृदय का पाप जमराज दूर कर देते हैं। जिन लोगों ने एकादशी के दिन हमारी तुलसी से पूजा नहीं किया उनके जीवन और काम और उनके सन्तान धिक्कार योग्य हैं और मुंह देखने के योग्य नहीं है। इति।

अगहन के महीने में दीपदान का बहुत फल है। यथा–

यः करोति सहोमासे कर्पूरेण च दीपकं।
अश्वमेधभवाप्नोति कुलंचैव समुद्धरेत॥
घृतेन चाथ तैलेन दीपं योज्वालयेन्नरः।
सहोमासे ममाग्रेतु तस्यपुण्यफलं शृणु॥
विहाय सकलं पापं सहस्रादित्यसन्निभः।
ज्योतिष्मता विमानेन ममलोके महीयते॥

जो कोई अगहन में कपूर का दीया बालता है उसको अश्वमेध का फल मिलता है और अपने कुल का उद्धार करता है। घी से अथवा तेल से जो लोग अगहन में हमारे सामने दीया बालते हैं वे लोग सब पापों से छूट के हजार सूर्य्य समान ज्योति पाते हैं और बड़े जोतिमान विमान पर बैठ के हमारे लोक जाते हैं।

इत्यादि अष्टमे

श्री भगवान आज्ञा करते हैं कि अगहन में जो लोग हमारी प्रदक्षिणा करते हैं और जो हमें अष्टांग दण्डवत करते हैं वे लोग स्वर्ग में निवास करते हैं। यथा–

प्रदक्षिणां दण्डपातं यः करोति सदा मम।
सहोमासि विशेषेण ह्याकल्पम्बसतेदिवि॥
पद्भ्यांकराभ्यांजानुभ्यांउरसा शिरसातथा।
मनसा वचसा दृष्टया प्रणामोऽष्टाङ्गउच्यते॥

जो लोग हमको दण्डवत और प्रदक्षिणा करते हैं वे लोग कल्प भर स्वर्ग में निवास करते हैं। पैर से 1, हाथ से 2, जंघा से 3, छाती से 4, शिर से 5, मन से 6, वचन से 7 और दृष्टि से 8 नमस्कार करने को अष्टांग दण्डवत कहते हैं अर्थात् आठों अंग झुकें और आठों अंग से नमस्कार करें उसको साष्टांग दण्डवत कहते हैं।

इत्यादि नवमे

श्री भगवान आज्ञा करते हैं कि एकादशी का व्रत और जागरण जो लोग करते हैं वे हमको अत्यन्त प्रिय हैं और जागरण में जो लोग दीपदान इत्यादि करते हैं वे हमारे परम प्यारे हो जाते हैं।

यथा–

य: पुन: कुरुते नृत्यं दीपं गानं च पूजनं।
न तत्क्रतुशतैः पुण्यं व्रतैर्दानशतैरपि॥

जो भक्त लोग हमारे सामने नाचते हैं, दीपदान करते हैं, हमारा कीर्तन करते हैं, पूजा करते हैं उनके पुण्य के बराबर न सौ यज्ञ का पुण्य है और न सौ व्रत और दान का पुण्य है।

इत्यादि द्वादशे

अब कौन देवता की पूजा करना चाहिए सो आप आज्ञा करते हैं कि अगहन में कीर्ति और केशव की पूजा करना चाहिए और सपत्नीक ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिए। यथा–

सहोमासे च वैदेवी कीर्तियुक्तोहि केशवः।
तस्य पूजा प्रकर्तव्या यथापूर्व्व प्रभाषिता॥
ब्राह्मणं केशवं कुर्य्यात्तत्पत्नीकीर्ति संज्ञिकाः।
दम्पती विधिवत्पूज्यौ वस्त्राभरण धेनुभिः॥
दम्पत्योः पूजनेवत्सपूजितोऽहंसदारकं।
तस्मादवश्यं सम्पूज्यौ दम्पतीममतुष्टये॥

अगहन के महीने में कीर्ति देवी और केशव देवता की पूजा षोडशोपचार से करना। ब्राह्मण को केशव मानना और ब्राह्मण पत्नी को कीर्ति समुझ के वस्त्र, गहना, गऊ से दोनों की पूजा करना। दम्पती ब्राह्मण के पूजा से हमारी और लक्ष्मी दोनों की पूजा की जाती है, इस हेतु हमारे तुष्ट होने के अर्थ दम्पती की पूजा अवश्य करना।

इत्यादि चर्तुदशे

श्री भगवान आज्ञा करते हैं कि अगहन में हमारे प्रिय कदम्ब वृक्ष की पूजा अवश्य करना। यथा–

मार्ग शुक्लेप्रतिपदिकदम्बम्पूजयेत्तु यः।
आयुरारोग्यमैश्वर्य्यं पुमान् प्राप्नोत्यसंशयः॥
मार्गशीर्षे सिताष्टम्यां भोजनं च कदम्बके।
सिक्थे सिक्थे च गोदानं पुमान् प्राप्नोत्यसंशयः॥
एकादश्यान्व्रतङ्कुर्य्यात् द्वादश्यामरुणोदये।
कदम्बम् पूजयेद् भत्क्या साक्षाच्छ्रीकृष्णदर्शनं॥
अखंडंदीपकङ्कुर्य्यान्नीपवृक्षे हरिप्रिये।

सर्वान कामानवाप्नोति वशीकरणमुत्तमं।।
मार्गशीर्षे त्रयोदश्यां योनीपम्पयसाऽचर्येत्।
बिन्दुनाविन्दुनाचैव अश्वमेध फलं लभेत्।।
मार्गशीर्षे - चतुर्दश्यान्दधिनानीपमर्चयेत।
इह सन्तान वृद्धिश्च परत्र परमंपदं।।
मार्गशीर्ष्याम्पौर्णामास्याङ - गुञ्जहारेणनीपकं।
वेष्टये द्वनमालाभिः कृष्णस्तस्यशोभवेत्।।
इदंरहस्यं गोपनीयं पुत्र सर्व्वात्मनामम।। इति

अगहन सुदी प्रतिपदा को जो कदम्ब की पूजा करते हैं, वे आयुष्य, आरोग्य, ऐश्वर्य पाते हैं। अगहन सुदी अष्टमी को जो कदम्ब के नीचे भोजन करते कराते हैं वे एक एक ग्रास में गोदान का फल पाते हैं। एकादशी का व्रत करके द्वादशी को सबेरे जो कदम्ब की पूजा करता है उसको साक्षात् श्रीकृष्ण का दर्शन होता है। जो कदम्ब के सन्मुख अखंड दीपदान करता है उसको सब कर्मों का फल होता है। यह हमारा वशीकरण है। अगहन की तेरस को जो कदम्ब को दूध चढ़ाते हैं, उनको एक एक बूंद में अश्वमेध का फल होता है। मार्गशीर्ष की चौदस को जो कदम्ब को दही चढ़ाते हैं, उनको इस लोक में सन्तान और उस लोक में परम पद मिलता है। अगहन सुदी पुर्नवासी को जो लोग कदम्ब को गुजा की माला और वनमाला समर्पण करते हैं, साक्षात् श्रीकृष्ण उनके वश में हो जाते हैं।

अब इस से बढ़ के और क्या फल होगा कि थोड़े साधन में और साक्षात् श्रीकृष्ण वश में हो जाएं। ऐसा कौन होगा जो इस छोटे साधन को बड़े फल की इच्छा से न करै। यह केवल श्री भगवान की कृपा है कि हम जीवों के हेतु उसने ऐसे छोटे छोटे साधन बनाए हैं। देखो कदम्ब को एक दिन गुंजा की माला चढ़ाने से आप वश में हो जाते हैं, यह केवल उनकी दीन दयालुता है। अहो, ऐसा कौन मूर्ख होगा जो इस बात को जान के भी श्री कृष्ण को वश में करने की इच्छा न करेगा।

श्री भगवान आज्ञा करते हैं कि हे पुत्र, इस रहस्य को आत्मा से अधिक गुप्त रखना।

इत्यादि षोडशे

यह स्कन्द पुराण के मार्गशीर्ष माहात्म्य का सारांश यहां पर लिखा गया है, जिससे सज्जनों को सन्तोष होगा।

अब अगहन में किस दान की विशेष महिमा है सो लिखते हैं।

यथा–

तिलपात्रं तुयोदद्यान्मार्गशीर्षे सकांचनं।
कुलानां नरकस्थानां तिलसंख्यासमुद्धरेत्।।

मार्गशीर्ष के महीने में सोना समेत जो तिलपात्र दान करते हैं वे लोग जितने तिलदान करते हैं उतने कुलों का उद्धार करते हैं।

पुनः यथाः–

स्वशकृत्याघृतपात्रं तु सहिरण्यं प्रदापयेत्।
यमलोकस्य पंथानं स्वप्नोऽपि न स पश्यति।।

जो लोग अपनी शक्ति के अनुसार सोना समेत घी का पात्र दान करते हैं वे लोग सपने में भी नरक का रास्ता नहीं देखते। इत्यादि

अगहन के महीने में कपड़ा और जूता दान करने का बड़ा पुण्य है और अगहन महीने में तुलसी के सामने ब्राह्मण को खीर खिलाने का महाफल है।

यथा–

तुलसीसन्निधौविप्रान् भोजयेद्यस्तुपायसैः।
एकेतुभोजितेमार्गे कोटिर्भवतिभोजिता।।

अगहन के महीने में तुलसी के सन्निधान जो लोग एक ब्राह्मण को खीर खिलाते हैं वे लोग कोटि ब्राह्मण भोजन का फल पाते हैं।

और भी अगहन में पूजा की सामग्री और शालिग्राम दान करने की आज्ञा है।

यथा–

कुम्कुमंह्यगरुंचैवचन्दनं गुग्गुलं तथा।
पूजाद्रव्यं तथा चान्यं मार्गशीर्षेप्रयच्छति।।
विप्रायवेदविदुषे वैष्णवाय विशेषतः।
सगच्छेन्मामकेलोके संयुतः कुल कोटिभिः।।
शालिग्रामशिलांरम्यां मार्गशीर्षेद्विजातये।
ददाति हेम सहितान्दिव्यवस्त्रैश्चवेष्टितां।।
रत्नपूर्णाम्बसुमर्तीं सशैल वन कानना।
दत्वायत्फलमाप्नोति तेन तत् फलमाप्नुयात्।।
शालिग्रामं तथा चक्रं शंखं घंटां तथैव च।
ददाति तस्य पुण्यस्य संख्याकर्तुन्नशक्यते।।

रोली अगर चन्दन गुग्गुल और भी पूजा की सामग्री जो लोग वेदपाठी ब्राह्मणों को और विशेष करके वैष्णव को अगहन में देते हैं, वे लोग अपने करोड़ कुल के सहित हमारे लोक में जाते हैं। जो लोग अगहन में शालिग्राम की रम्य शिला सोना और वस्त्र समेत ब्राह्मण को देता है वह रत्नपूर्ण पृथ्वी पहाड़ वन समेत दान करने का फल पाता है और शालिग्राम, गोमती चक्र, शंख, घंटा जो लोग देते हैं उनके पुण्य की संख्या नहीं कर सकते। इत्यादि

अगहन में स्त्रियों को सोहाग पेटारी दान करना चाहिए।

यथा–

मासिमार्गशिरेतुस्त्री कुम्कुमं मौक्तिकानि च।
सिन्दूर कज्जलं चापि हैमान्याभरणानि च॥
सुगन्धीन्यपि वस्तूनि ताम्बूलं रंजिताम्बरं।
प्रयच्छतिद्विजातिभ्यो तस्य पुण्यफलं शृणु॥
पतिव्रता पुत्रिणी च सुभगा जन्मजन्मनि।
स्वप्नेपिभर्तृदुःखं सा नपश्यतिकदाचन॥

अगहन में रोली, मोती, सेन्दुर, काजल, सोना गहना, चूड़ी, सुगन्ध, पान, रंगी साड़ी, और भी ऐना, कंघी, टिकुली इत्यादिक सोहाग की वस्तु जो स्त्रीदान करती हैं वह पतिव्रता होती है। उनके पुत्र जीते हैं, जन्म जन्म में भाग्यवान होती हैं और वह सपने में भी पति का दुःख नहीं देखतीं। अब मार्गशीर्ष में और अन्य देवताओं के जो व्रत हैं वह लिखते हैं।

अगहन बदी तीज को स्त्रियों को सौभाग्य सुन्दरी का व्रत सौभाग्य का देनेवाला है। इसकी विशेष विधि व्रतार्क आदि ग्रन्थों में लिखी है। इत्यादि।

मार्गशीर्ष कृष्ण 11 को उत्पन्ना एकादशी का व्रत है। मत्स्यपुराण में इसकी कथा है। अर्जुन ने श्रीकृष्ण से पूछा है और श्रीकृष्ण ने आज्ञा किया है कि इस एकादशी को एकादशी का जन्म है और यह बड़ी पुनीत एकादशी है।

इत्यादि मातस्ये उत्पन्नाव्रतं

इसी अगहन बदी 11 को वैतरणी व्रत होता है। इसमें गोपूजन और गोदान करना चाहिए। यह कथा भविष्योत्तर पुराण की हेमाद्रि ग्रन्थ में लिखी है। राजा युधिष्ठिर ने भीष्म पितामह से पूछा है। उन्होंने उसका विधान और फल कहा है।

एकादशी तिथिः कृष्णा मार्गशीर्ष गता नृप।
तामासाद्य नरः सम्यग्गृहणीयान्नियमं शुचिः॥
एकादशी तिथिः कृष्णा नाम्ना वैतरणी शुभा।
साव्रतेनसदाकार्य्या नक्तावाचोपवासिनी॥
मध्यान्हे तु नरः स्नात्वा नित्यनिर्वर्तित क्रियाः।
रात्रौ सुरभिमानीय कृष्णमर्चेद्यथाविधि॥

इत्यादि भविष्योत्तरे वैतरणीव्रतं

इसी एकादशी को कृष्ण एकादशी का व्रत होता है। यह व्रत वाराह पुराण में पृथ्वी ने श्री वाराह जी से पूछा है सो आपने आज्ञा किया है कि इस कृष्ण एकादशी को व्रत करना और तिलपात्र दान करना। यथा–

समस्त पातकहरं स्वर्गदं सर्व्व कामदं।
न समं कृष्णाद्वादश्यां किञ्चिदस्तिपरं भुवि॥
मार्गशीर्षे कृष्णपक्षे दशम्यामेकभुक्नरः।
एकादश्यामुपवसेत् कृष्णास्यार्चां समाचरेत्॥
स्नात्वाचकृष्णैस्तु तिलैः प्रभाते दद्याच्यसम्यक् तिलयुक्तपात्रं।
नमोस्तुकृष्णाय पितुश्चमातुः हत्वात्वघं प्रापयतोस्वगत्यै॥

इत्यादि वाराह पुराणे कृष्णाव्रतं

अगहन बदी अमावस्या को स्त्रियों को गौरी तपोव्रत सौभाग्य बढ़ने के हेतु करना चाहिए। यह अंगिरा ने कहा है कि इस व्रत के करने से स्त्री को रूप-सौभाग्य मिलता है।

यथा–

आदौमार्गशिरेमासिह्यमावस्यादिने शुभे।
गृह्णीयान्नियमं तत्र दन्तधावन पूर्व्वकं॥

इस दिन सौभाग्य वस्तु दान करना और सुवासिनी को भोजन कराना चाहिए।

इत्यादि अंगिरोक्तं गौरीतपोव्रतं।

इसी अगहन की अमावस्या को स्त्रियों को सौभाग्य वृद्धि के हेतु महाव्रत लिखा है। यह हेमाद्रि ग्रन्थ में कालिकापुराण की कथा लिखी है। यथा–

ततोमार्गशिरेमासि प्रतिपद्य परेहनि।
उपवसेत् स्वगुरुम् पृछ्य महादेवस्मरेन्मुहुः॥
एवम्व्रतं महच्चैव ब्रह्मघ्नेप्यघमर्षणं।
धनमायुप्रदन्नित्यं रूप सौभाग्यदं परं॥

इत्यादि कालिका पुराणे

मार्गशीर्ष सुदी 5 को नाग की पूजा करना, यह बात हेमाद्रि ग्रन्थ स्कन्द पुराण में लिखी है। यथा–

शुक्लमार्गशिरे या च श्रावणे या च पंचमी।
स्नानैर्दानैर्बहुफला नाग लोकप्रदायिनी॥

इत्यादि स्कान्दे नागपंचमी

अगहन सुदी 6 स्कन्द षष्ठी वा चम्पाषष्ठी है। इस्में सूर्य्य और स्कन्द की पूजा करना। इस मन्त्र से कार्तिकेय की पूजा करना।

सेनाबिदारकस्कन्द महासेनमहावल।
रुद्रोमांगजषड्बक्त्रं गङ्गागर्भनमोस्तुमे॥

इत्यादि दिवोदासीये चम्पाषष्ठी

अगहन सुदी 7 को सूर्य्य तीर्थ में नहाना और सूर्य्य की पूजा करना और श्रीयमुनाजी में वा पंचगंगा में स्नान करना, यह स्कन्द पुराण के मार्गशीर्ष माहात्म्य में लिखा है।

यथा–

मार्गशीर्षेतुयाशुक्ला सप्तमी भानुसंयुता।
कर्तव्या सा प्रयत्नेन सूर्य्यपर्व्व शताधिका॥
तस्यांदत्तंहुतंजप्तं तपस्तप्तं कृतंचयत्।
अक्षयंतद्विजानीयाद्यमुनायां न संशयः॥

इत्यादि स्कान्दे सूर्य्य सप्तमी

अगहन सुदी 11 मोक्षा एकादशी हेमादि ग्रन्थ में भविष्योत्तर का वाक्य लिखा है। इस्में जागरण और दीपदान का फल विशेष है।

इत्यादि मोक्षाव्रतं

अगहन सुदी 12 को मत्स्य पूजा करना। इस दिन मत्स्य भगवान का उत्सव है। यह बात स्कन्दपुराण के एकादशी माहात्म्य में लिखी है।

यथा–

ततः प्रभात समये कार्य्यं गत्स्योत्सवंबुधैः। इत्यादि।

अगहन सुदी 14 को पिशाच मोचन तीर्थ पर श्राद्ध करना यह त्रिस्थलीसेतू में लिखा है। इस्में श्राद्ध से पित्रों का मोक्ष होता है।

इत्यादि निर्णयसिन्धौ पिशाचमोचने श्राद्धं।

अगहन सुदी 15 को दत्तात्रेय का जन्म है, यह बात स्कन्दपुराण के सह्याद्रि माहात्म्य में लिखी है। इस्में दत्तात्रेय की पूजा और उनका दर्शन करना।

यथा–

मार्गशीर्षे तथा मासिदशमेह्निसुनिर्मले।
मार्गशीर्षे पौर्णमास्यां मृगशीर्षयुते बुधे॥
जनयामास देदीप्यमानं पुत्रं सती शुभं।

तंविष्णुमागतं दृष्ट्वा अत्रिर्नामाकरोत्सवं।
दत्तवानस्वस्य पुत्रस्यदत्तात्रेयमितीश्वरम्॥

इत्यादि स्कान्दे दत्तात्रेयजन्मोत्सवः

इसी अगहन सुदी 15 को जो कुछ दान पुण्य स्नान बन पड़े, करना उचित है। इस पूर्णिमा के समान कोई पर्व्व नहीं है, यह बात स्कन्द पुराण के मार्गशीर्ष माहात्म्य में लिखी है।

यथा–

स्नानं दानं तथा पूजां पूर्णायान्नकरोति यः।
षष्टि वर्ष सहस्राणि रौरवे परिपच्यते॥1॥
गोदानंभूमिदानं च वस्त्रान्नादि च यद्भवेत्।
मार्गशीर्षे पौर्णमास्यान्दानेस्यादक्षयं फलं॥

अगहन की पुनवासी को जो स्नानदानादिक नहीं करते वह साठ हजार बरस रौरव में वास करते हैं।

अगहन सुदी 15 को जो कुछ दान करता है वह अक्षय होता है।

अगहन में श्रीमद्भागवतं सुन्ने का बड़ा माहात्म्य है।

यथा मार्गशीर्ष माहात्म्ये

श्रीमद्भागवतं नामपुराणं ब्रह्म सम्मितं।
शृणुयाच्छ्रद्धया युक्तो ममसन्तोषकारणं॥
यावद्दिनानि हे पुत्रशास्त्रं भागवतं कलौ।
तावत्कुर्वन्ति पितरः स्वर्गेत्वमृत भोजनं॥
यत्र यत्र चतुर्वक्त्र श्रीमद्भागवतं भवेत्।
गच्छामि तत्रतत्राह गौर्यथासुतवत्सला॥

इत्यादि श्रीमद्भागवत माहात्म्यं।

मार्गशीर्ष में गोपी गोबिन्द तीर्थ की यात्रा और गोबिन्द नाम स्मरण यही करना चाहिए।

यथा वायु पुराणे लक्ष्मीसंहितायां काशी माहात्म्ये

गोपी गोविन्द तीर्थं तु गोपी गोविन्दसंज्ञकं।
तत्र मार्गशिरेमासि महिमाबहु गीयते॥

इति मार्गशीर्ष महिमा

मार्गशीर्षमहिमा

चतुर्वर्ग, मोक्षादिक पाने का बहुत सहज उपाय

हम लोग माघ वैशाख कार्त्तिकादि नहाने को अति पवित्र जान कर स्नान दानादिक करते हैं परन्तु हम लोग नहीं जानते कि एक महीना इन सभों में महा पुनीत और थोड़े साधन में बहुत फल को देनेवाला बच गया है और उस में हम लोग कुछ स्नानदानादिक नहीं करते और जिस के प्रसिद्धि के वास्ते हम बड़े आनन्द से यह इश्तिहार देते हैं।

वह गोप्यमास जिस का माहात्म्य सब शास्त्रों में बड़े आदर से कहा है वह मार्गशीर्ष अर्थात् अगहन का महीना है, जिसका गुन गान करने से महात्मा लोग तृप्त नहीं होते और यह महीना सब महीनों का राजा और भगवान का स्वरूप है।

मासानाम्मार्गशीर्षोऽहं। श्री कुमारिका गनों ने इसी के स्नान से श्रीकृष्ण को पाया था और स्कन्द पुराण में इस की बड़ी स्तुति लिखी है। यथा। स्कान्दे ब्रह्माप्रति भगवद्वाक्यम्।

सर्व्वज्ञेषु यत्पुण्यं सर्व्वतीर्थेषु यत् फलं।
सहसाप्नोति तत्सर्व्वे मार्गशीर्षे कृते सुत॥1॥
यज्ञाध्ययनदानाद्यैस्सर्व्वतीर्थावगाहनैः।
संन्यासेन च योगेन नाहम्वश्योभवामि च॥2॥

यह श्री भगवान ने श्रीमद्भागवत और श्री भगवत् गीता में श्री मुख से आज्ञा किया है कि सब महीने में अगहन हमारा स्वरूप है और स्कन्दपुराण में भी ब्रह्मा से श्री भगवान फिर आज्ञा करते हैं। यथा–

स्नानेन दानेन च पूजनेन होमे विधाने तपआदितश्च।
वश्यो यथामार्गशिरेस्वमासि तथा न चान्येषुहिगर्भ्भमुक्त॥3॥
माघाच्छतगुणं पुण्यं वैशाखे मास लभ्यते।
तस्मात् सहस्रगुणितं तुलासंस्थे दिवाकरे॥4॥
तस्माच्च कोटि गुणितं वृश्चिकस्थे दिवाकरे।
मार्गशीर्षेऽधिकं तस्मात्सर्व्वदा मम वल्लभ॥5॥

आप कहते हैं कि हे गर्भमुक्त ब्रह्मा, हम स्नान, दान, पूजन, होम, विधान इत्यादिक से वश नहीं होते, हम मार्गशीर्ष-स्नान से वश होते हैं। माघ में वैशाख का सौ गुना पुण्य है और वैशाख से हजार गुना पुण्य कार्त्तिक में है और कार्त्तिक से करोड़ गुना पुण्य वृश्चिक के सूर्य्य में, और अगहन में इस से भी अधिक पुण्य है। इस हेतु आप लोगों को इस अगहन के महीने में जो कुछ बन सकै स्नान, दान तुलसी

कदम्ब पूजन करना चाहिए।

स्कन्दपुराणे मार्गशीर्ष माहात्म्ये

मार्गशीर्षं न कुर्व्वन्ति ये नरा पाप मोहिताः।
पापरूपाहि ते ज्ञेया कलिकाले विशेषतः॥6॥
धन्यास्ते कृतिनो ज्ञेया ये यजन्ति जनार्द्दनम्।
कर्म्मणा मनसा वाचा भक्तिश्च भजन्ति ये॥7॥
मार्गशीर्षे महापुण्या मथुरा काशिका यथा।
मथुरास्नातुकामस्तु गच्छतस्तु पदेपदे॥8॥
निराशानि व्रजंत्येव पातकानि न संशयः।
गोदानं स्वर्णदानं च वस्त्रान्नादि च यद्भवेत॥9॥
पौर्णमास्यां सहोमासे दाने स्यादक्षयम् फलम्।
सा पौर्णमासी लभ्येत गंगायां यदि भाग्यतः॥10॥
स्नानादेव फलं तत्र यज्ञकोटिसमं भवेत्।
पूजयेत् संस्मरेद्यस्तु कदम्बं सर्व्वकामदम्॥11॥
सर्व्वान्कामानवाप्नोति इहामुत्र न संशयः।
कदम्ब मूलसम्भूतां मृदं देहे विभर्त्ति यः॥12॥
सर्व्वतीर्थादिकं पुण्यं लभते मानवो भुवि

जो पाप मोहित लोग मार्गशीर्ष स्नान नहीं करते उन्हें इस कलियुग में विशेष कर के पाप रूप जानना। वे सुकृती लोग धन्य हैं जो तन, मन, धन, वाणी और कर्म्म से श्री भगवान की सेवा करते हैं। अगहन के महीने में मथुरा और काशी में महाफल होता है। जो लोग मथुरा स्नान करने जाते हैं, उन के पाप भाग जाते हैं। अगहन की पुनवासी को सब दान अक्षय होते हैं और भाग्य से यह पुनवासी में जो श्री गंगा स्नान बन जाय तो सैकड़ों करोड़ पुनवासी का फल मिलै। जो अगहन में कदम्ब की पूजा करते हैं उन के सब काम सिद्ध होते हैं। जो लोग कदम्ब के जड़ की मिट्टी का तिलक करते हैं, उन को सब तीर्थ स्नान का फल मिलता है।

सब दिन स्नान न बनै तो पीछे के पांच दिन हरिपंचक में अवश्य स्नान करै। यथा पाद्मे स्कान्दे च।

हरिपंचक बिख्यातं सर्व्वलोकेषु सिद्धिदम्।
नारीणां च नरादीनां सर्व्वदुःख निबर्हणम्॥

इस अगहन के महीने में आप लोगों से जो कुछ बनै, स्नान दानादिक कीजिए।

[रचनाकाल सन् 1873 ई.]

माघस्नान विधि

माघस्नान विधि

भरित नेह नव नीर नित, बरसत सुरस अथोर।
जयति अपूरब घन कोऊ, लखि नाचत मन मोर॥1॥

माघस्नान पूस सुदी एकादशी वा पूनम से प्रारम्भ कर के माघ सुदी द्वादशी वा पूनम को समाप्त करना। माघ में मूली नहीं खानी। नहाने की विधि के अनुसार स्नान करना।

माघ स्नान के मन्त्र

दुःख दारिद्रय नाशाय श्री विष्णोस्तोषणाय च।
प्रातः स्नान करोस्यद्य माघे पापविनाशनमू॥2॥
मकरस्थे रवौ माघे गोविन्दाच्युत माधव।
स्नानेनानेन मे देव यथोक्तफलदो भव॥3॥

सूर्य्य के अर्घ देने का मन्त्र

सवित्रे प्रसवित्रेच परन्धाम जले मम।
त्वत्तेजसा परिभ्रष्टं पापं यातु सहस्त्रधा॥

माघस्नान का समय ठीक सूर्य्य उदय होने के पीछे, परन्तु किसी का मत है कि अरुणोदय में नहाना। जो सारा माघ न नहाया जा सकै तो तीन दिन नहाना। मकर संक्रान्ति, रथसप्तमी और माघी पूनम ये तीन दिन। वा माघ वदी तेरस, चौदस, अमावस। वा माघ सुदी दसमी, एकादशी, द्वादशी वा संक्रान्ति के पीछे तीन दिन। पर मुख्य तीन दिन तेरस से अमावस तक ही है। माघ नहाकर उसी समय आग नहीं तापना। तिल में मीठा मिला कर दान करना और उसी का होम करना, तिल से नहाना, तिल का उबटन लगाना, तिल का होम करना तिल से तर्प्पण करना, तिल देना और तिल खाना। अमला, तेल, लकड़ी, कम्बल, एक रत्ती सोना और कपड़े तथा जूतों के जोड़े ब्राह्मणों को देना। जब माघस्नान समाप्त हो उस दिन घी तिल मीठे का होम कर इस मन्त्र से सूर्य्य की प्रार्थना करना।

दिवाकर जगन्नाथ प्रभाकर नमोस्तुते।
परिपूर्णं कुरुष्वेह माधस्नानमुषःपते॥

माघ में मकर संक्रान्ति में स्नान कर के वस्त्र और तिल घेनु दान करना। माघ की अमावस्या को मौन स्नान करना। इस दिन जो सोमवार वा मंगल हो तो पुण्य विशेष है। अमावस्या यदि रविवार को हो और उस दिन श्रवण वा अश्विनी वा धनिष्ठा वा आर्द्रा वा अश्लेषा वा मृगशिरा नक्षत्र हो तो भी बड़ा फल है। माघ बदी 4 को गणेशपूजन। माघ बदी 14 को यम तर्पण करना। माघ सुदी 4 को ढुंढिराज का व्रत और पूजन करना। माघ सुदी 5 श्री पंचमी है, इस दिन कुन्द के फूल से लक्ष्मी की पूजा करनी और नए अंकुर तथा नई बौर से कामदेव की पूजा करनी। माघ सुदी 7 रथसप्तमी हैं इस में अरुणोदय में स्नान का बड़ा पुण्य है। ऊख से जल हिला कर धतूरे के सात पत्ते सिर पर रख कर इन मन्त्रों से नहाना।

यद्यज्जन्मकृतं पापं मया जन्मसुसप्तसु।
तन्मे रोगं च शोकं च माकरी हन्तु सप्तमी॥1॥
एतज्जन्मकृतं पापम् यच्चजन्मान्तारार्ज्जितम्।
मनोवाक्कायजं यच्च ज्ञाताज्ञाते च ये पुनः॥2॥
इतिसप्तविधंपापम् स्नानान्मे सप्त सप्तिके।
सप्तव्याधि समायुक्तम् हरमाकरिसप्तमि॥3॥

स्नान के समय कुसुम मिली बत्ती का दिया सिर पर ऊंचा करके मन्त्र से जल में सूर्य्य को दे।

नमस्ते रुद्ररूपाय रसानाम्पतये नमः।
वरुणाय नमस्तेस्तु हरिवास नमोस्तुते॥4॥

चन्दन से अष्टदल लिख कर बीच में प्रणव सहित शिव पार्वती लिख कर क्रम से इन नामों से कमल के पत्तों पर सूरज की पूजा करै। रवये नमः, भानवे नमः, विवस्वते नमः, भास्कराय नमः, सवित्रे नमः, अर्क्काय नमः, सहस्रकिरणाय नमः। सोने के सूर्य्य तिल पात्र में रख कर ब्राह्मण को दे और इस मन्त्र से सूर्य्य का अर्घ्य दें।

सप्त सप्तिवहप्रीत सप्तलोकप्रदीपन।
सप्तमी सहितो देव गृहाणर्घ्यं दिवाकर॥5॥
जननी सर्वलोकानां सप्तमीसप्त सप्तिके।
सप्तव्याहृतिके देवि नमस्ते सूर्य्यमंडले॥6॥

सोने का कनफूल वा सोने का दीया और सोने का न हो सकै तो तिल के

आटे का बना कर तामे के पत्र में तिल, गुड़, घी समेत लाल कपड़े में समेट कर इस मन्त्र से दान करै।

आदित्यस्य प्रसादेन प्रातः स्नान फलेन च।
दुष्टदौर्भाग्यदुःखघ्नं मयादत्तं तुतालकम्॥7॥

यही सप्तमी मन्वादि भी है। इस सप्तमी को रथ दान का बड़ा फल है। माघ सुदी अष्टमी को तिल लेकर भीष्म तर्पण करना। मन्त्र—

भीष्मः शान्तनवो वीरस्सत्यवादी जितेन्द्रियः।
आभिराद्भिरवाप्नोतु पुत्र पौत्रोचितांक्रियाम्॥8॥
वैयाघ्रपद गोत्राय सांकृत्यप्रवराय च।
अपुत्राय ददाम्येतज्जलम्भीष्मायवर्म्मर्णे॥9॥
वसूनामवताराय शन्तनोरात्मजायच।
अर्ध्यंदादमि भीष्माय आबालब्रह्मचारिणे॥10॥

यह तर्प्पण जिस का पिता जीता हो वह भी अपसव्य से करै। माघ सुदी द्वादशी का नाम भीम द्वादशी है। माघ की पूनम को स्नान का बड़ा पुण्य है। जो मेष के शनैश्चर और गुरु चंद्रमा सिंह के और सूर्य्य श्रवण नक्षत्र में हो तो महामाघी होती है। इति

प्रानपियारे प्रेम निधि, प्रेमिन जीवन प्रान।
तिनके पद अरपन कियो, माघ नहान विधान॥

द्वादश्यां पुराणा निषेधः

पाद्मेसप्ताहमाहात्म्येकुमार नारद सम्वाद।
नित्यायाञ्च कथायान्तु पुराणानाम्मुनीश्वरं।
द्वादशीम्वर्जयेत प्राज्ञस्सूत सूतक सम्भवात्॥1॥
श्रीमद्भागवतस्यापि सप्ताहे नैत्यिकेपिच।
न निषेधोस्ति देवर्षे प्राहुरेवम्पुराविदः॥2॥
श्री भागवत सप्ताहो महायज्ञः स्मृतो बुधैः।
आषाढ़ शुक्लद्वादश्याम्पारणाहनिपार्वति॥3॥
पूर्वार्द्ध यामवेलायाम्भावित्वात्कृष्णमायंया।
मुग्धोदर्भकरो रामआहरल्लोमहर्षमिति॥

पौराणिकैर्ज्ञेयम्।

[रचनाकाल सन् 1873 ई.]

अथ श्री पुरुषोत्तमपंचक

अथ श्री पुरुषोत्तमपंचक

सखी पुरुषोत्तम मेरे प्यारे।

प्रान नाथ मेरे मन धन जीवन जसुदा नन्द दुलारे॥
जानत प्रीति रीति सब भांतिन नेह निबाहन हारे।
हरीचन्द इनके पद नख पैं जगत जाल सब वारे॥1॥

सखी पुरुषोत्तम मेरे नाथ।

मोर मुकुट सिर कटि पीताम्बर सुन्दर मुरली हाथ॥
गल वनमाल गोप गोपीजन गऊ बच्छ लिये साथ।
हरीचन्द पिय करुना सागर निज जन करन सनाथ॥2॥

पुरुषोत्तम प्रभु मेरे स्वामी।

पतित उधारन करुना कारन तारन खगपति गामी॥
पंकज लोचन भव दव मोचन जन रोचन अभिरामी।
हरीचन्द सन्तन के सरबस बखसहु चरन गुलामी॥3॥

पुरुषोत्तम प्रभु मेरे सरबस।

सब गुन निधि करुना करुनामय जानत सकल प्रेम रस॥
प्रीति रीति पहिचान मानत यातें रहत भगत बस।
हरीचन्द मेरे प्रान जीवन धन मोह्यौ मनहि तनिक हस॥4॥

पुरुषोत्तम बिन मोहि नहिं कोई।

मात पिता परिवार बन्धु धन मम हरि राधा दोई॥
इन बिनु जगत और जो कीनो आयसु नाहक खोई।
हरीचन्द्र इन चरन सरन रहु मन बिनु साधन होई॥5॥

॥ इति ॥

[रचनाकाल 1872 ई. पुस्तिकाकार प्रकाशित 1873 ई.]

भक्तिसूत्र वैजयन्ती

श्रीशांडिल्य ऋषि के भक्ति के सौ सूत्रों पर

भाषा भाष्य

प्राणप्यारे!

देखो, आज वसन्त पंचमी है, इस से बहुत लोग आम के मौर वा फूलों के गुच्छे लेकर तुम को मिलने आवैंगे तो मैं भी यह एक फूलों की वैजयन्ती माला बना कर लाया हूं, अंगीकार करो ; वैजयन्ती माला बनाने का यह हेतु है कि वनमाला होगी तो होली के खेल में अरुझैगी और इस के सिवाय इस वैजयन्ती से निश्चय कर के ज्ञानादिक को जय करना है; पर प्यारे! बहुत सम्हल कर यह माला पहरना, टूट न जाय, क्यौंकि सूत कच्चा है और कलियां ताजी और कोमल हैं, इस से कुम्हिलाने का भी भय है ; जो हो, इस वसन्त पंचमी को त्यौहारी मुझे यही दो कि इस सत्यानाशी 'अहं' ब्रह्मवाद' को पूर्णरूप से नाश कर के और भी सब बातों में इस नव वसन्त में भारतवर्ष की सब आपत्तियों का बस अन्त करो और अपने भक्तों के चित्त में प्रेम के नव पल्लव फिर से लहलहे करो, जो सदा एकरस रहैं।

तुम्हारा
हरिश्चन्द्र

माघ शुक्ल पंचमी
संवत 1930
काशी

भक्तिसूत्र वैजयन्ती

शाण्डिल्य शत सूत्री भाषाभाष्य सहित

ॐ नमश्शाण्डिल्याय तन्मतप्रवर्तकाचार्य्येभ्यः
श्री वल्लभेभ्यश्च नमः

जेहि लहि फिर कुछ लहन की, आस न चित में होय।
जयति जगत पावन करन, प्रेम बरन यह दोय॥

ॐ अथातो भक्तिजिज्ञासा॥1॥

जीवों को कर्म्म ज्ञानादिक अनेक साधनों से खिन्न होकर भी शान्ति न पाते देख कर भगवान शांडिल्य ने भक्तिशास्त्र प्रकट करने की इच्छा से यह भक्ति के सौ सूत्र कहते हुए इस प्रेममार्ग को प्रवर्त्त किया। इस में पहिले पूर्वोक्त सूत्र कहा। अब भक्ति की जिज्ञासा अर्थात् विचार आरम्भ करते हैं॥1॥ यद्यपि ज्ञान कर्म्मादिकों की भांति भक्ति भी स्वसाध्य नहीं है तथापि जो भक्ति मार्ग पर प्रवर्त्त होते हैं उन को भगवान भक्ति देता है, इस आशा से भक्ति मीमांसा आरम्भ करते हैं।

सा परानुरक्तिरीश्वरे॥2॥

सो भक्ति ईश्वर में पूरे अनुराग को कहते हैं॥2॥ यहां परा शब्द कामनाओं की निवृत्ति के हेतु और अनुरक्ति शब्द हृदय के सच्चे प्रेम के अर्थ में दिया है और ईश्वर शब्द माहात्म्य ज्ञान के हेतु है, जैसा श्रीगोपीजन को।

तत्संस्थस्यामृतत्वोपदेशात्॥3॥

क्यौंकि उस में जो चित्त लगता है वह अमृत फल पाता है, यह महात्माओं ने कहा है॥3॥

ज्ञानमितिचेन्नद्विषतोऽपिज्ञानस्यतदसंस्थितेः॥4॥

वह भक्ति ईश्वर विषय ज्ञान मात्र है यह सन्देह मत करो क्यौंकि ज्ञान तो द्वेषियों को भी होता है उस पर ज्ञान से प्रीति नहीं होती॥4॥ जैसे कोई किसी मनुष्य को जानता है कि वह अमुक है और उस को अमुक अधिकार है पर इतना जानने ही से उस मनुष्य की उस में प्रीति हो इस में नियम नहीं।

तयोपक्षयाच्च॥5॥

क्यौंकि पूरी भक्ति से ज्ञान का क्षय होता है॥5॥ जैसे श्रीगोपीजन को माहात्म्य ज्ञान पूर्ण था तथापि प्रियतम, कितव इत्यादि नाम से भगवान को पुकारती थीं। अथवा भक्ति से ज्ञान अर्थात् मुक्ति वासना क्षय हो जाती है। जैसा आपने श्रीमुख से कहा है कि यद्यपि मैं चारों प्रकार की मुक्ति देता हूं तथापि मेरे भक्त मेरी सेवा छोड़ कर नहीं लेते।

द्वेषप्रतिपक्षभावाद्रसशब्दाच्चरागः॥6॥

द्वेष से प्रतिकूल होने से और रस शब्द प्रतिपाद्य होने से उस भक्ति का नाम अनुराग है॥6॥ क्यौंकि स्नेह और विरोध दो वस्तु अलग हैं और भी किसी के द्वेषी से विरोध वही करेगा जिस का उस में पूर्ण अनुराग होगा और ज्ञान में वह बात नहीं क्यौंकि स्वरूपज्ञान द्वेषियों को भी होता ही है और रस परम आनन्द रूप है। वह रस जिस को पाकर मनुष्य आनन्दी होता है वह भक्ति स्वरूप ही है। (इस कहने से पूजाविडंवन की उपेक्षा किया)। चकार से अश्रुपात, रोमांच और वाणीस्तंभादिक भक्ति का स्वरूप कहा।

न क्रियाकृत्यनपेक्षणाजज्ञानवत्॥7॥

और वह भक्ति ज्ञान की भांति क्रिया करनेवाले के अधीन नहीं है॥7॥ अर्थात् भक्ति अपने साधन की नहीं है, केवल उस की कृपा से मिलती है, इस से भक्ति की बहुमूल्यता दिखाई।

अतएव फलानन्त्यम्॥8॥

इसी से इस के फलों का अन्त नहीं है॥8॥ क्यौंकि मनुष्य के सब साधन क्षीयमाण और ईश्वर की कृपा अक्षया है।

तद्वतः प्रपत्तिशब्दाच्च नज्ञानमितरप्रपत्तिवत्॥9॥

क्यौंकि ज्ञान वालों को शरणागत है और विना ज्ञान भी इतर प्रपत्ति होती है॥9॥ क्यौंकि श्रीमुख से कहा है कि बहुत जन्मों के पीछे ज्ञानी मेरे शरण आता है तो इस में ज्ञान का साधन भक्ति नहीं फलरूप है, यह प्रकट किया और बिना ज्ञान

भी भक्ति मिलती है उस से उस की विशेषता दिखाई।

इति प्रथमाह्निक

सा मुख्येतरापेक्षितत्वात्॥10॥

सो भक्ति मुख्य है क्योंकि इतर ज्ञान योगादिकों में भी इसकी अपेक्षा रहती है॥10॥ तो इस से कोरे ज्ञान से मोक्ष मिलता है इसका खंडन किया, क्योंकि जब भक्ति की उस में अपेक्षा रही तो वह स्वतः मुक्तिदाता न ठहरा इस से भक्ति ही मुख्य ठहरी।

प्रकरणाच्च॥11॥

प्रकरण से भी॥11॥ अर्थात् भक्ति अंगी है और ज्ञानादिक अंग है तो काम पूरा कोई अंग विशेष नहीं कर सकता और अंग अंगी के आधीन है, इस से भक्ति ही अमृत देनेवाली है। ज्ञान उस का साधन मात्र है।

दर्शनफलमिति चेन्न, तेन व्यवधानात्॥12॥

दर्शन मात्र फल रूप है यह नहीं, क्योंकि उस से व्यववधान है॥12॥ अर्थात् ज्ञान मात्र ही फल है यह नहीं है क्योंकि छान्दोग्य श्रुति में पहिले ज्ञानियों का नाम लेकर फिर कहा है कि वह अर्थात् भक्तिमान् स्वराङ् होता है तो पहिले ज्ञान को गौण करके भक्ति की मुख्यता वेद नहीं कही, इस से भक्ति ही परम साधन है।

दृष्टत्वाच्च॥13॥

और ऐसा ही देखा भी जाता है॥13॥ क्यौंकि यदि किसी स्त्री पर कोई मनुष्य रीझ कर प्रीति करैगा तो पहिले जब वह जानैगा कि यह स्त्री सुन्दर है तब प्रीति करैगा। प्रीति कर के न जाने गा अर्थात् जानने का फल प्रीति है, प्रीति का फल जानना नहीं है। इस से अनेक मत जो ईश्वर विषयक ज्ञान मात्र ही को परम पुरुषार्थ कहते हैं, इस का निराकरण किया।

अतएव तदभावाद्वल्लवीनां॥14॥

इसी से व्रज के श्रीगोपीजनों का विज्ञान के बिना भी मुक्ति पाना प्रत्यक्ष है॥14॥ इस सूत्र से भक्ति की परम श्रेष्ठता दिखलाई क्योंकि श्रीगोपीजन को यद्यपि ब्रह्मविषयक कुछ भी ज्ञान न था तथापि जो गीत केवल प्रेम से श्री गोपीजन को मिली सो किसी को न मिली।

भक्त्या जानातीति चेन्नाभिज्ञप्त्या साहाय्यात्॥15॥

जो कहो भक्ति से ज्ञान होता है सो नहीं, क्यौंकि ज्ञान तो भक्ति का सहायक है॥15॥ क्यौंकि जो मनुष्य को ईश्वर विषयक माहात्म्यज्ञान होगा तभी भक्ति में प्रवृत्ति होगी।

प्रागुक्तंच॥16॥

पहिले कहा भी है॥16॥ अर्थात् श्री गीताजी में अठारहवें अध्याय के चौवनवें श्लोक में आप ने श्रीमुख से कहा है कि ब्रह्म भाव पाकर प्रसन्न आत्मा न कुछ सोचता है न कुछ चाहता है, सब लोगों को समान दृष्टि से देखता हुआ मेरी भक्ति पाता है।

एतेन विकल्पोऽपि प्रत्युक्तः॥17॥

इस से विकल्प भी निरस्त हुआ॥17॥ अर्थात् ज्ञान के अंगत्व निर्णय में जो कुछ सन्देह था वह ऊपर के भगवत् वाक्य से मिट गया और भक्ति का अंगित्व निश्चय हुआ।

देवभक्तिरितरस्मिन् साहचर्य्यात्॥18॥

ईश्वर के अतिरिक्त देवताओं की भक्ति भी उस परा भक्ति के समान नहीं, क्यौंकि जगत में उसके समान और भी भक्तियां हैं॥18॥ जैसा लिखा है, जैसी देवता में भक्ति करनी वैसी गुरु में करनी तो इस सूत्र से अनन्य भक्ति स्थापन किया।

योगस्तुभयार्थमपेक्षणात् प्रयाजवत्॥19॥

और योग तो वाजपेय यज्ञ में प्रयाज की भांति भक्ति और ज्ञान दोनों का अंग है॥19॥ इस से योग की अंगांगता दिखलाया।

गौण्या तु समाधिसिद्धिः॥20॥

गौणी भक्ति से तो समाधि की सिद्धि होती है॥20॥ इस से परा भक्ति की अपेक्षा इस की महागौणता सिद्ध हुई।

हेयारागत्वादितिचेन्नोत्तमास्पदत्वात्॥21॥

भक्ति राग है इस से (राग को कोई ऋषि दुःख स्वरूप मानते हैं यह समझ कर) त्याग करने के योग्य है, यह नहीं क्यौंकि इस का आश्रय उत्तम है संग की भांति॥21॥ जैसा साधारण स्त्री पुरुष के अनुराग में परस्पर वियोग का और संयोग छूट जाने का दुख होता है वैसा ईश्वर के अनुराग में नहीं होता क्यौंकि संग दुखदाई है, यह नियम नहीं है। सत्संग से अनेक सुख होते हैं वैसे ही ईश्वर का अनुराग परम सुख स्वरूप है॥

तदेव कर्मिज्ञानियोगिभ्य आधिक्यशब्दात॥22॥

इस से भक्ति ही मुख्य है क्योंकि कर्म्मी, ज्ञानी और योगियों से उस को अधिक कहा है॥22॥ श्री गीता जी के छठे अध्याय के 46 और 47वें श्लोक में आप ने श्रीमुख से कहा है कि तपस्वी, ज्ञानी और कर्म्मी से योगी अधिक हैं और योगियों में हमारे भक्त अधिक हैं।

प्रश्ननिरूपणाभ्यामाधिक्यसिद्धेः॥23॥

यह अधिकता प्रश्नोत्तर से सिद्ध है॥23॥ श्रीगीता जी में 12वें अध्याय में अर्जुन ने पूछा है कि जो अक्षर की उपासना करते हैं और जो आप की भक्ति करते हैं उन में मुख्य कौन है। इस के उत्तर में आप ने कहा है कि जो मेरे भक्त हैं वे अधिक हैं। इस से बिना किसी अर्थवाद से भक्ति की परमोत्तमता सिद्ध हुई।

नैवश्रद्धातुसाधारण्यात्॥24॥

श्रद्धा ही भक्ति नहीं है क्योंकि उस को साधारणता है॥24॥ क्योंकि श्रद्धा कर्म्मादिकों में भी होती है।

तर्स्यो तत्त्वे चानवस्थानात्॥25॥

क्योंकि श्रद्धा से भक्ति तत्त्व की एकता करने से अनवस्था होती है॥25॥ अर्थात् श्रद्धावान भजन करता है, ऐसा लोग कहते हैं तो यदि श्रद्धा भक्ति एक ही होती तो अंग भाव से प्रयोग न होता।

ब्रह्मकांडं तु भक्तौतम्यानुज्ञानाय सामान्यात्॥26॥

अतएव भक्ति प्रतिपादन के अर्थ उत्तरकांड की संज्ञा ब्रह्मकांड से ज्ञानकांड की सामान्यता है॥26॥ अर्थात् जो ज्ञान की मुख्यता होती तो 'अथातो ब्रह्मजिज्ञासा' यह न कहते। इस से कंठरव से ज्ञान की अपेक्षा भक्ति की उत्तमता सिद्ध किया। इति 2 आ. इति 1 अध्याय॥

बुद्धिहेतुप्रवृत्तिराविशुद्धेरवघातवत्॥27॥

बुद्धि के हेतुओं की प्रवृत्ति धान कूटने की भांति विशुद्धि तक है॥27॥ बुद्धि अर्थात् ब्रह्म साक्षात्कार यद्यपि कृत्यनिष्पाद्य नहीं अर्थात् अपने किए हुए उपायों से बाहर है तो भी उस के हेतु श्रवण मननादिकों का अनुष्ठान आवश्यक है जैसे जब तक सब छिलके बराबर न निकल जायं, धान शुद्ध न होगा।

तदङ्गानाच्च॥28॥

उस के अंगों को भी॥28॥ अर्थात् जैसे श्रवण मननादिक की आवश्यकता है वैसे ही गुरु की सेवा आदि उस के उपायों की भी है।

तामैश्वर्य्यपदां काश्यपः परत्वात्॥29॥

उस को काश्यपाचार्य्य ऐश्वर्यपदा कहते हैं अलग होने से॥29॥ अर्थात् सर्वैश्वर्य्यमय ईश्वर को मान कर उस की सेवा करना यही पुरुषार्थ कहते हैं। इन के मत में जीव और ईश्वर का नित्य भेद प्रकट हुआ।

आत्मैकपरां बादरायणः॥30॥

बादरायण आचार्य्य इस को आत्मपर कहते हैं॥30॥ वेदान्त सूत्र में व्यास जी का मत है कि आत्मज्ञान ही से सिद्धि मिलती है।

उभयपरां शांडिल्यः शब्दोपपत्तिभ्यां॥31॥

शांडिल्याचार्य्य शब्द और उपपत्ति से उभय पर कहते हैं॥31॥ युक्तियों से और वाक्यों से जीव का ईश्वरांश होना सिद्ध है और ईश्वर में सर्व्व सामर्थ्य इत्यादि दिव्यगुण उस की विलक्षणता भी प्रकाश करते हैं, इस से शांडिल्य दोनों मत मानते हैं अर्थात् को ईश्वरांश मान कर के भी उस की उपासना करना।

वैषम्यादसिद्धमितिचेन्नाभिज्ञानवदवैशिष्ट्यांत्॥32॥

वैषम्य से असिद्धि होगी ऐसा नहीं है क्यौंकि ज्ञान की भांति अवैशिष्ट्य है॥32॥ अर्थात् जिस रीति "यह वह है" यह भूत और वर्त्तमान काल की प्रतीति एक ही समय होती है क्यौंकि दोनों काल विषय (यह और वह शब्दों से प्रतिपाद्य) एक ही है वैसे ही ईश्वर में वैषम्य दोष नहीं जा सकता है।

न च क्लिष्टः परःस्यादनन्तरं विशेषात्॥33॥

पर (परमात्मा) को कभी इस वैषम्य से क्लेश नहीं होता क्यौंकि (ज्ञान के) अनंतर विशेष होता है॥33॥ अर्थात् जीव और ईश्वर में जो विशेषता है वह ज्ञान से प्रतीत होती है।

ऐश्वर्यं तथेति चेन्न स्वाभाव्यात्॥34॥

ऐश्वर्य भी क्लिष्ट नहीं हो सकता क्यौंकि वह स्वाभाविक है॥34॥ ईश्वर का ऐश्वर्य कुछ उपाधिभूत वा उपाधिजन्य नहीं किन्तु नैसर्गिक है इसी हेतु इस को भी क्लेश नहीं हो सकता।

अप्रतिषिद्धं परैश्वर्यं तद्भावाच्चनैवमितरेषाम्॥35॥

(ईश्वर का) परमैश्वर्य्य कहीं भी प्रतिषिद्ध नहीं होता, वरंच उस का नैसर्गिकपन

प्रकट होता है, इतरों का (जीवों का) ऐसा नहीं॥35॥ यह शंका न हो कि ईश्वर का जब ऐश्वर्य ऐसा है तो जीवों का भी ऐसा ही होगा। ईश्वर का यह सर्व्व स्वाभाविक है और जीवों का नहीं।

सर्वानृतेकिमितिचेन्नैवं बुद्ध्यानन्त्यात्॥36॥

सब के बिना (उस का) क्या प्रयोजन है? ऐसा नहीं क्यौंकि बुद्धि का आनन्त्य है॥36॥ अर्थात् यदि सब जीव क्रमशः मुक्त होंगे तो ईश्वर के ऐश्वर्य का क्या प्रयोजन है तो उस का भी क्यौं नहीं लय मानते; ऐसा कहोगे तो यह असम्भव है क्यौंकि बुद्धि का अन्त नहीं हो सकता। इस हेतु यह कल्पना मात्र है और ऐसा काल ही नहीं कि जिस में सब जीव एक बार मुक्त हो जायं और महाप्रलय में जो जीव मुक्त होते हैं वे वासना सहित होते हैं।

प्रकृत्यन्तरालादवैकार्यंचित्सत्वेनानुवर्त्तमानत्वात्॥37॥

प्रकृत्यन्तराल से और चित्सत्व के अनुवर्त्तमान होने से (ईश्वर को) अविकारिता है॥38॥ यदि ईश्वर में उत्पत्ति कर्तृत्वादि ऐश्वर्य साहजिक है तो यह भी एक प्रकार का विकार हुआ, उस का निवारण करते हैं कि प्रकृति को ईश्वर विकृत कर के उत्पत्ति आदि करता है। जैसे मायावी अपनी माया से अन्य वस्तुओं में विकार कर देता है परन्तु आप नहीं विकार पाता अर्थात् ईश्वर दुग्ध के कार्य की भांति विकृत नहीं होता वरंच सुवर्ण के विकार की भांति और उस में जीव सत्त्व जो वर्त्तमान रहता है वह माया से परे है।

तत्प्रतिष्ठा गृहपीठवत्॥38॥

उस की प्रतिष्ठा का व्यवहार घर में पीढ़े पर प्रतिष्ठा की भांति है॥39॥ अर्थात् प्रकृति के विकार से जगत माया में प्रतिष्ठित है, यह शंका न हो जैसे किसी के घर पीढ़े पर कोई बैठा हो ऐसा कहने में आवैगा कि अमुक पीढ़े पर बैठा है पर वास्तव में वह पीढ़ा और मनुष्य दोनों घर में हैं; वैसे ही माया और संसार दोनों ईश्वर में हैं।

मिथोपेक्षणादुभयं॥39॥

परस्पर की अपेक्षा से दोनों कारण हैं॥39॥ अर्थात् संसार की उत्पत्ति में माया और ईश्वर दोनों ही आवश्यक हैं।

चेत्याचितोर्न तृतीयं॥40॥

प्रकृति और ब्रह्म में भेद नहीं है॥40॥ अर्थात् इन में तृतीय भाव नहीं हैं दोनों एक हैं। इस से प्रकृति स्वतन्त्र कोई अलग है, इस का निषेध किया।

युक्तौ च सम्परायात्॥41॥

वियोग के पूर्व दोनों एक हैं॥41॥ अर्थात् सृष्टि होने के समय ब्रह्म और प्रकृति अलग अलग होते हैं परन्तु जड़ाजड़ के भेद से नित्य में इन का अनन्य सम्बन्ध है।

शक्तित्वान्नानृतं वेद्यं॥42॥

शक्ति के कार्य होने से यह जगत् मिथ्या नहीं है॥42॥ अर्थात् जगत माया का कार्य है तो उस की शक्ति भी सत्य है। प्रकृति केवल जड़मात्र तो है पर मिथ्या नहीं।

तत्परिशुद्धिश्च गम्यालोकवल्लिगेभ्यः॥43॥

उस (भक्ति) की परिशुद्धि लोक के (प्रेम के) चिह्नों से जानना॥43॥ अर्थात् अश्रु, रोमांच, गद्गद इत्यादि स्थायी भावों से किस को कितना प्रेम है यह प्रकट होता है।

सम्मान बहुमान प्रीति विरहेतरविचिकित्सा महिमख्याति तदर्थप्राणस्थान तदीयतासर्वतद्भावाप्रातिकूल्यादीनि च रनरणेभ्यो बाहुल्यात्॥44॥

सम्मान, बहुमान, प्रीति, विरह, इतरविचिकित्सा अर्थात् आग्रह पूर्व्वक दूसरे की अनपेक्षा, महिमा का कथन, प्रियतमा ही के हेतु प्राणरक्षण, तदीयता, सब उस के भावों से देखना, अप्रातिकूल्य अर्थात् अनुकूलता इत्यादि प्रीति के लक्षण हैं॥44॥

सम्मान जैसा अर्जुन का, बहुमान इक्ष्वाकु का कि भगवान के नाम वा वर्णों से जिन वस्तुओं में सम्बन्ध था उनका भी आदर करता था, प्रीति विदुर की, विरह श्रीगोपीजन का, इतरविचिकित्सा उपमन्यु की और श्वेतद्वीपवासी की तथा चित्रकेतु की, महिमाख्याति यम, भीष्म और व्यास की, तदर्थ प्राणस्थिति ब्रज के लोग तथा हनुमान जी की, तदीयता बलि की और उपरिचर वसु की, तद्भाव श्री प्रह्लाद जी का, अप्रातिकूल्य भीष्म तथा धर्म्मराज का, आदि शब्द से नारद उद्धवादि भक्तों की प्रीति की चेष्टा और लक्षण जानना।

द्वेषादयस्तु नैवं॥45॥

द्वेषादिक से ऐसी नहीं होगी॥45॥ शिशुपाल इत्यादि के प्रकरण में भक्ति से उन को मुक्ति नहीं हुई किन्तु भगवान के महिमा बल से भक्तों को तो द्वेषादिक होते ही नहीं।

तद्वाक्यशेषात् प्रादुभविष्वपि सा॥46॥

उस के वाक्य शेष से अवतारों में भी वह है॥46॥ मत्स्यादिक अवतारों में,

शिवादि गुण स्वरूपों में, संकर्षणादि व्यूहों में तथा आचार्यादि प्रादुर्भावों में भी परा भक्ति योग्य है।

जन्मकर्मविदश्चाजन्मशब्दात्॥47॥

जन्मकर्मों के जाने की सिद्धि भी अजन्म शब्द से है॥47॥ अर्थात् जो उस के जन्म कर्मों को जानता है कि वह फिर जन्म नहीं पाता किन्तु उस को पाता है। यह श्रीगीता के 4 अध्याय के 9 श्लोक में कहा है।

तच्चदिव्यं स्वशक्तिमात्रोद्भवात्॥48॥

उस के जन्म कर्मादिक दिव्य हैं क्योंकि केवल उस की शक्तिमात्र से अनेक प्रकार के दिखाई पड़े हैं॥48॥ यह 9 श्लोक और उसी अध्याय के छठे श्लोक से सिद्ध है।

मुख्यं तस्यहिकारुण्यं॥49॥

उस के जन्मादिकों में उसी की करुणा मुख्य है॥49॥ अर्थात ईश्वर बाधित हो के नहीं जन्म लेता केवल अपनी अपार कृपा से जीवों के उद्धार के हेतु अनेक प्रकार के रूप धारण करता है।

प्राणित्वान्नविभूतिषु॥50॥

प्राणी होने से ब्राह्मण राजादि भगवद्विभूति में भक्ति सिद्धि देनेवाली नहीं होती॥50॥

द्यूतराजसेवयोः प्रतिषेधात्॥51॥

द्यूत और राजसेवा के निषेध से॥51॥ क्योंकि गीता जी में आप ने श्रीमुख से राजा और जूए को विभूति कहा है और शास्त्र में उस का निषेध है। इस से विभूतियों में भक्ति नहीं करनी।

वायुदेवेपीतिचेन्न आकारमात्रत्वात्॥52॥

श्रीवासुदेव में भी विभूति की शंका नहीं करनी क्योंकि वहां तो चीनी की पुतली की भांति कर, पाद, मुख, उदर आदि सब आकार आनन्दमय हैं॥52॥

प्रत्यभिज्ञानाच्च॥53॥

(श्रीगोपालतापनी, महाभारत, श्रीभागवत आदि पुराण तथा वैष्णव निबन्धों में) भगवान की परब्रह्मता ज्ञापित है॥53॥

वृष्णिषुश्रेष्ठ्येनैतत्॥54॥

विभूति में श्रीवासुदेव का कथन केवल यादवों में श्रेष्ठता के हेतु है॥54॥

एवं प्रसिद्धेषु॥55॥

इसी प्रकार श्रीरामादि प्रसिद्ध भगवदवतारों का भी विभूति में कथन केवल उस प्रकार की विभूति में श्रेष्ठता दिखाने के हेतु है। अर्थात् जो प्रसिद्ध भगवत्स्वरूप हैं उन में विभूति बुद्धि न करनी॥55॥

दूसरे अध्याय का पहिला आह्निक समाप्त हुआ

भक्तया भजनोपसंहाराद्गौण्यापरायैतद्धेतुत्वात्॥56॥

भक्ति से यहां गौण भक्ति लेनी क्यौंकि उस का अर्थ भजन अर्थात् सेवा है और यह भक्ति पर में हेतु है॥56॥ क्यौंकि गौण भक्ति से मुख्य भक्ति के साधन के बाधक दूर होते हैं और परा भक्ति सिद्ध होती है।

रागार्थप्रकीर्तिसाहचर्याच्चेतरेषाम्॥57॥

गीता अ. 9 श्लोक 14 में कीर्त्तन के साथ कहे हुए नमस्कारादि कर्म्मों का फल केवल राग अर्थात् परा भक्ति है क्यौंकि "स्थाने हृषीकेश" इस श्लोक में कीर्त्तन का फल अनुराग कहा है और पूर्व्वोक्त 14 श्लोक में कीर्त्तन के साथ नमनादिक का कथन है इससे नमनादिक का भी वही फल है॥57॥

अन्तराले तु शेषाः स्युरुपास्यादौ च काण्डत्वात्॥58॥

गीता जी के 9 अध्याय में 13 श्लोक से 29 श्लोक तक और वे जितनी भक्तियां कहीं हैं वह बीच की हैं क्यौंकि उपासनादि परा भक्ति की साधक हैं॥58॥

ताभ्यः पावित्र्यमुपक्रात्॥59॥

इन गौणी भक्तियों से पवित्रता अर्थात् मन की शुद्धता होती है क्यौंकि उसी अध्याय के दूसरे श्लोक में इन को पवित्र कहा है॥59॥

तासु प्रधानयोगात् फलाधिक्यमेके॥60॥

कोई कोई आचार्य्य कहते हैं कि इन गौण भक्तियों ही में प्रधानता के कारण फल अधिक है॥60॥

नाम्नेति जैमिनिः सम्भवात्॥61॥

जैमिनि आचार्य्य का मत है कि उन को मुख्यता नहीं है, यहां उन का नाममात्र

कथन है॥61॥ अर्थात् पूर्वोक्त श्रीगीता जी के श्लोकों में उन का मुख्यता करके नहीं कथन है वरंच गिनती मात्र गिनायी है।

अत्राङ्ग्प्रयोगानां यथाकालसम्भवो गृहादिवत्॥62॥

यहां अंग के प्रयोगों का घर के अंगों की भांति यथाकाल सम्भव है॥62॥ अर्थात् जैसे घर में पहिले नीव तब द्वार तब छत इत्यादि अंगों का प्रयोग एक के बनने पर यथाकाल होता है वैसे ही परा भक्तियों की साधन अंग भक्ति का यथासमय प्रयोग होता है क्यौंकि पहिले गुण श्रवण करैगा तब श्रद्धा होगी तब भजैगा, सेवैगा इत्यादि अनेक भक्तियों के पीछे परा भक्ति पौगा।

ईश्वरतुष्टेरेकोपि बली॥63॥

ईश्वर की तुष्टि के हेतु एक साधन करने वाला भी बली है॥63॥ अर्थात् भोजन वा कीर्त्तन कोई एक साधन भी दृढ़ कर के जो करैगा तो उस की उस एक साधन पर दृढ़ता ईश्वर के तुष्टि के कारण होगी अर्थात् परा भक्ति की कारण होगी क्यौंकि परा भक्ति स्वमाध्या नहीं है केवल ईश्वर के प्रसन्न होने से मिलती है।

अबन्धोऽर्पणस्य मुखम्॥64॥

अर्पण का सम्मुख अबन्ध है॥64॥ भगवान में शुभाशुभ कर्म्मों का अर्पण अबन्ध का द्वार है। यह कीर्त्तनादिक गौणी भक्तियों के अतिरिक्त परा भक्ति सिद्धि का उपायान्तर कहते हैं क्यौंकि यज्ञादिक में से बहुत काल में अनेक लोकप्राप्ति द्वारा क्रमशः ईश्वर लोक प्राप्ति के कष्ट निवारण के हेतु सब कर्म्मों का समर्पण सहज उपाय है।

ध्याननियमस्तु दृष्टसौकर्यात्॥65॥

जिस का दर्शन अपने नेत्रों को जंचे उसी भाव से चिन्तन करना यही ध्यान का नियम है॥65॥ भक्ति यदि स्वाभाविक होती है तो उत्तमा होती है क्यौंकि हठ से की हुई भक्ति चिरकाल में सिद्ध होती है। इसी हेतु कहते हैं कि भगवान के स्वरूप के ध्यान में हठ कर के कोई नियम न मानना, जो स्वरूप अपने नेत्रों को स्वभावतः जंचे उसी का ध्यान करना।

तद्यजिः पूजायामितरेपानैवम्॥66॥

''यान्तिमद्याजिनोपि मां'' इस वाक्य में यजन शब्द भगवत्पूजन के अर्थ है, इतर यागादिकों के लिए नहीं॥66॥ अर्थात् यज्ञादिक में कामना और हिंसादि अनेक दोष हैं, इस से भगवान को यजन किसी और कर्म्म मार्ग के उपायों से न करना किन्तु केवल भगवत्स्वरूप की सेवा करनी।

पादोदकं तु पाद्यमव्याप्ते॥67॥

भगवन्मूर्तियों के स्नान का जल ही पादोदक है, अव्याप्ति से॥67॥ अर्थात् साक्षाद्भगवान् वा अन्य किसी अवतार के चरण का जल ही चरणामृत है, यह हठ न करना क्यौंकि इस समय उस की प्राप्ति कहां और पादोदक में चरण ही की मुख्यता न माननी क्यौंकि श्रीशालिग्राम का स्नानजल भी पादोदक कहावैगा।

स्वयमर्पितं ग्राह्यमाविशेषात्॥68॥

अपनी समर्पण की हुई वस्तु को आप लेना, क्यौंकि विशेषता नहीं है॥68॥ अपनी समर्पण की हुई वस्तु है, इस भ्रम से प्रसाद लेने में संकोच न करना क्यौंकि वैष्णवों को भगवत्प्रसाद लेने की आज्ञा है और उस समर्पण करने वाले में कोई विशेष नहीं अर्थात् वह भी वैष्णवान्तः पाती है।

निमित्तगुणान्यपेक्षणादपराधेषु व्यवस्था॥69॥

निमित्त, गुण और अनपेक्षा से अपराधों की व्यवस्था है॥69॥ भगवत्सेवा में जो बत्तीस अपराध कहे हैं वे तीन भांति के हैं, एक तो वे कि जैसे किसी कारण से हो जायं, दूसरे वे जिन के करने का नित्य स्वभाव है और तीसरे वे जो भूले से हों। इन तीनों की व्यवस्था अलग है जैसे अनिच्छापराध से निमित्तापराध और निमित्तापराध से नित्यापराध बढ़ कर है।

पत्रादेर्दानमन्यथाहि वैशिष्ट्यम्॥70॥

पत्रपुष्पादि का दान सर्व्व समान (समान फल रूप) है॥70॥ क्यौंकि भगवान को पत्र का दान और स्वर्ण कोटि का दान दोनों समान सन्तोष करने वाला है।

सुकृतत्त्वात्परहेतुश्च भावाच्च क्रियासु श्रेयस्यः॥71॥

ये भक्तियां पराभक्ति की कारण और पुण्यरूप हैं। इस से सब क्रियाओं में श्रेयस्कर हैं॥71॥

गौणं त्रैविध्यमितरेण स्तुत्यर्थत्वात् साहचर्य्यम्॥72॥

(गीताजी के अ. 7 श्लोक 6 में आर्त, जिज्ञासु, अर्थार्थी और ज्ञानी चारों प्रकार के भक्त कहे हैं, उन चारों की समता नहीं) गौणी भक्ति उस में तीन ही हैं और स्तुति के अर्थ इनको ज्ञानी की भक्ति के साथ लिखा है॥72॥ क्यौंकि आर्त की भक्ति अपनी विपत्ति मिटाने के हेतु है, जिज्ञासु की जानने के हेतु और अर्थार्थी की भक्ति अपने काम के हेतु है और ज्ञानी की भक्ति केवल प्रेम से है।

बहिरन्तरस्थमुभयमवेष्टिसववत्॥73॥

(यद्यपि कीर्त्तनादिक भक्तियां परा भक्ति की अंग हैं परन्तु यदि कीर्त्तनादि किसी में विशेष रुचि होय तो उस भक्ति में उस भक्ति की मुख्यता होगी क्यौंकि) पराभक्ति के भीतर की भक्ति भी कहीं कहीं बाहर अर्थात् स्वतन्त्र गिनी जाती है। जैसे यज्ञ की अवेष्टि यज्ञ के अन्तर्गत और बहिर्गत है जैसे वाजपेय यज्ञ के अंग में बृहस्पतिसव आ जाता है परन्तु बृहस्पतिसव की विशेष महिमा वेद में अलग भी लिखी है॥73॥

स्मृतिकीर्त्योः कथादेश्चातौ प्रायश्चित्तभावात्॥74॥

कथादिकों का स्मरण और कीर्त्तन आर्त भजन में प्रायश्चित्त भाव से है॥74॥ अर्थात् आर्तलोग अपने पाप वा आपत्ति मिटाने के हेतु कीर्त्तनादि करते हैं, इस से यहां कीर्त्तनादि में विशेषता नहीं है।

भूयस्समननुष्ठितिरितिचेदाप्रयाणमुपसंहारान्महत्स्वपि॥75॥

जो कहो कि भक्ति करने वाले बहुत कर्म्मों का अनुष्ठान नहीं करते सो नहीं, क्यौंकि बहुत कर्म्म करने वालों को भी अन्त समय इसी का विधान है॥75॥ अर्थात् चाहे कितना ही कर्म्म करो जब भगवान की भक्ति बिना गति नहीं तो उस भक्ति के बिना बहुत विधिपूर्व्वक किए हुए भी अनेक कर्म्म व्यर्थ ही हैं।

लध्वापि भक्ताधिकारे महत्क्षेपकमपरसर्वहानात्॥76॥

(क्यौंकि) थोड़ा भी भक्ताधिकार बड़े पापों का नाशक होता है क्यौंकि भगवान की अपने शरणागतों की वा नामस्मरण करने वालों के सर्व्व पापहानि की प्रतिज्ञा है॥76॥

तत्स्थानत्वादनन्यधर्मः खले वालीवत्॥77॥

(क्यौंकि) भगवदाश्रय होने से (छोटे भी) भगवद्धर्म अनन्य धर्म्म ही हैं (और इन से सब बड़े पापों का क्षय हो जाता है) जैसा ओखली में बालों का (अर्थात् ओखली में कितनी भी बाल पड़ें सब कुट पिस जायगी वैसे ही भगवद्धर्म से कैसे भी पाप हों सब नाश हो जाते हैं)।

आनिन्द्ययोन्यधिक्रियते पारम्पर्यात्सामान्यवत्॥78॥

चांडालयोनि को भी भगवद्भक्ति का अधिकार है क्यौंकि परम्परा से भक्तों की समानता है॥78॥ और गज, गृध्र, बानर इत्यादि मनुष्य छोड़ कर और योनि के जीवों को भी भक्ति से सिद्धि मिली है तथा एक विशेषता यह भी है कि भारतखंड

छोड़ कर खंडान्तरवासियों को तो केवल भक्ति ही का आश्रय है क्यौंकि वे कर्मभूमि नहीं हैं कि वहां के लोग कर्म्म से सिद्ध हो।

अतोह्यविपक्वभावानामपि तल्लोके॥79॥

इसी हेतु परा भक्ति में जो पक्के नहीं हैं वे भी भगवल्लोक में वास करते हैं॥79॥ अर्थात ब्राह्मण, शूद्र, चंडाल इत्यादि संज्ञा से अपने अपने जाति की पूर्ण क्रिया करो तौ भी सिद्धि नहीं, कितना भी पुण्य करो अन्त में क्षीण होने पर मृत्युलोक में आना पड़ता है और भक्ति करने वालों का कभी नाश नहीं। जो पक्के नहीं हैं वे श्वेतद्वीप में रह कर भगवद्भक्ति में पक्व होकर अन्त में भगवत्पद पाते हैं और भक्तों की कर्मवश से उपजी हुई कामनाओं को भी भक्ति अन्त में भस्म कर देती है। इस में जड़भरत जी का उपाख्यान प्रमाण है।

क्रमैकगत्युपपत्तेस्तु॥80॥

केवल क्रममात्र से गति तो क्रिया की है॥80॥ अर्थात् ''बहूनां जन्मनामान्ते ज्ञानवान् मां प्रपद्यते'', ''अनेकजन्मसंसिद्धस्ततो याति परां गतिं'' इत्यादि वाक्यों में क्रम से जो सिद्धि पानी कही है वह सुकर्म करने वालों को है। भक्तों को तो एक भक्ति ही से सद्यः गति होती है।

उत्क्रान्तिस्मृतिवाक्यशेषात्॥81॥

क्यौंकि भगवद्वाक्य में भक्तों को एक साथ सब कर्म्मों का उल्लंघन कर के सिद्धि मिलना कहा है॥81॥ अर्थात् ''सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज'' इस वाक्य से भगवान् ने अपने भक्त के अन्य धर्म्मों की ओर क्रम प्राप्त उनके गतियों की श्रीमुख से आप ही उपेक्षा की है और 9 अध्याय में अनेक प्रकार के सत्कर्म इत्यादि कह कर भी 30। 31। 32। 34 श्लोकों में ''हमारा भक्त कैसा भी दुराचारी हो उस को साधु ही समझना'' कहा है और अनेक जन्म तथा कर्मादिकों को उल्लंघन कर के उस की सद्यःगति की और उस गति के फिर कभी न नाश होने की ''क्षिप्र, शश्वत्'' इत्यादि शब्द कथनपूर्वक प्रतिज्ञा की है।

महापातकिनां त्वार्तौ॥82॥

(जो कहो कि जो बड़े बड़े पापी लोग हैं वे भी क्रम को उल्लंघन कर के परम पद पावैंगे, इस पर कहते हैं कि) महापातकियों की भक्ति तो आर्तों की भक्ति में है॥82॥ अर्थात् पापी लोग अपने पाप की निवृत्ति के हेतु भक्ति करते हैं, उन की भक्ति सहज नहीं। जिन की भक्ति सहज है उन के पापों के हेतु तो ''अपिचेत्सुदुराचारों'' इत्यादि वाक्य जागरूक ही हैं।

सैकान्तभावोगीतार्थप्रत्याभिज्ञानात्॥83॥

परा भक्ति का नाम एकान्त भाव है क्यौंकि गीता में ऐसा ही कहा है॥83॥ यथा "अनन्याञ्चिन्तयन्तो मां", "यो मां पश्यति सर्वत्र", "मन्मना भव भद्भक्तो", "मत्कर्मकृन्मत्परमोमद्भक्तः", "ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि संन्यस्य मत्पराः", "तमेव शरणं गच्छ", "सर्वधर्मान् परित्यज्य" इत्यादि वाक्यों से और उन के उपक्रमोपसंहार से सिद्ध है।

परां कृत्वैव सर्वेषां तथाह॥84॥

(जो कहो कि गीता जी के वाक्यों की प्रवृत्ति तो ज्ञान, योग, सत्कर्म कीर्त्तनादि गौणी भक्ति इत्यादि अनेक विषयों पर है इस पर कहते हैं) कि श्रीमद्भगवद्गीता के वाक्यों की प्रवृत्ति तो परा भक्ति ही को मुख्य कर के है ऐसा आप ने कहा भी है॥84॥ क्यौंकि जब आप ने "मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु॥ मामेवैष्यसि कौन्तेय प्रतिजाने प्रियोसि मे॥ सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज॥ अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः" ये दो वाक्य साधन, सिद्धा परा भक्ति ही के मुख्यता के हेतु कहे तो उस की श्रेष्ठता के हेतु पहिले आग्रहपूर्वक "सर्वगुह्यतमं भूयः शृणु मे परमं वचः" इससे अगले दोनों वाक्यों की महिमा कही और लोक में भी प्रसिद्ध है कि मनुष्य किसी को सौ उपदेश करै परन्तु अन्त में जो निचोड़ कर कहै वही बात मुख्य होती है। परंच गीता जी के कहने का तो फल परा भक्ति ही है, यह आप ने "यद्वदं परमं गुह्यं मद्भक्तेष्वभिद्यास्यति॥ भक्ति मयि परां कृत्वा मामेवैष्यत्असंशयः" इस वाक्य में कहा है। इस से और "अहं" "त्वां" इन दो पदों के अलग होने से श्रीमद्गीता की प्रवृत्ति केवल भक्ति ही के हेतु है न ज्ञानकर्मादिकों के, यही सिद्ध हुआ।

द्वितीयाध्याय का द्वितीयान्हिक समाप्त हुआ।

भजनीयेनाद्वितीयमिदं कृत्स्नस्य तत्स्वरूपत्वात्॥85॥

(भक्ति की उत्कर्षता और जीवों के साधन कह कर अब सच्चिदानन्दमय परमेश्वर और उस के सदंश से जगत और चिदंश से जीव और आनन्दमय श्री विग्रह इन का परस्पर सम्बन्ध दिखाते हैं) यह सब ईश्वर स्वरूप ही है। इस से भजनीय अर्थात् भगवान से यह अलग नहीं है॥85॥ इस सूत्र से मिथ्यावाद निरस्त करते हैं क्यौंकि मिथ्यावादियों के मत से संसार असत्य है परन्तु यहां पर सूत्रकार भगवान शांडिल्य मुक्त कंठ से जगत की सत्यता प्रतिपादन करते हैं और इस जगत का

विस्तार इस प्रकार से है कि सच्चिदानन्दमय ईश्वर को जब संसार की इच्छा हुई तो अपने सदंश से जड़ प्रपंच किया और चिदंश से चैतन्य प्रपंच (जीव सृष्टि) किया। जीव में आनन्दांश का तिरोभाव है क्योंकि बहुत काल से आनन्दराशि भगवान् से इन का वियोग है। उस वियोग का न इनको स्मरण है न वियोगजन्य दुःख है, सो भगवान की कृपा से वा उस के भक्तों की कृपा से उस के वियोग का स्मरण आना ही मानो उस के आनन्दांश के आविर्भाव का कारण है और इसी से उस के एक अंश में स्थित यह सब नित्य सत्य है।

तच्छक्तिर्माया जडसामान्यात्॥86॥

(मिथ्यावादी का निराकरण कर के अब मायावादी का निराकरण करते हैं) कि माया स्वतन्त्र कोई वस्त्वंतर नहीं है किन्तु भगवान् के शक्ति ही का नाम माया है और वह भी जड़ अर्थात् अपनी सहज चैतन्यता शून्य अन्य चिदंश के समान है॥86॥ इस से मायावादियों का ईश्वर की माया के फन्द में फंसना और शाक्तों का स्वतन्त्र शक्तिवाद निरस्त हुआ।

व्यापकत्वाद्व्याप्यानाम्॥87॥

(सदंश और चिदंश में आनन्दांश व्याप्त है। इस से परस्पर इन में व्याप्य व्यापक भाव हुए तो अब संसार की व्याप्त और ईश्वर की व्यापक संज्ञा हुई तो फिर से उस की सत्यता और शुद्धाद्वैतता दिखाने के हेतु कहते हैं) कि व्यापक के सत्य होने से उस का व्याप्य भी सत्य ही है॥87॥

न प्राणिबुद्धिभ्योऽसंभवात्॥88॥

(मायावाद निराकरण कर के उस के समान ही नास्तिकवाद का भी निराकरण करते हैं) यह किसी प्राणी की बुद्धि से नहीं बना है, क्योंकि इस की सूक्ष्मता प्राणियों की बुद्धि के बाहर है। इस से यह प्राणियों की बुद्धि से बना है। यह बात असम्भव है॥88॥

निर्मायोच्चावचं श्रुतीश्च निर्मिमीते पितृवत्॥89॥

यह सब भूत समूह बना कर वेदों को बनाता है, पिता की भांति॥89॥ जैसे पिता पुत्रों को उत्पन्न कर के फिर उन को शिक्षा देता है वैसे ही भगवान् अपने एकांश से जीवों को प्रगट कर के फिर उन की शिक्षा के हेतु वेद कहता है।

मिश्रोपदेशान्नेति चेन्न स्वल्पत्वात्॥90॥

जो कहो कि वेद के उपदेश मिश्र हैं अर्थात् अग्निष्टोमादिक यज्ञ में हिंसा का

विधान है इस से ये वेद ईश्वर के बनाए नहीं, ऐसा नहीं क्यौंकि वह भाग उस में बहुत ही थोड़ा अर्थात् उपेक्षित है॥90॥

फलमस्माद्बादरायणो दृष्टत्वात्॥91॥

(अब कर्मवादियों का मत निराकरण करते हैं) कि ये कर्म्म स्वतः फलदाता नहीं, फल देनेवाला ईश्वर ही है, यह व्यास जी कहते हैं क्यौंकि ऐसा ही देखा भी जाता है॥92॥ जैसे राजा के तोष के हेतु अनेक कर्म्म करो परन्तु उस का प्रतिफल देना राजा ही के अधिकार में है और बिना कुछ सेवा किये भी राजा फल दे सकता है वैसे ही ईश्वर का प्रसन्न होना कर्म्म के अधीन नहीं कर्म्म केवल साधक है।

व्युत्क्रमादप्ययस्तथादृष्टम्॥92॥

लय उलटी चाल से होता है ऐसा ही देखा गया है॥92॥ जैसे गोरखधन्धे की डिबियों को फैलाते जाओ तो कई डिबियां हो जाती हैं और जब बन्द करो तब सब से छोटी अपने से बड़ी डिबिया में और वह अपने से बड़ी में इसी प्रकार अन्त वाली बड़ी डिबिया में सब डिबियां छिप जाती हैं वैसे ही जिस क्रम से उत्पत्ति होती है (अर्थात् ब्रह्म से प्रकृति, प्रकृति से महत्त्व इत्यादि एक से एक उत्पन्न होते हैं) वैसे ही लय होने के समय सब भगवान में लय पाते हैं, इस से फिर भी संसार की नियत्ता सिद्ध किया।

तीसरे अध्याय का प्रथमाह्निक समाप्त हुआ।

तदैक्यं नानात्वैकत्वमुपाधियोगहानादादित्यवत्॥93॥

उस की एकता है क्यौंकि उपाधि के योगों के मिटाने से नानात्व का एकत्व हो जाता है आदित्य की भांति॥93॥ जैसे "ध्येयः सदा सवितृमंडलमध्यवर्ती" इत्यादि वाक्यों में भगवान् का स्वरूप और आदित्यमंडल यह दो पृथक् प्रतीत होते हैं परन्तु वास्तव में पृथक हैं नहीं क्यौंकि जब मंडलरूपी उपाधि को भगवान् अपने में लय कर लेता है तब केवल नारायण संज्ञा रह जाती है। वैसे ही जब संसार को अपने में लय कर के उस के संयोग वियोगात्मक "संसार" इस नाम को भी अपने में लय कर लेता है तब केवल आप ही रह जाता है।

पृथगितिचेन्न परेणासम्बन्धात्प्रकाशानां॥94॥

अलग कहो सो नहीं, ऐसा कहने से पर अर्थात् भगवान से असंबन्ध होगा जैसे प्रकाशों का॥94॥ प्रकाशों का अर्थात् सूर्य्य मंडल की और नारायण की जैसी

एकता है वैसे ही भगवान् से इस से एकता है। इन दोनों का असम्बन्ध नहीं हो सकता।

नविकारिणस्तु करणविकारात्॥95॥

ये आत्मा विकारी नहीं हैं क्योंकि ऐसा मानने से उन के कारण अर्थात् भगवान् को भी विकार मानना पड़ेगा

अनन्यभक्त्या तद्बुद्धिर्बुद्धिलयादत्यन्तं॥96॥

(भजनीय का और भजन करने वाले का स्वरूप दिखा कर उन के वियोग स्मृति का स्मारक फिर से कहते हैं) कि उस परमानन्दमय भगवान् में अनन्य भक्ति करते करते भृंगी कीट की भांति तद्बुद्धि हो जाती है और उस बुद्धि के भी लय होने से अर्थात् वियोगजन्य असह्य दुःख से सब सुध बुध छूट जाने से अत्यन्त अर्थात् सब वासनाओं के मोक्ष होने से परमानन्द अर्थात् आनन्द मात्र कर पाद मुखोदरादि भगवान श्रीकृष्णचन्द्र से नित्य लीला में संयोग होता है॥96॥

आयुश्चिरमितरेषान्तुहानिरनास्पदत्वात्॥97॥

(जो कहो कि संचित प्रारब्ध का भोग तो हुआ ही नहीं आनन्द प्राप्ति कैसे हुई, इस पर कहते हैं) कि साधारण जीवों की आयु ही प्रारब्ध की भोग कराने वाली है परन्तु भगवद्भक्तों को तो उन संचित प्रारब्धों की आप ही हानि हो जाती है क्योंकि उस की आश्रय आयु का भोग नहीं रहता॥97॥ अर्थात् जिन को भगवद्वियोग स्मरण में एक एक क्षण कोटि कोटि कल्प तक असह्य यन्त्रणा सहते हुए बीतते हैं वा संयोगलीला स्मरण से एक एक क्षण लाख लाख बरस तक स्वर्ग के सुख के भोग के समान बीतते हैं उन के सब भले बुरे प्रारब्ध इस वियोग संयोग के अनुभव में भस्म हो जाते हैं।

संसृतिरेषाम भक्तिः स्यान्नाज्ञानात्कारणासिद्धेः॥98॥

और जीवों की संसार की कारण अभक्ति है, अज्ञान नहीं, कारण की असिद्धि से॥98॥ अर्थात् संसार के कारण भगवान् में अभक्ति ही बन्धन की हेतु होती है क्योंकि बन्ध मोक्ष का दाता ही जिस से रूठा रहेगा, उसे मोक्ष कहां।

त्रीण्येषां नेत्राणि शब्दलिंगाक्षभेदाद्रुद्रवत्॥99॥

(जो कहो कि जीव कैसे जाने इस पर कहते हैं) कि इन जीवों को श्रीमहादेव जी की भांति तीन नेत्र हैं अर्थात् तीन प्रकार से ये जानैं। कुछ तो शब्द अर्थात् वेदादिकों से, कुछ लिंग अर्थात् अनुमान से और कुछ अक्ष अर्थात प्रत्यक्ष से जाने॥99॥

अविस्तारोभावाविकाराः स्युः क्रियाफलसंयोगात्॥100॥

लय और उत्पत्ति क्रियाफल के संयोग से विकार हैं॥100॥ अर्थात् वास्तविक निर्विकार भावों में क्रिया फल के संयोग से विकार प्रतीत होता है। भगवत्स्वरूप ज्ञानान्तर भक्ति पाने से मनुष्य वास्तविक स्वरूप जानैगा इस से भक्ति ही मुख्य है॥ इति ॥[1]

जेहि लहि फिर कछु लहन की आस न चित में होय।
जयति जगत पावन करन प्रेम वरन यह दोय॥1॥
व्याकुल लखि सब जीवगन, ज्ञान करम बहु मानि।
कियो सूत्र शांडिल्य ऋषि, परम भक्ति की खानि॥2॥
सुमिरि राधिका प्रानपति, व्रज जुवती मन फन्द।
यह ताको भाषा तिलक, किय तदीय हरिचन्द॥3॥

शांडिल्य सूत्र और उस का भाषा भाष्य समाप्त हुआ।

अथ पाठान्तर

15. सूत्र, अभिज्ञायाः साहाय्यात् इति श्री उपासना सर्वस्व तथा श्रीकाष्ठजिह्वास्वामिकृत पाठ।

26. सूत्र तस्यानुज्ञानाय सामर्थ्यात् इति पूर्वोक्त पाठ।

30. सूत्र, आत्मैकपरां इति पूर्वोक्त पाठ।

31. सूत्र, उभयपरां इति पूर्वोक्त पाठ।

32. सूत्र, प्रत्यभिज्ञानवत् इति पूर्वोक्त पाठ।

34. सूत्र, यहां से स्वप्नेश्वर के पाठ से पूर्वोक्त ग्रन्थों के पाठ से बड़ा भेद है। यथा जन्मकर्मविदश्चाजन्मने शब्दात् 34 तच्च दिव्य स्वशक्ति मात्रोद्भावात् 35 मुख्यं तस्य हि कारुण्यं 36 प्राणित्वान्नविभूतिषु 37 द्यूराजसेवयोः प्रतिषेधाच्च 38 वासुदेवेपीतिचेन्नाकारमात्रत्वात् 39 प्रत्यभिज्ञानाच्च 40 वृष्णिषु श्रेष्ठेनतत् 41 एवं सिद्धेषु च 42 भक्त्या भजनोपसंहारात् परार्थे हेतुत्वात् 43 रागार्थम्प्रकीर्त्तितसाहचर्याच्चेतरेषाम् 44 अन्तराले चशेषाः स्युरुपास्यादौ च कांडत्वात् 45 ताभ्यः पावित्र्यमुपक्रमात् 46 तासुप्रधानयागात् फलाधिक्यमेके 47 नाम्नेति जैमिनिः सम्भवात् 48 अंगप्रयोगाणां यथाकालं सम्भवो गृहादिवत् 49 ईश्वरतुष्टेरेकोपिबली 50 अबन्धोऽर्पणस्य सुखम् 51

---

[1] हरिश्चन्द्र मैगजीन में निम्नलिखित अंश मिलता है। इस वाक्य से अर्थ की संगति नहीं बढती। अर्थात् निर्विकार भी ईश्वर अपनी इच्छारूपीक्रियाओं के संयोग से और उनके नाना रूपत्व फल से विकारी कहा जाता है।

ध्याननियमस्तु दृष्टिसौकर्यात् 52 उद्यद्भिः पूजायामेव प्रयुक्तः 53 पादोदकन्तु पाद्यमव्याप्तेः 54 स्वयमप्यर्पितं ग्राह्यमविशेषात् 55 निमित्तगुणाव्यपे-क्षणादपराधेषु व्यवस्था 56 पत्रादेर्दानमन्यथाहि वैशिष्ट्यम् 57 सुकृतजत्वात् परहेतुभावाच्च क्रियासु श्रेयस्यः 58 गौणात्रैविध्यमितरेण स्तुत्यर्थत्वात् साहचर्यम् 59 वहिरंतःस्थमुभयमेवेष्टिसम्बन्धवत् 60 प्रमादसत्वासत्वाभ्यां विशेषात् 61 स्मृतिकीर्त्योः कथादेश्चार्त्तौ प्रायश्चित्तभावात् 62 भूयसामननुष्ठितिरिति चेदाप्रायणमुपसंहारान्महत्स्वपि 63 लघ्वपि भक्ताधिकारे महत् क्षेपकमपरसर्वहारात् 64 तत्स्थानत्वदन्यधर्माः खले बालीवत् 65 आनिंद्य योनिधिक्रियते पारम्पर्यात् सामान्यवत् 66 अतोह्यविपक्वभावानामपितल्लोके 67 क्रमैकगत्युपपत्तेस्तु 68 उत्क्रान्ति वाक्यशेषात् 69 महापातकिनां त्वार्त्तौ 70 सैकान्त भावो गीतार्थ प्रत्यभिज्ञानात् 71 परां कृत्यैव सर्वेषां तथा ह्याह 72 भजनीयमद्वितीयमिदम् कृत्स्नस्य तत्स्वरूपत्वात् 73 तच्छक्तिर्मायजड़सामान्यात् 74 व्यापकत्वात्व्याप्यानां 75 नप्राणिबुद्धिभ्योऽसम्भवात् 76 निर्मायोच्चावचं श्रुतीश्चनिर्मिमीतेपितृवत् 77 मिश्रोपदेशान्नेतिचेन्न स्वल्पत्वात् 78 फलमस्माद् बादरायणो दृष्टत्वात् 79 व्युत्क्रमादप्ययस्तथा दृष्टं 80 तदैक्यं नानात्वमुपाधितः 81 पृथगेव चेन्न परेनासम्बन्धात् 82 अविकारिणास्तु करणविकारात् 83 अनन्यभक्त्या तद्बुद्धिलयादत्यन्तं 84 ग्रामादिवत् विशिष्टतया पुमर्थत्वात् 85 आयुश्चिरमित्यपरेषां तु हानिरनास्पदत्वात् 86 संसृतिरेषामभक्तेः स्यान्नाज्ञानात् कारणासिद्धेः 87 त्रीण्येषां नेत्राणि शब्दलिंगाक्षभेदाद्रुद्रवत् 88 आविस्तिरीभावा विकाराः क्रियाफलसंयोगात् 89 इस क्रम सूत्रों के पाठ ग्रन्थ समाप्ति तक हैं। इति

अथ उपसंहार

हम लोगों के आर्य्यशास्त्रों में श्रुतियों के पीछे मूल सूत्रों का बड़ा आदर है। ये सूत्र भिन्न भिन्न ऋषियों ने भिन्न भिन्न शास्त्रों के प्रतिपादन को बनाए हैं और पीछे उन्हीं पर भाष्य व्याख्या टिप्पणी टीका बना बना कर लोगों ने उन शास्त्रों को चौड़ाया है। यथा जैमिनि ने पूर्वमीमांसा, व्यास ने उत्तरमीमांसा, गौतम ने न्याय, कणाद ने वैशेषिक, कपिल ने सांख्य और पतंजलि ने योगसूत्र बनाए हैं। इन्हीं छः शास्त्रों की संज्ञा षड् दर्शन हैं। इन में पूर्व मीमांसा सब से प्राचीन बोध होता है। इन सूत्रों को छोड़ कर और भी अनेक सूत्र हैं यथा पाणिनि के व्याकरण के सूत्र, वात्स्यायन के कामसूत्र, वामन और भरत के अलंकारशास्त्र पर सूत्र, पिंगल के छन्दःशास्त्र पर और दूसरे दूसरे ऋषियों के अन्य अन्य शास्त्रों पर। वैसे भक्तिशास्त्र पर शांडिल्य ऋषि के और नारद जी के सूत्र हैं। कहते हैं कि संकर्षणसूत्र और उस का प्राचीन भाष्य उपासना पर आगे प्रचलित था किन्तु उस की पुस्तक स्मरण शेष रह गई है।

इस शांडिल्य सूत्र के भाष्यकारों ने सूत्रों के आरम्भ करने के पूर्व उपासना रहस्य नामक अथर्ववेद की श्रुति का एक प्रकरण लिखा है। उस का आशय यह

है ब्रह्मा ने श्रीशिव जी से भक्ति का भेद पूछा है उस पर थोड़े से में शिव जी से ब्रह्मा जी ने वह रहस्य नारद, वशिष्ठ, असित, देवल और शांडिल्य से कहा है।

इस प्रकार हम आर्य्य लोगों का मूल शास्त्र वेद त्रिकांड कहलाता है अर्थात् कर्म्म, ज्ञान और उपासना। पहले शास्त्र जीवों को कर्म्म का उपदेश करता है, उन कर्मों से शुद्ध अधिकारी जीव को ब्रह्मज्ञान कराता है, फिर जब ज्ञान को लेता है तो उस को उपासना का उपदेश देता हुआ परम सिद्धि को पहुंचाता है।

आज कल काल के प्रभाव से उपासनाकांड का प्रचार विरल हो गया है। इसी हेतु इस सूत्र का भाषा में अर्थ प्रचार किया गया। इस से जगत् का परमोपास्य तुष्ट हो, इति।

[हरिश्चन्द्र मैगजीन के अक्टूबर सन 1873 ई., नवम्बर, दिसम्बर सन 1873 ई. तथा जनवरी सन 1874 ई. के अंकों में प्रकाशित]

तदीयसर्व्वस्व

अर्थात

श्री नारदकृत भक्तिसूत्र का बृहत् भाष्य

प्रेमी जनों के दासानुदास प्रेमपथ के भिक्षुक

तदीय नामांकित अनन्य वीर वैष्णव

श्री हरिश्चन्द्र

द्वारा

'केनापि देवेन हृदि स्थिकेन'

लिखित

भक्त्य त्वनन्यया लभ्यो हरिरन्यत् विडम्बनम्

उपक्रम

हम आर्य्य लोगों में धर्म्मतत्त्व के मूलग्रन्थों का भाषा में प्रचार नहीं। यही कारण है कि भिन्नता स्थान स्थान पर फैली हुई है। अनेक कोटि देवी देवताओं का माहात्म्य, छोटी छोटी बातों में ब्रह्महत्या का पाप और तुच्छ तुच्छ बातों में बड़े बड़े यज्ञों का पुण्य, अहं ब्रह्म का ज्ञान और मूलधर्म्म छोड़कर उपधर्म्मों में आग्रह ने भारतवर्ष से वास्तविक धर्म्मों का लोप कर दिया। जिस जगत्‌कर्त्ता ने हम लोगों को उत्पन्न किया, संसार के सुख दिए, बुरे भले का ज्ञान दिया और अपना सत् मार्ग दिखलाया उस से यहां की प्रजा विमुख होकर धर्मान्तर में फंस गई। यदि प्रथम कर्त्तव्य उस की भक्ति के अनन्तर कर्मानुष्ठान में प्रवृत्त होते तो कुछ बाधा नहीं थी। वह न हो कर गौण कर्म्म तो मुख्य हो गए और मुख्य वस्तु गौण हो गई। इसी से सारा भारतवर्ष भगवद्विमुख होकर छिन्न भिन्न हो गया जो कि इसकी अवनति का मूल कारण हुआ। कभी भगवद्विमुख कोई देश या जाति उन्नत हो सकती है? धर्म्म हमारा ऐसा निर्बल और पतला हो गया है कि केवल स्पर्श से वा एक चुल्लू पानी से मर जाता है। कच्चे गले सड़े सूत वा चिउंटी की दशा हमारे धर्म्म की हो गई है। हाय!!!

इसी धर्म्मपथ को समुन्नत करने को एक ईश्वरवादी अनेक आचार्यों ने परिष्कृत और सहज धर्म्म प्रचलित किए हैं और अनेक लोग इन मार्गों में दीक्षित हैं। किन्तु उन लोगों में भी बाह्यवेष बाह्याडम्बर आचार विचार वा परनिन्दादि आग्रह ऐसे समा गए हैं कि उनका धर्म्म किसी काम नहीं आता। या तो ईश्वरवादी हिन्दूसमाज से सम्पूर्ण बहिष्कृत हो जायंगे या कर्ममार्ग से ऐसे दब जायंगे कि नाममात्र के भक्त रहैंगे।

इसी विषमता को दूर करने को इस ग्रन्थ का आविर्भाव है। इस में मुक्तकंठ से कहा गया है कि केवल प्रेम परमेश्वर का दिव्य मार्ग है। यद्यपि यह ग्रन्थ वैष्णवों की शैली पर लिखा गया है, किन्तु परमेश्वर के भक्तमात्र के हेतु यह उद्योग है। क्रिस्तान आदि विदेशी धर्मप्रेमी जन समझें कि कृष्ण उनके निर्गुण परमेश्वर का नाम है, वैष्णवों की तो कुछ बात ही नहीं है, शैव कहें कि विष्णु शिव ही का नामान्तर है, ब्राह्म समझें कि हरि ब्रह्म ही को कहते हैं, उपासना और आर्यसमाज इसे अपना ही तत्त्व मानैं, सिक्ख इस में गुरु का पथ देखैं और ऐसे ही भक्तिमार्ग वाले मात्र

सब लोग इस को अपनी निज सम्पत्ति समझैं। इसमें कोरे कर्ममार्गी वा बहु-भक्त वा स्वयं ब्रह्म लोग यदि मुझ को गाली भी देंगे तो मैं अपने को कृतार्थ समझूंगा।

लोगों को उचित है कि इस ग्रन्थ को देखैं। निश्चय रक्खैं कि परमेश्वर को पाने का पथ केवल प्रेम है। और बातैं चाहे धर्म्म की हों या लोक की, दोनों बड़ी ही हैं। बिना शुद्ध प्रेम न लोक है न परलोक। जिस संसार में परमेश्वर ने उत्पन्न किया है, जिस जाति वा कुटुम्ब से तुम्हारा सम्बन्ध है और जिस देश में तुम हो उस से सहज, सरल प्रेम करो और अपने परम पिता परम गुरु परम पूज्य परमात्मा प्रियतम को केवल प्रेम से ढूंढ़ो। बस और कोई साधन नहीं है।

हरिश्चन्द्र

समर्पण

नाथ!

आज बहुत दिन पर कुछ कहने चले हैं। कुछ कहते कहां से, वैसा चित्त रहता तब न कहते? क्या आप से कुछ छिपी है? भला आप से क्या, आप तो 00000 हैं, आप के लोगों ही से न छिपैगी। बोल चाल ही से मालूम पड़ैगी। प्यारे! ऐसा क्यों? हम हजार बुरे बुरे बुरे लाख दफे बुरे पर आप तो भले हो न? फिर क्यौं? क्या हमारी करनी पर गए? तब तो हो चुकी। भला ध्यान तो कीजिए हमसे वा किसी से भी आप से तुलना क्या? हाय! तुलना क्या कुछ बात ही नहीं। हरे! हरे! जो आप अपनी बड़ाई देखिए तो हम क्या बड़े बड़े क्या हैं। पर ऐसी तो नाथ ने आज तक कभी की नहीं यह नई क्यौं होती है? नाथ! अपनाए की लाज तो हम पामरों को होती है तो बड़ों को क्यौं न हो, और फिर जो जितना बड़ा वैसी ही उस की दयालुता भी बड़ी तो फिर आप की कृपा का क्या पूछना है। पर हाय! क्या हमारे अपराध उस दया से भी बड़े निकले। प्यारे! क्या इसी दशा में रहैं? नाथ! क्या वे दिन अब दुर्ल्लभ हो जायंगे? हाय! उन पवित्र आंसुओं से क्या अब हृदय नहीं सिंचित होगा? क्या वे सर्वचिन्ताविस्मारक प्रियालाप अब कर्णरन्ध्रों को फिर न पूर्ण करैंगे? क्या वे दिन अब इस जीवन में निस्सन्देह दुर्लभ हो गए? तो फिर ऐसे जीवन ही से क्या? हम जीवन की आशा ही क्यौं करते हैं? केवल जनम भर पाप कमाने और आप को और अपने को झूठ बदनाम कहने को? धिक्! ऐसे जीवन पर। हम तो इस की आशा इसी से करते थे कि दिन दिन हमारी चित्तवृत्ति उज्ज्वल होगी और दिन दिन प्रेमानन्द बढ़ेगा। इस हेतु नहीं कि प्रवाहरज्जु में हम दिन दिन और जकड़ते जायंगे और केवल जीवनभार ढोकर संसार में लिप्त होकर अन्त में आप के कहलाकर भी वैसे ही डूबैंगे जैसे तुम्हारे बिना संसार डूबता है। जीवन का परम फल तुम्हारा अमृतमय प्रेम है यदि वही नहीं तो फिर यह क्यौं? क्या संसार में कोई ऐसा है जिससे प्रेम करैं। जो फूल आज सुन्दर कोमल हैं और जो फल आज सुस्वादु हैं पर कल न इन में रंग है न रूप न स्वाद, सूखे गले मारे फिरते हैं, भला उनसे अनुराग ही क्या? प्रेम को तो हम चिरस्थायी किया चाहैं यहां प्रेमपात्र ही स्थायी नहीं। तो चलो बस हो चुकी फिर इन से प्रीति का फल ही क्या? फल शब्द से आप कोई

वांछा मत समझिएगा। प्रेम का यह सहज स्वभाव है कि वह प्रत्युत्तर चाहता है सो यहां दुर्लभ है। हम ने मानाकि "ऐसे भी सत् लोग हैं जो प्रेम का प्रत्युत्तर दें" पर वह भी तो परिणाम दुःख स्वरूप ही है। "संयोगा विप्रयोगान्ताः" कहा ही है। तो जिस के परिणाम में दुःख है वह वस्तु किस काम की। फिर उस दुःख में जीवन की कैसी बुरी दशा होगी? तो ऐसे प्रेम ही से क्या और जीवन ही से क्या? इसी से न कहा है "जैसे उड़ि जहाज को पंछी फिर जहाज पर आवै।" और जाय कहां। देखो संसार में वह कितना उदासीन है जिस को तुम्हारे प्रेम का क्लेश भी है। तो नाथ! जो फिर उस उत्तम जीव को इस संसार के पंक में फंसाओ तो कैसे बनै। हमने माना कि हमारी करनी वैसी नहीं। हाय! भला यह मुंह से और कौन कह सकता है कि हम इस के योग्य हैं पर अपनी ओर देखो। नाथ! अब नहीं सही जाती। कृत्रिम प्रेमपरायण और स्वार्थपर संसार से जी अब बहुत घबराता है। सब तुम्हारे स्नेह के बाधक ही हैं साधक कोई नहीं, और जो स्वार्थपर नहीं हैं वे बेचारे भी क्या हैं कि कुछ सन्तोष देंगे। हाय! क्या करैं। हार कर के स्नेह कर के जैसे हो वैसे तुम्हारे ही शरण जाते हैं और वहां से भी दुरदुराए जायं तो फिर क्या करैं। अत्त हो गई, नाकों में दम आ गई, अब नहीं सही जाती। इस चर्वितचर्वण को कब तक चबायं। सच कहते हैं अब किसी की बात भी नहीं सुहाती। यद्यपि चित्त परवश होकर दिन दिन उलटा फंसता जाता है और संसार का और अपने जीवन का मोह बढ़ता ही जाता है पर साथ ही जी भी ऐसा मिचता जाता है जिस का कुछ कहना नहीं। धन के विषय में भी वैसा ही कीजिए। सारे संसार को दिखाइए कि हमारे यों डंका देकर इस संसाररूपी शत्रु दुर्ग से निकलते हैं और मेरा भी मान रख लीजिए। हे नित्यनूतन धन नित्य नव प्रेम बरसाइए।

हाय! आज हम ने आप को कितना कष्ट दिया और कितना बके। जमा भी तो कितने दिन से हो रहा था। और फिर बकैं तो किस के आगे। बकने ही से तो कुछ सन्तोष होता है। जाने दीजिए। देखिए यह आप के लोगों का सर्वस्व है इसे अंगीकार कीजिए। भला कहां परम पवित्र अमृतमय प्रेममार्ग, कहां हमारी पामर बुद्धि। पर क्या हुआ। ऐसी उत्तम बातैं जो मुंह से निकली हैं यह हमारी करतूत नहीं है, तुम ने कही हैं शिव वा नारद कौन हैं? आप ही। यद्यपि जब बुझ जाय तब काठ का काठ है पर जब तक अग्नि के संग से दहकता रहै काठ भी आग ही कहलाता है। शराबी की कोई जाति नहीं होती है। थोड़ी शराब पियै तो शराबी, बहुत पियै तो शराबी। इसी नाते इतना बके हैं। इसे सुन कर प्रसन्न होना, सुधारना, इस का प्रचार करना यह सब तुम्हारा और तुम्हारे जनों का काम है, हमारी तो कर्त्तव्यता इतनी ही थी कि निवेदन कर दिया।

चैत्रशुद्ध 5
सं. 1933

आपका
हरिश्चन्द्र

तदीयसर्व्वस्व

नारदीय
भक्तिसूत्र का बृहत् भाष्य

दोहा

भरति नेह नव नीर नित बरसत सुरस अथोर।
जयति अपूरब घन कोऊ लखि नाचत मन मोर॥
करि करुना लखि जग बिमुख कियो प्रेमपथ चारु।
जय बल्लभ ब्रजगोपिका प्रीति कृष्ण अवतारु॥
जिहि लहि फिर कछु लहनकी आस न चित में होय।
जयति जगत पावन करन कृष्ण बरन यह दोय॥

1. ॐ अथातोभक्तिं व्याख्यास्यामः।

अब हम यहां से भक्ति की व्याख्या करते हैं।1।

अथ शब्द मंगलवाचक है। अतः शब्द से नारद जी अपनी कही हुई पूर्वोक्त वार्त्ता का व्यावर्तन करते हैं और इन सूत्रों के द्वारा प्रतिज्ञापूर्वक भक्तिशास्त्र का व्याख्यान आरंभ करते हैं।

2. ॐ सा कस्मै परमप्रेमरूपा।

वह ईश्वर में परमप्रेमरूपा है।2।

सा नाम पूर्वोक्त भक्ति कस्मैनाम सदा प्रश्नार्ह ईश्वर में परमप्रेमरूपा अर्थात् साधनांतरशून्या है। किं शब्द से ईश्वर का ही बोध होता है क्योंकि ईश्वर में सदाप्रश्न बना ही रहता है। ''नैकः सर्वः स वः कः किं'' विष्णुसहस्रनाम में भगवान् के नाम हैं क्योंकि वेद ईश्वर के विषय में 'नेतिनेति' बोलते हैं।

3. ॐ अमृतस्वरूपा च।

और अमृतस्वरूपा है।3।

अमृत नाम मधुर है और मोक्षस्वरूप है क्योंकि जो भक्तिरत हैं उनको मोक्षान्तर की अपेक्षा नहीं होती।

4. ॐ यल्लब्ध्वा पुमान् सिद्धो भवत्यमृतीभवति तृप्तोभवति।

जिसको पाकर मनुष्य सिद्ध होता है, अमृत होता है और तृप्त होता है।4।

यत् अर्थात् भक्तिस्वरूप अमृत को पाकर सिद्ध नाम साधनान्तर निरपेक्ष और अमृती भवति नाम स्वयमानन्दरूप होता है, मृत्यु से निडर हो जाता है, तृप्त अर्थात् एतद् व्यतिरिक्त इस या परलोकगत सुखविषयक निरिच्छ होता है।

5. ॐ यत्प्राप्य न किंचिद्वांछति न शोचति न द्वेष्टि न रमते नोत्साहीभवति।

जिसे पाकर फिर न कुछ चाहता है न सोचता है, न किसी से द्वेष करता है न कहीं रमता है और न किसी विषय का उत्साह करता है॥5॥

क्यौंकि पूर्वोक्त वार्त्ता का मुख्य कारण मन है, परंतु जब वह इतने भक्ति से किसी (परमेश्वर) को अर्पण किया है तो उस के अभाव से ये बातें आप न होंगी क्यौंकि कार्य कारण के बिना नहीं हो सकता।

6. ॐ यद्ज्ञानानूमत्तोभवति स्तब्धोभवत्यात्मारामो भवति।

जिस को जान कर पागल, स्तब्ध और आत्माराम हो जाता है॥6॥

भक्ति का स्वरूप कह कर सूत्र में फल कहते हैं कि उस भक्ति का स्वरूप जान कर के मनुष्य मत्त अर्थात् पागल हो जाता है 'जडोन्मत्त-पिशाचवत्'। "निशम्यंकर्माणि गुणानतुल्यान् वीर्याणि लीलातनुभिः कृतानि। यदातिहर्षेत् पुलकाश्रुगद्गदं प्रोत्कण्ठ उद्गायति रौति नृत्यति॥यदा ग्रहग्रस्त इव क्वचिद्धसत्याक्रंदते ध्यायति वंदते जनं। मुहुश्श्वसनूवक्ति हरे जगत् पते नारायणेत्थात्मगतिर्गतत्रपः॥ तदा पुमानूमुक्तसमस्तबन्धनस्तद्भावभावानुकृताशयाकृतिः। निदग्धवीजानुशयो महीयसा भक्तिप्रयोगेण समेत्यधोक्षजम॥" श्रीमद्भागवत में परम भागवत श्रीप्रल्हाद जी ने दैत्यपुत्रों को उपदेश करते समय भक्तों के वर्णन में ये तीन श्लोक कहे हैं। (यहां यह भी बात समझनी चाहिए कि ये असुरबालक उपदेशपात्र नहीं थे, तथापि भक्तजनों के चित्त में जो प्रेम की उमंग आती है तो पात्रापात्र का विचार नहीं करते) भक्त जन भगवान के अनेक लीलार्थ धारण किए गए स्वरूपों के कर्म्म और अतुल्य गुण और वीर्यों को सुन कर जब अत्यन्त हर्ष से रोमांचित अश्रु से गद्गद कंठ हो जाते हैं तब बड़े ऊंचे स्वर से गाते रोते नाचते हैं, कभी भूत लगे हुए मनुष्यों के समान हंसते हैं और चिल्लाते हैं, कभी बार बार लम्बी सांस लेते हैं, कभी तादात्म्य गति से 'हे हरे, नारायण, जगत्पते' आदि नाम कीर्तन लज्जा छोड़ के करते हैं। जब ऐसी गति हो जाती है तब मनुष्य सब बन्धनों से छूट कर भगवद्भाव ही के भाव, वही अनुकरण, वही चेष्टा, वही

आशय, वैसी ही आकृत्यादि करने लगता है और अपने प्रेम से सुकर्म दुष्कर्मों के बीजों को जला कर अपनी परम भक्ति से भगवान को प्राप्त होता है।

तो परम भक्ति प्राप्त होने का यही लक्षण है कि मनुष्य पागल हो जाता है और स्तब्ध हो जाता है अर्थात् फिर उस को लोक और वेद भूत प्रेत देवता इत्यादि किसी को मानना वा किसी को नमस्कार वा किसी का किसी रीति आदर करने की आवश्यकता नहीं रहती और आत्माराम हो जाता है अर्थात् संसार के विषयों में प्रीति छोड़ आत्माराम अर्थात ईश्वर ही में सदा रमण करता है।

पहिला अनुवाक समाप्त हुआ

7. ॐ सा न कामयमाना निरोधरूपात्।

वह भक्ति कामना के अर्थ नहीं होती, क्योंकि वह निरोध रूपा है ॥7॥

जो कामना के लिए की जाती है वह भक्ति नहीं वह लोकव्यापार है। जब श्री नृसिंह जी ने प्रह्लाद जी को वर मांगने के हेतु कहा तब उन्होंने भी यह उत्तर दिया कि ''हमने आप से व्यापार नहीं किया, भक्ति किया। जो सेवक होकर सेवा के बदले में सेव्य से कुछ चाहैं वह सेवक नहीं किंतु व्यापारकारी बनिया है, और यदि आप वर देना चाहैं तो यही दीजिए कि हमारे मन में किसी वर वा राज्यभोगादि वांछा की उत्पत्ति न हो''। भगवान ने श्रीमुख से भी यही आज्ञा की है ''नमय्यावेशितधियां कामः कामाय कल्पते। भर्जिता क्वथिता धाना भूयो बीजाय नेष्यते''॥ जिन लोगों का चित्त मुझ में शुद्ध रीति से प्रतिष्ठित है उन के काम कामना के अर्थ नहीं होते, क्योंकि भूने और कूटे धान फिर नहीं उगते।

इस सूत्र से विषयजन्य प्रेम का भी निवारण किया, इस से लोग संसार के विषयियों के इन्द्रियजन्य सुख वा और किसी इच्छा से की हुई प्रीति को हम किसी पर प्रेम करते हैं यह कह कर इस प्रेमशब्द को लज्जित न करैं, क्योंकि प्रेम तो सर्व्वदा कामनाशून्य है॥

कामना ही की निवृत्ति के अर्थ कहते हैं कि वह भक्ति निरोधस्वरूपा है, तो जब चित्त निरुद्ध होगा तो उस में कोई कामना आप ही न होगी।

भक्तिमार्गीय परमाचार्य्य श्रीश्रीबल्लभाचार्य्य महाप्रभु ने अपने ग्रन्थ निरोधलक्षण में लिखा है, 'अहंनिरुद्धो रोधेन निरोधपदवीं गतः। निरुद्धानां तु रोधाय निरोधं वर्णयामि ते॥ हरिणा ये विनिर्मुक्तास्ते मग्ना भवसागरे। ये निरुद्धास्तएवात्र मोदमायांत्यहर्निशं'॥

आप आज्ञा करते हैं–मैं रोध में निरुद्ध हूं और निरोध की पदवी को प्राप्त हो चुका हूं तथापि निरोधाधिकारियों के निरोध के अर्थ निरोध का वर्णन करता हूं। फिर आप आज्ञा करते हैं कि जिन को भगवान ने छोड़ दिया है वे संसारसागर में डूबे हुए हैं और जिन को उस ने निरुद्ध किया है, वही अहर्निश परमानंद प्राप्त करते हैं। इस वाक्य से यह दिखाया कि निरुद्ध होना स्वसाध्य नहीं है, जिन को वह (ईश्वर) चाहता है, निरुद्ध करता है, नहीं तो उसे छोड़ देता है। मनुष्य का बल केवल उस मार्ग पर प्रवृत्त होना है, परन्तु इस से निराश न होना चाहिए कि जब अंगीकार करना वा न करना उसी के अधीन है तो हम क्यौं प्रयत्न करैं। हमारे क्लेश करने पर भी वह अंगीकार करे वा न करे ऐसी शंका कदापि न करना। क्यौंकि आचार्य्य आज्ञा करते हैं कि "क्लिश्यमानान्जनान्दृष्टा कृपायुक्तो यदा भवेत्। तदा सर्व सदानन्दं हृदिस्थं निर्गतं वहिः॥ सर्वानन्दमयत्यापि कृपानन्दः सुदुर्लभः। हृद्‌गतः स्वगुणान्‌श्रुत्‌वा पूर्णः प्लावयते जनान्॥ तस्मात्सर्वं परित्यज्य निरुद्धैः सर्वदा गुणाः। सदानन्दपरैर्गेयाः सच्चिदानन्दता स्वतः।" जनों को क्लेशित देख कर के जब वह कृपायुक्त होता है तब सर्वे सदानन्द रूप बाहर और अंतः प्रकट कर देता है। सर्वानन्दमय को भी उस के कृपा का आनन्द दुर्लभ है परंतु हृदय में बैठा हुआ जब अपने गुणों को सुनता है तो अपने कृपानन्द से लोगों को भिजो देता है। इस हेतु और सब बखेड़ा छोड़ कर सदानन्द पर निरुद्ध लोगों को उस का गुण सदा गाना चाहिए। उस से सच्चिदानंद का आप से आप प्राकट्य होता है। अर्थात् नियम है कि जो सब परित्याग कर के उस का भजन करेंगे उसको वह निरुद्ध कर के परमानन्द दान ही करे गा। यही उस की प्रतिज्ञा भी है "कौन्तेय प्रतिजानीहि न मे भक्तः प्रणश्यति। तेषामहं समुद्धर्ता मृत्युसंसारसागरात्"॥। इस से उस के वाक्य पर विश्वास रख कर निरुद्ध होना चाहिए।

निरोध छः प्रकार का है अर्थात् छः प्रकार की भावना ईश्वर में करने से मनुष्य निरुद्ध होता है; यथा प्रथम भीतिभाव निरोध अर्थात् संसार के दुःखों से भयभीत होकर ईश्वर में अवलंब करना, दूसरा 'स्वामिभावनिरोध' अर्थात् ईश्वर को संसार का स्वामी मान कर दास भाव से निरुद्ध होना, तीसरा 'सर्वभावनिरोध' अर्थात् ईश्वर को 'वासुदेवःसर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः' इस वाक्य के अनुसार छोटे बड़े चेतन सब को ईश्वर मान कर नमस्कार करना और सब स्थान पर उसी को देखना वा स्वामी माता पिता मित्र सब भाव से ईश्वर ही का भजन, चौथा 'सख्यभाव निरोध' अर्थात् ईश्वर ही को सखा मान कर निरुद्ध होना, पांचवां 'वात्सल्यभावनिरोध' अर्थात् श्री नन्दयशोदादिक ब्रज के बड़े गोपियों के वा इन के सदृश और किसी के भाव के समान ईश्वर में पुत्रवत् स्नेह करना, छठा 'कान्तभावनिरुद्ध' होना। इन छः निरोधों में पूर्व पूर्व से उत्तर उत्तर अधिक है।

8. ॐ निरोधस्तु लोकवेदव्यापारसंन्यासः।

निरोध तो लोक वेद व्यापार का त्याग करना है ॥8॥

इस सूत्र में निरुद्ध होने का स्वरूप कहते हैं। लोक और वेद के व्यापार को छोड़ देना ही निरोध है।

9. ॐ तस्मै अनन्यता तद्विरोधिषूदासीनता च।

और उस में अनन्यता और उसके विरोधियों पर उदासीनता भी निरोध है अर्थात् बिना अनन्यता हुए निरोध की सिद्धि नहीं होती ॥॥9॥

10. ॐ अन्याश्रयाणां त्यागोऽनन्यता।

अन्य आश्रयों का त्याग करना अनन्यता है।

लोक में यह प्रत्यक्ष है कि स्वामी को सेवक, मित्र को मित्र, पुरुष को स्त्री बड़ी प्रिय होगी। जो अनन्य हो 'अनन्याश्चिन्तयन्तो मामित्यादि श्री महावाक्य भी है, व्याससूत्र में भी 'अनन्याधिपतिः' ईश्वर का गुण लिखा है।

11. ॐ लोकवेदेषु तदनुकूलाचरणं तद्विरोधिषूदासीनता।

लोक और वेद में केवल उन्हीं (प्रेमपात्र) के अनुकूल आचरण करने से उस अनन्यता के विरोधी कर्म में उदासीनता आप से आप होती है॥11॥

लोक और वेद में श्रीमद्भगवदनुकूलाचरण करना यही 'तद्विरोधिषूदासीनता' है अर्थात् जब हम ने उनके अनुकूल हो सब आचरण किए तो तद्विरोधियों में उदासीनता आप ही आ गई क्योंकि तदीय होने ही से जिन के सब पुरुषार्थ पूर्ण हो गए हैं और सब मङ्गलामङ्गल नष्ट हो गए हैं उन को कार्यातर करने की आवश्यकता ही नहीं तो उन के वैदिक वा लौकिक कार्य आपही निवृत्त हो गए॥11॥

12. ॐ भवतु निश्चयदाढ्यार्दूर्ध्वं शास्त्ररक्षणं।

निश्चय के दृढ़ होने के पहिले शास्त्र रक्षण होय॥12॥

क्योंकि श्रीमुख से आप ने आज्ञा की है "त्रैगुण्य विषयावेदानिस्त्रैगुण्यो भवार्जुन। निर्द्वन्द्वा नित्यसत्वस्था निर्योगक्षेम आत्मवान। यावानर्थ उदपाने सर्वतस्सम्प्लुतादके। तावान सर्वेषुवेदेषु ब्राह्मणस्य विजानतः। कर्म्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन। मा कर्मफल हेतुर्भूमा ते संगोऽस्त्वकर्मणि॥" हे अर्जुन वेद त्रिगुण विषय हैं तू तो तीनों गुणों की प्रवृत्ति से अलग हो कर निर्द्वन्द्व और अपने स्वरूप में स्थिति हो और अपने योगक्षेम की चिन्ता मत कर। परन्तु जब तक तेरे हृदय में अर्थों की तरंगें उठती हैं तब तक तेरा सब वेदों में ब्राह्मण के कहे अनुसार कर्म में अधिकार है वहां भी

कर्म के फल में तेरा अधिकार नहीं, इस से न तो तू फलों की इच्छा कर और न अकर्मी हो। तो जब तक कामना की तरंगें चित्त में उठती हैं और जब तक अनन्या भक्ति दृढ़ नहीं हुई हैं तब तक वेद मानैं, फिर छोड़ दे।

13. ॐ अन्यथा पातित्याशंकया।

अन्यथा पतित होने की शंका है।13।

अर्थात् जो सिद्ध होने के पहिले कर्मों को छोड़ दे और न यह सिद्ध हो न वह तो व्यर्थ पतित हो जाता है, परंतु भगवत्कर्म करता हुआ अन्य कर्मों से च्युत जो सिद्ध न होगा तो भी उस जीव का नाश नहीं है और जीव कल्याण है। जड़भरत जी का उदाहरण इस में प्रमाण है, क्यौंकि उन्होंने अपने मुख से कहा है, ''अहं पुरा भरतो नाम राजा विमुक्तदृष्टश्रुतसंगबन्धः। आराधनं भगवत ईहमानो मृगोभवं मृगसंगाद्धतार्थः॥ सा मां स्मृतिर्मृगदेहेपि वीर कृष्णार्चनप्रभवा नो जहाति। अतो ह्यहं जनसंगादसंगो विशंकमानो विवृतश्चरामि''। श्री मुख से भी आप ने आज्ञा की है ''पार्थ नैवेह नामुत्र विनाशस्तस्य विद्यते। नहि कल्याणकृत्कश्चिद्दुर्गतिं तात गच्छति'' इत्यादि।

14. ॐ लोकोपि तावदेव किंतु भोजनादिव्यापार-स्तवाशरीरधारणावधि।

लोक भी तभी तक हैं किंतु भोजनादि व्यापार तो जब तक शरीर है तब तक है।14।

इस में कितने लोक ऐसी शंका करते हैं वरञ्च हंसते हैं कि जब खाना पीना आदि व्यवहार छूटता ही नहीं तो कर्म्म छोड़ देना यह अयुक्त हैं परंतु इसी शंका के निवारणार्थ यह सूत्र है, भोजनादि व्यापार शरीररक्षार्थ है और जब तक शरीर है तब तक अवश्य कर्त्तव्य है। इन को जो छोड़ना हो तो विष खाके एक साथ ही न मर जाना। हां तदीयों को उन भोजनादि व्यापार की चिन्ता करनी अवश्य ही नहीं चाहिए और जो कर्म्मों का कहो तो कर्म्मों का त्याग अनन्यता की पुष्टि के हेतु है क्यौंकि बिना निःसाधन हुए मनुष्य अनन्य नहीं होता। इस से यह सिद्ध हुआ कि जब तक निश्चय न हो तब तक लोक और वेद दोनों मानना परन्तु जब निश्चय दृढ़ हो जाय और कामनाओं की निवृत्ति हो जाय तब लोक और वेद दोनों छोड़ कर केवल ''कृष्ण एव गतिर्मम'' यह उच्चारण करना। श्री विष्णुस्वामी-मत के बीजधारक श्री विल्वमंगलाचार्य्य ने भी यही कहा है।

''संध्यावन्दन भद्रमस्तु भवते भोस्नान तुभ्यं नमः
भोदेवाः पितरश्च तर्पणविधो नाहं क्षमः क्षम्यतां।
यत्र क्वापि निपद्य यादवकुलोत्तंसस्य कंसद्विषः
स्मारंस्मारमघं हरामि तदलं मन्ये किमन्येन मे''॥

दूसरा अनुवाक् समाप्त हुआ।

15. ॐ तल्लक्षणानि वाच्यन्ते नानामतभेदात्।

उस (भक्ति) के लक्षण विविध मतभेद से वर्णन किए जाते हैं॥5॥

इस सूत्र में एक शंका है कि सूत्र का लक्षण 'स्वल्पाक्षरमसंदिग्धम्' ऐसा है। सूत्रों में कोई बात व्यर्थ नहीं होनी चाहिए। यहां लक्षण तो आप ही कहैंगे तो इस सूत्र की क्या आवश्यकता थी। ऐसा नहीं, यह सूत्र इस अर्थ का प्रतिपादक नहीं है कि हम आगे उस के लक्षण कहैंगे, वरन् ऐसी प्रतिज्ञा है कि संसार में इस प्रेम को लोग अनेक मत से मानते हैं परन्तु वास्तव में वह प्रेम नहीं है। प्रेम वही है जो शास्त्र में कहा जायगा, जैसा कि स्त्री पुरुष का कामनार्थ प्रेम वा अन्य किसी प्रकार की त्रिगुणात्मिका देवभक्ति प्रेम नहीं है, यद्यपि संसार में वह प्रेम कही जाती है और उन के अनेक प्रकार लोग लक्षण कहते हैं। यही बात अग्रिम सूत्रों में सिद्ध करैंगे।

16. ॐ पूजादिष्वनुराग इति पाराशर्य्यः।

भगवत्पूजादिक में अनुराग रूप भक्ति यह श्री व्यासदेव का मत है।

क्यौंकि अनेक पुराणों में तथा जैमिनिसूत्र के भाष्य में बहुत कर्म्म विधान की प्रशंसा की है और पूजनादि केवल प्रेम के साधनस्वरूप है फलस्वरूप नहीं। श्रीमहाप्रभु जी ने भी सेवानिर्णय में आज्ञा की है ''कृष्णसेवा सदा कार्या मानसी सा परा मता।'' इत्यादि। जीवों के आसुरावेश निवृत्यर्थ और मानसी-सेवा-सिद्ध्यर्थ बाह्य सेवा (पूजादि) हैं, परंतु जब परम प्रेमावेश होता है तब मानसी सेवा भी छूट जाती है।

17. ॐ कथादिष्विति गर्गः।

कथादि में अनुराग गर्गाचार्य्य का मत है।

अर्थात् भगवत्कथाश्रवण को मुख्य मान कर कथा में अनुराग करना यह नारद जी का मत नहीं है, प्रेम की उत्कंठा में जो भगवत्कथा से अनुराग हो वह ठीक है।

18. ॐ आत्मरत्यविरोधेनेति शाण्डिल्यः।

आत्मरति के अविरोध से अनुराग शांडिल्य का मत है।

शांडिल्य भक्तिसूत्र के तृतीयाह्निक के तृतीय सूत्र में मत दिखाते हैं 'तामैश्वर्यपदां काश्यपः परत्वात्', 'आत्मैकपदां वादरायणः', 'उभयपदां शांडिल्यः शब्दोपपत्तिभ्यां'। कश्यप का द्वैत और वादरायण का अद्वैत दिखा कर आप द्वैताद्वैत अवलम्बन करते हैं परन्तु द्वैत वा अद्वैत वा द्वैताद्वैत मत का अवलम्बन कर के भक्ति को अपने पूर्वमत के आग्रह से अपनी दीक्षा वा सम्प्रदाय के अनुसार बलात्कार से भक्ति चलाना नारद का मत नहीं। जब मतमतान्तर के बाद में बुद्धि अभिनिविष्ट हो जायगी तो तीव्र प्रेमलक्षणाभक्ति में अन्यमनस्क होने से भेद पड़ जायगा। इस से जिस भाव से निरोध

हुआ हो उसी भाव से प्रेम में प्रवृत्त होना ही नारद का मत है। यदि हमारा यह भाव है कि ईश्वर एक है, आनन्दमय है, हम उस के दासानुदास हैं, हम से उस से कोई सम्बन्ध नहीं तो उसी भाव से भक्ति करनी और जो सर्वभाव हो तो सर्वभाव से भक्ति करनी, द्वैताद्वैत भाव पर चित्त आरूढ़ हो तो उसी भाव से उपासना करनी। अर्थात् जीव ईश्वर के भेदाभेद के झगड़े मे बुद्धि फंसा कर प्रेम में बाधा नहीं डालनी, वही बात अगले सूत्र से सिद्ध करते हैं।

19. ॐ नारदस्तु तदर्पिताखिलाचारता तद्विस्मरणे परमव्याकुलतेति॥

नारद जी तो सर्व कर्म श्री हरि में अर्पण करना और श्री हरि की विस्मृति होने में परम व्याकुल होना यही भक्ति का लक्षण कहते हैं।

कर्म दो प्रकार के हैं, लौकिक और पारलौकिक। प्रेमियों के दोनों कर्म यहां लिखते हैं। पारलौकिक में भक्तों को एतावन्मात्र कर्तव्य है कि अपने सब आचरण को भगवान में अर्पण करना और लौकिक में इतना कर्तव्य है कि जब भगवद्वियोग-जनित परमानन्द का हृदय से तनिक भी विस्मरण हो तब परमव्याकुलता होनी। तो अलौकिक कर्म तो तत्समर्पण से निवृत्त हुए; लौकिक में जब व्याकुलता का उदय होगा तो आप ही सब काम छूट जायंगे। इस से लौकिक और पारलौकिक दोनों कर्मों की प्रवृत्ति से अलग हो कर अनवच्छिन्न तैलधारावत् सर्वक्षण भगद्वृत्ति में मग्न रहना, सर्वदा लीला का अनुभव करना, सर्वदा वियोग का अनुभव करना, किसी काम में लगे हों परन्तु चित्त उधर ही रखना, जो वह ध्यान तनिक भी भूले तो एक संग व्याकुल हो जाना वही भक्ति का लक्षण है।

20. ॐ अस्त्येवमेवं।

ठीक ऐसा ही है।

पूर्वकथित भक्तिलक्षण को इस सूत्र से अन्यस्थान में स्वकथित वा परकथित अनेक विधियों के निरासपूर्वक मुक्त कंठ से प्रतिज्ञा स्वरूप स्थापन करते हैं। लोक में भी चालू है कि जो बात दो बेर कहते हैं उस पर अपनी पूर्ण दृढ़ता दिखाते हैं इस भाव से यहां भी यह सूत्र कहा है अर्थात् अब इस में किसी शंका का अवकाश नहीं।

21 ॐ यथा ब्रजगोपिकाना।

जैसा ब्रज की गोपियों का (प्रेम है)।

लक्षण कह के उदाहरण में सब प्रेमियों की शिरोमणि-स्वरूप श्री गोपीजन का नाम लेते हैं अर्थात् प्रेम का उदाहरण जैसा कि गोपीजन ने दिखाया वैसा और कौन दिखावेगा? हई है। लोक वेद की कठिन लौहशृंखला को कच्चे सूत सी कौन तोड़ सकता है? जिन के भगवान भी सर्वदा ऋणी हैं उन की महिमा कौन कह सकता

है? श्री मुख से कहा है 'न पारयेऽहं निरवद्यसंयुजां स्वसाधुकृत्यं विवुधायुषापि वः। या मां भजन् दुर्जरगेहशृङ्खलां संवृश्च्य तद्वः प्रतियात्तु साधुना''। भगवान श्री गोपीजन से गले में पीताम्बर डाल कर और हाथ जोड़ कर निवेदन करते हैं हे श्रीव्रजदेवियो! मैं जो देवताओं की आयुष्य धारण करूं और उस अनेक कल्प की आयुष्य से आप लोगों में से एक का भी प्रत्युपकार किया चाहूं तो न कर सकूंगा। क्यौंकि महादुर्जर घर की शृंखला आप लोगों के सिवाय और कौन तोड़ सकता है? अतएव मैं आप लोगों का सदा ऋणी हूं। तो भगवान का यह श्रीमुखवाक्य उन श्रीगोपीजन के प्रति जिन ने भगवान के श्रीमुख से कहे हुए रासप्रसंग के दश श्लोकात्मक मर्यादास्थापन के वाक्यों को तृण सा भी नहीं माना, कुछ आश्चर्य नहीं है। एक तो साधारण शास्त्र के वाक्य माननीय हैं, दूसरे उसमें भी भगद्वाक्य, तीसरे जब भगवान प्रत्यक्ष अपने मुखारविन्द से आज्ञा करैं तो ऐसा कौन होगा जो न मानैगा। पर ऐसे श्री गोपीजन ही हैं कि प्रेममार्ग के विरुद्ध भगवद्वाक्य को भी न माना।

भगवान ने जब परमभागवत उद्धिवजी को भक्ति का उपदेश किया है वहां कहा है ''रामेण सार्धं मथुरां प्रणी श्वाफल्किना मय्यनुरक्तचित्ताः। विगाढ़भावेन नमे वियोगतीव्राधयोन्यं ददृशुः सुखाय ॥। तास्ताः क्षपाः प्रेष्ठतमेन नीता मयै वृन्दावनगोचरेण। क्षणर्द्धवृत्ताः पुनरंग तासां हीना मया कल्पसमा वभूवुः। ता नाविदन्मय्यनुषंग-बद्धधियः-स्वमात्मानमदस्तयेदं यथा समाधौ मुनयौब्धितोये न च प्रविष्टा इव नामरूपे॥ ब्रह्मा ने भी कहा है ''पष्ठिवर्षसहस्राणि तपस्तप्तं मया पुरा। नन्दगोपव्रजस्त्रीणां पादरेणूपलब्धये॥ अहोभाग्यमहोभाग्यं नन्दगोप ब्रजौकसां। यन्मित्रं परमानंदं पूर्णं ब्रह्म सनातनं''। जब उद्धव जी को भगवान् व्रज विदा करने लगे हैं तब वहां भी श्री गोपीजन का स्वरूप अपने श्रीमुख से उद्धव जी को समझाया है। ''ता मन्मनस्का मत्प्राणा।ः मदर्थे त्यक्तदैहिकाः। ये त्यक्त लोकधर्माश्च मदर्थे तान्विभर्म्यहं॥ मयि ताः प्रेयसां प्रेष्ठे दूरस्थे गोकुलस्त्रियः। स्मरन्त्यो न विमुह्यन्ति विरहौत्कंठ्यविह्वलाः॥ प्रधारयंति कृच्छ्रेण प्रायः प्राणान्कथंचन। प्रत्यागमनसंदेशैर्वल्लभो मे मदात्मिकाः''। हे उद्धव उन गोपीजन ने मुझ में मन लगाया है,मैं ही उनका प्राण हूं, मेरे हेतु उनने सब देह के व्ययहार छोड़ दिये हैं और जो लोग मेरे अर्थ लोक और धर्म को छोड़ देते हैं उन का मैं धारण करता हूं। वे गोपियां उन के परम प्यारों से प्यारे मेरे दूर रहने से जब मेरा स्मरण करती हैं तो विरह की उत्कंठा से व्याकुल हो कर अपने शरीर की सुध भी भूल जाती हैं। बड़ी कठिनता से और बड़े दुःख से मेरे बिना किसी रीति प्राण धारण करती हैं मेरे आने के संदेसे सुन कर जीती हैं, उन गोपियों की आत्मा मैं हूं और वे मेरी हैं, इत्यादि। जिन श्री गोपीजन से परमभागवत उद्धव जी ने भी कहा—''अहोयूयं स्म पूर्णार्था भवत्यो लोक पूजिताः। वासुदेवे भगवति यासामत्यर्पितं मनः॥ दानव्रततपोयोगजपस्वाध्यायसंयमैः। श्रेयोभिर्विविधैश्चान्यैः कृष्णे भक्तिहि साध्यते॥ भगवत्युत्तमश्लोके भवतीभिरनुत्तमा। भक्तिः प्रवर्तिता दिष्ट्या मुनीनामपि दुर्लभा॥ दिष्ट्या

पुत्रानूपतीन्देहान् स्वजनान् भवनानि च। हित्वा वृणीयुर्यूयं यत्कृष्णाख्यं परमंपदम्॥ सर्वात्मभावोऽधिकृतो भवतीनाम धोक्षजे। विरहेण महाभागा महान्मेनुग्रहः कृतः॥' इत्यादि। और जब श्री उद्धव जी ने अपने ज्ञान कथनांतर श्रीगोपीजन का स्वरूप जाना है तब यही मांगा है कि हम श्रीवृन्दावन में गुल्मलता हों, यथा "नार्यश्रियोंगजनितांतरतेः प्रसादः स्वर्योपितां नलिनगन्धरुचां कुतोन्यः। रासो त्सवेऽस्यभुजदंडगृहीतकण्ठलब्धाशिषां य उद्गाद्व्रजवल्लवीनाम्॥ आसामहो चरणरेणुजुपामहं स्यां वृंदावने किमपि गुल्मलतोषधीनां। या दुस्त्यजं स्वजनमायपथं च हित्वा भजुर्मुकुन्दपदवीं श्रुतिभिर्विमृग्यां॥ या वै श्रियार्चितमजादिभिराप्तकामैर्योगेश्वरैरपि यदात्मनिरासगोष्ठयां॥ कृष्णस्य तद्भगवतश्चरणारविदं न्यस्तं स्तने विजहुः परिरभ्य तापं॥" श्रीमहाप्रभु जी ने संन्यासनिर्णय ग्रंथ में आज्ञा की है कि श्री गोपीजन प्रेममार्ग की गुरु हैं तथा च निरोधलक्षण ग्रन्थ में आप ने श्रीगोपीजन तथा व्रज के गोपों का विरहानुभय प्राप्त होने की उत्कंठा दिखायी है। "यच्चं दुःखं यशोदाया नन्दादीनां च गोकुले। गोपिकानां तु यद्दुखं तद्दुःखं स्यान्मम क्वचित्॥ गोकुले गोपिकानां च सर्वेषां व्रजवासिनाम। यत्सुखं समभूत्तन्मे भगवान् किं विधास्यति॥ उद्धवागमने जात उत्सवः सुमहान्यथा। वृन्दावने गोकुले वा तथा मे मनसि क्वचित्॥ इत्यादि। और "गोपी प्रेम की ध्वजा। जिन घनस्याम किए अपने बस उर धरि स्यामभुजा" "गोपीपदपंकजपराग कीजै महाराज रज कीजै आपुनेई गोकुला नगर को।" "ये हरिरसगोपी गोपी सब तियतें न्यारी। कमलनयन गोविन्दचंद की प्राणपियारी॥ निर्मत्सर जे सन्त तिनकी चूड़ामनि गोपी जे ऐसे मर्याद मेटि मोहनगुन गावै। क्यों नहिं परमानन्द प्रेमभक्ति सुखपावै॥" "अहो विधिना तोपै अचरा पसारि मांगौ जनम जनम दीजो याही ब्रज बसिबो। अहीर की जाति समीप नंदघर घरी घरी घनश्याम हेरि हेरि हंसिबो॥" "बलि गुरु तज्यौ कंत ब्रजवनितन भइ जगमंगलकारी॥" इत्यादि श्रीसूरदासादिक परम अनुरागियों ने भाषा में भी श्रीगोपीजन का पवित्र यश वर्णन किया है। परम अंतरंग श्री नागरीदास जी भी गाते हैं॥ जयति ललितादिदेवीय ब्रज श्रुति ऋचा कृष्णापियकेलिआधीरअंगी। युगुलरसमत्त आनन्दमय रूपनिधि सकलसुखसमयकी छांहसंगी॥ गौरमुखहिमकिरण की जु किरणावली श्रवत मधुगान हिय पियतरंगी। नागरीसकलसकेतआकारिणी गनत गुनगननि मति होति पगी॥ भवतु! इन श्रीगोपी जन के अगणनीय गुण कहां तक लिखै। रसिक लोग स्वतः अनुभव करैंगे।

22. ॐ न तंत्रापि माहात्म्यज्ञानविस्मृत्यपवादः।

यंहां भी माहात्म्यज्ञानविस्मृति का अपवाद नहीं।

जहां प्रेम है वहां महात्म्यज्ञान नहीं, जहां माहात्म्यज्ञान है वहां प्रेम नहीं; परंतु श्री गोपीजन में दोनों बातें थीं, क्यौंकि उन को भागवत स्वरूप का ज्ञान नहीं था, यह शंका नहीं हो सकती। "अरत्वेवमेतदुपदेशपदे त्वयीशे प्रेष्ठो भवांस्तनुभृतां किल बंधुरात्मा"॥ 'व्यक्तंभवान् व्रजभयार्तिहरोभिजातो" 'न खलु गोपिकानंदनो भवानखिलदेहिनामंतरात्मदृक्॥ इत्यादि श्री गोपीजन के वाक्यों से उन का माहात्म्यज्ञान सिद्ध है।

23. ॐ तद्विहीनं जाराणामिव।

उस के बिना जारों के समान है।

अर्थात् जहां माहात्म्यज्ञान नहीं है वहां की प्रीति जारों की सी होती है। यद्यपि भगवान में ज्ञान वा अज्ञान से की हुई प्रीति निष्फल नहीं जाती तथापि यह लीला जहां पूर्ण प्रादुर्भाव है वहीं है परंतु माहात्म्य ज्ञानपूर्वक भक्ति में यह विशेषता है कि एक प्रस्तर में भी ईश्वर बुद्ध्यया सत्य प्रेम करने से फलदायिनी होती है।

24. ॐ नास्त्येव तस्मिस्तत्वसुखसुखित्वं।

उस से प्यारे के सुख से सुखी होना नहीं ही है।

क्यौंकि जारों की प्रीति अपनी कामना के अर्थ है तो उस में उत्सुख सुखित्व कहां से आवैगा।

तीसरा अनुवाक् समाप्त हुआ।

25. ॐ सा तु कर्मज्ञानयोगेभ्योप्यधिकतरा।

वह (भक्ति) तो कर्म्म, ज्ञान और योग से भी अधिक है।

"तपस्विभ्योऽधिका योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः॥ कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन ॥ योगिनामपि सर्वेषां मद्गतेनांतरात्मना। श्रद्धावान् भजते यो मां स मे युक्ततो मतः" ॥ इन वाक्यों से भगवान श्रीमुख से ज्ञान और कर्म से योग को अधिक कह कर अपने भक्त को उस से भी अधिक कहते हैं और भक्ति ऐसी है कि भगवान् मुक्ति देते हैं। परंतु भक्ति नहीं। तथाहि "मुक्तिं ददाति कर्हिचित्स्म न भक्तियोगं।" तथा "न साधयति मां योगी न सांख्यं धर्म उद्धव। न स्वाध्यायस्तपस्त्यागो यथा भक्तिर्ममोर्जिता॥ भक्त्याहमेकया ग्राह्यःश्रद्धयात्माप्रियः सताम्। भक्तिःपुनाति मन्निष्ठा श्वपाकोनपि संभवात्॥" और भक्ति में यह विशेष है कि कर्म्म, ज्ञान और योग इन में अधिकारी का बड़ा विचार रहता है परन्तु इस में किसी अधिकार का काम नहीं। श्रीमुखवाक्य प्रमाण है "केवलेन हि भावेन गोप्यो गावः खगा मृगाः। येऽन्ये मूढ़धियां नागाः सिद्धा मामीयुरंजसा॥"

26. ॐ फलरूपत्वात्।

क्योंकि फलरूपा है।

ज्ञानाभिमानी लोग कहते हैं कि भक्ति का फल ज्ञान है, ऐसा नहीं। क्यौंकि श्री भगवद्गीता में कहा है "अहंकार बलं दर्प कामं क्रोधं परिग्रहं। विमुच्य निर्ममः

शान्तो ब्रह्मभूयाय कल्पते॥ ब्रह्मभूतः प्रसन्नान्मा न शोचयति न कांक्षति। समः सर्वेषु भूतेषु मद्भक्तिं लभते परां"॥ हई है, संसार के सब प्रकार के साधन का फल केवल भगवत्कृपा है और वह बिना भक्ति सिद्ध न होगी तो दोनों प्रकार से भक्ति के बिना अन्य साधन व्यर्थ ही हुए।

27. ॐ ईश्वरस्याप्यभिमानद्द्वेषित्वादैन्यप्रियत्वाच्चं॥

ईश्वर को भी अभिमान से द्वेषित है और दैन्य से प्रियत्व है।

अर्थात् कर्म्म ज्ञान और योग में उन के साधकों को अपने अपने साधन का अभिमान होता है तो उन से भगवान प्रसन्न नहीं रहता। हई है, वह तो निराश्रयों का आश्रय, निःसाधनों का साधन, दीनों का बंधु, पतियों का प्यारा और सर्व प्रकार से हीनों का सर्वस्व है। जिन लोगों को अपने साधनों का बल है उन को क्यों वह पूछेगा। सच है, जो स्त्री अपने सौंदर्य्य के और जारों के बल से धन कमा लेती है उसे पति क्यों पूछेगा, जो बालक आप धनोपार्जन में समर्थ है उसे माता पिता क्यों भोजन देंगे, जो सेवक अपने गुण से अपना योग क्षेम चला लेता है उस के स्वामी को क्या शोच है, विशेष कर ईश्वर से स्वामी को, जिस को सर्वदा दीन प्यारा है। उस के सामने तो जब अनन्य होकर सब साधन छोड़ कर उस से कहोगे, "सर्वसाधनहीनस्य पराधीनस्य सर्वथा। पापापीनस्य दीनस्य कृष्णएव गतिर्मम"॥ हे नाथ! मैं सब साधन से हीन हूं और संसार के पचड़े में मग्न हूं पापों से लदा हुआ हूं और परम दीन हूं अतएव हे नाथ! हमारी तो तुम ही गति हो।" क्योंकि और किसी के सामने मुंह दिखाने के योग्य नहीं रहा, वेद को कैसे मुंह दिखाऊं, उन के वाक्यानुसार सर्वकर्मानर्ह और पतित हो रहा हूं, लोक को भी नहीं मुंह दिखा सकता क्योंकि लोक में सब से मुख्य रक्षणीय लज्जा का त्याग कर चुका हूं और लोक के साधनों से विहीन हूं हमारी तो और कोई शरण नहीं, महा निरवलम्ब हूं, कोई हाथ पकड़ने वाला नहीं, अथाह समुद्र में डूबता हूं अब इस समय तुम्हारे सिवाय और कोई गति नहीं, मेरी तो तुम ही गति हो इत्यादि। तभी वह तुम्हारी ओर ध्यान करैगा, ऐसा श्रीमुख से भी कहा है "सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज। अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि माशुचः"॥ सब धर्मों को छोड़ कर एक मेरी शरण आ, मैं तुझे सब पातकों से दूर करूंगा, शोच मत कर और यह वाक्य भी कब कहा है जब गीता का उपदेश कर चुके हैं तब; इस को ठीक देने की भांति कहा है।

और आप अपने मुख से इस वाक्य का आग्रह दिखाते हैं "सर्वगुह्यतमं भूयः शृणु मे परमं वचः। इष्ठोसि मे दृढ़मतिस्ततो वक्ष्यामि ते हितम्"। और भी उद्धव जी के प्रति श्री भगवद्वाक्य हैं "अकिंचनस्य दन्तस्य शांतस्य समचेतसः। मया संतुष्टमनसः सर्वाःसुखमया दिशः॥ अज्ञायैव गुणान् दोषान् मयादिष्टानपि स्वकान्। धर्मान् संत्यजय यः सर्वान् मां भजेत स सत्तमः॥ तस्मात् त्वमुद्धवोत्सृज्य चोदना

प्रतिचोदनां। प्रवृत्तं च निवृत्तं च श्रोतव्यं श्रुतमेव च॥ मामेकमेव शरणामात्मानं सर्वदेहिनां। याहि सर्वात्मभावेन मया स्याःह्यकुतोभयः (?)। न साधयति मां योगो न सांख्यं धर्म उद्धव। न स्वाध्यायप्यतपस्त्यागो यथा भक्तिर्ममोर्जिता॥ भक्त्याहमेकया ग्राह्यः श्रद्धयात्मा प्रियः सताम्। भक्तिः पुनाति मन्निष्ठा श्वपाकमपि संभवात्॥ धर्मः सत्यदयोपेतो विद्या वा तपसान्विता। मद्भावत्या येतमात्मानः (?) न सम्यक्प्रपुनातिहि॥ कथं विना रोमहर्षं द्रवता चेतसा बिना। विनानन्दाश्रुकलया शुध्येद्भक्त्या विनाशयः॥ वाग्गद्गदा द्रवते यस्य चित्तं रुदत्यभीक्ष्णं हसति क्वचिद्धा॥ विलज्ज उद्गायति नृत्यते च मद्भक्तियुक्तो भुवनं पुनाति''।

तथा—''नाहं वेदैर्न तपसा न दानेन न चेज्यया। शक्य एवंविधो द्रष्टुं दृष्टवानसि मां यथा॥ भक्त्याहमेकया ग्राह्य अहमेवंविधोर्जुन। ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं च परंतप।'' इत्यादि॥ इन वाक्यों को छोड़ कर भक्तों के दोनों लोक साधन के लिए उसकी दृढ़ प्रतिज्ञा है ''कौंतेय प्रतिजानीहि न मे भक्तः प्रणश्यति'', ''नरकादुद्धराम्यहं'', ''तान्षिभर्म्यहं'', ''सोयं मे व्रत आहितः'' ''योगक्षेमं वहाम्यहं'', ''तेषामहं समुद्धर्ता मृत्युसंसारसागरात्'' इत्यादि।

28. ॐ तस्या ज्ञानमेव साधनमित्येके।

उस (भक्ति) का साधन ज्ञान ही है यह किसी का मत है।

ऐसा नहीं हो सकता। गृध्र, अजामिल, गजेंद्र इत्यादि को किस ने ज्ञान दिया है ''केवलेनहिभावेन गोप्यो गावः खगा मृगाः। येऽन्ये मूढ़धियो नागाः सिद्धा मामीयुरञ्जसा''॥ भक्ति का साधन तो अपने चित्त का अंकुर और उन की कृपा ही है, ज्ञान बेचारा क्या साधैगा?

29. ॐ अन्योन्याश्रयत्वमित्यने।

दूसरों का मत है कि भक्ति और ज्ञान से परस्पर आश्रयत्व है।

यह भी नहीं हो सकता, जब मनुष्य किसी की भक्ति वा प्रीति कर लेगा तब उस के ज्ञान में क्या प्रवृत्त होगा? पानी पीके जात नहीं पूछी जाती।

30. ॐ स्वयंफलरूपतेति ब्रह्मकुमाराः।

सनत्कुमारादिक और नारद जी का मत है कि भक्ति स्वयं फलरूपा है। हुई है, पहले भी कह आए हैं।

31. ॐ राजगृहभोजनादिषु दृष्टत्वात्।

राजा का घर और भोजनादि के केवल देखने में ऐसा ही देखा गया है। पूर्वकथित फलरूपता का उदाहरण दिखाते हैं।

32. ॐ न तेन राजपरितोषो क्षुधाशान्तिर्वा।

न उस से राजा का परितोष होगा, न क्षुधा मिटैगी।

ज्ञान के फलरूप होने में दोष दिखाते हैं कि एक मनुष्य को किसी राजा का स्वरूपज्ञान बहुत अच्छा है पर इस से क्या? क्या वह राजा बिना अपनी भक्ति किए ही उसे कुछ देगा वा कुछ भोजन रक्खा है? हम को उस के स्वरूप का पूर्ण ज्ञान है कि इस में पूरी है और वह आटा, घी, जल और अग्नि के संयोग से बनी है पर क्या इस ज्ञान ही से भूख मिट जायगी? कदापि नहीं। वैसा ही भगवान को केवल जान कर कभी सिद्ध नहीं हो सकता क्यौंकि वह अपने स्वरूपों पर किस नाते दत्तचित्त होगा? अतएव अगले सूत्र फिर से आग्रह दिखाते हैं।

33. ॐ तस्मात्सैव ग्राह्या मुमुक्षुभिः।

इस कारण मोक्ष की इच्छा करने वाले उसी (भक्ति) का ग्रहण करैं।

जो अपना कल्याण चाहे तो इस सूत्रको कान खोलकर सुनैं और विश्वास करैं।

चौथा अनुवाक समाप्त हुआ।

34. ॐ तस्यास्साधनानि गायनृत्याचार्याः।

उस (भक्ति) के साधन आचार्य्य कहते हैं।

पूर्वोक्त सूत्रों में भक्ति ही मुख्य है ऐसा कह अब उस के साधन दिखाते हैं।

35. ॐ तत्तु विषयत्यागात्सङ्गत्यागाच्च।

वह (भक्तिसाधन) तो विषयत्याग और संगत्याग से होता है।

जो कहो कि हम विषय और संग में लगे हुए भी सिद्ध हो जायंगे तो यह नहीं हो सकता, क्यौंकि श्री महाप्रभु जी ने अपने ग्रंथ बालबोध में "जीवाः स्वभावतो दुष्टाः" इस वाक्य से जीव को स्वभावतः दुष्ट कहा है, तो जीव को आसुरावेश होने में कुछ विलंब नहीं लगता। श्रीहरिराय जी ने अपने ग्रंथ कामदोषनिरूपण में इस विषय की कैसी निंदा की है, आप लिखते हैं "दोपेषु प्रथमः कामो विविच्य विनिरूप्यते यस्मिन्नुत्पद्यते तस्य नाशकः सर्वथा मतः॥ विषयावेशहेतुत्वाद्विक्षेपोत्पत्तिकारणं। रजोगुणसमुत्पन्नो रजः प्रक्षेपको मुखे॥ ब्रह्मावेशविरोधी च सद्बुद्धेर्बाधको मतः। सत्कर्मनाशक सर्वप्राकृतासक्तिसाधकः॥ चित्ताशुद्धि निदानत्वाच्चिदुत्पत्ते च बाधकः। भक्तिमार्गमहाद्वेष्टा वैराग्याभावसाधनात् सर्वत्रापरितोषश्चानेन लोभसमुद्भवात्। यथाकथंचित्सामुच्चयेंद्रिय वैमुख्यकारकः॥ कामलोभै हरिप्राप्तिप्रतिबंधकपर्वतौ। तावुल्लंघ्य न शक्नोति गन्तुं कृष्णांतिकं

जनः॥ संसारमोहहेतुत्वान्मनोदूषणसाधनम् । अतः सेवाविरोधी च यतः सा मानसी मता॥ निरोधस्य महाञ्छत्रुरन्यत्स्फूर्तिकरो यतः। गुणगानसपत्नोपि न रोचंते गुणा यतः। वैराग्यवाधकाः सर्वे कामिनस्ते कथं प्रियाः । अतएव हि दृश्यन्ते गुणश्रवणवैरिणः॥ क्रोधः स्वकार्यकरणाल्लोभः प्राप्त्यापि शाम्यति । घृतहोमे वह्निरिव कामो भोगेन वर्द्धते॥ कामेन नाशितमतिः प्रतिषिद्धे प्रवर्तते अगम्यागमने चौर्य्ये तथैवाभक्ष्यभक्षणे॥ यतउत्पद्यते क्रोधो महद्दोह समुद्भवः । लोभोपि जायते तस्मात्सचार्थविषये भवेत्॥ सोर्थः पञ्चदशानर्थमूलं तत्र प्रवर्तते । कामैनैवहि कार्पण्यं कामिनीषु सतां मतं। प्रार्थयन्ति यतस्तुच्छां प्रवेश्य वदने कर'' इत्यादि कामदोष पर आप ने एक ग्रंथ ही बनाया है। तो काम मुख्य दोष है इस में कोई संदेह नहीं, वरञ्च श्री गीता जी में काम ही के छुड़ाने के आग्रह से सुखपूर्वक भोजनार्थ का भी निषेध किया है। श्रीमुखवाक्य 'इन्द्रियाण्यनुषुष्यन्ति निराहारस्य देहिनः । रसवर्जं रसोप्यस्य परं दृष्ट्वानिवर्तते' । इस से भक्ति के सब साधनों में मुख्य विषयों का त्याग है। संगत्याग के दोष 43/44/45 सूत्रों में दिखावेंगे।

36. ॐ अव्यावृतभजनात् ।

सतत भजन से ।

निरंतर शब्द यहां इस हेतु दिया है कि क्षण क्षण में जीव को आसुरावेश होता है और रजोगुण सतोगुण की तरंगें उठा करती हैं तो उस की निवृत्ति के हेतु निरंतर भजन करै। जिस क्षण में नामोच्चारण का व्यवधान होगा उसी क्षण में आसुरावेश होगा अतएव भगवान श्री श्रीवल्लभाचार्य ने आज्ञा की है ''तस्मात्सर्वात्मना नित्यं श्रीकृष्णः शरणं मम। वदद्भिरेव सतं स्थातव्यमिति मे मतिः''॥ अपने भक्तिवर्द्धिनी ग्रंथ में भी श्री आचार्य जी ने ''आव्यावृतो भजेत् कृष्णं पूजया श्रवणादिभिः'' इत्यादि लिखा है, भोजनादिक व्यवहार की रीति कुछ नित्य भजन भी कर लेना वा जहां सब काम करते हैं वहां एक घंटा भर यह भी सही इत्यादि। उपेक्षा वा साधारण व्यवहार पूर्वक भजन का निषेध इस सूत्र से किया। जो कहो कि संसार के और कोई काम न करैं सो यह नहीं कहते वरंच जब तुम आवश्यक कार्यों से छूटो तब और कोई व्यर्थ काम करने के बदले निरंतर भजन करो, जैसा जितने क्षण खाते हो उतनी देर तो निःसंदेह तुम कुछ नहीं कह सकते पर जैसे ही मुंह धो चुको भगवन्नामोच्चारण प्रारंभ करो।

37. लोकेपि भगवत्गुणश्रवणकीर्तनात् ।

लोक में भी भगवान के गुणों के श्रवण और कीर्तन से। 'लोकेपि' अर्थात् जब तक अव्यावृत भजन की सिद्धि न हो और लोक के व्यवहार में चित्त निरा मग्न हो तब तक भगवान् के गुण कीर्तन कर के और श्रवण कर के निरंतर भजन का अभ्यास करैं क्योंकि कोरे नामोच्चारण से वा ध्यान करने से भजन सुनने या गाने में सर्वसाधारण

का चित्त विशेष लग सकता है। श्रीमहाप्रभुजी लिखते हैं ''यथा भक्तिः प्रवृद्धा स्यात्तथोपायो निरूप्यते। बीजभावे दृढ़ेतु स्यात्त्यागाच्छन्नवणकीर्तनात्॥ बीजदाढर्यप्रकारस्तु गृहे स्थित्वा स्वधर्मतः। अव्यावृतो भजेत् कृष्णं पूजया श्रवणादिभिः॥ व्यावृत्तेपि हरौ चित्तं श्रवणादौ यतेत्सदा। ततःप्रेम तथासंक्तिर्व्यसनं च यदा भवेत्'' अर्थात् जो चित्त भक्ति में न रंगा हो तो श्रवणादिक में लगावे और जब उस में कुछ प्रेम और आसक्ति होगी और श्रवणादिक का व्यसन हो जायगा तब आप ही भक्ति का बीज दृढ़ हो जायगा। यद्यपि भक्ति के अधिकारी सब लोग नहीं हैं पर श्रवणकीर्तनादिक के अभ्यास से सब हो जाते हैं, क्योंकि श्रवणकीर्तन से अधिकारी मुक्त, मुमुक्षु और विषयी तीनों हैं। यही श्रीपरमभागवत श्रवणाधिकारी राजा परीक्षित ने कहा है ''निवृत्ततर्षै रुपगीयमानाद्भवौषधाच्छ्रोत्रमनोभिरामात्। क उत्तमश्लोकगुणानुवादात् पुमान्विरज्येत विना पशुघ्नात्॥''

38. ॐ मुख्यतस्तु महत्कृपयैव भगवत्कृपालेशाद्वा।

(उस भक्ति का) मुख्य साधन तो महानुभावों की कृपा है वा भगवान की कृपा का लेश।

ऐसा है,परम भागवत जड़भरतजी ने रहूगण को उपदेश दिया है ''रहूगणैतत्तपसा न याति न चेज्यया निर्वपणाद्गृहाद्वा। न छन्दसा नव जलाग्निसूर्यैर्विना महत्पादरजोभिषेकात्॥'' हे रहूगण, यह (सिद्धि) तप से नहीं होती और न यागादि कर्मों से, न घर छोड़ के योगी बनने से, न वेदों से, न जल से अर्थात् स्नान संध्या तर्पणादि से, न अग्नि से अर्थात् पञ्चाग्नि साधन वा अग्निहोत्र से, न सूर्य से अर्थात् सूर्योपस्थान वा ग्रीष्मताप सेवनादि से। बिना महानुभावों के पदरज में नहाये और किसी से यह नहीं हो सकता। यही श्रीमुख से भी कहा है ''नह्यम्मयानि तीर्थाणि न देवा मृच्छिलामयाः। ते पुनंत्युरुकालेन दर्मनादेव साधवः॥'' हे अक्रूर! जिस को जलमय तीर्थ (गङ्गादि) और मृण्मय और शिलामय देव पवित्र नहीं करते वा बहुत काल से करते हैं उस को साधु लोग दर्शन ही से तत्काल पुनीत करते हैं।

वरंच श्रीमद्भागवत पंचमस्कन्ध में श्रीमत्परम भागवत प्रह्लादजी ने कहा है ''मागारदारात्मजवित्तवंधुषु संगो यदि स्याद्भगवत्पियेषु नः। यः प्राणवृत्या परितुष्ट आत्मवान् सिद्ध्यत्यदूरान्न तथेन्द्रियप्रियः॥ यत्संगलब्धं निजवीर्यवैभवं तीर्थं मुहुःसंस्पृशतां हि मानसं। हरत्यजोंतः-श्रुतिभिर्गतोंगजं को वै न सेवेत मुकुन्दविक्रमं''॥[1]

देवीपुराण नवमस्कन्ध के पष्ठाध्याय में गंगा जी से भगवान् का वाक्य है

---

[1] देवीपुराणही को देवीभागवत कहते हैं क्योंकि पुराणों में जहां कहीं उपपुराणों को गिना है वहां ''देवी भागवत'' वा 'देवीपुराण' ऐसा शब्द है।

"मन्मंत्रोपासकानां च सतां स्नानावगाहनात्। युष्माकं मोक्षणं पापात् दर्शनात्स्पर्शनात्तथा॥ पृथिव्यां यानि तीर्थानि सत्यसंख्यानि सुन्दरि। भविष्यन्ति च पूतानि मद्भक्तस्पर्शदर्शनात्॥ मन्मन्त्रोपासका भक्ता विश्रमन्ति च भारते। पूतां कर्तुंतारितुञ्च सुपवित्रां वसुन्धरा॥ मद्भक्ता यत्र तिष्ठिन्ति पादं प्रक्षालयन्ति च। तत्स्थानन्तु महातीर्थ सुपवित्रं भवेद्ध्रुवं॥ स्त्रीघ्नो गोघ्नः कृतघ्नश्च ब्रह्मघ्नो गुरुतल्पगः। जीवन्मुक्तो भवेत्पूतो मद्भक्तस्पर्शदर्शनात्॥ एकादशीविहीनश्च संध्याहीनोति नास्तिकः। नरघाती भवेत् पूतो मद्भक्तस्पर्शदर्शनात्॥ असिजीवी मसीजीवी पाचकोग्राम्याचकः। वृषवाहो भवेत् पूतो मद्भक्तस्पर्शदर्शनात्॥ विश्वासघाती मित्रघ्नो मिथ्यासाक्ष्यस्य दायकः। स्थाप्यहारी भवेत् पूतो मद्भक्तस्पर्शदर्शनात्। अत्युग्रवाग्दूषकश्च जारकः पुंश्चलीपतिः। पूतश्च पुश्चली पुत्रो मद्भक्तस्पर्शदर्शनात्। शूद्राणां सूपकाश्य देवलोग्राम याचकः। अदीक्षितोभवेत्पूतो मद्भक्तस्पर्शदर्शनात्॥ पितरं मातरम्भार्या भ्रातरं तनयं सुतां। गुरोः कुलश्च भगिनी चक्षुर्हीनञ्च बान्धवं॥ श्वस्नश्च श्वसुरञ्चापि यो न पुष्णाति सुंदरि। स महापातकी पूतो मद्भक्तस्पर्शदर्शनात्॥ अश्वत्थनाशकश्चैव मद्भक्तनिन्दकस्तथा। शूद्रान्नभोजी विप्रश्च पूतो मद्भक्तदर्शनात्॥ देवद्रव्यापहारी च विप्रद्रव्यापहारकः। लाक्षालोहरसानां च विक्रेता दुहितुस्तथा॥ महापातकीनश्चैव शूद्राणां शवदाहकः। भवेयुरेते पूताश्च मद्भक्तस्पर्शदर्शनात्॥" तथा देवी का वाक्य "पुनन्ति सर्वतीर्थानि येषां स्नानावगाहनात्। येषां च पादरजसा पूतो पादोदकान्मही॥ येषां संदर्शनं स्पर्श ये वा वांछन्ति भारते। सर्वेषां परमो लाभो वैष्णवानां समागमः॥ नह्यम्मयानि तीर्थाणि न देवा मृच्छिलामयाः। ते पुनत्युरुकालेन विष्णुभक्ताः क्षणादहो"। फिर भगवद्वाक्य "पुरुषाणां शतं पूर्व तथा तज्जन्ममात्रतः। स्वर्गस्थं नरकस्थं वा मुक्तिमाप्नोति तत्क्षणात्॥ यःकैश्चिद्यत्र वा जन्म लब्धं येषु च जन्तुषु। जीवन्मुक्तास्तु ते पूता यान्ति काले हरेः पदं॥ मद्भक्तियुक्तो मर्त्यश्च स मुक्तो मद्गुणान्वितः। मद्गुणाधीनवृत्तिर्यः कथाविष्टश्च संततं॥ मद्गुणश्रुति मात्रेण सानन्दः पुलकान्वितः। सगद्गदः साश्रुनेत्रः स्वात्मविस्मृत एव च॥ न वाञ्छन्ति सुखं मुक्ति सालोक्यादिचतुष्टयं। ब्रह्मत्वममरत्वं वा तद्वाञ्छा मम सेवने॥ इंद्रत्वं च मनुत्वं च ब्रह्मत्वं च सुदुर्लभं। स्वर्ग राज्यादिभोगांश्च स्वप्नेऽपि न वाञ्छति॥ भ्रमन्ति भारते भक्तास्तादृग् जन्म सुदुर्लभं। मद्गुणश्रवणश्राठ्यगानैर्नित्यं मुदाचिताः॥ ये यांति च महीं पूत्वा नराः शीघ्रं ममालयं। इत्येवं कथितं सर्वं पद्मे कुरु यथोचितं॥ तदाज्ञया तास्तच्चक्रु र्हरिस्तस्थौ सुखासने॥ तथा च सारसंग्रह मे पराशरस्मृति "सहस्रवार्षिकी पूजा विष्णोर्भगवतो हरेः। सकृद्भागवताचार्याः कलां नार्हति षोडशीं॥" इत्यादि। बृहन्नारदीयपुराण में "पूजनाद्विष्णुभक्तानां पुरुषार्थोस्ति नेतरः। तेषु तद्द्वेषतः किंचिन्नास्ति नाश नमात्मनः॥" पद्मपुराण में श्री महादेव जी का वाक्य 'आराधनानां सर्वेषां विष्णोराराधनं परं। तस्मात्परतरं देवि तदीयानां च पूजनं॥" श्रीमद्भागवत में श्री महादेव जी का वाक्य "न मे भागवतानां च प्रेयानन्योस्ति कर्हिचित्" इत्यादि पूर्वोक्तश्लोकों में तदीय जनों का माहात्म्य सिद्ध हुआ तो ऐसे तदीयों की कृपा से भक्ति मिले, इस में क्या आश्चर्य

है वा भगवान ही की कृपा से होय। क्यौंकि आप कभी-कभी भक्ति दान देते हैं ''ददामि बुद्धियोगं त येन मामुपयांति ते''। परन्तु भगवान की कृपा से भक्तों की कृपा सुलभ है क्यौंकि भगवान भक्तिदान विशेष नहीं करते ''मुक्तिं ददामि कर्हिचित् स्म न भक्तियोगं॥'' इत्यादि अतएव इस सूत्र में महत्कृपा को मुख्य कर के भगवत्कृपा को गौण किया है।

39. ॐ महत्सङ्गस्तु दुर्लभोऽगम्योऽमोघश्च।

और महत्सङ्ग दुर्लभ, अगम्य और अमोघ (सफल) है।

ऐसा ही है, ''क्षणार्द्धेनापि तुल्ये न स्वर्गं नापुनर्भवं। भगवत्सङ्गिसंगस्य मर्त्यानां किमुताशिषः'' इत्यादि। श्रीमद्भागवत में श्रीमहादेव जी का वाक्य है। ''अमोघं सिद्धदर्शनं'' इत्यादि स्मृति तथा श्रीमुखवाक्य 'न रोधयति मां योगो न सांख्यं धर्म एव च। न स्वाध्यायस्तपस्त्यागो नेष्टापूर्त न दक्षिणा॥ व्रतानि यज्ञच्छन्दांसि तीर्थानि नियमा यमाः। यथावरुध्येत्सत्सङ्ग सर्वसंगापहोहि मां॥'' और लोक में भी प्रसिद्ध है ''सत्संगतिः कथय किं न करोति पुंसां' इत्यादि।

40. ॐ लभ्यतेपि तत्कृपयैव।

महत्सङ्ग उस की कृपा से ही मिलता है।

''यस्य भागवताः प्रीतास्तस्य प्रीतो हरिः स्वयं।'' इत्यादि वाक्यों से सिद्ध है। तथा श्री महादेव जी ने भी कहा है ''अथानधांध्रेस्तव कीर्तितीर्थे योन्तर्वहिः स्नाति विधूतपाप्मना। भूतेष्वनुक्रोशसुसत्वशीलिनां स्यात्संङ्गमोनुग्रह एवमस्तु च''॥

41. ॐ तस्मिंस्तज्जने भेदाभावात्।

उस के और उस के जन में भेद के अभाव से।

श्रुति भी है। ''यस्य देवे परा भक्तिर्यथा देवे तथा गुरावित्यादि''। ''न मे भागवतानां च भुक्तिभेदोस्ति कर्हिचित्'' इत्यादि श्री मुख से कहा है। तथा च श्री गोपीजन को ''ता मन्मनस्का मत्प्राणा बल्लव्यो मे मद्यात्मिकाः'' इत्यादि। श्री महादेव जी को ''यस्त्वां द्वेष्टि स मां द्वेष्टि यस्त्वामनु स मामनु। त्वदुपासा जगन्नाथ सैवास्तु मम गोपते'' तथा उद्योगपर्व में दुर्योधन से पांडवों के हेतु भी कहा है ''यस्त्वां द्वेष्टि स मां द्वेष्टि यस्तानन्नु स मामनु। ऐकात्म्यं मां गतं विद्धि पांडवै धर्म्मचारिभिः॥'' इत्यादि। तथा श्री प्रह्लादादिक भक्तों से भगवान् ने वही कहा है ''जिस ने तुम से द्वेष किया उस ने मुझ से द्वेष किया''। इसका उदाहरण अंबरीष का प्रकरण प्रत्यक्ष है और वहां भी श्रीमुख से कहा है ''अहंभक्तपराधीनो ह्यस्वतंत्र इव द्विजं। साधुभिग्रस्तहृदयो

भक्तैर्भक्तजनप्रियः॥'' महाभारत में भी कहा है 'तुलसीदलमात्रेण जलस्य चुलुकेन च। विक्रीणीते स्वमात्मानं भक्तेभ्यो भक्तवत्सलः॥'' उद्धव जी से भी ऐसा ही कहा है।[1] ''न तथा मे प्रियतम आत्मयोनिर्न शंकरः। नचसङ्कर्षणो न श्रीर्नैवात्मा च यथा भवान्'' (?)। 'निरपेक्षं मुनिं शातं निर्वैरं समदर्शिनं। अनुब्रजाम्यहं नित्यंपूजयेदङ्घ्रिरेणुभिः (?)॥ इत्यादि श्रीमुख से अपने भक्तों से अपनी एकता स्वाधीनता इत्यादि वर्णन किया, तो इस से भगवान और उनके भक्तों की एकात्मता ही सिद्ध हुई। ''त्रिधाप्येकं सदागम्यं गम्यं भेदप्रभेदकैः। प्रेम प्रेमी प्रेमपात्रत्रितयं प्रणतोस्म्यहं''॥

42. ॐ तदेव साध्यतां तदेव साध्यताम्।

उसी का साधन करो, उसी का साधन करो। हम लोग भी मुक्त कंठ से यही कते हैं।

पांचवां अनुवाक समाप्त।

43. ॐ दुःसंगस्सर्वथैव त्याज्यः।

दुःर्संग का सब रीति से त्याग करना। उस के त्याग में कारण कहते हैं—

44. ॐ कामक्रोधमोहस्मृतिभ्रंशबुद्धिनाशसर्वनाशकारणत्वात्।

क्यौंकि वह काम, मोह, स्मृतिभ्रंश, बुद्धिनाश तथा सर्वनाश का कारण है।

ऐसा ही श्रीमुख से भी कहा है ''ध्यायतो विषयानूपुन्सःसंगस्तेषूपजायते। संगात्संजायते कामः कामात् क्रोधोभिजायते॥ क्रोधाद्भवति संमोहः संमोहात् स्मृतिविभ्रमः। स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात् प्रणश्यति॥'' विषयों के सुख सोचते सोचते विषयसंग होता है और विषयसंग से अनेक प्रकार की कामना उत्पन्न होती है, और जब उस कामना के पूर्ण होने में कोई बाधक होता है तब क्रोध उत्पन्न होता है और जब उस क्रोध से अनिवार्य बाधकों का प्रत्यय नहीं कर सकता तब मोह हो जाता है और निराश हो के रोने लगता है। फिर उस दुःख से सब स्मृति भूल जाती है और जब स्मृति भूल जाती है तब इस की बुद्धि ठिकाने नहीं रहती और अन्यथा करने पर प्रवृत्त हुआ वहां उसका लोक परलोक सब नाश होता है''। इस से यह दिखाया कि सब बिगाड़ का कारण विषय और उस का संग ही है।

---

1. चारों नाम चार संप्रदाय के आचार्यों ही के लिए; ब्रह्मा माधव, महादेव विष्णुस्वामी, संकर्षण निम्बार्क और श्री रामानुज इन मर्य्यादामार्ग के भक्तों की उत्कर्षता के हेतु उद्धव को सबसे बड़ा कहा।

45. ॐ तरङ्गायितापीमे सङ्गात्समुद्रायन्ति।

ये (काम क्रोधादिक) तरंगों की भांति होकर भी संग से समुद्र से हो जाते हैं।

दुःसंग में और भी दोष दिखाते हैं। यद्यपि जो लोग सन्मार्ग पर प्रवृत्त हैं उन को अहर्निश भगवदाराधन करते-करते काम क्रोधादिक की केवल तरंग आती है, जैसे नित्य विषयियों को सुरतान्त, तीर्थगमन, कथाश्रवण वा श्मशानदर्शन में ज्ञान की तरंग आती है जितनी देर श्मशान पर बैठते हैं संसार नश्वर है, पुत्रादिकों में मोह अच्छा नहीं इत्यादि ज्ञान छांटते हैं पर जहां घर आये तहां फिर संसारी काम में मग्न हो गये। वैसे ही अच्छे लोगों को प्रारब्धवशात् संग में जो कुछ कामक्रोधादिक की तरंगें आती भी हैं तो वे उतने ही काल रहती हैं जब तक कि वे अपना स्वरूप भूले रहते हैं तथापि यदि वेही सज्जन दुःसंग में पड़ जायं तो ये ही काम क्रोध उन को डुबा दें।

46. ॐ कस्तरति कस्तरति मायां? यः संगांस्त्यजति यो महानुभावं सेवते यो निर्ममो भवति।

कौन तरता है? माया को कौन तरता है? जो संगों को छोड़ता है, जो महानुभाव की सेवा करता है, जो निर्मोह होता है।

यद्यपि महात्माओं की कृपा और संगत्याग मुख्य साधन हैं तथापि कुटुंबादिक का मोह भी एक बड़ी भारी बेड़ी है, इस से इस का त्याग भी मुख्य ही है।

47. ॐ यो विविक्तस्थानं सेवते यो लोकबंधमुन्मूलयति निस्त्रैगुण्यो भवति योगक्षेमं त्यजति।

जो एकांत स्थान सेवन करता है, जो लोकबंध की जड़ निकाल देता है, निस्त्रैगुण्य होता है और योग क्षेम छोड़ देता है।

क्रमशः उस के साधन कहते हैं। यदि जन समाज में रहेगा तो पहले तो उस के अनवच्छिन्न भगवच्चिन्तन में कोलाहलादि से अनेक बाधा पड़ेगी, दूसरे अनेक प्रकार के लोगों से मिलने से उन के व्यवहार में व्याप्त होने और उन के संग में पड़ जाने का डर है अतएव श्रीमुख से कहा है "विविक्तजनसेवित्वमरतिर्जनसंसदि"। और महात्माओं की भी आज्ञा है "विमुक्तबन्धा विचरेदसंगः।" इत्यादि तथा लोक का बंधन छोड़ना भी एक बड़ा कठिन साधन है। कोई हंसे न, कोई नाम न धरे, "धोती इतनी नीचे पहिने कि एड़ी न दिखाय", नहीं निर्लज्ज कहावेंगे, मार्ग में जिस चाल से निकलते हैं वैसे ही निकलना चाहिए, इत्यादि लोककल्पित व्यवहार और भी महाबंधन के कारण होते हैं। इस हेतु सब लोकबंधन की मूल लज्जा को चौपट कर डालना "एकां लज्जां परित्यज्य त्रैलोक्यविजयी भवेत्"। क्योंकि भक्ति के साधन में श्री मुख से आपने आज्ञा की है "विलज्ज उद्गायति रौति नृत्यति मद्भक्तियुक्तो भुवनं पुनाति", तो सबके सामने कौन गावैगा कौन रोवैगा कौन नाचैगा? जो मेरा सा निपट बेहया होगा

तथा जब लोक छूटा तब उससे भी बड़ा बंधन वेद बचा, उसके मिटाने के हेतु कहते हैं ''निस्त्रैगुण्यो भवति'' अर्थात् सत्त्व, रज, तम इन तीनों गुणों की प्रवृत्ति से अलग हो जाता है। श्री मुख से भी कहा है ''त्रैगुण्यविषया वेदानिस्त्रैगुण्यो भवार्जुन॥''

परन्तु जो कहो कि लोक वेद छोड़ के केवल अपना भला करना तो चार्वाक का मत है तो इस का खंडन करते हुए कहते हैं ''योगक्षेमं त्यजति'' अर्थात् केवल लोक वेदन ही छोड़ता वरंच अपने भी खाने पीने पहिरने रहने ओढ़ने बिछाने सोने इत्यादि का शौक छोड़ देता है ''भोजनाच्छादने चिन्तां वृथा कुर्वन्ति वैष्णवाः। विश्वम्भरो गुरुर्येपां किं दासान् समुपेक्षते'' और उस की प्रतिज्ञा भी है ''अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाःपर्युपासते। तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहं'' इत्यादि! क्योंकि जब सब छोड़ा फिर अपनी हाय हाय न छूटी तो उस छोड़ने पर धिक्कार है।

48. ॐ यः कर्मफलं त्यजते कर्माणि संन्यसति ततो निर्द्वन्द्वो भवति॥

जो कर्मफल छोड़ता है, कर्मों का त्याग कर के निर्द्वन्द्व होता है।

निस्त्रैगुण्य होने का क्रमशः साधन कहते हैं, जब तक चित्त में अर्थों की तरंगें उठें तब तक कर्मों को नहीं छोड़ना, उस का फल छोड़ना और जब कामनाओं की निवृत्ति हो जाय तब उन कर्मों को भी छोड़ के निर्द्वन्द्व हो जाना, क्योंकि श्रीमुख से भी कहा है ''निर्द्वन्द्वो नित्यसत्वस्थो निर्योगक्षेम आत्मवान्।'' ''यावानर्थउदपाने'' इत्यादि ऊपर लिख आए हैं।

49. ॐ वेदानपि संन्यसति केवलमविच्छिन्नानुरागं लभते।

वेदों को भी छोड़ देता है और केवल अविच्छिन्न अनुराग (प्रीति) को पाता है।

अब साधन दिखा कर उस की सिद्ध दशा लिखते हैं। जब सिद्ध हो जाता है तब वेदों का त्याग कर देता है और केवल अविच्छिन्न प्रेम पाता है।

50. ॐ तरति स तरति स लोकान्तारयतीति।

वह तरता है, वह तरता है, वह लोकों को तारता है।

नारद जी अपनी प्रतिज्ञा दृढ़ करने के हेतु दो बार कहते हैं और निश्चय कराते हैं। वरंच यह कहते हैं कि वह आप ही नहीं तरता किंतु संसार को तारता है, ''पुनाति भुवनत्रयं'', ''तीर्थीकुर्वन्ति तीर्थाणि स्वान्तस्थेन गदाभृता'', ''ते पुनन्त्युरुकालेन'', ''मद्भक्तियुक्तो भुवनं पुनाति'', ''स्वयं समुत्तीर्य सुदुस्तरं'' इत्यादि वाक्यों से उन का संसार में पवित्र कर के तारना सिद्ध है।

छठां अनुवाक समाप्त।

51. ॐ अनिर्वचनीयं प्रेमस्वरूपं।

प्रेम का स्वरूप कहा नहीं जा सकता।

तो हम लोग क्या कहें।

52. ॐ मूकास्वादनवत्।

गूंगे के स्वाद की भांति।

अर्थात् केवल अनुभव सिद्ध है क्योंकि मीठे और सलोने में जो भेद वा स्वाद है वह कहा नहीं जा सकता। इतना ही कह सकते हैं कि खा के अनुभव कर लो। उस में भी गूंगे के स्वाद का क्या पूछना है। यहां वही कहावत है ''बिना अपने मरे स्वर्ग नहीं सूझता।''

53. ॐ प्रकाश्यते क्वापि पात्रे।

(तथापि) कभी किसी पात्र (अधिकारी) से प्रकाश किया जाता है।

''ब्रूयुः स्निग्धस्य शिष्यस्य गुरवो गुह्यमष्युत'' इत्यादि वाक्य से सिद्ध है। तो इसमें यह शंका हुई कि श्रीनारद जी ने संसार में कोई पात्र पाए बिना ही इन सूत्रों का प्रकाश क्यों किया? इस के उत्तर में हम इतना ही कहा चाहे हैं कि यह किसी पात्र को उद्देश्य कर के नहीं कहा वरंच स्वतः मुंह से प्रेम के आवेश से निकल गया क्यौंकि पात्र भर जाता है तब आप से आप ऊपर वह निकलता है। उस समय यह विचार नहीं रहता कि नीचे पात्रान्तर आधारभूत है या नहीं, वही दशा इसकी भी है। जब उस परमानन्द का उच्छ्वास होता है तब यहां भी पात्रापात्र-विचार नहीं होता, पागल की भांति गूढ़ तत्त्व भी अपने आप बकने लगता है।

54. ॐ गुणरहितं कामनारहितं प्रतिक्षणवर्द्धमानमविच्छिन्नं सूक्ष्मतरमनुभवरूपम्।

(प्रेमस्वरूप) गुणों से रहित, कामनाओं से रहित, प्रतिक्षण में वृद्धिङ्गत, अविच्छिन्न, सूक्ष्मतर केवल अनुभवरूप है।

कामनारहित, क्यौंकि कामना से यह भक्ति व्यवहार हो जायगी, इस से स्वर्गादि कामना के अर्थ यजनस्वरूपा भक्ति वा कामपूरणार्थ दम्पती के प्रेम का नाम प्रेम है, इसका निराकरण किया। श्रीमुख से भी कहा है, ''न मय्यावेशितधियां कामः कामाय कल्पते। भर्जिता क्वथिता धाना भूयो बीजाय नेष्यते'' इत्यादि और सांसारिक प्रेम से इस शुद्ध प्रेम में आधिक्य दिखाने के हेतु ''प्रतिक्षण वर्द्धमान'' यह कहा, क्यौंकि संसार में प्रेम पहले तो बड़े चाव से होता है फिर प्रतिदिन अवस्था बल वा रूप गुण धन के घटने से वह प्रेम दिन दिन घटता जाता है और उस अशेषगुणसम्पन्न नित्यनव किशोर असीम गुणमंडित अतुलबलसीम परमानन्दमय में जो प्रेम होगा वह प्रतिक्षण

बढ़ता जायगा क्योंकि उत्तम सौंदर्य और गुण का धर्म है कि जितना उस को देखते वा विचारते जाओगे उतनी ही उत्तम सूक्ष्मता प्रकट होती जायेगी और जैसा इस प्रेम को संसार के दुःखादि बाधा कर देते हैं वैसी उस में कोई बाधा नहीं होती क्योंकि भगवद्वियोग के महादुःखसागर में ये सब संसार क्षुद्र दुःख डूब जाते हैं। ''सर्वपदं हस्तिपदं निमग्नं'' और सूक्ष्म इतना है कि उस का उदाहरण नहीं दिया जा सकता, इसी हेतु अनुभवरूप कहा है। पुराणान्तर में कथा है कि सती ने किसी कल्प में श्रीजानकी जी का वेष धर के भगवान् की परीक्षा की थी। इस से हम सब प्रेमियों के शिरोरतन श्री महादेव जी ने फिर सती के उस देह का स्पर्श न किया। बोधा ने कवित्त में कहा है ''अति छीन मृनाल के तारहु ते तेहि ऊपर पांव दै आवनो है। सुचिबेध ते नाको संकीर्न तहां परतीत को टांडो लदावनो है॥ कवि बोधा अनी घनी नेजहु ते चढ़ि तावै न चित्त डगावनो है। यह प्रेम को पन्थ कराल महा तरवार की धार पै धावनो है॥''

55. ॐ तं प्राप्य तदेवावलोकयति तदेव शृणोति तदेव भाषयति तदेव चिंतयति।

उस को पाकर उसी को देखता है, उसी को सुनता है, उसी को बोलता है और उसी का चिंतन करता है।

क्योंकि फिर इस को कहने, सुनने और देखने को अवशिष्ट नहीं रहता और जहां ''तं प्राप्य तमेव अवलोकयति'' इत्यादि पाठ है वहां यह अर्थ है कि उस को अर्थात् भगवान को प्रेम द्वारा पाकर उसी को देखता है क्योंकि उस अनिर्वचनीय रूप को देख कर और देखने की इच्छा नहीं होती।

56. ॐ गौणी त्रिधा गुणभेदादार्तादिभेदाद्वा।

गौणी (भक्ति) तीन प्रकार की, गुणभेद वा आर्तादि भेद से।

मुख्याभक्ति का स्वरूप दिखा कर गौणी का स्वरूप कहते हैं–सत्व, रज, तम गुणों के भेद से सात्विकी, राजसी, तामसी तीन प्रकार की भक्ति वा श्रद्धा होती है। गुणत्रयविभाग वर्णन में श्रीभगवान ने इसका विस्तार कहा है वा आर्त, जिज्ञासु और अर्थार्थी इन तीनों के भजन के भेद से भी गौणी भक्ति तीन प्रकार की हो जाती है॥

57. ॐ उत्तरस्मादुत्तरस्मात्पूर्वपूर्वो श्रेयाय भवति।

पिछले पिछले (भेद) से पहला कल्याण हेतु होता है।

अर्थात् तमोगुणी से रजोगुणी और रजोगुणी से सत्वगुणी अच्छी होती है, वैसे ही अर्थार्थी से जिज्ञासु और जिज्ञासु से आर्त अच्छा होता है क्योंकि सतोगुणी भक्ति से वा आर्त के भजन से शुद्ध भक्ति मिलने की संभावना है।

सातवां अनुवाक समाप्त।

58. ॐ अन्यस्मात्सौलभ्यं भक्तौ।

अन्य से भक्ति में सुलभता है।

पूर्व में भक्ति का अनिर्वचनीय स्वरूप कहा है तो इस से जीवों को शंका हो कि ऐसी सूक्ष्म वस्तु के अधिकारी हम कैसे होंगे तो उस शंका के मिटाने के हेतु और जीवों को उस मार्ग पर आरूढ़ करने के हेतु कहते हैं कि और जितने साधन हैं सब से भक्ति (साधन) सुलभ है क्यौंकि न इस में विद्या का काम है न धन का, न वेद का, न आचार का, न उत्तमता का, न वर्ण का, क्यौंकि गणिका को क्या विद्या थी, शबरी को क्या धन था, श्री गोपीजन ने कौन वेद पढ़ा था, गृध्र का कौन आचार थे, गज की क्या उत्तमता थी और केवट का कौन वर्ण था। और सब से बड़ी सुलभता यह है कि इस में कोई वाद विवाद नहीं रहता, क्यौंकि–

59. ॐ प्रमाणान्तरस्यानपेक्षत्वात् स्वयंप्रमाणत्वात्।

(यहा) अन्य प्रमाण की अपेक्षा नहीं, स्वयमेव प्रमाण है।

क्यौंकि वाद की और प्रमाण की इस में आवश्यकता नहीं, जब अपने चित्त में प्रेम का उदय हुआ तब उस से बढ़ कर और प्रमाण क्या चाहिए। प्रमाणान्तर को अनपेक्षता दिखा कर भक्ति में और भी उत्तमता दिखाते हैं–

60. ॐ शान्तिरूपात्परमानन्दरूपाच्च।

शान्ति रूप और परमानन्द रूप है।

अर्थात् इस के शान्ति रूप होने में रजोमय तमोमय नाना प्रकार के वाद और विकल्प चित्त में आप ही नहीं होते और परम शान्तिरूप है इसी से परमानन्द रूप है क्यौंकि परमानन्द वहां ही है जहां वादादि से प्रतिबन्ध नहीं और 'परमानन्द' शब्द कहने से भगवान की और भक्ति की एकता दिखाई क्यौंकि ईश्वर का भी परमानंद स्वरूप है–'आनन्दमयोभ्यासात्', 'आनंदमात्रकरपादमुखोदरादि', 'आनन्दं ब्रह्म', 'आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान्' इत्यादि श्रुति से भगवान का आनन्द स्वरूप सिद्ध है और जीव में आनंद का तिरोभाव है तो पुनः आनन्द उद्दीपन के साधन ज्ञानादि कर के परमानंदमयी भक्ति के आविर्भाव बिना जीव के ताप की निवृत्ति नहीं होती। और वेदांतियों ने ज्ञान का फल आनन्द कहा है, ज्ञान को स्वतः आनन्दस्वरूप नहीं कहा है। और भक्ति का स्वरूप आनन्द तो सूत्र में कहते ही हैं।

अब जो जीव को शंका हो कि हम ने तुम्हारे कहने अनुसार योगक्षेमादिक सब छोड़ा परन्तु उस लोक की गति क्या होगी इस शंका के मिटाने के हेतु कहते हैं।

61. ॐ लोकहानौ चिंता न कार्य्या निवेदितात्मलोकवेदशीलत्वात्।

लोकहानि में चिन्ता नहीं करना, क्यौंकि (भक्तों ने) आत्मा, लोक वेद, शील सब ईश्वर में अर्पण किया है।

अर्थात् जो वस्तु कोई किसी को दे देता है फिर उस की हानि का सोच देने वाले को नहीं होता, जिस को देता है उसी को होता है। हम लोगों को लोकादि हानि का सोच क्यौं करना चाहिए, उस का सोच वह (भगवान्) आप करैगा अतएव श्री महाप्रभु जी ने आज्ञा की है "चिन्ता कापि न कार्या निवेदितात्मभिः कदापि भगवानपि पुष्टिस्थो न करिष्यति लौकिकी च गतिं। निवेदनं तु स्मर्तव्यं सर्वदा तादृशैर्जनैः॥ सर्वेश्वरश्च सर्वात्मा निजेच्छातः करिष्यति। सर्वेषां प्रभु सम्बन्धो न प्रत्येकमितिस्थितिः॥ अतोन्यविनियोगेपि चिन्ता का स्वस्य सोऽपि चेत्। अज्ञानादथवा ज्ञानात्कृतमात्मनिवेदनं॥ यैः कृष्णस्तत्कृतप्राणैस्तेषं का परिवेदना" इत्यादि अथवा चतुःश्लोकी में फिर आप आज्ञा करते हैं कि[1] "एवं सदा स्व कर्तव्यं स्वयमेव करिष्यति। प्रभुः सर्वसमर्थोहि ततोनिश्चिंततां ब्रजेत्॥ यदि श्री गोकुलाधीशो धृतः सर्वात्मना हृदि। ततः किमपरं ब्रूहि लौकिकैर्वैदिकैरपि॥"

अब जो वसा दृढ़ नियम न सिद्ध हुआ तो क्या करना इस का साधन लिखते हैं–

62. ॐ न तदसिद्धौ लोकव्यवहारो हेयः किन्तु फलत्यागस्तत्साधनं च कार्यमेव।

उस (निश्चय) की असिद्धि में लोकव्यवहार को नहीं छोड़ना, किंतु फल छोड़ना, वरंच उस (फल) का साधन अवश्य ही करना।

क्यौंकि विश्वास दृढ़ भए बिना लोक व्यवहार छोड़ने में वही कहावत होगी "न घर के हुए न घाट के" परन्तु उस का फल छोड़ देना अर्थात् लोकव्यवहार को असार समझना और विश्वास की सिद्धि के साधन में प्रवृत्त होना। उस के कौन कौन साधन हैं सो आगे दिखाते हैं–

63. ॐ स्त्रीधननास्तिकवैरिचरित्रं न श्रवणीयम्।

स्त्री, धन, नास्तिक और वैरी का चरित्र नहीं सुनना।

स्त्रियों के चरित्र सुनने से विषयों में वासना होती है, धन का चरित्र सुनने से लोभ की वृद्धि होती है, नास्तिकों का चरित्र सुनने से विश्वास में हानि होती है तथा वैरियों का चरित्र सुनने से उन पर क्रोध की वृद्धि होती है तो ये सब तमोगुणादिक के कारण हैं। इस से इन को सुनना ही नहीं।

64. ॐ अभिमानन्दभादिकं त्याज्यम्।

अभिमान, दम्भ आदि को छोड़ना।

---

[1] एवं सर्वैः स्म कर्तव्यमिति पाठ भेद।

भक्तिमार्ग के मुख्य विरोधी ये ही दो हैं, क्योंकि भक्ति सिद्ध हो जाने पर भी इन के फिर उदय होने का भय रहता है हम बड़े भक्त हैं, हम लोगों के उपदेष्टा हैं इत्यादिक अभिमान और बाह्याचरण में वा पूजा के आडंबर में भेद न पड़े, यह दम्भ और आदि शब्द से काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर इत्यादि लिये जाते हैं। जो कहो कि दुस्त्यज हैं तो कहते हैं—

65. ॐ तदर्प्पिताखिला चारस्सन् कामक्रोधाभिमानादिकं तस्मिन्नेव करणीयम्।

सब आचार उसी (भगवान) को अर्पण कर काम, क्रोध, अभिमान आदि सब उसी पर करना।

अर्थात् काम करना तो यही कि वह परमश्रेष्ठ हमें मिले, क्रोध करना तो उसी पर कि क्यों नहीं मिलता? अभिमान भी उसी का कि हमारा स्वामी सर्वेश्वर है हमारा प्यारा सब से सुंदर है इत्यादि।

66. ॐ त्रिरूपभंगपूर्वक नित्यदासनित्यकान्ता भजनात्मकं वा प्रेम एव कार्य्यं प्रेम एव कार्यमिति।

तीनों रूपभंगपूर्वक (भगवान का) नित्य दास्य और नित्यकान्ता की भांति भजन रूपी प्रेम ही करना, प्रेम ही करना।

त्रिरूप शब्द का क्या अभिप्राय है यह कौन जाने। यदि हम स्मार्त होते तो ब्रह्मा विष्णु शिव को एक करते वा वेदान्ती होते तो त्रिपुटीभंग वा जीव, ईश्वर और ब्रह्म की एकता करते परन्तु यह भक्तिशास्त्र है यहां इन का प्रयोजन नहीं। यहां तीनों गुणों को मिटा कर वा भक्ति स्वरूप आनन्दांश के आविर्भाव से तीनों (सत्, चित् और आनन्द) का परम्परा पृथक्त्व भंग करना वा गुरु ईश्वर और उस के भक्तों के भेद का भंग इत्यादि। अब हम अपना सिद्धान्त दिखाते हैं। युगल स्वरूप में और उनको पृथक मानना अर्थात् यह वह और यह दोनों अलग है यह जो तीन प्रकार की भावना है इस का भंग वा प्रेमी, प्रेम और प्रेमपात्र इन के भेद के भंग पूर्वक दासभाव से वा कान्ताभाव से प्रेम ही करना, प्रेम ही करना। इति शब्द से इन साधनों के कहने के पीछे और कुछ शेष वक्तव्य नहीं यह बोधन किया।

आठवां अनुवाक समाप्त।

67. ॐ भक्ता एकान्तिनो मुख्याः।

भक्त एकान्ती (अभ्यन्तरचारी) (और सब से) मुख्य होते हैं।

पहिले सूत्रों में साधारण भक्तों की महिमा दिखा कर अब एकांती भक्तों की महिमा दिखाते हैं। भक्तों में भी अनन्य और एकान्ती (अपनी भक्ति को गूढ़ रखने वाले) मुख्य हैं। इस एकान्ती शब्द से भक्ति भी सब संसार के दिखावे की भांति एक संसारी आचरण है, इस का निषेध किया।

68. ॐ कण्ठावरोधरोमांचाश्रुभिः परस्परं लपमानाः पावयन्ति कुलानि पृथिवीं च।

(जो भक्त लोग) कंठ का अवरोध, रोमांच और अश्रु आदि से युक्त होकर परम्परा भाषण करते हुए कुल और पृथिवी को पवित्र करते हैं।

स्मरन्तः स्मारथन्तश्च मिथोधौधहरं हरिं। भक्त्या संजातयाभक्ता विभ्रत्युत्पुलकां तनुं॥ क्वचिद्रुदंत्यच्युतचिंतया क्वचित् हसन्ति नन्दन्ति वदन्त्यलौकिकाः। नृत्यन्ति गायन्त्यनुशीलयन्त्यजं भवन्ति तूष्णीम्परमेत्य निर्वृताः॥ इत्यादि प्रबुद्ध का वाक्य है॥

परम भागवत प्रह्लाद जी ने कहा है "निशम्य कर्माणा गुणानतुल्यान्वार्याणि लीलातनुभिः कृतानि। यदातिहर्षोत्पुलकाश्रुगदं प्रात्कंठ उद्गायति रौति नृत्यति॥ यदा ग्रहग्रस्त इव क्वचिद्धसित्याक्रदन्ते ध्यायति वन्दते जनं। मुहुः श्वसन्वक्ति हरे जगत्पते नारायणे त्यात्मगतिर्गतत्रपः॥" श्रीमुखवाक्य भी है "एवं हरौभगवति प्रति लब्धभावो भक्त्या द्रवद्धृदय उत्पुलकः प्रमोदात्। औत्कण्ठ्यवाष्पकलया मुहुरर्द्यमानस्तच्चापि चित्तवडिशं शनकैर्वियुंक्ते॥" एकादश में भी "शृण्वन् सुभद्राणिरथांगपाणेर्जन्मानि कर्माणि च यानि लोके। गीतानि नामानि तदर्थकानि गायन्विलज्जो विचरेदसंगः॥ एवंव्रतःस्वप्रियनाम कीर्त्या जातानुरागो द्रुतचित्त उच्चैः। हसत्यथो रोदिति रौति गायत्युन्मादवन्नृत्यति लोकवाह्यः॥ तृतीय में "देहञ्च तत्वपरमः स्थितमुत्थितं वा सिद्धो विपश्यति यतोऽध्यगमतस्वरूपं। दैवादुपेतमथ दैववशादुपेत वासो यथापरिकृतं मदिरामदान्धेः॥" इत्यादि और सब भक्तों का आचरण ऐसा ही सुनने में आया है, यथा श्री गोपीजन का "विचिक्युरुन्मत्तकवद्वनाद्वनं" "रुरुदुः सुस्वरं राजन्" "कृष्णोऽहं पश्य तं गतिं" "ललितामिति तन्मनाः" "विक्षिप्तमनसो नृप" इत्यादि और श्री महादेवजी की जड़ोन्मत्तपिशाचचर्या लोक में प्रसिद्ध ही है "श्मशानेष्वाक्रीड़ा स्मरहर पिशाचाः सहचराः। चिताभस्मालेपः स्त्रगपि नृकिरीटीपरिकरः अमङ्गल्यं शीलं भवतु तव नामैवमखिलं। तथापि स्मृर्तृणां वरद परमं मङ्गलमसि॥"[1] श्मशानचकानिलधूलिधूम्रो। विकीर्णविद्योत जटाकलापः।

---

1. दिति से कश्यप जी का वाक्य तृतीय स्कन्ध में अध्याय 14, श्लोक 24-8।

भस्मावगुण्ठामलरुक्मदेहो। देवस्त्रिभिः पश्यति देवरस्ते॥ नयस्लोके स्वजनः परोवा नात्यादृतो नोतकश्चिद्विगह्य। वयं व्रतैर्यच्चरणापविद्धामाशास्महेऽजांव्रत भुक्तभोगां॥ यस्यानवद्याचरितं मनीषिणो गृणनृत्यविद्यापटलं विभत्सवः। निरस्साम्यातिशयोपि यस्वयं पिशाच चर्यामचरद्गतिस्सतां॥ हसन्ति यस्याच्चरितंहिदुर्भगास्स्वात्मनरतस्याविदुषस्समाहितं। यैर्वस्त्रमाल्याभरणानुलेपनैः श्वभोजनं स्वात्मतयोपलालितं॥ ब्रह्मादयो यत्कृतसेतुपाला यत्कारणं विश्वमिदं च माया। आज्ञाकारी तस्य पिशाचचर्य्या अहोविभून्नश्चरितं विडम्बनम्"॥

अहा जब भगवान् शिवजी ने जोकि इस मार्ग के परम गुरु और परम रहस्यवेत्ता "ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वदेहिनां। ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोधिपतिः" "अहं कलानां ऋषभे" "विद्याकामस्तु गिरिशं" "यो देवानां प्रथमं पुरस्ताद्विश्वाधिपो रुद्रोमहर्षिः" "हिरण्यगर्भ पश्यत जायमानं सनो देवः शुभया स्मृता संयुनक्तु" "कस्तञ्चराचरगुरुन्निर्वैरं शान्तविग्रहं। आत्मारामं कथं द्वेष्टि जगतो दैवतं महत्॥" "त्र्यम्बकं यजामहे सुगंधिं पुष्टिवर्द्धनं। उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षय मा मृतात्॥" "तस्मिन्महायोगमये मुमुक्षुशरणं सुराः। ददृशुः शिवमासीनं त्यक्तामर्षमिवांकं"॥ "विद्यातपोयोगपथमास्थितं जगदीश्वरं। चरं विश्वसुहृदं वात्सल्याल्लोकमंगलं॥ उपविष्टं दर्भम्य्यां वृस्यां ब्रह्म सनातनं। नारदाय प्रवोचंतं पृच्छते शृण्वतां सतां॥ कृत्वोरौ दक्षिणे सव्ये पादपद्मञ्च जानुनी। बाहुप्रकोष्ठेऽक्षं मालामासीनं योमुद्रया॥ तं ब्रह्म निर्वाणसमाधिमास्थितं व्युपाश्रितं गिरिशं योगकक्षां। सलोकपाला मुनयो मनूनामाद्यं मनुं प्रांजलयः प्रणेमुः॥" इत्यादि श्रुतिपुराणादि वाक्यों से प्रतिपाद्य श्रीमहादेव जी ने यह मत्तचर्या अवलम्बन किया तब और भक्तों का क्या पूछना है। ऐसे ही ऋषभदेव जी की भी चर्या है यथा "जडान्धमूकबधिर पिशाचोन्मादकवदवधूतवेषोऽभिभाष्यमाणोऽपि जनानां गृहीतमौनव्रतस्तूष्णींबभूव॥" तथा जड़भरत जी की भी ऐसी ही चर्या है "तयेत्थमविरतपुरुषपरिचर्यया भगवते प्रवर्द्धमानानुरागभरद्रुतहृदयशैथिल्यः प्रहर्षवेगेनात्मन्यवधीयमानरोमपुलककुलक औत्कण्ठ्यप्रवृत्तप्रणयवाष्पनिरुद्धावलोकनयन एवंनिजरमणारुणचरणार-विंदानुध्यानपरिचितभक्तियोगेन परिप्लुतः परमाह्लादगम्भीरहृदयहृदावगाढधिषणस्तामपि क्रियमाणां भगवत्सपर्या न सस्मार॥" उद्धव जी ने भी ऐसा ही किया है "मुक्तकण्ठो रुरोद ह"। श्रुतदेवजी ने भी ऐसा ही किया "धुन्वन्वासो ननर्त ह"। राजा चित्रकेतु की भी यही दशा है।" "स उत्तमश्लां कपदाब्जविष्टरं प्रेमाश्रुवर्षैरुपमेहयन्मुहु॥ प्रेमापरुद्धाखिलवर्णनिर्गमो नैवाशकत्तं प्रसमीक्षितुं चिरम्। (श्रीमद्भागवत) ध्रुवजी का भी ऐसा ही चरित्र है। यत्तद्विष्णुपदमाहुः यत्र ह बाव वीरव्रत औत्तानपादिः परमभागवतो अस्मत्कुलदेवताचरणारविंदोदकमिति यामनुसवनमुत्कृष्यमाणभगवद्भक्तियोगेन दृढं क्लिद्यमानांतर्हृदय औत्कण्ठ्यविवशामीलितलोचनयुगलकुड्मलविगलितामल- वाष्पकलयाभिव्यज्यमानरोम पुलकोऽधुनापि परमादरेण शिरसा विभर्त्ति, इत्यादि। श्री अक्रूर की भी ऐसी दशा हुई "तद्दर्शनाह्लादविवृद्ध-

संभ्रमप्रेम्णोद्ध्र्वरोमाश्रु कलाकुलेक्षणः। रथादवस्कंद्य स तेष्वचेष्टत प्रभेरमून्यंघिरजांस्यहो इति॥'' इत्यादि कहां तक कहें सब भक्तों के ऐसे ही चरित्र हैं क्योंकि प्रेम भी एक मदिरा है, जो पीएगा आप ही नाचैगा, रोएगा, हंसेगा, बकैगा। श्रीमहाप्रभु जी का भी 'तत्कथाक्षिप्तचित्तस्तत् विस्मृतान्यो व्रजप्रिय:' नाम है॥

69. ॐ तीर्थीकुर्वन्ति तीर्थानि सुकर्मी कर्माणि सच्छास्त्री शास्त्राणि।

जो तीर्थों को तीर्थ करते हैं, कर्मों को सुकर्म करते हैं, शास्त्रों को सच्छास्त्र करते हैं।

''तीर्थीकुर्वन्ति तीर्थानि'' ''तीर्थं पुनाना मुनयोभियन्ति'' ''स्वयंहि तीर्थानि पुनंति संतः'' इत्यादि वाक्यों से तथा श्रीगङ्गाजी के प्रति भगवान् के वाक्यों से सिद्ध है और संत का कर्मों को सुकर्म करना राजा युधिष्ठिर के यज्ञ के प्रसङ्ग से और व्यास जी के संवाद से सिद्ध है। संतों की महिमा विशेष कर के 36। 39। 40। 41। सूत्रों में लिख आए हैं।

70 ॐ तन्मयाः।

(क्योंकि वे) तन्मय हैं।

तीर्थादि के पवित्र करने में कारण देते हैं कि ''पवित्राणां पवित्रं यो मङ्गलानां च मङ्गलं'' इत्यादि वाक्य से संसार में जो कुछ पवित्रता है भगवान की है तो तन्मय जो भक्त हैं उन के दर्शन स्पर्श से क्यों न पवित्र होंगे। ''तीर्थपाद'' भगवान का नाम है और उन के भक्त उन का चरित्र सर्वदागान करते हैं और भगवान के चरित्र ही से तीर्थ, कर्म और शास्त्र इन सब को सत्तीर्थता सत्कर्मता और सच्छास्त्रता होती है। यह क्रम से दिखाते हैं। ''तत्रैव गङ्गा यमुना च तत्र गोदावरी सिन्धु सरस्वती च। सर्वाणि तीर्थानि वसंति तत्र यत्राच्युतोदारकथाप्रसंगः' इत्यादि वाक्यों से तीर्थों का ''तत्कर्म हरितोषं यत् सा विद्या तन्मतिर्यया।'' ''धर्मः स्वानुष्ठितः पुंसां विष्वक्सेनकथासु यः। नोत्पादयेद्यति रतिं श्रम एव हि केवलम्''॥ ''दानव्रततपोहोमजपस्वाध्यायसंयमैः। श्रेयो भिर्विविधैश्चान्यैः कृष्णे भक्तिर्हि साध्यते''॥ ''धिग्जन्मनस्त्रिवद्विद्यां धिग्व्रतं धिग्बहुज्ञतां। धिक्कुलं धिक्क्रियादाक्ष्यं विमुखा ये त्वधोक्षजे''॥ ''देशः कालः पृथग्द्रव्यं मन्त्र-तन्त्रर्त्विजोऽग्नयः। देवता यजमानश्च क्रतुर्धर्मश्च यन्मयः॥'' ''नैष्कर्म्य मप्यच्युतभाववर्जितं न शोभते ज्ञानमलं निरंजनं। कुतः पुनः शश्वदभद्रमीश्वरे न चार्पितं कर्म यदप्यकारकम्॥'' इत्यादि से भगवान का कर्म को भी पवित्र करना और एकादश स्कंध के 5 अध्याय में ''कर्मण्यकोविदाः स्तब्धा'' इत्यादि परम भागवत चमस जी के वाक्य में भगवत्तोष बिना कर्मांतर की प्रवृत्ति की निंदा में कर्मों का सुकर्म होना तथा ''न यद्वचश्चित्रपदं हरेर्यशो जगत्पवित्रं प्रगृणीय कर्हिचि्। तद्वायसं तीर्थमुशंति मानसा न यत्र हंसा विरमंत्यु

शिक्षयाः॥ तद्वाग्विसर्गोजनताधविप्लवो। यस्मिन् प्रतिश्लोकमबद्धवत्यपि। नामान्यनंतस्य यशोंकितानि यच्छृण्वन्ति गायन्ति गृणंति साधवः॥'' इत्यादि से शास्त्रों का सच्छास्त्र करना सिद्ध है तो तन्मय, ततूस्वरूप, तत्समानादरणीय परमभक्त जन तीर्थादिकों को तीर्थ बनावैंगे इस में कौन आश्चर्य है।

71. ॐ मोदंति पितरो नृत्यंति देवताः सनाथा चेयं भूर्भवति।

(जिन के चरित्र देख) पितर आनंदयुत होते हैं, देवता लोग नाचते हैं और यह पृथ्वी सनाथ होती है।

''कुलं पवित्रं जननी कृतार्था वसुन्धरा भागवती च धन्या। स्वर्गेपि तेषां पितरश्च धन्या येषां कुले वैष्णवनामधेयम्''॥ ''स वै पुण्यतमो देशः सत्पात्रं यत्र लभ्यते॥'' ''सङ्कीर्तनध्वनिं श्रुत्वा ये च नृत्यंति वैष्णवाः। तेषां पादरजःस्पर्शा सद्यः पूता वसुन्धरा॥ तद्दिनं सफलं धन्यं यशस्यं सर्वमंगलं। श्रीकृष्णकीर्तनं यत्र यत्र नैवायुषो व्ययः॥ तत्कीर्तनं भवेद्यत्र कृष्णस्य परमात्मनः। स्थनं तच्च भवेत्तीर्थं मृतानां तत्र मुक्तिदम॥ नात्र पापानि तिष्ठंति पुण्यानि सुस्थिराणि च। तपस्विनाञ्च व्रतिनां तपसां फलम्॥'' इत्यादि शास्त्र में महिमा कही है तथा श्रीमुख से भी आज्ञा करते है। (वाराहपुराण) ''जाह्नव्यादीनि तीर्थानि पापनिष्कृतिहेतवे। कांक्षंति हरिदासानां दर्शनं हरिदासवत्॥ मदभक्तजनसम्मर्द पादपांसुविसर्जनात्। चतुःसागरपर्यंतं पावनं स्याद्वसुंधरे॥'' तथा प्रह्लाद जी से भी भगवान ने कहा है ''त्रिःसप्तभिः पिता पूतः पितृभिः सह तेऽनघ। यत्साधोऽस्य गृहे जातो भवान्वै कुलपावनः। यत्र यत्र च मद्भक्ताः प्रशांताः समदर्शिनः। साधवः समुदाचारास्ते पूयंत्यपि कीकटाः॥'' इत्यादि।

72. ॐ नास्ति तेषु जातिविद्यारूपकुलधनक्रियादिभेदः।

उन (भक्तों) में जाति, विद्या, रूप, कुल, धन और क्रिया आदि का भेद नहीं।

''नालं द्विजत्वं देवत्वं ऋषित्वं वा सुरात्मजाः। प्रीणनाय मुकुन्दस्य न दत्तं न बहुज्ञता॥'' ''विप्राद् द्विषड्गुणयुतादरविंदनाभपादारविंदविमुखाच्छ् पचं वरिष्ठम्। मन्ये'' ''अहोबत श्वपचोतो गरीयान्यज्जिह्वाग्रे वर्तते नाम तुभ्यं॥'' ''ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः शूद्रो वा यदि वेतरः। विष्णुभक्तिसमायुक्तो ज्ञेयः सर्वोत्तमः॥'' ''दैतेया यक्षरक्षांसि स्त्रियः शूद्रा ब्रजौकसः।'' ''विद्याधरा मनुष्येषु वैश्याः शूद्राः स्त्रियोन्त्यजाः। सर्वेधिकारिणोह्यत्र विष्णुभक्तो यथा नृप॥'' ''किरातहूणांध्रपुलिंदपुष्कसाआभीरकंका यवनाः खसादयः। येन्ये च पापा यदुपाश्रयाश्रयाः शुष्यन्ति तस्मै प्रभविष्णवे नमः॥'' पश्चिम स्कंध में श्रीहनुमद्वाक्य ''न जन्म नूनं महतो न सौभगं न वाङ् न बुद्धिर्नाकृतिस्तोषहेतुः। तैर्यद्विशिष्टानपि नो वनौकसां चकार सख्ये बत लक्ष्मणाग्रजः'' ''इक्ष्वाकुरैलमुचुकुन्द विदेहगाधीरध्वम्बरीषसगरा गयनाहुषाद्याः। मांधात्रलर्केश-त्तधन्वनुरंतिदेवदेवव्रतो बलिरमूर्तरयो

दिलीपः॥ सौभर्युतंकशिविदेवलपिप्पलादसारस्वतोद्धवपराशरभूरिषेणाः। येन्ये विभीषण हनूमदुपेन्द्रदत्तपार्थार्ष्टिषेणविदुरश्रुतदेववर्याः॥ ते वै विदंत्यतितरंति च देवमायां स्त्रीशूद्रहूणशबरा अपि पापजीवाः। यद्यद्‌गुणक्रमपरायणशीलशिक्षास्तिर्यग्जना अपि किमु श्रुतधारणा ये॥'' इत्यादि वाक्यों से तदीयों की समता स्पष्ट है और वैष्णव जातिबुद्धि अर्थात् वैष्णव में जातिभेद करना यह 64 महा अपराधों[1] में से एक गिना है और भागवतों के लक्षणमें भी कहा है " यम्य जन्मकर्माभ्यां न वर्णाश्रमजातिभिः। सज्जतेस्मिन्नहंभावो देहे वै स हरेः प्रियः''। और श्री हरिराय जी ने अपने ग्रंथ शिक्षापत्र में भी ऐसा ही लिखा है। इसी से वैष्णवों को परस्पर जाति, विद्या, रूप, कुल, धन और क्रिया आदि का

---

[1] भगवान् में देवविशेष या तत्वविशेषबुद्धि (2) शास्त्रों में ग्रन्थ अर्थात् पौरुषेय-बुद्धि (3) वैष्णव में जाति-बुद्धि (4) गुरु में साधारण मनुष्य-बुद्धि (5) प्रतिमा में शिलाबुद्धि (6) प्रसाद में खाद्यबुद्धि (7) चरणोदक में जलबुद्धि (8) तुलसी में वृक्षसाधरण बुद्धि (9) गऊ में पशुसाधरण बुद्धि (10) भागवत और गीता में ग्रन्थसाधारण बुद्धि (11) भगवल्लीला में मनुष्यकृत बुद्धि (12) सांसारिक प्रेम वा स्त्रीसुख में लीला गान वा स्मरण (13) श्रीगोपीजन में परकीया-भावना (14) रासलीला में कामबुद्धि (15) महोत्सव में स्पर्शास्पर्शबुद्धि (16) नास्तिक-वादावलंबन (17) संदेहपूर्वक धर्माचरण (18) अश्रद्धापूर्वक धर्माचरण वा धर्म में आलस्य करना (19) वैष्णव का बाह्य चरित्र देखना (20) महात्माओं के चरित्र पर गुण दोष विचारना (21) अपने को उत्तम समझना (22) किसी देवता या शास्त्र की निन्दा (23) भगवद् विग्रह के सामने पीठ लगा कर बैठना (24) जूता पहने, (25) माला पहने, (26) छड़ी लिये, (27) नील वस्त्र पहने (रेशम में नील युद्ध है) (28) बिना दंतधावन किए, (29) मलत्याग मैथुनादि के पीछे बिना वस्त्र बदले मंदिर में जाना, (30) भगवद्विग्रह के सामने हाथ पैर हिलाना (31) ताम्बूलादि खाना, (32) ऊंचे हंसना, (33) कुचेष्टा करना, (34) स्त्री को घूरना, (35) क्रोध करना (36) दूसरे को आदर के हेतु अभिवादन करना, (37) दुर्गंध वस्तु खा कर तथा पहन कर, बिना गंध दूर भए वा अजीर्ण भए पर जाना, (38) मत्त होना अर्थात् नशा सेवन कर के जाना, (39) किसी का अपमान करना वा मारना, (40) काम क्रोधादि चेष्टा करना (41) घर आए मनुष्य को विशेष कर के संत की अभ्यर्थना न करना (42) सेवा वा धर्म वा पांडित्य अपने मानना वा सुकृत को अपना किया समझना (43) नास्तिकों का, लंपटों का, हिंसकों का, लोभियों का, मिथ्याचारियों का संग करना (44) विपत्ति परमेश्वर ने दिया यह बुद्धि करना (45) धर्म के बल पाप करना (46) किसी को तृण मात्र भी कष्ट दे कर अपने को धार्मिक समझना (47) स्त्री पुत्र भृत्य परिवार आश्रित दीन संत की उपेक्षा (48) वस्तु को अपने उपयोगी समझ कर सेवा में देना वा असमर्पित वस्तु ग्रहण करना (49) इष्टदेव की शपथ खाना (50) भगवान्, धर्म्म वा नाम बेंचकर द्रव्य कमाना (51) अन्य देवता से आशा करना (52) धर्मशास्त्र की मर्यादा का उल्लंघन (53) वह दशा भए विना शान हांकना वा वैसा आचरण करना (54) देवचरित्र की भांति आचरण करना (55) संप्रदायभेद से वैष्णवो को ऊंचा नीचा समझना (56) अवतार की तारम्यदृष्टि से निंदा करना (57) हंसी में भी किसी को तुम परमेश्वर हो यह कहना (58) परमेश्वर को कदापि किसी कारण से भी अणुमात्र भी परतंत्र समझना (59) लोभ से किसी को चरणामृत वा प्रसाद देना (60) भगवान् के चित्र मूर्ति नाम आदि की अवज्ञा करना या कहना (61) किसी जीव को किसी प्रकार भी ताप देना वा उद्वेजन करना (62) तर्कवितर्क से आस्तिकता से मान डिगाना (63) भगवदवतार में जन्म कर्म मानना (64) जुगल स्वरूप में भेदबुद्धि।

भेद कदापि नही करना क्योंकि जिस समय वह तदीय हुआ उसी समय सब गुण पूर्ण हो गया। ''यस्यास्ति भक्तिर्भगवत्यकिंचना सर्वैर्गणैस्तत्र समासे सुराः'' इत्यादि वाक्यों से सिद्ध है।

73. ॐ यतस्तदीयाः।

क्यों (ये) उसके हैं।

पूर्वोक्त अभेद मानने का हेतु देते हैं कि जब तुम तदीय हो और वे भी तदीय हैं तब परस्पर न्यूनाधिक भेद कहां रहा, सब एक से भाई हुए और जब सब विद्या, जाति, क्रिया इत्यादिकों का मूल पवित्र करने वाला भगवान इन के हृदय में बैठा है तो वे आप ही सर्वोत्तमोत्तम हो गए।

नौवां अनुवाक समाप्त।

74. ॐ वादो नावलम्ब्यः।

श्रीमुख से निषेध किया है ''वादवादांस्यजेत्तर्कान् पक्षं कंचन नाश्रयेत्। वेदवादरतो न स्यान्नपाखण्डी न हेतुकः॥'' इत्यादि क्योंकि वाद से मनुष्य के चित्त में आग्रह की गांठ पड़ जाती है और जहां आग्रह होता है वहां तत्त्व नहीं प्रकट होता और बहुत वाद करने से तमोगुण उदय होने की भी संभावना है। अब उस में हेतु देते हैं–

75. ॐ बाहुल्यावकाशवत्त्वादनियतत्वात्।

(क्योंकि वाद में) बहुत अवकाश है और अनियत है।

व्यासजी ने भी कहा है 'तर्काप्रतिष्ठानात्' तथा श्रुति भी है ''नैषामतिरापनेया दुषप्रतक्यैः''। क्योंकि जितने वाद हैं वे भगवान् का तत्त्व जानने के हेतु हैं सो वादों से कभी नहीं जाना जायगा, क्योंकि वहां तक बुद्धि जाती नहीं ''यतो वाचो निवर्तते अप्राप्य मनसा सह'' ''यद्वाचा नाभ्युदितं''। सनत्सुजात में भी ''न तं विदुर्वेदविदो न वेदाः'', ''नेदं यदिदमुपासते'', ''वेदान्तकृद्वेदविदेव चाह'', ''शब्दब्रह्म सुदुर्बोधं प्राणेन्द्रिय-मनोमयं। अनन्तपारगम्भीरं दुर्विगाह्यंसमुद्रवत्'', ''नैतन्मनो विशति वागपि चक्षुरात्मा प्राणेन्द्रियाणि च।'' इत्यादि से ईश्वर की वादों से दूरता स्पष्ट है और वेद भी उस के विषय में नेति नेति कहते हैं तब व्यर्थ वाद क्यौं करना क्योंकि उस की प्रतिज्ञा है ''भक्त्याहमेकया ग्राह्यः''। इस से वादों को छोड़ कर केवल उस पर विश्वास करना।

76. ॐ भक्तिशास्त्राणि मननीयानि तदुद्बोककर्म्मण्यपि करणीयानि।

भक्ति शास्त्रों को मनन करना और उस (भक्ति) को बढ़ाने वाले कर्मों को करना।

वाद छोड़ कर केवल सिद्धान्त स्वरूप भक्तिशास्त्रों को देखना और उन का चिंतन करना आचार्यों और भगवज्जनों और सिद्धान्तों के रहस्य को जानना और भक्ति बढ़ाने वाले उत्सव, सत्संग, तीर्थाटन, कथा श्रवण, तदीयों से अलाप, भगवत्सेवा और गुरु-शुश्रूषा इत्यादि कर्म करना इस से भक्ति प्रतिक्षण वर्द्धमान रहेगी।

77. ॐ सुखदुःखेच्छालाभादित्यक्ते काले प्रतीक्ष्यमाणे क्षणार्द्धमपि व्यर्थं न नेयं।

सुख, दुःख, इच्छा, लाभादि [का अभिमान] छोड़ कर काल की प्रतीक्षा करते हुए भी आधा क्षण भी व्यर्थ न बिताना।

यद्यपि इच्छादि के परित्याग से पूर्ण काम हो गए हैं और कुछ कर्तव्य है नहीं तथापि भगवद्भजन बिना क्षण भर भी नहीं बिताना क्योंकि यह तो नित्य कार्य है। देखो मरने के समय करोड़ उपाय करो क्षण भर भी विशेष मनुष्य नहीं रह सकता ऐसे अनमोल क्षण को व्यर्थ बिताना मूर्खता की बात है।

78. ॐ अहिंसासत्यशौचदयाऽस्तिक्यतादिचारित्र्याणि पालनीयानि॥

अहिंसा, सच्चाई, शुद्धि दया, आस्तिकता आदि सब चारित्र्यों का पालन करना।

क्योंकि सत्व गुण के ये सब कृत्य हैं। इन के न करने से वा विरुद्ध करने से तमोगुण की प्रवृत्ति होती है और भक्ति में बाधा होती है।

79. ॐ सर्वदासर्वभावेन निश्चिन्तैर्भगवानेन भजनीयः।

सर्वदा सब प्रकार से निश्चिन्त होकर भगवान ही का भजन करना।

साधारण शिक्षा देकर सिद्धान्त की शिक्षा देते हैं कि सर्वदा सब काल में दुःख में सुख में अनेक कर्मों में प्रवृत्त रहने के समय भी सर्व भाव से अर्थात् उस को अपना सर्वस्व मान कर केवल उसी का भजन करना और भजन भी निश्चिन्त होकर करना, क्योंकि जो किसी प्रकार खटका रहता है तब भजन भलीभांति नहीं होता।

80. ॐ स कीर्त्यमानश्शीघ्रमेवाविर्भवत्यनुभावयति भक्तान्।

वह गाए जाने से शीघ्र ही प्रकट होता है और अपने भक्तों को अनुभव कराता है।

सो तो उस की प्रतिज्ञा ही है ''नाहं वसामि वैकुण्ठे योगिनां हृदये न च। मद्भक्ता यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद।'' और नारद जी ने भी कहा है ''प्रगायतःस्ववीर्याणि तीर्थपादः प्रियश्रवाः। आहूत इव में शीघ्र दर्शनं याति चेतसि॥'' श्रीमहाप्रभु जी ने भी

कहा है ‘‘क्लिश्य मानान्जनान्दृट्वा कृपायुक्तोवदाभवेत्। तदा सर्व सदानन्दं हृदिस्थं निर्गतं बहिः सदानन्दमयस्यापि कृपानन्दःसुदुर्लभः। हृद्गतःस्वगुणान् श्रुत्वा पूर्णः प्लावयते जनान्॥’’ और श्री महाप्रभु जी का ‘‘स्वयशोगानसंहृष्टहृदयाम्भोजविष्टरः। वशःपीयूषलहरीप्लावितोन्यरसः परः॥’’

81. ॐ त्रिसत्यस्य भक्तिरेव गरीयसी भक्तिरेव गरीयसी।

त्रि (काल में) सत्य [भगवान] की भक्ति ही सब में [साधनों में] बड़ी है, भक्ति ही बड़ी है।

‘‘भक्त्यैव तुष्टिगम्येति विष्णुर्नान्येन केनचित्। प्रीयतेमलया भक्त्या हरिरन्यद्विडम्बनं॥’’ ‘‘भक्त्या तुतोष भगवान् गजयूथपाय’’, ‘‘भक्त्याहमेकया ग्राह्यः’’ ‘‘भक्तिः पुनाति मन्निष्ठा’’, ‘‘भक्त्या मामभिजानाति’’, ‘‘भक्त्यैकलभ्यो पुरुषोत्तमो हि’’, ‘‘भक्तिमान् यः स मे प्रियः’’, ‘‘भक्तियोगेन सेवते’’, ‘‘भक्त्यैकलभ्ये पुरुषे पुराणे मुक्त्यै, किमर्थं क्रियते प्रयत्नः’’, ‘‘धर्मार्थकामैः किं तस्य मुक्तिस्तस्य करे स्थिता। समस्तजगतां मूले यस्य भक्तिः स्थिरा करे॥’’ ‘‘ब्रह्मसंस्थोमृतत्वमेति’’, ‘‘मयि भक्तिर्हि भूतानाममृतत्वाय कल्पते’’, ‘‘तन्निष्ठस्य मोक्षापदेशात्’’, ‘‘संस्थस्यामृतोपदेशात्’’, ‘‘सकृदेव प्रपन्नय तवास्मीति प्रयाचते। अभयंसर्वभूतेभ्यो ददाम्येतद्व्रूतं मम॥’’ ‘‘भक्त्या त्वनन्यया शक्यः’’, ‘‘भक्त्यालभ्यस्त्ध्यनन्यया’’, ‘‘श्रद्धावान् भजते यो मां स मेयुक्ततमो मतः’’, ‘‘भक्तिप्रियोमाधवः’’, ‘‘मयि संजायते भक्तिः कोन्योस्यार्थोवशिष्यते’’, ‘‘यो मे भक्त्या प्रयच्छति॥ तदहंभक्त्युपहृतं’’, ‘‘अण्वप्युपहृतं भक्त्यैः प्रेम्णा भूर्येव में भवेत्’’, ‘‘श्रेयोभिर्विविधैश्चान्यैः कृष्णे भक्तिर्हि साध्यते’’, ‘‘अपि यः सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक्’’, ‘अहं भक्त पराधीनो’’ इत्यादि वेद, उपनिषत्, श्रीमुखवाक्य, रामायण, भारत, स्मृति, व्याससूत्र, शांडिल्यसूत्र, पुराण और तन्त्रों से सिद्ध है कि सब साधनों में मुख्य साधन केवल भक्ति ही है। विस्तरभयात् विशेष प्रमाण नहीं दिया।

82. ॐ गुणमाहात्म्यासक्ति 1 रूपासक्ति 2 पूजासक्ति 3 स्मरणासक्ति 4 दास्यासक्ति 5 सख्यासक्ति 6 कान्तासक्ति 7 वात्सल्यासक्ति 8 आत्मनिवेदनासक्ति 9 तन्मयतासक्ति 10 परमविरहासक्ति 11 रूपा एकधाप्येकादशधा भवति।

(यह भक्ति) एक रूप ही होकर गुणमाहात्म्यासक्ति, रूपासक्ति, पूजासक्ति, स्मरणसक्ति, दास्यासक्ति, सख्यासक्ति, कान्तासक्ति, वात्सल्यासक्ति, आत्मनिवेदनासक्ति, तन्मयतासक्ति और परमविरहा सक्ति रूप से एकादश प्रकार की होती है।

इस से श्रवणादिक नवधा भक्ति गौण है, इस का निषेध किया क्योंकि नारद जी का मत है कि भक्तिबीज के हृदय में उत्पन्न होने के पूर्व जो श्रवणादिक है उन को श्रवणभक्ति नहीं कह सकते और यह पूर्वोक्त जो श्रवणादिक है वे शुद्धा भक्ति से भिन्न नहीं है अतएव प्रति शब्द के साथ आसक्ति का शब्द दिया है। जो

यह शंका करो कि जिन को प्रेम सिद्ध है उन को तो पूर्वोक्त आसक्तियां होगी सो, नहीं यह विशेष आसक्ति परत्व है। जैसे प्रेमियों को अपने प्रेम पात्र का सब ही अंग सुन्दर लगता है तथापि प्रतिप्रेमी को अपने प्रेमपात्रों में कोई अंग वा चेष्टा विशेष मोह के विषय होते हैं, वैसे ही पूर्ण प्रेमियों को यद्यपि सब ही आसक्तियां सिद्ध हैं तथापि किसी को किसी में विशेष रुचि है किसी को किसी में है। श्रवणादिकों को गौणी भक्ति मानने में एक बड़ा दोष यह है कि जैसे अर्जुन सख्य के वा श्री हनुमान जी दास्य के अधिकारी हैं तो जिस के मत में यह भक्तिया गौण है उन के मत से ये भक्त भी गौण हुए। तो इस सूत्र से शुक, प्रह्लाद, हनुमान, अर्जुन, बलि, विभीषण आदि एक एक भक्ति के विशेष अधिकरी महानुभावों को गौण भक्त कहने वालों का मत परास्त हुआ और सिद्ध हुआ कि प्रेम एक ही वस्तु है जो केवल रुचि की विचित्रता से अलग अलग छलावे दिखाता है। इन में तन्मयतासक्ति तथा परम विरहासक्ति वियोगी भक्तों को सिद्ध है, शेष आसक्तियां संयोगी और वियोगी दोनों को सिद्ध हैं और किसी किसी भक्त को एक एक आसक्ति सिद्ध हैं, परंतु किसी को दो तीन भी सिद्ध हैं और श्री गोपीजन को तो सभी सिद्ध हैं।

1. ''गुणमाहात्म्यासक्ति''—जैसा परीक्षित को, नारद को तथा हनुमान जी को और श्रीपृथुराजा को, जिस ने केवल हरिगुण-श्रवण के अर्थ दस हजार कान मांगे थे। परीक्षित ने कहा है ''नैषातिदुःसहा क्षुन्मां त्यक्तोदमपि वाधते। पिबतं त्वन्मुखांभोजच्युतं हरिकथामृतम्''॥ नारद जी का वाक्य ''देवदत्तामिमां वीणां स्वब्रह्मविभूषितां। मूर्छयित्वा हरिकथां गायमानश्चराम्यहम्'', ''प्रगायतः स्वीवीर्याणि तीर्थपादः पृथुश्रवाः। आहूत इव मे शीघ्रं दर्शनं याति चेतसि''॥ हनुमान जी का तो ध्यान ही है ''यत्र यत्र रघुनाथकीर्तनं तत्र तत्र कृतमस्तकांजलिं। वाष्पवारिपपरिपूर्णलोचनं मारुति नमत राक्षसांतकं।'' तथा अपने मुंह से [रामायण उत्तरकांड 107 सर्ग 31 श्लोक] ''यावत्तव कथा लोके विचरिष्यति पावनी। तावत् स्थास्यामि मेदिन्यां तवाज्ञामनुपालयन्''। तथा [श्रीमद्भागवत पंचम स्कन्ध 19 अध्याय 8 श्लोक] सुरोऽसुरो वाप्यथवा नरोऽनरः सर्वात्मना यः सुकृतज्ञमुत्तमं। भजते रामं मनुजाकृतिं हरिं य उत्तरामनयत् कोशलान्दिवं''।

2. रूपासक्ति दो प्रकार की होती हैं—एक किशोररूप में एक बालरूप में। बाल रूप से श्री मातृचरण श्री नन्दोपनन्दादिक वृद्ध ब्रजवासियों को तथा किशोर रूप में ब्रज की स्त्री पुरुष पशु पक्षि मात्र को। जैसा ''अहो अमी देववरामरार्चितं'' इत्यादि श्लोकों में श्रीकुख से भी कहा है और ''अक्षणवतां फलमिदं न परं विदामः'' इत्यादि वेणुगीत के श्लोकों में तथा ''वामबाहुकृतवामकपोलो'' इत्यादि युगलगीत के श्लोकों से सिद्ध है।

3. ''पूजासक्ति'' महाराज पृथु को, जैसा उन्होंने कहा है ''यत्पादसेवाभिरुचिस्तपस्विनामशेषजन्मोपचितं मलंधियः। सद्यःक्षिणोत्यन्वह मेधतीसती यथा पदांगुष्ठाविनिःसृता सरित॥'' इत्यादि।

4. "स्मरणासक्ति" परम भागवत प्रह्लाद को, जैसा "सोऽहं प्रियस्य सुहृदःपरदेवताया लीलाकथास्तवनृसिंह विरंच्यगीताः। अंजस्तिर्म्यनु गुणान् गुणविप्रमुक्तो दुर्गाणि ते पदयुगालयहससंगः॥" इत्यादि।

5. "दास्यासक्ति" परमभागवत प्रह्लाद और हनुमान आदि को, जैसा प्र्लाद जी का वाक्य "आयुः श्रियं विभवमैंद्रियमाविरिंच्यात् नेच्छामि ते विलुलितानुरुविक्रमेण। कालात्मनोपनय मां निजभृत्यपार्श्व॥" तथा हनुमानजी का वाक्य "दासोऽहं कोशलेन्द्र रामस्याक्लिष्टकर्मणः।" इत्यादि और यथा अक्रूर जी का वाक्य "अहं हि नारायणदासदासो दासानुदासस्य च दासदासः"॥ विदुर जी का वाक्य "वासुदेवस्य ये भक्ताश्शान्तास्तद्गतमानसाः। तेषां दासस्य दासोऽहं भवेयं जन्मजन्मनि॥" इत्यादि। तथा उद्धव जी और युधिष्ठिर को तो हरिदास नाम ही मिला है।

6. "सख्यासक्ति" जैसा अर्जुन, सुग्रीव, उद्धव, कुबेर, सुदामा, देव, सुबल, श्रीदामादि, गरुड़ इत्यादि और कभी-कभी हनुमान जी को भी हो सकती है। अर्जुन को श्रीमुख से कहा है "भक्तोसि मे सखा चेति" तथा अर्जुन का वाक्य "सखेति मत्वा प्रसभं यदुक्तं हेकृष्ण हे यादव हेसखेति" तथा श्रीमद्भागवत "नर्माण्युदाररुचिरस्मितशोभितानि हेपार्थ हेऽर्जुन सखे कुरुनन्दनेति। संजल्पितानि नरदेवहृदिस्पृशानि स्मर्तुर्लुठन्ति हृदयंमम माधवस्य॥ शय्यासनाटनविकत्थनभोजनादिष्वैक्याद्वयस्य कृतवानिति विप्रलब्धः। सख्युः सखेव पितृवत्तनयस्य सर्वं सोहेमहान्म हितयान्कुमतेरघ मे॥"

तथा "वा प्रीतिरविवेकानां विषयेष्वनपायिनी। त्वामनुस्मरतः सा मे हृदयान्मापसर्पतु॥" उद्धव जी की "वैष्णीनां प्रवरो मंत्री कृष्णस्य दयितः सखा॥" "श्रीमुखवाक्य भी "नोद्धवोण्वपि मन्नूयूनो यद्गुणौर्नार्दितः प्रभुः" "न तथा मे प्रियतमो आत्मयोनिर्न शंकरः। न च संकर्षणो न श्रीनवात्मा च यथा भवान्"। उद्धवजी का वाक्य "शय्या सनाटनस्थानस्नानक्रीडाशनादिषु। कथं त्वां प्रियमात्मनानं वयं भक्तास्त्यजेमहि॥" तथा "मंत्रेषु मां वा उपहृय यत्त्वमकुण्ठिताखण्डसदात्म बोधः। पृच्छेः प्रभो मुग्ध इवाप्रमत्तस्तन्नो मनो मोहयतीव देव"॥ कुवेर की श्रीशिवजी में यथा मनुजी का वाक्य "हेलनं गिरिशभ्रातुर्धनदस्य त्वया कृतं" तथा श्रीशुकदेव जी का वाक्य "उपास्यमानं सख्या च भर्त्रा गुह्यकरक्षसां।" कोश में भी "कुबेरः त्र्यम्बकसखा" इत्यादि। सुबलश्रीदामादि की यथा "श्रीदामा नाम गोपालो रामकेशवयोः सखा। सुबलस्तोककृष्णाद्या गोपाः प्रेम्णेदमब्रुवन्। एवं सुहृद्वचः श्रुत्वा सुहृत्प्रियचिकीर्षया" इत्यादि। दशम के 18 अध्याय में सब इन्हीं लोगों के सख्यत्व की सीमा लिखी है। श्रीसुदामा जी की यथा "कृष्णस्यासीत्सखा कश्चिद् ब्राह्मणायो ब्रह्मवित्तमः। ननु ब्रह्मन् भगवतः सखा साक्षाच्छ्रियः पतेः"॥ जिस का भगवान ने ऐसा आदर किया "तं विलोक्याच्युतो दूरात्प्रियापर्यंकमास्थितः। सहसयोत्थाय चाभ्येव दोर्भ्यां पर्यग्रहीन्मुदा॥ सख्युः प्रियस्य विप्रर्षे रंगसंगातिनिर्वृतः। प्रीतो व्यमुंचदब्बि दून्नेत्राभ्यां पुष्करेक्षणः॥ अथोपवेश्य पर्यंके स्वयं सख्युः समर्हणं। उपहृत्यावनिज्यास्य पादौपादावनेजनीः॥ अग्रहीच्छिरसा राजन् भगवाल्लोकपावनः। कुचैलं

मलिनं क्षामं द्विजं धर्मनिसंततं॥ देवी पर्यचरच्छैब्या चामरब्यजनेन वै॥ योसौ त्रिलोकगुरुणा श्रीनिवासेन संभृतः। पर्यंकस्थां श्रियं हित्त्वापरिष्वक्तोऽग्रजो यथा॥'' जिस के चावल भगवान ने आप ही छीन कर खाए और ''सख्युः प्रियचिकीर्षया'', ''परमप्रीणनं सखेः'', ''पर्यंके भ्रातरौ यथा', ''दाशार्हकाणमृषभः सखा मे'', ''सुहृत्कृतं फलवपि भूरिकारि'', ''तस्यैव में सौहृदसख्यमैत्री'', ''एवं स विप्रो भगवत्सुहृत्तदा'' इत्यादि। गरुड़ की जैसी ''भगवान् भगवत्प्रियः'', ''विनतासुतांसेविन्यस्तहस्तमपरेण धुनानमब्जं।'' तथा हनुमान जी की ''न जन्म नूनं महतो न सौभगं नवाग् न बुद्धिर्नाकृतिस्तोवहेतुः। तैर्यद्विसृष्टानपि नोवनौकसश्चकार सख्ये वत लक्ष्मणाग्रजः॥'' तथा सुग्रीव की (वाल्मीकि रा. किष्किन्धा षष्ठ सर्ग श्लोक 12) ''तमब्रवीत्ततो रामः सुग्रीवं प्रियवादिनं। आनयस्व सखे शीघ्रं किमर्थं प्रविलम्बसे॥'' तथा सुग्रीव का वाक्य (7 सर्ग श्लोक 13) ''हितं वयस्यभावेन ब्रुवे नोपदिशामि ते। वयस्यतां पूजयन्मे न त्वं शोचितुमर्हसि'' तथा श्रीरामजी का वाक्य (7 सर्ग श्लोक 16) ''कर्तव्यं यद्वयस्येन स्निग्धेन च हितेन च। अनुरूपं च युक्तञ्च कृतं सुग्रीव तत्त्वया॥ एष च प्रकृस्थिोहमनुनीतस्तया सखे। दुर्लभोहीदृशो बंधुरस्मिन् काले विशेषतः॥'' इत्यादि।

7. ''कान्तासक्ति''—यथा श्री गोपीजन को। यद्यपि श्री गोपीजन को सभी आसक्तियां सिद्ध हैं यह पहले लिख आए हैं और विरहासक्ति में निरूपण भी करेंगे तथापि श्री गोपीजन की आसक्तियों में कांतासक्ति अंगीभाव से है जो ''कृष्ण विदुः परं कान्तं'' इत्यादि वाक्यों से सर्वत्र सिद्ध है।

8. ''वात्सल्यासक्ति''—श्रीनंद, यशोदा, कौशल्या, दशरथ, सुमित्रा, कश्यप, अदिति, धनिष्ठा, श्री वृषभानु, कीर्तिदा, पूर्णमासी इत्यादि को।

9. ''आत्मनिवेदनासक्ति''—यथा बलि को ''सर्व्वत्वात्मनिवेदने बलिरभूत्।'

10. ''तन्मयासक्ति''—यथा श्री शिव जी को, जिन का अभेद पुराणों से सिद्ध है।

11. ''परमविरहासक्ति''—यथा श्री उद्धवादि को ''योगेन कस्तद्विरहं सहेत'' इत्यादि।

तथा श्रीगोपीजन को

अथ श्रीगोपीजन में सभी आसक्तियां सिद्ध हैं, यह दिखाते हैं।

1 ''गुणमहात्म्यासक्ति'' श्री गोपीगीत, वेणुगीत, युगलगीत, भ्रमरगीत आदि से सिद्ध है॥ 2 ''रूपासक्ति'' गोपीनां परमानंद आसीद्गोविन्ददर्शने। क्षणं युगशतमिव यासां येन विनाभवत्॥ अपरानिमिषत्दृष्भ्यां जुषाणा तन्मुखांबुजं। आपीतमपि नातृप्यत्सन्तस्तच्चरणं यथा॥'' इत्यादि से। 3. ''पूजासक्ति'' फल फूलादि दान से 4 ''स्मरणसक्ति'' ''स्मरंत्यः कृष्णचेष्टितं'' ''शिरस्सु च किंकरीणां' इत्यादि से। 6 ''सख्यासक्ति' ''सखउदेयिवान्॰ भजसखेभवत्॰ कितवयोषितः॰ इत्यादि 7. ''कान्तासक्ति'' ''कान्तकामदं'', ''प्रेष्ठोभवान्'', ''दयितदृश्यतां'', ''सुरतनाथते'' इत्यादि वाक्यों से।

8. वात्सल्यासक्ति—''गोप्यः सुमृष्टमणिकुण्डल'' से, दामोदरलीला आदि में स्पष्ट। 9. आत्मनिवेदनासक्ति'' ''यः पत्यपत्य' इत्यादि श्लोकों से। 10. ''तन्मयता सक्ति'' ''कृष्णोहं'' इत्यादि वाक्यों में। 11. ''परमविरहासक्ति'' ''क्षणं युगशतमिव'' इत्यादि से। और इन श्री गोपीजन को नित्य लीला में श्रीमुख का दर्शन होते भी केवल पलक की ओट में जिन का परम वियोग होता है और कहती हैं कि हे निर्दई विधना इस मुखचंद्र देखने के हेतु तुझ को रोम रोम में आंखें बनानी थीं उस के बदले यह उलटा अंधेर किया कि बिना बात की पलक बना दी। तो जिन का प्रेम और विरह इतना सीमा के बाहर है उन की ये सब आसक्तियां सिद्ध हों, इस में क्या आश्चर्य है। जिन की चरणारविंद की रेणु के प्रसाद से लोग प्रेम पथ के अधिकारी हो सकते हैं उन के प्रेम क्या पूछना है। भक्तिमार्ग के उद्धारकर्ता श्री आचार्य्य जी ने जिन की स्पृहा की है यथा ''गोपिकानां च यद्दुःखं तद्दुःखं स्यान्मम क्वचित्'॥ और जिन को अपने मार्ग का गुरु लिखा है यथा ''गोपिका प्रोक्ता गुरवः साधने मता'' तो अब इस से बढ़ कर उनके आदर के हेतु वा प्रमाण के हेतु हम क्या लिखैं वा क्या कहैं।

ये प्रेम के ग्यारह अलग अलग भेद नहीं हैं, किंतु स्वरूप है क्यौंकि जो अलग होती तो जिस को एक सिद्ध हो उस को दूसरी न होती और यदि दो सिद्ध होंगी तो एक से जिस को दो सिद्ध हों उस की विशेषता होगी और प्रेमियों में कोई छोटा बड़ा नहीं इस से भक्ति एक ही है केवल प्रेमियों की रुचि भेद से अलग दिखाती है।

83. ॐ इत्येवं वदन्ति जनजल्पनिर्भया एकमताः कुमारव्यासशुकशाण्डिल्यगर्ग विष्णुकौण्डिन्यशेषोद्धवारुणिबलिहनुमद्विभीषणादयो भक्त्याचार्याः।

कुमार (सनकादिक), व्यासजी, शुकदेवजी, शाण्डिल्य, गर्गाचार्य, विष्णु, कौण्डिन्य, शेष उद्धवजी, आरुणी, बलि, हनुमानजी, विभीषण आदि भक्ति के आचार्य लोक के उपहास से निर्भय हो कर पूर्वोक्त मार्ग कहते हैं॥

कुमार—सनकादिक, इनका प्रेममार्ग निम्बार्कमत के नाम से प्रसिद्ध है। भगवान ने इन लोगों से अपना तत्त्व हंस का स्वरूप लेकर कहा है और इन की वंशपरंपरा मन्वन्तर वर्णन में श्रीमद्भभागवत में लिखी है ''महर्षयः सप्त पूर्वे चत्वारो मनवस्तथा। मद्भावा मानसा जाता येषां लोक इमाः प्रजाः''॥ और प्रमाणिक स्मार्तों के निबंधों में भी एकादशी के प्रसंग में 45 दंड का बेध मानने वालों का इनका मत ''कपालवेधमित्याहुराचार्या ये हरिप्रियः'' ''निम्बार्को भगवान्येषामित्याहुः सनकादयः॥'' इत्यादि वाक्यों से प्रमाण कर के लिखते हैं और निम्बार्काचार्य ने अपना परमाचार्य इन्हीं लोगों को माना भी है जैसा उन्होंने दशश्लोकी में कहा है ''उपासनीयं नितरां जनैः सह प्रहाणयेऽज्ञानतमोनिवृत्तये। सनदनाधैर्मुनिभिर्यथोक्तं श्रीनारदायाखिलतत्वसाक्षिणे॥'' इत्यादि। और लोग तो भक्तिसाधनार्थ ही प्रकट हुए हैं क्यौंकि यद्यपि उन्होंने अपना शिष्यरूपी वंश तो स्थापन किया, पर पिता की आज्ञा भी न मान कर मोह करनेवाली

और सृष्टि न की, यथा ''ते नैच्छन्मोक्षधर्माणो वासुदेवपरायणः'' इत्यादि। वरंच भक्तिस्थापनार्थ यह भगवान् ही का अवतार है ''तप्तुन्तपो विविधलोकसिसृक्षया मे वादौसनात स्वतपसः स चतुःसनोऽभूत्। प्राक्कल्पसंप्लवविनष्टमिहात्मतत्वं सम्यग् जगाद मुनयो यदचक्षतात्मन्॥'' इति

व्यास—व्यासजी ने तो मुक्तकंठ होकर कहा ही है कि ''आलोड्य सर्वशास्त्राणि विचार्य च पुनः पुनः। इदमेकं सुनिस्पन्न ध्येयो नारायणः सदा॥'' इत्यादि। जो कहो कि अनेक पुराणों में व्यास जी ने अनेक मत और उपसना कही है तो उस में भक्ति की विशेषता कहां आई तो यह शंका मत करना क्यौंकि व्यास जी को तो दृढ़ प्रतिज्ञा है ''वेदे रामायणे चैव पुराणे भारते तथा। आदावन्ते च मध्ये च हरिः सर्वत्र गीयते॥'' इत्यादि इन को भक्ति मिलने का विशेष वर्णन भक्तवंशपरंपरा में मिलैगा।

शुकदेवजी—शुकदेवजी ने राजा से पहिले ही सिद्धांत स्वरूप कहा है ''देहापत्यकलत्रादिष्वात्ममैन्येषूवसतूस्वपि। तेषां प्रमत्ते निधनं पश्यन्नपि न पश्यति॥ तस्माद्भारत सर्वात्मा भगवान्हरिरीश्वरः। श्रोतव्यः कीर्तितव्यश्च स्मर्तव्यश्चेच्छताभयं॥ एतावान् सांख्योभाग्यां स्वधर्मपरिनिष्ठया। जन्मलाभः परः पुंसामंते नारायणस्मृतिः॥ प्रायेण मुनयोराजन् निवृत्ता विधिनिषेधतः। नैर्गुण्यस्या रमन्तेस्म गुणानुकथने हरेः॥ इत्यादि''। क्यौं न कहें? वेद जिन को मुक्त लिखता है ''शुको मुक्तो वामदेवो वा'' और भगवान की माया जिन को कभी व्यापी ही नहीं, जिन को देख कर स्त्रियों ने भी लज्जा न की, जिन्होंने पिता को वृक्षों में से उत्तर दिया और प्रेम मार्ग का सिद्धांत स्वरूप श्रीमद्भागवत प्रकट करके राजा परीक्षित को मोक्ष दिया तथा सप्ताह में भी बीच-बीच में जब लीला स्मरण आती थी तब बेसुध हो जाते थे, उन के प्रेम का निरूपण यहां क्या हो सकता है।

शाण्डिल्य—शाण्डिल्य जी ने तो स्वतंत्र भक्तिशास्त्र ही रचा है, जिस में ज्ञान,योगादि से भक्तिसाधन ही उत्तम कहा है।

गर्ग—गर्गाचार्य अपनी गर्गसंहिता में अनेक प्रकार के भक्ति के रहस्य तथा यादव आदि के नष्ट होने पर जब भगवत्तत्व को जानने वाला कोई नहीं रहा व व्रजनाथ ने अनेक प्रकार का रहस्य, जो व्रज में तथा उद्धव नारदादिकों के मुख से सुना था, कह कर फिर से भक्तिमार्ग का स्थापन किया। इन को वात्सल्य और दास्य दोनों भक्ति सिद्ध थी।

विष्णु—लोक में जिन का नाम विष्णुस्वामी प्रसिद्ध है। विशेष वर्णन परंपरा में देखो।

कौण्डिन्य—कौण्डिन्य के विषय में हम इतना ही ज़ानते हैं कि हमारे आचार्य ने अपनी गुरुपरंपरा में श्रीगोपीजन के समान इन को भी माना है यथा ''कौण्डिन्यो गोपिकाः प्रोक्ता गुरवः'' इति और जिन को तन्मयतासक्ति थी। जिन को इस आसक्ति से वृक्षों में भी सर्वत्र श्री अनंत का प्रत्यक्ष दर्शन हुआ था।

शेष—शेषजी ने केवल दास्य भक्ति की शिक्षा के हेतु श्री लक्ष्मण जी का स्वरूप लेकर संसार को दिखाया कि दास्य इस का नाम है और इस रीति करना होता है और आप ने भी पंचवटी में अपने सब गुप्त सिद्धांत उपदेश किए तथा श्री लक्ष्मी जी और गरुड़ जी से नारायणीय सिद्धांत पाकर उन्होंने त्रिकेतु इत्यादि को उपदेश किया, जो मत अब तक रामानुजीय नाम से प्रसिद्ध है और जिस में यामुन, शठकोप इत्यादि महात्मा और अग्रस्वामी इत्यादि प्रेमी हुए।

उद्धव—उद्धवजी का क्या पूछना है जिन को प्रेमपात्र और प्रेमी अर्थात् श्रीभगवान तथा श्री गोपीजन ने आप अपने मुख से प्रेममार्ग का उपदेश किया है, उन की क्या बात है ये वही उद्धव जी हैं जिन को छोटेपन से खेल ही में भगवत्पूजा का व्यसन था और जिन को भगवान ने अपना तत्त्व संसार में स्थापन करने के हेतु ब्रह्मशाप उल्लंघन कर के पृथ्वी में छोड़ा, उन का क्या पूछना है।

आरुणि—इन्हीं का नामांतर निम्बार्क है और ये सनकादिकों के मत के प्रवर्तक हैं और इनके दश श्लोक जो मिलते हैं, उन में युगल स्वरूप की भक्ति का सिद्धांत किया है।

व्यूहांगिनं ब्रह्मपरं वरेण्यं ध्यायेम कृष्णं कमलेक्षणं हरिं। अंगेतु वामे वृषभानुजां मुदा विराजमानामनुरूपसौभगां॥ सखीसहस्रैः परिसेवितां सदा स्मरेम देवीं सकलेष्टकामदाम्। ये बड़े प्राचीन हैं क्योंकि श्रीमद्भागवत में वेदस्तुति में इनका मत कहा है और जहां परीक्षित राजा से मिलने के हेतु ऋषिगण आये हैं वहां भी इनका नाम है यथा ''राजर्षिवर्या अरुणादयश्च''। ये श्री स्वामिनी जी के कंकण के पूर्णावतार हैं अतएव इन को लोग सुदर्शनतत्व कहते हैं। किसी समय इन्होंने यतियों का निमंत्रण किया था। उनके आने में विलंब हुआ और जब भोजन करने बैठे तब सांझ हो गई, इस से उन यतियों ने कहा कि अब हम नहीं खायेंगे; तब इन्होंने कहा कि आप लोग खाइये अभी सूर्य है और आप नीम पर चढ़कर सूर्य बन के दर्शन दिया, अतएव निम्बार्क नाम पड़ा। इन के सेव्य श्री स्वरूप श्रीगोपीजनवल्लभजी और शालग्राम सर्वेश्वर जी अभी विद्यमान हैं तथा श्रीनिवासाचार्य, पुरुषोत्तमाचार्य इत्यादि धुरंधर पंडित और हरिवंश जी, व्यासजी, स्वामी हरिदास जी इत्यादि प्रेमी इन्हीं के संप्रदाय में हुए हैं।

बलि—इन को सर्वस्वात्मनिवेदन भक्ति सिद्ध थी। अपने पितामह साक्षात् प्रह्लाद जी से उपदेष्टा और भगवान् से पात्र पावैं तो फिर इन का क्या पूछना है। कहते हैं कि यतीन्द्र, बलि, अंबरीष और विश्वक्सेन नाम के किसी काल में प्राचीन चार वैष्णव संप्रदाय थे, परंतु अब सब लुप्त हुए।

हनुमान—श्रीहनुमान् जी की दास्यभक्ति का वर्णन ऊपर दास्य भक्ति निरूपण में कह आये हैं और क्या कहैं, केवल भगवान की कथा-श्रवण के हेतु जिन का जीवधारण है, उन के प्रेम का माहात्म्य कौन कह सकता है? क्योंकि उन्होंने भगवान से यही वर मांगा है कि ''यावत्तव कथा लोके विचरिष्यति पावनी। तावत्स्थास्यामि मेदिन्यां

तवाज्ञामनुपालयन्।'' और जिन का मत अद्यापि श्रीभगवान के मुखारविंद से सुने हुए विष्णुत्व के अनुसार''मध्वमत'' नाम से प्रसिद्ध है।

विभीषण—इन्होंने कुसंगति में रह कर भी भगवद्भक्ति लोगों को सिखाई, वरञ्च ''सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति च या चे। अभयं सर्व भूतेभ्यो ददाम्येतद्व्रतं मम॥'' यह जगदुपकारिणी प्रतिज्ञा इन्हीं के हेतु हुई है।

84. ॐ य इदं नारदप्रोक्तं शिवानुशासनं विश्वसति श्रद्धधते स भक्तिमान् भवति स प्रेष्ठं लभते स प्रेष्ठं लभते इति।

इस नारद जी के कहे हुए शिवानुशासन पर जो विश्वास और श्रद्धा करता है वह भक्तिमान् होता है, वह प्यारे को पाता है, वह प्यारे को पाता है॥84॥

उपदेश कर के उस का फल कहते हैं। विशेष कर के प्रेष्ठ शब्द से यह दिखाया कि भगवान इत्यादि को ब्रह्म, विष्णु, नारायण, भगवान इत्यादि भावों से तो और लोग भी पावैंगे परंतु प्रियतम भाव से वही पावैगा जो इस प्रेमसूत्र पर विश्वास करैगा और प्रेममार्ग पर चलेगा।

इति नारदीये भक्तिशास्त्रे दशमोऽनुवाकः॥

यह श्रीनारद जी का कहा हुआ भक्तिशास्त्र दश अनुवाक में ''तदीयसर्वस्व'' नामक तदीयनामांकित अनन्यवीर वैष्णव हरिश्चंद्र कृत भाषाभाष्यसहित समाप्त हुआ॥

॥इति॥

[हरिश्चन्द्र मैगजीन के फरवरी सन 1874 ई. के अंक में अर्थ सहित प्रकाशित। सन 1876 ई. में भाष्य के साथ पुस्तकाकार प्रकाशित]

श्रुति रहस्य

श्रुति रहस्य

[नमः श्रीवल्लभाय श्रुतिवाक्यैस्तत्स्वरूपप्रदर्शकाय श्रीगिरिधिराय च]

वेद के अक्षर कामधेनु हैं और इसी कारण सब मतों के आचार्य लोग उन के जितने अर्थ करते हैं सब मान्य होते हैं। यदि उन में एक भी न माना जाय तो पूर्वाचार्यो पर आक्षेप होने से न मानने वाले नास्तिक गिने जाते हैं जैसे 'चत्वारिश्रृंगा' इस श्रुति का निरुक्तकार, महाभाष्यकार, रामानुजाचार्य, विद्यारण्य इत्यादि ने अनेक प्रकार का अर्थ किया है और ये सब अर्थकार ऐसे हैं कि उन में से एक के भी मानने बिना काम नहीं चलता तो सिद्धान्त यह हुआ कि श्रुति से जितने अर्थ निकलैंगे वे कोई अप्रमाण न होंगे। जैसा चत्वारिश्रृंगा के यहां सब अर्थ दिखाते हैं।

चत्वारिश्रृंगात्रयो अस्य पादा द्वेशीर्षे सप्तहस्तासा अस्य।
त्रिधा बद्धा वृषभो रोरवीति महोदेवो मर्त्या आविवेश॥

1. अक्षरार्थ

उसको चार सींग हैं, तीन पैर हैं, दो सिर हैं, सात हाथ हैं, तीन प्रकार से बंधा हुआ बैल चिल्लाता है, तेज देवता मरनेवालों में घुसा है।

अब यह केवल रूपक की भांति कूट हुआ इस को स्पष्ट करने को।

2. निरुक्तकार का अर्थ

यह श्रुति यज्ञ का प्रतिपादन करती है; चार वेद इसके चार सींग हैं; तीन स्रवन अर्थात् नीच, मध्य और उच्च स्वर ये तीन पैर हैं; प्रायणीय और उदयनीय ये दो सिर हैं; सात गायत्र्यादि छन्द इस के हाथ हैं; मन्त्र, ब्राह्मण और कल्प तीनों से बंधा हुआ यज्ञ वृषभ शब्द करता है, तेज का देवता मनुष्यों में इन के कल्याण के हेतु प्रवेश करता है।

3. महाभाष्यकार का अर्थ

यह श्रुति शब्दरूपी वृषभ के वर्णन में है यथा संज्ञा, क्रिया, उपसर्ग और निपात

ये चार इसके सींग हैं; और भूत भविष्यत् और वर्त्तमान ये काल तीन पैर हैं; नित्य और कार्य ये दो सिर हैं; सात विभक्तियां हाथ हैं, हृदय, कण्ठ और सिर तीन स्थानों में बंधा है, वर्णन में इसकी वृषभ संज्ञा है, शब्द करने वाला महान् देव (शब्द स्वरूप) मरण धर्म वाले मनुष्यों में प्रविष्ट होता है।

4. श्रीरामानुज का अर्थ

यह श्रुति ईश्वर के वर्णन में है, चारों वेद चार सींग हैं; नित्य, बद्ध और मुक्त तीनों प्रकार के जीव तीन पाद हैं; शुद्ध सत्व और गुणात्मक सत्व इस के दो सिर हैं अर्थात् शिरःस्थान में हैं, महत्त्वादि, सात प्रकृति और विकृति इस के सात हाथ हैं, ऐसा महादेव श्रेष्ठ वृषभ वासुदेव अपने संकर्षण प्रद्युम्न अनिरुद्ध इन तीनों रूपों से मनुष्यों में बंधता नाम प्रकट होता हुआ सब वस्तुओं को रोरवीति अर्थात् नाम-रूपवत् करता है और मर्त्य नाम चेतनाऽचेतन पदार्थों को अन्तरात्मा होकर प्रवेश करता है।

5. श्री विद्यारण्य का अर्थ

यह श्रुति प्रणव पर है, अकार, उकार, मकार और नाद ये इस के चार सींग हैं, अध्यात्म, विश्व और तैजस से तीन पाद हैं, चित् और अचित् ये दो शक्तियां शिरस्थान में हैं, भूरादि सात लोक सात हाथ हैं, विराट् हिरण्यगर्भ और व्याकृत इन तीन प्रकारों से बंधा हुआ वृषभ प्रणव ब्रह्म तेजोमयत्व का प्रतिपादन करता है।

6. श्री वल्लभाचार्यजी के मतानुयायी का अर्थ

यह श्रुति श्री पुष्टि लीलास्थ पूर्ण पुरुषोत्तम ही का प्रतिपादन करती है उन श्री पुरुषोत्तम के चार नित्य सिद्धादि यूथ शृंग अर्थात् उत्तम स्थान में है और उन के तीन पाद अर्थात् प्राप्ति होने के साधन तनुजा, चित्तजा और मानसी यह तीन प्रकार की सेवा हैं; सख्य और आत्मनिवेदन ये दो भक्तियां शिर अर्थात् सिद्ध स्थान में हैं; श्रवणादिक सात भक्तियां हाथ अर्थात् साधन स्थान में हैं; श्रीपुरुषोत्तम की पूर्वोक्त नौ प्रकार के भक्ति से युक्त जीव अलौकिक सामर्थ्य, सायुज्य और सेवा में उपयोगी देह धारण, इन तीन प्रकार से बंधा है; और उन की लीला के प्रवेश के अर्थ धर्म्म-स्वरूप वर्षा करनेवाले और शोभा करनेवाले वृषभ अर्थात् श्रीआचार्य्य रोरवीति नाम भक्तों को मन्त्र और ग्रन्थ द्वारा उपदेश करते हैं जिस से वर्ण धर्म्मा जीव अर्थात् सेवामार्गी जीव जब अधिकारी होते हैं तब महोदेव लीलास्थ पूर्ण पुरुषोत्तम उन में आवेश करके लीला का अनुभव कराते हैं।

7. श्रीवेणु पर अर्थ

यह श्रुति श्रीवेणु का प्रतिपादन करती है; गान में चार रीति की बानी चार

सींग हैं; कोमलादि तीन स्वर पाद हैं; मुख्य छिद्र वा लय और स्वर दो सिर हैं; सात रंध्र सात हाथ हैं; अधर दो हस्तों से बंधा हैं। ऐसा 'रुद्रो वै वेणुः' इस श्रुति से साक्षादुद्रस्वरूप वेणु 'श्रीगोपालमुपास्महे श्रुतिशिरावंशीरवैर्दर्शितं', इस से वेणु रूप ही धर्म मनुष्यों में प्रवेश करता है।

8. श्री संगीत पर अर्थ

यह श्रुति संगीत का भी प्रतिपादन करती है, इसके तत, बितत, धन और धमन चार सींग हैं, तीन ग्राम तीन पाद हैं, लय और स्वर दो सिर हैं; सात स्वर वा त्रिमूर्छना सप्तक सात हाथ हैं; कण्ठ, नाभि और मुख इन तीन स्थलों से बंधा संगीत रूपी वृषभ अर्थात् गान ब्रह्म मनुष्यों को तन्मय कर देता है।

9. साहित्य पर अर्थ

यह श्रुति साहित्य का भी प्रतिपादन करती है; इस के आरभट्यादि कथन चार सींग हैं; लक्षणा, व्यंजना और ध्वनि तीन पाद हैं; दृश्य और श्रव्य दो सिर हैं; चित्रादि सात हाथ हैं; गद्य, पद्य और गीत तीन रीति से बंधा है, ऐसा साहित्य रूपी वृषभ मनुष्यों को चित्त में उल्लास कर आनन्द देता है। यथा—

सुभाषितरसास्वाद बद्धरोमांचकंचुकाः।
विनापि कामिनीसंगं कवयः सुखमासते॥
सुभाषितेन गीतेन युवतीनां च लीलया।
यस्य न द्रवते चित्तं सवै मुक्तौऽथवा पशुः॥

[हरिश्चन्द्र मैगजीन मार्च, सन 1874 ई. में प्रकाशित]

143764

श्रीवल्लभीय सर्व्वस्व

(श्री श्री वल्लभाचार्यचरणकमलमिलिंदमरंद)

चिन्तासन्तानहन्तारो यत्पादांबुजरेणवः ।
स्वीयानां तान् निजाचार्यान् प्रणमामि मुहुर्मुहुः॥

श्रीवल्लभीय सर्वस्व

दक्षिण में तैलंग देश में आन्ध्र प्रान्त में आकबीडु जिला में, खम्मम कांकरिविल्ल ग्राम में यजुर्वेद तैत्तिरीय शाखा भारद्वाज गोत्र में महादेव पात्र के वंश के ब्राह्मण रहते थे। इसी वंश में रामनारायणभट्ट के पुत्र यज्ञनारायण सोमयागी हुए। वे वेद के अवतार थे। इन पर वेद पुरुष अत्यन्त ही प्रसन्न रहते थे। जब इन को वेद में कोई सन्देह होता तब स्नान करके वेद पुरुष का ध्यान करते और वेद पुरुष प्रत्यक्ष होकर सन्देह नाश कर देते।

एक बेर मायावादियों ने हंसी से इन से कहा कि आप वेद के अवतार हो तो बकरे से वेद पढ़वावो। तब यज्ञनारायण जी ने बकरे की ओर देख कर कहा ''भोलुलायत्वं वेदानुच्चारय।'' इतना सुनते ही बकरा वह पाठ करने लगा। ऐसे ही दक्षिण में उनने अनेक चमत्कार दिखाए। ये श्री रामानुजाचार्य्य मत के बड़े पंडित थे।

जब यज्ञनारायण जी ने पहिला सोमयाग किया तब अग्निकुंड में से यह शब्द सुन पड़ा कि ऐसे सौ सोमयाग के पीछे भगवान का अवतार होता है। बत्तीस सोमयाग कर के ये देवलोक पधारे।

इन के पुत्र गंगाधरभट्ट सोमयागी साक्षात शिवजी के अवतार थे, जिन्होंने अवभृथ स्नान करते समय लोगों को प्रत्यक्ष अपने केश में से जलधारा निकलती दिखाई। अट्ठाईस सोमयाग कर के ये देवलोक गए।

इन के पुत्र गणपति सोमयागी थे। काशी में पंडितों की सभा में इन्होंने गणेश की भांति दर्शन दिया और इसी से सभा में इनका प्रथम पूजन होता था। एक बेर सब प्रसिद्ध नगरों में जाकर शास्त्र का दिग्विजय किया था। तीस यज्ञ कर के ये देवलोक सिधारे।

इन की तीन स्त्री थीं। इन में ज्येष्ठ स्त्री के ज्येष्ठ पुत्र वल्लभ भट्ट सायंकाल की समय प्रहर दिन चढ़े के सूर्य की भांति दर्शन दिया था। पांच यज्ञ कर के ये भी देवलोक गए।

इन के पुत्र लक्ष्मणभट्ट जी बड़े विद्वान साक्षात् अक्षर ब्रह्म शेष जी के अवतार हुए। इनकी छोटी ही अवस्था में इन के पिता का परलोक हुआ था, इस में इन के मातामह ने लालन पालन कर के इन को विद्या पढ़ाया था। इन की स्त्री देवकीजी का अवतार श्रीइल्लमगारू जी थीं। इन के तीन पुत्र हुए। बड़े भाई का नाम नारायणभट्ट उपनाम

रामकृष्ण भट्ट। ये कुछ दिन पीछे संन्यासी हो गए, तब केशवपुरी नाम पड़ा। यह ऐसे सिद्ध थे कि खड़ाऊं पहिने गंगा पर स्थल की भांति चलते थे। मंझले श्री महाप्रभुजी और छोटे रामचन्द्र भट्ट जी। ये महा भारी पंडित थे, वेदान्त, मीमांसा, व्याकरण, काव्य और साहित्य बहुत अच्छा जानते थे। लक्ष्मणभट्ट जी के मातुल वशिष्ठ गोत्र के ब्राह्मण अपुत्र होने के कारण इन्हें अपने घर ले गए थे। कृष्ण कुतूहल, गोपाल लीला महाकाव्य इत्यादि कई ग्रन्थ इन्होंने बनाए हैं। ये श्री महाप्रभु जी के विद्या में शिष्य थे और प्रायः अयोध्या में रहते थे। वादी ऐसे भारी थे कि प्रायः उस काल के सब पंडितों को जीता था। यहां तक कि इसी बाद के लाग पर इन को विष दे दिया।

लक्ष्मणभट्ट जी के पूर्व्व पुरुषों ने पंचानबे सोमयाग किए थे, सो इन्होंने पांच और कर के सौ पूरे किए। अन्त के सोमयज्ञ का आरम्भ चैत सुदी 9 सोमवार पुष्य नक्षत्र अभिजित योग में सं. 1532 में किया। जब यज्ञ समाप्त हुआ तो कुंड से यह अलौकिक वाणी सुन पड़ी कि तुम्हारे कुल में पूर्ण पुरुषोत्तम का प्राकट्य होगा। यह वाणी सुनते ही यज्ञ में सब को बड़ा आनन्द हुआ और लक्ष्मणभट्ट जी ने उसी समय काशी में सवालक्ष ब्राह्मण भोजन का संकल्प किया। उसी समय में संयोग से दक्षिण में कुछ यवनों का उपद्रव भी हुआ। इस में लक्ष्मणभट्ट जी कुटुम्ब को लेकर और बहुत सा द्रव्य साथ लेकर काशी की ओर चले।

विदित हो कि श्री लक्ष्मणभट्ट जी सं. 1532 के चैत्र के अन्त में बहुत से विद्यार्थी और ब्राह्मण भोजन के हेतु बहुत सा द्रव्य लेकर काशी चले और कांकरवल्लि से सात मंजिल पर भृंग सार्थक तीर्थ में, जहां सर्वतोभद्रकुंड में राजा वरुण ने अपने यज्ञ का अवभृत स्नान किया है, तीन दिन तक रहे। वहां वैशाख वदी 11 की अर्द्धरात्रि को श्री ठाकुर जी ने श्री स्वामिनी जी सहित दर्शन दिया और आज्ञा किया कि जब तुम काशी से लौट कर चम्पारण्य आओगे तब तुम्हारे यहां हमारा प्राकट्य होगा। यह आज्ञा कर के एक उपरना, एक तुलसी की माला, एक कंठी देकर श्री मुख से कहा कि जब बालक हो तब उस को यह उपरना उढ़ा देना, यह कंठी माला पहना देना और यह बीड़ा जन्म घोटी में पिला देना। इतना सुनते ही जब लक्ष्मणभट्ट जी नींद से चौक पड़े तो इन वस्तुओं के सिवा और वहां कुछ न देखा।

लक्ष्मणभट्ट जी भीमरथी, उज्जैन, पुष्कर इत्यादि तीर्थ होते हुए प्रयाग आए। वहां भरद्वाज ऋषि के आश्रम में आकाशवाणी हुई कि तुम हमारे गोत्र में धन्य हो, जिस के घर साक्षात् पूर्ण पुरुषोत्तम का प्राकट्य होगा।

प्रयाग से भट्टजी काशी आए। वहां गंगास्नान काशी विश्वेश्वर का दर्शन कर के एक स्थान लेकर उतरे और वेद का पारायण, अग्निहोत्र और ब्राह्मण भोजन प्रारम्भ किया और थोड़े दिनों में सवा लाख ब्राह्मण का भोजन समाप्त किया। इसी समय में दिल्ली के यवन राज्य में मुगलों और पठानों के विरोध के कारण बड़ा उपद्रव उठा और भारतवर्ष के पश्चिमोत्तर प्रान्त में चारों ओर हलचल पड़ गई। लोग नगर छोड़ कर गांव में बसने

लगे। लक्ष्मण भट्ट जी के जाति के लोग भी काशी छोड़ कर इधर उधर चले गए और लक्ष्मणभट्ट जी भी कुटुम्ब लेकर दक्षिण की ओर चले, सो जब चम्पारण्य पहुंचे तब के 1400 सं. 1535 वैशाख सुदी 11 रविवार को श्री इल्लमगारू जी का सात महीने का गर्भश्राव हुआ, सो माता जी ने केले के पत्ते में वह गर्भ लपेटकर शमी के खोंडरे में रख दिया। यहां से ये लोग चोड़ा नगर में गए और वहां सुना कि देशोपद्रव सब शान्त हो गया। यहां एक रात्रि निवास करके जब लक्ष्मणभट्ट जी फिर काशी की ओर फिरे तो उसी शमी के वृक्ष के नीचे चालीस हाथ के लम्बे चौड़े अग्निकुंड में बालक को खेलता देखा। श्री इल्लमगारू जी के स्तन से दूध की धारा उस समय निकली सो महाप्रभु जी के मुखारविन्द में पड़ी। तब श्री लक्ष्मणभट्ट जी ने वेदमन्त्र से और माता जी ने अपनी भाषा में अग्नि और वरुण की स्तुति किया और अग्नि ने इल्लमगारू जी को मार्ग दिया। माता जी ने बड़े आनन्द और वात्सल्य से पुत्र को गोद में उठा लिया। उस समय आकाश से पुष्पवृष्टि हुई और देवताओं ने प्रत्यक्ष होकर जै जै कार किया। सबके चित्त में अकस्मात् नन्द महोत्सव के आनन्द का आविर्भाव हुआ।

श्री लक्ष्मणभट्ट जी बालक को लेकर काशी फिर आए और श्री ठाकुर जी की आज्ञा प्रमाण कंठी, माला, उपरना और बीड़ा श्री महाप्रभु जी को दिया। तैत्तिरीय शाखा के अनुसार नामकरणादिक सब संस्कार बड़े आनन्द से हुए और जब श्री इल्लमगारू जी गंगा पूजने को गईं तब श्री गंगा जी ने माता की गोद ही में श्री महाप्रभु जी का चरण स्पर्श किया और स्त्रियों सहित माता जी के वरदान मांगने पर जल में से शब्द सुन पड़ा कि तुम्हारा पुत्र सब वादियों को जीतैगा।

अथ जन्मपत्री

स्वस्ति श्रीमन्नृपति विक्रमार्क राज्याब्दे 1535 शके 1400 वैशाखे मासे कृष्णपक्षे तिथौ 10 रविवासरे घ. 16 प. 14 परत्र 11 तिथौ धनिष्ठा नक्षत्रे घ. 38 प. 46 शुभयोगे घ. 38 प. 2 ववकर्णे श्री सूर्योदयात् इष्ट घ. 37 प. 42 वृश्चिक लग्नोदये श्री लक्ष्मणभट्ट पत्नीपुत्ररत्नमजीजनत्।

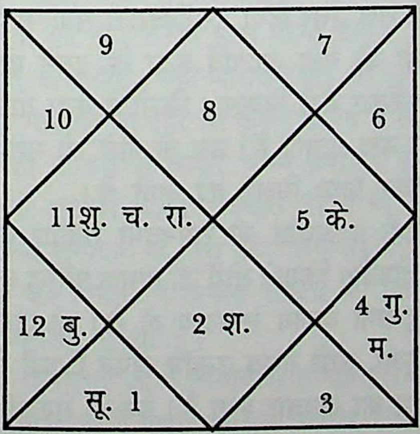

सूर्य 0/2/22/11 लग्न 7/12/19/31 दिन माम 30/28 रात्रिमाम 29/32

एक बेर श्री इल्लमगारू जी को व्रजयात्रा की इच्छा हुई और आपने अपने पति से निवेदन किया कि कृपापूर्वक व्रज चलिए परन्तु भट्ट जी ने कहा कि पुत्र का यज्ञोपवीत करके चलैंगे। यद्यपि इल्लमगारू जी ने पति की आज्ञा का कुछ उत्तर नहीं दिया। तथापि व्रजयात्रा की आप की बड़ी की इच्छा थी। यहां तक कि एक बेर श्री महाप्रभु जी को गोद में लिये आप बैठी थीं सो व्रज का स्मरण कर के उनके नेत्रों में जल भर आया। सर्वान्तरयामी श्री महाप्रभु जी ने माता की इच्छा पूर्ण करने को जम्हाई लिया और मुखारविद में चौरासी कोस व्रज का दर्शन कराया। श्री इल्लमगारू जी को यह देख कर बड़ा ही आश्चर्य हुआ और आप ने लक्ष्मणभट्ट जी से सब वृत्तान्त कहा। भट्ट जी ने कहा कि एक बेर हम अग्निशाला में भूमि पर शयन करते थे तब अग्नि ने स्वप्न में हम से आज्ञा किया कि तुम इस बालक के विषय में सन्देह मत करना सो यह बालक अलौकिक साक्षात नारायण का स्वरूप है।

एक बेर श्री विश्वनाथ जी ने यह विचार किया कि श्री ठाकुर जी ने हम को तो माया मत फैलाने की आज्ञा दिया है और आप अपने सम्प्रदाय फैलाने को क्यौं प्रकट हुए हैं, इस से एक बेर तो दर्शन करना चाहिए कि आप ने कैसा वेष लिया है और क्या इच्छा है। यह विचार कर योगी बन कर एक सोने का वघनहा हाथ में लेकर श्री लक्ष्मणभट्ट जी के द्वार पर आए। श्री महाप्रभु जी उस समय अत्यन्त रुदन करने लगे और कोई प्रकार से चुप न हों। तब लक्ष्मणभट्ट जी ने अपने पास बैठे हुए ज्योतिषियों से पूछा कि आज कल बालक के ग्रह कैसे हैं। ब्राह्मणों ने उत्तर दिया कि ग्रह तो अच्छे हैं परन्तु एक वघनहा इस के गले में पड़ा रहे तो अच्छा है। श्रीलक्ष्मणभट्टजी ने अपने शिष्यों को आज्ञा दिया कि अभी बघनहा मोल लेकर सोने से मढ़ा कर पोहवा लाओ। शिष्य लोग जैसे ही बाहर निकले वैसेही देखा कि एक योगी बघनहा लिये खड़ा। बड़े हर्ष से शिष्य लोग योगी को भीतर लें गए। श्री महादेव जी ने श्री महाप्रभु जी को कठुला पहना कर पूछा "भगवान कोयं वेषः"। श्री महाप्रभु जी ने उसी क्षण उत्तर दिया "सर्वेश्वरश्च सर्वात्मा निजेच्छातः करिष्यति" यह सुन कर सब लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ कि इतने छोटे बालक के मुख से शब्द स्पष्ट और फिर संस्कृत कैसे निकला। किसी ने कहा योगी बड़े सिद्ध हैं, किसी ने कहा यह बालक ही बड़ा प्रतापी हैं। उस के पीछे श्री महादेव जी कई बेर योगी के वेष में खिलौना लेकर प्रायः मिलने को आते थे।

सं. 1540 चैत्रवदी 9 अर्थात श्री रामनवमी रविवार को लक्ष्मण भट्ट जी ने वेदविधि से आप का यज्ञोपवीत किया। सोरों जी नामक प्रसिद्ध वाराहक्षेत्र में केशवानन्द नाम के एक बड़े सिद्धयोगी वैष्णव सम्प्रदाय के थे। सो जब श्री महाप्रभु जी का चम्पारण्य में प्राकट्य हुआ, उसी समय उन्होंने अपने शिष्यों से कहा कि इस समय पृथ्वी पर कहीं पुरुषोत्तम का अवतार हुआ है। उन के सेवकों में से कृष्णदास मेघन

नामक एक सेवक थे, सो वह गुरु का वचन सुनते ही यह विचार कर के घूमने निकले कि जो पुरुषोत्तम का प्राकट्य कहीं हुआ होगा, दर्शन हो होंगे और जो हम को नाम लेकर पुकारैगा उसी को हम पुरुषोत्तम जानैंगे। यह कृष्णदास मेघन फिरते फिरते श्री महाप्रभु जी के उपवीत समय काशी में आए और भीड़ देख कर जो श्री लक्ष्मण भट्ट जी के घर में गए तो उन को देखते ही श्री महाप्रभु जी ने आज्ञा किया ''कृष्णदास तू आयो''। इन्होंने दंडवत कर के उत्तर दिया ''जै, मैं आयो'' और एक अंगूठी श्री महाप्रभु जी के यज्ञोपवीत भिक्षा में दी और तब ये आजन्म श्री प्रभु जी के साथ ही रहे।

उपवीत धारण करने के पहले और पीछे जब आप खेलते तो ब्राह्मण के लड़कों को शिष्य बनाते और आप गुरु बन कर उपदेश करते।

लक्ष्मणभट्ट जी के घर के पास सगुन दास नामक ढाढ़ी रहते थे। उन को श्री महाप्रभु जी के दर्शन साक्षात पूर्ण पुरुषोत्तम के होय, इस से उन का नेम था कि नित्य आप का दर्शन कर के तब जल पीते। तो जब श्री महाप्रभु जी चरणारविन्द से चलने लगे तब आप उन के घर पधार कर दर्शन देते। सो एक दिन श्री लक्ष्मणभट्ट जी ने आप से आज्ञा किया, कि शूद्र के घर आप मत पधारा करो। इस पर श्री महाप्रभु जी ने यह वाक्य पढ़ा ''स्त्रियो वैश्या तथा शूद्रा तेपि यान्ति परांगतिं।'' यह सुन कर लक्ष्मणभट्ट जी ने श्री महाप्रभु को सगुनदास जी के यहां जाने की आज्ञा दिया।

यज्ञोपवीत के पीछे श्री महाप्रभु जी को लक्ष्मणभट्ट जी घर ही में वेद पढ़ाते थे परन्तु आप की बुद्धि बड़ी तीक्ष्ण थी, इस हेतु असाढ़ सुदी 2 पुष्यार्क योग में माध्वानन्द स्वामी के यहां लक्ष्मणभट्टजी ने आप को पढ़ने को बैठाया। सो चार ही महीने में चारों वेद, छहों शास्त्र पढ़ कर सब को बड़ा आश्चर्य उत्पन्न किया। गुरु दक्षिण में माध्वानन्द स्वामी ने श्री ठाकुर जी की सेवा मांगी तब आप ने आज्ञा किया कि जब श्रीनाथ जी को प्रकट करैंगे तब आप को सेवा देंगे। इन्हीं को और ग्रन्थों में माधवेन्द्रपुरी कर के लिखा है और ये मध्व सम्प्रदाय के आचार्य्य थे और विद्याविलास भट्टाचार्य्य से आप ने न्याय, पातंजल और काव्य पढ़ा। श्री महाप्रभु जी की विद्या देख करके लक्ष्मणभट्टजी को फिर सन्देह हुआ परन्तु ठाकुर जी ने स्वप्न में पुनर्दर्शन देकर वह सन्देह निवृत्त कर दिया। यही माधवेन्द्रपुरी श्री कृष्ण चैतन्य के मन्त्र गुरु हैं और इसी कारण श्री महाप्रभु जी और श्री कृष्ण चैतन्य से मित्रभाव था और आप ने उन के श्री गोवर्द्धन की कन्दरा से लाकर कृष्ण प्रेमामृत ग्रन्थ दिया था और ऐसे ही निम्बार्क सम्प्रदाय के आचार्य केशव काश्मीरी जी से भी आप का बड़ा संग रहता था। विदित हो कि चैतन्य सम्प्रदाय के ग्रन्थ वृहद्गौरगणोद्देशदीपिका ने श्री महाप्रभुजी को चौंसठ महानुभावों की गिनती में अनन्त संहिता के 75वें अध्याय के प्रमाण से श्री शुकदेव जी का अवतार लिखा है।

एक समय श्री लक्ष्मणभट्ट जी ने मायावादी संन्यासियों को अपने घर भोजन को बुलाया था सो श्री महाप्रभु जी ने ऐसा शास्त्रार्थ उठाया, जिस से मायावाद का खंडन

होय। तब लक्ष्मणभट्ट जी ने कहा जो अपने घर आवे उस का अपमान नहीं करना, इस से आप ने उन से शास्त्रार्थ नहीं किया। पर वैष्णव धर्म प्रचार की आप को ऐसी उत्कंठा थी कि काशी में जहां शास्त्रार्थ होता वहां आप जाते और वैष्णव मत का मंडन और अन्य मत का खंडन करते। यहां तक कि लक्ष्मणभट्ट जी के पास लोग उरहना देने आते कि आप के पुत्र ने भरी सभा में हमारा अपमान किया। तब लक्ष्मणभट्ट जी आप को निषेध करते। तब जिन पंडितों से आप निषेध करते उन पंडितों से शास्त्रार्थ न करते। उस काल में विश्वनाथ के सभामंडप में पंडितों की सभा नित्य होती थी और वे लोग एक बात पर निर्णय कर के तब उठते थे। सो श्री महा प्रभुजी उस सभा स्थान की भीति पर श्लोक नित्य लिख आते और जब पंडित लोग उस का एक दिन में निर्णय करते तो दूसरे दिन दूसरे श्लोक से उन का सब निर्णय खंडित हो जाता। ऐसे ही तीस दिन तक आपने यह खेल खेला और उसी से पत्रावलम्बन ग्रन्थ बन गया। एक प्रसंग यह भी है कि आप से बहुत से पंडित शास्त्रार्थ करने को आते थे और समय बहुत थोड़ा था, इस लिए आप ने पत्रावलम्बन ग्रन्थ कर के विश्वेश्वर के द्वार पर भी डुगडुगी फेर दी थी कि जिस को हम से शास्त्रर्थ करना हो पहले जाकर वह पत्र देख ले। यह सुन कर जो पंडित वह पत्र देखने जाते वह सब अपने प्रश्न का उत्तर पाकर लौट आते और इसी में पत्रावलम्बन ग्रन्थ बना।

श्री लक्ष्मणभट्ट जी को श्री महाप्रभुजी के इस घोर शास्त्रार्थ करने से बड़ा क्षोभ हुआ और आप ने वात्सल्य भाव से यह सोचा कि ऐसा न हो कि द्वेष कर के जादू से कोई पंडित हमारे पुत्र को मार डाले। यह विचार कर आप ने देश जाने का मनोरथ किया क्योंकि बारह वर्ष की काशी में रहने की आप की प्रतिज्ञा भी पूरी हो गई थी। यह सब बात विचार कर आप सकुटुम्ब काशी से दक्षिण चले।

वहां से सात मंजिल पर यह सुन कर कि विष्णु स्वामी सम्प्रदाय के कोई पंडित लक्ष्मणभट्ट जी अपने पुत्र सहित काशी में अनेक पंडितों को जीत कर यहां आते हैं, बहुत से पंडित मिल कर एक साथ लक्ष्मण भट्ट जी के डेरे पर शास्त्रार्थ करने गए और जब श्री महाप्रभुजी ने उन को शास्त्रार्थ में जीता तब लक्ष्मणभट्टजी ने प्रसन्न होकर कहा कि वरदान मांगो। तब आपने दो वरदान मांगे—प्रथम तो यह कि आप हम को शास्त्रार्थ करने जाने से कहीं रोको मत और दूसरे यह कि शास्त्रार्थ में कोई हमारा तेज पराभव न कर सकै। लक्ष्मणभट्ट जी ने बड़ी प्रसन्नता पूर्वक दोनों वरदान दिए।

लक्ष्मणभट्ट जी साक्षात पूर्ण पुरुषोत्तम के धाम अक्षर ब्रह्म शेष जी के स्वरूप हैं, इस से आप को त्रिकाल का ज्ञान है। सो जब आप ने अपना प्रयाण समय निकट जाना तब कांकरवार से बड़े पुत्र रामकृष्ण भट्ट जी को बाला जी में बुलाया और वहीं आप ने डेरा किया। पुत्रों को अनेक शिक्षा देकर रामकृष्णभट्ट जी को श्री यज्ञनारायण के समय के श्री रामचन्द्र जी पधराय दिए और कहा कि देश में जाकर सब गांव और घर आदि पर अधिकार और वेल्लिनाटि तैलंग जाति की प्रथा और अपने कुल

अनुसार सब धर्म्मपालन करो। ऐसे ही श्री यज्ञनारायणट्ट के समय के एक शालिग्राम जी और मदनमोहन जी श्री महाप्रभुजी को देकर कहा कि आप आचार्य्य होकर पृथ्वी में दिग्विजय कर के वैष्णव मत प्रचार करो और छोटे पुत्र रामचन्द्र जी को, जिन का काशी में जन्म हुआ था, हमने मातामह की सब स्थावर जंगम सम्पत्ति दिया।[1] और श्री महाप्रभु जी के ग्यारह वर्ष की अवस्था में लक्ष्मणबाला जी का शृंगार करते करते शरीर समेत उनके स्वरूप में लय हो गए। उन के पुत्रों ने लक्ष्मणभट्ट जी के वस्त्र का लौकिक संस्कार बड़ी धूमधाम से किया और महाप्रभु जी ने एक वर्ष तक यथाशास्त्र विहित सब रीति का बर्ताव किया।

काशी में वैष्णव तन्त्र, शैव तन्त्र, कौमारिल प्रभाकर, मैदगल इत्यादि मत के ग्रन्थ और शैव, पाशुपत, कालामुख, अघोर ये चार शैव सम्प्रदाय और विष्णु स्वामी इत्यादिक चार वैष्णव सम्प्रदाय के ग्रन्थ नहीं मिलते थे। इस हेतु सरस्वती भंडार में जाकर इन ग्रन्थों को आपने अवलोकन किया और वेद की 36 शाखा की संहिता ब्राह्मण इत्यादिक कंठाग्र किया। फिर जब इल्लमगड़ारू जी पति के हेतु विलाप करतीं तब आप को बड़ा दुःख होता, इस से श्री बाला जी ने स्वप्न में इल्लमगारू जी को विलाप करने का निषेध किया।

जब आप को पृथ्वी परिक्रमा की इच्छा हुई तब मातृचरण को मामा के पास पहुंचाने को आप विद्यानगर पधारे और मार्ग में अपने अन्तरंग दामोदर दास जी को सेवक किया।

विद्यानगर में राजा कृष्णदेव[2] के यहां आचार्य्य के मामा रंगनाथ विद्याभूषण

---

1. ये रामचन्द्रभट्ट बड़े पंडित थे। गोपाललीलामहाकाव्य, कृष्ण कुतूहल महाकाव्य और शृंगार वेदान्त ये तीन ग्रन्थ इन के मिलते हैं। अयोध्या में ये रहते थे और श्री महाप्रभु जी को विद्यागुरु कर के मानते थे। वैष्णव दीक्षा श्री महा प्रभु जी से इन्होंने पाई थी कि नहीं, इस में सन्देह है और रामकृष्णभट्ट जी कुछ दिन पीछे संन्यासी होकर केशवपुरी नाम से खड़ाऊं पहन कर जल पर चलने वाले बड़े सिद्ध विख्यात हुए। इन लोगों के समकाल के प्रसिद्ध पंडित ये थे, मध्वमत में व्यास तीर्थ, निम्बार्क मत में केशवभट्ट, रामानुज मत में ताताचार्य्य और व्यंगकटाध्वरि, शंकर मत में आनन्दगिरी, स्मार्तों में वा अन्य मत में मुकुन्दानन्द, केवलानन्द, माधवानन्द, बरदराज के महन्त हस्तशृंगार और रंगनाथ जी के महन्त आनन्दराम।

2. राजा कृष्णदेव की वंश परम्परा यों है। पांडु वंश में चन्द्रबीज राजा के दो पुत्र थे–बड़ा मेरु छोटा नन्दि। नन्दि को भूतनन्दि, उसको नन्दिल। नन्दिल के दो पुत्र–शेषनन्दि और यशोनन्दि। इन दोनों को चौदह पुत्र थे, जिन को अमित्र और दुर्मित्र नामक दो भाई राजाओं ने जीत लिया। इन में से सात भाई दक्षिण गए, जिन में से नन्दिराज ने नन्दपुर वा रंगोला बसाया (1030 ई.)। उनके वंश में फिर चालुक्य राज (1076 ई.) विजयराज जिन्होंने विजयनगर बसाया (1118), विमलराज (1158), नरसिंघदेव, जो बड़ा प्रसिद्ध हुआ (1180), रामदेव (1249) और भूपराज (1274)। भूपराज अपुत्र था, इस से इस ने अपने निकटस्थ गोत्रज वीर बुक्कराय को गोद लिया। वीर बुक्कराय (1324) की सभा में सारण के बड़े भाई माधवाचार्य्य (विद्यारण्य) बड़े पंडित थे और उन्होंने वेदों पर भाष्य किया→

दानाध्यक्ष थे। श्री महाप्रभु जी अपने मामा के घर उतरे और वहीं यह सुना कि राजा कृष्णदेव की सभा में आजकल नित्त मतमतान्तर का वाद होता है। यह सुन के आप ने इच्छा किया कि हम भी चलैंगे। दूसरे दिन प्रातः काल स्नान सन्ध्या होम कर के ब्रह्मचारी का भेव कर आप राजा की सभा में पधारे। इन का दर्शन पाते ही सब सभा तेजोहत हो गई और राजा कृष्ण देव राय ने बड़े आदर से इन को बैठाया। तब आप ने राजा से सभा का वृत्तान्त पूछा। राजा ने हाथ जोड़ कर निवेदन किया कि आज छः महीने से सब मत मतान्तर के पंडितों से यहां शास्त्रार्थ हो रहा है, सो माया मत वालों को अब तक किसी ने नहीं जीता है। यह सुन कर आपने पंडितों से प्रश्न किया और शास्त्रार्थ प्रारम्भ हुआ। चौदह दिन तत्वविचार में, बारह दिन स्थान वदादेश इस सूत्र से प्रारम्भ होकर व्याकरण में और एक दिन जैन बौद्ध विचार में, इस तरह सब मिला कर सत्ताईस दिन शास्त्रार्थ हुआ और जितने वादी सभा में उपस्थित थे सब निरुत्तर हुए। तब राजा ने सब पंडितों से जयपत्र लिखवा कर उस पर अपनी मुहर कर के इन को दिया और सब पंडितों और मत के आचार्यों ने मिल कर आचार्य पदवी से महाप्रभुजी को पुकारा। राजा कृष्णदेव ने कनकाभिषेक से आप की पूजा किया और सपरिवार शरण आकर सेवक हुआ।[1] इस अभिषेक के सोने को श्रीमहाप्रभु जी ने दीन ब्राह्मणों को बांट दिया

→ है और अनेक ग्रन्थ बनाए हैं। वीर बुक्कराय की सभा में कई विलायत के लोग आए थे। इनके हरिहरण्य (1363), उनके देवराज (1367) विजयराज (1414) और उनके पंडरदेव (1428)। पंडरदेव को श्री रंगराज ने जीत कर अपने पुत्र रामचन्द्रराय को (1450) राजा बनाया। इन के नृसिंहराय (1473), फिर वीर नृसिंहराय (1490), उनके अच्युतराय और उनके कृष्णदेवराय। राजा कृष्णदेवराय ने सं. 1570 तक (1524 ई.) राज्य किया और गुजरात जय किया और मुसलमानों से लड़े। राजा कृष्णदेव के सेनापति नाग नायक ने मथुरा जीत कर राज्य स्थापन किया, जो 16 पीढ़ी तक रहा। इनके रामराज हुए, जो निज़ामशाह और इमादुलमुल्क की लड़ाई में मारे गए। उन के पीछे श्री रंगराज, त्रिमल्लराज, वीर संघपतिराज, द्वितीय श्री रंगराज, रामदेवराय, व्यंकटपतिराय, द्वितीय तृमधराय, द्वितीय रामदेवराय और द्वितीय व्यंकटपतिराय हुए। द्वितीय व्यंकट मुगलों से हार कर चद्रदेवगिरि में बसे। इनके पुत्र रामराय, उनको हरिदास (1693), चक्रदास (1704), त्रिम्भदास (1721), रामराय (1734), गोपालराव व्यंकटपति, त्रिमल्लराय, वीर व्यंकटपति और रामदेवराय क्रम से राजा हुए। इस वंश के अन्तिम राजा रामदेवराय, जिन को सं. 1875 (1829 ई.) में टीपू सुलतान ने मारकर राज्य नाश कर दिया।

[1] विद्यानगर के, कृष्णागढ़ के और नवानगर के राजा लोग इसी काल से इस मत के सेवक होते आते हैं किन्तु विद्यानगर का वंश अब नहीं रहा, उस काल में दक्षिण प्रान्त के सब राज्य बने हुए थे। विद्यानगर जाने के पूर्व आप हेमाचल गोआ इत्यादि होते हुए चौंड़ा गए थे। चौड़ा के राजा ने एक म्याना और दो प्यादा साथ देकर आचार्य को विद्यानगर पहुंचवाया था। यहां पर एक बात और जानने के योग्य है कि श्री महाप्रभुजी विद्यानगर की सभा में श्री विष्णुस्वामी की गद्दी पर विराजे। इसी समय श्री विल्वमंगल जी ने श्री विष्णुस्वामी के रहस्य और मतभेद सब आप को देकर तिलक किया था। यह भी जनश्रुति है कि श्री महाप्रभु जीने सभा में योग बल से अपना कण्डलु फेंका, जो सूर्य्य का सा सभा में प्रकाश किया। तदनन्तर आप सभा में गए।

और अनेक ब्राह्मण के लड़कों के यज्ञोपवीत और लड़कियों के विवाह और अनेक का ऋण शोधन इस से हुआ। इस सुवर्ण के सिवा एक थाली भर कर मुहर राजा ने आप को भेंट किया था, जिस में से सात मुहर आप ने अंगीकार कर के उस का श्रीनाथ जी का नूपुर बनाया। फिर राजा को वहां के अनेक ब्राह्मणों वृहस्पति सब वाजपेय आदि यज्ञ और अनेक महादान कराया और उस से जो द्रव्य एकत्र हुआ उस का तीन भाग किया। एक भाग से श्री विट्ठलनाथ जी की कटिमेखला बनी, दूसरे भाग से पिता का ऋण शोधन किया और तीसरे भाग को करणीय यज्ञ के व्यय निर्वाहार्थ माता को सौंप दिया और अनेक दिन तक ज्ञान, भक्ति, वैराग्य, व्रत यज्ञादि इत्यादि धर्म्म का उपदेश करते आप विद्यानगर में विराजे।

कुछ दिन तक विद्या नगर में निवास करने के उपरान्त माता से आज्ञा लेकर पृथ्वी परिक्रमा करने को सं. 1548 वैशाख बदी 2 को आप नगर से बाहर चले। उस समय ब्रह्मचर्यव्रत के कारण सिला हुआ वस्त्र नहीं पहिरते थे, इस से धोती उपरना पहन कर दंड कमंडल छत्र और पादुका धारण किए हुए आप चलते थे। इसी ब्रह्मचर्य के दंड धारण पर भ्रम से बहुत मूर्ख आक्षेप करते हैं कि श्री वल्लभाचार्य पहले दंडी थे, फिर गृहस्थ हुए। दामोदरदास और कृष्णदास ये दो सेवक आप के साथ थे। पहले भीमरथी के तट पर पण्ढरपुर में आए, वहां सप्ताह पारायण कर के बैठक स्थापित किया। (आगे जिस तीर्थ के वर्णन में पा. बै. स्था. यह संकेत देखो वहां समझो कि पारायण कर के बैठक स्थापन किया) फिर नासिक, त्रयम्बक, पंचवटी, गोदावरी तीर्थ में आए वहां त्रयाह पा. बै. स्था.। वहां से उज्जयिनी में आए। वहां सिप्रा और अंगपात कुंड (जिस में भगवान जब सान्दीपनीजी के यहां पढ़ते थे तब पटिया धोते थे) में स्नान कर के महाकालेश्वर का दर्शन कर के नगर के बाहर एक पीपल की डाल गाड़ कर उस पर कमंडलु का जल आप ने छिड़का, जिस से वह तत्क्षणात् एक वृक्ष हो गया और उस के नीचे सप्ताह पा. बै. स्था.। यह पीपल का वृक्ष यद्यपि वर्तमान है। वहां से पुष्कर जी की यात्रा कर आप व्रज की 84 कोस की परिक्रमा करने के हेतु सं. 1548 के भाद्रपद कृष्णाष्टमी अर्थात जन्माष्टमी के दिन श्री गोकुल में पधारे। तब श्रीनाथजी को यमुना जल में क्रीड़ा करते देख आप भी उन के समीप जाने लगे। तब तो श्रीनाथजी गिरिराज ऊपर आए। वहां भी आप उन के पीछे पीछे गए, इसी से श्री भगवान ने प्रसन्न हो यह वरदान दिया कि "यावत् यमुनाजी में गंगा जल रहैगा तावत् तुम्हारी सम्प्रदाय अचल रहैगी।" ऐसा कह कर श्रीनाथजी अन्तर्धान हो गए। तब आप जिस मार्ग से पूर्व में गए थे, पूर्व गत मार्ग से, आ अपने व्याकुल शिष्यों से मिल कर आसन पर आए। तदनन्तर श्री आचार्य जी महाप्रभु जी व्रज की यात्रा करने चले और उस का निर्णय कर के अनुक्रम से वर्णन किया

है और जिस जिस स्थल में आपने श्री मद्भागवत का पारायण कर बैठकें नियत की हैं, जो अद्य पर्यन्त प्रसिद्ध हैं, उस जगह ऐसा * चिह्न किया है।

[रचनाकाल सन 1875 ई. इस रचना का उल्लेख 'युगल सर्व्वस्व के उपसंहार तथा 'चन्द्रावली नाटिका' के मुखपृष्ठ पर भी मिलता है। इसका पुस्तकाकार प्रकाशन सन 1888 ई. में' खंगबिलास प्रेस बांकीपुर, पटना से भी हुआ था।]

वैष्णवसर्व्वस्व

(सम्प्रदायपरम्परा और स्वल्प पुरावृत्त समेत)

'चतुर्भुजभुजच्छाया समालम्बात्सुनिर्भयाः।
जयन्ति सम्प्रदायास्ते चत्वारो हरिवल्लभाः॥'

वैष्णवसर्व्वस्व

(पूर्व्वार्द्ध)

1. क्षर से परे अक्षर ब्रह्म स्वरूप नित्य लीला का गोलोक में धाम है जहां श्रीवृन्दावन में श्रीयमुनाजी के निकट अनेक कुंजलताओं से वेष्टित एक मणिमय महायोगशिलास्तम्भ है। उस भूमि का नाम विहार भूमि और तीर्थों का नाम मूल स्वरूप योगपीठ शिला से मंडित उस कुट्टिम का नाम खेला तीर्थ है, जहां वेद वेदान्तादि सर्वशास्त्र वेद्य सच्चिदानन्दघन परमात्मा परमानन्द स्वरूप अनेक कोटि नित्यसिद्ध साधन सिद्ध, भक्त, गोप, गौ और श्री गोपीजनों से वेष्टित उन योग पीठ पर एकाग्र चिन्ता से ध्यानावस्थित होकर श्री व्रजेश्वरी की मानावस्था का ध्यान करते हैं।

2. एक समय सब देवताओं के पूर्वज, सब विद्या के इंसान, सब भूतों के ईश्वर, चराचर के गुरु, मुमुक्षु शरण, गुण ब्रह्मस्वरूप श्री शिवजी उस गोकुल मंडप में गए। वहां अनेक प्रकार के गान से भगवान को रिझाया और संसार के उद्धार के हेतु प्रेम मार्ग का सिद्धान्त पूछा और भगवान ने प्रेममार्ग का परम गुप्त तत्त्व और रहस्य सब शिवजी को कहा, जो सुन कर शिव जी ने जगत् के विरुद्ध दिगम्बर रूप प्रेमानन्द में मग्न हो अनेक प्रकार से नृत्य किया और कभी उस प्रेममार्ग का प्रकाश न किया। यदि कभी कुछ कहा भी तो भगवान की परामाया श्रीपार्वती से ही कहा क्योंकि युगलस्वरूप के परम गुप्त विहार के अनुभव करने वा कहने सुनने का पुरुष शरीरधारियों में शिव जी को छोड़ कर और कोई अधिकारी नहीं।

3. श्री महादेव जी को इस अवस्था में देख कर नारद जी ने अनेक बार तत्त्व पूछा परन्तु श्री महादेवजी ने बताया पर जब त्रिपुरासुर के युद्ध में भगवान ने त्रिपुर का नाश किया तब नारदजी ने बड़ी स्तुति किया और जब भगवान ने प्रसन्न हो कर कहा कि "वर मांगो" तब नारदजी ने यही वर मांग कि प्रेममार्ग का तत्त्व हम को बताइए और भगवान ने प्रेममार्ग के अनेक तत्त्व इन को बताये और सनकादि सिद्धों तथा आदि ऋषियों को भी भक्ति मार्ग का उपदेश किया। इस से ये नारदजी भक्ति मार्ग के तीसरे आचार्य्य हुए।

4. श्री नारदजी ने कृपा कर के उस तत्त्व को शांडिल्य, गर्ग, कौंडिन्य आदि

ऋषियों से कहा और अनेक ऋषियों के वाक्यों तथा शास्त्रों की विचित्र प्रवृत्तियों से व्याकुल श्री व्यासजी को भी अपना तत्त्वोपदेश किया।

5. व्यासजी ने उस तत्त्व को श्री शुकदेवजी से कहा।

6. श्री शुकाचार्य्य इस परम्परा में तृतीय और सप्तम दोनों हैं। तृतीय तो यों हैं कि नित्यलीला से वियुक्त एक शुक संसार में भ्रममाण होकर कहीं शान्ति न पाता हुआ कैलास में योगवट पर जा बैठा। वहां श्री महादेवजी पार्वती जी से परमगुप्त भगवद्रहस्य कहते थे और यह लीला शुक उस नित्य लीला से वियुक्त वह सब चरित्र ज्ञान बल से सुनता था तथा केवल लीला के अधिकारी होने ही के कारण उस रहस्य स्थान में उसका प्रवेश भी हुआ। श्री महादेवजी श्रीपार्वती जी से अंबिकावन में युगल स्वरूप का विहार तत्त्व कह रहे थे क्यौंकि उस अंबिकावन में पुरुष भी जाए तो स्त्री हो जाए क्यौंकि पुरुष शरीर उस गुप्त रहस्य सुनने का अधिकारी नहीं। उस लीलास्थ शुक ने वे रहस्य चरित्र सुने, उस के नेत्र से प्रेमाश्रु के बिन्दु गिरे और श्री महादेवजी के जंघा पर पड़े। महादेव जी ने यह जान कर कि इस शुक ने हमारा रहस्य सुना, बड़ा क्रोध किया और उस के मारने को अपना त्रिशूल चलाया और वह शुक वहां से भागा और व्यासजी की स्त्री के गर्भ में छिपा, इस से ब्राह्मणी और स्त्री को अवध्य जान कर शिवजी का त्रिशूल फिर आया और शुकदेव जी ने व्यासजी के घर में जन्म लिया। तो जो रहस्य शुकदेवजी ने साक्षात् शिवजी से सुने थे वे अपने शिष्य श्री विष्णु स्वामी से कहे, इस से तो ये (शुक) तृतीय हुए और घर से निकल जाने के पीछे नारदजी से "अहो बकीयं स्तनकालकूट" यह श्लोक गाते हुए सुन के भगवान के चरित्र पूछे तब नारदजी ने कहा कि तुम्हारे पिता ये सब चरित्र भली भांति जानते हैं उन से जाकर पूछो। यह नारदजी का वाक्य सुन शुकदेवजी घर आए और अपने पिता व्यासजी से सब रहस्यतत्त्व सीखे, इस रीति से ये षष्ठ हुए।

7. श्री विष्णुस्वामी—महाराज युधिष्ठिर के राज्य समय से किंचित कलियुग बीते द्रविड़ देश में एक राजा हुआ। उस का मन्त्री सर्व्वगुण सम्पन्न एक ब्राह्मण हुआ, जिस का नाम नारायण भट्ट था। उन के घर में भाद्रपद कृष्ण भौमवार रोहिणी नक्षत्र दो पहर की समय में श्रीविष्णु स्वामी का जन्म हुआ। इन का बालपन का नाम माधव भट्ट था। सातवें बरस में इनके पिता परलोक सिधारे और माता पति के साथ सती हो गई तब श्री विष्णु स्वामी अपने मामा रंगनाथ के साथ विद्याभ्यास के हेतु श्री काशी क्षेत्र में चले। मार्ग में पढ़रपुर के राजा मंगलसेन की भेंट कर के काशी में आए और सदा शिव नामक ब्राह्मण से विद्याध्ययन किया और जब गुरुदक्षिणा में गुरु ने यह मांग कि हम को व्यास सूत्र में कुछ सन्देह है सो व्यासजी के मुख से वह अर्थ सुनाय दीजिए। तब योगबल से श्री विष्णु स्वामी ने एक दिव्यरथ मंगाया। उस पर आप आरूढ़ होकर अपने गुरु और उनके अनुज हरिहर भट्ट और पुत्र रंगनाथ भट्ट को साथ लेकर व्यासजी के आश्रम में जाकर व्यासजी के मुख से शुद्धाद्वैत मत

के अनुसार मायावाद को खंडन कर के गुरु को सुनवाया और फिर पृथ्वी पर आकर हरिहर भट्ट रंगनाथ को शिष्य किया और सात सौ बरस भगवान की आशा से अपना शरीर रक्खा। परन्तु यह काशी की यात्रावाला प्रसंग सब चरित्र के ग्रन्थों में नहीं मिलता, केवल श्री विष्णुस्वामी चरितामृत नामक ग्रन्थ ही में मिलता है। सर्व्व चरित्र सम्मत मत यह है कि श्री विष्णुस्वामी ने घर में सब विद्या पढ़ी और उन को इस बात का सोच पड़ा कि हम अब किन गुणों को कर के अपने पिता से अधिक होंय क्योंकि हमारे राजा से बढ़ कर इस देश में कोई राजा नहीं और हमारे पिता से बढ़ कर राजा के घर में और कोई मानपात्र नहीं तब कुबेर की सेवा करैं, तो कुबेर भी इन्द्र का अनुयायी है और इन्द्रादिक देवता रुद्र के हैं और रुद्र तो ब्रह्मा का पुत्र है, ब्रह्मा भी नारायण के नाभि में से निकला है और नारायण भी अनेक मत्स्यादि अवतार बारम्बार लिया करते हैं, इस से परतन्त्र ज्ञात होते हैं। इस से उपनिषदों में सर्वेश्वर जिस को कहा है हम उस की उपासना करैंगे और जो सर्वेश्वर है उस की सेवा महाराजोपचार से करने योग्य है ऐसा विचार कर के छत्र, चमर, सिंहासन, शय्या, धूप, दीप, भोग, इत्यादि राज सेवा सामग्री सिद्ध कर के और भगवान का नाम रूपादि न जान कर के सर्व्वस्वामी के भाव से सेवा करने लगे। ऐसे ही नित्य सेवा करैं पर उस को कोई अंगीकार न करे। जब ऐसे ही बहुत दिन बीते और उन की सेवा अंगीकृत न हुई तब उन्होंने तो यह प्रण किया कि यदि आज से सर्वेश्वर मेरी सेवा न ग्रहण करैंगे तो मैं भी अन्न ग्रहण न करूंगा और ऐसे ही बिना अन्न जलादि से छः दिन बीत गए तब सातवें दिन नित्य की भांति भोग धर के प्रतिज्ञा की कि यदि आज भी सेवा का अंगीकार न होगा तो हम अग्नि प्रवेश करैंगे। ऐसी इन की बुद्धि की दृढ़ता देख कर श्री मच्छड्गुणैश्वर्य्य भगवान् आविर्भूत हुए और सब सेवा का अंगीकार किया। जब स्वामी भीतर गए और वहां सच्चिदानन्द रूप घन साक्षात् परब्रह्म द्विभुज मुरली भूषित दक्षिण और बाम दोनों भागों में स्वामिनी समेत को देख कर बोले कि आप यहां क्यौं आए हैं, आप तो पुराण और तन्त्रों के प्रतिपाद्य साकार देवता हैं और हम ने तो श्रुतिशिरः प्रतिपाद्य निर्गुण सर्व स्रष्टा सर्वस्वामी की उपासना और सेवा की। यह श्री विष्णु स्वामी का वाक्य सुन भगवान बोले–"यदि हम से बढ़ कर कोई ईश्वर है तो उस ने तुम्हारी सेवा क्यौं नहीं लिया? और मैंने यदि चोर भाव से लिया तो उस ने दंड क्यौं नहीं दिया?" तब विष्णुस्वामी ने कहा–"तुम साक्षात् ईश्वर हो, हम तुम्हारे शरणापन्न हैं, अपना माहात्म्य आप स्थापन करके हमारा संशय दूर करो।" इस पर भगवान ने अनेक युक्ति और प्रमाणों से अपना स्वरूप प्रतिपादन किया तब विष्णुस्वामी ने कहा कि आप सपरिवार यहीं विराजो और मेरी सेवा को अंगीकार नित्य करो। तब आप ने आज्ञा किया कि हमारी मूर्ति की प्रेम से सेवा करो हम सब स्वीकार करैंगे और भगवान ने पंचाक्षर मन्त्र का उपदेश कर के गीता और श्री भागवत परम शास्त्र है, हमारी सेवा की मुख्य धर्म्म है और प्रेम मात्र साधन

है यह उपदेश किया और आप अन्तर्हित हुए। भगवान के कहे हुए प्रकार से और जैसी मूर्त्ति का स्वामी ने दर्शन किया था वैसी मूर्त्ति निर्मित्त करा के स्वामी सेवा करने लगे और लोकोपकार के हेतु आपने शिष्य संग्रह भी किया और किसी लेख के मत से आप ने विवाह कर प्रतिरोध किया। किसी के मत से आप ने विवाह नहीं किया केवल त्रिदंडी संन्यास कर के सतत श्री हरि सेवन किया। जिस का मत "विवाह किया" यह है उसी का यह भी लेख है कि आप ने शरीर सात सौ बरस रक्खा और आप को जो पुत्र हुआ उन का नाम श्रीगोपीनाथ था, जिन का उसी लेख के मतानुसार चैत्र कृष्ण 13 धनिष्ठा नक्षत्र प्रथम प्रहर में जन्म हुआ था और 21 पीढ़ी तक वंश भी रहा और हरिहर, रंगनाथ, जयगोविन्द, भट्टाचार्य्य, मोहनलाल, व्यंकटेश, नरहरि, चिन्तामणि, सोमगिर पद्मावती, कुलशेखर, चन्द्रसेन, हरिजीवी, शंकर, गोविन्ददास, देवजीव, यज्ञनारायण, नरसिंह, लक्ष्यणगिरि, हरिदास, गोविन्ददास, दयाराम, जीवनराम, मनसाराम, कृष्णदत्त, बोपदेव, केशव, जयदेव, रत्नपाल, दुर्गावती, नामदेव, बिल्वमंगल इत्यादि शिष्यवर्ग स्वामी ही के काल में हुए हैं। वरंच भी महाप्रभु जी को भी स्वामी ने आप ही उपदेश कर आचार्य पदवी दे भाष्य करने की आज्ञा दी परन्तु यह अप्रमाण है। वास्तव में श्रीगोपीनाथ से लेकर श्री बिल्वमंगल तक सात सै परम्परा प्राप्त शिष्य हुए और यहां जिन का नाम लिखा हैं वे उन में प्रसिद्ध थे और बहुतों के नाम काल बल से लुप्त हो गए। इसी से यहां पहिले और वर्णन छोड़ के उस घोर काल का वर्णन किया जाता है, जिस में वैदिक धर्म्म प्रायः उच्छिन्न सा हो गया था। भगवान ने बुद्धावतार लेकर बहुत से उपधर्म्मों का उपदेश करके सारे भारतवर्ष को उस धर्म्म से परिपूर्ण कर दिया। उस के कुछ काल पीछे एक दिन कैलास के शिखर पर सिद्ध वट के नीचे रत्नवेदि पर व्याघ्रचर्म्म के आसन पर बैठ के श्रीपुरुषोत्तम का ध्यान करते रहे। कुछ काल के बाद भगवान् उन की समाधि से प्रकट होकर कहने लगे कि "तुम द्वापरादि युगों में मनुष्यादि में अंश से अवतीर्ण होकर अपने बनाए हुए शास्त्रों में लोगों को मुझ से विमुख करो और अपना प्रभाव प्रकट करो।" यह सुन शिवजी ने स्वीकारा। अनन्तर अपने को प्रकट करने की सन्धि देख रहे थे। उसी समय दक्षिण में द्रविड़ देश में एक महा शिव भक्त वृद्ध ब्राह्मण था। उस को कोई सन्तति नहीं थी, इसलिए वह ब्राह्मण कुछ अनुष्ठान करता था। सो एक दिन आप प्रसन्न होकर "वरं ब्रूहि" यह बोले। यह शिव जी की वाणी सुनते ही ब्राह्मण ने कहा, "महाराज! यदि आप प्रसन्न हैं तो मुझे पुत्र मिले।" इस पर शिव बोले, "निर्गुण मूर्ख पुत्र चाहोगे तो एक सौ पांच बरस का मिलेगा और दूसरा सर्व्वगुण सम्पन्न बारह वर्ष का मिलेगा।" इस पर ब्राह्मण बोला, "महाराज! तब तक आप ठहरिए जब तक मैं अपनी स्त्री से इसकी सलाह पूछूं।" महादेव जी का ठहरने का विचार जान के स्त्री से पूछने गया और स्त्री की समति से शंकर जी से कहा महाराज! सर्वगुणसम्पन्न पुत्र मुझे दीजिए। शिव जी ने बहुत अच्छा कह कर अन्य सर्वगुणसपन्न कोई पुत्र

न देखकर स्वयं उस का पुत्र होना स्वीकार किया और गर्भ काल समाप्त होने पर उस ब्राह्मण के स्त्री से अवतीर्ण हुए। ब्राह्मण ने शिव का प्रसाद जान कर उस पुत्र का नाम शंकर रक्खा और क्रम से उपनयन तक संस्कार किए और सामवेद पढ़ाया। यह जनम से ही महाकवि हुआ, कभी शक्ति, कभी शिव और कभी विष्णु का स्तव करता था, जिस से वे देवता प्रत्यक्ष होकर वर देते थे। अणिमादि सिद्धि तो इस के वश में थीं। कुछ काल के अनन्तर किसी ब्राह्मण के घर में अवतीर्ण गौरी से यथाविधि विवाह हुआ। गृहस्थाश्रमी होकर त्रैवर्णिक धर्म का अर्जन किया और लक्ष्मी ऐश्वर्य्य सन्तति की इच्छा करने वाले लोगों के लिए उपासना कांड प्रसिद्ध हुआ। सर्वजन में इस की कीर्त्ति होने के कारण सब इस के वाक्य पर विश्वास करने लगे। ऐसे एकादश वर्ष व्यतीत हुए तब शंकराचार्य्य ने अपने तात से कहा कि पिता अब कुछ अनिष्ट होगा, ऐसा ज्ञात होता है इस लिए मेरी मनीषा काशी में जाने की है सो आप की आज्ञा चाहता हूं। यह सुन पिता ने कहा, बहुत अच्छा है परन्तु हम को भी काशी को ले चलो। तब शंकराचार्य्य ने अपने मां बाप को शिविका में बैठा कर स्त्री समेत काशी में आगमन किया। काशी में आते ही शंकराचार्य्य को कालज्चर आया और अपनी अन्त की वेला जान मणिकर्णिका में स्नान किया और "निमज्जता नाथ भवार्णवान्तश्चिरान्मया पोतइवामि लब्धः" इस श्लोकार्ध से स्तवन करते करते प्राण त्याग किया।

यह पुत्र का अन्त देख कर माता पिता ने बहुत विलाप किया। अन्तर गौर्यशभूत शंकराचार्य्य की स्त्री ने अग्रिम आधा श्लोक पढ़ा यथा "त्वयापि लब्धं भगवन्निदानीमनुत्तमं पात्रमिदं दयायाः"। यह श्लोकार्ध सुनते ही शंकराचार्य्य जीवित होकर स्त्री से बोले कि यद्यपि तुम ने हम को जीवित किया तथापि हम संन्यास करैंगे। ऐसा कह कर चतुर्विध कुटीचर, बहूदक, हंस और परमहंसात्मक संन्यास किया। यद्यपि शास्त्र की आज्ञा, यावत् मदिरामत्त के समान ज्ञान से मत्त हुए बिना शिखा सत्र का त्याग करने के विषय नहीं तथापि इन्होंने अपना पूर्व श्रीविष्णु का "जमान्मद्विमुखानूकुरु" यह वाक्य स्मरण करके शिखा सूत्र का त्याग किया और काषाय वस्त्र और दंड ग्रहण किया। अनन्तर इन के बहुत से शिष्य भी हुए क्योंकि "यद्यदाचर्रात श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः। स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते।" अनन्तर शंकराचार्य्य ने वही भगवान का वाक्य पूर्ण मनोगत कर के व्याससूत्र का भाष्य मायावाद अर्थात दैत्य मत के अनुसार किया। कुछ दिन के अनन्तर प्रायः इन का मत इस देश में फैल गया।

उसी समय गुजरात देश में एक राजा था। उसका पुत्र कुमारपाल नामक था। यह हेमसूरि नाम किसी श्वेताम्बर जैन से पढ़ाया गया था। किसी समय कुमारपाल ने स्वप्न में राहु से ग्रसा हुआ पूर्ण चन्द्र देखा और हेमसूरि से इस का फल पूछने को तत्काल आया। स्वप्न का वृत्त सुनते ही हेमसूरि ने उस की बहुत निन्दा की। राजपुत्र हेमसुरि के दुष्ट भाषण सुन घर आया और हेमसूरि को मारने का विचार

करते करते शेष रात्रि तक जागा। प्रभात होते ही हेमसूरि ने शिष्य द्वारा राजपुत्र को कहला भेजा कि यह 'स्वप्न बहुत लाभदायक है, आज से सातवें दिन राज्य सर्व तुम्हारे हस्तगत होगा। यदि यह असत्य हो तो हमें दंड देना नहीं हमारी आज्ञा मानना। राजपुत्र ने हां कहा और ऐसा ही हुआ। तब राजपुत्र से कह कर हेमसूरि ने वैष्णव शैव मीमांसक सब को नगर से निकलवा दिया।

उसी काल में सूर्य्यांश देवप्रबोध नामा और जैमिनि के अंश भट्टाचार्य्य नामा पूर्व में दो पंडित हुए। वे लोग जब काशी में आए तब सुना कि गुजरात में जैनों ने वेदमार्ग का नाश किया। ये सुन के वे लोग गुजरात गए और काल पाकर हेमसूर्य्य के विश्वासपात्र शिष्य हुए। एक दिन पद्मावती की अन्तरंग आराधना में हेमसूर्य्य ने इन दोनों को मद्य पीने को दिया। देवप्रबोध ने तो मारे डर के पी लिया। भट्टाचार्य्य ने कहा कि थोड़ी देर ठहर के पीएंगे। अनन्तर हेमसूर्य्य ने वेद धर्म्म की निन्दा करना शुरू किया। यह सुन कर भट्टाचार्य्य की आंखों से आंसू गिरने लगा और हेमसूर्य्य ने जाना कि यह कोई छिपा हुआ ब्राह्मण है। हेमसूर्य्य ने उसे अपने ऊपर के कमरे में कैद किया। वहां जैनमार्ग की बहुत सी पुस्तकें रक्खी थीं, जिन को पढ़ कर भट्टाचार्य्य ने वह वशीकरण सिद्ध कर लिया जिस से हेमसूर्य्य ने राजा को वश कर लिया था। उस राजा की एक रानी वैद्यक थी और नित्यशालिग्राम का पूजन कर के जल पीती थी। उस का महल भट्टाचार्य के बंगले से बहुत निकट था। एक दिन उस रानी ने ने लंबी सांस लेकर यह आधा श्लोक पढ़ा "किंकरोमि क्व गच्छामि को वेदानुद्धरिष्यति।" यह सुनते ही भट्टाचार्य्य ने उत्तर दिया "माविशीद वरारोहे! भट्टाचार्य्योऽस्तिभूतले" और यह कह के कूद पड़े कि जो वेद प्रमाण हो तो हम न मरें। कहते हैं कि इतने ऊंचे से गिरने से वेद की सत्यता से उन के प्राण तो नहीं गए पर 'जो वेद सत्य हो' इस सन्देह के वाक्य कहने से उनकी आंख में चोट आई और वहां से निकल कर उस नगर में एकान्त में वे छिपे छिपे रहने लगे। एक दिन एक बगीचे में एकान्त में एक तुलसी का पेड़ देखा और वहीं बैठे रहे। जब सांझ हुई तब एक माली आया और तुलसी की पुड़िया फूल में छिपा कर ले चला। भट्टाचार्य्य ने माली से बहुत हठ पूर्वक रानी का सब वृत्तान्त जाना और "किं करोमि क्वगच्छामि" यह पूरा श्लोक लिख कर माली को दिया कि वह रानी को देवे। रानी ने एकान्त में भट्टाचार्य्य को बुलाया और यह जैन बन कर उस के महल में गए और फिर ब्राह्मण होकर रानी को दर्शन दिया। रानी ने इस की बड़ी पूजा किया और दोनों ने मिल कर वेद धर्म्म के लिए बड़ा विलाप किया। रानी ने उन को अपने महल में छिपा कर रक्खा। फिर जैसा वशीकरण का बाजू हेमसूर्य्य ने राजा के हाथ में पहिनाया था वैसा बाजू भट्टाचार्य्य ने बनाकर रानी से राजा के हाथ में बंधवा दिया और वह बाजू अपने पास मंगवा लिया। इस अभिचार से राजा को बड़ा ज्वर आया। राजा ने हेमसूर्य्य से ज्वर की निवृत्ति का उपाय पूछा। उस ने कहा कि ब्राह्मण को काल-पुरुष दान देने से ज्वर

छूटेगा। राजा ने एक ब्राह्मण का लड़का खोज कर जनेऊ पहना कर काल पुरुष को दान दिया और उस से राजा का ज्वर छूट गया। राजा के चित्त में उसी दिन से ब्राह्मणों का महत्त्व बढ़ा और ब्राह्मणों को राज्य में रहने की आज्ञा मिली। उसी समय देवप्रबोधाचार्य्य भी प्रायश्चित्त कर के नरसिंह जी से वर पाकर सिद्ध होकर पालकी पर चढ़ कर बहुत से शिष्यों के साथ उस नगर में आए। भट्टाचार्य्य इन से आकर मिले। एक दिन जब ये श्राद्ध करते थे तब हेमसूर्य्य ने अपने मन्त्र से इनका श्राद्ध नाश करना चाहा और जहां पाक होता था वहां मद्य बरसाना चाहा। भट्टाचार्य्य ने भी मन्त्र से नारियल उड़ाए, जो जैन सिद्धों के सिर पर गिरने लगे, जिससे वे वहां से भाग गए। दूसरे दिन सब ब्राह्मण मिल कर राजसभा में गए। राजा ने प्रणामादि से इनका बड़ा सत्कार किया। ज्योतिषी ने पंचांग सुनाया। स्मार्त्त ने कहा आज अमावस्या है, श्राद्ध करना चाहिए। सुनते ही हेमसूर्य्य ने कुढ़ कर कहा कि आज अमावस्या नहीं पूर्णमासी है। अन्त में यह ठहरी जिस की बात झूठ हो वह अपने मत की पुस्तक समेत पृथ्वी में गाड़ा जाय। सांझ को हेमसूर्य्य ने अपनी इष्ट देवता पद्मावती से प्रार्थना करके उसका कुंडल चन्द्रमा के स्थान पर उदय कराया। देवप्रबोध ने नृसिंह जी के प्रसाद से यह बात जान कर राजा से कहा कि यह कुंडल है और इस का प्रकाश केवल बारह कोस तक है। राजा ने उसी समय सवार भेज कर जब वृत्त जाना तब दूसरे दिन हेमसूर्य्य को पुस्तकों समेत पृथ्वी में गाड़ दिया। जिस समय हेमसूर्य्य गाड़ा जाता था कि उस समय बड़ी भीड़ हुई और सब लोगों ने मिल कर हेमसूर्य्य से पूछा कि 'अब तुम धर्म्म का सचसच तत्त्व बताओ' तब यह श्लोक पढ़ कर उस ने प्राण त्याग किया—''हरिर्भागीरथी विप्राःविप्राः भागीरथी हरिः। भागीरथी हरि विप्राः सारमेकं जगत्त्रये''॥ जैनों क़ा बल टूटने से वेद फिर प्रवर्त्त हुए और वैष्णव शैवमत प्रचार हुआ। भट्टाचार्य्य ने अपना वेदान्त मत चलाया और पद्मावती को शाप दिया कि तू मनुष्य हो। वही सरस्वती नाम से भट्टाचार्य्य ही के कन्या हुई और भट्टाचार्य्य ने उसका विवाह ब्रह्म के अंश सुरेश्वराचार्य्य नामक अपने शिष्य से कर दिया। सुरेश्वर अपनी स्त्री को लेकर काशी में रहने लगे। जिस समय भट्टाचार्य्य शतायु होकर जैन ग्रन्थ पढ़ने के प्रायश्चित्त में तुषानल कर के जलने लगे, उस समय शंकराचार्य्य ने आकर इनका हाथ पकड़ा और कहा कि हम से वाद करो। भट्ट ने कहा तुम काशी जाव वहां हमारे जामाता से वाद करना, हम तो अब देह त्याग करते हैं। शंकराचार्य्य काशी में आए और सुरेश्वर की स्त्री को मध्यस्थ कर के वाद आरम्भ किया। पद्मावती ने पूर्व वैर स्मरण कर के शंकराचार्य्य का पक्ष किया। सातवें दिन सुरेश्वराचार्य्य हारे और शंकराचार्य्य ने उन्हें संन्यासी किया। शंकर दक्षिण में गोकर्ण शिवक्षेत्र में आए और चार शिष्यों को आज्ञा दिया कि चार दिशा में जाकर तुम लोग शिखा सूत्र परित्याग पूर्वक संन्यास मत का प्रचार करो। उन शिष्यों में मध्व नामक एक ब्राह्मण को भगवान श्री रामचन्द्रजी ने रात्रि को स्वप्न में आज्ञा दिया कि तुम तो हनुमान के अंश हो

और वैष्णव मत फैलाने का तुम्हारा अवतार है, सो उठो और शंकराचार्य्य का मत खंडन कर के हमारे तत्त्व वाद के अनुसार व्यास सूत्र की व्याख्या कर के वैष्णव मत फैलाओ। मध्वाचार्य्य ने भगवदाज्ञानुसार दूसरे दिन से शंकराचार्य्य का मत कंठरव से खंडन करके वैष्णव मत का प्रचार किया।

विल्वमंगल के पीछे और मध्वाचार्य्य के पहले द्रविड़ देश में रामानुज नामक एक ब्राह्मण हुए। लक्ष्मी को तप से प्रसन्न कर के उन से वर मांगा कि हम से भवगत् सिद्धान्त कहो। लक्ष्मीजी ने गरुड़ जी को आज्ञा दिया और गरुड़ जी ने नारायणीय सिद्धान्त रामानुज से कहा, जिस के अनुसार श्रीरामानुजाचार्य्य ने गीता और सूत्र पर भाष्य करके विशिष्टाद्वैत वैष्णव सम्प्रदाय संसार में फैलाया। इसी सम्प्रदाय में अगस्त्य और परशुराम के बनाए हरिहरोपासक और लक्ष्मी के उपासक वैष्णव शाखांतर में हुए हैं।

इस काल से बहुत पूर्व ही पंढरपुर में व्यास और सूर्य्य के अंश से निम्बादित्य ब्राह्मण हुए, जिन को श्री विठ्ठलनाथ जी ने अपना सिद्धान्त कहा और उस के अनुसार उन्होंने द्वैताद्वैत मत प्रवर्त्त किया। जैनों के बल से लुप्त सम्प्रदाय को श्रीनिवासाचार्य्य ने सूत्र और गीता पर भाष्य कर के फिर से प्रवर्त्त किया।

यह चारों सम्प्रदाय अर्थात् विष्णुस्वामी, मध्व, रामानुज और निम्बादित्य की पूर्व्व व्यवस्था हुई। ये सम्प्रदाय रुद्र, ब्रह्म, लक्ष्मी और सनकादि के क्रम से प्रवर्त्त किए हुए वास्तव में एक पर प्रकट अलग अलग संसार में प्रसिद्ध हैं।

मध्वाचार्य्य से श्री जगन्नाथजी ने आज्ञा किया था कि "जो इन चारों सम्प्रदाय के बाहर हैं वह हमारा प्यारा नहीं है।"

इन्हीं सम्प्रदायों के चार उपसम्प्रदाय हैं–विष्णुस्वामी का उपसम्प्रदाय चैतन्य, रामानुज का नन्द, मध्वाचार्य्य का प्रकाश और निंबादित्य का स्वरूप। इन में स्वरूप और प्रकाश की सम्प्रदाय कालबल से विच्छिन्न हो गई। ये चारों उपसम्प्रदाय मूल सम्प्रदाय से अविरुद्ध हैं, केवल आचार्य्यों के रुचिभेद से नामान्तर से प्रसिद्ध हैं।

चतुर्भुजच्छाया व्यवसायातसुनिर्भयाः।
जयन्ति स सम्प्रदायाश्चत्वारो हरिवल्लभाः॥1॥

(उत्तरार्द्ध)

अथ श्रीविष्णु स्वामी सम्प्रदाय परम्परा

श्री पुरुषोत्तम, शिव जी, श्री नारद जी, श्री व्यास जी। व्याजी के दो शिष्य शुकदेवजी और शांडिल्य। शांडिल्य के शिष्य गर्ग और कौंडिन्य। शुकदेवजी के शिष्य विष्णुस्वामी। विष्णुस्वामी से क्रम से परमानन्द मुनि, आनन्द मुनि, प्रकाश मुनि, श्रीकृष्ण मुनि, नारायण मुनि, जै मुनि, श्रीमुनि, शंकरभट्ट, पद्मभट्ट, गोपालभट्ट, श्रीधरभट्ट, श्यामभट्ट, रामभट्ट, सेतुभट्ट, कृष्णभट्ट, दिवाकरभट्ट, कृपालभट्ट, विद्याभरभट्ट, दिनकरभट्ट, मधुनिधानभट्ट, ज्ञानदेवभट्ट, शुकदेवभट्ट, शिवदेव, शान्तिदेव, दयालदेव, क्षमादेव, सन्तोषदेव, धीरजदेव, ध्यानदेव, विज्ञानदेव, महाचार्य्य, तत्वाचार्य्य, नृसिंहाचार्य्य, सूवाचार्य्य, सुबुद्धाचार्य्य, प्रबुद्धाचार्य्य, प्रबोधाचार्य्य, असुवाचार्य्य, रुद्राचार्य्य, भगवन्ताचार्य्य, रामेश्वराचार्य्य, ब्रह्मबिधिचर्य्याचार्य्य, सुदयाचार्य्य, लक्ष्मनारायणाचार्य्य, ज्ञानदेव, नामदेव, विलोचनदेव इत्यादि विल्वमंगल जी तक सात सै आचार्य्य हुए हैं, इसी से श्री महाप्रभु जी पहले से गिनने से सात सै सातवें आचार्य्य हैं।

कहते हैं कि विष्णुस्वामी ने फिर से जन्म लिया था और व्यास अवतार कहलाते थे।

श्री बल्लभी मत के अतिरिक्त श्री विष्णुस्वामी के सम्प्रदाय के लोग और कहीं कहीं भी मिलते हैं जैसा कि श्री प्रेमाकर गुसाईं के शिष्य नारायण दास जी सारस्वत, जिन को श्री शुकदेव जी ने दर्शन दिया था। उन के पीछे पुरुषोत्तम जी और वंशीधर जी इस वंश में प्रसिद्ध हुए हैं। नाभा जी ने इन्हीं नारायणदास का भक्तमाल में वर्णन किया है। यह गद्दी नवल गोस्वामी के नाम से अब तक प्रसिद्ध है। ऐसे ही व्रज में और भी कुछ लोग इस सम्प्रदाय के हैं।

अथ श्री मध्व सम्प्रदाय परम्परा

देवता	अंशावतार	पृथ्वीस्थित्यङ्का	पुण्यतिथ			स्थल
1. वायुदेव	श्री आनन्द तीर्थस्वामी	68	माघ शुक्ल	9	1	स्थलदक्षिणस्थवृन्दावने
2. रुद्रदेव	पद्मनाभ तीर्थस्वामी	7	कार्तिक कृष्ण	14	2	बद्रिकाश्रम
3. मन्मथदेव	नरहर तीर्थस्वामी	8	पौष कृष्ण	7	3	अनीगोंदी
4. गरुड़देव	माधव तीर्थस्वामी	17	भाद्रपदं कृष्ण	15	4	हंविरूपाक्षी
5. रुद्रदेव	अक्षोभ तीर्थस्वामी		मार्गशीर्ष कृष्ण	15	5	मेणुर भीमा तीर
6. हंसदेव	जय तीर्थस्वामी	9	आषाढ़ कृष्ण	8	6	मलखेड़ा
7. सूर्यदेव	विद्यानिधि राजतीर्थ	64	वैशाख शुक्ल	3	7	जगन्नाथ
8. चन्द्रदेव	कवीन्द्र तीर्थस्वामी	7	चैत्र शुक्ल	9	8	पम्पा सरोवर
9. यमदेव	वागीश तीर्थस्वामी	4	चैत्र शुक्ल	2	9	आनिगोदी
10. अग्निदेव	रामचन्द्र तीर्थस्वामी	33	वैशाख शुक्ल	8	10	मलखेड़ा
11. वरुणदेव	विद्या तीर्थस्वामी	8	कार्तिक कृष्ण	4	11	आनिगोदी
12. कुबेरदेव	रघुनाथ तीर्थस्वामी	36	मार्गशीर्ष कृष्ण	2	12	कोलुर
13. प्रवाहदेव	रघुवर्य्य तीर्थस्वामी	8	ज्येष्ठ कृष्ण	3	13	पेनगोड़ी
14. नैऋतिदेव	रघुत्तम तीर्थस्वामी	38	पौष शुक्ल	11	14	ये चक्रमगर
15. तुम्बुरुदेव	वेदव्यास विधितीर्थ	15	चैत्र शुक्ल	2	15	पण्ढरपुर भीमातीर

16. हाहा गन्धर्व	विद्याधीश तीर्थ	18 पौष कृष्ण	14	16 सांगलि कृष्णतीर
17. हू हू गन्धर्व	वेदनिधि तीर्थस्वामी	17 कार्त्तिक शुक्ल	12	17 निवृत्तिसंगम तीर
18. लोमस ऋषि	सत्यवर्य तीर्थस्वामी	8 फाल्गुण शुक्ल	6	18 विलोब नगर
19. जावालि ऋषि	सत्यनिधि तीर्थस्वामी	22 मार्गशीर्ष शुक्ल	4	19 माचारगुडी कावेरीतीर
20. विश्वामित्र	सत्यनाथ तीर्थस्वामी	39 मार्गशीर्ष शुक्ल	11	20 कोलुर
21. मेघतिथि	सत्याऽभिमान तीर्थस्वामी	69 ज्येष्ठ कृष्ण	14	21 आरपी
22. पराशर ऋषि	सत्यपूर्ण स्वामी	22 ज्येष्ठ कृष्ण	2	22 माना मदरी
23. जामदग्नि ऋषि	सत्यविजय स्वामी	13 ज्येष्ठ कृष्ण	12	23 सावपुर सावणर
24. कश्यप ऋषि	सत्यप्रिय स्वामी	9 चैत्र शुक्ल	13	24 तुंगभद्रा तीर
25. मांडव ऋषि	सत्यबोध तीर्थस्वामी	40 फाल्गुण कृष्ण	1	25 सान्तविवतुर
26.	सत्यसन्ध तीर्थस्वामी	11 ज्येष्ठ शुक्ल	2	26 ...
27. ...	सत्यवर तीर्थस्वामी	2 श्रावण शुक्ल	7	27 ...
28. ...	सत्यधर्म तीर्थस्वामी	...	...	28 ...
29. ...	सत्यसंकल्प तीर्थस्वामी	...	...	29 ...

अथ श्री चैतन्य सम्प्रदाय परम्परा

श्रीकृष्ण, ब्रह्मा, नारद, व्यास, मध्व, पद्मनाम, नृहरि, माधव, अक्षोभ्य, जयतीर्थ, ज्ञानसिन्धु, दयानिधि, विद्यानिधि, राजेंद्र, जयधर्म्मा, पुरुषोत्तम, ब्रह्मण्य, व्यासतीर्थ, लक्ष्मीपति, माधवेन्द्र। उन के तीन शिष्य ईश्वर 1 अद्वैत 2 और नित्यानन्द 3। ईश्वर के श्रीकृष्ण-चैतन्य, उन के गोपालभट्ट, उनके गोस्वामी गोपीनाथ जिन का वंश अब प्रसिद्ध है। श्रीकृष्ण-चैतन्य के मुख्य चौदह पार्षद और चौंसठ महन्तों के नाम नीचे लिखे के अनुसार जानो। और श्रीकृष्ण-चैतन्य विद्या में केशवपुरी के शिष्य थे।

अद्वैत 1 अभिराम 2 नित्यानन्द 3 सुन्दर ठक्कुर 4 धनंजय पंडित 5 कमलाकर 6 साहंस पंडित 7 पुरुषोत्तम 8 श्रीधर 9 हलायुध 10 गौरीदास 11 उद्धारण 12 परमेश्वर 13 कृष्ण 14।

नीलांबर चक्रवर्ती 1 गदाधर पंडित 2 गदाधर ठक्कुर 3 नरहरी 4 मुकुन्द 5 सदाशिव कविराज 6 जगदानन्द पंडित 7 दामोदर 8 बनमाली 9 रघुनाथ भट्ट 10 गदाधर भट्ट 11 प्रबोधनन्द 12 राघो गोस्वामी 13 भूगर्भ गोस्वामी 14 काशीमिश्र 15 रूप गोस्वामी 16 सनातन गोस्वामी 17 रघुनाथदास 18 रघुनाथभट्ट 19 गोपालभट्ट 20 लोकनाथ 21 दूसरे गदाधरभट्ट 22 जीव गोस्वामी 23 गोविंद 24 माधव 25 वासृ घोष 26 सिवानन्द की स्त्री 27 परमानन्दपुरी 28 राघौदास 29 शुक्लांवर ब्रह्मचारी 30 जगदीश पंडित 31 श्रीलाचार्य 32 गरुडद्य 33 गोपीनाथ सिंह 34 शंकर 35 गुणसागर राय 36 माधव 37 भास्कर 38 बनमाली 39 सार्वभौम 40 सिंहानन्द 41 लोकनाथ कविचन्द्र 42 श्रीनाथ 43 रामनाथ 44 काशीमिश्र 45 रामानन्द 46 प्रतापरुद्र 47 कालीदास ठक्कुर 48 माकी स्त्री 49 गोपीनाथाचार्य 50 शारंगदास 51 विश्वेश्वर 52 सत्यराज 53 रामानन्द 54 गोविंद 55 जगन्नाथ पंडित 61 अनल 62 हरिदास 63 हृदयानन्द 64।

अथ श्रीरामानुज सम्प्रदाय परम्परा

पुरुषोत्तम, लक्ष्मी, विश्वक्सेन, शठकोप, श्रीनाथ, पुंडरीकाक्ष, राममिश्र, यामुनाचार्य्य, पूर्णाचार्य्य, रामानुज, गोविन्दाचार्य्य, पराशर, वेदान्ताचार्य्य, कलिवैरिदास, श्रीकृष्णप्रसाद, लोकाचार्य्य, श्रीशैलनाथ, बरबर मुनि, बरदनारायण, श्रीनिवासदास, प्रणातार्तिहराचार्य्य, बरदाचार्य्य, वेंकटेश, बरदार्य्य, प्रणतार्तिहर, वेङ्कटार्य्य, वेङ्कटेश, बरदाचार्य्य, प्रणातार्तिहर, श्रीनिवास, वेङ्कटाचार्य्य, कृष्णाचार्य्य, शेषाचार्य्य, श्रीनिवासरंगाचार्य्य। यह तो वर्त्तमान वृन्दावनस्थ स्वामी रंगाचार्य्य तक परम्परा लिखी है परन्तु रामानुज सम्प्रदाय में चौहत्तर गद्दी है और देवाचार्य्य से प्रबोधानन्द, राघवानन्द, रामानन्द यह रामानन्दी शाखा है।

रामानन्द से अनन्तानन्द, कृष्णदास, कालीदास, अग्रदास, नारायणदास, गोविन्ददास, कान्हरदास तक अग्रदासी शाखा है और निम्बादित्य और रामानुज सम्प्रदाय से मिल कर श्रीजानकी घाट की और मिथिलापुर की सम्प्रदाय स्वतन्त्र बन गई है। कितने साधु अग्रस्वामी के सम्प्रदाय के पौहारी बाबा को रामानुज के अन्तर्गत मानते हैं पर महाराज विश्वनाथ सिंह ने अपनी गुरु परम्परा में इन लोगों को निंबादित्य के अन्तःपाती हितहरिवंश जी के सम्प्रदाय में माना है।

अथ श्री निम्बादित्य सम्प्रदाय परम्परा

हंस, सनकादिक, नारद, निंबादित्य। निंबादित्य का नाम निंबार्क और नियमानन्द भी है। इनकी माता जयन्ती और पिता अरुण द्राविड़ ब्राह्मण। इसी से इन को आरुणी भी कहते हैं। अन्तरंग रूप इन का श्रीललिताजी और रंगदेवी का है। मर्यादा में ये सुदर्शन चक्र का अवतार हैं। शिष्य परम्परा श्रीनिवासाचार्य्य, विश्वाचार्य्य, पुरुषोत्तमाचार्य्य, विलासाचार्य्य, स्वरूपाचार्य्य, माधवाचार्य्य, बलभद्राचार्य्य, पद्माचार्य्य, श्यामाचार्य्य, गोपालाचार्य्य, कृपाचार्य्य, देवाचार्य्य, सुन्दर भट्ट, पद्मनाभ, उपेन्द्रभट्ट, रामचन्द्रभट्ट, वामनभट्ट, कृष्णभट्ट, पद्माकरभट्ट, भूरिभट्ट, माधवभट्ट, श्यामभट्ट, गोपालभट्ट, बलभद्रभट्ट, गोपीनाथभट्ट, केशवभट्ट, गंगाभट्ट, केशव काश्मीरिभट्ट, श्रीभट्ट, हरिव्यासदेव। हरिव्यासदेवजी से पांच शाखा नीचे लिखे हुए के अनुसार यथा।

शोभूराम, कर्णहरदेव, मथुरेश नरहरिदास, प्रह्लाददास इत्यादि।

दूसरी शाखा

कर्णहरि, परमानन्ददेव, नागजी, मोहनदेव, आत्माराम, नारायण दास, भगवानदास, गिरधारीदास, गोपालदास।

तीसरी शाखा

शोभूराम, मधुरेशदेव, बदरीशदेव, जयरामदेव, कृष्णदेव, धर्म्म दास जी।

चौथी शाखा

व्यासदेव, परशुराम, हितहरिवंश, नारायणहित, वृन्दावनहित, श्री गोविन्दहित।

पांचवीं शाखा

व्यास जी के पहले किसी महात्मा से हैं यथा श्री आशाधीर जी, श्रीहरिदास

स्वामी, विट्ठलविपुलविनोदविहारण, विहारणदास जी, नरहरदेव जी, रसिकदेव जी, पीताम्बरदेव, गोवर्द्धनदेव, नरोत्तमदेव। रसिकदेव जी के दूसरे शिष्य ललितकिशोरी उन के मौनादास जी जिनकी श्रीवन में टट्टी है।

शोभूराम जी के भाई आत्माराम उन की दो शिष्य परम्परा, एक सन्तदास की, एक माधव दास की।

इसी सम्प्रदाय में सुमुखन भक्त के पुत्र व्यासजी बड़े प्रसद्धि हुए हैं, संवत् 1612 में जन्म, पैंतालीस वर्ष की अवस्था में श्रीवन आए और बारह सम्प्रदाय चलाई।

श्रीहित हरिवंश जी का निवास देवनगर, गौड़ ब्राह्मण काश्यप गोत्र यजुर्वेद माध्यन्दिनी शाखा, पिता व्यास मिश्र माता तारावती, वंशी का अवतार, संवत 1559 वैशाख सुदी 11 को जनम। इन के ताऊ नृसिंहाश्रम प्रसिद्ध भक्त थे। इन को बारह भाई और स्त्री का नाम रुक्मिणी, मोहनजी इत्यादि तीन पुत्र और एक कन्या। श्रीस्वामिनीजी से अश्वत्थ वृक्ष पर मन्त्र पाया। कृष्णदासी और मनोहरी दो स्त्री और व्याही। संवत 1582 कार्त्तिक सुदी 13 को श्रीराधावल्लभ जी को पाट बैठाया, पांच भोग सात आरती का नेम रक्खा। इन का संस्कृत ग्रन्थ श्रीराधा सुधानिधि श्लोक 270 भाषा ग्रन्थ पद चौरासी। मुख्य शिष्य नरबाहन, नाहरमल्ल, विट्ठलदास, मोहनदास, छबीलदास, नवलदास, वलीदास, परमानन्द रसिक हठी, हरिदास, खङ्गसेन और गंगा, यमुना।

इति श्री वैष्णवसर्व्वस्व परंपरावर्णने–उत्तरार्द्ध समाप्ता।

[सन 1876 ई. में प्रकाशित 'युगुलसर्व्वस्व' की भूमिका में इस रचना का उल्लेख है। इसका उत्तरार्द्ध अप्रैल सन 1879 ई. की हरिश्चन्द्र चन्द्रिका में प्रकाशित हुआ था। ऐसा लगता है कि इसका पूर्वार्द्ध सन 1876 ई. से पूर्व प्रकाशित हुआ था और उत्तरार्द्ध सन 1879 ई. में]

श्रीहरि

उत्सवावली

(वर्ष भर के उत्सवों की तालिका और संक्षेप सेवा श्रृंगार वर्णन)

"तत्कर्म हरितोषं यत्"
"कर्माप्येकं तस्य देवस्य सेवा"
"कृष्ण सेवा सदा कार्या"

उत्सवावली

चैत्र शुक्लपक्ष

प्रतिपदा–नवरात्रारम्भ, अभ्यंग, शृंगार भारी, हो सके तो गुलाब की फूल मंडली।

पंचमी–श्री रामानुजस्वामी का जन्मोत्सव।

षष्ठी–श्री यदुनाथ जी का जन्मोत्सव।

नवमी–श्री रामनवमी, केसरिया वस्त्र, उत्सव का शृंगार, पंचामृत (दोपहर को)।

एकादशी–मुकुट का शृंगार।

द्वादशी–दमनक (दौना) समर्पण करना।

पूर्णिमा–महारास की समाप्ति का उत्सव, मुकुट का शृंगार।

किसी के मत से चैत्र शुक्ल द्वितीया को श्री जानकी जन्म। जिस दिन मेष संक्रान्ति पड़े उस दिन सतूतू के लड्डू भोग धरना।

वैशाख कृष्ण पक्ष

एकादशी–श्री वल्लभाचार्य महाप्रभु का जन्म, केसरिया बागा।

वैशाख शुक्ल पक्ष

तृतीया–अक्षयतृतीया। निकुंज में प्रथम स्नेह का उत्सव। कसेरी किनारा रंगा हलका वस्त्र, मोती पोत के आभरण। गर्मी की सेवा आज से चली। खसखाना, पंखा, मट्टी की झारी, छिरकाव फुहारा, जो बन जाय। परशुराम-अवतार।

सप्तमी–श्री रामराज्य।

नवमी–श्री जानकी-जन्म-दिन, श्री स्वामिनी जी से विवाहोत्सव, सेहरे का शृंगार।

एकादशी–श्री हरिवंश जी का जन्म।

चतुर्दशी–नृसिंह जयन्ती, गर्मी की जो सेवा बाकी हो सो सब और भी इस दिन से चलै, केसरिय वस्त्र, सन्ध्या को पंचामृत-स्नान।

पूर्णिमा–श्री राधारमण जी का प्राकट्य।

ज्येष्ठ कृष्ण पक्ष

पंचमी–कूर्मावतार।

ज्येष्ठ शुक्ल पक्ष

दशमी–दशहरा, जमुनाजी-गंगाजी का पूजन।

एकादशी–जल बिहार, पानी भर कर उस में सिंहासन रख कर श्री ठाकुरजी को पधरावना।

चतुर्दशी–स्नान यात्रा के हेतु जल ले आना। जल में फूल की कली, चन्दन कपूर इत्यादि ठंढी वस्तु मिला कर ओस में ढंक कर रखना वा विधिपूर्वक मन्त्र से अधिवासन करना।

पूर्णिमा–स्नान यात्रा, ज्येष्ठा नक्षत्र में पहले दिन के लाए पानी से सबेरे श्री ठाकुरजी को स्नान कराना। मूंग भींगी, फल इत्यादि ठंढी वस्तु भोग लगाना।

आषाढ़ शुक्ल पक्ष

द्वितीया–पुष्य नक्षत्र में रथ यात्रा। सफेद गोंटे का बागा। जड़ाऊ आभरण, कुलह, चन्द्रिका।

तृतीया–श्री ठाकुरजी का गौना।

षष्ठी–पांडुरंग षष्ठी, श्री विठ्ठलनाथजी (दक्षिणावाले) का पाटोत्सव है और इसी दिन से रंगीन वस्त्र धारण कराना आरम्भ होता है।

एकादशी–हरिशयानी।

पूर्णिमा–असोढ़ी जोग, चुनरी का बागा, मुकुट, मोर की पिछवाई।

श्रावण कृष्ण पक्ष

प्रतिपदा वा द्वितीया–जिस दिन चन्द्रमा अच्छा हो हिंडोला आरम्भ, लाल बागा, पाग, मोरशिखा।

पंचमी–अठवांसा का उत्सव।

श्रावण शुक्ल पक्ष

तृतीया–श्री ठाकुरानी तीज, चुनरी क़ा बागा, श्री स्वामिनी जी का श्रृंगार भारी। हिंडोले का मुख्य उत्सव।

पंचमी–श्याम बागा, मुकुट का श्रृंगार।

अष्टमी–लाल ब़ागा मुकुट का श्रृंगार, बगीचे में हिंडोला।

एकादशी–पवित्रा, श्री ठाकुरजी को पवित्रा यथाशक्ति समर्पण करना।

द्वादशी–गुरु को और श्री ठाकुरजी को पवित्रा समर्पण करना।

त्रयोदशी–चतुरा नागा का उत्सव।

पूर्णिमा–रक्षाबन्धन।

पूर्णिमा पीछे हिंडोला विसर्जन अच्छे मुहूर्त में करना।

भाद्रपद कृष्णपक्ष

सप्तमी–श्री विष्णु स्वामी का जन्मोत्सव, किसी-किसी मत से पूतना-वध के कारण छठे दिन छठी नहीं हुई थी, इसी कारण इस सप्तमी को हुई।

अष्टमी–महामहोत्सव जन्माष्टमी पहिले दिन से सब तैयारी कर रखना। उत्सव के दिन बड़े सबेरे उठना। घर में जितने स्वरूप ठाकुर जी के छोटे बड़े हों सब को पंचामृत स्नान कराकर अभ्यंग कराके उत्तम केसरिया वस्त्र शृंगार भारी कुलह चंद्रिका आदिक जहां तक हो सकै भारी तयारी करना। शृंगार कर के तिलक करना, भेंट धरना। बंदनवार थापा केले का खम्भा लगाना। अष्टमी के दिन को श्री ठाकुर जी के जन्म गांठ के उत्सव की भावना करना और रात को जन्मोत्सव की भावना। संध्या से रोशनी करना। अर्द्धरात्रि को एक छोटे स्वरूप को पंचामृत स्नान कराना। घण्टा शंख नौबतखाना बजाना। व्रज भयो महर के पूत, यह पद गाना। जन्म पीछे श्री ठाकुरजी को नई फूल की माला तिलक पीताम्बर समर्पण करना। फिर यथा शक्ति महाभोग झुलाना। पंजीरी भोग। सबेरे नवमी को श्रीठाकुरजी को पालने पर झुलाना। दही से नंद महोत्सव करना, पालना के भोग में मेवा मिठाई मक्खन रखना, भेंट आरती करना।

भाद्रपद शुक्ल पक्ष

द्वितीया–दसृठन का उत्सव।

पंचमी–श्रीबलदेव जी का जन्म, श्रीचन्द्रावली जी का जन्म। जहां दो स्वामिनी जी बिराजती हों वहां दक्षिण भाग की स्वामिनी जी को दूध का स्नान, तिलक।

अष्टमी–श्री राधाष्टमी, शृंगार जन्माष्टमी का, श्री स्वामिनी जी को दूध से स्नान कराना, तिलक भोग आरती तोरण आदि जन्माष्टमी की भांति सब करना।

एकादशी–दान एकादशी, मकुट काछनी का शृंगार वस्त्र दही दूध छोटी-छोटी कुल्हिया में भोग रखना व्रज भक्त (सखी) हों तो उन के सिर पर दही दूध रख कर सामने खड़ी करना।

द्वादशी–वामनजयन्ती, केसरिया वस्त्र धोती उपरना, कुलह, दोपहर को पंचामृत।

पूर्णिमा–सांझी के उत्सव का आरम्भ, सांझ को ठाकुर जी के सामने फूल की वा रंग की सांझी बनाना।

आश्विन कृष्ण पक्ष

अष्टमी–महीना का चौक।

द्वादशी–श्री गो. गोपीनाथ जी का उत्सव।

त्रयोदशी–श्रीबाल कृष्णजी का उत्सव।

चतुर्दशी–कोट की आरती।

पूर्णिमा–सांझी की समाप्ति।

आश्विन शुक्ल पक्ष

प्रतिपदा–नवरात्रारम्भ, कुलह चन्द्रिका।

नवमी–नवरात्र की समाप्ति, कुलह चन्द्रिका, सफेद छापे का बागा, सामग्री।

दशमी–विजयदशमी, सफेद जरी का बागा, पाग चन्द्रिका सन्ध्या को जवार की कलगी धराना, तिलक, खंजर कमर में धराना, रावण वध के कीर्तन गाना।

एकादशी–मुकुट।

पूर्णिमा–महारास, सफेद ताश का बागा, मुकुट, आभरण सफेद रात को चांदनी में श्री ठाकुर जी विराजैं, सफेद वस्तु भोग लगाना, रास के कीर्तन गाना।

कार्तिक कृष्ण पक्ष

दशमी का एकादशी से हटरी दीपमालिका आरम्भ।

त्रयोदशी–धन तेरस, हरी जरी का बागा।

चतुर्दशी–रूप चतुर्दशी, बागा लाज जरी का।

अमावस्या–दीपावली, सफेद ताश का बागा, कुलह चन्द्रिका, रात को हटरी में बैठाना, सामने दीपावली, चौपड़ भंडेहर, लिखौना आदि रखना।

कार्तिक शुक्ल पक्ष

प्रतिपदा–अन्नकूट, शृंगार दीवाली का रहेगा। गोबर्धन की पूजा कर के अन्नकूट का भोग रखना, जहां तक बन पड़े सामग्री समर्पण करना।

द्वितीया–भाई इज, तिलक,।

अष्टमी–गोपाष्टमी।

नवमी–अक्षयनवमी, गोविन्दाभिषेकोत्सव, परिक्रमा करना।

एकादशी–प्रबोधनी, अच्छे समय में ऊख में के मण्डप में पधराय कर जगाना, नया जाड़े का कपड़ा समपर्ण करना, अंगीठी आदि जाड़े का उपचार रखना।

द्वादशी–श्री गिरिधरजी का और श्री रघुनाथजी का उत्सव।

त्रयोदशी–श्री राधावल्लभजी का पाटोत्सव।

पूर्णिमा–यज्ञपत्री अंगीकार।

कार्तिक–में अगस्त के फूल की माला, दीप दान, रंग से स्वस्तिकादि लिखना, तुलसी समर्पण और सामग्री भोग रखना।

मार्गशीर्ष कृष्ण पक्ष

तृतीया–बुध अवतार।

षष्ठी–श्री गोविन्दरायजी का उत्सव।

त्रयोदशी–श्री घनश्यामजी का उत्सव।

मार्गशीर्ष शुक्ल पक्ष

द्वितीया–कूख में पधारे।

पंचमी–श्री रुक्मिणीजी तथा श्री सीताजी का विवाहोत्सव।

सप्तमी–श्री गोकुलनाथजी का उत्सव।

पौष कृष्ण पक्ष

नवमी–प्रभु श्री गो. विट्ठलनाथजी का उत्सव।

पौष शुक्ल पक्ष

अष्टमी–अन्नप्राशन, इसी दिन श्री नंदरायजी का जन्म।

माघ कृष्ण पक्ष

षष्ठी–श्री ठाकुरजी का नामकरण।

मकर संक्रान्ति जिस दिन हो। उस दिन छींट के नए रूई के बागा धरना और तिल का लड्डू भोग धरना।

माघ शुक्ल पक्ष

पंचमी–बसन्तोत्सव, खेल आरम्भ, सफेद बागा, इसी दिन से अबीर बुक्का केसर चोआ से नित्य खिलाना सामने वसन्त रखना, वसन्त राग माघ की पूर्णिमा तक गाना। श्री अद्वैत प्रभु का उत्सव।

षष्ठी–श्री यशोदाजी का जन्म।

अष्टमी–श्री मध्वाचार्योत्सव।

त्रयोदशी–श्री नित्यानंद प्रभु का उत्सव।

पूर्णिमा–होली डांड़ा।

फाल्गुण कृष्ण पक्ष

सप्तमी–श्रीनाथजी का पाटोत्सव।

फाल्गुण शुक्ल पक्ष

एकादशी–कुंज एकादशी, फूल का मुकुट धरावना, कुंज में खिलाना।

पूर्णिमा–होलिकोत्सव, सफेद बागा, पाग, मोर चन्द्रिका खेल। श्री चैतन्य प्रभु का उत्सव।

चैत्र कृष्ण पक्ष

प्रतिपदा–दोलोत्सव, सफेद बागा, पाग मोर चन्द्रिका, आम के मौर की डोल बांध कर ठाकुर जी को झुलाना, चार भोग चार खेल होय।

पंचमी–मत्स्यावतार।

त्रयोदशी–बाराहावतार।

संक्षिप्त नित्य सेवा पद्धति

सेवा का मूल यह है कि स्नेह पूर्वक जैसे निज देह वा बालक वा स्वामी की गर्मी सर्दी ऋतु के अनुसार भोजन वस्त्र से रक्षा की जाती है वैसे ही सर्व स्वामी परिपूर्ण परमेश्वर की मूर्ति की भी सेवा करना। नित्य सबेरे प्रातः कृत्य से निवृत्त होकर तिलक सन्ध्या कर के मन्दिर में जाकर पहिले दंडवत कर के मार्जनी करना, रात के बरतन धोकर वस्त्रादि जो बदलना हो सब ठीक कर के घंटानाद पूर्वक ठाकुर जी को जगाना और मंगल भोग रख कर मंगला आरती करना, फिर स्नान करा कर यथा शक्ति शृंगार करना, फूल की माला पहराना, चरण पर तुलसी समर्पण कर के खड़ी मूर्ति हो तो वेणु धरा कर दर्पण दिखलाना, श्रद्धा सौकर्य हो तो शृंगार भोग रखना। आचमन मुख वस्त्र कर के बीड़ी समर्पण करके चौपड़ खिलौना आदि सामने धर से आरती करना। फिर सज्जा साज कर के किवाड़ बन्द कर देना। सन्ध्या को फिर घंटानाद कर के जगा कर दिन का पानी आदि बदल कर यथा शक्ति फल भोग रखना सौकर्य हो तो सांझ को भी दो भोग और रखना नहीं तो एक ही बेर सही। फल भोग के पीछे शृंगार उतार कर शयन भोग रखना और दूध रखना। फिर आरती करके शयन कराना। गर्मी हो तो पतली चद्दर, जाड़ा हो तो रजाई उढ़ाना। स्वामिनी जी को साड़ी और खड़े सरूप हों तो तनियां रात को भी रहै। बालसरूप हो तो नंगे ही पौढ़ैं। मणि विग्रह हों तो नित्य स्नान नहीं कराना। व्रत के दिन भी ठाकुर जी को नित्य की भांति अन्न आदि समर्पण करना। गर्मी सर्दी का सेवा में बहुत ध्यान रखना।

अथ संक्षिप्त निर्णय

एकादशी के व्रत का मोटा निर्णय यह है कि पहले पचपन घड़ी से पल भर

की दशमी विशेष हो तो व्रत नहीं करना, द्वादशी को व्रत करना। किन्तु निंबार्क संप्रदाय वाले 45 घड़ी से अधिक दशमी हो तो व्रत नहीं करते। द्वादशी दो हों तो पहिली द्वादशी को व्रत करना। दो एकादशी हों तो दूसरी एकादशी को व्रत करना। पत्रा न मिलै और दशमी के समय में कुछ भी सन्देह हो तो द्वादशी को व्रत करना। जन्माष्टमी, रामनवमी और नृसिंह जयन्ती उदयात् लेना और वामन द्वादशी मध्याह्नव्यापिनी, विजय दशमी सायंकाल व्यापिनी। और उत्सव सब संसार में जिस दिन तिथि मानी जाय उस दिन। रास पूर्णिमा जिस दिन चन्द्रमा की कला विशेष मिलै उस दिन करना।

[रचनाकाल–सन 1876 ई. अनुमानित]

अष्टादशपुराण की उपक्रमणिका

भूमिका

व्यासजी के बनाए अठारह पुराण लोक में प्रसिद्ध हैं। काव्य वाल्मीकीय रामायण, इतिहास महाभारत, अठारह पुराण, अठारह उपपुराण, पांच पंचरात्र और पांच संहिता इन की समष्टि की संज्ञा पुराण है। अठारह उपपुराण, यथा—1. आदि पुराण (सनत्कुमारोक्त), 2. नरसिंह पुराण, 3. स्कन्दपुराण, 4. शिव धर्म (नन्दीशप्रोक्त), 5. आश्चर्य पुराण (दुर्वासा का कहा), 6. नारदपुराण, 7. कपिल पुराण, 8. वामन पुराण, 9. वरुण पुराण, 10. शाम्ब पुराण, 11. सौर पुराण, 12. पराशर पुराण, 13. भार्गव पुराण, 14. मारीच पुराण, 15. कालिका पुराण, 16. देवी पुराण, 17. माहेश्वर पुराण, 18. पद्मपुराण।

भास्कर, नन्दिकेश्वर, रहस्य, उशना और ब्रह्मांड ये पांच नाम उपपुराणों के और भी मिलते हैं।

1. वशिष्ट पंचरात्र, 2. नारदीय पंचरात्र, 3. कपिल पंचरात्र, 4. गौतमीय पंचरात्र और 5. सनत्कुमारीय पंचरात्र और ब्रह्म, शिव, गौतम, प्रह्लाद और सनत्कुमार ये पांच संहिता हैं। हमारे गाहकों में बहुत से लोगों की इच्छा होगी कि परिश्रम भी न करें और जान भी लें कि अठारहों पुराणों में क्या है। हम उन की इच्छा पूर्ण करने को पुराणों की यह उपक्रमणिका प्रकाश करते हैं, जिस से बहुत सहज में लोग जान जायंगे कि चार लाख श्लोक समूह के अठारह टुकड़ों में क्या क्या विषय सन्निवेशित है।

हरिश्चन्द्र

अष्टादशपुराण की उपक्रमणिका

प्रथम ब्रह्मपुराण

यह पुराण पूर्व एवं उत्तर दो भाग में विभक्त है। अत्रस्थ श्लोक संख्या 10000 दस सहस्र। सूत शौनक संवाद में नाना प्रसंग एवं विविध इतिहास वर्णित हैं।

पूर्व भाग–1. देवता एवं असुर गणों की उत्पत्ति वर्णन, 2. दक्षादि प्रजापति की उत्पत्ति वर्णन, 3. सूर्यवंश वर्णन एवं तन्मध्य में श्रीराम का चतुर्व्यूह कथन, 4. सोमवंश वर्णन तत् प्रसंग से श्रीकृष्ण चरित्र कथा, 5. द्वीप कथन, 6. वर्ष कथन, 7. पाताल कथन, 8. स्वर्ग कथन, 9. नरक कथन, 10. सूर्य स्तुति, 11. पार्वती जन्म एवं विवाह कथन, 12. दक्ष आख्यान, 13. एकाम्र क्षेत्र कथन।

उत्तर भाग–1. पुरुषोत्तम वर्णन, 2. तीर्थयात्रा विस्तार कथन, 3. यमलोक कथन, 4. पितृश्राद्ध विधि, 5. वर्णाश्रमाचार धर्मनिरूपण, 6. विष्णु धर्म कथन, 7. युगाख्यान, 8. प्रलय कथन, 9. योग कथन, 10. सांख्य कथन, 11. ब्रह्मवाद कथन, 12. पुराणांश कथन।

फल श्रुति–यह पुराण लिखाकर वैशाख मास में स्वर्णयुक्त जल धेनु सहित पौराणिक ब्राह्मण को अर्चना पूर्वक दान करने एवं ब्राह्मण भोजन कराने से चन्द्र सूर्य स्थिति काल पर्यन्त ब्रह्मलोक में स्थिति होती है एवं संयत होकर यह पुराण श्रवण वा पाठ करने से सकल धर्मफल लभ्य होता है।

द्वितीय पद्मपुराण

पांच खंड में पचपन सहस्र श्लोक। पंच खंड, यथा–1. सृष्टि खंड, 2. भूमि खंड, 3 स्वर्ग खंड, 4. पाताल खंड, 5. उत्तर खंड।

प्रथम सृष्टिखंड–पुलस्त्य भीष्म संवाद से सृष्ट्यादि का उपक्रम एवं नाना धर्म आख्यान और इतिहास कथन। इस खंड में 1. पुष्कर माहात्म्य विस्तार, 2. ब्रह्मयज्ञ विधि, 3. वेदपाठादि लक्षण, 4. दान विवरण, 5. पृथक् पृथक् व्रत कथन, 6. शैल जाया विवरण, 7. तारकाख्यान, 8. गोमाहात्म्य, 9. कालकेयादि दैत्य वध, 10. ग्रहों की पूजा एवं दान विवरण है।

द्वितीय भूमि खंड–सूत शौनक संवाद। 1. पितृमातृ पूजा कथन, 2. शिवशर्मा कथा, 3. सुव्रत चरित्र, 4. वृत्रासुर वध, 5. पृथक् वर्ण आख्यान, 6. धर्म कथा, 7. पितृशुश्रूषण कथन, 8. नहुष कथा, 9. ययाति चरित्र, 10. गुरुतीर्थ निरूपण, 11. राजा के सहित जैमिनि के संवाद में बहुत सी आश्चर्य कथा, 12. अशोक सुन्दरी की कथा, 13. हुंडदैत्य वध, 14. कामदाख्यान, 15. विहुंड वध, 16. च्यवन कुंजल का संवाद, 17. सिद्धाख्यान, 18. ग्रन्थ की फल श्रुति।

तृतीय स्वर्ग खंड–ऋषि लोगों से सौति का कथा प्रसंग 1. ब्रह्मांडोत्पत्ति कथन, 2. भूमिलोक संस्थान, 3. तीर्थ आख्यान, 4. नर्मदा की उत्पत्ति, 5. नर्मदास्थ तीर्थ उपाख्यान, 6. कुरुक्षेत्रादि तीर्थ कथन, 7. कालिन्दी की पुण्य कथा, 8. काशी माहात्म्य, 9. गया माहात्म्य, 10. प्रयाग माहात्म्य, 11. वर्णाश्रम धर्म एवं योग निरूपण, 12. व्यास जैमिनि संवाद की पुण्य कथा, 13. समुद्र मंथन, 14. व्रत कथन, 15. श्रेष्ठ माहात्म्य स्तोत्र।

चतुर्थ पाताल खंड–1. श्रीराम का अश्वमेध एवं राज्याभिषेक कथन, 2. अगस्त्यादि का आगमन, 3. पौलस्ति का उपाख्यान, 4. अश्वमेध करणाः देश, 5. अश्वमेधीय घोटकगमन, 6. नाना राज कथन, 7. जगन्नाथ देव का वृत्तान्त, 8. वृन्दावन का माहात्म्य, 9. लीलावतारी की नित्य लीलानुकथन, 10. वैशाख स्नान दान एवं अर्चन, 11. धरा वराह संवाद, 12. यम एवं ब्राह्मण की कथा, 13. राजा का आचरण, 14. श्रीकृष्ण का स्त्रोत्र, 15. शिवशम्भु मिलन, 16. दधीचि का आख्यान, 17. भस्मधारण माहात्म्य, 18. शिव माहात्म्य, 19. इन्द्रपुत्र का आख्यान, 20. पुराणवित्जन की प्रशंसा, 21. गौतम का आख्यान, 22. गीता, 23. भारद्वाज के आश्रम में श्रीरामचन्द्र का कल्पान्तरीय इतिहास कथन।

पंचम उत्तर खंड–शिव पार्वती संवाद। 1. पर्वत का आख्यान 2. जालन्धर की कथा 3. श्री शैलादि का विवरण 4. सगर का उपाख्यान 5. गंगा, प्रयाग, काशी एवं गया की पुण्यकथा 6. आम्रादि दानमाहात्म्य 7. महा द्वादशी व्रत कथन 8. चतुर्विंशति एकादशी माहात्म्य 9. विष्णुधर्म कथन 10. विष्णु सहस्रनाम 11. कार्तिक व्रत फल 12. माघस्नान फल 13. जम्बूद्वीप के तीर्थ सकल का माहात्म्य 14. साम्भ्रमती महिमा 15. नृसिंहोत्पत्ति कथन 16. देवशर्मा का आख्यान 17. गीता माहात्म्य 18. भक्ति का माहात्म्य 19. श्री भागवत माहात्म्य 20. इन्द्रप्रस्थ की महिमा 21. नाना तीर्थ कथा 22. मन्त्ररत्न की कथा 23. त्रिपाद विभूति का कथन 24. मत्स्यादि अवतार कथन 25. श्रीराम का शतनाम एवं तन्माहात्म्य 26. भृगु की विष्णु विभव परीक्षा।

फलश्रुति–यह पुराण लिखाकर स्वर्णयुक्त पुराणवित् ब्राह्मण को दान करने से अथवा श्रवण करने से वैष्णवधाम की प्राप्ति होती है एवं इस की अनुक्रमणिका श्रवण करने से समुदाय पुराण श्रवण का फल लाभ होता है।

तृतीय विष्णु पुराण[1]

आदि एवं अन्त दो भाग में तेईस सहस्र श्लोक, उस में आदि भाग 6 अंश में विभक्त। मैत्रेय पराशर संवाद वराह कल्पोपाख्यान प्रथम भाग प्रथम अंश– 1. सृष्टि का आदि कारण एवं सृष्टिवर्णन, 2. देवादि की उत्पत्ति, 3. समुद्र मंथन, 4. दक्षादि वर्णन, 5. ध्रुव चरित्र, 6. पृथु चरित्र, 7. प्रचेता आख्यान, 8. प्रह्लाद उपाख्यान, 9. प्रह्लाद राज्य का पृथक् आख्यान।

---

[1] विष्णु पुराण में 23 हजार श्लोक हैं परन्तु भूल कर सुखसागर के बारहवें स्कन्ध में तीस हजार लिख दिया। यही नहीं वरंच चन्द कवि ने भी रायसा में 23 हजार चार सौ लिख दिया। परन्तु रायसा के कई एक पुस्तकों में 33400 और रामरत्न गीता में अस्सी हजार लिख दिया परन्तु तुलसी सदार्थ में तेईस हजार लिखा। मेरी राय से जिन जिन पुस्तकों में अन्तर है उन सब को यहां लिख देता हूं पाठकगण स्वयं विचार कर लें।

सुखसागर में मक्खनलाल ने लिखा है। ब्रह्मपुराण दस हजार वो पद्म पुराण पचपन हजार वो विष्णु पुराण तीस हजार वो शिवपुराण चौबीस हजार वो श्रीमद्भागवत पुराण अठारह हजार व नारद पुराण पच्चीस हजार वो मार्कंडेय पुराण नौ हजार वो अग्नि पुराण पन्द्रह हजार चार सौ वो लिंग पुराण ग्यारह हजार वो वाराह पुराण चौबीस हजार वो स्कन्द पुराण इक्यासी हजार एक सौ वो वामन पुराण दश हजार वो कूर्म पुराण सत्रह् हजार वो मत्स्य पुराण चौदह हजार वो गरुड़ पुराण उन्नीस हजार वो ब्रह्मांड पुराण बारह हजार श्लोक हैं।

पृथ्वीराज रासो में लिखा है–

पद्धरी

ब्रह्मन्यदेव सम वासुदेव । अष्टादस पुरान तिन कहै सभेव॥
तिन कहो नाम परिमान ब्रन्नि। जिन सुनत सुद्ध भव हो तन्नन्नि॥
ब्रह्मह पुरान दस सहस जुट्टि । जिहि पढ़त सुनत तन तप्प छुट्टि॥
पंचास पंचह हज्जार गन्नि। पद्मह पुरान तिन कह्यौ ब्रन्नि॥
तेईस सहस सै चारि जानि। विष्णू पुराण विष्णू समानि॥
चौबीस सहस कहि शिवपुरान । तिहि पढ़त सुनत सम अमियपान॥
अठार सहस भागवत भेव। करि पार परिष्यत सुक्कदेव॥
नारद पुरान कहि पाव लाख । तहां मुक्ति मोद आनन्द भाख॥
मारकंड नाम तेइस हजार। पौरान पवित्र सो दुःख हजार॥
पन्द्रह हजार संख्या सपूर । अग्नि पुरान पढ़ि पाप पूर॥
चवदै हजार सैं पांच पड्ढि। भवषित पुरान सो पाप जड्ढि॥
ब्रह्मवैव्रत सहसं अठार । केवल गिनान कथि भक्ति सार॥
रुद्रह हजार लिंगह पुरान । आनन्द अर्थ आगम गुरान॥
चौबीस सहस बाराह भक्ति। पौरख पुरान तिन अमित सक्ति॥
हजार इक्यासी कहि विवेक। स्कन्द पुरान भव भक्ति एक॥
इग्यारह सहस बावन सु अछ । पौरान सुनत सुधि अग्ग पछ॥
सत्रह हजार कूरम पुरान । भाषा विनोद प्राक्रम गुरान॥

→

प्रथम भाग द्वितीय अंश–1. प्रियव्रत उपाख्यान, 2. द्वीप और वर्ष निरूपण, 3. पाताल कथन, 4. नरक कथन, 5. सप्तस्वर्ग निरूपण, 6. सूर्यादि संचार, 7. भरत चरित्र, 8. मुक्तिमार्ग निरूपण, 9. निदाघादि ऋतु संवाद।

प्रथम भाग तृतीय अंश–1. मन्वन्तर कथा, 2. वेदव्यास अवतार, 3. नरक उद्धार और कर्म, 4. सगर एवं औघ संवाद में सर्व धर्म निरूपण, 5. वर्णाश्रम निरूपण, 6. श्राद्ध कल्प, 7. सदाचार कथन, 8. मायामोह की कथा।

→ विद्या हजार मित मछ देव। विधि संख उद्धरे सेव भेव॥
उनईस सहस गरुड़ह पुरान। श्रोतान वक्त भक्ति डरान॥
ब्रह्मांड पुरान बारह सहंस । करि व्यास भक्ति प्रभु कंस नंस॥
पन्द्रह हजार अरु च्यारि लाख। सम ब्रह्म व्यास कहि चन्द भाख॥

तुलसी शब्दार्थ में लिखा है। अष्टादश पुराण–

दोहा

ब्रह्म ब्रह्मांड बावन सरस, ब्रह्मवैवर्त सुजान।
मार्कंड अस भविष्य ये, राजस कहैं पुरान॥1॥
नारद विष्णु बराह अरु, गरुड़ पद्म सुखसार।
भगवत रूपी भागवत, ये सात्विक निरधार॥2॥
मीन कूर्म अरु लिंग शिव, स्कन्धरु अग्नि विचार।
तामस सिव के अंग ए, सुनतहि मिटै खमार॥3॥
बावन ब्रह्म दस दस सहस, द्वादस है ब्रह्मांड।
ब्रह्मवैवर्त दस सहस पुनि, पचपन पद्म अखंड॥4॥
पन्द्रह सहस सुचारि सत, मार्कंडे सु पुरान।
साढ़े चौदह भविष्य है, तेइस विष्णु बखान॥5॥
पंचविंस नारद कहत, सूकर चौबिस जान।
उनइस गरुड़ बखानिय, अठारह भगवत मान॥6॥
मत्स सु चौदह सहस है, कूरम सत्रह होइ।
लिंग इकादस कहत है, चौबिस रुद्र जु सोइ॥7॥
पावक पन्द्रह सहस पुनि, चारि सैकरा आन।
स्कन्ध इक्यासी सहस अरु, इकसत करत बखान॥8॥
तीन लाख अट्ठानबे, सहस वेद सत आद।
सब पुरान ऽश्लोक की, कही व्यास मर्याद॥9॥
उपपुराण नाम–सनतकुमारहि जान पुनि, नरसिंह स्कन्ध।
दुर्वासा आश्चर्य गनि, नारद कपिल प्रबन्ध॥10॥
मानव अरु ब्रह्मांड कहि, भार्गव गरुड़ बखान।
माहेस्वर पुनि कालिका, सांबरु सूर्य पुरान॥11॥
विष्णुपुरान परासरी पुनि, संचय सर्वार्थ।
देवि भागवत मिलि भए, अष्टादस सब सार्थ॥12॥

→

→ श्री भागवत के 12वें स्कन्ध के 13वें अध्याय में लिखा है।

ब्राह्मंदश सहस्राणिपाद्मंपंचोनषष्ठि च श्रीवैष्णवंत्रयोविंशच्चतुर्विंशति शैवकम्॥4॥
दशाष्टौ श्री भागवतं नारदंपंचविंशति मारकंडेयंनववाहनंतुदशपंच चतुः शतम्॥5॥
चतुर्दशभविष्यंस्यात्तथापंचशतानि च दशाष्टौब्रह्मवैवर्तलिंगमेकादशैवतु॥6॥
चतुर्विंशतिवाराहमेकाशीतिसहस्रकम् स्कांदंशतंतथाचैकंवामनन्दश कीर्तितम्॥7॥
कौर्मसप्तदशाख्यातंमात्स्यंतत्तुचतुर्दश एकोनविंशत्सौवर्णं ब्रह्मांडद्वादशैवतु॥८॥
एवं पुराण संदोहश्चतुर्लक्षउदाहृतः तत्राष्टदशसाहस्रं श्री भागवतमिष्टते॥9॥

पुराणों के नामों में भी कई एक लोगों ने पृथक् पृथक् लिखा है। यथा शब्द कोष में लिखा है—पुराण। (पुरा पुराना; पुर आगे जाना—अर्थात् जिस में पुराने समय की बातें हों, अथवा जो पुराने समय में बने हो) पुराण वे ग्रन्थ जिन में से बहुतों को व्यासजी ने बनाए अथवा इकट्ठे किए। पुराण सब पद्य में लिखे हुए हैं और उन को हिन्दू पवित्र मानते हैं। हर एक पुराण में विशेष कर के इन पांच बातों का वर्णन है। जैसे—सर्गश्च प्रति सर्गश्च वंशोमनवन्तराणि च। वंशानु चरितंचैव पुराणं पंच लक्षणम्॥

अर्थात् 1. संसार की उत्पत्ति; 2. प्रलय और प्रलय के पीछे फिर संसार की उत्पत्ति; 3. देवता और शूरवीरों की बंशावली, 4. मनुष्यों का राज और 5. उन के वंश के लोगों का व्यवहार और चलन। पुराण अठारह हैं—1. ब्रह्म पुराण, 2. पद्म पुराण, 3.ब्रह्मांड पुरण, 4. अग्नि पुराण, 5. विष्णु पुराण 6. गरुड़ पुराण, 7. ब्रह्मवैवर्त पुराण, 8. शिव पुराण, 9. लिंग पुराण, 10. नारद पुराण, 11. स्कंद पुराण, 12. मार्कंडेय पुराण, 13. भविष्यत् पुराण, 14. मत्स्य पुराण, 15. वाराह पुराण, 16. कूर्म पुराण, 17. वामन पुराण, 18. श्रीमद्‌भागवत पुराण। इन सब पुराणों में चार लाख श्लोक गिने गए हैं और अठारह उपपुराण भी हैं। पुराण पुराना; पहले का; सबसे पहला।

संस्कृत कोष में लिखा है—पुराण पुं. पण अर्थात् व्यवहार दांव मुख्य धन द्यूतव्यवहार अर्थात् जुए का खेल विष्णु निरंजीवी दीर्घायुः प्राण जीव के बनाए हुए अठारह पुराण तथा च प्रमाणम्। श्लोकमद्वयं द्वयं चैव व्रत्रयंवचतुष्टयम्। अनापलिंगकूस्कानि पुराणानि पृथक् पृथक्॥ मार्कंडेय पुराण 1. मत्स्य पुराण, 2. भविष्योत्तर पुराण, 3. भागवत पुराण, 4. ब्रह्मांड पुराण, 5. ब्रह्मवैवर्त पुराण, 6. ब्रह्मोत्तर पुराण, 7. वाराह पुराण, 8. वामन पुराण, 9. वायुपुराण, 10. विष्णु पुराण, 11. अग्नि पुराण, 12. नारद पुराण, 13. पद्मपुराण, 14. लिंगपुराण, 15. गरुड़ पुराण, 16. कूर्मपुराण, 17. स्कंद पुराण 18. शिव पुराण के उल्था में शिवसिंह ने यों लिखा है। पुराण अठारह है और उपपुराण भी अठारह है जिनके नाम यह हैं—पद्म 1. स्कंद, 2. गरुड़, 3. मत्स्य, 4. वायु, 5. ब्राह्मांड, 6. लिंग, 7. अग्नि, 8. कूर्म, 9. वामन, 10. नारदीय, 11. विष्णु, 12. भविष्योत्तर, 13. मार्कंडेय, 14. वाराह, 15. भारत, 16. ब्रह्मवैवर्तक, 17. भागवत, 18.। उपपुराण—काली 1 शाम्ब 2 सनत्कुमार 3 वरुण 4 मारीच 5 नन्दी 6 शिव 7 दुर्वासा 8 मुनि 9 नारदीय 10 कपिल 11 सौरि 12 मोहश्वरी 13 शुक्र 14 भार्गव 15 नृसिंह 16 धर्म 17 पाराशर 18।

अर्थ श्लोक अष्टादश पुराणे—

पद्म स्कंद विहंग मत्स्य पवनं ब्रह्मांडलिंगाग्नयः।
कूर्मोवामन नारदीयसहितं विष्णुं भावष्योत्तरं॥
मार्कंडेय वराह भारतयुतः श्री ब्रह्म वैवर्तकः।
श्रीमद्‌भागवतं दिशंतु परमं श्रेयः पुराणानिवै॥1॥

यथा अष्टादश उपपुराणे—

काली सांब सनत्कुमारवरुणं मारीचनन्दीशिवं।
दुर्वासांमुनिनारदीय कपिल शौरि च माहेश्वरी॥
शुक्रं भार्गवकंनृसिंहपरमं धर्म्मं च पाराशरं।
कुर्वन्त्युपपुराणनिसतते सम्मीलितेऽष्टादश॥2॥

प्रथम भाग चतुर्थ अंश–1.सूर्यवंश कथा 2. सोमवंश कथा।

प्रथम भाग पंचम अंश–1. नाना राजा लोगों की कथा, 2. श्री कृष्णावतार प्रश्न, 3. गोकुल कथा, 4. श्रीकृष्ण बाल्य लीला पूतनादि वध, 5. कौमार अघासुरादि वध, 6. कैशोर कंस वधादि मथुरा लीला, 7. यौवन द्वारावती लीला दैत्य वध एवं विवाह, 8. भूभार हरण, 9. अष्टावक्र उपाख्यान।

प्रथम भाग षष्ट अंश–1. कलिजात चरित्र 2. चतुर्विध लय कथा 3. ब्रह्मज्ञान कथा 4. केशिध्वज कर्तृक खांडिक्य निरूपण।

द्वितीय भाग–सूत्र -शौनक संवाद–1. विष्णु धर्म कथन, 2. नाना धर्म कथन, 3. पुण्य व्रत नियम एवं यम कथन, 4. धर्म शास्त्र, 5. अर्थ शास्त्र, 6. वेदान्त शास्त्र, 7. ज्योतिःशास्त्र, 8. वंश आख्यान, 9. स्तव कथन, 10. मनु सकल की कथा।

फल श्रुति–यह पुराण लिख कर आषाढ़ मास में घृत धेनु के साथ पौराणिक ब्राह्मण को दान करने से सूर्य के रथ पर आरोहण कर के विष्णु धाम में गमन एवं भक्ति युक्त पाठ किंवा श्रवण करने से विष्णु लोक में वास औ दिव्य भोग प्राप्ति होती है इस की अनुक्रमणिका पाठ वा श्रवण करने से समुदाय पुराण श्रवण फल होता है।

चतुर्थ वायुपुराण

पूर्व और उत्तर दो खंड चौबीस सहस्र श्लोक वायु ने श्वेत कल्प प्रसंग से सकल धर्म कहा है।

पूर्व भाग–1. स्वर्गादि लक्षण विस्तार कथन, 2. सकल मन्वन्तर के राजगण का वंश कथन, 3. गयासुर वध, 4. मास गणों की महिमा एवं माघ मास की विशेष महिमा, 5. दान धर्म एवं राज धर्म विस्तार कथन, 6. भूचर, पातालचर, दिक्चर एवं आकाशचर विवरण, 7. व्रत विवरण।

उत्तर भाग–1. नर्मदा तीर्थ कथन, 2. शिव संहिता कथन।

फल श्रुति–यह पुराण लिखा कर गुड़ धेनु के साथ गृहस्थ ब्राह्मण को श्रावण मास में दान करने से चतुर्दश इन्द्र परिमित काल रुद्रलोक में वास नियम एवं हविष्य से पुराण श्रवण करने से वा श्रवण कराने से रुद्र तुल्यता प्राप्ति। पुराण की अनुक्रमणिका सुनने से समुदाय पुराण श्रवण फल प्राप्त होता है।

पंचम श्रीभागवत

द्वादश स्कन्ध अठारह सहस्र श्लोक सारस्वत कल्पीय कथा।

प्रथम स्कन्ध–1. सूत और ऋषियों का मिलन, 2. व्यासदेव का पुण्य चरित्र, 3. पांडव का चरित्र, 4. परीक्षित का उपाख्यान।

द्वितीय स्कन्ध–1. परीक्षित शुक संवाद से सृष्टिद्वयनिरूपण, 2. ब्रह्मा नारद

संवाद से अवतार कथन, 3. पुराण लक्षण, 4. सृष्टि प्रकरण कथन।

तृतीय स्कन्ध–1. विदुर चरित्र एवं मैत्रेय मिलन, 2. बह्मा सृष्टि प्रकरण, 3. कपिल सांख्य कथन।

चतुर्थ स्कन्ध–1. सती चरित्र, 2. ध्रुव चरित्र, 3. पृथुचरित्र, 4. प्राचीनवर्हि आख्यान।

पंचम स्कन्ध–1. प्रियव्रतचरित्र एवं उन का वंश कथन, 2. ब्रह्मांडान्तर्गत लोक सकल का वृत्तान्त, 3. नरक स्थिति कथन।

षष्ठ स्कन्ध–1. अजामिल चरित्र, 2. दक्ष सृष्टि निरूपण, 3. वृत्रासुर आख्यान, 4. मरुत जन्म कथन।

सप्तम स्कन्ध–1. प्रह्लाद चरित्र, 2. वर्णाश्रम निरूपण, 3. वासना कर्म इत्यादि कीर्तन।

अष्टम स्कन्ध–1. गजेन्द्र मोक्षण, 2. मन्वन्तर निरूपण, 3. समुद्र मंथन, 4. बलि वैभव एवं बन्धन, 5. मत्स्यावतार चरित्र।

नवम स्कन्ध–1. सूर्यवंश कथन, 2. रामायण, 3. सोमवंश निरूपण।

दशम स्कन्ध–1. श्रीकृष्ण बाल चरित्र, 2. कौमार चरित्र, 3. ब्रज स्थिति, 4. कैशोर लीला, 5. मथुरावास, 6. यौवन, 7. द्वारकास्थिति, 8. भूभार हरण।

एकादश स्कन्ध–1. वसुदेव नारद संवाद, 2. यदु दत्तात्रेय संवाद, 3. श्रीकृष्ण उद्धव संवाद, 4. यादव मुक्ति कथन।

द्वादश स्कन्ध–1. भविष्य एवं कलि कथा, 2. परीक्षित मोक्ष, 3. वेदशाखा कथन, 4. मार्कंडेय तपस्या, 5. सौरी विभूति कथन, 6. पुराण संख्या कथन।

फलश्रुति–यह पुराण हेम सिंहासनस्थ कर के भादो पूर्णिमा को प्रीति पूर्वक ब्राह्मण को वस्त्र एवं स्वर्ण सहित दान करने से भगवद्भक्ति लाभ होता है और श्रवण करने से अथवा श्रवण कराने से भक्ति और मुक्ति लाभ होता है और इस की अनुक्रमणिका श्रवण करने किंवा कराने से सम्पूर्ण भागवत श्रवण फल लभ्य होता है।

षष्ठ नारद पुराण

पूर्व एवं उत्तर दो भाग में पच्चीस सहस्र श्लोक। पूर्व भाग चार पाद में विभक्त पूर्व भाग का प्रथम पाद–सूतशौनक संवाद–1. सृष्टि संक्षेप वर्णन एवं नाना धर्म कथा।

पूर्व भाग द्वितीय पाद–1. मोक्ष धर्म कथन मोक्षोपाय निरूपण, 2. वेदांग कथन, 3. सनन्दन कर्तृक नारद प्रति शुकोत्पत्ति कथन, 4. महातन्त्र से पशुपाश विमोचन, 5. मन्त्रशोधन, 6. दीक्षा, 7. मन्त्रोद्धार पूजा प्रयोग कवच विष्णु सहस्रनाम एवं स्तोत्र, 8. गणेश सूर्य विष्णु शिव एवं शक्ति का क्रम से उपाख्यान कथन।

पूर्व भाग तृतीय पाद–1. नारद और सनत्कुमार संवाद, 2. पुराण लक्षण प्रमाण एवं दान काल कथन, 3. चैत्रादि मास की प्रतिपदादि तिथि व्रत विस्तार कथन।

पूर्वभाग चतुर्थ पाद–1. सनातन कर्तृक नारद प्रति वृहदाख्यान कथन।

उत्तर भाग–1. एकादशी व्रत विषयक प्रश्न, 2. वशिष्ठ एवं मान्धाता का संवाद, 3. रुक्मांगद की कथा, 4. मोहिनी की उत्पत्ति एवं संवाद, 5. मोहिनी के प्रति वसु का शाप एवं उद्धार, 6. गंगा की पुण्य कथा, 7. गया यात्रा, 8. काशी माहात्म्य, 9. पुरुषोत्तम वर्णन, 10. क्षेत्रयात्रा एवं अन्यान्य बहु कथा, 11. प्रयाग माहात्म्य, 12. कुरुक्षेत्र माहात्म्य, 13. हरिद्वार माहात्म्य, 14. कामोदा आख्यान, 15. बदरी तीर्थ माहात्म्य, 16. कामाख्या, 17. प्रभास माहात्म्य, 18. पुराण आख्यान, 19. गौतमाख्यान, 20. वेदपादस्तव, 21. गोकर्ण क्षेत्र माहात्म्य, 22. लक्षण आख्यान, 23. सेतु माहात्म्य, 24. नर्मदा माहात्म्य, 25. अवन्ती माहात्म्य, 26. मथुरा माहात्म्य, 27. वृन्दावन माहात्म्य, 28. ब्रह्मा के निकट वसु का गमन, 29. मोहिनी चरित्र कथन।

फल श्रुति–यह पुराण श्रवण करने किंवा श्रवण कराने से ब्रह्म धाम प्राप्ति होती है और अनुक्रमणिका श्रवण करने से किंवा श्रवण कराने से स्वर्ग लाभ होता है और यह पुराण आश्विनी पूर्णिमा को सप्त धेनु युक्त उत्तम ब्राह्मण को दान करने से मोक्ष प्राप्ति होती है।

सप्तम मार्कंडेय पुराण

नौ सहस्र श्लोक

1. मार्कंडेय कर्तृक जैमिनि का पक्षियों के निकट प्रेरण, 2. धर्म पक्षि सकल का जन्म निरूपण, 3. इनकी पूर्व जन्म कथा, 4. सूर्य क्रिया कथन, 5. बलदेव तीर्थ यात्रा, 6. द्रौपदेय कथा, 7. हरिश्चन्द्रपुण्य कथा, 8. आडीवक नामक युद्ध कथा, 9. पिता पुत्र कथा, 10. दत्तात्रेय कथा, 11. हैहय चरित्र एवं माहात्म्य, 12. मदालसा कथा, 13. अलर्क चरित्र, 14. षष्टी संकीर्तन, 15. नवप्रकार पुण्यकथा, 16. कतिपय अन्तकाल निर्देश, 17. पक्षिसृष्टि निरूपण, 18. रुद्रादि सृष्टि, 19. द्वीप एवं वर्ष कथा, 20. मनु कथा और अष्टम मन्वन्तर में देवी माहात्म्य कथा, 21. प्रणवोत्पत्ति कथा वेद एवं तेज जन्म, 22. मार्कंडेय जन्म और माहात्म्य, 23. वैवस्वत चरित्र सहित वत्समीर चरित्र, 24. खनित्र पुण्य कथा, 25. अवक्षत चरित्र, 26. किमिच्छव्रत, 27. अविनाश चरित्र, 28. इक्ष्वाकु चरित्र, 29. तुलसी चरित्र, 30. रामचन्द्र कथा, 31. कुशवंश आख्यान, 32. सोमवंश की कथा, 33. नहुष की अद्भुत कथा, 34. ययाति चरित्र, 35. यदुवंश कीर्तन, 36. श्रीकृष्ण बाल चरित्र, 37. मथुरा में श्रीकृष्ण चरित्र, 38. द्वारका चरित्र, 39. सकल अवतार कथा, 40. सांख्ययोग उद्देश, 41. प्रपंच एवं असत्य कीर्तन, 42. मार्कंडेय चरित्र, 43. पुराण श्रवण फल।

फल श्रुति–यह पुराण लिखाकर सुवर्ण संयुक्त ब्राह्मण को दान करने से ब्रह्मपद मिलता है एवं भक्ति पूर्वक श्रवण करने से किंवा श्रवण कराने से मार्कंडेय तुल्य गति प्राप्ति और वांछित फल लाभ होता है।

अष्टम अग्निपुराण

पन्द्रह सहस्त्र श्लोक ईशानकल्प तथा वशिष्ठ नल उपाख्यान।

1. पुराण प्रश्न, 2. सर्व अवतार कथा, 3. सृष्टि प्रकरण कथन, 4. विष्णु पूजादि विधि, 5. अग्नि पूजा मन्त्र और मुद्रादि लक्षण, 6. दीक्षा विधान, 7. अभिषेक कथन, 8. मंडल करण लक्षण, 9. कुशमार्जन, 10. पवित्रारोपण विधि, 11. देवालयकरण विधि, 12. शालग्राम पूजा एवं लक्षण कथन, 13. प्रतिष्ठा प्रकरण, 14. न्यासादि विधि, 15. विनायक दीक्षा विधि, 16. अन्यान्य कथन, 17. देवप्रतिष्ठा विधि, 18. ब्रह्मांड निरूपण, 19. गंगादि तीर्थ माहात्म्य, 20. द्वीप वर्णन, 21. उर्द्ध एवं अधोलोक रचना, 22. ज्योतिषचक्र निरूपण, 23. ज्योतिष शास्त्र वर्णन, 24. युद्ध जयकरण शास्त्र, 25. षट्कर्म कथा, 26. मन्त्रयत्र औषध प्रकरण, 27. कुब्जिकादि कथन, 28. छह प्रकार के न्यास की विधि, 29. कोटि होम विधान एवं विस्तार निरूपण, 30. ब्रह्मचर्य धर्म, 31. श्राद्धकल्प विधि, 32. ग्रहयज्ञ, 33. वेदोक्त एवं स्मृत्युक्त कर्म, 34. प्रायश्चित कथन, 35. तिथि व्रतादि कथन, 36. बार व्रत, 37. नक्षत्र व्रत, 38. मास व्रत, 39. दीपदान विधि, 40. नूतन व्यूहार्चन प्रकरण, 41. नरक निरूपण, 42. व्रत एवं दान निरूपण, 43. नाड़ी चक्रवर्णन, 44. सन्ध्या विधि, 45. गायत्री अर्थ, 46. शिवलिंग स्तोत्र, 50. शकुन्यादि शुभाशुभ दृष्टि निरूपण, 51. मंडलादि निर्देश, 52. रणदीक्षा विधि, 53. श्री रामोक्तनीति, 54. रत्न लक्षण, 55. धनुर्विद्या, 56. व्यवहार निरूपण, 57. देवासुर विवर्धन आख्यान, 58. आयुर्वेद निरूपण, 59. गजादि की रोग चिकित्सा एवं आरोग्य कथन, 60. गो अश्वादि की चिकित्सा, 61. नाना पूजा प्रकरण, 62. विविध शान्ति, 63. छन्द शास्त्र, 64. साहित्य शास्त्र, 65. एकार्णवादि शास्त्र समाख्यान, 66. प्रसिद्ध शिष्टानुशासन, 67. धनागार एवं सृष्ट्यादि वर्ग, 68. प्रलय लक्षण, 69. शारीरिक निरूपण, 70. नरक वर्णन, 71. योग शास्त्र, 72. ब्रह्मज्ञान, 73. पुराण श्रवण माहात्म्य।

फल श्रुति–यह पुराण लिखा कर अग्रहायण मास में सुवर्ण कमल सहित अथवा तिल धेनु सहित पुराणवित् ब्राह्मण को दान करने से स्वर्ग लाभ होता है एवं यह पुराण श्रद्धा कर के श्रवण करने किंवा श्रवण कराने से सकल पाप क्षय होता है। और भक्ति युक्त होकर इस पुराण की अनुक्रमणिका पाठ करने से सकल पुराण पाठ का फल लभ्य होता है।

नवम भविष्य पुराण

पंच पर्व चौदह सहस्र श्लोक। अघोरकल्प वृत्तान्त। नाना आश्चर्य कथा। प्रथम पर्व ब्राह्मण पर्व और द्वितीय तृतीय चतुर्थ एवं पंचम पर्व एकत्र हैं।

प्रथम पर्व सूत शौनक संवाद–1. पुराण प्रश्न, 2. नाना आख्यान युक्त सूर्य चरित्र वर्णन, 3. सृष्ट्यादि लक्षण, 4. पुस्तक लेखक एवं लिखने का लक्षण, 5. सकल

प्रकार संस्थान लक्षण, 6. प्रतिपदादि तिथि एवं सप्त कल्प कथन, 7. विष्णु विषय अष्टम्यादि शेष कल्प कथा, 8. शैव विषय इच्छाधीन भिन्न भिन्न कल्प कथन, 9. सौर विषय शेष कथा, 10. नाना आख्यान युक्त प्रतिसृष्टि नाम वर्णन, 11. पुराण उपसंहार एवं पंच पर्व कथन। इस पर्व में धर्म विषय में ब्रह्मा की महिमा का आधिक्य कथन है।

द्वितीय पर्व–भोग विषय में शिव माहात्म्य कथन।

तृतीय पर्व–मोक्ष विषय में विष्णु का माहात्म्य कथन।

चतुर्थ पर्व–चतुर्वर्ग विषय में सूर्य माहात्म्य कथन।

पंचम पर्व–सर्व कथा युक्त प्रति सर्ग वर्णन। इस पुराण में अद्वितीय ब्रह्म का गुण तारतम्य रूप भेद से सकल देव की समता वर्णित है।

फल श्रुति–यह पुराण लिखा कर पोषी पौर्णिमा को गुड़ धेनु स्वर्ण वस्त्र माल्य सहित पुराण पाठक ब्राह्मण को दान करने से एवं श्रवण किंवा पाठ करने से सकल घोर पाप से विमुक्ति एवं ब्रह्म पद प्राप्ति होती है और पुराण की अनुक्रमणिका पाठ किंवा श्रवण करने से भक्ति मुक्ति मिलती है।

दशम ब्रह्मवैवर्तपुराण

चार खंड अठारह सहस्र श्लोक। 1. ब्रह्म खंड, 2. प्रकृति खंड, 3. गणेश खंड, 4. श्रीकृष्णजन्म खंड।

सूत-ऋषि संवाद प्रथम ब्रह्म खंड–1. सृष्टि प्रकरण, 2. नारद और ब्रह्मा विवाद एवं शापान्त, 3. नारद का शिवलोक गमन एवं गान शिक्षा, 4. शिवादेश से मरीचि के सहित नारद का सावर्णि प्रबोधार्थ सिद्धाश्रम में गमन।

द्वितीय प्रकृति खंड–1. सावर्णि नारद संवाद, 2. श्रीकृष्ण माहात्म्य युक्त नानाख्यान, 3. प्रकृति की अंश और कलाओं का माहात्म्य वर्णन, 4. उनका गंगादि विस्तार और माहात्म्य वर्णन।

तृतीय गणेश खंड–1. गणेशजन्म प्रश्न, 2. पुण्यव्रत कथन, 3. पार्वती कार्तिक एव गणेश जन्म, 4. कार्त्तवीय चरित्र, 5. परशुराम विवरण, 6. जमदग्नि एवं गणेश का आश्चर्य विवाद।

चतुर्थ श्रीकृष्ण जन्म खंड–1. श्रीकृष्ण जन्म प्रश्न एवं जन्मकथा, 2. गोकुल गमन, 3. पूतनादि वध, 4. बाल्य कौमार विविध लीला वर्णन, 5. शरत्काल में गोपी सहित रास क्रीड़ा, 6. श्री राधिका सहित निर्जन क्रीड़ा विस्तार वर्णन, 7. अक्रूर सहित हरि मथुरा गमन, 8. कंस वध, 9. द्विज संस्कार, 10. सांदीपनी गुरु निकट विद्योपार्जन, 11. कालयवन वध, 12. द्वारिका गमन, 13. नरकादि वध वर्णन।

फल श्रुति–यह पुराण लिख कर माघ मास में धेनु सहित ब्राह्मण को दान करने से ब्रह्मलोक प्राप्ति होती है एवं अज्ञान बन्धन से मुक्ति होती है और पाठ किंवा

श्रवण करने से संसार बन्धन क्षय होता है तथा इसी पुराण की अनुक्रमणिका पाठ करने से श्रीकृष्ण के प्रसाद से वांछित फल लाभ होता है।

एकादश लिंग पुराण

पूर्व एवं उत्तर दो भाग ग्यारह सहस्र श्लोक। शिव माहात्म्य प्रकाशक अग्नि कल्प कथा।

पूर्व भाग–1. पुराणान्त में सृष्टि विषयक संक्षेप प्रश्न, 2. योगाख्यान, 3. कल्पाख्यान, 4. लिंग उद्भव एवं पूजा, 5. सनत्कुमार और शैलादि का संवाद, 6. दधीचि चरित्र, 7. युग धर्म निरूपण, 8. कोष कथन, 9. सूर्य वंश एवं सोम वंश वर्णन, 10. सृष्टि वर्णन एवं त्रिपुर आख्यान, 11. लिंग प्रतिष्ठा कथन, 12. पशुपाश विमोक्षण, 13. शिव व्रत, 14. सदाचार निरूपण, 15. प्रायश्चित कथन, 16. श्रीशैल वर्णन, 17. अन्धक आख्यान, 18. वाराह चरित्र, 19. नृसिंह चरित्र, 20. जलन्धर वध, 21. शिव सहस्र नाम, 22. दक्षयज्ञ विनाश, 23. कामदेव दहन, 24. गिरिजा सह शिव विवाह, 25. विनायक आख्यान, 26. शिवनृत्य, 27. उपमन्यु कथा।

उत्तर भाग–1. विष्णु माहात्म्य, 2. अम्बरीष कथा 3. सनत्कुमारनन्दि संवाद 4. शिव माहाम्त्य 5. स्नान योगादिक वर्णन 6. सूर्य पूजा विधि 7. शिव पूजा 8. बहुविध दानादि विधि 9. श्राद्धप्रकरण, 10. मूर्ति प्रतिष्ठा प्रकरण, 11. घोरतम कथा, 12. ब्रजेश्वरी महाविद्या गायत्री महिमा वर्णन, 13. त्र्यम्बक माहात्म्य, 14. पुराण श्रवण माहात्म्य।

फल श्रुति–यह पुराण लिखा कर फाल्गुनी पूर्णिमा को तिल धेनु सहित भक्ति पूर्वक ब्राह्मण को दान करने से जरा मरण वर्जित होकर शिव सायुज्ज प्राप्ति होती है और पुराण पाठ वा श्रवण करने से नाना भोग कर के अन्त में शिव लोक में गमन होता है और अनुक्रमणिका श्रवण किंवा पाठ करने से श्रोता एवं पाठक उभय शिवभक्त होते हैं एवं बहुकाल स्वर्ग भोग करते हैं।

द्वादश वाराह पुराण

पूर्व एवं उत्तर भाग चौबीस सहस्र श्लोक विष्णु माहात्म्य वर्णन भूमि वराह संवाद मानवकल्प प्रसंग।

पूर्व भाग–1. आदिकृत वृत्तान्त रम्भा चरित्र कथन, 2. दुर्जय प्रति श्राद्ध कल्प कथा, 3. महातपस्या आख्यान, 4. गौरी उत्पत्ति कथन, 5. विनायक कथा, 6. नाग कथा, 7. सेनानी एवं आदित्य कथा, 8. देवगण कथा, 9. कुवेरगण सकल कथा, 10. वृष कथा, 11. सत्यतप कथा, 12. व्रत आख्यान, 13. अगस्त्य गीता, 14. रुद्रगीता, 15. महिषासुर वध में ब्रह्मा विष्णु एवं शिव की शक्ति एवं माहात्म्य कथन, 16. पर्वाध्याय, 17. श्वेत उपाख्यान, 18. गोदान कथा, 19. भगवद्धर्म्म, 20. व्रत एवं तीर्थ कथा, 21. अत्रि अपराध कथा, 22. शारीरिक प्रायश्चित, 23. सकल तीर्थ महिमा,

24. मथुरा माहात्म्य विशेष वर्णन, 25. ऋषि पुत्र प्रसंगाधीन यमलोक वर्णन, 26. कर्मविपाक, 27. विष्णुव्रत निरूपण, 28. गोकर्ण माहात्म्य।

उत्तर भाग–1. पुलस्त्य कुरुराज संवाद सकल तीर्थ माहात्म्य पृथक् पृथक् विस्तारित रूप वर्णन, 2. अशेष धर्माख्यान, 3. पौष्कर पुण्य कथा।

फल श्रुति–यह पुस्तक लिखा कर चैत्री पूर्णिमा के कांचन गरुड़ एवं तिल धेनु समन्वित भक्ति पूर्वक ब्राह्मण को दान करने से वैष्णव धाम प्राप्ति एवं देवता और ऋषि गण द्वारा वन्दित होता है और पुराण पाठ करने किंवा श्रवण करने से संस्कार नाशिनी विष्णु भक्ति लभ्य होती है।

त्रयोदश स्कन्द पुराण

सप्त खंड इक्यासी सहस्र श्लोक। 1. माहेश्वर खंड, 2. वैष्णव खंड, 3. ब्रह्म खंड, 4. काशी खंड, 5. अवन्ती खंड, 6. नागर खंड, 7. प्रभास खंड। इस पुराण में कार्तिकेय ने माहेश्वर धर्म कहा है।

प्रथम माहेश्वर खंड, प्रायः 12000 बारह सहस्र श्लोक–1. केदार माहात्म्य, 2. दक्ष यज्ञ कथा, 3. शिवलिंग अर्चन फल, 4. समुद्र मंथन 5. देवेन्द्र चरित्र, 6. पार्वती उपाख्यान एवं विवाह 7. कार्तिकेय उत्पत्ति 8. तारकासुर युद्ध 9. पाशुपत आख्यान, 10. चंडाख्यान, 11. दूत प्रवर्तन, 12. नारद समागम, 13. कुमार माहात्म्य, 14. पंचतीर्थ कला, 15. धर्म नृपाख्यान, 16. नदी एवं सागर कीर्त्तन, 17. इन्द्रद्युम्न कथा, 18. नाड़ी जंघ कथा, 19. पृथ्वी प्रादुर्भाव, 20. दमनक कथा, 21. महीसागर संयोग, 22. कुमार कथा, 23. नाना आख्यान युक्त तारक युद्ध, 24. तारकवध, 25. पंचलिंग निवेश, 26. द्वीपाख्यान, 27. उर्द्धलोक स्थिति, 28. ब्रह्मांड स्थिति एवं परिमाण, 29. वक्रेश कथा, 30. महाकाल समुद्भव एवं अद्भुत कथा, 31. वासुदेव माहात्म्य, 32. करितीर्थ वर्णन, 33. नाना तीर्थ कथा, 34. गुप्तक्षेत्र कथा, 35. पांडवों का पुण्य कथा, 36. महाविद्या प्रसाधन, 37. तीर्थयात्रा समाप्ति, 38.अरुणाचल माहात्म्य, 39. सनक एवं ब्रह्मा की कथा, 40. गौरी तपस्या एवं तीर्थ निरूपण, 41. महिषासुर के पुत्र का आख्यान एवं उसका अद्भुत वध, 42. शोनाचल में भगवती का नित्य अवस्थान कथन।

द्वितीय वैष्णव खंड–1. भूमि वराह आख्यान रोचक क्रुद्ध माहात्म्य, 2. कमला कथा, 3. श्रीनिवास स्थिति, 4. कुलाल आख्यान, 5. सुवर्ण मुख कथा, 6. नानाख्यान युक्त भारद्वाज कथा, 10. अम्बरीष कथा, 11. इन्द्रद्युम्न आख्यान, 12. विद्युनति कथा, 13. जैमिनी कथा, 14. नारद कथा, 15. नीलकंठ आख्यान, 16. नृसिंह वर्णन, 17. राजा की अश्वमेध कथा एवं ब्रह्मलोक गति, 18. रथयात्रा विधि एवं जन्म और स्नान यात्रा विधि, 19. दक्षिणामूर्ति आख्यान, 20. गुंडिचा आख्यान, 21. रथ रक्षा विधान, 22. शयनोत्सव वर्णन, 23. मन्त्रोक्त श्वेतोपाख्यान, 24. शक्रोत्सव, 25. दोलोत्सव, 26. भगवान का सांवत्सरिक व्रत कथन, 27. विष्णु पूजा, 28. मोक्ष साधन मन्त्रोक्त

नाना योग निरूपण, 29. दशावतार कथा, 30. स्नानादि कीर्तन, 31. बदरिका माहात्म्य, 32. वैनतेय शिला जात अग्न्यादि तीर्थ माहात्म्य, 33. भगवान के वास का कारण कपालमोचन तीर्थ कथा, 34. पंचधारा तीर्थ कथा, 35. मेरु संस्थापन, 36. कार्तिक माहात्म्य में मदालसा माहात्म्य, 37. धूम्रकोश आख्यान, 38. कार्तिक मास का दिन कृत्य, 39. भीष्म पंचक व्रत आख्यान, 40. तीर्थ माहात्म्य प्रसंग से स्नान विधान, 41. पुत्रादि कीर्तन एवं मालाधार कथा और पंचामृत स्नान एवं घंटा वादनादि फल, 42. नाना पुष्प द्वारा अर्चन फल, 43. तुलसीदल से अर्चन फल, 44. नैवेद्य माहात्म्य, 45. हरिवास वर्णन, 46. एकादशी एवं जागरण माहात्म्य, 47. मत्स्योत्सव विधान, 48. नाम माहात्म्य, 49. ध्यानादिपुण्य कथा, 50. मथुरा तीर्थ माहात्म्य, 51. द्वादश वन माहात्म्य, 52. श्रीमद्भागवत माहात्म्य, 53. बज्र शांडिल्य संवाद, 54. अन्तर्लीला कथन और श्रीनाथ केशव देवादि विग्रह स्थापन, 55. माघ में स्नान दान जप माहात्म्य और नानाख्यान, 56. वैशाख माहात्म्य, 57. शय्या दान फल, 58. जल दान फल, 59. कामाख्या वर्णन, 60. श्रुतदेव चरित्र, 61. व्याध उपाख्यान, 62. अक्षय तृती यादि विशेष पुण्य कीर्तन, 63. अयोध्या माहात्म्य चक्र ब्रह्मतीर्थ प्रसंग ऋण प्रति विमोक्ष कथा आधार सहस्र एवं स्वर्ग द्वार चन्द्र हरि और धर्म हरि वर्णन, 64. स्वर्णवृष्टि आख्यान, 65. तिलद्वार सहित सरयू मिलन कथा, 66. सीताकुंड कथा, 67. गुप्त हरि कथा, 68. सरयू और घर्घरा आख्यान, 69. गो प्रभाव, 70. दुग्धोदकथा, 71. गुरु कुंडादि पंचतीर्थ कथा, 72. घोषार्कादि त्रयोदश तीर्थ वर्णन, 73. गया कूप माहात्म्य, 74. मांडव्य आश्रम और पूर्व तीर्थ वर्णन, 75. अजितादि मानसादि असंख्य तीर्थ वर्णन।

तृतीय ब्रह्मखंड–1. सेतु माहात्म्य प्रसंग से स्नान एवं दर्शनजन्य फलकथन, 2. गालव तपस्या, 3. राक्षसाख्यान, 4. चक्रतीर्थ माहात्म्य, 5. देवी पतन कथा, 6. वेतालतीर्थ माहात्म्य, 7. पाप नाशादि तीर्थ कथन, 8. मंगलादि तीर्थ माहात्म्य, 9. ब्रह्मकुंड वर्णन, 10. हनुमत कुंड महिमा, 11. अगस्त्य तीर्थ फल, 12. रामतीर्थ कथन, 13. लक्ष्मीतीर्थ निरूपण, 14. शंखादि तीर्थ महिमा, 15. साध्यमृत तीर्थ महिमा, 16. धनुष्कोट्यादि तीर्थ महिमा, 17. क्षीर कुंडादि माहात्म्य, 18. गायत्र्यादि तीर्थ माहात्म्य, 19. रामनाम महिमा एवं तत्त्वज्ञानोपदेश, 20. सेतु यात्राभिधान, 21. धार्मरण्य माहात्म्य एवं ततस्थान सम्भूति और पुण्य कथा, 22. कर्म सिद्धि आख्यान, 23. ऋषिवंश, 24. अप्सरा तीर्थ माहात्म्य, 25. वर्ण एवं आश्रम धर्म और तत्त्व निरूपण, 26. देव स्थान विभाग, 27. बकुलार्क कथा, 28. छत्रानन्दा शान्ता श्री माता एवं मतंगिनी देवी की अवस्थिति, 29. इन्द्रेश्वरादि माहात्म्य, 30. द्वारकादि निरूपण, 31. लोहासुर आख्यान, 32. गंगाकूप निरूपण, 33. श्रीराम चरित्र, 34. सत्यमन्दिर, 35. जीर्णमन्दिरादि उद्धार कथा, 36. शासन प्रतिपादन, 37. जाति भेद कथन, 38. स्मृति धर्म निरूपण, 39. नानाख्यान से वैष्णव धर्म निरूपण, 40 चातुर्मास्य सकल धर्म निरूपण, 41. दानव्रत महिमा, 42. तपस्या पूजा एवं सच्छत्र कथन, 43. प्रकृति आख्यान, 44. शालिग्राम निरूपण, 45. तारकासुर वध उपाय, 46. लक्ष्मी अर्चन एवं महिमा, 47. विष्णु की शाप से वृक्षत्व

प्राप्ति एवं पार्वती का अनुनय, 48. महादेव का तांडवनृत्य रामनाम निरूपण, 49. हरलिंग पतन, 50. जवन कथा, 51. पार्वती जन्म और चरित्र, 52. तारक वध, 53. प्रणव ऐश्वर्य कथन, 54. तारक चरित्र, 55. दक्ष यक्ष समाप्ति, 56. द्वादश अक्षर निरूपण, 57. ज्ञान योग आख्यान, 58. द्वादश आदित्य महिमा, 59. श्रावणादि पुण्य कथा।

तृतीय ब्रह्म खंड उत्तर भाग–1. शिव का अद्‍भुत माहात्म्य, 2. पंचाक्षर महिमा, 3. गोकर्ण महिमा, 4. शिवरात्रि महिमा, 5. प्रदोष व्रत कीर्तन, 6. सोमवार व्रत, 7. सीमन्तिनी कथा, 8. भद्रायु उत्पत्ति कथन, 9. सदाचार, 10. शिव धर्म कथा, 11. भद्रायु विवाह एवं महिमा, 12. भस्म माहात्म्य, 13. शवराख्यान, 14. उमा माहेश्वर व्रत, 15. रुद्राक्ष माहात्म्य, 16. रुद्राध्याय माहात्म्य श्रवणादि पुण्य कथन।

चतुर्थ काशी खंड विन्ध्य नारद संवाद–1. सत्य लोक प्रभाव, 2. अगस्त्याश्रम में देवता सकल का आगमन, 3. पतिव्रता चरित्र, 4. तीर्थयात्रा प्रशंसा, 5. सप्तपुरी आख्यान, 6. यमपुरी निरूपण, 7. शिव शर्मा की ध्रुवलोक इन्द्रलोक अग्नि लोक प्राप्ति, 8. अग्नि उद्‍भव, 9. क्रव्याद वरुण सम्भव, 10. गन्धवती अलकापुरी एवं ईश्वरी का उद्‍भव और चन्द्र मंगल बुध एवं रवि आदि लोक का उद्‍भव, 11. सप्त ऋषि एवं ध्रुव लोक का वर्णन, 12. ध्रुवलोक की पुण्य कथा, 13. सत्य लोक निरूपण, 14. स्कन्ध और अगस्त्य का अलाप, 15. मणिकर्णिका का उद्‍भव, 16. गंगा का प्रभाव एवं सहस्र नाम, 17. वारानसी प्रशंसा, 18. भैरव आविर्भाव, 19. दंडपाणि एवं ज्ञान रवि का उद्‍भव, 20. कलावती आख्यान, 21. सदाचार निरूपण, 22. ब्रह्मचारि कथा, 23. स्त्री लक्षण कथन, 24. कृत्याकृत्य निर्देश, 25. अविमुक्तेश्वर वर्णन, 26. गृहस्थ एवं योगि धर्म 27. काल ज्ञान, 28. दिवोदास कथा, 29. काशी वर्णन, 30. योगिचर्या लोलार्क, 31. शाष्वार्क कथा, 32. द्युपदार्क एवं तार्क्ष तीर्थकथा, 33. अरुणार्क का उदय, 34. दशाश्वमेध आख्यान, 35. मन्दराचल से गणपति की माया प्रकाश, 36. पिशाचमोचन आख्यान, 37. गणेश प्रेषण, 38. गणपति का आगमन और माया प्रकाश, 39. पृथ्वी से माया का प्रादुर्भाव, 40. विष्णु माया का विस्तार, 41. दिवोदास विमोचन, 42. पंच नदोत्पत्ति, 43. बिन्दुमाधव सम्भव, 44. वैष्णव तीर्थ आख्यान, 45. महादेव का काशी में आगमन, 46. जैगायव्य के सहित महेश का आख्यान, 47. शिवक्षेत्र आख्यान, 48. कन्दुकेश्वर एवं व्याघ्रेश्वर का उद्‍भव, 49. शैलेश्वर एवं कृत्तिवास का उद्‍भव, 50. देवता सकल का अधिष्ठान, 51. दुर्गासुर का पराक्रम, 52. दुर्गाविजय, 53. ओंकारेश्वर वर्णन, 54. ओंकार माहात्म्य, 55. त्रिलोचन समुद्भव, 56. केदार आख्यान, 57. धर्मेश्वर कथा, 58. वीरेश्वर आख्यान, 59. गंगा माहात्म्य कीर्तन, 60. विश्वकर्मेश्वर महिमा, 61. दक्ष यज्ञोद्‍भव, 62. सतीश्वर एवं अमृतेश्वर उपाख्यान, 63. पराशर भुजस्तम्भ, 64. क्षेत्र तीर्थ समूह वर्णन, 65. मुक्ति मंडप कथा, 66. विश्वेश्वर विभव, 67. यात्रा परिक्रम।

पंचम अवंती खंड–1. महकाल यवन का आख्यान, 2. ब्रह्मशीर्षच्छेद, 3. प्राचश्चित विधि, 4. अग्नि उत्पत्ति एवं आगमन, 5. देवदक्ष, 6. नाना पाप नाशन शिव स्तोत्र, 7.

कपाल मोचन आख्यान एवं महाकाल वनस्थिति, 8. कर्णखलेश तीर्थ आख्यान, 9. अप्सरा कुंड कथा, 10. स्वर्ग में रुदकुंड उपाख्यान, 11 कुंदुड़वेश एवं मर्कटेश्वर तीर्थ वर्णन, 12. स्वर्गद्वार चतुः सिन्धु शंकरांक गन्धवती एवं दशाश्वमेध कालांश तीर्थ वर्णन, 13. पिशाचकादि यात्रा, 14. हनुमान एवं यमेश्वर वर्णन, 15. महाकालेश्वर यात्रा, 16. वाल्मीकेश्वर तीर्थ, 17. भेषजाख्य शुक्र तीर्थ कुशस्थली प्रदक्षिणा, 18. अक्रूर मन्दाकिनी कपाल चन्द्रार्क वैभव करभेश लड्डुकेशादि तीर्थ वर्णन, 19. मार्कंडेश्वर, 20. यज्ञवापी, 21. सोमेश, 22. नरकान्तक, 23. केदारेश्वर, 24. रामेश्वर, 25. सौभाग्येश्वर, 26. नरार्क, 27. केशार्क, 28. शक्ति भेद, 29. स्वर्णाक्षर मुख, 30. ओंकारेश्वरादि तीर्थ वर्णन, 31. अन्धक स्तुति कीर्तन, 32. कालारण्य लिंग संख्या, 33. स्वर्ण शृंग, 34. कुशस्थली, 35. अवंत्याश्व, 36. उज्जयिनी, 37. पद्मावती, 38. कूर्मद्वती, 39. रमावती नामक तीर्थ उपाख्यान, 40. विशाल एवं प्रतिकल्प, 41. ज्वर शान्तिक तीर्थ कथन, 42. शिप्रास्नानादि फल, 43. नाग कृत शिव स्तुति, 44. हिरण्याक्ष बधाख्यान, 45. सुन्दरकांड, 46. नील गंगा, 47. पुष्कर, 48. विन्ध्यवासिनी, 49. पुरुषोत्तम, 50. अविनाश, 51. अघ नाशन, 52. गोमती, 53. वामन एवं कुंड तीर्थ वर्णन, 54. विष्णु सहस्र नाम, 55. काल भैरव तीर्थ वीरेश्वर सरोवर आख्यान, 56. नाग पंचमी में नृसिंह महिमा वर्णन, 57. जयन्तिका कुठारेश्वर यात्रा, 58. देवसाधक, 59. कर्कराज, 60. विघ्नेशादि सुरोहण तीर्थ विवरण, 61. रुद्रकुंडादि बहुतीर्थ निरूपण, 62. अष्टतीर्थ निरूपण, 63. रेवा माहात्म्य, 64. धर्म पुत्र का वैराग्य वशतः मार्कंडेय संगम, 65. प्रागलय उपाख्यान, 66. अमृता कीर्तन, 67. प्रति कल्प में नर्मदा वर्णन, 68. आर्यस्तव, 69. नर्मदास्तव, 70. कालरात्रि कथा, 71. महादेव स्तुति, 72. पृथक् पृथक् कल्प की अद्‌भुत कथा, 73. विशल्याख्यान, 74. जालेश्वर कथा, 75. गौरीव्रत, 76. त्रिपुर दहन कथा, 77. देहपात विधान, 78. कावेरी संगम, 79. दारुतीर्थ ब्रह्माभिन्नईश्वर कथा, 80. अग्नि, 81. रवि, 82. मेघनाद, 83. द्विदारुक, 84. देव, 85. नर्मदेश्वर, 86. कपिलाख्य, 87. करंजक, 88. कुंडलेश्वर, 89. पिप्पलाद, 90. विमलेश्वरादि तीर्थ कथन, 91. शचीहरण आख्यान, 92. मन्दक वध, 93. शूलभेद उद्भव, 94. पृथक् दान धर्म कथन, 95. दीर्घतापस आख्यान, 96. ऋष्य शृंग कथा, 97. चित्रसेन कथा, 98. काशीराज मोक्षण, 99. देवशिला आख्यान, 100. शबरी चरित्र, 101. व्याधाख्यान, 102. पुष्करिण्यर्क, 103. तापितेश्वर, 104. शक्र, 105. करोटीक, 106. कुमारेश, 107. अगस्त्येश, 108. मातृज, 109. लोकेश, 110. धनदेश, 111. मंगलेश, 112. कामज, 113. नागेश, 114. गोपार, 115. गौतम, 116. शंखचूड़ज, 117. नारदेश, 118. नन्दिकेश, 119. वरुणेश्वर, 120. दधि स्कंद, 121. हनुमन्तेश्वर, 122. रामेश्वर, 123. सोमेश, 124. पिंगलेश्वर, 125. ऋणमोक्ष, 126. कपिलेश्वर, 127. पृतिकेश्वर, 128. जलेशय, 129. चंडार्क, 130. यम, 131. कलहडीश, 132. नादिक, 133. नारायण, 134. कोटीश्वर, 135. व्यास, 136. प्रभासिका, 137. नागेश्वर, 138. संकर्षण, 139. मन्मथेश्वर, 140. एरंडी संगम, 141. सुवर्णशील, 142. करंज, 143.

कामह, 144. मांडीर, 145. वाहिनीभव, 146. चक्र, 147. धौतपाप, 148. स्कान्द, 149. आंगिरस, 150. कोटि, 151. अयोनि, 152. अंगार, 153. त्रिलोचन, 154. इन्द्रेश, 155. जम्बुकेश, 156. सोमेश, 157. कोहनांशक, 158. नार्मद, 159. आर्क, 160. आग्नेय, 161. भार्गविश्वर, 162. ब्राह्म, 163. देव, 164. भागेश, 165. आदि वाराह, 166. रामेश, 167. सिद्धेश, 168. आहल्य, 169. कंटकेश्वर, 170. शाक्र, 171. सौम्य, 172. नान्देश, 173. तापेश, 174. रुक्मिणीभव, 175. योजनेश, 176. वराहेश, 177. द्वादशी तीर्थ, 178. शिव, 179. सिद्धेश, 180. मंगलेश्वर, 181. लिंग वराह, 182. कुंडेश, 183. श्वेतवाराह, 184. भार्गवेश, 185. रवीश्वर, 186. शुक्लादि, 187. हुंकारस्वामि, 188. संगमेश, 189. नरकेश, 190. मोक्ष, 191. सार्प, 192. गोपक, 193. नाग, 194. शाव, 195. सिद्धेश, 196. मार्कंड, 197. अक्रूर, 198. कामोद, 199. शूलारोप, 200. मांडव्य, 201. गोपकेश्वर, 202. कपिलेश, 203. पिंगलेश, 204. भूतेश, 205. गांग, 206. गौतम, 207. अश्वमेध, 208. मुदुकच्छ, 209. केदारेश्वर, 210. कणखलेश, 211. जालेश्वर, 212. शालग्राम, 213. वराह, 214. चन्द्रप्रभास, 215. आदित्य, 216. श्रीपति, 217. हंसक, 218. मूलस्थान, 219. शूलेश, 220. आग्नेय एवं चित्रदैवक, 221. शिखीश्वर, 222. कोटि, 223. दशकन्य, 224. सुवर्णक, 225. ऋणमोक्ष, 226. भारभूति, 227. पुंख, 228. मुंडिम, 229. आमलेश्वर, 230. कपालेश्वर, 231. शृंगेरंडीभव, 232. कोटी, 233. लोटनेश्वर तीर्थ विवरण, 234. फलश्रुति कथन, 235. दृमिजंगल माहात्म्य रोहिताश्व कथा, 236. धुन्धुमार उपाख्यान, 237. धंधुमार वधोपाय, 238. धुन्धुमार वध कथन, 239. चित्रवह उद्भव एवं, 240. महिमा कथन, 241. चंडीश प्रभाव, 242. रतीश्वर वर्णन और केदारेश्वर वर्णन, 243. लक्ष तीर्थ कथन, 244. विष्णुपदी उद्भव, 245. खुखार, 246. च्यवनान्ध, 247. ब्रह्म सरोवर, 248. चक्र, 249. ललिता, 250. बहुगोमुख, 251. रुद्रावर्त, 252. मार्कंड, 253. रावणेश्वर, 254. शुद्धपट, 255. देवान्धु, 256. प्रेत, 257. जिह्वोद, 258. सम्नूति, 259. शिवोद भेद तीर्थ वर्णन, 260. फलश्रुति ।

षष्ट नागर खंड–1. लिंगोत्पत्ति आख्यान, 2. हरिश्चन्द्र कथा, 3. विश्वामित्र माहात्म्य, 4. त्रिशंकु स्वर्ग गति, 5. हाटकेश्वर माहात्म्य, 6. वृत्रासुर वध, 7. नागविल्व, 8. शंखतीर्थ कथा, 9. अचलेश्वर वर्णन, 10. चमत्कार पुराख्यान, 11. गयशीर्ष, 12. बालसख्य, 13. बालमंड, 14. मृगाह्वय, 15. विष्णुपाद, 16. गोकर्ण, 17. युगरूप, 18. समाश्रय, 19. सिद्धेश्वर, 20. नागसरोवर, 21. सप्तार्षेय, 22. अगस्त्य, 23. भ्रणगर्तनेश, 24. भैष्म औ इन्दुवैर और अर्क्क, 25. सार्मिष्ट, 26. शोभनार्थ, 27. दौगर्भमान सजकेश्वर तीर्थ वर्णन, 28. जमदग्नि उपाख्यान, 29. नैः क्षत्रिय कथा, 30. राहह्द, 31. नागपुर, 32. षड़लिंग, 33. यज्ञभू, 34. मुंडिरादि, 35. त्रिकार्क, 36. सती परियागेश, 37. यागेश वालिखिल्य, 38. गाडुर तीर्थ कथन, 39. लक्ष्मी सप्तविंशति शाप कथन, 40. सोमप्रसाद कथन, 41. अम्बावृद्ध, 42. पादुकाख्य, 43. आग्नेय, 44. ब्रह्मकुंड, 45. गोमुख, 46. लोह-षष्टयाख्य, 47. आजावालेश्वरी, 48. शालेश्वर, 49. राजवापी, 50. रामेश्वर, 51. लक्ष्मणेश्वर, 52. कुशेश्वर, 53. लवेश्वर तीर्थ वर्णन, 54. लिंग उपाख्यान, 55. अष्टषष्टि

समाख्यान, 56. दमयन्ती एवं त्रिजातक उपाख्यान, 57. रेवती, 58. भट्टिका तीर्थ, 59. क्षेमंकरी, 60. केदार, 61. शुक्ल, 62. सुखारक, 63. सत्य संघेश्वर तीर्थ आख्यान, 64. कर्णोत्पला नदी कथा, 65. अटेश्वर, 66. याज्ञवल्क्य, 67. गौरी, 68. गणेश तीर्थ कथा, 69. वास्तुपदा आख्यान, 70. अजाग्रह कथा, 71. सौभाग्यादि कथा, 72. शूलेश्वर कथा, 73. धर्मराज कथा, 74. मिष्टाम्प्रदेश्वर आख्यान, 75. गाणपत्य त्रय कथा, 76. जाबालि चरित्र, 77. मकरेश्वर कथा, 78. कालेश्वरी, 79. अन्धकोपाख्यान, 80. अप्सरा कुंड उपाख्यान, 81. पुष्पादित्य उपाख्यान, 82. रोहिताश्व उपाख्यान, 83. नागरोत्पत्ति कीर्तन, 84. भार्गव चरित्र, 85. विश्वामित्र, 86. सारस्वत चरित्र, 87. पैप्पलाद, 88. कंसारीश एवं, 89. पौंड तीर्थ वर्णन, 90. सावित्र्याख्यान सहित ब्रह्मा यज्ञ चरित्र एवं रैवत भर्तृ यज्ञाख्यान कथा, 91. मुख्य तीर्थ निरीक्षण, 92. कौरव क्षेत्र, 93. हाटकेश क्षेत्र, 94. प्रभास क्षेत्र उपाख्यान, 95. पौष्कर क्षेत्र, 96. नैमिष क्षेत्र, 97. धर्म अरण्य क्षेत्र, 98. वारानसी, 99. द्वारका, 100. अवन्ती पुरी कथन, 101. वृन्दाबन, 102. खंडवारण्य, 103. अद्वैताख्य पुरी कथन, 104. कल्प, 105. शालग्राम एवं, 106. नन्दग्राम का उपाख्यान, 107. असि, 108. शुक्ल, 109. पितृसंज्ञ तीन तीर्थ का वर्णन, 110. श्च्यर्बुद, 111. रैवत, 112. शैव इन तीन पर्वतों का उपाख्यान, 113. गंगा, 114. नर्मदा, 115. सरस्वती इन तीन नदियों का उपाख्यान, 116. कुपिका औ शंख, 117. अमरक एवं बालमंडन इन चार तीर्थ का हाटकेश्वर तीर्थ क्षेत्र के समान फल कथन, 118. साम्बादित्य, 119. श्राद्धकल्प, 120. युधिष्ठिर, 121. आन्धक, 122. जलशायि 123. चातुर्मास्य, 124. अशून्य शयन व्रत कथन, 125. मंगलेश, 126. शिवरात्रि, 127. तुला पुरुष दान, 128. पृथ्वी दान कथन, 129. बालकेश्वर, 130. कपालमोचनेश्वर, 131. पाप पीड़, 132. सप्तलिंग वर्णन, 133. युगपरिमाणादि कथन, 134. निवेशशाक, 135 भार्याशाया कथन, 136. एकादश रुद्र कथन, 137. दान माहात्म्य, 138. द्वादश आदित्य उपाख्यान।

सप्तम प्रभास खंड–1. सोमेश वर्णन, 2. विश्वेश वर्णन, 3. अर्कस्थल वर्णन, 4. सिद्धेश्वरादि का पृथक् उपाख्यान, 5. अग्नितीर्थ, 6. कपर्द्दीश तीर्थ वर्णन, 7. भीम, 8. भैरव, 9. चंडीश, 10. भास्कर, 11. अंगारकेश्वर, 12. बुध वृहस्पति मंगल चन्द्र शनि, 13. राहु केतु, 14. शिव स्वरूप पूर्ति वर्णन, 15. सिद्धेश्वरादि पंचरुद्र अवस्थिति वर्णन, 16. वरारोहा, 17. अजापाला, 18. मंगला, 19. ललिता एवं ईश्वरी, 20. लक्ष्मीश, 21. वाडवेश, 22. अर्धीश, 23. कामेश्वर, 24. गौरीश्वर, 25. वरुणेश्वर, 26. उशीष, 27. गणेश्वर, 28. कुमारेश, 29. शाकल्य, 30. शकल एवं उतंक, 31. गौतम, 32. दैत्यध्नेश, 33. चक्रतीर्थ सन्निहितार्थ कथन, 34. भूतेशादि लिंग कथन, 35. आदि नारायण कथन, 36. चक्रधराख्यान, 37. साम्बादित्य कथा, 38. कंटक शोधिनी कथा, 39. महिषध्नी कथा, 40. कपालीश्वर कथा, 41. कोटीश कथा, 42. बालब्रह्म कथा, 43. नरकेश, 44. सम्वर्तेश, 45. निधीश्वर कथा, 46. बलभद्र कथा, 47. गंगा कथा एवं गणेश्वर कथा, 48. जाम्बवती कथा, 49. पांडुकूप सत्कथा, 50.

शतमेध एवं कोटिमेध कथा, 51. दुर्बासार्क, 52. यदुस्थान, 53. हिरण्यारंगम कथा, 54. नगरार्क, 55. श्रीकृष्ण, 56. संकर्षण एवं समुद्र कथा, 57. कुमारी क्षेत्रपाल, 58. ब्रह्मेश की पृथक् कथा, 59. पिंगल, 60. संगमेश्वर, 61. शंकरार्क, 62. घटेश की कथा, 63. ऋषितीर्थ, 64. नन्दार्क तीर्थ, 65. त्रितयकूप कीर्तन, 66. शशपाल, 67. पर्णार्क, 68. अंशुमती की अद्भुत कथा, 69. वाराह, 70. स्वामि वृत्तान्त, 71. छाया लिगाख्य, 72. गुल्फ कथा, 73. कनक नन्दा, 74. कुंती एवं, 75. गंगेश कथा, 76. चमसोद्भेद, 78. विदुर, 78. त्रिलोकेश कथा, 79. मंचनेश, 80. त्रैपुरेश, 81. षंड तीर्थ कथा, 82. सूर्य्याप्राची, 83. त्र्यक्षण, 84. उमानाथ कथा, 85. भृंगार, 86. मूल स्थल, 87. च्यवनाकेश कथा, 88. अजपालेश, 89. वालार्क, 90. कुबेर स्थल कथा, 91. ऋषितोषा कथा, 92. संगालेश्वर कीर्तन, 93. नारदादित्य कथन, 94. नारायणनिरूपण, 95. तप्तकुंड माहात्म्य, 96. मूलचंडीश वर्णन, 97. चतुर्वक गणाध्यक्ष, 98. कलम्बेश्वर कथा, 99. गोपाल स्वामि, 100. बकुल स्वामि, 101. मारुती कथा, 102. क्षेमार्क, 103. उन्नत, 104. विघ्नेश, 105. जलस्वामि कथा, 106. कालमेघ, 107. रुक्मिणी, 108. उव्वशीश्वर, 109. भद्रा कथा, 110. शंखावर्त, 111. इक्षुतीर्थ, 112. गाप्यद एवं अच्युत गृह कथा, 113. जालेश्वर, 114. हुंकार कूप, 115. चंडीश कथा, 116. आशापुर विघ्नेश एवं, 117. कलकुंड, 118. कपिलेश्वर कथा, 119. जरद्रव शिव कथा, 120. नल, 121. कर्कोट, 122. हाटकेश्वर कथा, 123. नारदेश, 124. यन्त्रभूषा एवं दुर्गकूट एवं गणेश कथा, 125. सुपर्णलाख्य, 126. भैरवी, 127. भल्लतीर्थ कथा, 128. कर्द्दमाल कीर्तन, 129. गुप्त सोमेश्वर कीर्तन, 130. बहु स्वर्णेश, 131. शृंगेश, 132. कोटीश्वर कथा, 133. मार्कंडेश्वर, 134. कोटीश्वर एवं, 135. दामोदर गृह कथा, 136. स्वर्ण रेखा, 137. ब्रह्मकुंड, 138. कुम्भीश्वर, 139. भीमेश्वर, 140. ब्रह्मायर्थ क्षेत्र मृगाकुंड, 141. सर्वस्व कथा, 142. विघ्नेश, 143. गंगेश, 144. रैबत कथा, 145. अर्बुदेश्वर कथा, 146. अचलेश्वर, 147. नागतीर्थ कथा, 148. वशिष्ठाश्रम वर्ण, 149. भद्रं वर्ण माहात्म्य, 150. त्रिनेत्र माहात्म्य, 151. केदार माहात्म्य, 152. तीर्थागमन कीर्तन, 153. कोटीश्वर, 154. रूपतीर्थ, 155. हृषीकेश कथा, 156. सिद्धेश, 157. शुकेश्वर, 158. मणिकर्क्रेर्णिकेश कीर्तन, 159. पंगु, 160. यम एवं, 161. वराह तीर्थ वर्णन, 162. चन्द्र प्रभास, 163. पिंडोद, 164. श्रीमाता, 165. शुक्ल, 166. कात्यायनी तीर्थ माहात्म्य, 167 पिंडारक माहात्म्य, 168. कनखल, 169. चक्र एवं, 170. मानुष तीर्थ माहात्म्य, 171. कपिलाग्नि, 172. रक्तानुबन्ध तीर्थ कथा, 173. गणेश, 174. पार्थेश्वरयात्रा, 175. मुद्गल यात्रा कथन, 176. चंडीस्थान, 177. नागोद्भव शिव कुंड, 178. महेश कथा, 179. कामेश्वर, 180. मार्कंडेय उत्पत्ति कथा, 181. उद्दालकेश, 182. सिद्धेश गत तीर्थ कथा, 183. श्री देवमाता उत्पत्ति, 184. व्यास, 185. गौतम तीर्थ कथा, 186. कुलसान्ता माहात्म्य, 187. राम एवं कोटि तीर्थ कथा, 188. चन्द्रोद्भव, 189. ईशानशृंग, 190. ब्रह्मस्थानोद्भव, 191. त्रिपुष्कर, 192. रुद्र हृद, 193. गुहेश्वर कथा, 194. अविमुक्त माहात्म्य, 195. उमा माहेश्वर माहात्म्य, 196.

महौजस प्रभाव, 197. जम्बुतीर्थ वर्णन, 198. गंगाधर एवं मिश्र कथा, 199. फलश्रुति, 200. द्वारका माहात्म्य प्रसंग चन्द्र शर्म कथा, 201. एकादशी जागरणादि व्रत, 202. महा द्वादशीकथा, 203. प्रह्लाद एवं ऋषि समागम, 204. दुर्वासा उपाख्यान, 205. यात्रा उपक्रम कीर्तन, 206. गोमती उत्पत्ति कथन, 207. गोमती स्नानादि फल, 208. चक्रतीर्थ माहात्म्य, 209. गोमती समुद्र संगम, 210. दुःसनकादि ह्रदाख्यान, 211. नृगतीर्थ कथा, 212. गोप्रचार कथा, 213. गोपी द्वारका गमन, 214. गोपी सरोवर आख्यान, 215. ब्रह्मतीर्थादि कीर्तन, 216. नानाख्यान युक्त पंचनदी आख्यान, 217. शिवलिंग, 218. महातीर्थ, 219. कृष्णपूजादि कीर्तन, 220. त्रिविक्रममूर्त्ति कथा, 221. दुर्वासा एवं श्रीकृष्णकथन, 222. कुशदैत्य वधोपाख्यान, 223. प्रतिमा आख्यान, 224. विशेष पूजाफल, 225. गोमती एवं द्वारिका में तीर्थ आगमन कीर्तन, 226. कृष्ण मन्दिर दर्शन फल, 227. द्वारावती अभिषेक, 228. द्वारका तीर्थ वास कथा, 229. द्वारकापुर कीर्तन।

फल श्रुति–यह पुराण लिखा कर हेमशूल युक्त ब्राह्मण को दान करने से शिवलोक की प्राप्ति होती है।

चतुर्दश वामनपुराण

पूर्ण, उत्तर दो भाग, दस सहस्र श्लोक। उत्तर भाग वृहत् वामन संज्ञक इस पुराण में त्रिविक्रम चरित्र बहुविध वर्णित है कूर्म्म कल्प का आख्यान।

प्रथम पूर्व भाग–1. पुराण प्रश्न, 2. ब्रह्मा शिरच्छेद कथा, 3. कपाल मोचन आख्यान, 4. दक्ष यज्ञ विनाश, 5. महादेव का कालरूप धारण, 6. कामदेव दहन, 7. प्रह्लाद नारायण का युद्ध एवं देवता असुर का युद्ध एवं सूर्य की कथा, 9. भुवनकोश वर्णन, 10. काम्यव्रत आख्यान, 11. दुर्गा चरित्र, 12. तपती चरित्र, 13. कुरुक्षेत्र वर्णन, 14. सरोवर माहात्म्य, 15. पार्वती जन्म तपस्या एवं विवाह कथन, 16. गौरी उपाख्यान, 17. कौशिकी उपाख्यान, 18. कुमार चरित्र, 19. अंधक वध उपाख्यान, 20. साध्य उपाख्यान, 21. जाबालि चरित्र, 22. अरजा कथा, 23. अन्धक युद्ध एवं गण कथन, 24. मरुत जन्म कथा, 25. बलि चरित्र, 26. लक्ष्मी चरित्र, 27. त्रिविक्रम चरित्र, 28. प्रह्लाद की पूर्व में तीर्थ यात्रा, 29. धुन्धु चरित्र, 30. प्रेत उपाख्यान, 31. नक्षत्र पुरुष आख्यान, 32. श्रीदाम चरित्र, 33. त्रिविक्रम चरित्र, 34. ब्रह्मउक्तस्तव, 35. प्रह्लाद एवं बलि संवाद, 36. सुतल में हरि प्रशंसा कथन।

द्वितीय उत्तर भाग–1. माहेश्वरी संहिता श्रीकृष्ण के भक्ति का कीर्तन, 2. भागवती संहिता अवतार कथा, 3. सौरी संहिता सूर्य महिमा कथन, 4. गाणेश्वरी संहिता गणेश महिमादि कथन। यह संहिता चतुष्टय के प्रत्येक संहिता में एक सहस्र श्लोक।

फल श्रुति–यह पुराण लिख कर कार्तिकी संक्रान्ति को घृत धेनु के साथ वेदज्ञ ब्राह्मण को दान करने से नरक भोग से मुक्ति और स्वर्ण लाभ होता है एवं भोगादकि और देहान्त में विष्णु के परम पद की प्राप्ति होती है। यह पुराण पाठ किंवा श्रवण करने से परमगति प्राप्त होती है।

पंचदश कर्मपुराण

पूर्व एवं उत्तर दो भाग, 17000 (सत्रह सहस्र) श्लोक। उत्तर भाग पंचपाद में विभक्त। लक्ष्मी कल्पचरित्र। इसी कल्प में हरि ने कूर्म रूप धारण किया है एवं इन्द्रद्युम्न प्रसंग से धर्मार्थ काम मोक्ष का माहात्म्य कहा है।

प्रथम पूर्व भाग–1. पुराण उपक्रम कथन, 2. लक्ष्मी इन्द्रद्युम्न संवाद, 3. कूर्म ऋषिगण कथा, 4. वर्णाश्रमाचार कथा, 5. जगदुत्पत्ति कथा, 6. काल संख्या एवं लयान्त में विभुस्तव, 7. सर्गसंक्षेप कथा, 8. शंकर चरित्र, 9. पार्वती सहस्रनाम, 10. योग निरूपण, 11. भृगुवंश आख्यान, 12. स्वायम्भुवकथा, 13. देवतादि उत्पत्ति, 14. दक्ष यज्ञ नाश, 15. वृक्ष सृष्टि कथा, 16. कश्यप वंश कथन, 17. आत्रेय वंश कथन, 18. कृष्ण चरित्र, 19. मार्कंडेय कृष्ण संवाद, 20. व्यास पांडव की कथा, 21. युगधर्म कथा, 22. व्यास जैमिनि की कथा, 23. वाराणसी माहात्म्य, 24. प्रयाग माहात्म्य, 25. त्रिलोक वर्णन, 26. वेदशाखा निरूपण।

द्वितीय उत्तर भाग–1. ऐश्वरी गीता, 2. नानाधर्म प्रकाशिका व्यास गीता, 3. नानाविध तीर्थ का पृथक् माहात्म्य, 4. ब्राह्मी संहिता, 5. भागवती संहिता। इस में सकल वर्णन में पृथक् वृत्ति निरूपण है।

उत्तर भाग में प्रथम पाद में ब्राह्मण की सदाचारात्मिका व्यवस्थिति कथन। द्वितीय पाद में क्षत्रिय की वृत्ति निरूपण। तृतीय पाद में वैश्य जाति की चार प्रकार की वृत्ति निरूपण। चतुर्थ पाद में शूद्र की वृत्ति कथन। पंचम पाद में वर्ण शंकर की वृत्ति कथन।

फल श्रुति–यह पुराण लिखा कर भक्ति पूर्वक हेम कूर्म युक्त ब्राह्मण को दान करने से परम गति होती है और श्रवण किंवा पाठ करने से सर्वोत्कृष्ट गति मिलती है।

षोडश मत्स्य पुराण

चौदह सहस्र श्लोक सत्य कल्प कथा–1. व्यास कर्तृक नरसिंह वर्णन, 2. मनु एवं मत्स्य संवाद, 3. ब्रह्मांड वर्णन, 4. ब्रह्मदेव एवं असुर उत्पत्ति कथन, 5. मारुत उत्पत्ति, 6. मदन द्वादशी कथा, 7. लोकपाल पूजा, 8. मन्वन्तर कथन, 9. वैश्व राज्याभि वर्णन, 10. सूर्य एवं वैवस्वत की उत्पत्ति, 11. बुध का संगम, 12. पितृवंशानु कथन, 13. श्राद्ध काल निरूपण, 14. पितृतीर्थ प्रचार, 15. सोमोत्पत्ति, 16. सोमवंश कीर्तन, 17. ययाति चरित्र, 18. कार्तवीर्य चरित्र, 19. सृष्ट वंश कीर्तन, 20. भृगुशाप, 21. विष्णु का दश मूर्ति धारण, 22. पुरुवंश कथा, 23. हुताशनवंश कथन, 24. क्रिया योग कथन, 25. पुराण कीर्तन, 26. नक्षत्र पुरुष कथन एवं व्रत, 27. मार्कंडेय शयन, 28. कृष्णाष्टमी व्रत, 29. तड़ाग विधि माहात्म्य, 30. पादुकोत्सर्ग, 31. सौभाग्य शयन वर्णन, 32. अगस्त्य व्रत कथन, 33. अनन्त तृतीया, 34. रस कल्याणी व्रत कथा, 35. आनन्द कर व्रत, 36. सारस्वत व्रत, 37. उपराग अभिषेक, 38. सप्तमास स्वपन व्रत कथा, 39. भीम

द्वादशी व्रत, 40. अनन्ग शयन व्रत, 41. अशून्य शयन व्रत, 42. अंगारक व्रत, 43. सप्तमी सप्तक व्रत, 44. विशोक द्वादशी व्रत, 45. दशघा मेरुप्रदान व्रत, 46. ग्रहशान्ति, 47. ग्रह स्वरूप कथन, 48. शिव चतुर्दशी व्रत, 49. सर्व फल त्याग व्रत, 50. सूर्यवार व्रत, 51. संक्रान्ति स्नान, 52. विभूति द्वादशी व्रत, 53. षष्टि व्रत माहात्म्य, 54. स्नान विधि क्रम, 55. प्रयाग माहात्म्य, 56. द्वीप एवं लोकानुवर्णन, 57. अन्तरिक्ष और दिशा कथन, 58. ध्रुव माहात्म्य, 59. इन्द्रभवन वर्णन, 60. त्रिपुर घातन, 61. पितृ प्रवर माहात्म्य, 62. मन्वन्तर निर्णय, 63. चतुर्युग सम्भूति युगधर्म निरूपण, 64. बज्रांग-सम्भूति, 65. तारकासुरोत्पत्ति एवं माहात्म्य, 66. ब्रह्मदेव अनुकीर्तन, 67. पार्वती सम्भव, 68. शिव तपोवन वर्णन, 69. अनंगदेह दाह, 70. रति विलाप, 71. गौरी तपोवन, 72. शिव प्रसादन, 73. पार्वती ऋषि संवाद एवं विवाह, 74. कार्तिकेय जन्म औ विजय, 75. तारकवध, 76. नरसिंह वर्णन, 77. पद्म कल्प कथा, 78. अन्धकासुर घातन, 79. बारानसी माहात्म्य, 80. नर्मदा माहात्म्य, 81. प्रवरानुक्रम, 82. पितृगाथा कीर्तन, 83. उभयमुखीदान, 84. कृष्णाजिन दान, 85. सावित्र्युपाख्यान, 86. राजधर्म, 87. विविधोत्पात् कथन, 88. ग्रह शान्ति कथन, 89. यात्रा निमित्त कथन, 90. स्वप्न मंगल कीर्तन, 91. वामन माहात्म्य, 92. वराह माहात्म्य 93. समुद्र मंथन 94. कालकूट अभिशान्तन 95. देवासुर विमर्दन, 96. वस्तुविद्या, 97. प्रतिभा लक्षण, 98. देवता स्थापना, 99. प्रासाद लक्षण, 100. देव मंडप लक्षण, 101. भविष्य राजा का उद्देश कथन, 102. महादान कथन, 103. कल्प कथा।

फल श्रुति–यह पुराण लिखा कर भक्ति पूर्वक विषुव संक्रान्ति को ब्राह्मण को दान करने से परम पद मिलता है और इस पुराण के पाठ किंवा श्रवण करने से आयु कीर्ति कल्याण की वृद्धि एवं हरि भवन प्राप्ति होती है।

सप्तदश गरुड़पुराण

पूर्व एवं उत्तर दो खंड में। उन्नीस सहस्र श्लोक गरुड़ के प्रति भगवान ने कहा है। इस पुराण में तार्क्ष कल्प की कथा है।

प्रथम पूर्व खंड–1. पुराण उपक्रम वर्णन, 2. संक्षेप स्वर्ग वर्णन, 3. सूर्यादि पूजा विधि, 4. दीक्षा विधि, 5. लक्ष्मी पूजा प्रकरण, 6. नवव्यूह अर्चन, 7. विष्णु पूजा विधान, 8. वैष्णव पंजर, 9. योगाध्याय, 10. विष्णु सहस्रनाम, 11. सूर्य पूजा, 12. मृत्युजयार्च्चन, 13. नानामन्त्र, 14. शिव पूजा, 15. गणपूजा, 16. गोपालपूजा, 17. त्रैलोक्य मोहन श्री रामार्चन, 18. विष्णु पूजा एवं पंचतत्व पूजा, 19. चक्रार्चन, 20. देवपूजा, 21. न्यासादि कथन, 22. सन्ध्यादि उपासना, 23. दुर्गार्चन, 24. सुरार्चन, 25. माहेश्वर पूजा, 26. पवित्रा रोपणार्चन, 27. मूर्त्तिध्यान, 28. वास्तु प्रमाण, 29. प्रासाद लक्षण, 30. सकल देवता, 31. पृथक पूजा, 32. अष्टांग योग, 33. दान धर्म, 34. प्रायश्चित विधि क्रम, 35. द्वीप ईश्वर और नरक वर्णन, 36. सूर्य व्यूह कथन, 37. ज्योतिष श्राद्ध वर्णन, 38. सामुद्रिक स्वर ज्ञान, 39. नवरत्न परीक्षा, 40. तीर्थ माहात्म्य, 41.

गया माहात्म्य, 42. मनवन्तर पृथक् पृथक् आख्यान, 43. पित्राख्यान, 44. वर्णधर्म, 45. द्रव्यशुद्धि 46. द्रव्य समर्पण, 47. आद्धकथा, 48. विनायक पूजा, 49. ग्रहयज्ञ, 50. आश्रम कथा, 51. मननाख्यान एवं प्रशौच, 52. नीतिसार, 53. त्रतोक्ति, 54. सूर्य वंश, 55. सोमवंश, 56. हरि अवतार कथन, 57. रामायण, 58. हरिवंश, 59. भारताख्यान, 60. आयुर्वेद, 61. निदान, 62. चिकित्सा, 63. द्रव्यगुण, 64. रोगघ्न विष्णु कवच, 65. गरुड़ कवच, 66. त्रिपुर आख्यान, 66. प्रश्न चूड़ामणि, 67. अश्वायुर्वेद, 68. ओषधीनाम कथन, 69. व्याकरण शास्त्र, 70. छंदशास्त्र, 71. सदाचार, 72. स्नान विधि, 73. वैश्यदेव तर्पण, 74. सन्ध्या, 75. पार्वण कर्म, 76. नित्य श्राद्ध, 77. सपिंड श्राद्ध, 78. धर्मसार निष्कृति, 79. प्रतिसंक्रम, 80. युगधर्म कृत फल, 81. योगशास्त्र, 82. विष्णु भक्ति, 83. भगवत्प्रणाम फल, 84. वैष्णव माहात्म्य, 85. नरसिंह स्तव, 86. ज्ञानामृत, 87. गुह्याष्टक स्तव, 88. विष्णु अर्चना, 89. वेदांत सार सांख्य और सिद्धान्त शास्त्र, 90. ब्रह्मज्ञान, 91. आत्म ज्ञान, 92. गीता सार एवं फल कथन।

द्वितीय उत्तर खंड प्रेत कल्प कथा–1. धर्म प्रकटित करण, 2. पूर्व योनि गति कारण, 3. दानादिफल, 4. और्द्ध दैहिक किया, 5. यमलोक मार्ग वर्णन, 6. षोडश श्राद्ध फल, 7. यममार्ग से निष्कृति कथन, 8. धर्मराज वैभव, 9. प्रेत पीड़ा निर्णय, 10. प्रेत चिन्ह निरूपण, 11. प्रेत चरित्र, 12. प्रेत कारुण, 13. प्रेत कृत्य विचार, 14. सपिंडीकरण, 15. प्रेतत्व मोक्षण आख्यान, 16. विमुक्ति कारण दान, 17. प्रेत आवश्यक दान, 18. शारीरिक विनिर्द्देश, 19. यमलोक वर्णन, 20. प्रेतत्व उद्धार कथन, 21. कर्म कर्त्ता निर्णय, 22. मृत्यु की पूर्व क्रिया कथन एवं पश्चात कर्म निरूपण, 23. षोडश श्राद्ध कथन, 24. स्वर्ग प्राप्ति किया, 25. सूतक संख्या, 26. नारायण बलि कर्म, 27. वृषोत्सर्ग माहात्म्य, 28. निषिद्ध त्याग, 29. अपमृत्यु क्रिया, 30. मनुष्य कर्म विपाक, 31. कृत्याकृत्य विचार, 32. मुक्ति कारण विष्णु ध्यान, 33. स्वर्ग समन विहित आख्यान, 34. स्वर्ग सुख निरूपण, 35. भूर्लोक वर्णन, 36. सप्तलोक वर्णन, 37. पंच उर्द्धलोक कथन, 38. ब्रह्मांड स्थिति कीर्तन, 39. ब्रह्मांड अनेक चरित्र कथन, 40. ब्रह्मजीव निरूपण, 41. आत्यन्तिक लय कथन, 42. फल श्रुति निरूपण।

फल श्रुति–यह पुराण पाठ करने किंवा श्रवण करने से पाप शमन होता है और लिखा कर विष्णु संक्रान्ति को सुवर्ण हंस द्वय युक्त ब्राह्मण को दान करने से स्वर्ग लाभ होता है।

अष्टादश ब्रह्मांड पुराण

4 पाद तीन भाग बारह सहस्र श्लोक।

प्रथम भाग में–

1. प्रक्रिया पाद, 2. अनुषंग पाद 3. उपोद्घात पाद मध्य भाग 4. उपसंहार

पाद शेष भाग। इस पुराण में भविष्य कल्प की कथा है।

प्रथम भाग प्रक्रिया पाद आरम्भ–1. कृत्य समुदेश, 2. नैमिषाख्यान 3. हिरण्य गर्भोत्पत्ति 4. लोक कल्पना कथा।

द्वितीय अनुषंग पाद–1. कल्पमन्वन्तराख्यान कथा, 2. लोक ज्ञान कथन 3. मानसिक सृष्टि विवरण 4. रुद्र प्रभाव विवरण 5. महादेव विभूति वर्णन 6. ऋषि सर्ग वर्णन 7. अग्नि उत्पत्ति विवरण 8. काल सद्भाव वर्णन 9. प्रियव्रत समूह उद्देश, 10. पृथिवी आयाम एवं विस्तार वर्णन, 11. भारतवर्ष वर्णन, 12. अन्य वर्ष वर्णन, 13. जंब्वादि सप्तद्वीप वर्णन, 14. अधः एवं उर्द्धलोक विवरण, 15. ग्रहाचार, 16. आदित्य व्यूह विवरण, 17. देवग्रह वर्णन, 18. नीलकंठाख्यान, 19. महादेव वैभव, 20. अमावस्या कथा, 21. युग तत्त्व निरूपण, 22. यज्ञ प्रवर्तन, 23. मध्य एवं अन्त्य युग की क्रिया एवं सत्ययुग की प्रजा का लक्षण, 24. ऋषि प्रवर वर्णन, 25. वेद आख्यान, 26. स्वायम्भुव निरूपण, 27. शेष मन्वन्तराख्यान, 28. पृथिवी दोहन।

मध्यभाग उपोद्घात पाद–1. सप्तऋषि कथा, 2. प्रजापति उपाख्यान 3. देवादि उद्भव 4. जय एवं क्रीड़ा 5. मरुत उत्पत्ति कीर्तन 6. काश्यप विवरण 7. ऋषि वंश निरूपण 8. पितृकल्प कथा 9. श्राद्ध कल्प कथा, 10. वैवस्वतोत्पत्ति, 11. वैवस्वत सृष्टि विवरण, 12. मनुपुत्र निर्णय, 13. गन्धर्व निरूपण, 14. इक्ष्वाकुवंश विवरण, 15. अत्रिवंश विवरण, 16. अमावसु अर्च्चन, 17. रजि चरित्र, 18. ययाति चरित्र, 19. यदुवंश निरूपण, 20. कार्तवीय चरित्र, 21. जमदग्नि विवरण, 22. वृष्णिवंश विषय, 23. सागर उपाख्यान, 24. मार्गव चरित्र, 25. गय वध, 26. समर विवरण, 27. पुनर्वार भार्गव विषय, 28. देवासुर युद्ध में कृष्ण का आविर्भाव वर्णन, 29. शुक्र कर्तृक इलस्तव, 30. विष्णु माहात्म्य विवरण, 32. इलिवंश निरूपण, 32. कलियुग के भविष्य राजा गण का चरित्र।

अन्तभाग उपसंहार पाद–1. वैवस्वत मन्वन्तर का संक्षेप विवरण, 2. भविष्य मनु का कर्म चरित्र, 3. कल्प प्रलय निर्देश, 4. काल परिमाण विवरण, 5. परिमाण और लक्षण सहित चतुर्दश लोक विवरण, 6. नरक एवं विकर्म वर्णन, 7. मनोमयपुर आख्यान, 8. प्राकृतिक लय विवरण, 9. शैवपुर वर्णन, 10. सत्वादि गुण सम्बन्ध से जीव की गति विवरण, 11. अनिर्देश्य ब्रह्म वर्णन।

फल श्रुति–यह पुराण श्रवण किंवा पाठ करैं उसका पाप मोचन होय एवं देवलोक में गति होय। यह पुराण लिखा कर[1] स्वर्णसिंहासनस्थ करके ब्राह्मण को दान करने

---

[1] इतिहास तिमिर नाशक तीसरे खंड में यह सिद्ध किया गया है कि पहले आर्य लोग लिखना न जानते थे किन्तु यह भ्रम है। पुराणों में प्रायः लिखने का अनेक स्थानों में वर्णन आया है जो इस अनुक्रमणिका से मालूम हुआ होगा और इस का अनेक मैंने कई एक स्थलों में संग्रह किया है। इतिहास तिमिरनाशक का भ्रम मूल लेख नीचे लिखा है। अब हम लोग मेक्समूलर साहब के लेखों को मानें या पुराण को। यथार्थ में मेक्समूलर को भ्रम हुआ है और उसी को मूल मान कर राजाजी चले हैं तब वह क्यौं न भूलें। →

से ब्रह्म लोक की प्राप्ति होती है।

छोड़ि अनेकन साधन को मन मान कह्यौ न करै चित चाही।
नन्द के लाल सों नेह करै किन भूलत दौरे वृथा जिय दाही॥
आजु लौं नीचन सों हरिचन्द से कौन ने बोलि तौ प्रीत निवाही।
हैं गनिका सबरी गज गीध अजामिल आदिक याकी गवाही॥

[हरिश्चन्द्र चन्द्रिका खं. 2, सं. 8.12, सन 1875 ई. में प्रकाशित]

→ "इसका कुछ प्रमाण नहीं मिलता कि इनको लिखना भी आता हो वेद श्रुति स्मृति शास्त्र दर्शन सूक्त ऋच साम वर्ग अध्याय अध्यापक उपाध्याय ग्रन्थ पाठ पाठक पठन मनन घोषण इत्यादि सब शब्द जब उनके अर्थ पर ध्यान करो यही गवाही देते हैं कि वेदों के जमाने में लिखना किसी को नहीं आता था। वेद वा ब्राह्मण वा सूत्रों में इस का कहीं कुछ जिक्र नहीं है। कोई शब्द ऐसा नहीं कि जिससे इसका इशारा पाया जाए। उणादि सूत्र में जो अति प्राचीन व्याकरण है और जिसका जिक्र पाणिनि ने किया है यदि कोई शब्द ऐसा मिल भी जाता है तो वह पीछे से मिलाया हुआ मालूम होता है (इसी तरह उणादि सूत्र में दीनारः जिनः तिरीटम् स्तूपः इत्यादि शब्द पीछे से लिख दिए गए हैं। दीनारः (Denarious) रूमी शब्द है और जि धातु को जिससे जिन निकला है। सायन ने जहां उणादि से लिखा छोड़ दिया है नृसिंह ने भी अपनी स्वर मंजरी में जि धातु को छोड़ दिया है। यह धातु किसी प्रामाणिक ग्रन्थ में नहीं मिलता है) जैसा अरबी शब्द किताब (पुस्तक) जिसका अर्थ ही लिखना है अथवा यूनानी शब्द पेपर (काग़ज़) जिसका अर्थ ही पेपरिस वृक्ष की छाल से बनाया हुआ है कोई भी हाथ नहीं लगता। संस्कृत में सूत्रों की रचना ऐसी है कि जुबानी याद रक्खे जाएं। सूत्रकारों ने उन्हें लिखने के लिए कदापि नहीं रचा। मनुजी ने जहां पढ़ने पढ़ाने का बहुत विस्तारपूर्वक नियम बांधा है। (ब्रह्मारम्भेवसाने च पादौग्राह्यौ गुरोस्सदा। संहत्यस्तावधेयं सहि ब्रह्मांजलिः स्मृतः॥ अध्येष्यमणन्तु गुरुर्नित्य कालमतेन्द्रितः। अधीष्व भो इति ब्रूयाद्विरामोसित्वति चारमेत्।) पुस्तक कलम दवात काग़ज़ का नाम भी नहीं लिखा, लिखने का कहीं किसी प्रकार से कुछ चर्चा ही नहीं किया और देखो अब तो लिखना पढ़ना ये दोनों ऐसे द्वन्द्व हो गए हैं कि पर्यायी से जान पड़ते हैं। एक के स्मरण के साथ ही दूसरे का स्मरण भी हो आता है। निदान लिखने की विद्या इस देश में पीछे से फैली (यदि पहले होती तो महाभारत में जहां कौरव पांडव के दूतों का हाल लिखा है उनके साथ पत्र जाने का भी हाल लिखा होता।) पत्र लेखनी मसी ये सब शब्द पीछे से काम में आए। उत्तर में पहले भोजपत्र और दक्षिण में पहले तालपत्र पर लिखा होगा इसी से जिस पर लिखे उसका नाम पत्र रह गया और तालपत्र पर लीकों के खींचने अर्थात खोदने से यह काम ही लिखना ठहरा। लिप लीपना है जब पत्रों पर सियाही लगाई होगी यह शब्द काम में आया। यदि पाणिनि के समय में भी लिखना किसी को मालूम होता वह अवश्य इसके लिए कोई शब्द बनाता। इसने जो वर्ण अक्षर और विराम लिखा है वर्ण का अर्थ आवाज का रंग है, अक्षर का अर्थ अविनाशी है, विराम का अर्थ आवाज का बन्द होना है। यदि वह लिखना जानता होता अनुस्वार विसर्ग जिह्वामूलीय और उपध्मानीय का नाम बोपदेव की तरह बिन्दु द्विबिन्दु बज्राकृति और गजकुंभाकृति रखता।"

हिन्दी कुरानशरीफ

हिन्दी कुरानशरीफ

अर्थात

मुहम्मदीय मत प्रयुक्त ईश्वर के पवित्र और आदरणीय वाक्य आरम्भ करता हूं क्षमा करने वाले और दयालु ईश्वर के नाम के साथ।

सब स्तुति उसी की है जो लोकों का भर्ता हैं। हम तेरी ही वन्दना करते और तुझी से सहायता चाहते हैं। मुझ को सीधा मार्ग दिखा। जो मार्ग उन का है जिन पर तूने कृपा की है न कि उन का जिन पर तूने क्रोध किया है और जो भूले हैं।

1 म. खंड समाप्त हुआ।

आरम्भ करता हूं क्षमा करनेवाले और दयालु ईश्वर के नाम के साथ।

निस्सन्देह यह पुस्तक धर्मियों को उस का मार्ग दिखाती है। जो बिन देखे विश्वास करते हैं और वन्दना का नियम रखते हैं और उस पर सन्तोष रखते हैं जो मैंने उन्हें दिया है। और जो लोग कि उस पर विश्वास लाते हैं जो तुम्हारे लिए उतारा गया और जो तुम्हारे पूर्व उतारा गया और जो अन्त के दिन का स्मरण रखते हैं।

यही लोग अपने परमेश्वर की शिक्षा पर चलने वाले और यही लोग मुक्ति पाने वाले हैं। और निश्चय जो लोग बहिर्मूर्ख हैं उन्हें चाहे तू कितना भी डरावै या न डरावै वे विश्वास न करैंगे कृपा की ईश्वर ने इन के चित्त कान और आंखों पर और उन पर परदा है और उन को बड़ा पाप है। मनुष्यों में कोई कहते हैं कि ईश्वर पर विश्वास लाए हम और पिछले दिनों पर निश्चय किया और कोई विश्वास नहीं लाते हैं। वे ईश्वर से और उन के विश्वासियों से छल करते हैं पर यह नहीं समझते कि उन्होंने अपनी आत्मा से छल किया। इन के चित्त में व्याधि है और ईश्वर ने बढ़ाई है इन की व्याधि, और वे पाप के और दुःख के भागी हैं क्योंकि वे झूठ बोलने वाले थे, जब उन से कहा जाता है कि पृथ्वी पर उपद्रव मत करो वे कहते हैं कि हम योग्य करते हैं, निश्चय रक्खो कि वे पाखंडी हैं और अज्ञानी हैं, जब उन से कहा जाता है कि तुम भी विश्वास करो जैसे औरों का विश्वास है तो वे कहते हैं, कि विश्वास हम कैसे करैं विश्वास करनेवाले तो मूर्ख हैं पर निश्चय रखो कि वे ही मूर्ख हैं पर वे अपने को जानते नहीं। वे जब धर्मियों से मिलते हैं तब कहते

हैं कि हम भी उस पर विश्वास रखते हैं पर जब अपने (पाखण्डी) वर्ग में मुखियों से मिलते हैं तो कहते हैं कि हम निस्सन्देह तुम्हारे साथ हैं हंसी नहीं करते, (परन्तु) ईश्वर उन से हंसी करता है और उन को अपने विरुद्ध प्रेरणा करता हैं, यही लोग हैं जिन्होंने शिक्षा के बदले कुमार्ग मोल लिया। इस से इन के व्यौपार में न तो कुछ लाभ हुआ और न इनको मार्ग मिला, इन लोगों की उपमा उस मनुष्य की हैं जिस ने आप आग लगाई और अपने पास की वस्तु जला दी। इसी से ईश्वर ने उन का प्रकाश कर लिया उन को अन्धकार में डाल दिया। इसी से वे नहीं देखते। वे बहिरें अन्धे और गूंगे हैं क्यौंकि उन की गति नहीं। वा मेघ की आकाश में अंधेरी और गरज और चमक से वे कानों में उंगली करते हैं पर मृत्यु की कड़क (बिजली) से डरो और (निश्चय रक्खो कि) भगवान दुष्टों को आच्छादन करने वाला है। निकट है कि वह बिजली उन की दृष्टि हरण कर ले जाए क्यौंकि वह जब उन को प्रकाश देती है तब वे उस मार्ग पर चलते हैं और वह जब अन्धकार करती है तब वे खड़े रह जाते हैं और यदि ईश्वर चाहे तो उनका कान और आंख हरण कर ले क्यौंकि निश्चय ईश्वर वस्तु मात्र कर प्रभु है। हे लोगो! अपने परमेश्वर की बन्दना करो जिस ने तुम को और तुम्हारे पूर्वजों को उत्पन्न किया तो बचोगे। जिस ने तुम्हारे हेतु पृथ्वी का बिछौना बनाया और आकाश की छत और आकाश से पानी उतार कर फल उत्पन्न कर के तुम्हारा भोज्य बनाया इस से उस की किसी की समता मत दो यह तुम जानते हो। यदि तुम को इस विषय में संदेह हो तो जो वस्तु हम ने अपने दासों के हेतु बनाई हैं इस में से (एक भी) वस्तु वैसी ही लाओ और अपने साक्षियों से पूछो कि ईश्वर को छोड़ कर तुम (कैसे) सच्चे हो तुम वैसा नहीं कर सकते निश्चय तुम वैसा नहीं कर सकते इस से उस अग्नि से डरो जिस का मनुष्य ईंधन है और पत्थर (भी उन) पाखंडियों के हेतु बनाए गए हैं, और लोगों को यह समाचार शुभ है जिन्होंने उस पर विश्वास किया है और अच्छी करनी की है क्यौंकि उन के लिए वे स्वर्ग बने हैं जिन के नीचे नहरें बहती हैं और उन को (उत्तम) फलों का भोजन मिलैगा तब वे कहैंगे कि यह वह वस्तु है जो हमें पहिले ही से मिली है जो एक दूसरे से समान हैं और ये अवर्णनीय और पवित्र हैं और वे उस में सर्व्वदा रहने वाले हैं।

निश्चय भगवान को इस में लज्जा नहीं है कि कोई मच्छड़ की उपमा दे या कोई और उपमा दे जो लोग विश्वास रखते हैं वे भली भांति जानते हैं कि निश्चय यह उन के ईश्वर का कहा है पर जो अविश्वासी हैं वे कहते हैं कि ईश्वर की ऐसी उपमा देने की क्या आवश्यकता थी। इसी से वह बहुतों को सन्मार्ग दिखाता है और बहुतों को वह भुलाता है क्यौंकि वे उस की आज्ञा उल्लंघन करते हैं। जो दुष्ट लोग शपथ किए पीछे ईश्वर के साथ के नियमों को तोड़ते हैं और जिन बातों को उस ने जोड़ने की आज्ञा दी है उन को भी तोड़ते हैं और सारे देश में उपद्रव उठाते हैं वे

निश्चय हानि वाले हैं। जिस ने मृत से तुम को जीवनदान दिया और जीवित से मृत करैगा और फिर जिलावैगा और अपने पास बुलावैगा उस ईश्वर पर तुम क्यों नहीं विश्वास करते। उसी ने पृथ्वी पर की सब वस्तु तुम्हारे हेतु उत्पन्न की और सातों आकाश की ओर दृष्टि फेर कर पृथ्वी से उस का गुणद सम्बन्ध स्थिर किया और वहीं सर्वज्ञ है। जब उस ने देवताओं से कहा कि मुझ को पृथ्वी पर एक आश्चर्य (ईश्वर का दूत और स्थानापन्न) रखना है तो देवताओं ने कहा कि आप ऐसा मनुष्य भेजना चाहते हैं जो उपद्रव करै और पृथ्वी पर बहुत जीवों का बध करै। हम लोग सदा आप का गुणगान करते हैं और आप की पवित्र मूर्ति का ध्यान करते हैं (अर्थात् हम पृथ्वी पर भेजे जाने के योग्य हैं) ईश्वर ने कहा तुम सब अल्पज्ञ हो, सर्वज्ञ केवल मैं हूं। फिर आदमी को उस ने अपनी सृष्टि से स्थावर जंगमों के नाम बताए और उन वस्तुओं को देवताओं को दिखा कर उन का नाम पूछा। उन लोगों ने कहा, प्रभु तू सब से निराला है हम सब केवल उतना ही जानते हैं जितना ज्ञान तूने हमें दिया है और निस्संदेह सर्वज्ञ केवल तू है। तब ईश्वर ने आदिम से कहा कि तू इनके नाम बता तब उस ने सब नाम बतलाए तब ईश्वर ने कहा कि देखो पृथ्वी और स्वर्ग का त्रिकाल ज्ञान हम को है और हम तुम्हारे प्रगट और प्रच्छन्न कर्मों को जानते हैं, आज्ञा दिया कि सब देवता इसकी वन्दना करो और सब ने वन्दना की परन्तु अवलीश (इबलीस) ने वन्दना न की, आज्ञा से फिर गया क्यौंकि वह दुष्ट था। मैंने आज्ञा दी कि ए आदिम, तुम और तुम्हारी स्त्री वैकुंठ में रहो और सावधानी से इन अमृत फलों को खाओ और चाहे जहां फिरो परन्तु इस वृक्ष के पास मत जाना नहीं तो पापी होगे परन्तु उन को स्तेन (शैतान) ने बहकाया और उन को उस परम सुख से च्युत किया। तब मैंने कहा कि तुम नीचे उतरों, तुम्हारे में परस्पर बैर है और बहुत् काल तक तुम को पृथ्वी पर रहना है और बड़े काम करने हैं फिर आदिम ने अपने ईश्वर से बहुत से धर्म्म सीखे और ईश्वर उन पर दयालु हुआ क्यौंकि वह सच्चा दयालु और क्षमावान है। फिर मैंने कहा कि तुम सब नीचे उतरो और जब कभी कोई हमारा अनुशासन मिले तो उस को मानो क्यौंकि जो हमारी आज्ञा मानते हैं, उन को न भय है न शोक पर जो उस आज्ञा का उल्लंघन करते हैं और हमारे अनुभवों को झूठा करते हैं वे नारकी हैं और सदा नर्क में रहैंगे। हे इसराईल (ईश्वरायिल) की सन्तान हमारे अनुग्रहों को स्मरण करो जो हमने तुम्हारे ऊपर किए और तुम अपने वचनों को पूरा करो तो मैं भी अपने वचनों को पूरा करूंगा और केवल मेरा ही भय रखो और मानो जो कुछ हमने तुम्हारे हेतु उतारा क्यौंकि सच माननेवाला तुम्हारे पास है और मेरी आज्ञाओं को बहुमूल्य समझो और मुझ से भय करो। सत्य में असत्य मत मिलाओ और सब को जान बूझ कर मत छिपाओ और वन्दना करो (नमाज खड़ी करो) और दान (जकात) दो और वन्दना में झुकनेवालों के साथ झुको।

लोगों को सन्मार्ग पर चलने का उपदेश करते हो पर तुम आप वैसा आचरण नहीं करते। धर्म्म पुस्तकों को पढ़ते हो पर समझते नहीं। धैर्य से प्रार्थना करो और निश्चय रख कर वन्दना करो यद्यपि यह कठिन है परन्तु दीन भक्तों को सदा लभ्य है क्यौंकि उनको अपने सृष्टिकर्त्ता परमेश्वर से मिलने और अन्त में उस के पास जाने का निश्चय है। हे इसराईल की सन्तान, हमारे उन अनुग्रहों को, जो हमने तुम पर किए हैं, स्मरण रखो। हम ने तुम को संसार के जीवमात्र से श्रेष्ठ किया है। और उस दिन का भय रखो जिस दिन कोई किसी के कुछ भी काम नहीं आता और न किसी की सिफारिश सुनी जाती है न कोई कुछ बदला देकर बच सकता है और न किसी की कोई सहायता कर सकता है। उस को स्मरण करो जो हम ने तुम को फरऊन के गुणों से बचाया जो तुम को बड़ा दुःख देते और तुम्हारे सन्तान का वध करते तथा तुम्हारी स्त्रियों को (दासी बनाने को) जीती रखते। ईश्वर ने इस कार्य में तुम्हारी बड़ी सहायता की है। तुम देखते थे कि (नील) नदी को दो भाग कर के हम ने तुम्हें बचा लिया और फरऊन के गण को डुबा कर नाश कर दिया। मूसा से हमने चालीस रात्रि में सब आपत्तियों से छुड़ाने को प्रण किया था पर फिर तुम सब मुझ से फिर गए और बछड़े की पूजा की अतएव तुम बहिमुर्ख हो। तब भी हम ने तुम को क्षमा किया कि तुम अब भी हमारे गुण मानो और इसी हेतु मूसा को हम ने धर्म्म पुस्तक और उपदेश दिए कि तुम उनके द्वारा सत्यमार्ग पहिचानो। और जब मूसा ने अपनी जाति से कहा कि तुम लोगों ने इस बछड़े की पूजा कर के अपनी बड़ी हानि किया इस से अब तुम इस की घृणा करो और इस के प्रायश्चित में अपने जीव की बलि दी क्यौंकि इसी में तुम्हारे परमेश्वर की प्रसन्नता है। यों उसने तुम्हारी ओर फिर दृष्टि फेरी क्यौंकि वह क्षमादान और दयावान है परन्तु तुम ने फिर यही कहा ए मूसा, जब तक हम लोग परमेश्वर को अपने सामने न दखैंगे, कभी विश्वास न करैंगे। इस बात पर तुम्हारे सामने बिजली ने फिर तुम को घात किया परन्तु हम ने मरने पीछे फिर तुम को इस वास्ते जिलाया कि तुम अब भी विश्वास लाओ। और हमने दिन भर तुम पर मेघ की छाया की और मन[1] और सलवी[2] उतार कर कहा कि उत्तम वस्तुओं को मैंने तुम्हें दिया तुम इन्हें खाओ। तुम ने मुझ से विमुख होकर अपनी ही हानि की कुछ मेरी हानि नहीं की है। फिर मैंने तुम से कहा कि इस नगर में बसो और यथा सुख निर्भय इन उत्तम खाद्य वस्तुओं को खाते फिरो और मेरा धन्यवाद करके द्वार को प्रवेश करो और कहो कि हमें क्षमा कर तो मैं तुम्हारे अपराधों को क्षमा करूं। विशेष कर मैं उन को क्षमा करूंगा जो विश्वासी हैं। परन्तु दुष्टात्मा लोगों ने फिर मुझ से मुख फेर लिया इस हेतु मैंने आकाश से फिर उन अन्यायियों पर क्रोध उतारा। फिर जब मूसा ने अपने शिष्यों के हेतु पानी

---

1. मन एक मीठा दाना धनिया का सा था जो ईश्वर ने जीवों पर क्षमा करके बरसाया था।
2. सलवी बटेर की सी एक चिड़िया थी जिन्हें परमेश्वर ने उनके लिए भेजा था।

मांगा मैंने कहा तुम अपनी छड़ी पत्थर पर मारो। फिर उससे बारह सोते बह निकले और सब ने अपनी-अपनी जीविका पहिचान ली। फिर मैंने आज्ञा दी कि ईश्वरदत्त जीविका से निर्बाह करो और देश में उपद्रव उठाते मत फिरो। फिर तुमने कहा कि ए मूसा, हम एक प्रकार के भोजन पर सन्तोष न करैंगे इससे तू पुकार अपने ईश्वर को कि हमारे हेतु पृथ्वी से साग, लकड़ी, गेहूं, मसूर और प्याज उत्पन्न करें। उस ने कहा तुम एक उत्तम वस्तु के बदले बुरी वस्तु चाहते हो।

किसी नगर में उतरो तो जो तुम मांगते हो तुम को मिले। तब उन पर विपत्ति और दैन्य पड़ा और ईश्वर का कोप हुआ क्यौंकि वह ईश्वर की आज्ञा नहीं मानते थे और आचार्यों को व्यर्थ मार डालते थे और वह आज्ञा के विरुद्ध थे और उन्होंने सीमा उल्लंघन की थी। जो लोग मुसलमान[1] या यहूदी[2] या क्रिस्तान[3] या साबईन[4] जो कोई ईश्वर पर और प्रलयकाल पर विश्वास करता है और अच्दा काम करता है, तो वह ईश्वर से अपनी कमाई पाता है और न उस को डर है, और न वह दुःख भोगता है। जब हमने पर्वत[5] ऊंचा किया और तुम से वाक्य लिया और कहा कि जो हम ने तुम को दिया उस को बल से पकड़ो जिस में तुम को भय हो फिर इस के पीछे तुम फिर गए सो इस अवसर पर जो ईश्वर की उदारता और दया तुम पर न होती तो तुम नाश हो जाते और तुम जानते हो कि तुम लोगों में से जिस ने अतवार के दिन उपद्रव किया उन को हम ने शाप दिया कि बन्दर हो जाओ और इस कथा को जो उस जात के लोग हैं वा होंगे उन के हेतु हम ने विभीषिका रक्खा कि इस से उन को भय और उपदेश हो। और जब मूसा ने अपनी जाति को कहा कि एक बछड़ी बलि दो तो उन्होंने कहा कि तुम हंसी करते हो। मूसा ने कहा कि मैं इन मूर्खों की मंडली में ईश्वर से शरण मांगता हूं तब वह बोले कि अपने ईश्वर को पुकार कि वह हम से वर्णन करे कि वह गया कैसी है। उस ने कहा वह न बूढ़ी हैं न बिन ब्याई और इन सभी में डील की छोटी है, लो अब जो ईश्वर ने आज्ञा किया है करो। फिर उन्होंने कहा अपने ईश्वर को पुकार कि वह उसका रंग बतलावे। मूसा ने कहा कि वह एक गहिरे पीले रंग की गाय है जिस के देखने से नेत्रों को आनंद होता है। वे बोले हमारे वास्ते अपने ईश्वर को पुकार कि वह वर्णन करे कि वह किस जात की गाय है क्योंकि हम को गायों में सन्देह हो गया है और ईश्वर ने चाहा तो हम सन्मार्ग पर आवेंगे। उस ने कहा कि ईश्वर कहता है कि वह परिश्रम करने वाली गाय नहीं है जो पृथ्वी जोते खेत सींचे[6]। न उसके शरीर पर रोम है तब

---

1. म. मुहम्मद का मत मानने वाले।
2. म. मूसा का मत मानने वाले।
3. म. ईसा का मत मानने वाले।
4. म. इब्राहीम का मत मानने वाले। इस मत के लोग अब नहीं देख पड़ते।
5. तूर पर्वत जब तौरेत उतरी तब लोगों ने कहा कि यह सब आज्ञा हमसे न मानी जाएगी इस हेतु उनको भय दिखलाने को ईश्वर ने तूर पर्वत ऊंचा किया कि उनके ऊपर गिर पड़े।
6. इससे यह ध्वनि निकली कि जो पशु खेती बारी के काम आवें और दूध दें उनकी बलि नहीं देना।

उन लोगों ने कहा कि अब तुमने सच्ची बात कही और फिर उस का बलि दिया परन्तु उस से दूर रहे। फिर तुम ने एक मनुष्य को मार डाला पर उसका कलंक एक दूसरे को देखते थे और ईश्वर की इच्छा थी कि जो तुम छिपाते हो वह प्रगट हो, फिर हम ने कहा कि इस मुरदे पर बलि दी हुई गाय के शरीर का टुकड़ा मारो जिस से परमेश्वर उस मृतक को जिलावैगा और तब तुम को उस पर विश्वास आवैगा। फिर भी तुम लोगों के चित्त पत्थर की भांति वरञ्च उस से भी कठोर हो गए। उन के नीचे से पानी निकलता है और ऐसे ही होते हैं जो ईश्वर के भय से गिर पड़ते हैं, और ईश्वर तुम्हारे सब कर्मों का ज्ञाता है। सो हे विश्वासी गण क्या तुम को आशा है कि यहूदी लोग तुम्हारी बात सुनैंगे? इन्हीं लोगों ने ईश्वर के वाक्य[1] पहिले सुने और उससे फिर गए, ये लोग जब विश्वासियों से मिलते हैं कहते हैं कि हम भी विश्वास लाए पर जब एकान्त में एक दूसरे से मिलते हैं तो कहते हैं कि तुम पर जो परमेश्वर ने प्रगट किया है वह उनसे (अर्थात मुसलमानों से) क्यों कहते हो[2] क्योंकि इससे वे ईश्वर के सामने तुम्हीं को झूठा बनावेंगे, परन्तु यह नहीं जानते और इतनी बुद्धि तुम को नहीं है कि ईश्वर जो तुम छिपाया चाहते हो और जो प्रगट किया चाहते हो सब जानता है और कितने उनमें ऐसे हैं जो धर्म्म पुस्तक पढ़ते हैं परन्तु उन को ज्ञान नहीं है और व्यर्थ के मनोरथ किया करते हैं। इस से उन के पास सिवाय तर्क वितर्कों के और कुछ नहीं है। और वे लोग अपराधी हैं जो पुस्तक अपने हाथ से लिखते हैं और कहते हैं कि यह ईश्वर के यहां से आई है और उस से लाभ उठाते हैं सो उनके इस हाथ के लिखने और लाभ उठाने पर धिक्कार है। कितने कहत हैं कि हमको नर्क का भय नहीं केवल कुछ दिन नर्क भोगना होगा।[3] तो कहो कि क्या ईश्वर से उन लोगों ने ऐसा वचन ले लिया है। यदि ऐसा वचन ले लिया है तो अवश्य ईश्वर उस के विरुद्ध न करैगा परन्तु उस के विषय में व्यर्थ झूठ क्यों कहते हो। जिन लोगों ने पाप कमाया है उन को पाप ने आच्छादन कर लिया है और वे नर्क के भागी हैं और सदा नर्क ही में रहैंगे। और जिन लोगों ने धर्म्म विश्वास किया और पुण्य कर्म किए वे स्वर्ग के भागी हैं और सदा स्वर्ग में रहैंगे। हम ने इसराईल की सन्तान से शपथ लिया था कि ईश्वर को छोड़ और किसी की पूजा मत करो, और दान दो किन्तु तुम लोगों में से कुछ लोग फिर गए। फिर तुम लोगों से हमने शपथ लिया कि आपस में मार काट न करो और न अपने जातिवालों को देश न से निकालो और तुमने भी यह प्रतिज्ञा की और उस पर आरूढ़ रहे। परन्तु

---

[1] तौरेत।

[2] उस समय में यहूदी लोग मुसलमानों के सामने जो तौरेत में से अन्तिर्म ईश्वर दूत (म: मुहम्मद) की महिमा सुनावें तो पीछे विरोधी लोग उनसे रूष्ट होते थे क्यों ऐसा करते हो।

[3] यहूदियों के एक सम्प्रदाय का विश्वास था कि केवल थोड़ी सी पाप की यातना भोगने के बाद यहूदी मात्र स्वर्ग जाएंगे। जैसा कि काशीवासियों का भैरवी यातना के विषय में विश्वास है।

फिर तुम वैसे ही मार काट करते हो, अपने जाति के लोगों को देश से निकाल देते हो, उन पर पाप और अन्याय से चढ़ाई करते हो, और वही लोग जब तुम्हारे सामने बंधुए होकर आते हैं तो उन को छुड़ाने को भी प्रस्तुत होते हो, यद्यपि उन का निकाल देना ही पाप है, तो क्या धर्म्म पुस्तक का एक वाक्य मानते हो एक नहीं मानते तो ऐसे लोगों को क्या दंड है, यही कि संसार जीवन में तो निन्दा और प्रलय के दिन कठिन से कठिन नर्क दंड, क्योंकि ईश्वर तुम्हारे सब कर्म्मों का ज्ञाता है। ऐसे ही लोगों ने तुच्छ संसार के बदले (चिरसुख) स्वर्ग छोड़ा है सो ऐसे लोगों का पाप न हलका होगा न उन पर दया होगी। और हम ने मूसा (मोक्ष) को धर्म्म पुस्तक दी और उस के पीछे बराबर धर्म्मदूत भेजे और मरियम के पुत्र ईसा (ईश) को अनेक चमत्कार शक्ति दी और पवित्रात्मा (जिबरील-गरुड़)[1] के द्वारा अनेक बल दिए किन्तु किसी धर्म्मदूत ने तुम लोगों से कोई बात ऐसी कही जो तुम्हारी रुचि के अनुसार नहीं थी तो तुम अभिमान करते थे और कुछ लोगों को बहकाया और अनेकों को मार डाला और कहते कि हमारे चित्त पर आवरण[2] पड़ा है इससे ईश्वर ने उन को (धर्म्मदूतों से) विमुख होने पर धिक्कृत किया। और जब उन को धर्म्म पुस्तक ईश्वर की ओर से मिली तो अपने पास वाली (धर्म्म पुस्तक) को सच्ची बतलाने लगे, सो यद्यपि पहिले से अधर्मी लोगों को जीतने चाहते थे[3] परन्तु जब उन को वह वस्तु भेजी गई जिस का उन को ज्ञान था और उस से भी फिर गए तो विमुख होनेवाले को ईश्वर ने धिक्कार किया। ऐसे लोगों ने प्राण के बदले बुरी वस्तु मोल ली कि उन वाक्यों से जो ईश्वर ने उन के हेतु उतारा फिर गए सो भी केवल ईर्षा से और अपनी दया से वह अपने दासों में से चाहे जिस के द्वारा अपने वाक्य उतारे अतएव (विरोधी) उन पर कोप पर कोप हुआ और ऐसे फिर जानेवालों को पाप और दुर्दशा है। और जो उन से कहो कि जो वाक्य ईश्वर ने उतारा है उस को मानो तो वे कहते हैं कि हम पर जो पूर्व में उतरा है वही मानते हैं जो अब उतरा है उसको नहीं मानते और यद्यपि यह सत्य है पर उन से पूछो कि जो तुम धार्मिक हो तो ईश्वर के दूतों को क्यों दुःख देते हो। यद्यपि मूसा प्रत्यक्ष में आश्चर्य सिद्धि लेकर तुम्हारे पास आया परन्तु उस के पीछे तुम ने फिर बछड़ा बना लिया और तुम उपद्रवी हो।

[हरिश्चन्द्र चन्द्रिका खं. 2, संख्या 8, 12, सन 1875 ई. में प्रकाशित। अपूर्ण।]

---

[1] कहते हैं कि जिबरील (गरूड़) सदा ईसा के साथ रहते हैं।

[2] यहूदियों का विश्वास है कि उनके चित्त पर ईश्वर ने एक आवरण बनाया है जिससे दूर धर्म्म का उनको व्यर्थ संस्कार न हो।

[3] अर्थात जब यहूदियों पर अधर्मी लोग उपद्रव करते तब वे (म. मुहममद) अन्तिम धर्म्म दूत के उत्पन्न होने की प्रार्थना करते पर जब वह उत्पन्न हुए तो यहूदी लोग उनसे फिर गए।

श्रीवल्लभाचार्यकृत चतुश्लोकी

श्रीवल्लभाचार्यकृत चतुश्लोकी

नमः प्रेमपथप्रवर्तकेभ्यः

सर्वदा सर्वभावेन भजनीयो व्रजाधिपः।
स्वस्यायमेव धर्मोहि नान्यः क्वापि कथं च न॥1॥

संसार के जीवों को कर्मजाल में बधे देख कर आप परम कारुणिक श्रीमहाप्रभुजी अन्य साधनों की निवृत्ति के हेतु परम अमृत स्वरूप वाक्य श्रीमुख से आज्ञा करते हैं, सर्वदिति। सब समय में दुःख सुख में खाते पीते उठते बैठते सब क्षण में सर्व भाव से ब्रजाधिप श्रीराधारमण ही का भजन करना क्यौंकि भजनीय वही हैं, और कोई प्रेम का बदला नहीं दे सकता और भजन भी सर्व भाव से करना अर्थात् संसार में जितने भाव हैं ईश्वर भाव, गुरु भाव, मित्र भाव, पतिभाव इत्यादि पृथक् भाव जिस में जिस से हो सब को समेट कर सब भाव से उन्हीं का भजन करना, रीझाना भी उन्हीं पर खीझना तो उन्हीं पर, मांगना तो उन्हीं से लड़ना तो उन्हीं से, जिस में फिर कहीं और कोई भाव न रह जाय केवल एक अवलम्ब श्रीकृष्ण ही हों इस पर आप आज्ञा करते हैं कि जो लोग हमारे हैं उनका निश्चय एक यही धर्म्म है दूसरा कोई धर्म्म कदापि किसी भांति से नहीं है अर्थात कर्म्ममार्ग प्रवर्तकः इस नाम से कोई यज्ञादिकों को ही मुख्य धर्म्म मान कर इसे छोड़ उस में प्रवृत्त होकर भ्रान्त न हो जाएं इस हेतु आप मुक्त कंठ से कहते हैं कि हमारे लोगों का तो मुख्य धर्म्म यही है कि सर्व्वदा सर्व्वभाव से केवल श्रीकृष्ण ही का भजन करना।

एवं सवैस्स्वकर्तव्यं स्वयमेद करिष्यति।
प्रभुस्सर्वसमर्थोहि ततो निश्चिततां व्रजेत्॥2॥

अब जो कोई शंका करे कि हम सब छोड़ कर एक श्रीकृष्ण ही को भजै तो हमारा योग-क्षेम पितृदेव कर्म्मादिक सब कैसे सिद्ध होगा, इस शंका के निवारण के हेतु आप आज्ञा करते हैं कि इन सब बातों की चिन्ता छोड़ कर जैसा पूर्व्व में कहा

है वैसा ही करो फिर तुम्हारा जो कुछ कर्तव्य है वह सब आप कर लेगा करने न करने अन्यथा करने में और भी सब में वह निश्चित कर के समर्थ है। इससे आप निश्चिन्त हो जाना, जब हम ने उस के भरोसे अब छोड़ा है तो वह अन्तर्यामी है आप जानता है सब कर लेगा। गीता में उस की प्रतिज्ञा है कि जो लोग अनन्य होकर मुझे भजते हैं उन का योगक्षेम मैं बहन करता हूं इस से लोक वेद दोनों से निश्चिन्त होकर केवल भजन ही करना।

यदि श्रीगोकुलाधीशो धृतस्सर्वात्मना हृदि।
ततः किमपर ब्रहि लौकिर्वैदिकैरपि॥3॥

जो यह शंका करो कि हम लौकिक वैदिक कर्म्म छोड़ दें तो पतित न हो जायंगे उस पर आप आज्ञा करते हैं कि जो श्रीगोकुलाधीश्वर सर्वभाव से एकचित्तता से हृदय में धारण किए गए हैं तो बताओ फिर और किसी लौकिक और वैदिक कर्म्मो से क्या? क्यौंकि ये तो दोनों रीति में व्यर्थ पड़ते हैं जो श्रीकृष्ण की भक्ति नहीं है तो ये कर्म किस काम के क्यौंकि ये परमानन्दमय श्रीकृष्ण वियोगदान में समर्थ नहीं हैं और जो श्रीकृष्ण की भक्ति है तब ये किस काम के क्यौंकि उस को फिर और कोई कर्म्म अवशिष्ट नहीं है। इस से सर्व प्रकार से अनन्य होऴर सर्व्वान्तरयामी एक श्रीकृष्ण ही का भजन करना।

तस्मात् सर्वात्मना नित्यं गोकुलेश्वर पादयोः।
स्मरणं कीर्तनं चापि न त्याज्यमिति मे मतिः॥4॥

इस से सर्व भाव से आत्मा मन बुद्धि प्राण देह और इन्द्रिय सब से नित्य प्रतिक्षण श्रीगोकुलेश्वर जुगल चरणारविन्द का स्मरण और कीर्त्तन कभी नहीं छोड़ना। यह भी महाप्रभु जी आज्ञा करते हैं कि हमारी मति है अर्थात जो श्रीमहाप्रभु जी के मतावलम्बीगन हैं उन को तो सब साधन छोड़ कर एक श्रीकृष्ण ही भजनीय हैं। यह आप ने अपना मत दिखाया।

श्रीवल्लभाचार्य विरचिता चतुश्श्लोकी समाप्ता।

[हरिश्चन्द्र मैगजीन दिसम्बर, सन 1876 ई. में प्रकाशित]

इशुखृष्ट और ईशकृष्ण

इशुखृष्ट और ईशकृष्ण

पाठक गण को स्मरण होगा कि भारत सिक्षा में "भारत भुज बल लहि जब रच्छित, भारत सिच्छा लहि जग सिच्छित" लिखा है, आज उसी का हम प्रमाण देना चाहते हैं। न्यायप्रियगण देखें कि जैसा भारत भिक्षा में कहा गया वह उचित है कि नहीं।

समाज की उन्नति का मूल धर्म्म है। जहां का धर्म्म परिष्कृत नहीं वहां कभी समाज उन्नत नहीं। धर्म्म पर सब लोगों को ऐसा आग्रह रहता है, कि उस को साक्षात् परमेश्वर से उत्पन्न मानते हैं अतएव अन्य विषयों को छोड़ कर केवल धर्म्म पर हम विचार किया चाहते हैं और मुक्त कंठ होकर कहते हैं कि संसार के धर्म्माचार्य्य मात्र ने भारतवर्ष की छाया से अपने-अपने ईश्वर, देवता, धर्म्म पुस्तक, धर्म्मनीति और निज चरित्र निर्माण किया है। जितने धर्म्म प्रचलित हैं या प्रचलित थे वह सब या तो वैदिकों का अनुगमन हैं या बौद्धों का। यहां तक कि प्रसिद्ध ईश्वरवाची शब्द भी इसी से निकले हैं। अंगरेजों में परमेश्वर को गाड (God) कहते हैं। यह गौतम का नामान्तर है। उत्तर देशों में गौतम को गोडमा कहते हैं, इसी से यह गाड शब्द बना। फारसी में मूर्तियों को बुत कहते हैं यह शब्द बुद्ध से निकला। हरम हर्म्य से, सनम शम्भु से, दैर देवल से, देव देवता से और ऐसे ही देवतावाचक अनेक शब्द दूसरे दूसरों से।

यह सब जाने दीजिए सृष्टि के आरम्भ से चलिए। भगवान मनु लिखते हैं कि प्रथम सब जगत सुषुप्त था। फिर सर्वनियन्ता जगदीश्वर ने स्वशक्ति से प्रवेश पूर्वक उस को चैतन्य किया। यही यूनानियों के ऋषि केयस ने भी लिखा है। फिर परमात्मा ने अपनी प्रकृति रूपी परिणाम शरीर से प्रजा उत्पन्न करने की इच्छा से चिन्ता किया कि 'कैसे सब होगा' और यह चिन्ता कर के पहिले जल होय यह कह कर आकाशादि क्रम से जल सृष्टि किया। ओल्ड सिस्टम (बाइबिल) के जिनिसिस के प्रथम अध्याय को इस से, वहां भी यही है। फिर परमात्मा ने जल से ब्रह्मा उत्पन्न किया उस ने आकाश पृथ्वी स्वर्गादि निर्माण किया और महत्तत्व अहंकार गुण आदि की क्रम से सृष्टि हुई और उस से मनुष्य पशु पक्षी स्थावरादि उत्पन्न हुए। फिर प्राणविशिष्ट इन्द्रादि देवगण और कम हेतुक पाषाणमय देवगण और साध्य नामक सूक्ष्म देवगण अग्निष्टोमादि यज्ञ बनाए गए।[1]

---

[1] See Plato's Theology Concerning spiritual nature.

अंग्रेजी और यूनानी फिलासिफी में इस बात की छाया देख लीजिए। फिर वेद क्रिया काल ग्रह उन्नत अवनत स्थान तप सन्तोष इच्छा आदि की सृष्टि हुई फिर कर्त्तव्य अकर्तव्य कर्म के विभाग के हेतु धर्म्म अधर्म्म की सृष्टि हुई। धर्म्म का फल सुख और अधर्म्म दुःख (अब महाभारत के आदि पर्व के धर्म्म अधर्म्म की सृष्टि वर्णन इस मनु कथित सृष्टि की तुलना कर के उस से मिल्टन के मृत्यु विषयक प्रस्ताव मिला कर पढ़ो।) फिर पंच महाभूतों के सूक्ष्म अंश और स्थूल अंश से जगत की सृष्टि हुई। (मिल्टन की 5 वीं पुस्तक में स्वर्गच्युति के गल्प से इसे मिलाओ।) फिर मानव सृष्टि हुई और आत्मा को उस के देहों में प्रवेश का अधिकार दिया गया और एक को छोड़ कर दूसरे में गमन का भी (इस से सिद्ध होता है कि Transmigration of soul के प्रगट कर्त्ता भी मनु ही हैं।)

ऐसे ही संसार के सब देवता भी भारतवर्ष ही के देवगण की छाया हैं। मिनर्वा नाम्ना यूरोप की प्राचीन देवी हम लोगों की भगवती दुर्गा हैं। मिनर्वा इन्द्र के कन्धों से प्रगटी है यहां भी दुर्गा देवताओं के अंश (अंश कन्धे को भी कहते हैं) से प्रादुर्भूत हुई हैं। मिनर्वा भी सब शस्त्रों को लिए जन्मी हैं और दुर्गा भी, मिनर्वा युद्ध की देवी हैं दुर्गा भी। मिनर्वा शनिश्चर से लड़ी है दुर्गा महिषासुर से (महिषासुर और शनैश्चर में सादृश्य यह है कि शनैश्चर महिषवाहन है और महिषासुर महिष रूप) मिनर्वा और दुर्गा दोनों सिंहवाहिनी हैं। मिनर्वा के एक हाथ में भाला और दूसरे में मदुस का सिर है (यह मदुश शब्द मधु व महिष से निकला होगा) और दुर्गा का भी यही ध्यान है। मिनर्वा का दूसरा ध्यान कटे सिर का मुकुट पहिने और सर्प लपेटे हैं और दुर्गा का भी। मिनर्वा को मुर्गे प्यारे हैं यहां देवी को भी कुक्कुट बलि दिया जाता है।

अब अपेल्लो को लीजिए। यह हिन्दुओं के श्री कृष्ण का चित्र है। इस का सूर्य्य में निवास है और यहां भी नारायण का सूर्य्य में निवास है। इस नाम के चार देवता थे और यहां भी श्रीकृष्ण के चार व्यूह हैं। उस ने पाइथन नामक सूर्य्य को मारा और यहां भी कालिया दमन हुआ। वहां वह शिल्प, औषध, गान, काव्य, और रस का देवता है और यहां भी। उस का ध्यान सुन्दर युवा, लम्बे केश और हाथ में कभी धनुष कभी वंशी लिये है और यहां भी। वह पर्वत पर नव मित्रों के साथ विहार करता था यहां गिरिराज पर नव गोपियों के साथ विहार है।

वैसे ही जुपिटर[1] इन्द्र है। इन दोनों को देवराजत्व प्राप्त है। यहां इस की अपने भाई रिटन्स का डर था वहां हिरण्य कशिपु का। इन्द्र भी बड़ा लम्पट है और जुपिटर भी। जुपिटर का ध्यान सोने के सिंहासन पर बिजली हाथ में लिये हुए मेघों में शासन करते हुए है, और यहां भी वज्रहस्त है। किन्तु जुपिटर के चरित्र में श्रीकृष्ण के बहुत

---

[1] यद्यपि यूरोप वालों ने हमारे देवताओं के चरित्र का बहुत अनुकरण किया है तथापि उस के देवताओं के वेश में बड़ा गड़बड़ है इस से वंश परम्परा को मिलान न करके केवल चरित्र मात्र का यहां उदाहरण दिया है।

से चरित्र मिला दिए हैं।[1]

केवल यूरोप के मूर्तिपूजकों पर ही नहीं नए सम्प्रदाय वालों की भी यही दशा है। गोब्रिल (जिबरईल) गरुड़ का अपभ्रंश है और गरुड़ जैसे परमेश्वर के सबसे उत्तम पार्षदों में है वैसे ही जिबरईल उत्तम फरिश्तों में। वरंच फरिश्ता शब्द ही पार्षद का अपभ्रंश है। जिबरईल का ईश्वर की आज्ञा ला कर मत-प्रवर्त्तक होने का उदाहरण भी रामानुज सम्प्रदाय में देख लीजिए। क्रिस्तानों में एक आचार्य जोसफेट करनेल हैं और यह महात्मा शाक्यसिंह की प्रतिमूर्ति हैं। दोनों के पिता राजा, दोनों के जन्म के पूर्व ज्योतिषियों ने कहा था कि यह या तो बड़ा प्रतापी राजा होगा या धार्मिक। दोनों के पिता ने चेष्टा किया कि जिस में पुत्र संन्यासी न हो पर उन को रम्य उद्यान में रखा किन्तु संसार की असारता जान कर दोनों ही संन्यासी हो गए और दोनों ने अपने पिता को नए धर्म्म में दीक्षित किया। सब से ऊपर आनन्द की बात यह है जान, जो मनुष्य जोजफेट को महात्मा प्रचारक है, लिखता है कि जोजफेट भारतवर्ष में हुआ और हिन्दुस्थान से आए विश्वस्त लोगों से हम ने उस का चरित्र सुना। अब बतलाइए जोजफेट शाक्यसिंह ही का नामान्तर है कि नहीं।[2]

धर्म्म ही पर नहीं नीति सम्बन्धी भी यावत् गल्प मात्र इसी भारत वर्ष से फैलाकर और स्थानों में गई हैं। विलसन साहब लिखते हैं–केपस नगर के घोड़ा का उपाख्यान भारतवर्ष में भी प्रचलित है किन्तु भेद इतना है कि भारतवर्ष में घोड़ा हाथी के स्वरूप में है। उर्दू किताबों का यह किस्सा अत्यन्त प्रसिद्ध है कि टके की मुर्गी लेंगे, तब उस को अण्डे बच्चे होंगे तो उन को बेच कर बकरी लेंगे, उस को बच्चे होंगे तो उन को बेचकर घोड़ी लेंगे, तब उस को बच्चे होंगे तो उस से रोजगार करेंगे, रुपया पैदा होगा तब बादशाह की बेटी से शादी करेंगे जब वह शर्बत पिलाने आवैगी और खड़ी होकर विनती करके कहेगी कि मेरे प्यारे दूध पीओ तो हम एक लात मारेंगे, यह कह कर लात जो चलाया तो बर्तन फूट गए। इसी से मसल निकली है कि तुम्हारा तो बर्तन फूटा हमारी गृहस्थी ही खराब हो गई। अंग्रेजी में इस गल्प को और तरह से कहते हैं। फरासीस में लाफेन्टन कवि ने इसको पैरट गोपिनी के नाम से लिखा है जिस ने पूर्व की भांति सोचते-सोचते अपना दधिभाजन फोड़ डाला। संसार की और भाषाओं में भी रूपान्तर से यह गल्प प्रसिद्ध है।

परन्तु इसका मूल कहां है? भारतवर्ष में पंचतन्त्र देखिए उस में यह किस्सा स्वभाव कृपण नामक ब्राह्मण के नाम से प्रसिद्ध है और हितोपदेश के देवशर्मा के नाम से। एक विद्वान ने लिखा है कि ब्राह्मण से एक साधारण चर्म विक्रेता वा कुम्भकार

---

1. दिव धातु से देववाची शब्द संसार में प्रसिद्ध है। भारत के इन्द्र देव वे देवेन्द्र और यूनान में दिवस वा जियस। दोनों वज्रपाणि वारिदाता दाम्भिक पर्वत वासी और विलाससुखभोगी और एक वृत्रदानवहन्ता दूसरे टाइटस-दान व हन्ता।

2. See Professor max muller's sanskrit Literature.

इत्यादि नाम हुआ। अन्त में जयसुरसिक लाफेन्टन ने इस गल्प को लिखा तो इस शुष्क ब्राह्मण के स्थान पर नवयौवना ग्वालिनी को पुस्तक में स्थान दिया। अब कहिए कि कैसे संस्कृत वेश त्याग कर यह सब किस्से और भाषा में हुए और इतनी दूर पहुंचे। इस छोटे छोटे किस्सों में एक ऐसी संजीवनी शक्ति है कि राज्य और धर्म्म का हेर फेर हो जाए और भाषा का परिवर्तन हो जाए परन्तु यह सब छोटी छोटी गल्प बालकों और मुग्ध स्त्रियों के मुख द्वारा एक ही रूप से अनेक सहस्र कोस तक प्रचलित रहेंगे। महात्मा मोक्षमूलर लिखते हैं, "उन्नीसवीं शताब्दी में इस खीष्ट धर्म्म प्रधान देश में हम लोग अपने बालकों को जो ऐहिक और पारलौकिक ज्ञान की गल्पों में शिक्षा देते हैं वह धर्म्म विरोधी ब्राह्मणों और बौद्धों की पौत्तलिक धर्म्म की पुस्तकों से संगृहीत हैं। अब इस बात को कोई न मानेगा किन्तु हजार दो हजार बरस पहिले भारतवर्ष के किसी निर्जन वन और क्षुद्र पल्लियों में भ्रमण करने ही से यह सव्य बीज प्राप्त होता, जो अब समस्त पृथ्वी में विस्तृत है और सरस बालकों के हृत क्षेत्र में सदा लहलहाता रहेगा। बड़े बड़े विद्वान भी किसी अपनी नीति को इस सुरीति पर सर्व हृदयग्राही और चिरस्थायी नहीं कर सके हैं जैसा कि इन गल्प रचयिताओं ने सहज हृदयग्राही रचना की है। किन्तु ये बुद्धिमान लोग कौन थे यह ज्ञात नहीं और संसार के और और मानवोपकारियों की भांति विस्मृति देवी की अपार उदर में यह भी शयन करते हैं। यदि दो सहस्र वर्ष पूर्व कोई भारत वर्ष में जाता तो ये महात्मा लोग मिलते। अब केवल हम यही कह सकते हैं कि यह अति चातुर्य उन्हीं लोगों का है जिन को अब कोई कोई निगरो पुकारते हैं।"

[श्री हरिश्चन्द्र चन्द्रिका खंड 6, संख्या 7, जनवरी सन् 1879 ई. में प्रकाशित। इसके अन्त में 'क्रमशः' छपा है, इससे पता चलता है कि यह रचना अधूरी है।]

वैष्णवता और भारतवर्ष

वैष्णवता और भारतवर्ष

यदि विचार कर के देखा जाएगा तो स्पष्ट प्रकट होगा कि भारतवर्ष का सबसे प्राचीन मत वैष्णव है। हमारे आर्य्य लोगों ने सब से प्राचीनकाल में सभ्यता का अवलम्ब किया और इसी हेतु क्या धर्म्म क्या नीति सब विषय के संसार मात्र के ये दीक्षागुरु हैं। आर्य्यों ने आदिकाल से सूर्य्य ही को अपने जगत का सब से उपकारी और प्राणदाता समझ कर ब्रह्म माना और इन का मूल मन्त्र गायत्री इसी से इन्हीं सूर्य्य नारायण की उपासना में कहा गया है। सूर्य्य की किरणें 'आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वैःनरसूनवः' जलों में और मनुष्यों में व्याप्त रहती हैं और इसके द्वारा ही जीवन प्राप्त होता है इसी से सूर्य्य का नाम नारायण है। हम लोगों के जगत के ग्रह मात्र, जो सब प्रत्येक ब्रह्मांड हैं, इन्हीं की आकर्षण शक्ति से स्थिर हैं, इसी से नारायण का नाम अनन्त कोटिब्रह्मांडनायक है। इसी सूर्य्य का वेद में नाम विष्णु है, क्योंकि इन्हीं की व्यापकता से जगत् स्थित है। इसी से आर्य्यों में सबसे प्राचीन एक ही देवता थे और इसी से उस काल के भी आर्य्य वैष्णव थे। कालान्तर में सूर्य्य में चतुर्भुज देव की कल्पना हुई। 'ध्येयः सदा सवितृ मंडल मध्यवर्ती नारायणः सरसि जासनसंनिविष्ट'', 'तद्विष्णोः परमं पदम्', 'विष्णोः कर्माणि पश्यत', 'यत्र गावो भूरिशृंगाः', 'इदंविष्णुर्विचक्रमे' इत्यादि श्रुति जो सूर्य्यनारायण के आधिभौतिक ऐश्वर्य की प्रतिपादक थीं, आधिदैविक सूर्य्य की विष्णुमूर्ति के वर्णन में व्यख्यात हुईं। चाहे जिस रूप से हो वेदों ने प्राचीनकाल से विष्णु महिमा गाई। उस के पीछे उस सूर्य्य की एक प्रतिमूर्ति पृथ्वी पर मानी गई, अर्थात अग्नि। आर्य्यों का दूसरा देवता अग्नि है। अग्नि यज्ञ है और 'यज्ञो वै विष्णुः' यज्ञ का दूसरा देवता माने गए। आर्य्यों के एक छोड़ कर दो देवता हुए। फिर तीन और तीन से ग्यारह को त्रिविध करने से तैंतीस और इसी तैंतीस से तैंतीस करोड़ देवता हुए। इस विषय का विशेष वर्णन अन्य प्रसंग में करेंगे। यहां केवल इस बात को दिखलाते हैं कि वर्त्तमान समय में भी भारतवर्ष से और वैष्णवता से कितना धनिष्ठ सम्बन्ध है। किन्तु योरप के पूर्वीविधा जानने वाले विद्वानों का मत है कि रुद्र आदि

आर्य्यों के देवता नहीं हैं[1] वह अनार्य्यों (Non-Aryan or Tamalian) के देवता हैं। इस के वे लोग आठ कारण देते हैं। प्रथम वेदों में लिंगपूजा का निषेध है। यथा वशिष्ठ इंद्र से बिनती करते हैं कि हमारी वस्तुओं को 'शिश्नदेवा' (लिंगपूजक) से बचाओ इत्यादि[2]। ऋग्वेद और अन्यान्य ऋचाओं में भी शिश्नदेवालोगों को असुर, दस्यु इत्यादि कहा है और रुद्री में भी रुद्र की स्तुति भयंकर भाव से की है। दूसरी युक्ति यह है कि स्मृतियों में लिंगपूजा का निषेध है।[3] प्रोफेसर मैक्समूलर ने वशिष्ठस्मृति के अनुवाद के स्थल में यह विषय बहुत स्पष्ट लिखा है। तीसरी युक्ति वे यह कहते हैं कि लिंगपूजक और दुर्गाभैरवादिकों के पूजक ब्राह्मण को पंक्ति से बाहर करना लिखा है। (मिताक्षरवृत्त ब्रह्मांडपुराण से वाक्य, चतुर्विंशतिमत पराशर व्याख्या में माधव श्लोक, 29, आपस्तंब, भगवत चतुर्थस्कंध द्वितीयाध्याय 28 श्लोक और धर्माब्धिसार के तीसरे परिच्छेद का पूर्वार्द्ध देखो।) चौथी युक्ति यह कहते हैं कि लिंग का तथा दुर्गा भैरवादि का निर्माल्य खाने में पाप लिखा है। कमलाकराह्निक निर्णयसिन्धु (आचारमाधवादि ग्रन्थों में सैकड़ों वाक्य हैं, देख लो)। पांचवें शास्त्रों में शिवमन्दिर और भैरवादिकों के मन्दिर को नगर के बाहर बनाना लिखा है।[4] छठें वे लोग कहते हैं कि शैव बीजमन्त्र से दीक्षित और शिव को छोड़ कर और देवता को न माननेबवाले ऐसे शुद्ध शैव भारतवर्ष में बहुत ही थोड़े हैं। या तो शिवोपासक स्मार्त्त हैं या शाक्त हैं। शाक्त भी शिव को पार्वती के पति समझ कर विशेष आदर देते हैं, कुछ सवर्बेश्वर समझ कर नहीं। जंगमादिक दक्षिण में जो दीक्षित शैव हैं वे बहुत ही थोड़े हैं। शाक्त तो जो दीक्षित होते हैं वे प्रायः कौल ही हो जाते हैं। और गाणपत्य की तो कुछ गिनती ही नहीं। किन्तु वैष्णवों में मध्व और रामानुज को छोड़ कर और इन में भी जो निरे आग्रही हैं वे ही तो साधारण स्मातों से कुछ भिन्न हैं, नहीं तो दीक्षित वैष्णव भी साधारण जनसमाज से कुछ भिन्न नहीं और एक प्रकार के अदीक्षित वैष्णव तो सभी हैं। सातवीं युक्ति इन लोगों की यह है कि जो अनार्य्यलोग प्राचीन काल में भारतवर्ष में रहते थे और जिन को आर्य्यलोगों ने जीता था वही शिल्पविद्या नहीं जानते थे

---

[1] ऐंटिक्विटीज आव उड़ीसा 1 जिल्द 136 पेज देखो।

[2] Rigveda, IV., P. 6 and Dr. Wilson's Vedio Comments.

[3] Professor Max Muller's Ancient Sanskrit Literature, P. 55

[4] भागवत के पहले स्कंध के दूसरे अध्याय का 25 श्लोक। ''व्यवहाराध्याय दिव्य प्रकरण कोष विधान 18 श्लोक, वशिष्ठस्मृति, गीतासप्तमाध्याय 20 श्लोक, गौतमकृताचारसूत्र 12 खंड आचारप्रकाश में मत्स्यपुराण का वाक्य और काशीखंड का वाक्य देखो। इस विषय की पुष्टता के हेतु प्रोफेसर मैक्समूलर लिखते हैं कि जिस ऋचा के वशिष्ठ ऋषि हैं उसी में शिश्नदेवालोगों की निदा है अतएव इस विषय में वशिष्ठ की स्मृति भी प्रमाण के योग्य हैं। बहुत लोग यह भी कहते हैं कि शाक्तमत नास्तिकों की प्रकृत्ति ही से जगत् माननेवाले (Naturalists) की नेचरियों की शाखा है, क्रम पाकर उसी प्रकृति को वे लोग देवी के आकार में मानने लगे।

और इसी हेतु लिंग, ढोंका सिद्धपीठ इत्यादि, पूजा उन्हीं लोगों की है जो अनार्य हैं। आठवें शिव, काली, भैरव, इत्यादि के वस्त्र, निवास, आभूषण, आदिक सभी आर्यों से भिन्न हैं। श्मशान में वास, अस्थि की माला आदि जैसी इन लोगों की वेषभूषा शास्त्रों में लिखी है वह आर्योचित नहीं है। इसी कारण शास्त्रों में शिव का, भृगु और दत्त आदि का विवाद कई स्थल पर लिखा है और रुद्रभाग इसी हेतु यज्ञ के बाहर है। यद्यपि ये पूर्वोक्त युक्तियां योरोपीय विद्वानों की हैं, हम लोगों से कोई सम्बन्ध नहीं किन्तु इस विषय में बाहर वाले क्या कहते हैं, केवल यह दिखलाने को यहां लिखी गई हैं।

पाश्चिमात्य विद्वानों का मत हैं कि आर्य्य लोग (Aryans) जब मध्य एशिया (Central Asia) में थे तभी से लोग विष्णु का नाम जानते हैं। जोरौस्ट्रियन (Zorastrian) ग्रन्थ जो ईरानी और आर्य्य शाखाओं के भिन्न होने के पूर्व के लिखे हैं उन में भी विष्णु का वर्णन है। वेदों के आरम्भ काल से पुराणों के समय तक तो विष्णुमहिमा आर्य्यग्रन्थों में पूर्ण हैं। वरंच तन्त्र और आधुनिक भाषा ग्रन्थों में उसी भांति एकछत्र विष्णुमहिमा का राज्य है।

पंडितवर बाबू राजेन्द्रलाल मित्र ने वैष्णवता के काल को पाँच भाग में विभक्त किया है। यथा 1 वेदों के आदि समय की वैष्णवता, 2 ब्राह्मण के समय की वैष्णवता, 3 पाणिनि के और इतिहासों के समय की वैष्णवता, 4 पुराणों के समय की वैष्णवता, 5 आधुनिक समय की वैष्णवता।

वेदों के आदि समय से विष्णु की ईश्वरता कही गई है। ऋग्वेद संहिता में विष्णु की बहुत सी स्तुति है। विष्णु को किसी विशेष स्थान का नायक या किसी विशेष तत्त्व वा कर्म का स्वामी नहीं कहा है, वरंच सर्वेश्वर की भांति स्तुति किया है। यथा विष्णु पृथ्वी के सातों तहों पर फैला है। विष्णु ने जगत् को अपने तीन पैर के भीतर किया। जगत उसी के रज में लिपटा है। विष्णु के कर्मों को देखो जो कि इन्द्र का सखा है। ऋषियो! विष्णु के ऊंचे पद को देखो, जो एक आंख की भांति आकाश में स्थिर है। पंडितो! स्तुति गाकर विष्णु के ऊंचे पद को खोजो। इत्यादि। ब्राह्मणों ने इन्हीं मन्त्रों का बड़ा विस्तार किया है और अब तक यज्ञ, होम, श्राद्ध आदि सभी कर्मों में से मन्त्र पढ़े जाते हैं। ऐसे ही और स्थानों में विष्णु को जगत का रक्षक, स्वर्ग और पृथ्वी को बनाने वाला, सूर्य्य और अंधेरे को उत्पन्न करने वाला इत्यादि लिखा है। इन मन्त्रों में विष्णु के विषय में रूप का परिचय इतना ही मिलता है कि उस ने अपने तीन पदों से जगत् को व्याप्त कर रक्खा है। यास्क ने निरुक्त में अपने से पूर्व के दो ऋषियों का मत इस के अर्थ में लिखा है। यथा शाक्यमुनि लिखते हैं कि ईश्वर का पृथ्वी पर रूप अग्नि है, घन में विद्युत है और आकाश में सूर्य्य हैं/ सूर्य्य की पूजा किसी समय समस्त पृथ्वी में होती थी यह अनुमान होता है। सब भाषाओं में अद्यापि यह कहावत प्रसिद्ध है कि 'उठते हुए सूर्य्य को सब

पूजता है।' (अरुणाभाव सूर्य्य के उदय, मध्य और अस्त की अवस्था को तीन पद मानते हैं।) दुर्गाचार्य अपनी टीका में उसी मत को पुष्ट करते हैं। सायणाचार्य विष्णु के बावन-अवतार पर इस मंत्र को लगाते हैं। किन्तु यज्ञ और आदित्य ही विष्णु हैं, इस बात को बहुत लोगों ने एक मत होकर माना है। अस्तु, विष्णु को उस समय आदित्य ही के नामांतर से पुकारा है कि स्वयं विष्णु देवता आदित्य से भिन्न थे, इस का झगड़ा हम यहां नहीं करते। यहां यह सब लिखने से हमारा केवल यह आशय है कि अति प्राचीनकाल से विष्णु हमारे देवता हैं। अग्नि, वायु और सूर्य्य यह तीनों रूप विष्णु के हैं; इन्हीं से ब्रह्मा, शिव और विष्णु यह तीन मूर्तिमान् देव हुए हैं।

ब्राह्मणों के समय में विष्णु की महिमा सूर्य्य से भिन्न कह कर विस्तार रूप से वर्णित है और शतपथ, ऐतरेय और तैत्तिरीय ब्राह्मण में देवताओं का द्वारपाल, देवताओं के हेतु जगत का राज्य बचानेवाला इत्यादि कह कर लिखा है।

इतिहासों में रामायण और भारत में विष्णु की महिमा स्पष्ट है, वरंच इतिहासों के समय में विष्णु के अवतारों का पृथ्वी पर माना जाना भी प्रकट है। पाणिनि के समय के बहुत पूर्व कृष्णावतार, कृष्ण पूजा और कृष्णभक्ति प्रचलित थी, यह उन के सूत्र ही से स्पष्ट है। यथा, जीविकार्थे चापण्ये वासुदेवः ॥5॥3॥99॥० कृष्णं नमेच्येतुखं यायात॥3॥3॥15 इ० वासुदेव भक्तिरस्य वासुदेवकः॥4॥3॥98॥० और प्रद्युम्न, अनिरुद्ध और सुभद्रा नाम इत्यादि के पाणिनि के लिखने ही से सिद्ध है कि उस समय के अति पूर्व कृष्णावतार की कथा भारत वर्ष में फैल गई थी। यूनानियों के उदय के पूर्व पाणिनि का समय सभी मानते हैं। विद्वानों का मत है कि क्रम से पूजा के नियम भी बदले यथा पूर्व में यज्ञाहुति, फिर बलि और अष्टांग पूजा आदि हुई और देवविषयक ज्ञान की वृद्धि के अन्त में सब पूजन आदि से उस की भक्ति श्रेष्ठ मानी गई।

पुराणों के समय में तो विधिपूर्वक वैष्णव मत फैला हुआ था, यह सब पर विदित ही है। वैष्णव पुराणों की कौन कहे, शाक्त और शैव पुराणों में भी उन देवताओं की स्तुति उन को विष्णु से सत्पूर्ण भिन्न कर के नहीं कर सके हैं। अब जैसा वैष्णव मत माना जाता है उस के बहुत से नियम पुराणों के समय से और फिर तन्त्रों के समय से चले हैं। दो हजांर वर्ष की पुरानी मूर्तियां वाराह, राम, लक्ष्मण और वासुदेव की मिली हैं और उन पर भी खुदा हुआ है कि उन मूर्तियों की स्थापना करनेवालों का वंश भगवान अर्थात् वैष्णव था। राजतरंगिणी के ही देखने से राम, केशव, आदि मूर्तियों की पूजा यहां बहुत दिन से प्रचलित है, यह स्पष्ट हो जाता है। इस से इस की नवीनता या प्राचीनता का झगड़ा न कर के यहां थोड़ा सा इस अदल बदल का कारण निरूपण कहते हैं।

मनुष्य के स्वभाव ही में यह बात है कि जब वह किसी बात पर प्रवृत्त होता है तो क्रमशः उस की उन्नति करता जाता है और उस विषय को जब तक वह एक अन्त तक नहीं पहुंचा लेता सन्तुष्ट नहीं होता। सूर्य्य के मानने की ओर जब

मनुष्यों की प्रवृत्ति हुई तो इस विषय को भी वे लोग ऐसी ही सूक्ष्म दृष्टि से देखते गए।

प्रथमतः कर्म मार्ग में फंसकर लोग अनेक देवी देवों को पूजते हैं, किन्तु बुद्धि का यह प्रकृत धर्म्म है कि यह ज्यों ज्यों समुज्चल होती है अपने विषय मात्र को उज्ज्वल करती जाती है। थोड़ी बुद्धि बढ़ने ही से यह विचार चित्त में उत्पन्न होता है कि इतने देवी देव इस अनन्त सृष्टि से नियामक नहीं हो सकते, इन का कर्त्ता स्वतन्त्र कोई विशेष शक्तिसम्पन्न ईश्वर है। तब उस का स्वरूप जानने की इच्छा होती है, अर्थात मनुष्य कर्मकांड में आता है। ज्ञानकांड में सोचते सोचते संगति और रुचि के अनुसार या तो मनुष्य फिर निरीश्वरवादी हो जाता है या उपासना में प्रवृत्ता होता है। उस उपासना की भी विचित्र गति है। यद्यपि ज्ञानवृद्धि के कारण प्रथम मनुष्य साकार उपासना छोड़कर निराकर की ओर रुचि करता है, किन्तु उपासना करते-करते जहां भक्ति का प्राबल्य हुआ वहीं अपने उस निराकार उपास्य को भक्त फिर साकार कहने लगता है। बड़े-बड़े निराकारवादियों ने भी "प्रभो दर्शन दो! अपने चरणकमलों को हमारे सिर पर स्थान दो, अपनी सुधामयी वाणी श्रवण कराओ" इत्यादि प्रयोग किया है। वैसे ही प्रथम सूर्य्य पृथ्वीवासियों को सब से विशेष आश्चर्य और गुणकारी वस्तु बोध हुई, उस से फिर उन में देवबुद्धि हुई। देवबुद्धि होने ही से आधिभौतिक सूर्य्य मंडल के भीतर एक आधिदैविक नारायण माने गए। फिर अन्त में यह कहा गया कि नारायण एक सूर्य्य ही में नहीं, सर्वत्र हैं, और अनन्त कोटि सूर्य्य, चन्द्र, तारा उन्हीं के प्रकाश से प्रकाशित हैं। अर्थात आध्यात्मिक नारायण की उपासना में लोगों की प्रवृत्ति हुई।

इन्हीं कारणों से वैष्णवमत की प्रवृत्ति भारतवर्ष में स्वाभाविकी है। जगत में उपासनामार्ग ही मुख्य धर्म्ममार्ग समझा जाता है। कृस्तान, मुसलमान, ब्राह्म, बौद्ध उपासना सब के यहां मुख्य है। किन्तु बौद्धों में अनेक सिद्धों की उपासना और तप आदि शुभ कर्मों के प्राधान्य से वह मत हम लोगों के स्मार्त मत के सदृश है और कृस्तान, ब्राह्म, मुसलमान आदि के धर्म्म में भक्ति की प्रधानता से ये सब वैष्णवों के सदृश हैं। इंजील में वैष्णवों के ग्रन्थों से बहुत सा विषय लिया है और ईसा के चरित्र में श्री कृष्ण के चरित्र का सादृश्य बहुत है, यह विषय सविस्तार भिन्न प्रबन्ध में लिखा गया है। तो जब ईसाइयों के मत को ही हम वैष्णवों का अनुगामी सिद्ध कर सके हैं, फिर मुसलमान जो कृस्तानों के अनुगामी हैं वे हमारे अन्वनुगामी हो चुके।

यद्यपि यह निर्णय करना अब अति कठिन है अतिप्राचीन के ध्रुव, प्रह्लाद आदि, मध्यावस्था के उद्धव, आरुणि, परीक्षितादिक और नवीन काल के वैष्णवाचार्यों के खान-पान, रहन-सहन, उपासना-रीति, बाह्य चिह्न आदि में कितना अन्तर पड़ा है, किन्तु इतना ही कहा जा सकता है कि विष्णु-उपासना का मूल सूत्र अति प्राचीनकाल से

अनवच्छिन्न चला आता है। ध्रुव, प्रह्लादादि वैष्णव तो थे, किन्तु अब के वैष्णवों की भांति कंठी, तिलक, मुद्रा लगाते थे और मांस आदि नहीं खाते थे, इन बातों का विश्वस्त प्रमाण नहीं मिलता। ऐसे ही भारतवर्ष में जैसी धर्म्मरुचि अब है। उस से स्पष्ट होता है कि आगे चल कर वैष्णवमत में खाने पीने का विचार छूट कर बहुत सा अदल-बदल अवश्य होगा। यद्यपि अनेक आचार्यों ने इसी आशा से मत प्रवृत्त किया कि इस में सब मनुष्य समानता लाभ कर और परस्पर खानपानादि से लोगों में ऐक्य बढ़ै और किसी जाति, वर्ण, देश का मनुष्य क्यौं न हो वैष्णवपंक्ति में आ सकै, किन्तु उन लोगों की यह उदार इच्छा भली भांति पूरी नहीं हुई, क्योंकि स्मार्त मत की और ब्रह्मणों की विशेष हानि के कारण इस मत के लोगों ने उस समुन्नत भाव से उन्नति को रोक दिया, जिस से अब वैष्णवों में छुआछूत सब से बढ़ गया। बहुदेवोपासकों की घृणा देने के अर्थ वैष्णवातिरिक्त और किसी का स्पर्श बचाते वहां तक एक बात थी, किन्तु अब तो वैष्णवों ही में ऐसा उपद्रव फैला है कि एक संप्रदाय के वैष्णव दूसरे सम्प्रदाय वाले को अपने मन्दिर में और अपने खान-पान में नहीं लेते और 'सात कनौजिया नौ चूल्हे' वाली मसल हो गई है। किन्तु काल की वर्त्तमान गति के अनुसार यह लक्षण उनकी अवनति के हैं। इस काल में तो इस की तभी उन्नति होगी जब इस के बाह्यव्यवहार और आडम्बर में न्यूनता होगी और एकता बढ़ाई जाएगी और आन्तरिक उपासना की उन्नति की जाएगी। यह काल ऐसा है कि लोग उसी मत को विशेष मानेंगे जिस में बाह्य देह-कष्ट न्यून हो। यद्यपि वैष्णवधर्म्म भारतवर्ष का प्रकृत धर्म्म है इस हेतु उस की ओर लोगों की रुचि होगी, किन्तु उस में अनेक संस्कारों की अतिशय आवश्यकता है। प्रथत तो गोस्वामीगण अपना रजोगुणी-तमोगुणी स्वभाव छोड़ैगे तब काम चलैगा। गुरु लोगों में एक तो विद्या ही नहीं होती, जिसके न होने से शील, नम्रता आदि उन में कुछ नहीं होते। दूसरे या तो वे अति रूखे क्रोधी होते हैं या अति बिलासलालस होकर स्त्रियों की भांति सदा दर्पण ही देखा करते हैं। अब वह सब स्वभाव उन को छोड़ देना चाहिए, क्यौंकि इस उन्नीसवीं शताब्दी में वह श्रद्धाजाड्य अब नहीं बाकी है। अब कुकर्मी गुरु का भी चरणमृत लिया जाए वह दिन छप्पर पर गए। जितने बूढ़े लोग अभी तक जीते हैं उन्हीं के शील संकोच से प्राचीनधर्म्म इतना भी चल रहा है, बीस पचीस बरस पीछे फिर कुछ नहीं है। अब तो गुरु गोसाई का चरित्र ऐसा होना चाहिए कि जिस को देख सुन कर लोगों में श्रद्धा से स्वयं चित्त आकृष्ट हों। स्त्रीजनों का मन्दिरों से सहवास निवृत्त किया जाए। केवल इतना ही नहीं, भगवान श्री कृष्णचन्द्र की केलिकथा जो अतिरहस्य होने पर भी बहुत परिमाण से जगत में प्रचलित है वह केवल अन्तरंग उपासकों पर छोड़ दी जाए, उन के माहात्म्य मत विशद चरित्र का महत्त्व यथार्थ रूप से व्याख्या कर के सब को समझाया जाए। रास क्या है गोपी कौन हैं, यह सब रूपक अलंकार स्पष्ट कर के श्रुतिसम्मत उन का ज्ञान वैराग्य भक्तिबोधक अर्थ किया जाय। यह

भी दबी जीभ से हम डरते-डरते कहते हैं कि व्रत, स्नान आदि भी वहीं तक रहैं जहां तक शरीर को अति कष्ट न हो। जिस उत्तम उदाहरण के द्वारा स्थापक आचार्यगण ने आत्मसुख विसर्जन कर के भक्ति सुधा से लोगों को प्लावित कर दिया था उसी उदाहरण से अब भी गुरु लोग धर्म्म प्रचार करें। बाह्य आग्रहों को छोड़ कर केवल आन्तरिक उन्नत प्रेमी मयी भक्ति का प्रचार करें, देखें कि दिग्दिगन्त से हरिनाम की कैसी ध्वनि उठती है और विधर्मीगण भी इस को सिर झुकाते हैं कि नहीं और सिक्ख, कबीरपन्थी आदि अनेक दल के हिन्दूगण भी सब आप से आप बैर छोड़ कर इस उन्नत समाज में मिल जाते हैं कि नहीं।

जो कोई कहे कि यह तुम कैसे कहते हो कि वैष्णवमत ही भारत वर्ष का प्रकृत मत है तो उस के उत्तर में हम स्पष्ट कहेंगे कि वैष्णव मत ही भारतवर्ष का मत है और वह भारतवर्ष की हड्डी लहू में मिल गया है। इस के अनेक प्रमाण हैं, क्रम से सुनिए (1) पहले तो कबीर, दादू, सिक्ख, बाउल आदि जितने पन्थ हैं सब वैष्णवों की शाखा प्रशाखाएं हैं और सारा भारतवर्ष इन पन्थों से छाया हुआ है। (2) अवतार और किसी देव का नहीं, क्योंकि इतना उपकार ही [दस्यु दलन आदि] और किसी से नहीं साधित हुआ है। (3) नामों को लीजिए तो क्या स्त्री, क्या पुरुष, आधे नाम भारतवर्ष के विष्णुसम्बन्धी हैं और आधे में जगत है। कृष्णा भट्ट, रामसिंह, गोपालदास, हरिदास, रामगोपाल, राधा, लक्ष्मी, रुक्मिन, गोपी जानकी आदि। विश्वास न हो कलेक्टरी के दफ्तर से मर्दुमशुमारी के कागज निकाल कर देख लीजिए वा एक दिन डाकघर में बैठ कर चिट्ठियों के लिफाफों की सैर कीजिए। (4) ग्रन्थ, काव्य, नाटक आदि के, संस्कृत या भाषा के, जो प्रचलित हैं उन को देखिए। रघुवंश, माघ, रामायण आदि ग्रन्थ विष्णुचरित्र के ही बहुत हैं। (5) पुराण में भारत, भागवत, वाल्मीकि-रामायण यही बहुत प्रसिद्ध है और यह तीनों वैष्णवग्रन्थ हैं। (6) व्रतों में सब से मुख्य एकादशी है वह वैष्णव व्रत है और भी जितने व्रत हैं उन में आधे वैष्णव हैं। (7) भारतवर्ष में जितने मेले हैं उन में आधे से विशेष विष्णुलीला, विष्णुपर्व या विष्णुतीर्थों के कारण हैं। (8) तिवहारों की भी यही दशा है। वरंच होली आदि साधारण तिवहारों में भी विष्णुचरित्र ही गाया जाता है। (9) गीत, छन्द चौदह आना विष्णुपरत्व हैं, तो दो आना और देवताओं के। किसी का ब्याह हो, रामजानकी के ब्याह के गीत सुन लीजिए। किसी के बेटा हो नन्द बधाई गाई जाएगी। (10) तीर्थों में भी विष्णुसम्बन्धी ही बहुत हैं। अयोध्या, हरिद्वार, मथुरा, वृन्दावन, जगन्नाथ, रामनाथ, द्वारका, बदरीनाथ आदि भली-भांति याद कर के देख लीजिए। (11) नदियों में गंगा, यमुना मुख्य हैं, सो इन का माहात्म्य केवल विष्णुसम्बन्ध से हैं। (12) गया में हिन्दू मात्र को पिंडदान करना होता है, वहां भी विष्णुपद है। (13) मरने के पीछे 'रामरामसत्य है' इसी की पुकार होती है और अन्त में शुद्ध श्राद्ध तक 'प्रेतमुक्ति प्रदोभव' आदि वाक्य से केवल जनार्दन ही पूजे जाते हैं। यहां तक कि पितृरूपी जनार्दन

ही कहलाते हैं। (14) नाटकों और तमाशों में रामलीला, रास ही अति प्रचलित हैं। (15) सब वेद पुस्तकों के आदि और अन्त में लिखा रहता है। 'हरिः ॐ'। (16) संकल्प कीजिए तो विष्णुः विष्णुः। (17) आचमन में विष्णु विष्णु। (18) शुद्ध होना हो तो यः स्मरेत् पुंडरीकाक्षं। (19) सुग्गे को भी राम ही राम पढ़ाते हैं। (20) जो कोई वृत्तान्त कहें तो उस को राम कहानी कहते है। (21) लड़कों को बाल गोपाल कहते हैं। (22) छपने में जितने भागवत, रामायण, प्रेमसागर, ब्रजविलास छापी जाती है और देवताओं के चरित्र उतने नहीं छपते। (23) आर्य्यलोगों के शिष्टाचार में राम राम, जयश्रीकृष्ण, जयगोपाल ही प्रचलित हैं। (24) ब्राह्मणों के पीछे वैरागी ही को हाथ जोड़ते हैं और भोजन कराते हैं। (25) विष्णु के साला होने के कारण चंद्रमा को सभी चन्दामामा कहते हैं। (26) गृहस्थ के घर-घर तुलसी का थाला, ठाकुर की मूर्ति, रसोई भोग लगाने को रहती है। (27) कथा घाट बाट में भागवत और रामायण की होती है। (28) नगरों के नाम में भी रामपुर[1], गोविन्दगढ़, रघुनाथपुर, गोपालपुर[2] आदि ही विशेष हैं। (29) मिठाई में गोविन्दबड़ी, मोहनभोग आदि नाम हैं, अन्य देवताओं का कहीं कुछ नाम नहीं है। (30) सूर्य्यचन्द्रवंशी क्षत्री लोग श्रीराम कृष्ण के वंश में होने का अब तक अभिमान करते हैं। (31) ब्राह्मणगण ब्रह्मण्य देव कह कर अब तक कहते हैं 'ब्राह्मणो मामकीतनुः' (32) औषधियों में भी रामबाण,

---

1. विष्णु सम्बन्धी अनेक गांव हैं, कई एक यहां पर लिखे जाते हैं। जिला गया के जहानाबाद थाना के इलाके में बिसुनगंज गांव हैं। जिला गया के नबीनगर थाना के इलाके में किसुनपुर बटाने के किनारे पर है, यहां मेला लगता है। जिला गया के दाऊदनगर थाना के इलाके में गोपालपुर गांव है। जिला गया के शहरघाटी थाना के इलाके में नारायणपुर गांव है।

   बरेव से तीन कोस पूरब सकरी नदी के बाएं किनारे गोविन्दपुर बैजनाथ जी की कच्ची सड़क पर भारी बाजार है। यहां लकड़ी और बहुत सी जंगली चीजें बिकती हैं। यहां से दो कोस नैर्ऋत्यकोन में एक तारा गांव से आध कोस दक्खिन महभर पहाड़ में ककीलत बड़ा भारी और प्रसिद्ध झरना है, इस में सदा पानी मोटी धार से गिरा करता है। पानी गिरते-गितरे नीचे एक अथाह कुंड बन गया है। पानी इस झरने का बहुत निमर्ल और ठंढा रहता है। यह स्थान परम रम्य और मनोहर लगता है। मेष की संक्रांति में (बिसुआ) बड़ा मेला लगता है। गोविन्दपुर के आस पास बिसुनपुर, सुघड़ी और पहाड़ के पार सिऊर रपऊ आदि बड़े-बड़े गांव हैं। सिऊर में दो बड़े तालाब हैं और एक पुराने राजगृह का चिन्ह देख पड़ता है।

   सीतापुर मुल्लापुर के पश्चिम सदर मुकाम सीतापुर लखनऊ से 53 मील उत्तर बसा है। दरयाबाद सीतापुर के वायु कोन पर है। सदर मुकाम दरयाबाद लखनऊ से 45 मील वायकोन उत्तर को झुकता हुआ है।

2. एक गांव असनीगोपालपुर है। वहां के नरहरि कवि ने अपने परिचय में कहा है–

   कवित्त–नाम नरहरि है प्रशंसा सब लोग करें हंसहू से उज्चल जगु व्यापे हैं। गंगा के तीर ग्राम असनीगोपालपुर मन्दिरगोपाल जी को करत मन्त्र जापे हैं। कवि बादशाही मौज पावै बादशाही वो जगावै बादशाही जाते अरिगन कांपे हैं। जब्बर गनीमन के तोरिबे को गब्बर हुमायूं के बब्बर अकब्बर के थापे हैं॥1॥

नारायणचूर्ण आदि नाम मिलते हैं। (33) कार्तिकस्नान, राधा दामोदार की पूजा, देखिए भारतवर्ष में कैसी है। (34) तारकमंत्र लोग श्रीरामनाम ही को कहते हैं। (35) किसी हौस में चले जाइए तूल के थान निकलवा कर देखिए उस पर जितने चित्र विष्णुलीला सम्बन्धी मिलेंगे अन्य नहीं। (36) बारहों महीने के देवता विष्णु हैं। ऐसी ही अनेक-अनेक बातें हैं। विष्णुसम्बन्धी नाम बहुत वस्तुओं के हैं, कहाँ तक लिखे जाएं। विष्णुपद (आकाश), विष्णुरात (परीक्षित) रामदाना, रामधेनु, रामजी की गैया, रामधनु (आकाश धनु), रामफल, सीताफल, रामतरोई, श्रीफल, हरिगीती, रामकली, रामकपूर, रामगिरी, रामचंदन, रामगंगा, हरिचन्दन, हरिसिंगार, हरिकेला, हरिनेत्र, (कमल), हरिकेली (बंगला देश), हरिप्रिय (सफेदचन्दन), हरिवासर (एकादशी), हरिबीज (बगनीबू), हरिवर्षखंड, कृष्णकली, कृष्णकन्द, कृष्णकान्ता, विष्णुक्रान्ता (फूल), सीतामऊ, सीतावलदी, सीताकुंड, सीतामढ़ी, सीता की रसोई, हरिपर्वत, हरि का पतन, रामगढ़, रामबाग, रामशिला, रामजी कीर घोड़ी हरिपदा (आकाश गंगा), नारायणी, कन्हैया आदि नगर नद नदी पर्वत फलफूल के सैकड़ों नाम हैं। (जले विष्णुः स्थले विष्णुः) सब स्थान पर विष्णु के नाम ही का सम्बन्ध विशेष है। आग्रह छोड़ कर तनिक ध्यान देकर देखिए कि विष्णु से भारतवर्ष से क्या सम्बन्ध है, फिर हमारी बात स्वयं प्रमाणित होती है कि नहीं कि भारतवर्ष का प्रकृत मत वैष्णव ही है।

अब वैष्णवों से यह निवेदन है कि आप लोगों का मत कैसी दृढ़ भित्ति पर स्थापित है और कैसे सार्वजनीन उदारभाव से परिपूर्ण है, यह कुछ-कुछ हम आप लोगों को समझा चुके। उसी भाव से आप लोग भी उस में स्थिर रहिए। यही कहना है। जिस भाव से हिन्दू मत अब चलता है उस भाव से आगे नहीं चलेगा। अब हम लोगों के शरीर का बल न्यून हो गया, विदेशी शिक्षाओं से मनोवृत्ति बदल गई, जीविका और धन उपार्जन के हेतु अब हम लोगों को पांच-पांच, छ-छ पहर पसीना चुआना पड़ेगा, रेल पर इधर से उधर कलकत्ते से लाहौर और बम्बई से शिमला दौड़ना पड़ेगा, सिविल सर्विस का, बैरिस्टरी का, इंजीनियरी का इम्तिहान देने को विलायत जाना होगा, बिना यह सब किए काम नहीं चलेगा, क्योंकि देखिए, कृस्तान, मुसलमान, पारसी यही हाकिम हुए जाते हैं, हम लोगों की दशा दिन दिन हीन हुई जाती है। जब पेट भर खाने ही को न मिलेगा तो धर्म्म कहां बाकी रहेगा, इस से जीवनमात्र के सहज धर्म्म उदरपूरण पर अब ध्यान दीजिए। परस्पर का बैर छोड़िए। शैव, शाक्त, सिक्ख जो हो, सब से मिलो। उपासना एक हृदय की रत्न वस्तु है। उस को आर्य्यक्षेत्र में फैलाने की कोई आवश्यकता नहीं। वैष्णव, शैव, ब्राह्म, आर्य्यसमाजी सब अलग-अलग पतली-पतली डोरी हो रहे हैं, इसी से ऐश्वर्य रूपी मस्तहाथी उन से नहीं बंधता। इन सब डोरी को एक में बांध कर मोटा रस्सा बनाओ, तब यह हाथी दिग्दिगन्त भागने से रुकेगा। अर्थात अब वह काल नहीं है कि हमलोग भिन्न-भिन्न अपनी-अपनी खिचड़ी अलग पकाया करें। अब महाघोर काल उपस्थित है। चारों ओर आग लगी

हुई है। दरिद्रता के मारे देश जला जाता है। अंगरेजों से जो नौकरी बच जाती है उन पर मुसलमान आदि विधर्मी भरती होते जाते हैं। आमदनी वाणिज्य की थी ही नहीं, केवल नौकरी की थी सो भी धीरे-धीरे खसकी। तो अब कैसे काम चलेगा। कदाचित ब्राह्मण और गोसाईं लोग कहैं कि हम को तो मुफ्त का मिलता है, हम को क्या? इस पर हम कहते हैं कि विशेष उन्हीं को रोना है। जो करालकाल चला आता है उस को आंख खोल कर देखो। कुछ दिन पीछे आप लोगों के मानने वाले बहुत ही थोड़े रहेंगे, अब सब लोग एकत्र हो। हिन्दूनामधारी वेद से ले कर तन्त्र, वरंच भाषाग्रन्थ मानने वाले तब सब एक होकर अब अपना परमधर्म्म यह रक्खो कि आर्य्यजाति की एका हो। इसी में धर्म्म की रक्षा है। भीतर तुम्हारे चाहे जो भाव और जैसी उपासना हो ऊपर से सब आर्य्यमात्र एक रहो। धर्म्म सम्बन्धी उपाधियों को छोड़ कर प्रकृत धर्म्म की उन्नति करो।

[रचनाकाल—सन 1884 ई.]

श्रीयुगुलसर्व्वस्व

श्रीयुगुलसर्व्वस्व

(श्री नित्यलीला के निकुंज सखा सखी सहचरी सेवक परिवार आदि का नाम रूप वर्ण स्वभावादि वर्णन)

श्री भागवत, उस की टीका, पद्मपुराण, कृष्ण जन्मखंड,वाराहपुराण, आदिपुराण, रहस्यपुराण, ब्रह्मांडपुराण, नारद-पंचरात्र, गौतमीतन्त्र, रासोल्लासतन्त्र, वृन्दावनपटल, लघु-राधा-बृहद्राधातन्त्र, हयग्रीव-पंचरात्र तथा श्रीहरिरायजी, श्रीगोकुलनाथजी की भावना, श्रीद्वारकेशजी, श्रीव्रूजाधीशजी, श्री गोपिकेशजी की रहस्य भावना और उज्ज्वलनीलमणि तथा गणोद्देशदीपिका आदिक ग्रन्थों से संग्रह किया।

समर्पण

हे अन्तरंगी, जन!

आज तक जो पुस्तकैं प्रकाशित हुईं वह दूसरे को समर्पित हुई थीं परन्तु यह श्री युगुलसर्व्वस्व तुम को समर्पित है, माथे चढ़ा कर अंगीकार करो। इस को अनधिकारी के हाथ खबरदार, खबरदार! मत देना और इस से परमानन्द लाभ कर के मेरा परिश्रम सफल करना।

भाद्रपद कृष्ण 9 सं. 1933
श्रीनन्दमहोत्सव

आप लोगों के चरणरज का वांछक
हरिश्चन्द्र

श्रीयुगुलसर्व्वस्व

दोहा

भरित नेह नव नीर नित, बरसत सुरस अथोर।
जयति अपूरब घन कोऊ, लखि नाचत मन मोर॥1॥
तन्नामि निज परम गुरु, श्रीवल्लभ द्विज-भूप।
जाकी कृपा अपार लहि, उबरयौ हौं भवकूप॥2॥
श्री बृंदावन राज है, जुगल केलि रस धाम।
तहं के परिकर आदि को, बरनत या थल नाम॥3॥
बंस, सखी, परिचारिका, पशु पच्छी नर बृंद।
इन सब को बरनन करत, निज अनुभव हरिचंद॥4॥
प्रेमबारि परजन्य जो, जिन सम धन्य न अन्य।
सोइ श्याम परजन्य के, दादा **श्री परजन्य**॥5॥
दादी नाम **बरीयसी**, नाना सुमुख बखान।
नानी **देबी पाटला**, जासी और न आन॥6॥
बड़ी मात **श्री रोहनी**, पिता नंद सरदार।
माता **जसुदाजू** अहैं, जा हित यह अवतार॥7॥
बड़ काका **उपनंदजू**, अरु **अभिनंद** प्रनाम।
नंदन अरु **संनंद** ये, काका छोटे जान॥8॥
तुंगा, **अतुला**, **पीवरी**, **कुबला** पुनि रसधाम।
उलटे क्रम सों जानिये, काकिन के ये नाम॥9॥
मामा **जसबरधन**, **जसोधर जसदेव सुदेव**।
मौसी बिदित **जसस्विनी**, मौसा **मल्ल** सुटेव॥10॥
तड्डुल पुरट कुबेर ये, सगरे ददा समान।
गोष्ठ कलोल करुण्ड ये, मातामह सम जान॥11॥

शीला मेरी अरु **शिखा**, पितामही सी होय।
पूरनमासी भगवती, सिद्ध बिधाइनि सोय॥12॥
जटिला भेला घरघरा, **सुखरा भोरा** जान।
करबालिका करालिका, मातामही समान॥13॥
मंगल पिंगल रंगपिठ, **पट्टस माटर पिंग**।
नेह करत पितु से सबै, **संगर संकर भृंग**॥14॥
तरलाछिनी तरालिका, **शुभदा कुशला** नारि।
मालिकांगदा बत्सला, **ताली** आदि विचारि॥15॥
और हु बृद्धा **मेदुरा**, भरी नेह चित चाय।
हरि पै बत्सलता करत, जैसे जसुमति माय॥16॥
परम नेहवारी अहै, नाम **धनिष्ठा** धाय।
तथा **तिलिम्बा अम्बिका**, ताको जुगल सहाय॥17॥
वेदगर्भ भागुरि महायज्वा, द्विज निरधारि।
सुलभा गौतमि भारगी, **चंडिलादि** द्विज नारि॥18॥
भाई श्री **बलदेव** से, भक्तन के अवलंब।
छनमहं जिन हति लंब क्रिय, खल कुल लंब प्रलंब॥19॥
भाबी श्रीमति **रेवती**, जाको हरि पै चाव।
सख्य तथा बात्सल्य मिलि, जाको अनुपम भाव॥20॥
मंडल दंडी कुंडली, **भद्रकृष्ण** से भ्रात।
बहिन **नंदिरा मंदिरा**, **नंदी नंदा** सात॥21॥
धाय **अंबिका** को सुअन, **विजय** नाम को जौन।
हरि तन रच्छत सर्बदा, असि लै संग रहि तौन॥22॥
दिव्य सक्ति कुलबीर पुनि, **महाभीम रनभीम**।
रणधिर रणथिर सरप्रभ, सूर सभा बलसीम॥23॥
इन आदिक हरि जेठ जे, गोप बाल–सरदार।
पितु आयसु नित संग एहि, रच्छ सदा कुमार॥24॥
बीरभद्र भद्रांग भट, **गोभट यक्ष सुरेस**।
भद्रमंडली भद्रबर धन, से सुहद हमेस॥25॥

गद्य

विशाल, वृषभ, ओजस्वी, देवप्रस्थ, बरूथप, मिलिंद, कुसुमापीड़, मणिबंध, करंधम, भरंद, चंदन, कुंद, कलिंद और कुलिक इत्यादि कनिष्ठ सखा हैं, ये सेवा करैं हैं॥26॥

दामा, सुदामा, किंकिणी, तोककृष्ण, अंश, भद्रसेन, बिलासी, पुंडरीक, विटंकाक्ष, कलंबिका, प्रियंकर और श्री दाम आदि समान सखा है; तिन में श्रीदामा मुख्य है, पीठमर्द है बड़ो धृष्ट है॥27॥

सब सखा की सेना को भद्रसेन सेनापति है, अरु तोककृष्ण तो श्रीकृष्ण की दूसरी प्रतिमूर्ति है, और यह श्री कृष्ण को बहुत ही प्यारो है॥28॥

सुबल, अर्जुन, गंधर्व, बसन्त, उज्वल, कोकिल, सनन्दन और विदग्द आदि प्रिय नर्मसखा है; इन सों कोई रहस्य छिप्यौ नहीं है॥29॥

मधुमंगल, पुष्पांक और हंस आदि विदूषक हैं और कडार, भारती, गंधबंध और वेध आदि श्रीकृष्ण के विट हैं॥30॥

भृंगुर, भृंगार,संधिक और ग्रहल आदि चेटक हैं,तथा रक्तक, पत्रक, पत्री, मधुकंठ मधुव्रत, सालिक, तांडिक, माली, मालू और मालाधर आदि दास हैं॥31॥

पल्लव, मंगल और फुल्ल कोमल और कपिल आदि छोटे बालक नाचि नाचि कै विचित्र चेष्टा करि कै प्रभु को हंसावे हैं॥32॥

सुबिलास, विशालाक्ष, रसांक, रसशाली और जंबुक इत्यादि पान खवाइबेवारे हैं॥33॥

पयोद और बारिद नाम के पानी पियावे को काम करैं, तथा सारंग बकुल आदि वस्त्रधरावैं हैं॥34॥

प्रेमकंद नाम को अतर लगावै और मधुकंदला सैरंध्री केसादिक संवारै हैं॥35॥

मकरंदादिक सदा शृंगार करैं हैं, तथा सुमना, कुसुमोल्लास, पुष्पहासहर इत्यादि चंदन और मालादिक को काम करैं हैं॥36॥

दक्ष, सुबंध, कर्पूर और सुगंधकुसुम आदि नाई हैं; केश को काम करैं, तेल लगावैं, पांव दाबैं और दर्पण दिखावैं हैं॥37॥

स्वच्छ, शीतल और प्रगुण आदि धन संबंधी काम करैं हैं, अरु कमल, विमल आदि पीढ़ा, खड़ाऊं, छाता लिये साथ चलैं हैं॥38॥

धनिष्ठा, चंदनकला, गुणमाला, तडित्प्रभा,भरणी, इंद्रप्रभा, शोभा और रंभा इत्यादि दासी हैं, और विनमें धनिष्ठा मुख्य धाय मातृतुल्या है॥39॥

कुरंगी, भृंगारी, सुलंबा और लंबिका इत्यादि दासी दधिमंथन, मार्जन तथा और घर के काम करैं हैं॥40॥

विशारद, तुंग, नीतिसार, मनोरम और बावदूक इत्यादि दूत निकुंज विहार के उपयोगी हैं॥41॥

दोहा

वृंदा, मेला, मुरलिका, वृंदारिका सुजान।
दूती सबै निकुंज की, वृंदा तासु प्रधान॥42॥

दूजी **बीरा** नाम की, दूती परम प्रसिद्ध।
जासो नहिं कोऊ बची, करत सबै जो सिद्ध॥43॥
सोभन दीपक नाम के, द्वै मसालची खास।
मधुरराव सुविचित्ररव, ये जुग बंदी पास॥44॥
चंद्रहास, सिव, चंद्रमुख, नचवैया ये तीन।
सुखद, सुधाकर बहुरि, सारंग मृदंग प्रबीन॥45॥
सुधाकंठ, कलकंठ इन, आदि गान रस लीन।
सबै कलारत अति सुधर, गाय बजावैं बीन॥46॥
सारंग, रसद, विलास ये, नाटक नट अभिराम।
सब अभिनय जानहिं निपुन, करहिं सदा नट काम॥47॥
दरजी रौचिक नाम को, गणअंगण ससुनार।
चित्र विचित्र चितेर दोउ, **कर्मठ पवन** कुहांर॥48॥
वर्द्धमान अरु **बर्द्धको**, द्वै बढ़ई सुखरास।
पोटी, मन्थन, दाम, अरु कंठार आदि फर्रास॥49॥
कुमुल, कुंड, कंडोल अरु, **कारंड करंड** अनेक।
सेवक सेना में रहत, धरे दासपन टेक॥50॥
हंसी, बंसी, पिंगला, गंगा, रंगा नाम।
प्रिया, पिशंगी, धूमला, मणि, सारनी ललाम॥51॥
इन आदिक जे नैचिकी, तिन सों हरि को हेत।
तिन में धबली मुख्य अति, निज कर जेहि तृन देत॥52॥
वलीवई हैं अति भले, **उत्पलगंध, पिशंग**।
कपि सुंदर दधिलोल हैं, नाम **सुरंग कुरंग**॥53॥
स्वान **व्याघ्र भ्रमरक** दोऊ, विदित **कलस्वन** हंस।
शिखी तांडविक शुक जुगल, बोलत परम ग्रशंस॥54॥
नित्य बाग वृंदाविपिन, जहां जुगल रस केलि।
करहिं नित्य, को लखि सकै, बाहु बाहु पर मेलि॥55॥
क्रीडा गिरि गिरिराज है, नीलमंडपक घाट।
गुफा बनी मणिकन्दली, केलिकुंज रस ठाट॥56॥

गद्य

केलिसरोवर को नाम मानसी गंगा है और वाके मुख्य घाट को नाम पारंग है और वामैं सुबिलास नाम की नाव है॥57॥

नंदीश्वर नामा पर्वत पै इंदिरालय नामा सुंदर मंदिर है, जहां अनेक प्रकार की संगमरमर पत्थर की आमोदवर्द्धन नाम्नी सुगंध सों भरी बैठक है। जाके आगे पावन नामक सुंदर कुंड हैं, जापै मंदार नामक मणि को फरस है और कुंज और अकामनामक महातीर्थ है; जिन के चित्त में काम की वासना को लेश है वे या तीर्थ को दर्शन नहीं पावै हैं। और वहां की पृथ्वी को नाम अनंगरंग है और श्रीजमुना जी के घाट को नाम खेलातीर्थ है और पुलिन को नाम लीलापुलिन है जहां कदंबराज नामक बड़ो कदंब को वृक्ष और भांडीरवट नामक बड़ को वृक्ष है, जहां नित्य जुगल स्वरूप को बिहार है॥58॥

आप के दर्पन को नाम शरदिन्दु है और पंखा को नाम मधुमारुत है और स्मेर नाम को नित्य लीलाकमल श्री हस्त में धारन करै हैं और गेंदा को नाम चित्रकोरक है॥59॥

उज्ज्वल नाम आप को बाण है, बिलासकार्मुक नाम धनुष और मणिबद्ध नाम वाकी डोरी है और अनेक रत्न सों जड़ी बड़े सुंदर मूठ की तुष्टिदा नाम की छुरी है॥60॥

शृंग को नाम मंजुघोष और श्रीराधाचित्तहारिणी, महानंदा तथा भुवनमोहिनी ये तीन बंसी हैं, और मुरली को नाम सरला है, और मदनहुंकृत, बंधुर और षड्रध्र ये तीन बेणु हैं, और काकली को नाम मूकितपिका है, जाको श्रवन करि कै कोइल मूक होइ जाय हैं, और गौरी और गूजरी टोडी ये दोऊ राग अत्यंत प्यारे हैं। और बीणा को नाम नादवरांगिणी हैं॥61॥

वेत्र कोनाम मंडल है और लट्ठ को नाम पशुवशीकर है और दोहिनी को नाम अमृतदोहिनी है॥62॥

श्री मातृचरण ने नवरत्न की भुजा पै रक्षा बांधी है और रंगद नाम के बाजू और चंकन नाम के कंकण और रत्नमुखीनाम की अंगूठी है और निगमशोभन नाम को पीतांबर है, और कलझंकार नाम की किंकिनी है और नूपुरन को नाम हंसगंजन है, जाके शब्द सुनत ही श्री ब्रजदेविन के चित्त चलायमान होत हैं॥63॥

हार को नाम तारमणि है और माला को नाम तडित्प्रभा है और कंठा को नाम कौस्तुभ है, जाके नीचे भुजंगमणि को पदक है। रति और राग के अधिदेवता मकराकृत कुंडल हैं और रत्नपार नाम को मुकुट है और अमरडाभर नाम को सीसफूल है और मोर के चंद्रक को नवरत्नविडंबक नाम है और गुंजा को माला को नाम रागवल्ली और तिलक को नाम दृष्टिमोहन है और पल्लव, पत्र पुष्प और मोर के पच्छ तथा कमल इत्यादि सों गुथी श्री चरणारबिंद तक बनमाला शोभित है और जो पंचरंगे फूलन सों गुथी कटि के नीचे तक सुंदर माला है वाको नाम बैजयंती है॥64॥

श्री युगलसर्वस्व को प्रथम प्रकरण समाप्त भयो।

अथ युगलसर्वस्व को दूसरी प्रकरण लिखियत है

सोरठा—मंगल माधव नाम, मंगल व्रज वृंदा बिपिन।
मंगल राधा बाम, मंगल सब व्रज गोपिका॥

अथ श्रीपूर्ण पुरुषोत्तम को मंगल सराय कहत हैं। श्री शुभ सम्वति ईश्वरे नाम्नि द्वापरार्द्धे 863874 शेष 125 श्रीसूर्ये दक्षिणायने वर्षाऋतौ भाद्रपदे मासि कृष्णे पक्षे अष्टम्यां घटी 56 पल 45 बुधवासरे कृत्तिका नक्षत्रे घटी 28 पल. हर्षणयोगे घटी 41 पल 37 कौलव करणे इष्टं 46 घटी 14 पल एत्समये चन्द्रवंशांतःपाति वैश्यवंशावतंस गुरुगोब्राह्मणसेवापरायण श्री मत्पर्जन्यात्मजश्रीमन्नन्दराजगृहे श्रीयशोदाकुक्षौ पुत्ररत्नमजीजनत्।

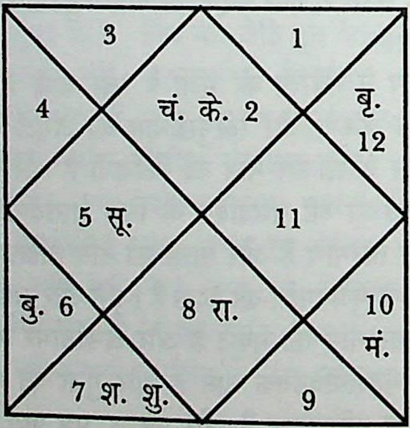

1955877875 सृष्टिमारंभतो गताब्दाः।
1972943875 वाराहकल्पप्रवेशप्रारंभगताब्दाः॥

वंशवृक्ष

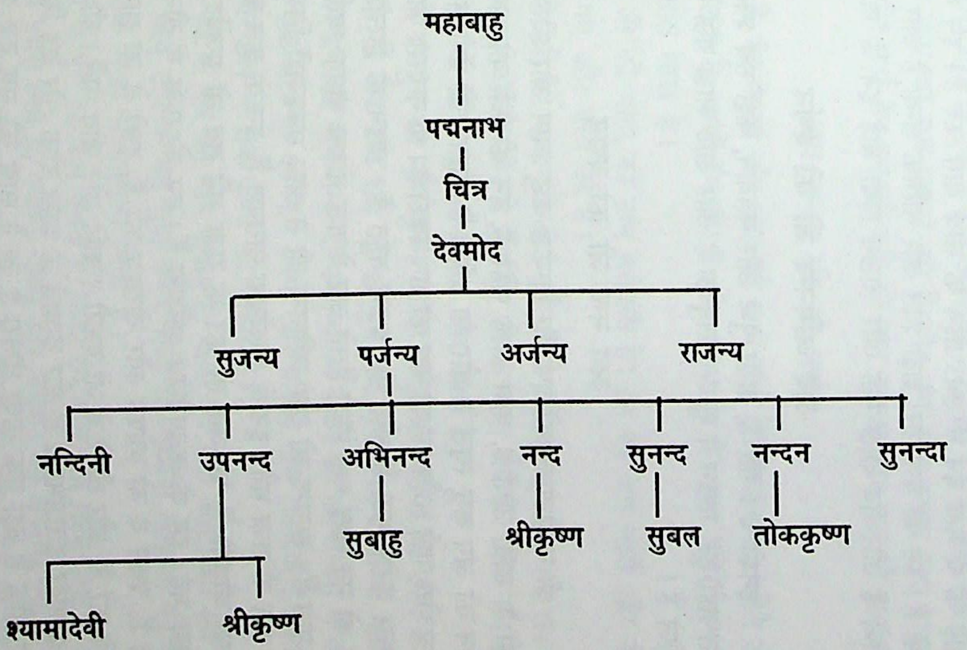
महाबाहु
पद्मनाभ
चित्र
देवमोद
सुजन्य
पर्जन्य
अर्जन्य
राजन्य
नन्दिनी
उपनन्द
अभिनन्द
नन्द
सुनन्द
नन्दन
सुनन्दा
सुबाहु
श्रीकृष्ण
सुबल
तोककृष्ण
श्यामादेवी
श्रीकृष्ण

अथ उपनन्द जी को वर्णन

उपनन्द जी श्री नन्दराय जी के सब भाइन में बड़े हैं। गांव में इन को बड़ो मान हैं। गांव में जो कुछ काहू को धर्म वा साइत वा औषधी पूछनी होय तो इन सों आय के पूछें। इन्हें भगवद्वात्सल्य सिद्ध है और ब्रज के सब गांव की देव पितर की रीति जो कोई करै सो इन सों पूछि कै करैं। केशी दैत्य के भय सों वृन्दाबन छोड़ि कै ये महा बन में सब भाइन के साथ बास करै हैं। इन की स्त्री को नाम तुंगी है। इन को वर्ण गौर, दाढ़ी श्वेत और नाभिक लम्बी है और हरे रंग को वस्त्र पहिने हैं और नव लाख गऊ और लाखन हाथी घोड़े इन के पास हैं।

अथ अभिनन्द जी को वर्णन

इनको वर्ण गौर है, शरीर पुष्ट और बलवान, केश सब श्वेत हो गए हैं, पर दांत नहीं टूटे, गालन पै सुन्दर गलमुच्छा है और आठ लाख गऊ हैं औ लाल वस्त्र पहिने हैं।

अथ नन्द जी को वर्णन

श्री नन्दराय जी को वर्ण गौर है; केश कछु श्याम और श्वेत मिलुवां हैं। तोंद बड़ी है, छाती ऊंची है, वस्त्र नीलो पहिरे हैं, इन की स्त्री को नाम श्री यशोदा है, जिन को अंग कछु स्थूल है और रंग सांवरो है। फूलन सों बेनी सदा गूंथी रहै और वस्त्र पीरो पहनै। और इन को नैहर को नाम देवकी है। श्री नन्दराय जी के 720000000 बहत्तर करोड़ गऊ हैं और भैंस बकरी बहुत हैं। भाइन के हिस्सा में श्री नन्दराय जी को नव लाख गऊ मिली हैं सो अब वे गऊ मोहना नामक ग्वारिआन के सरदार के पास हैं। उपनन्द जी और अभिनन्द जी ने आप राज्य नहीं लियो तासों नन्दराय जी ब्रज के राजा भये। इन के कुलदेवता नारायण हैं, इन के कुल को वेद साम और शाखा कौथुमी हैं; पर जब सों ब्रज के राजा भये तब सों यजुर्वेद और माध्यंदिनी शाखा भई। इन के कुलपुरोहित शांडिल्य हैं। इन के राज्य में तीन प्रकार के गोप बसे हैं, प्रथम वे जो व्यापार और गोरक्षण करैं हैं, दूसरे वे जो गाय भैंस रखैं और खेती करैं हैं, और तीसरे वे जो बकरी इत्यादि छोटे जीव पालैं। श्री नन्द रायजी को मुख्य मंदिर उत्तराभिमुख हैं और दरवाजे के बाहर दोऊ ओर बड़े सिंह बने हैं, भीतर बड़ो चौक है वहां एक ऊंचो चौतरा है जा पै सांझ को सब ब्रज के लोग आय कै बैठें हैं, ताके पीछे जो दरवज्जा है वाके दोऊ ओर बड़े बड़े हाथी बने हैं और वाहू के भीतर दरवज्जा जो है वाके दोऊ ओर चन्द्रमा और सूर्य बने हैं। वाके भीतरी अनेक चौक हैं, जिन में सर्वतोभद्र, कमलचौक और मणिचौक ये तीन मुख्य चौक हैं, ताके आगे श्री ब्रजरानी को मन्दिर है और भीतर बाहर ताईं अनेक दर दालान और मन्दिर हैं और इनके बीच में कहूं कहूं बड़े बड़े वृक्ष लगे हैं और कहूं तुलसी

को थावरो हैं। इन की या पार की राजधानी को नाम गोकुल और वा पार की राजधानी को नाम नन्दीश्वर है। गोकुल के देवता चिन्तामणि माधव और मथुरानाथ जी हैं और नन्दगांव के ग्रामदेवता नन्दीश्वर शिव हैं, और शैलासन और पांडु नाम की दो अथाई हैं।

अथ सुनन्द जी को वर्णन

सुनन्द जी को शरीर बड़ो ही पुष्ट है और अवस्थाहू वृद्ध नहीं भई है, केश सब श्याम हैं और व्रज की सेना को सब प्रबन्ध करै हैं और सृंग और तरवार सदा हाथ में लिये रहैं, वस्त्र पीरे पहरै हैं। इन की स्त्री को नाम कुबला और गऊ नौ लाख है।

अथ नन्दन जी को वर्णन

ये सब सों छोटे हैं, रंग गेहुआं और केश बड़े लम्बे लम्बे हैं। वस्त्र सफेद पहिनै और स्त्री को नाम अलता है, जाको रंग गौर है और श्याम रंग को वस्त्र पहिरैं। इन की निज की गऊ सात लाख है।

श्री नन्द जी की माता को नाम बरीयसी है। इन को अंग नाटो और केश सब श्वेत होय गए और वस्त्र हरे हैं।

अर्जन्य की स्त्री को नाम नटी और राजन्य की स्त्री को सूरा है। नन्द राय जी के फूफा को नाम गुरुवीर है और ये वृषभानु जी के मामा लगैं हैं। और नन्द राय जी के दोऊ बहिन के पतिन को नाम लीन और काम है।

उपनन्द जी के पुत्र को नाम कृष्ण (कोऊ कोऊ को मत है कि उपनन्द जी को पुत्र नहीं भयो सो जब नन्द राय जी को पुत्र भयो तब उपनन्द जी के गोद में दै दियो, तासों भगवान को नाम नन्द जी उपनन्द जी दोउन को वंशपरम्परा में आवै है) और इन की एक बेटी या को नाम कामा और प्रसिद्ध नाम शामदेवी है। जाको रंग सांवरो है और रूप में सब कृष्ण को उन्हार है।

अभिनन्द जी के पुत्र को नाम सुबाहु है; याको रंग गोरो और वस्त्र हरो है। यह श्रीकृष्ण के साथ रक्षा के हेतु सदा लकुट लिये रहै, क्यौंकि श्रीकृष्ण को बड़ो भाई हैं तासों याके सख्य में वात्सल्य मिली है।

सुनन्द जी के पुत्र को नाम सुबल है, याको रंग लाल और वस्त्र कारो है और श्रीकृष्ण को बड़ो प्यारो मित्र हैं, क्यौंकि याकी और भगवान की अवस्था एक ही है।

नन्दन जू के पुत्र को नाम तोक कृष्ण है। कोऊ को मत है कि या को रंग श्याम और वस्त्र पीत है। याके पुकारबे को नाम तोक है और या को, चलन बोलन सब श्रीकृष्ण की सी है और यह श्रीकृष्ण को अत्यन्त प्यारो है क्यौंकि आप को नेम है कि जो थोड़ी हू वस्तु अरोगें तो अपने हाथ सों पहिलो कवर या के मुख में देत हैं।

अब जन्म समय को भाव लिखत है। तहां श्री पूर्ण पुरुषोत्तम ने विश्वावसु नाम

संवत में जनम लियो है ताको भाव यह है—जो विश्वाबसु गन्धर्वन का राजा है ताके संवत में आप ने जनम लियो तासों यह जतायो कि हम गानविद्या की प्रवृत्ति करैंगे। और दक्षिणायन में जन्म लियो ताको भाव यह है कि आप अनेक नायकागण को दक्षिण होयेंगे और भक्तजन सों हू दक्षिण रहैंगे, और यज्ञअवतार में स्त्री को नाम हू दक्षिणा है तासूं दक्षिणाअयन में जन्म लियो। और वर्षा ऋतु में जन्म लियो ताको भाव यह है कि वर्षा ऋतु सब जगत को जीवन है और सब ऋतुन की अपेक्षा आनन्ददायक है याही सों सब अन्न आदि उत्पन्न होय है तासों यह जनायो कि हम जगत के हेतु हैं और सब को आनन्द दैंगे। अरु सब महीना छोड़ि कै भाद्रपद में जन्म लियो ताको यह हेतु है कि भद्र अर्थात कल्याण वही भाद्र वाको पद नाम घर अर्थात कल्याण को घर तासों आप ने सब मास छोड़ि कैं भाद्रपद ही में जन्म लियो। अब वर्षा ऋतु के 20 दिन को एक ऐसे तीन पाद हैं तामै मध्य पाद में जन्म लियो। ताको भाव यह कि प्रथम पाद में उष्णता विशेष है और तृतीय में शीतता तासों मध्य के पाद में जन्म लियो, और ब्रह्मा विष्णु महेश्वर तीन देवता हैं तामे मध्य में विष्णु हैं ताको हेत यह जो प्रधान मध्य में रहे हैं तासों मध्य पाद में जन्म लियो सो जाननो। अब कृष्ण पक्ष में जन्म लियो ताको कारण यह है कि आप को अपने नाम को पक्ष है तासों यह जनायो कि हम अपनो पक्ष थापैंगे और अष्टमी तिथि को कारण यह है कि अष्टमी शिवतिथि है, कल्याण रूप है, यद्वा श्रीमहादेव जी परम वैष्णव हैं तिन की तिथि है, यद्वा पन्द्रहों तिथि के मध्य में अष्टमी हैं, सो प्रधान मध्य में रहै हैं तासों, यद्वा अष्टमी जयतिथि है सो हम असुरन को जय करैंगे यह जनायो। वा यह श्री बसुदेव जी की जन्मतिथि हैं। और रात को जन्म लियो ताको हेत यह है कि हम चन्द्रवंशी हैं सो चन्द्रमा रात्रि को राजा है तासों हम को दिन सों प्रयोजन नहीं। और अर्द्धरात्र को जन्म लियो ताको हेत यह है कि वा समय में कोई कार्य नहीं कियो जाय, स्वस्थ बेला है, तासो जा समय मेरे भक्त स्वस्थ रहै, वा समय जन्म लियो चाहिए। और चन्द्रमा के उदय होत जन्म लियो ताको हेत यह है कि जैसे चन्द्रमा जगत को आह्लाद करै हैं तैसी आह्लाद हम करैंगे यह जनायो, यद्वा हम चन्द्रवंशी हैं सो अपने वंशस्थ के उदय संग अपनो उदय कियो। और भगवान के जन्म समय आकाश में मेघ छाये याको हेत यह है जैसो मेघ सब को आनन्द देत हैं तैसो हम आनन्द देंगे, यद्वा मेघ प्रसन्न भये कि हमारा नाम घनश्याम श्री ठाकुर जी को होयगो, हमारी उपमा ब्रह्म को दी जायगी तासों प्रसन्न भए यद्वा जल को नाम जीवन है सो जीवन जगत को हम करैंगे यह जनायो। और रोहिणी नक्षत्र पर जन्म लियो ताको भाव यह है कि जैसे चन्द्रमा को अनेक नक्षत्र है तैसेही यद्यपि आप को अनेक सखी सेवन करैं तथापि मुख्य श्री प्रियाजी ही हैं। और रोहिणी में जन्म ग्रहण कर के आप ने श्री बलदेव जी से सहोदरता सूचन कराई। बुधवार में आप ने जन्म लियो ताको हेत यह है कि सब ग्रहन में बुध अत्यन्त सुन्दर है। तासो आप अलौकिक सौन्दर्य प्रगट करैंगे और बुध आप के वंश को पूज्य है। तासों वंश को पक्षपात जनायें। वा "विष्णु चन्द्रसुते" यासों बुध के दिन आप अवतीर्ण भए। काहू पुराण को मत सोमवार के हूं जन्म दिन

मानवे को है सो बाहू में पूर्वोक्त भाव जानने। इत्यादि अनेक भाव हैं कहां ताई लिखिये।

अथ चरण चिह्न वर्णन

छप्पै

स्वस्तिक स्यंदन संख सक्ति सिंहासन सुंदर।
अंकुस ऊरधरेख अब्ज अठकोन अमलतर॥
बाजी बारन बेनु बारिचर वज्र बिमलबर।
कुंत कुमुद कलधौंत कुंभ कोदंड कलाधर॥
असि गदाछत्र नवकोन जब तिल त्रिकोन तरु तारग्रह।
हरिचरन चिह्न बत्तिस[1] लखे अग्निकुंड अहि सैल सह॥1॥
छत्र चक्र ध्वज लता पुष्प कंकन अंबुज पुनि।
अंकुस ऊरधरेख अर्धससिजव बाएं गुनि॥
पास गदा रथ जग्यबेदि अरु कुंडल जानो।
बहुरि मत्स्य गिरिराज संख दहिने पुनि मानो॥
श्रीकृष्ण प्रानप्रिय राधिका चरन-चिह्न उन्नीस बर।
'हरिचंद' सीस राजत सदा कलिमलहर कल्यानकर॥2॥

अन्य मत सों

केतु छत्र स्यंदन कमल ऊरध रेखा चक्र।
अर्ध चंद्र कुस बिंदु गिरि संख सक्ति अति वक्र॥
लोनी लता लवंग की गदा बिंदु द्वै जान।
सिंहासन पाठीन पुनि सोहत चरन बिमान॥
अष्टादस श्री चिन्ह श्री राधापद मैं जान।
जा कहं गावत रैन दिन अष्टादसो पुरान॥
जग्य सुवा को चिन्ह है काहू के पद सोइ।
पुनि लक्ष्मी को चिन्ह हू मानत हरि पद कोइ॥
श्री राधापद मोर को चिन्ह कहत कोउ संत।
द्वै फल की बरछी कोऊ मानत कुस के अंत॥

---

[1] श्री चरण चिह्न के विशेष भाव भक्ति सर्वस्व नामक ग्रन्थ में लिखे हैं वहां देखो।

अथ हस्त चिन्ह वर्णन

जब खुर तोरन कमल लता बंसी त्रिकोन ध्वज।
वृक्ष शंख घट अग्निकुण्ड अंकुश गृह रथ गज॥
सफरी ऊरधरेख कलस फल सब मन भाये।
छत्र गदा धनु सर सुचक्र अरु बिजन सुहाये॥
बर पानपात्र गो सींप तिल स्वस्तिक श्रीश्री कृष्णकर।
'हरिचंद्र' चिन्ह बत्तीस ये सोहत नित जन-सीस पर॥2॥

इति श्रीयुगुलसर्व्वस्व के पूर्वार्द्ध को दूसरो प्रकरण

अथ अष्ट सखिन के नाम

अपने मत सों—श्रीचन्द्रावली जी, श्रीललिताजी, श्रीविशाखा जी, श्रीचम्पकलता जी, श्रीचन्द्रभागा जी, श्रीराधासहचरी, श्रीश्यामा जी और श्रीभामा जी। इन में श्रीचन्द्रावली जी को स्वामिनीत्व है और सबन को सखित्व है याही सों पंचाध्याई में अन्तर्ध्यान और आविर्भाव और महारास तीनहू समै में काचित् काचित् करिकै सात ही गिनाई हैं। और सप्तावरणात्मक, श्रीस्वामिनीजी तथा श्रीठाकुरजी को स्वरूपहू हैं। यथा चतुर्व्यूहात्मक कालात्मक, संयोगात्मक और वियोगात्मक श्रीठाकुरजी को स्वरूप है। वियोगात्मक स्वरूप व्रज में प्रगटे हैं और व्रज ही में विराजत हैं, मथुरा द्वारका नाहीं जात। तथा श्रीस्वामिनीजी शक्तित्रयात्मक-स्वामिन्यात्मक, संयोगात्मक, वियोगात्मक हैं, तिन मैं वियोगात्मक स्वरूप द्वै वर्ष पहले सेवाकुंज में प्रादुर्भाव भए हैं और संयोगात्मक स्वरूप पूर्णपुरुषोत्तम के साथ श्री यसोदा जी के यहां प्रगटे हैं और पंचावरणात्मक स्वरूप पन्द्रह दिन पाछे श्री वृषभानजू के घर प्रगट होत है। याही सो एक एक आवरण की सेवा के हेत एक एक सखी को प्रादुर्भाव है। और श्रीचन्द्रावली जी युगल स्वरूप के प्रेम की मूर्त्ति हैं, रासलीला में विशेष रसपोषकता अर्थात परकीया विभाग सुख प्राप्ति के कारण है और स्वामिनीजू के मान के कारण इन को प्रागट्य है याहीं सों एकादशसखा की भांति सात सखी मुख्य हैं और याहीं सों वेणु में सप्तरन्ध्र तथा गुसांई जी के घरहू सात बालकन को प्रादुर्भाव है। कोक महात्मा को मत है कि श्री स्वामिनीजी और श्रीचन्द्रावली जी को स्वामित्यात्मक स्वरूप के अतिरिक्त एक एक संख्यात्मक स्वरूपहू हैं यथा श्री स्वामिनीजी को राधा सहचरी वा रंगदेवात्मक और श्रीचन्द्रावली जी को इन्दुमुख्यात्मक।

अथ अन्य मत सों अष्ट सखिन के नाम

ललिता, विशाखा, तुंगविद्या, रंगदेवी, इन्दुरेखा, चन्द्रभागा और चम्पकलता। एक के मत सों ललिता, विशाखा, चन्द्रभागा, सन्ध्यावली, तुंगभद्रा, श्यामा, भामा और तुलसा। एक के मत सों श्रीचन्द्रावली, ललिता, विशाखा, पद्मा, भद्रा, धन्या,

रंगदेवी और श्यामा हैं।

एक के मत सों ललिता, विशाखा, चन्द्रभागा, श्यामा, भामा, कुसुमा, तुलसी और माधवी।

एक मत में ललिता, विशाखा, चन्द्रभागा, चम्पकलता, चित्रा, स्वर्णलेखा, इन्दुमती और सन्ध्यावली।

इति श्रीयुगुलसर्व्वस्व उत्तरार्द्ध को प्रथम अध्याय सम्पूर्ण।

अथ स्फुट वर्णन

श्रीगोपीजन के यूथ अनगिनित हैं, इन की कोऊ संख्या नाहीं करि सकत।

इनकी यूथनि में एकपुराण के मत सों ये मुख्य यूथाधिकारिणी है और इन के यूथ में इतनी सखी हैं। यथा चन्द्रावली 16000, सुशीला 16000, शशिकला 14000, चन्द्रमुखी 13000, माधवी 11000, कदम्बमाला 13000, कुन्ती 10000, जमुना 14000, जान्हवी 9000, सावित्री 15000, सुधामुखी 14000, शुभा 14000, पद्मा 14000, गौरी 14000, सर्व्वमंगला 16000, सरस्वती 13000, भारती 10000, अपर्णा 14000, रति 10000, गंगा 14000, अम्बिका 16000, सती 13000, नन्दिनी 10000, सुन्दरी 13000, कृष्णप्रिया 16000, मधुमती 14000, चम्पा 13000 और चन्दना 14000।

काहू मत सों श्रीनन्दराय जी की परम्परा यह है।

आभीरभानु के चन्द्रसुरभि, तिन के मीलुक, मीलुक कों महावाह, तिन के कंजनाभ, तिन के बीरभानु, तिन के धर्म्मधीर, तिन के धर्म्मश्रवा, तिन के काननेन्दु, तिन के जयबल, तिन के जयकीर्ति, तिन के यशोधन, तिन के कंठभानु, तिन के महाबुद्धि, तिन के मानमेरु, तिन के मनोरथ, तिन के वरांगद, तिन के चित्रसेन, तिन के सुनन्द, तिन के उपनन्द, तिन के महानन्द, तिन के नन्दन, तिन के कुलनन्द, तिन के बन्धुनन्द, तिन के केलिनन्द, तिन के प्राणनन्द, तिन के नन्द हैं।

एक मत सों चित्रा जी को वर्णन। श्रीकुंड के पूर्व आनन्द सुखद नाम इन को निकुंज हैं, इन की वय तेरह वर्ष आठ महीना की, वर्ण गौर, वस्त्र जाती पुष्प तुल्य और सेवा चित्र की है।

श्यामली जी दोऊ स्वरूप की सम्बन्धिनी है, श्रीठाकुर जी के काका की बेटी हैं, सांवलो रंग है। श्रीठाकुर जी की उनहार बहुत मिलत है। कोऊ को मत है कि श्री ठाकुर जी के काके की बेटी को नाम श्यामदेवी हैं, श्यामली जी श्री ठाकुररानी जी के काका की बेटी हैं परन्तु श्री ठाकुर जी की पक्षपातिनी हैं।

अथ अष्ट सखिन के राग तथा वाजन को वर्ण

तहां श्री स्वामिनी जी संयोग में बिपंची जाति की बीन और वियोग में वंशी बजावत हैं। राग केदार और कान्हरो रात में तथा दिन में सारंग और मालकोस, वर्षा

में मेघा और मल्लार।

श्री चन्द्रावलीजी।	बाजा अमृत कुंडली राग सोरठ और जलतरंग।
श्री ललिताजी।	बाजा बीन राग भैरव कलिंगड़ा।
श्री विशाखाजी।	बाजा मृदंग राग सारंग।
श्री चन्द्रभागाजी।	बाजा स्वरोदय राग केदार।
श्री चम्पकलताजी।	बाजा रबाब राग कान्हरा।
श्री भामाजी।	बाजा चंग राग कल्यान।
श्री सन्ध्यावलीजी।	बाजा सारंगी राग सोरठ।
श्री इन्दुलेखाजी।	बाजा ताल राग बिहाग।
श्री चित्राजी।	बाजा सितार राग संकरा।

अन्य मत सों बाजन के वर्णन

श्री ललिताजी मृदंग। श्री जमुनाजी सहनाई। श्री विशाखाजी सुरमंडल। श्री श्यामलाजी दुधारा। श्री चम्पकलताजी सारंगी। श्री भामाजी करताल। श्री कामाजी तुरही अरु सहचरी किन्नरी।

अथ अन्य मत सों प्रियाजी के हस्त को चिह्न

जव, माला, कमल, बाटिका, भ्रमर, व्यंजन, छत्र, अर्द्धचन्द्र, कर्णफूल, मड़वा अरु जलपात्र।

अथ वामहस्त के चिह्न

लक्ष्मी, सीप, वृक्ष, वेदी, आसन, कुसुमलता अरु चामर।

अथ श्री ठाकुर जी के दक्षिण हस्त के चिह्न।

हाथी, अंकुश, घोड़ा, वृक्ष, बाण, गऊ, पंखा, मंडवा, बंशी, चक्र, माला और कमल।

अथ श्रीठाकुर जी के वाम हस्त के चिह्न

मंड़वा, कमल, तरवार, थापा, धनु, परिघ, बिल्ववृक्ष, मीन, बाण अरु नन्दावर्त।

अथ श्री ठाकुर जी के उत्सव। भादों सुदी 2 को दसूठन, भादों सुदी 5 को श्री चन्द्रावलीजू को जन्म, क्वारबदी 8 को महीना को चौक, पौष सुदी 8 को अन्नप्राशन, माघ बदी 6 को नामकरण, वैशाख सुदी 9 को ब्याह और असाढ़ सुदी 3 को गौना। पूस सुदी 8 को श्री नन्दजू को जन्म, माघ सुदी 6 को जशोदाजू को जन्म और सावन बदी 5 अठवासा तथा अगहन सुदी 2 को श्री ठाकुर जी कूख में पधारे हैं। कार्तिक

सुदी 15 को यज्ञपत्नी को अंगीकार।

आधिदैविक उद्धभव आधिदैविकी सुभद्रा, आधिदैविक अर्जुन, आधिदैविकी रुक्मिणी और आधिदैविकी सत्यभामा को व्रज की लीला में अंगीकार हैं तैसे ही आधिदैविक बलदेवजी और रेवतीजी सदा ब्रज में बिराजत हैं और मर्यादा श्रुतिरूपा गोपी इन को यूथ है।

ठाकुरजी के बुआ को नाम मैना है और धरानन्द अर्थात सुनन्दजी की बेटी सुभद्रा श्री ठाकुरजी की प्यारी बहन है। श्री वृषभानुजी बिवेक और श्रीकीर्ति जी भक्ति को स्वरूप हैं तथा देवतान की आदिजननी महामाया देवकी जी को स्वरूप हैं और धर्म को स्वरूप बसुदेवजी को है। इन दोउन को व्रज मैं कबहूं कबहूं बाललीला के दर्शन होत हैं।

गोलोक में श्री गोवर्द्धन को विस्तार बारह हजार कोस है और भगवान के आनद सों उनकी उत्पत्ति है। श्री स्वामिनीजी के सात्विक भाव सों रास की उत्पत्ति है। तिरानबे कोटि रासलीला और उतने ही कुंज हैं, विन हूं में चौरासी मुख्य हैं। निज निकुंज में श्री ठाकुरजी कबहूं गौर विराजत हैं कबहूं श्याम। सात्विक कुंज फूलन के हैं, राजस मणि कांच इत्यादि के और तामस धातु पाषाणादि के हैं। निर्गुण कुंज इच्छामय षट ऋतु सम्पन्न है। कुंज मंडल में पहलो निकुंज श्री यमुनाजी को, दूसरो अग्निकुमारिका को, तीसरो श्रुतिरूपा की मुखिया श्री चन्द्रावलीजी को और चौथो निज निकुंज है। ऐसे ही अन्तरंग कुंज में इन स्वरूपन के आधिदैविक स्वरूप क्रम सों श्री यमुनाजी, श्री राधा सहचरी, श्री चन्द्रावलीजी और जुगल स्वरूप बिराजत हैं और वे स्वरूप अलौकिक मनुष्य के ज्ञान के बाहर के हैं। जिन स्वामिनी और सखिन को जगत भजन करत है वे गुणमई हैं।

श्री चन्द्रावलीजी को गांव बृज में रिठौरा है। नवधा भक्ति वात्सल्य में तो श्री नवनन्द के स्वरूप में और श्रृंगार में सखी स्वरूप में रहत हैं। बृज में अनेक अवतारन के बरदान सों श्रुतिरूपा, ऋषिरूपा, यज्ञसीता, रमासहचरी, लोकालोकबारी, रजोगुण की, तमोगुण की, सतोगुण की, कोशलपुरी, पुलिन्दी, श्वेतद्वीप की, मिथला की, ऊर्द्धबैकुंठ की, भूमिगोलोक की, अजितपद की, दिव्या, विष्णुलोक की, अदिव्या, समुद्रकन्या, अप्सरा, पुरंध्री, लता, गोपी, बहिर्मती, नागकन्या, सुतलनिवासिनी और श्रीरामावतार की मानवी इतनी जूथन को मनोरथ पूर्ण पुरुषोत्तम ने पूर्ण कीनो है।

इन में जालन्धरी तो रंगजीत नामक गोप की कन्या भई है और मत्स्य अवतार के वरदान की बहिर्मती अप्सरा नागकन्या और सुतल वासिनीन ने वृज के पास वर्हिपल नगर में जन्म लीने हैं। ऋषीरूपा बंग देश में मंगल गोप के घर पांच हजार उत्पन्न भई हैं। और श्री नन्दरायजी ने इन को बंगले सो लाय कै महल में रक्खी है। कोशल की स्त्री नव उपनन्द की पत्नी है। मालव को राजा दिवस्पति गोप व्रज में बसत हैं सो देवतान की स्त्री वा की कन्यागोपी भई हैं। सिन्धु देश को राजा बिमल वाके

यहां अवध और मिथिलापुर की स्त्री एक करोड़ प्रगटी हैं। ये पहले कामबन में रहीं, फेर द्वारका गईं, जासों इन को राज्यलीला प्रिय है। दक्षिण में उशीर नगर के गोप पानी न बरिसबे सों व्रज में आय बसे हैं बिन की बेटी यज्ञजानकी और पुलिन्दी भई हैं। दिव्य बाह, गोपेष्ट, पतंग, भार्गव, शुक्ल और नीतिविद ये छः लघु वृषभान हैं। इन के घर ऊर्द्ध विष्णु पदवासिनी, रमासखी, जलकन्या, श्वेत द्वीप की स्त्री लोकाचलवासिनी और अजितपद की स्त्री प्रगटी हैं। वीतिहोत्र, श्रुत, अग्निभुक, गोपति, श्रीकर, शान्त, पावन, शाम्भ और ब्रजेश ये नव लघु उपनन्द हैं। त्रिगुणा और दिव्याऽदिव्या के यूथ को इन के घर प्रागट्य है।

और अवतारन में स्वकीया छोड़ के और स्त्री सों रमण करैं तो धर्म की मर्यादा जाय वाही सों जब पूर्ण पुरुषोत्तम प्रगटे हैं तब इन सबन को मनोर्थ पूर्ण भयो है।

विशेष कर के श्री रामावतार की स्त्रीन को व्रज में प्रागट्य है जासों श्रीरामजू साक्षात् वासुदेव स्वरूप और मर्यादा पुरुषोत्तम हैं। और अत्यन्त ही सुन्दर हैं, देखतमात्र स्त्रीजन को चित्त हरन करते हैं सो मर्यादा पुरुषोत्तम में आसक्त होइ कें पुष्टि पुरुषोत्तम सों रमण की अधिकारिणी होत है। ताहू मैं अग्निकुमार दंडकारण्य के पांच हज़ार ऋषि को मुख्य नित्य लीला में अंगीकार है क्यौंकि पुरुष होइ के प्रभु में इन ने स्त्रीभाव कीन्हो हैं, सो कुमारिकान को यूथ जी की मुखिया श्री राधा सहचरी जू है, इन्हीं दंडकारण्य के ऋषिन को है।

सुजस गोप की स्त्री जसा सों कीर्ति जी को प्रागट्य है। सुनैनाजी इनकी अंश हैं। चन्द्र वंश में कुरंग नामक राजा और वा की स्त्री विशालाक्षी सों सुनैना जू की उत्पत्ति है।

श्री जानकी जू इन्ही के गृह प्रगटी है और मन्दोदरी, पृथ्वी, पार्वती और सुनयना इन सबन सों आप सों मातृ संबंध है। जब ऋषिन को ब्रह्मतेज एक घड़ा में बंद होय के रावन के पास आयो तब मंदोदरी ने वाको अपने गर्भ में धारण कियो सो नारद जी के कहिबे सों रावण ने वा गर्भ को पीड़ित करि घड़ा में भरि कै जनकपुर के पास गड़वाय दियो। ताही सों श्रीजानकी जी प्रगटी हैं। और श्री लक्ष्मन जी सब ब्रह्मान के, भरथ जी सब विष्णुन के और शत्रुघ्न जी सब शिवन के आधिदैविक स्वरूप हैं।

आल्हादिनी, चारुशीला, अतिशीला, सुशीला, हेमा, लक्ष्मना ये श्री जानकी जी की कुंजन की, शोभना, सुभद्रा, शान्ता, सन्तोषा, शुभदा, सत्यवती, सुस्मिता, चार्वंगी, लोचना, हेमांगी, क्षेमा, क्षेमदात्री, सुधात्री, धीरा, धरा और चारुरूपा, ये सोरह सिंगार की, माधवी, मनोजवा हरिप्रिया, बागीशा, विद्या, सुविद्या, नित्या और वैसे ये आठ अंग की मुख्य सखी हैं।

इति श्री युगलसर्वस्व के उत्तरार्द्ध को द्वितीय अध्याय स्फुट प्रकरण समाप्त भयो।

3 अध्याय

सब प्रसंगवशात् अन्य अन्य रहस्य निरूपण करत है। 1। रसिक जन और महात्मान के निकुंजादि वर्णन में अनेक मत हैं, तिन को परस्पर विरुद्ध देखि कै शंका न करनी काहे सों कि यह तो निकुंजलीला भाव सिद्ध है जैसो जाको भाव को अधिकार है वैसो वाहि दर्शन होत है। 2। रहस्य पुराण में तिरानबे कोटि रासलीला लिखी है।3। तिरानबे कोटि कुंजहू है। 4। धाम एक भूमंडल पर श्रीवृन्दाबन, एक गोलोक को नित्य वृंदाबन।5। सब कुंजन में 84 कुंज मुख्य हैं। याही सों 84 सेवक हूं श्री महाप्रभु जी ने अंगीकार किए हैं। 6। श्रीठाकुरजी के गुणमय नौ स्वरूप उनकी भार्य्या 1 अजा 2 अरूपा 3 निर्गुण 4 निराकार 5 सनातनी 6 निरीहा 7 परब्रह्मभूता 8 अविनाशिनी और 9 निरंजना। सो इन नओ स्त्रीन सों श्रवणादिक प्रेम भक्ति उत्पन्न होत भई। 7। और निर्गुण स्वरूप श्री ठाकुरजी को एक सच्चिदानंदघन, ताकी स्त्री अलौकिकी, तासों प्रेम लक्षणा उत्पन्न भई, ताकै सहज, सुहित और सुहृत तीन पुत्र भए। 8। श्रवणादिक प्रेमन को एक एक कों नौ नौ पुत्र भए तेही 81 और तीन प्रेमलक्षणा के पुत्रन के पुत्र सब मिलि कै चौरासी प्रकार प्रेम तेई निकुंज होत भए। 9। श्रवण की भार्या श्रुति ताके नौ पुत्र सूक्ष्मकुंज, उनकी संज्ञा,उनके नाम यथा प्रीतिकुंज, प्रेमकुंज, कंदर्पकुंज, लीलाकुंज, मज्जनकुंज, विहारकुंज, उत्कंठकुंज, मोहनकुंज, युगुलकुंज। 10। कीर्त्तन की स्त्री नर्त्तकी ताके नौ देहकुंज पुत्र भए यथा हावकुंज, भावकुंज, कटाक्षकुंज, अलककुंज, मुक्ताकुंज, भ्रुकुंज, वेनीकुंज, रामराजीकुंज, नीवीकुंज। 11। अर्चन की भार्या पूजा ताके नौ पुत्र विहारकुंज यथा कटिक्षीणकुंज, मानकुंज, भ्रमनकुंज, तिष्ठनकुंज, संगीतकुंज, आलस्यकुंज कलकूजितकुंज, विविधाकारकुंज, दुकूलकुंज, कुचकुंज। 12। पाद सेवन की स्त्री पादोदका ताके नौ शृंगारकुंज यथा नेत्रकुंज, कुंडलकुंज, हारकुंज, ताम्बूलकुंज, आड़कुंज, लावन्यकुंज, हास्यकुंज, उत्साहकुंज, उग्रताकुंज। 13। स्मरण की स्त्री स्मृति ताके नौ महाकेलिकुंज यथा कोकिलालापकुंज, ग्रीष्मकुंज, आलिंगनकुंज, चुंबनकुंज, अधरपानकुंज, दर्शनकुंज, दर्पनकुंज, प्रलापकुंज, उन्मादकुंज। 14। वंदन की स्त्री नति वाके नौ एकांतकुंज यथा दर्पकुंज, उत्सादनकुंज, उत्कर्षकुंज, दीनकुंज, अधीनकुंज, सुरतकुंज, आकर्षणकुंज, उच्चाटनकुंज, मूर्छाकुंज, ! 15। दास्य की स्त्री विनया वाके नौ गोप्यकुंज यथा बशकरणकुंज, स्तम्भनकुंज, प्रियास्कन्धाराहणकुंज, आवेशकुंज, व्यात्तालापकुंज, पर्यंकशयनकुंज, प्रियाचरणताड़नकुंज, नखक्षतकुंज, दंतक्षतकुंज। 16। सख्य की स्त्री मैत्री तासों नौ भावकुंज यथा क्षपितरंगकुंज, विगताभरणकुंज, भूषणकुंज, कंपकुंज, रतिप्रलापकुंज, तुत्तुलगिरिकुंज, प्रियावासभवनकुंज, मदनगुह्यकुंज, आसक्तकुंजकुंज।। 17। निवेदन की स्त्री आत्मसमर्पिणी ताके नौ परमरसकुंज यथा पीड़ावादीकुंज, सुरतश्रमनिषेधकुंज, ठुनुककुंज, वाग्विभ्रमकुंज, व्यस्तभावकुंज, काम-टंकुंज, किंकिनिरवकुंज वीरविपरीतकुंज, सुरतांतकुंज। 18। सुहृत् की स्त्री सुहृदा तासों कलिकाकौतुककुंज और सुहित की स्त्री हित कारिणी तासों सुरतकुंज तथा सहज की

स्त्री सहजा तासों सहज प्रेमकुंज येई चौरासी कुंज भए। 19। इन कुंजन में एक एक में सब कुंज अन्तरभाव सों रहत हैं, कहूं प्रच्छन्न रहत हैं और कहूं प्रकाशित होत हैं॥20।

अब और स्फुट रहस्य वर्णन करत हैं। व्रज में सप्तावरण स्वरूप श्रीठाकुर जी को तथा श्रीस्वामिनीजी को विराजत है ॥ 2 ॥ वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध, कालेश्वर, संयोगरसात्मक और वियोगरसात्मक यह सात स्वरूप मिलि कै पूर्ण होत है सो इन में अन्यकल्पन में कहूं एक कहूं दोय ऐसे स्परूप प्रकट होत है ॥ 3 ॥ जब पूर्ण प्राकट्य भयो तब छःस्वरूप मथुराजी में प्रगटे, वियोगात्मक स्वरूप वृज ही में प्रगटे ॥ 4 ॥ श्रीशक्ति, भूशक्ति, लीलाशक्ति, मनोरथात्मक, स्वामिन्यात्मक, वियोगात्मक, संयोगरसात्मक यह सात स्वरूप श्री स्वामिनी जी के हैं, तिन में अन्य युगन मैं कोउ एक स्वरूप प्रकट है। जब पूर्ण प्रागट्य भयो तब पांच स्वरूप कीर्त्ति जी के यहां प्रकटे और जब श्री ठाकुर जी प्रकटे तिन के साथ मायावृत संयोग-वियोग रसात्मक दोय स्वरूप यहां प्रकटे। सो जब कीरतिजी अपुने घर सों श्री स्वामिनी जी को लाईं तब श्री ठाकुर जी माता की गोद सों किलके और हंसे वाही समैं इन दोऊ रसात्मक स्वरूपन को उन पंचावरणात्मक स्वरूप मैं स्थापन कीनो ॥ 5 ॥ जब कछु आवरण सों मथुरा पधारे तब वियोगरसात्मक मुख्यस्वरूप श्रीस्वामिनीजी के हृदय में बिराजे ॥ 6 ॥ श्रीस्वामिनीजी को मनोरथात्मक जो स्वरूप हैं ताही में अन्य के प्रभु सों रमण करिबे के मनोरथ तथा वरदान आदि सों जे स्वामिनी प्रकटत हैं ते मिलि रहत है और स्वामिन्यात्मक स्वरूप में प्रति कुंज प्रति मंडल प्रति जूथ मैं जो स्वामिनी जी के अंश स्वरूप रहत हैं तिनकी एकता है ॥ 7 ॥

अथ श्रीस्वामिनी जन्म समय

अथ ब्रह्मणो द्वितीयप्रहरार्धे श्वेत वाराह कल्पे द्वापरो विश्वावसु संवत्सरे भाद्रपदे शुक्लाष्टम्यां गुरु वासरे अरुणोदये विशाखायां सिंहलग्नोदये प्राङ्मुहूर्त्तद्वयान्विते श्रीश्रीस्वामिन्या जन्म ॥ 8 ॥

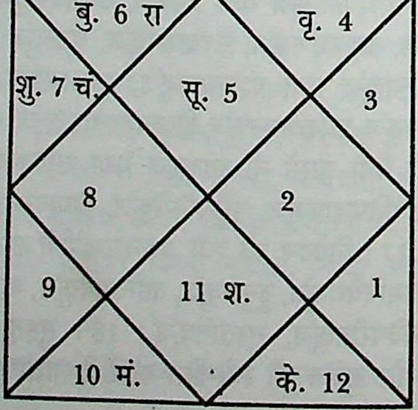

नव वृषभानो का चक्र

नाम	स्त्रीनाम	संतति	वर्ण	चाल वस्त्र	गुण	वय	गऊ
सत्यभान	सत्यकला	श्रीललिताजी	गौर मूंछ श्वेत	शरीर ठिगना चित्त गंभीर वस्त्र काले	औदार्य	75	2200000
गुणभानु	गुणकला	श्रीविशाखाजी	गुलाबी, केश श्वेत	रंग शहाना	विद्या	67	2100000
धर्मभानु	धर्मकला	श्रीरंगदेवी	सांवला, केश श्वेत	वस्त्र लाल शरीर लंबा	धर्म	64	2000000
रुचिभानु	रुचिरकला	श्रीचित्राजी	चौड़ा केश, अधकचरे	नीला पीन शरीर लंबा	ज्योतिष	60	1900000
सुभानु	सुष्ठुकला	श्रीतुंगविद्याजी	अधकचरे. सांवला, केश	डाढ़ी पीत प्रसन्न वदन	रोचकता	57	1800000

नव वृषभानो का चक्र

नाम	स्त्री नाम	संतति	वर्ण	चाल वस्त्र	गुण	वय	गऊ
चन्द्रभानु	चन्द्रकला	श्रीचन्द्रावलीजी श्रीचम्पकलताजी	गौर केश कृष्ण किचित्श्वेत	हरित	कला	54	1700000
वरभानु	बरकला	श्रीइन्दुलेखाजी	लाल, केश काले	पहलवानी धानी	गानविद्या	52	1600000
उदधिभानु	कमला	श्रीसुदेवीजी	पक्का केश काले	श्वेत	व्यायाम पशुपरीक्षण	50	1500000
श्रीवृषभानुजी	कार्त्तिजी	श्रीदामा श्रीराधिकाजी	लाल केश	काले	राजविद्या	45	10000000

युगलसर्वस्व के उत्तरार्द्ध को तीसरो प्रकरण समाप्त भयो।

अथ चतुर्थ अध्याय

64 गुण श्रीभगवान के

सुरम्यांग 1 सर्वसल्लक्षणान्वित 2 रुचिर 3 तेजोयुक्त 4 बली 5 वयोयुक्त 6 विविधाद्भुतभाषावित् 7 सत्यवाक्य 8 प्रियंवद 9 वावदूक 10 पंडित 11 बुद्धिमान 12 प्रतिभान्वित 13 विदग्ध 14 चतुर 15 दक्ष 16 कृतज्ञ 17 दृढ़व्रत 18 देशकालपात्रज्ञ 19 शास्त्रचक्षु 20 पवित्र 21 वशी 22 स्थिर 23 दांत 24 क्षमाशील 25 गंभीर 26 धृतिमान् 27 सम 28 वदान्य 29 धार्मिक 30 शूर 31 करुण 32 मानदायक 33 दक्षिण 34 विनयी 35 लज्जावान 36 शरणागतपालक 37 सुखी38 भक्तसुहृत् 39 प्रेमवश्य 40 सर्वशुभंकर 41 प्रतापी 42 कीर्त्तिमान 43 लोकप्रिय 44 साधुसमाश्रय 45 नारीमनोहर 46 सर्वाराध्य 47 समृद्धिमान् 48 श्रेष्ठ 49 ईश्वर 50 नित्य सुंदर 51 सर्वज्ञ 52 सच्चिदानन्दघन 53 सर्वसिद्धिसंयुक्त 54 अविचिंत्य 55 महाशक्ति 56 अनेककोटि ब्रह्मांडविग्रह 57 अवतारावलीवीज 58 हतारिगतिदायक 59 आमाराम गुणाकर्षी 60 अत्यन्त अद्भुत और चमत्कार लीला कल्लोल के समुद्र 61 अतुल्य मधुर प्रेमप्रिय मंडल सों मंडित 62 मुरली वादन सों सर्वमानसाकर्षी 63 अत्यन्त अलौकिक उज्ज्वल अद्भुत तथा उद्धत रूपश्री सों चराचर को मोहन ॥ 64 ॥

प्रथम पचास सहज गुण। 60 तक 10 अद्भुत। और चार असाधारण गुण।

24 नित्य प्रिया सहचरी

चन्द्रावली 1 विशाखा 2 ललिता 3 श्यामा 4 पद्मा 5 शैव्या 6 भद्रिका 7 तारा 8 विचित्रा 9 गोपाली 10 धनिष्ठा 11 पालिका 12 खंजनाक्षी 13 मनोरमा 14 मंगला 15 विमला 16 शीला 17 कृष्णा 18 सारिका 19 विशारदा 20 तारावली 21 चकोराक्षी 22 शंकरी 23 कुंकुमा 24।

इन में विशाखा, ललिता, श्यामा, पद्मा सखी और शेष यूथपति हैं।

अथ यूथपति अपर

चन्द्रावली और सुशीला 16000, शशिकला 14000, चन्द्रमुखी 13000, माधवी 11000, कदम्बमाला 13000, कुन्ती 10000, यमुना 14000, जाह्नवी 9000, पद्ममुखी 9000, सावित्री 15000, सुधामुखी 14000, शुभा 14000, पद्मा 14000, गौरी 14000, सर्व्वमंगली 16000, सरस्वती 13000, भारती 10000, अपर्णा 14000, रति 10000, गंगा 14000, अम्बिका 16000, सती 13000, नन्दिनी 10000, सुन्दरी 11000,

कृष्णप्रिया 16000, मधुमती 14000, चम्पा 13000, चन्दना 14000।

श्रीस्वामिनीजी के 16 नाम

राधा 1 रासेश्वरी 2 रासवासिनी 3 रसिकेश्वरी 4 कृष्णप्राणाधिका 5 कृष्णप्रिया 6 कृष्णस्वरूपिणी 7 कृष्णवामांगसंभूता 8 परमानन्दरूपिणी 9 कृष्णा 10 वृन्दावनी 11 वृन्दा 12 वृन्दावन विनोदिनी 13 चंद्रावली 14 चन्द्रकान्ता 15 शतचन्द्रनिभानना 16॥

—:*:—

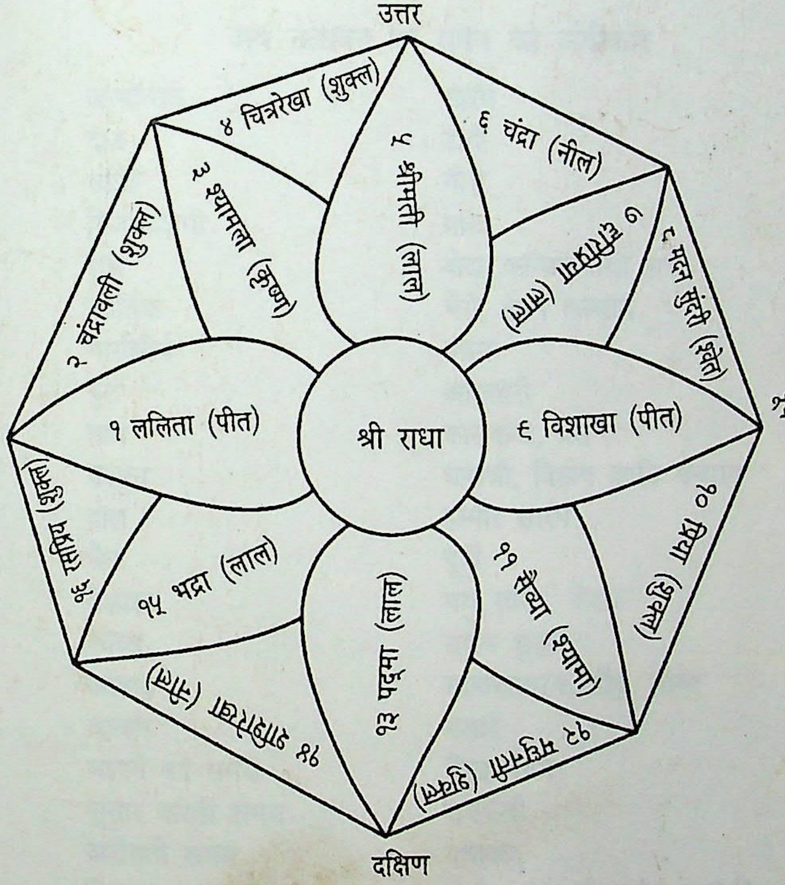
उत्तर
४ चित्ररेखा (शुक्ल)
५ श्रीमती (लाल)
६ चंद्रा (नील)
३ श्यामला (कृष्ण)
७ हरिप्रिया (लाल)
२ चंद्रावली (शुक्ल)
८ मदन सुंदरी (श्वेत)
पश्चिम
१ ललिता (पीत)
श्री राधा
९ विशाखा (पीत)
पूर्व
१६ रसप्रिय (शुक्ल)
१० प्रिया (शुक्ल)
१५ भद्रा (लाल)
११ सैव्या (श्यामा)
१३ पद्मा (लाल)
१४ शशिरेखा (नील)
१२ मधुनती (शुक्ल)
दक्षिण

अथ उत्सवन पर रागन को अंगीकार

जन्मोत्सव	सारंग
दान	टोडी
सांझी	गौरी
विजयदशमी	मारु
रास	केदार,कान्हरा तथा सर्व
कार्तिक	भैरो, ईमन कल्यान
मार्गशीर्ष	पंचम
पूस	आसावरी
माघ	कालकोस, वसन्त
फागुन	धनाश्री, विहाग आदि सबराग
दोल	हम्मीर सारंग
चैत	पूर्वी
बैशाख	मधु सारंग, केदार
ज्येष्ठ	सारंग शुद्ध
आषाढ़	सामन्तसारंग, गौड़, सोरठ
श्रावण	मलार
जागने को समय	भैरव पंचम
शृंगार करती समय	रामकली
अरोगती समय	यथाऋतु
दिन	टोड़ी, आसावरी,सारंग, धनाश्री
तीसरे पहर	गौरी, पूर्वी, धनाश्री
जनमोत्सव	सारंग
सैन आरती वा कुंजविहार	केदार, कान्हरा, ईमन
एकान्त विहार	विहार, सोरठ, परज, कलिंगड़ा

अर्थ तन्त्र मत सों सखीन को वर्णन

1	ललिता	स्वर्णवर्ण	रत्नभरण	पीतांबर
2	चन्द्रावली	”	श्वेत वस्त्र	मंजीर की सेवा
3	श्यामला	”	श्याम वस्त्र	मृदंगसेवा
4	चित्ररेखा	”	शुक्लाम्बर	डफ की सेवा
5	श्रीमती	”	रक्त वस्त्र	दासी की सेवा
6	चंद्रा	”	नील वस्त्र	रबाब
7	हरिप्रिया	”	लाल वस्त्र	उपंग
8	मदनसुंदरी	”	श्वेत वस्त्र	रबाब और गाना
9	विशाखा	”	पीत वस्त्र	वंशी
10	प्रिया	”	श्वेत वस्त्र	वंशी
11	शैव्या	”	श्याम वस्त्र	गाना
12	मधुमती	”	शुद्ध वस्त्र	चरन सेवा
13	पद्मा	”	लाल वस्त्र	सारंगी
14	शशिरेखा	”	नील वस्त्र	यन्त्र
15	भद्रा	”	रेशमी लाल वस्त्र	सुरमंडल
15	रसप्रिया	”	चीन शुश्ल वस्त्र	तुमरी

एक एक की सात सात सखी

1. ललिता की इन्दुमुखी 1 रसज्ञा 2 शुभदा 3 सुमुखी 4 वल्लभी 5 चन्द्रिका 6 चतुरा 7।
2. चंद्रावती की चंचला 1 मधुरा 2 हस्तकला 3 मधुरभाविनी 4 विलासिनी 5 रसवती 6 खंजनलोचना 7।
3. श्यामला की सुखदा 1 चम्पकलिका 2 रसदा 3 रसमंजरी 4 सुमंजरी 5 शीला 6 चारुमती 7।
4. चित्ररेखा की चन्द्रप्रभावती 1 वासन्ती 2 मालती 3 जाती 4 चन्द्रकान्ती 5 सुकुन्तला 6 रम्भा 7।
5. श्रीमती की भ्रमरगम्भीरा 1. सुशीला 2. सुवेशिनी 3. आमलिकी 4. सुधाकंठी 5. श्रेया 6. रतिप्रिया 7।

6. चंद्रा की शुकप्रिया 1. मधुकरी 2. सुवेश 3. अमृतोद्भ्वा 4. मुरली 5. वल्लभी 6. वृंदा 7।

7. हरिप्रिया की पारिजातप्रिया 1. शुभा 2. पंचस्वरा 3. रत्नमाला 4. मदिरा 5. रासवल्लवी 6. मातंगगमनी 7।

8. मदनसुन्दरी की तारावती 1. कुंडलधारनी 2. केशरी 3. मित्रवृंदा 4. लक्षणा 5. अच्युतमालिका 6. चन्द्रा 7।

9. विशाखा की मायावती 1. कौशिकी 2. कोमलांगी 3. सुचन्दनी 4. पीयूषभाषिणी 5. सत्यवती 6. कुंजवासिनी 7।

10. प्रिया की कपोतमालिका 1. लोपामुद्रा 2. किंशुकप्रिया 3. इलावती 4. कुंकुमा 5. कमला 6. मदालसा 7।

11. शैव्या की सावित्री 1. बहुला 2. प्रियावादिनी 3. मुक्तावली 4. चित्ररेखा 5. सुमित्रा 6. लोलकुंडला 7।

12. मधुमती की अरुंधती 1. चित्रवती 1. श्रीरक्ता 3. पद्मगंधिनी 4. मेनका 5.

13. पद्म की काममूर्छिनी 1. कुमुदप्रिया 2. तानप्रिया 3. नित्य विलासिनी 4. हीरावती 5. हारकंठा 6. सिंहमध्या 7।

14. शशिरेखा की सुलोचना 1. नंदव्या 2. आनंदकलिका 3. सुनंदा 4. आनंददायिनी 5. कुरंगाक्षी 6. सुश्रोणी 7।

15. भद्रा की केलिलोला 1. प्रिंयबदा 2. श्यामराधा 3. श्यामासेव्या 4. कस्तूरी 5. मानभंजनी 6. विचित्रवासना 7।

16. रसप्रिया की मंजुकिंकिनी 1. पिकस्वरा 2. भृंगगाना 3. रासविहारिणी 4. रसमंजीरा 5. तिलोत्तमा 6. चारुमती 7।

अथ अन्य प्रमाण के अनुसार अष्ट सखी का चक्र

	पितानाम	मातानाम	रंग	वस्त्र रंग	मुख्यसेवा
श्री ललिता जी अनुराधा जी	सत्यभानु	सत्यकला	गोरोचनप्रभा	मयूरपिच्छ	पान की बीड़ी
श्री विशाखा जी	गुणभानु	गुणकाल	दामिनीप्रभा	चाँदतारा	वस्त्रादि
श्री चम्पकलता जी श्री इन्दुलेखा	चन्द्रभानु	चंद्रकला	चंपकप्रभा	नील	व्यंजनादि
श्री तुंगविद्या	बरभानु	बरकला	हरतालप्रभा	अनार के फूल	शय्या कहानी
नान्दीमुखी	सुभानु	सुष्ठुकला	गौर	पीला	गान
श्री रंगदेवी	धर्मभानु	धर्मकला	कमलेकेसर प्रभा	उड़हुल के फूल	आभरण
श्री सुदेवी	उदाधिभानु	कमला	सलोना	सूहा	केशपाशर चनादि आरसी
श्री चित्रा	शुचिभानु	रुचिरकला	कुंकुमप्रभा	सुनहला	जलादि पान की

	चातुर्य्य	उन की सखियों के नाम	भाव
श्री ललिता जी अनुराधा जी	मध्या मुख्य स्नेहवर्द्धन	रत्नप्रभा, रतिकला, निपुणा, कलहंसी, कलापिनी, सुमुखी, मन्मथमोदा, सौरभी	सख्य
श्री विशाखा जी श्री चम्पकलता जी	सदा साथ रहना	माधवी, मा.लती, कुंजरी, हरिनी, चपला, गंधरेखा, शुभानना, सौरभी	सख्य
श्री इन्दुलेखा	यथारुचि सिद्ध करना	कुरंगाक्षी, मिहिर कुंडला, चंद्रिका, सुचरित्रा, मंडिनी, चंद्रलता, रसऐनी, सुमदिरा	इन पर श्रीप्रिया जीका वात्सल्य है
श्री तुंगविद्या	कोक	चित्रलेखा, मेदिनी, मंदालसा, रसतुंगा, भद्रतुंगा, गानकला,सुमंगला, चित्रांगी	परमांतरंग
नान्दीमुखी	वाद्यादि कला	मंजुमेधा,सुनेधिक, गुण चूड़ा, मधुरा, मधुस्यंदा, मधुरेक्षणा, तनुमध्या, वारुणी,	मुसाहिब
श्री रंगदेवी	श्रृंगार माल्यनिर्माण	कलकंठी, शशिकला, कमला, सुंदरी, कंदर्पा, प्रेममंजरी, कामलता, मधुविदा	सेवासख्य
श्री सुदेवी	शुकपाठ तिलक आदि	कावेरी, मनोहरा, मंजुकेशी, कोशिका, हीरा, चारुकुमारी, हीरकंठा, महाहीरा	मुसाहिब
श्री चित्रा	रुचि अवलोकन	रसालिका, तिलकिनी, सुगंधिका, सौरसेनी, नागरी, रामिलिका, नागवेनिका, अरुना	सेवासाख्य

अथ अन्य मत सो अष्ट सखीन को वर्णन

नाम	रंग	वस्त्र	माता	पिता	पति	चातुर्य	सेवा
ललिता सुंदरी	गोरोचन	मयूरपिच्छ	शारदा	विशोक	बोलीक	मध्या वाक्य	तांबूल
विशाखा	बिजली	चांद तारा	सुदक्षिणा	पावन	वल्लभ	सामादि भेद-काव्य	वस्त्र
चम्पकलता	चम्पा	नीला	वाटिका	राम	चंडाक्ष	दौत्य	पाक वस्तु
चित्रा	कुंकुम	काला	चर्चिका	चतुर	पिठर	आगामज्योतिष, पशुविद्या, जलपान	संवारना जल केश
तुंगविद्या	केसर	पीले	मेघा	पौष्कर	वालिस	संगीत साहित्य मेलन	वीणा
इन्दु लेखा	हरिताल	लाल	सागर	बेला	दुर्बल	कोक वशीकरण दैन्य	चंदन
रंगदेवी	पद्म किंजल्क	सफेद	करुणा	रंगसार	चक्रेशण	शृंगार	...
सहचरी	गौर	नील	सुदेवी	देवबंधु	कोपन खलंदु	अंजन अभ्यंग- चरण-सेवा	पीकदान

अथ अन्य मत सों सखीन को वर्णन चक्र

नाम	रंग	कौन की सखी	वस्त्र	वाद्य	सेवा	दल	स्थान
श्रीललिता	चन्द्रमा	श्रीस्वामिनीजीकी	पीला	...	...	पीला	पश्चिम
चन्द्रावती (ली)	सोना	श्रीललिताजीकी	श्वेत	...	...	सफेद	उसके बाएँ
श्यामला	सोना	श्रीस्वामिनीजीकी	काला	मृदंग	काला	काला	वायव्य
चित्रलेखा	तपाया सोना	श्री ठाकुर जी की	श्वेत	डफ	गाना	सफेद	उसके बाएँ
श्रीमती	सोना	श्रीठाकुरजीकी	लाल	...	दास	लाल	उत्तर
चन्द्रा		श्रीठाकुरजीकी	नीला	रबाब	गाना	नील	उसके बाएँ
हरिप्रिया	सोना	...	पीला	उपंग	...	लाल	इशान
मदनसुन्दरी	चंद्र	...	सफेद	रबाब	गाना	धूम्र	उसके बाएँ
विशाखा	गौर	श्रीस्वामिनिजीकी	पीत	वंशी	...	पीत	पूर्व
श्रीप्रिया	सोना	विशाखाजी की	सफेद	वंशी	...	शुक्ल	उसके बाएँ
शैव्या	सोना	श्रीकृष्ण की	काला	मंजुसुखमयंत्र	...	श्याम	अग्नि कोण

अन्य मत सों अष्ट सखीन को चक्र

नाम	रंग	किसकी सखी	वस्त्र	वाद्य	सेवा	दल	स्थान
मधुमती	सोना	युगल स्वरूप की	सफेद	...	गाना	शुक्ल	उसके बाएँ
पद्मा	फूल	...	लाल	सारंगी	...	लाल	दक्षिण
इन्दुलेखा वा शशिरेखा	चन्द्रमा	श्रीठाकुरजीकी	पट्ट	मृदंग	गाना	नील	उसके बाएँ
भद्रा	सोना	श्रीयुगल	लाल	स्वरमंडल	...	लाल	नैर्ऋत
रसप्रिया	सोना	युगल	लाल	...	...	शुक्ल	उसके बाएँ
वृंदा (वनप्रिया)	हरदी	...	सफ़ेद साटन	तम्बूरा	...	...	...
श्रीचन्द्रावली	लाल सेना	...	चुनरी	...	जूही के फूल की माला	...	...

श्री रामचन्द्र के दक्षिण चरण के 24 चिन्ह

क्रम सों

एड़ी में स्वस्ति चिन्ह। 1 पीत-रंग मध्य तरवा में ऊर्द्ध रेखा। 2. लाल रंग। ऊर्द्ध रेखा के बायें तरफ अष्टकोण 3. स्वेत अरुणा। श्री। 4। बालार्क सन्निभ।

हल। 5 } स्वेत धूम्र।
मुसल। 6
सर्प । 7। सित।
बाण। 8। स्वेत। पीत अरुणा हरित।
आकाश । 9। नील।
अष्टदल कमल । 10। अरुणा स्पंदन । 11। विचित्र वर्ण
जिस में चारि घोड़े स्वेत।
वज्र । 12। बिजुरी वर्ण।

अंगूठे में जब । 13। स्वेत रक्त।
ऊर्द्धरेखा के दक्षिण ओर कल्प वृक्ष । 14। हरिद्वर्ण। अंकुश। 15 श्याम।
ध्वज। 16। लोहित चित्रित।
मुकुट । 17। तप्त कांचन वर्ण।
चक्र । 18।
सिंहासन। 19। रत्नमय।
कालदंड । 20। कन्सावत।
चामर। 21। अत्यन्त धवल।
छत्र। 22। सित लाल।
नृ। 23।
जपमाला (24 चिह्न) स्वेत, पीत, अरुणा, हरित अरु वज्रवत।

श्रीराघव के बायें पदाब्ज के 24 चिह्न क्रम सों

पद मध्य में दक्षिण पद लौं उर्द्ध रेख की जगह पै सरयू। 1। सित।
एड़ी में गो पद । 2। सित रक्त।
सरयू के दक्षिण ओर भूमि । 3। पीतरक्त सित।
कुम्भ । 4। स्वर्ण वर्ण कुछ स्वेत।
पताका। 5। चित्रवर्ण।
जम्बू फल। 6। श्याम।
अर्द्ध चन्द्र । 7। धवल।
दर । 8। सित कछु लाल।
षट्कोण । 9। महास्वेत।
त्रिकोण। 10 अरुण।
गदा। 11 श्यामल।
जीवात्मा। 12। दीप्तिरूप।
अंगुष्ठ में बिन्दु । 13। पीत।
गोपद की बाई ओर। शक्ति । 14। रक्त श्याम सित।
सुधाकुंड। 15। सित रक्त।
त्रिवली। 16। त्रिवेणीवत्।
मछरी। 17। रुपेवत।
पूर्णासिन्धु। 18। धवल।
वीणा। 19। पीत रक्त सित।
वंशी। 20। चित्र विचित्र।
धनु। 21। हरित पीत अरुणा।
त्रोण। 22। चित्र विचित्र।
मराल। 23। चरण चंचु लाल। सित।
चन्द्रिका । 24। सित पीत अरुणा विचित्र रंग।

जो चिह्न श्री रामजी के दक्षिण पद में हैं सोई चिह्न श्री जानकीजी के वाम पद में है और जो श्री राघव के वाम पद में सोई श्री लाडिलीजी के दच्छिन पद में।

उपसंहार

यह पूर्वोक्त श्री युगुलसर्व्वस्व अनेक प्रामाणिक ग्रन्थों से संग्रह कर के छापा गया। इस के छपने से अनन्य लोग रुष्ट न हों क्यौंकि यह बजार-बजार बेचने और घर-घर बांटने को नहीं छापा गया है केवल अनन्य अधिकारी लोगों के हेतु थोड़ी सी पुस्तकें गुप्त रीति से छाप ली गई हैं।

यह भी विदित रहे कि एक्ट 25 सन् 1867 ई. की रीति के अनुसार रजिस्ट्री किया है और छापे के अन्य-अन्य एक्ट के अनुसार इस का सब-स्वत्व हंमने केवल अपने हस्तगत रखा है इसे भूल कर भी कोई इसी भाषा और इसी लिपि में वा किसी अन्य भाषा और अन्य लिपि में बा कुछ घटा बढ़ा कर वा कुछ हेर-फेर कर भी छापने का उद्योग न करै नहीं तो वह कानून के अनुसार दंडनीय होगा।

विदित हो कि सर्व्वसदार्यशिरोधार्यचरण आचार्यवर्य श्री महाप्रभुजीं ने युगल स्वरूप की सेवा और भावना ही अपने सम्प्रदाय में मुख्य मानी है तथापि प्रचार बालसेवा और बालभाव का किया है। इस का कारण यही है कि संसार के स्वभावदुष्ट जीवन इस उत्तम रस के अधिकारी नहीं है। उन की प्रवृत्ति सहज ही नीच है और चित्त सांसारिक विषयों से कलुषित है तो वे लोग यदि यह रहस्य कहैं सुनें तो उलटे अपराधी हों। यह तो जलकमल की भांति जो भक्त संसार में रहते है उन्हीं के कहने सुनने के योग्य हैं, क्यौंकि सिंगार भावना सिंहनी का दूध है, जो या तो सिंह के बच्चे के मुंह में ठहरे या स्वर्ण के पात्र में। और पात्र में रक्खो तो फट जाय वैसे ही यह उत्तम रस पात्र बिना नहीं ठहरता। और बाल भाव तो गऊ का दूध है अनेक प्रकार के सत् पात्र में ठहर सकता है यद्यपि नास्तिक इत्यादि खटाई और बहिर्मुख से पीतल के पात्र में इस को भी विकार होता हैं तथापि सर्व साधारण में इस के कहने सुनने वालो का सुनना तो मानो अपने माता पिता का रहस्य उद्घाटन करना है। इस के तो जो अधिकारी हों उन्हीं से कहना सुनना योग्य है। इसे मेरे लिखने का तात्पर्य यह है कि जिन के पास यह ग्रन्थ रहे वह इस को किसी साधारण स्थान में वा साधारण लोगों के हाथ में न फेंक दें वरंच इस को बहुत यत्नपूर्व्वक रक्खें।

ऐसे ही युगल स्वरूप के चरणचिह्न वर्णन में भक्त सर्व्वस्व, श्री महाप्रभुजी के

वर्णन में श्री वल्लभीयसर्व्वस्व, चारों सम्प्रदाय के विस्तार वर्णन में वैष्णवसर्व्वस्व और भगवद्भक्ति निरूपण में तदीय सर्व्वस्व, भक्ति सूत्र का भाष्य, चन्द्रावली, नाटिका और अनेक लीला तथा रहस्य के गद्य पद्य मय ग्रन्थ मेरे पास प्रस्तुत है। जिन भवदीय लोगों को देखने की इच्छा हो अनुग्रह कर के मुझ से मंगवा लें।

भाद्रपद शुक्ल 8
सं. 1933

हरिश्चन्द्र

[सन 1876 ई. में प्रकाशित]

पुरातात्त्विक रचनाएं

मणिकर्णिका

अहा! संसार का भी कैसा स्वरूप है और नित्य यह कुछ से कुछ हुआ जाता है, पर लोग इस को नहीं समझते और इसी में मग्न रहते हैं। जहां लाखों रुपये के बड़े बड़े और दृढ़ मन्दिर बने थे वहां अब कुछ भी नहीं है और जो लाखों रुपए अपने हाथ से उपार्जन व्यय करते थे उन के वंशवाले भीख मांगते फिरते हैं नित्य नए नए स्थान बनते जाते हैं वैसे ही नए नए लोग होते जाते हैं।

यह मणिकर्णिका तीर्थ सब स्थानों में प्रसिद्ध है और हिन्दूधर्म्मवालों को इस का आग्रह सर्व्वदा से रहा है। इसी कारण जो बड़े बड़े राजा हुए उन सबों ने इस स्थान पर कीर्त्ति करनी चाही और एक के नाम को मिटा कर दूसरा अपना नाम करता रहा। इस स्थान पर तीर्थ दो हैं, एक तो गंगाजी दूसरा चक्रपुष्करिणी तीर्थ और इन दोनों पर लोगों की सदा दृष्टि रही। घाट के नीचे ब्रह्मनाल और नीलकंठ तक अनेक घाटों के बनने के चिन्ह मिलते हैं। थोड़े दिन हुए कि मणिकर्णिका पर एक पुराना छत्ता था जिस को लोग राजा कीचक का छत्ता कहते थे, पर न जानै यह कीचक किस वंश में और किस समय में उत्पन्न हुआ था। ऐसा ही राजा मान का एक जनाना घाट है जो गली की भांति ऊपर से पटा है, पर अब इस के ऊपर ब्रह्मनाल की सड़क चलती है। निश्चय है कि योंही घाटों के नीचे अनेक राजाओं के बनाए घाटों के चिन्ह मिलैंगे। हम आज कल में मणिकर्णिका पर से एक प्राचीन पत्थर उठा लाए हैं जिस्से उस समय का कुछ वृत्तान्त मिलता है। यह पत्थर सम्वत् 1359 तेरह सौ उन्सठ का लिखा है जो ईसवी सन 1302 के समय का होता है। इस के अक्षर प्राचीन काल के हैं और मात्रा पड़े हैं। पर शोच का विषय है कि पूरा नहीं है, कुछ भाग इस का टूट गया है, इस्से नाम का पता नहीं लगता कि किस राजा का है। जो कुछ वृत्त उस्से जाना गया वह यह है—"उक्त समय में क्षत्रिय राजा दो भाई बड़े विष्णुभक्त और ज्ञानवान हुए और इन की कीर्त्ति परम प्रगट थी, उन लोगों ने मणिकर्णिका घाट बनवाया। उस घाट के निर्माण का विस्तार वीरेश्वर से विश्वेश्वर तक था और मध्य में मणिकर्णिकेश्वर का बड़ा लम्बा चौड़ा और ऊंचा मन्दिर बनाया और बीच में बड़ी बड़ी वेदिका बनाई (वेदिका चबूतरे को कहते हैं) यह राजा बड़ा

गुणज्ञ था'' इत्यादि। इस्से निश्चय है कि उस की बनाई कोई वस्तु शेष नहीं रही। अब जो मणिकर्णिकेश्वर हैं वह एक गहिरे नीचे सङ्कीर्ण स्थान में हैं और विश्वेश्वर और वीरेश्वर भी नए नए स्थानों में हैं। ऐसा अनुमान होता है कि गङ्गाजी आगे ब्रह्मनाल की ओर बहुत दब के बहती थीं, क्योंकि अद्यापि वहां नीचे घाट मिलते हैं। निश्चय है कि इस राजा के पीछे भी अनेक बार घाट बने होंगे, परन्तु अब जो कुछ टूटा फूटा घाट बचा है वह अहल्याबाई साहब का बनाया है।

मणिकर्णिका कुंड की सीढ़ियां जो वर्त्तमान है वह दो सौ उनचास 249 वर्ष की बनी हुई हैं और इन को नारायणदास नामक वैश्य ने (जिस का पुकारने का नाम नरैनू था) बनवाई है यह सोमवंशी राजा बासुदेव का मन्त्री था और रावत इस के पिता का नाम था। यह बात इन श्लोकों से प्रगट होती है जो वहां एक पत्थर पर खुदे मिले हैं—

व्योमाष्टषट् चन्द्रमिते शुभेब्दौ मासे शुचौ विष्णुतिथौ शिवायां।
चकार नारायणदासगुप्तः सोपानमेतन्मणिकर्णिकायाः॥1॥
जातः क्षितौवासनुल्यतेजाः सोमान्यये भूपति बासुदेवाः
तस्यानुवर्त्ती मणिकणिंकायाश्चकार सोपान ततिर्नरेणुः॥2॥
वासुदेवाग्रसचिवो नरेणुरावतात्मजः।
चक्रपुष्करणी तीर्थ जीर्णोद्धारमचीकरत्॥3॥

काशी

मैं इस में काशी के तीन भाग का वर्णन करूंगा यथा प्रथम भाग में पंचक्रोश का, दूसरे में गोसाइयों के काल का, तीसरे कुछ अन्य स्फुट वर्णन। मैं पंचक्रोशी का वर्णन ऐसा नहीं करना चाहता कि जिसे देख कर लोग पंचक्रोशी की यात्रा करने चले जाएं वरंच मैं भगवान काल के उस परम प्रबल फेर फार रूपी शक्ति को दिखाता हूं जिससे धैर्य्यमानों का धैर्य्य और अज्ञानों का मोह बढ़ता है। आहा! उस की क्या महिमा है और कैसी अचिन्त्य शक्ति है? अतएव मैं मुक्त कंठ से कह सकता हूं कि ईश्वर भी काल का एक नामान्तर है। क्यौंकि इस संसार की उत्पत्ति प्रलय केवल इसी पर अंटकी है। जिस विजयी और विख्यात सिकन्दर ने संसार को जीता उस की अस्थि कहां गड़ी है और जिस कालिदास की कविता संसार पढ़ता है वह किस काल में और किस स्थान पर हुआ? यह किस का प्रभाव है कि अब उसका खोज भी नहीं मिलता? काल का अतएव यदि हम प्राचीनों से प्राचीन, नवीनों से नवीन, बलवानों से बलवान, उत्पत्ति, पालन, नाश कर्त्ता और सर्व्व तन्त्रष्वतन्त्रादि विशेषणों से विशिष्ट ईश्वर को काल ही का एक नामान्तर कहैं, तो क्या दोष है।

इस पंचक्रोशी के मार्ग और मन्दिर और सरोवरों में से दो सौ वा तीन सौ वर्ष से प्राचीन कोई चिन्ह नहीं है और इस बात का कोई निश्चायक नहीं कि पंचक्रोश का मार्ग यही है केवल एक कर्दमेश्वर का मन्दिर मात्र बहुत प्राचीन है और इस के बौद्धों के काल का वा इस के पीछे के काल का कहैं, तो अयोग्य न होगा। इस मन्दिर के अतिरिक्त और कोई प्राचीन चिन्ह नहीं, पर हां, पद पद पर पुराने बौद्ध वा जैन मूर्त्तिखंड, पूराने जैन मन्दिरों के शिखर, दासे, खम्भे और चौखटैं टूटी फटी पड़ी हैं। क्यौं भाई हिन्दुओ! काशी तो तुम्हारा तीर्थ न है? और तुम्हारा वेद मत तो परम प्राचीन है? तो अब क्यौं नहीं कोई चिन्ह दिखाते जिस से निश्चय हो कि काशी के मुख्य देव विश्वेश्वर और विन्दुमाधव यहां पर थे और यह उन का चिन्ह शेष है और इतना बड़ा काशी का क्षेत्र है और यह उस की सीमा और यह मार्ग है और यह पंचक्रोश के देवता हैं। बस इतना ही कहो भगवते कालाय नमः। हमारे गुरु राजा शिवप्रसाद तो लिखते हैं कि ''केवल काशी और कन्नौज में वेदधर्म्म बच

गया था'' पर मैं यह कैसे कहूं, वरंच यह कह सकता हूं कि काशी में सब नगरों से विशेष जैन मत था और यहीं के लोग दृढ़ जैनी थे, भवतु काल जो न करै सब आश्चर्य्य है। क्या यह सम्भावना नहीं हो सकता कि प्राचीन काल में जो हिन्दुओं की मूत्तियां और मन्दिर थे उन्हीं में जैनों ने अपने काल में अपनी मूर्त्तियां बिठा दीं? क्यौं नहीं। केवल कुछ क्षण दिल्ली के सिंहासन पर एक हिन्दू बनिया बैठ गया था उतने ही समय में मसजिदों में हिन्दुओं ने सिन्दूर के भैरव बना दिए और कुरान पढ़ने की चौकियों पर व्यासों ने कथा बांची, तो यह क्या असम्भावित है।

कर्दमेश्वर का मन्दिर बहुत ही प्राचीन है और उस के शिखर पर बहुत से चित्र बने हैं जिन में कई एक तो हिन्दुओं के देवताओं के हैं, पर अनेक ऐसे विचित्र देव और देवी बनी हैं जिस का ध्यान हिन्दू शास्त्र में कहीं नहीं मिलता अतएव कर्दमेश्वर महादेवजी का राज्य उस मन्दिर पर कब से हुआ यह निश्चय नहीं और पलथी मारे हुए जो कर्दमजी की श्रीमूर्त्ति है वह तो निस्सन्देह.........कुछ और ही है और इस के निश्चय के हेतु उस मन्दिर के आसपास के जैन खंड प्रमाण हैं और उसी गांव में आगे कूप के पास दाहिने हाथ एक चौतरा है। उस पर वैसी ही ठीक किसी जैनाचार्य्य के मूर्त्ति पलथी मारे खंडित रक्खी है देख लीजिए और उसके लम्बे कान उस का जैनत्व प्रमाण करते हैं। अब कहिए वह तो कर्दम ऋषि हैं ये कौन हैं कपिलदेवजी हैं? ऐसे ही पंचक्रोशी के सारे मार्ग में वरंच काशी के आसपास के अनेक गांव में सुन्दर सुन्दर शिल्पविद्या से विरचित जैन खंड पृथ्वी के नीचे और ऊपर पड़े हैं। कर्दमेश्वर का सरोवर श्रीमती रानी भवानी का बनाया है और उस पर यह श्लोक लिखा है—

शाके गोत्रतुरंभूपतिमिते श्रीमत्‌भवानीनृपा
गौड़ाख्यानमहीमहेन्द्रवनिता निष्कर्द्दमं कार्द्दमं।
कुंडं ग्रावसुखंडमंडिततटं काश्यां व्यधादादरात्‌
श्रीतारातनया पुरांतकपर प्रीत्यै विमुक्तै नृणां॥

अर्थ—शाके 1677 में अपनी कन्या श्रीतारा देवी के स्मरणार्थ यह कर्दम कुंड बंगाले की महारानी श्रीभवानी ने बनाया। इन महारानी की कीर्त्ति ऐसी ही सब स्थानों में उज्ज्वल और प्रसिद्ध है और राजा चन्द्रनाथ राय (उन के प्रपौत्र) मानो उस पुन्य के फल हैं। भीमचंडी के मार्ग में भी ऐसे ही अनेक चिन्ह हैं और भद्राक्षी नामक ग्राम में एक बड़ा पुराना कोट उलटा हुआ पड़ा है और पंचक्रोशी करानेवाले उसके नीचे उसी के ईंटों से छोटे छोटे घर बनाते हैं और इस में पुन्य समझते हैं। सम्भावना है कि यहां कोई छोटी राजसी रही हो, क्योंकि काशी के चारों ओर ऐसी छोटी छोटी कई राजसियां थीं जैसा आशापुर। काशीखंड में आशापुर को एक बड़ा नगर करके लिखा है पर अब तो गांव मात्र बच गया है। भीमचंडी का कुंड भी श्रीमती रानी भवानी का बनाया है और उस में यह श्लोक लिखा हुआ है—

शाके कालाद्रिभूपे गतविलकमलं गौड़राजेन्द्रपत्नी
गन्धर्व्वामभोधिम्म्भोनिधिसमखननं स्वर्गसोपानजुष्टं।
चक्रे राज्ञी भवानी सुकृतिमतिकृतिर्भीमचंडी सकोशे
काश्यामस्यास्सुकीर्त्तिस्सुर पतिसमितौगीयतेनारदाद्यैः॥

अर्थात शाके 1676 में रानी भवानी ने यह सरोवर बनाया तो इस लेख से 118 का प्राचीन यह सरोवर है। इस से प्राचीन भी कुछ चिन्ह हैं, पर अत्यन्त प्राचीन नहीं। देहली विनायक जो मुख्य काशी की सीमा हैं वही ठीक नहीं हैं, क्यौंकि वहां कोई भी प्राचीन चिन्ह शेष नहीं है। वहां के मन्दिर और सरोवर सब एक नागर के बनाए हुए हैं जिसे अभी केवल सत्तर अस्सी बरस हुए। पर इतने ही समय में वह बहुत टूट गए हैं। काशी के कतिपय पंडित कहते हैं कि प्राचीन देहली विनायक वहां से कोसों दूर हैं। अतएव पंचक्रोशी का प्रचलित मार्ग ही अशुद्ध है और यह सम्भावना भी है, क्यौंकि सिन्धुसागर तीर्थ का बहुत सा भाग इस मार्ग में बाम भाग पड़ता है, पर प्राचीन मार्ग की सड़क खेतवालों ने सम्पूर्ण नष्ट कर डाली। रामेश्वर में श्री रानी भवानी की धर्म्मशाला और उद्यान है, परन्तु रामेश्वर के कोस भर उधर बीच मार्ग ही में एक बड़ा प्राचीन मन्दिर खंड पड़ा है। बीच में शिवपुर एक विश्राम है और वहां पांचों पांडव हैं, परन्तु यह विश्राम इत्यादि कोई काशीखंड लिखित नहीं है। सब साहो गोपाल दास के भाई भवानी दास साहो के बनाए हुए हैं और सब वह एक ऐसा विश्राम हो गया है कि सब काशी के बन्धु वहीं पंचक्रोशी वालों से मिलने जाते हैं। कपिलधारा मानों जैनों की राजधानी है। कारण ऐसा अनुमान होता है कि प्राचीन काल में काशी उधर ही बसती थी, क्यौंकि सारनाथ वहां से पास ही है और मैं वहां से कई जैन मूर्त्ति के सिर उठा लाया हूं। ऐसी भी जनश्रुति है कि महादेवभट्ट नामक कोई ब्राह्मण था, उसी ने पंचक्रोशी का उद्धार किया है।

मुझे शिव मूर्त्ति अनेक प्रकार की मिली हैं (1) पंचमुख दशभुज, (2) एक मुख द्विभुज, (3) एक मुख चतुर्भुज, (4) पद्मपर से पैर लटकाए हुए बैठे और पार्वती गोद में बैठी, (5) पालथी मारे, (6) पार्वती को आलिंगन किए हुए इत्यादि तो इस अनेक प्रकार की शिव मूर्त्तियों की प्राप्ति से शंका होती है कि आगे लिंग पूजन का आग्रह नहीं था।

काशी में किसी समय में दश नामी गोसाइयों का बड़ा प्राबल्य था और इन महात्माओं ने अनेक कोटि मुद्रा पृथ्वी के नीचे दबा रक्खी है अतएव अनेक ताम्र पत्र पर बीजक लिखे हुए मिलते हैं, पर वे द्रव्य कहां हैं इस्का पता नहीं। इन गोसाइयों ने अनेक बड़े बड़े मठ बनवाए थे और वे सब ऐसे दृढ़ बने हैं कि कभी हिल भी नहीं सकते। इन गोसाइयों में पीछे मद्यपान की चाल फैली और इसी से इनका तेजोनाश हुआ और परस्पर की उन्मत्तता और अदालत की कृपा से इन का सब धन नाश

हो गया, पर अद्यापि वे बड़े बड़े मठ खड़े हैं। इन गोसाइयों के समय में भैरव की पूजा विशेष फैली थी। कालिज में एक विस्तीर्ण पत्थर पड़ा है उस पर एक गोसाइयों के बनाए मठ और शिवाले और उस की विभूति का सविस्तर वर्णन है मैं उस को ज्यौं का त्यौं आगे प्रकाश करूंगा जिस से वह समय स्पष्ट हो जाएगा।

यहां जिस मुहल्ले में मैं रहता हूं उस के एक भाग का नाम चौखम्भा है। इस का कारण यह है कि वहां एक मसजिद कई सौ बरस की परम प्राचीन है। उस का कुतबा कालबल से नाश हो गया है पर लोग अनुमान करते हैं कि 664 बरस की बनी है और मसजिदे चिहल सुतून, यही उस की 'तारीख' पर यह दृढ़ प्रमाणीभूत नहीं है। इस मसजिद में गोल गोल एक पंक्ति में पुराने चाल के चार खम्भे बने हैं अतएव यह नाम प्रसिद्ध हो गया है। यही व्यवस्था ढाई कनगूरे के मसजिद की है, यह मसजिद भी बड़ी पुरानी है। अनुमान होता है कि मुगलों के काल के पूर्व्व की है। इस की निर्मिति का काल में 1059 ई. बतलाते हैं। इस से निश्चय होता है कि इस मुहल्ले में आगे अब सा हिन्दुओं का प्राबल्य नहीं था, पर यह मुहल्ला प्राचीन समय से बसा है।

मैं जो अनेक स्थलों पर लिखा है कि जैन मूर्त्ति बहुत मिलती हैं इस से यह निश्चय नहीं कि काशी में जैन के पूर्व्व हिन्दु धर्म्म नहीं था, क्योंकि जैन काल से पूर्व्व की और समकाल की हिन्दुओं की अनेक मूर्त्ति अद्यापि उपलब्ध होती हैं। कॉलिज में एक प्रस्तर खंड पड़ा है और उस की लिपि परम प्राचीन है। पंडित शीतलाप्रसादजी का अनुमान है कि यह लिपि पाली के भी पूर्व की है। इस पत्थर पर एक काली के मन्दिर की प्रतिष्ठा का समाचार है और इस का काल अनेक सहस्र वर्ष पूर्व्व है और उस में ये श्लोक लिखे हैं–

1

ख्याता वाराणसीय त्रिभुवनभवने भोगचौरीति दूरात् ।
सेवन्ते यां विरक्ताः जननमरणयो मोक्षमक्षैकरक्ता।।

2

यत्र देवोऽविमुक्तः यो हृष्ठ्या ब्रह्माहाऽपि च्युतकलिकलुषो जायते शुद्धभावः
अस्यामुत्तुङ्गशृङ्गस्फुटशशि किरिणा।।

3

प्रतुलिविविधजनपदस्त्रीविलासाऽभिरामं विद्या वेदान्ततत्त्वव्रतजपनियमव्य
ग्रच्चन्द्राभिजुष्टं।। श्रीमत्स्थान सुसेव्य।।

4

तत्राऽभूत् सार्थनामा शिशुरपि विनयव्यापदो भद्रमूर्त्तिः त्यागी धीरः कृतज्ञः परिलघविभवोप्यात्मवृत्याभिजीवी।

5

वर्णा चंडनरोत्तमांगरचितव्यालम्बिमालोत्कटा।
सर्प्यत्सर्प्पविवेष्टिताङ्गरपशुव्याविद्धशुष्कामिषा लीला नृत्यरुचिपिंलोत्प

6

यस्यापि न तस्य तुष्टिरभवत् यावत् भवानीग्रहं शुशिलष्टाऽमलसन्धि वन्धघटितं घंटानिनादोज्ज्वलं। रम्यं दृष्टिहरं शिलोच्च्याय॥
ध्वज चामरं सुकृति नाश्रेयोऽर्थिना कारितं

इस लेख के उपसंहार काल में मणिकर्णिका घाट का अवशिष्ट वर्णन करता हूं। अब जो साम्प्रत घाट वर्तमान है वह अहल्याबाई का बनवाया हुआ है और दो बड़े बड़े शिवालय भी घाट की सीमा पर उन्हीं के बनाए हैं और उन पर ये श्लोक लिखे हैं।

श्रीमान् होलकरोपाख्यख्यातो राजन्यदर्प्पहा।
मल्लारिरावनामाऽभूत् खंडेरावस्तु तत्सुतः॥1॥
विलासी गुणकल्पद्रुः शूरो वीराभिसम्मतः।
तत्पत्नी पुण्यचरिता कुलद्वयविभूषणं॥2॥
अहल्याख्या तया ख्याता तृषु लोकेषु कीर्तये।
वद्धोघट्टस्सुसोपानो मणिकर्ण्यास्सुविस्तृतः॥3॥
तत्पार्श्वयोर्विधायेमौ प्रासादावुन्नतौ पृथक्।
तयोः पश्चिमदिकसंस्थे स्थापितो गौतमेश्वरः॥4॥
प्राक् संस्थे तारकेशांक अहल्योद्वारकेश्वरः।
स्थापितो वसुवेदैह विधुसम्मतवैक्रमे॥5॥
रामेन्दूदधि भूयुक्ते शालिवाहनजेशके।
राधशुक्लद्वितीयायां गुरौ दुंदुभिवत्सरे॥6॥
घट्टोत्सर्गः सुसम्पन्नः यजमान्यभ्यनुज्ञयया।
स्वामिकार्यहितैकेच्छु जीवाजीशर्म्म हस्ततः॥7॥

(शाके 1713)

काशी में बिन्दुमाधव घाट सम्वत् 1792 में श्री छत्रपति महाराज के पन्त प्रतिनिधि परशुराम के पुत्र श्री श्री निवास की स्त्री श्रीमती राधाबाई ने बनवाया है और ऐसा

अनुमान होता है जब यह घाट नहीं बना था तभी से इस का नाम नरसिंह दाढ़ा था, क्यौंकि नरसिंह दाढ़े का नाम उस श्लोक में पड़ा है जो बाई साहब के काल का बना है। निश्चय है कि नरसिंह दाढ़ा के नाम से लोग सोचैंगे कि यह कौन वस्तु है, परन्तु मैं इतना ही कह सकता हूं कि वह नरसिंह दाढ़ा एक पत्थर का केवल मुख का आकार है जो रामानन्द की मढ़ी में हनुमानजी की बाईं ओर दीवार में लगा है और जब वहां तक पानी चढ़ता है तब इन्द्रदमन का नहान लगता है। ऐसा अनुमान होता है कि यह इसी नाप के हेतु बनाया हो वा यह किसी पुरानी मूर्त्ति का मुंह है जो नरसिंहजी के मुंह के नाम से पूजता है। पर कोई कहते हैं कि वह रामानन्द गोसाईं का मुंह है। जो हो, मुंह तो गोल पुराना मुछमुंडा सा है।

यही श्लोक वहां खुदा है—

स्वस्ति श्री विक्रमार्केद्विवननगरधरासंमिते 1792 क्रोधनाद्वे।
मासीषे शुक्लके दिक्तिथिहरिभयुतेचान्हिविश्वेशतुष्ट्यै॥
श्रीशाहोः श्रीनिवासः प्रतिनिधिपदगः पर्शुरामात्मजस्त।
ज्जायाराधाकृतोयं जयतिनृहरिदंष्ट्राख्यघट्टः सुबद्धः॥1॥
प्रत्यन्तरमिदं ऊर्ध्व श्लोकस्यद्वारिदीपवत्।
अकारिबालकृष्णेन स्वामिकार्यनिरूपकं॥2॥

तथा काशी में जो वृद्धकाल महादेव का मन्दिर है वह भी किसी छत्रपति के आश्रितों में मेघश्याम के पुत्र चाविक उपनामक देवराज ने बनाया है और एक तो कालेश्वर के लिंग का जीर्णोद्धार किया और अपने नाम देवराजेश्वर एक शिव और बैठाया है जो इन श्लोकों से प्रगट है—

अब्देत्वीश्वरसंज्ञके शुभदिने संस्थाप्य कालेश्वरं।
प्राचीनं प्रणतार्तिभंजनपरं श्रीदेवराजेश्वरं॥
शाहूछत्रपतेः कृपालुवशगः श्रीदेवरोयः स्वयं।
मेघश्यामसुतः शिवालयमहो काश्यामबध्नात्ध्रुवं॥1॥
श्रीमत्प्रौढ़प्रतापप्रगटितयशसः शाहुभूपालकस्य।
प्राज्ञस्याज्ञानुकारिद्विजहितविहितश्चाविकोदेवरायः।
धात्रब्देमोरभट्टानुमितमुपवनं गेहशालाविशालं।
काश्यांविश्वेश्वरस्यत्रिजगदधनुषः प्रीतयेनिर्निमाय॥2॥

पापभक्षेश्वर भैरव का मन्दिर भी बाजीराव का बनाया है। जो हो, अब काशी में जितने मन्दिर वा घाट हैं उन में आधे से विशेष इन महाराष्ट्रों के बनाए हुए हैं।

नागमंगला का दानपत्र

श्रीरङ्गपट्टन से 15 कोस उत्तर नागमंगल शहर में एक मन्दिर है। वहां पर निम्नलिखित लेख 6 ताम्रपत्रों पर खोदा हुआ मिला है जो कि एक मोटे धातु के कड़े से वेधित हैं, ये पत्रे 10 इंच लम्बे और 5 इंच चौड़े हैं।

इस लेख से ज्ञात होता है कि पृथिवी निगुड़ राजा की स्त्री कुन्देवी जो पल्लवाधिराज की पोती थी उस ने शके 699 में एक जैन मन्दिर स्थापित किया था। इसी के सहायता के कारण उस के पति को विजय स्कन्धावार के महाराज पृथिवी कोगणि से उस के राज्यप्राप्ति के पचास बरस बाद प्रार्थना करने पर यह दानपत्र मिला था।

मर्कए के पत्रों के लेख से मिलता हुआ कुछ कोएगू राजाओं का वृत्तान्त इस लेख के पूर्व्व में है, जो सन 466 से आरम्भ होता है। इन लेखों में केवल इतना ही अन्तर है कि इस में प्रथम महाराज का नाम कोड़गणी वर्म्म धर्म्म महाधिराज और छठें का कोगणी महाधिराज लिखा है और केवल दानकर्त्ता को कौण्गणी लिखा है। इस शब्द के भिन्न भिन्न प्रकार के लिखे जाने से कुछ प्रयोजन नहीं केवल इस से यह सूचना होती है कि कुर्ग में जो एक पत्थर पर खुदा लेख निकाला था और जिस को सत्यवाक्य कोड़गिणी वर्म्म धर्म्म महाराजाधिराज ने सन 840 में लिखा था उस में भी इसी शब्द कोणगणी ही का अपभ्रंश है और इस को कभी कभी कोडगू भी लिखते थे जो कि कोड़ागू से बहुत मिलता है। यह कोड़ागू उस देश का प्रचलित नाम है जिसको अंग्रेज़ लोग कुर्ग लिखते हैं।

मर्करा के लेख के सदृश इस से भी ज्ञात होता है कि दूसरे माधव और कदम्ब राजाओं में सम्बन्ध भया था अर्थात् पूर्वोक्त ने दूसरे की भगिनी से विवाह किया था, इस में विष्णु गोप के पुत्र गोद लेने और डिंडिकरराय के राज्य का कुछ भी वर्णन नहीं है। इस समय से लेकर भूविक्रम के राज्य तक जिसने सन 521 में राज्यसिंहासन को सुशोभित किया दानपत्र और राज्य इतिहास दोनों में राजाओं की नामावली सम्पूर्ण मिलती है। इस के पश्चात् विलंड जिसका शुद्ध नाम राजा श्रीवल्लभाख्य था उस को इतिहास में वर्त्तमान राजा का भाई लिखा है (प्रोफेसर डाउसन के अनुसार छोटा भाई और टेलर के अनुसार बड़ा)। यथार्थ में वह राजा और राज्यप्रबन्ध का कार्य्य सम्पादक दोनों था। दानपत्र में छोटे भाई का नाम नवकाम लिखा है। कोगणीमहाराज सीमेश्वर

का वृत्तान्त जिस का शुद्ध नाम डाउसन शिवग महाराय टेलर शिवरामराय बताते हैं पीछे लिखा है। इतिहास में तो यों है कि इस का पौत्र पृथ्वी कोणगणी महाधिराज था, जो सन 746 में राज्य सिंहासन पर था। यही नाम दानकर्त्ता का है और यदि भीमकोप और राजाकेसरी इसी राजा के नामान्तर मान लिए जाएं जैसा कि सम्भव होता है तो इतिहास और उन पत्र का वृत्तान्त एक मिल जाता है—

(1) स्वस्ति जितं भगवता गतघनगगनाभेन पद्मनाभेन श्रीमज्जान्हवेकुलामलव्योमावभासनभास्करः स्वखड्गैकप्रहारखंडितमहाशिलास्तम्भलब्धबलपराक्रमोदारणारिगणविदारणोपलब्धवारणविभूषणविभूषितः काण्यायनसगोत्रश् श्रीमत्कोदग्निवर्माधर्ममहाधिराजः तस्य पुत्रः पितुरन्वागतगुणयुक्तो विद्याविनयविहितवृत्तः सम्यक्प्रजापालनमात्राधिगतराज्यप्रयोजनो विद्वत्कविकांचननिकषोपलभूतो नीतिशास्त्रस्य वक्तृप्रयोक्तृकुशलो दत्तकसूत्रबृत्तेः प्रणेता श्रीमान्मामहाधिराजः तत्पुत्रः पितृपैतामहगुणयुक्तोअनेकचतुर्दन्तयुद्धावाप्तचतुरुदधिसलिलास्यादितयशाः श्रीमद्धरिवर्मामहाधिराजः, तत्पुत्रो द्विजगुरुदेवतापूजनपरो (2) नारायणचरणानुध्यातः श्रीमान्विष्णुगोपमहाधिराजः तत्पुत्रो त्र्यंबकचरणाम्भोरुहराजपवित्रीकृतोत्तमाङ्गः स्वभुजबलपराक्रमक्रयकृतराज्यः कलियुगबलपंकावसन्नधर्मवृषोद्धरणनित्यसन्नद्धः श्रीमान्माधवमहाधिराजः तत्पुत्रश् श्रीमत्कदम्बकुलगगभक्तिमालिनः कृष्णवर्ममहाधिराजस्य प्रियभागिनेयो विद्याविनयातिशयपरिपूरितान्तरात्मा निरवग्रहप्रधानशौर्यो विद्वत्सु प्रथमगण्यः श्रीमान् कोगणिमहाधिराजः अविनतनामा तत्पुत्रो विंजृभमाणशक्तित्रय ‘अंदरिह’ ‘अलत्तुप’ ‘पौरुलाले’ पेलंगराज्यानेकसमरमुखमखहुतंशूरपुरुष पशूपहार विधसविहस्ती कृतकृतान्ताग्गिनमुखगगगगःग किरातार्जुनीयपंचदश सर्गा (3) दिकोंकारो दुव्विनतीतनामधेयः तस्य पुत्रो दुर्दान्तविमर्द्दमिमृमितविश्वम्भरादिपंचालिमालामकरन्दपुंजपिंजरीक्रीयमाणचरणयुगलनलिनोमुक्षरनामनामधेयः तस्य पुत्रश्चतुर्दशविद्यास्थानाधिगतविमलमतिः विशेषतो नवकोशस्य नीतिशास्त्रस्य वक्तृप्रयोक्तृकुशलो रिपुतिमिरनिकरनिराकरणोदयभास्करः श्रीविक्रमप्रथितनामधेयः तस्य पुत्रः अनेकसमरसम्पादितविजृंभितद्विरदरदन- कुलिशघातब्रणसमरुद्धस्वास्थ्यद विजयलक्षणलक्षी कृतविशालवक्षस्थलः समधिगतसकलशास्त्राधितत्त्वः समाराधितत्रिवर्गो निरवद्यचरितप्रतिदिनवर्द्धमानप्रभावो भुविक्रमनामधेयः अपि च॥

नानाहेतिप्रहारप्रतिहतसुभटारामवाटोत्थितासृग् ।
भारास्वादामृताशक्षुधितपरिसरद्गृध्रसंरुद्धसीमे॥
सामन्तान्पल्लवेन्द्रान्नरपतिमजयद्योबिलन्दाभिधाने ।
राज्याश्रीवल्लभाख्यः समरशतजयावाप्तलक्ष्मीविलासः॥
तस्यानुजो नतनरेन्द्रकिरीटकोटिरत्नार्कदीधितिविराजितपादपद्मः ।
लक्ष्म्याः स्वयं वृतपतिर्नवकामनामाशिष्टप्रियोरिगणदारणगीतकीर्त्तिः॥

तस्य कोगणिमहाराजस्य सीमेश्वरापरनामधेयस्य पौत्रः समवनतस-मस्तसामन्तमुकुटतटघटितबहुबलरत्नविलसदमरधनुष्काण्डमंडितचरणनखमंडलो नारायणे निहितभक्तिः शूरपुरुषतुरगनवारणघटा संघदृदारुणसमरशिरसिनिहितात्मकोपो भीमकोपः प्रकटरतिसमय समनुवर्तनचतुरयुवतिजनलोकधूर्तो लोकधूर्तः सुदुर्धरानेकयुद्धमूर्धन्य लब्धविजयम्पदहितगजघटां (5) तकेसरीराजकेसरी अपि च॥

यो गंगान्वयनिर्मलांलंरतलव्याभासनप्रोल्लसन।
मार्तंडोरिभयंकरः शुभकरः संमार्गरक्षाकरः॥
सौराज्यं समुपेत्यराज्यसविताराजन्यतारोत्तमो।
राजा श्रीपुरुषेश्वरो विजयते राजन्यचूड़ामणिः॥
कामः रामः सचापे दशरथतनयो विक्रमे जामदग्न्यः।
प्राज्ये वीर्ये बलारिर्बहुमहसिरविः स्वप्रभुत्वेधनेशः॥
भूयोविख्यातशक्तिः स्फुटतरमखिलप्राणभाजांविधाता।
धात्राश्लिष्टः प्रजानांपतिरितिकवयोयंप्रशंसन्तिनित्यम्॥

तेन प्रतिदिनप्रवृत्तमहादानजनितपुण्याहघोषमुखरितमन्दिरोदारेण श्रीपुरुषप्रथमनाममधेयेन पृथ्वीकोंगणिमृहाराजेन, अष्टानवत्युत्तरषट्च्छ तेषु शकवर्षेष्वार्तितेष्वात्मनः प्रवर्द्धमानविजयवीर्य संवत्सरेपंचाशत्तमेवर्द्धमाने मान्यपुरमधिवसति विजयस्कंदावारे श्रीमूलमूलशरणाभिनंदितनंदिसंगान्वयइऋगित्तरंनाम्निगने मूलिकलगछे स्वच्छतरगुणाकरकीरप्रततिप्रल्हादितसकललोकः चन्द्रइवापरः चन्द्रनन्दिनामगुरुरस्ति तस्य शिष्यः समस्तविवुधलोकपरिरक्षणक्षमात्मशक्तिः परमेश्वरलालनीयमहिमा कुमारवद्द्वितीयः कुमारनन्दिनामा मुनिपतिरभवत् तस्यांतेवासी समधिगतसकलतत्त्वार्थ समपितबुधसार्द्धसम्पत्सम्पादितकीर्तिः कीर्तिनंद्याचार्यो नामा महामुनिः समजनि, तस्य प्रियशिष्यः शिष्यजनकमलाकरप्रबोधजनकः मिथ्याज्ञानसंततसनुतससन्मानात्मक- सद्धर्मव्योमावभासनभास्करोविमलचन्द्राचार्यः समुदपादि, तस्य महर्षेर्धर्मोपदेशन याश्रीमद्बाणकलकलः सर्वतपोमहानदीप्रवाहः वाहुदंडमंडलाखंडितारिमंडलद्रुमशुंडा डुंडुप्रथमनामधेयो निर्गुंडयुवराजो जज्ञे, तस्य प्रियात्मजः आत्मजनितन यविषनिः शेषीकृतरिपुलोकः लोकहितः मधुरमनोहरचरितः चरितार्तत्रिकर्णप्रवृत्तिः परमगुणप्रथमद्येयः श्रीपृथ्वीनिर्गुंडराजोऽजायत पक्कवाधिराजः प्रियतमजायां सगरकुलतिलकात् मरुवर्मणो जातांकुंडाधिनामधेयामुवाह भर्तृभावनाविर्भुवयातया संततप्रवर्तितधर्मकार्ययानिर्मिताय श्रीपुरोत्तरदिशामलं कुर्बतेलोभतिलकधाम्नेजिनभवनाय खंडस्फुटितनवसंस्कारदेव- पूजादानधर्मप्रवर्तनार्थं तस्य एव पृथ्वी निर्गुंडराजस्य विज्ञापनया महाराजाधिराजपरमेश्वर श्रीजसहितदेवेन निर्गुंडविषयान्तःपाति पोन्नालिनामाग्रामः सर्वपरिहारोपेदत्तः तस्य सीमां तराणि पूर्वस्यांदिशि नोलिबेलदा वेगलेमालदि, पूर्वदक्षिणभ्यांदिशिपाण्यंगेरि, दक्षिणस्यांदिशि वेडगली गेरयादिल गेरयापल्लादकुदल, दक्षिणपश्चिमायांदिशिजयद शकेय्यावेडगलमोलादुत्तरपश्चिमायांदिशि

हेनके वित्तालतुवाजराकेलि, पश्चिमोत्तरस्यांदिशि पुणुसेयगोट्टगालाकालकुप्ये, उत्तरस्यांदिशि सामगेडेयपल्लदाह पेरमुडिक्केउत्तरपूर्वस्यांदिशि कलाम्बेत्यगद्द, ईशान्यामन्यादिक्षेत्राणिदत्तानि इुंडुसमुद्रदावयुलुलकिलुदाडामेगेपदिर-क्कंडुगंमणामपालेयरेनल्लु राजारपाक्र्कटटक्कंडुगं श्रीवरद-इुंडुगामंडरातांडडापडुययांडुतांडु श्रीवरदावयलुल्लकम्मरगत्तिनल्लिरिकंडुगं कालानिपेरगिलयकेडगेआरमंडुगं रेपूलिगिलेयाकोयेलगोदायददं इरुपत्तुगुंडुगं भेद्य अदुबुश्रीवरवा बडगणापदुवणाकोनुणन् देवंगेशीमदपं एद्दिदं मूवन्ताद्बिन्दुमनेतानं अस्य दानस्य साक्षिणः अष्टादशप्रकृतयः अस्य दानस्य साक्षिणः षराणवति सहस्रविषयप्रकृतयः योऽस्यापहर्ता लोभान्मोहात्प्रमादेन वा सपंचभिर्महद्भिः पातकैः संयुक्तो भवति यो क्षति सपुण्यभाग् भवति अपि चात्रमनुगीताः श्लोकाः।

स्वदातुं सुमहच्छक्यं दुःखमन्न्यस्य पालनं।
दानं वा पालनं वेति दानाच्छेयोऽनुपालनं॥
देवस्वं तु विषं घोरं न विषं विषमुच्यते।
विषमेकाकिनं हन्ति देवस्वं पुत्रपौत्रकौ॥

सर्वकलाधारभूतचित्रकलाभिज्ञेन विश्वकर्माचार्येणेदं शासनं लिखितं चतुष्कंडुकब्रीहिवीजमात्रं द्विकंडुककंगुक्षेत्रं तदपि ब्रह्मदेयमिव रक्षणीयं।

शिवपुर का द्रौपदी कुंड

यह बात प्रसिद्ध है कि शिवपुर काशी की पंचक्रोशी में कोई तीर्थ नहीं केवल लोगों के वहां टिकते टिकते वह टिकान हो गई है और देवता बिठा दिए गए हैं। पर अब की द्रौपदी कुंड में एक पत्थर के देखने से ज्ञात हुआ कि यह प्राचीन तीर्थ है और तीन सौ बरस पहिले भी यहां पांडवों का मन्दिर था। वरंच 'सुकृति कृति हितैषी' पद जो उस में राजा टोडरमल का विशेषण दिया है उस से ज्ञात होता है कि उन्होंने भी किसी के बनाए हुए कुंड का जीर्णोद्धार किया है इस से उस की और भी प्राचीनता सिद्ध होती है। यह बावली राजा टोडमरल ने सं. 1646 में बनवाई थी और 'पांडव मंडपे' इस पद से स्पष्ट है कि वहां उस काल में पांडवों का मन्दिर था। इस का पहिला श्लोक नहीं पढ़ा गया बाकी के तीन श्लोक पाठकों के विनोदार्थ यहां प्रकाशित होते हैं—

प्रत्यर्थिक्षितिपालकालनसु..........ने दूतिका।
मुद्राङ्क प्रकटप्रतापतपनप्रोद्भासिताशामुखे॥1॥
क्षोणीशेकवरे प्रशासति महीं तस्मिन् नृपालावलिस्फूर्जन्मौ-
लिमरीचिवीचिरुचिरोदञ्चत्पदाम्भोरुहे॥2॥
तद्राज्यैकधुरन्धरस्य वसुधा साम्राज्यदीक्षागुरोः।
श्रीमद्दंडनवंशमंडनमणेः श्रीटोडरक्ष्मापतेः।
धर्मौधैकविधौ समाहितमतेरादेशतोऽचीकर-
द्वापीं पांडवमंडपे..........वनो गोविन्ददासः सुधीः॥3॥
ऋतुनिगमरसात्मासम्मिते 1646 बत्सरेशे
सुकृतिकृतिहितैषी टोडरक्षोणिपालः।
विहितविविधपूर्त्तोऽचीकरच्चारु वापीम्
विमलसलिलसारां बद्धसोपान पंक्तिम्॥4॥

प्राचीनकाल का सम्वत् निर्णय

माधवाचार्य्य लिखित किसी की टीका से राजावली ग्रन्थ से उद्धृत।

यह राजावली ग्रन्थ किसी ज्योतिषी ने सं. 1816 में बनाया है। इस में सम्वत्सर, प्रतिपदा के विधान और कालादिक का अनेक निर्णय किया है और फिर कलियुग के राजाओं का और अन्य युग के राजाओं का नाम 'राजाधिराज माधवाचार्य्य टीकायामुक्तं' कह के उसने माधवाचार्य्य के किसी ग्रन्थ की टीका से उद्धृत किया है। यह सम्वत् और नामादिक प्राचीन इतिहास के उपयोग जान कर यहां प्रकाश किए जाते हैं।

सत्ययुग में—कृष्णावतार में अमरेश्वरलिंग, पुष्करतीर्थ, बौद्धपत्तनपीठ। राजकृतसंज्ञ कृतपुत्र कृतदेव त्यागी मेन, मुचकुन्द, भैरवनन्द, अन्धक, हिरण्यकशिपु, प्रह्लाद, विरोचन, बलि, बाणासुर, गमासुर, कपिलभद्र, निर्घोषा, मान्धाता, वेणु। कश्यप, सूर्य्य, मनु, महामनु, तक्षक, अनुरंजन, विश्वावसु, विमना, प्रद्युम्न, धनंजय, महीदास, यौवनाश्व, मान्धाता, मुचकुन्द, पुरूरवा, बलि, सुकान्ति, वीर।

त्रेता में—नैमिषारण्य तीर्थ, सोमेश्वर लिङ्ग, जालन्धर पीठ, राजाकद्रू, पुरुरवा, प्रोषध, वेण्य, नेषद्य, त्रिशृङ्ग, मरीचि, इक्षु, मनु, दिलीप, रघु, त्रिशंकु, हरिश्चन्द्र, रोहिताश्व, धुन्धुसार, जन्हु, सगर, भगीरथ, वेणु, वत्स, भूपाल, अज, अतिथि, नल, नील, नाभ, पुंडरीक, क्षेमक, शतधन्वा, शतानीक, पारिजातक, दलनाभ, पुष्पसेन, अजपाल, दशरथ, श्रीराम, लवकुश, अङ्गस्वामी, अग्निवर्ण।

द्वापर में—कुरुक्षेत्र तीर्थ। केदारेश्वलिंग। अवन्ती पत्तन। राजा—भर्तृहरि, पृथु, अनुविरक्त, अव्यक्त, फेन, इन्द्र, ब्रह्मा, अत्रि, सोम, बुध, धनुर्जय, शतनु, गव्य, गवाक्ष, असमञ्जस, निर्घोष, प्रजापति, अंकुर, उपवीर, अनुसन्धि, ज्येष्ठभरत, कनिष्ठभरत, धर्मध्वज, शान्तनु, पांडु, नरवाहन, क्षेमक, ययाति, क्षान्त, चित्र, पार्थ, अर्जुन, अभिमन्यु, परक्षित, जन्मेजय।

कलियुग में—गङ्गा तीर्थ कालीदेवता, प्रतिष्ठानपुरनगर। कल्किअवतार इस ने अलग तीन चाल पर यहां लिखा है और उन के परस्पर जन्मदिन, पिता माता के नामादिक सब अलग अलग हैं। कलियुग के आरम्भ से 3044 वर्ष के भीतर युधिष्ठिर,

परीक्षित, जन्मेजय, वत्सराज, क्षेमसिंह, सोमसिंह, राणकण्य, अम्बुसेन, रामभद्र, भरतसिंह, पठाणसिंह, विक्रमसिंह, नरसिंह, आदित्यसिंह, ब्रह्मासिंह, बसुधासिंह, हर्षसेन, भर्तृहरि। 3044 में विक्रम का राज्य, 3179 में शालिवाहन का राज्य, फिर सूर्य्य-सेन, शक्तिसिंह, खड्गसेन, सुखसिंह, मम्मलसेन, मुञ्ज भरत, श्रीपाल, जयानन्द, रामचन्द्र, छत्रचन्द्र, अनूपसिंह, तुम्बरपाल, ननश्चहाण, रणवादी, शालपाल, कीर्त्तिपाल, अनङ्गपाल, विशालाक्ष, सोमदेव, बलदेव, नागदेव, कीर्त्तिदेव, पृथ्वीपति इतने प्रसिद्ध राजा हुए। फिर म्लेच्छों का राज्य आरम्भ हुआ। सिकन्दरशाह ने विश्वेश्वर का अपराध किया। इस के पीछे मुसलमानों का वर्णन है।

फिर कालनिर्णय यों किया है—व्यासादिक का काल 5154 वर्ष कलियुग लगने के पूर्व। श्री कृष्णावतार द्वापर की सन्ध्या प्रारम्भ, कलियुग के पूर्व क्यौंकि कलि का काल होते भी उसने प्राबल्य नहीं पाया था। क्षेमक तक युधिष्ठिर का वंश, सुमित्र तक इक्ष्वाकु का वंश और रिपुञ्जय तक जरासन्ध का वंश एक सहस्र वर्ष कलियुग बीते समाप्त हो चुका था। फिर 138 वर्ष प्रद्योतनों का राज्य गत कलि 1138 वर्ष। शिशुनाग वंश का राज्य 362 वर्ष ग. क. 1500 वर्ष। फिर शुद्ध क्षत्रियों का राज्य छूट कर नन्दादिकों का राज्य हुआ। नन्दों का राज्य 137 वर्ष ग. क. 1637 वर्ष। फिर कण्ववंश के राजा उनका राज्य 557 वर्ष ग. क. 2194 वर्ष। फिर आन्ध्रराजा का 456 वर्ष ग. क. 2650 वर्ष। फिर सात आभीर और दस गर्दलिभ राजों का राज्य 394 वर्ष ग. क. 3044 वर्ष। फिर विक्रमों का राज्य 135 वर्ष ग. क. 3129 वर्ष। अन्त के विक्रम को शालिवाहन ने मारा, फिर शालिवाहन वंश ने 155 वर्ष राज्य किया। शेष पुत्र के वंश ने 139, शक्तिकुमार के वंश ने 114, शूद्रक ने 95 और इन्दुकिरीटी ने 48। सब 437 वर्ष हुए। फिर 33 वर्ष तोमर, 34 वर्ष चिन्तामणि, 30 वर्ष राम और 36 वर्ष हेमाद्रि राजा ने राज्य किया। सब 133 वर्ष हुए। तब शक 570 था उसी के पीछे तुरुष्कलोगों का प्रवेश होने लगा। फिर भारतवंश के खंडराज हुए। फिर चालुक्य वंश ने 444 वर्ष, पल्लोमदत्त 55 वर्ष, गौड़राज 20, भिल्लराज 50 वर्ष राज्य तब शाके 1006 वर्ष कलि 4185। फिर यादवराजे 227 वर्ष तब शक 1233 वर्ष। इस वंश के देवगिरि के अन्तिम राजा रामदेव को शक 1217 में अलाउद्दीन ने जीत कर राज्य फेर दिया, रामदेव ने 56 वर्ष और राज्य किया फेर तुरकों का राज्य 334 वर्ष हुआ।

कन्नौज का दानपत्र

यह दानपत्र राजा गोविन्दचन्द्र कन्नौज के राजा का है जो दिल्ली के बादशाही खजाने से सिख लोग लाहोर लूट कर ले गए थे और अब श्री पंडित राधाकृष्ण चीफ पंडित लाहोर ने उस की एक प्रति हमारे पास भेजी है। इस राजवंश का पूर्व स्थापक गाहरवाला राजा था और करल्ल इस का अन्तिम राजकुमार हुआ। उसी वंश की एक शाखा महिआल में (वा महिआल का पुत्र) भोज हुआ जिस का काल 885 ईस्वी है। इन भोज और करल्ल की कीर्त्ति समाप्त होने के पीछे उसी वंश की शाखा में यशोविग्रह राजा हुआ उस का पुत्र महीचन्द्र, उस का पुत्र चन्द्रदेव, उस का पुत्र मदनपाल और उस मदनपाल का पुत्र गोविन्दचन्द्र था, जिस ने यह दान किया है। यह राजा ऐसा दानी था कि इस के दिए हुए गांवों के शतावधि दानपत्र मिले हैं। ये लोग वैष्णव वा वैष्णवों के अनुयायी थे, क्यौंकि इनके दानपत्रों पर गरुड़ का चिन्ह और गोविन्दचन्द्र की मोहर पांचजन्य शंख है। 'अकुंठोत्कुंठ' यह श्लोक प्रायः दानपत्रों पर है। यह दानपत्र सम्वत् 1182 में माघ वदी 6 शुक्रवार की ग्रीषमती (?) तीर्थ में गंगा में में स्नान कर के राजा गोविन्दचन्द्र ने गौतम गोत्र के गोतमाङ्गिरस मुदग्ल विप्रवर के ब्राह्मण ठक्कर अल्हन के पुत्र छीझठबाझठ दोनों भाइयों को हलद तालुके का गोंउली नाम गांव दिया है।

स्वस्ति–"अकुंठोत्कुंठबैकुंठकंठलुठत्करः। संरम्भः सुरतारम्भे सश्रियः श्रेयसेऽस्तुवः॥1॥ आसीदशीतद्युति वंशजातक्ष्मापालमालासुदिवङ्गतासु। साक्षाद्विवस्वानिवभरिधाम्ना नाम्ना यशोविग्रह इत्युदारः॥2॥ तत्सुतोऽभून्मही चन्द्रश्चन्द्रधामनिभंनिलम्। येनापारमकूपार पारेव्यापारितंयशः॥3॥ तस्याभूत्तनयोनयैकरसिकः क्रांतद्विषन्मंडलो विध्वस्तोद्धतवीरघोतिमिरः श्रीचन्द्रदेवोनृपः। येनोदार तरप्रतापशमिताशेषप्रजोपद्रवम् श्रीमङ्गाधिपुराधिराज्यमसमं दोर्विक्रमेणार्जितम्॥4॥ तीर्थानि काशिकुशिकोत्तरकौशलेन्द्रस्थानीयकानि परिपालयताभिगम्य॥ हेमात्मतुल्यमनिशंददता द्विजेभ्यो येनाङ्किता वसुमती शतशस्तुलाभिः॥5॥ तस्यात्मजोविजयपालइति क्षितीन्द्रचूड़ामणिर्विनयतेनिजगोत्रचन्द्रः। यस्याभिषेककल-शोल्लसितैः पयोभिः प्रक्षालितंकलिरजः पटलं धरित्र्याः॥6॥ यस्यासी द्विजयप्रयाणसमये तृङ्गाचलौच्चैश्चलन्माद्यत्कुम्भिपद-

क्रमायमभरत्रस्यन्महीमंडलम् । चूड़ारत्न विभिन्नतालुगलितसनासृगुद्भासितः शेषः पेषवशादिवक्षणमसौक्रोडेनिलीनाननः॥7॥ तस्मादजायत निजायत बाहुबल्लिवद्धावरुद्धनवराज्य गजोनरेन्द्रः । सान्द्रामृतद्रवमुचा प्रभवो गवां यो गोविन्दचन्द्रइति चन्द्रइवाम्बुराशेः॥8॥ नकथमप्पलभत्तरणक्षमास्तिसृषुदिक्षुगजानथवज्रिणः । ककुभिबभ्रमुरभ्रमुवल्लभ प्रतिभटाइवयस्यघटागजाः॥9॥

सोयं समस्तराजचक्रसंसेवितचरणाः परमभट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर परममाहेश्वर निजभुजोपार्ज्जित श्रीकान्यकुब्जाधिपत्य श्रीचन्द्रदेवपदानुयात परम भट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर परम माहेश्वराश्वपति गजपति नरपति राज्यत्रयाधि विविध विद्याविचारवाचस्पतिः श्रीमद्गोविन्दचन्द्रदेवो विजयी हल्दोपपत्तनायामगोंउलीग्राम निवासिनो निखिलजन पदानुपगतानपि च राजाराज्ञीं युवराज मन्त्रिपुरोहितप्रति हार-सेनापतिभांडारिकाक्षपटलिकभिकनैमिमित्तिकान्तः पुरिक दूत करि तुरगपत्तनाक रस्थान्नागोकुलाधि पुरुषानाज्ञापयति बोधयत्वादिशतिच यथा विदितमस्तुभवतां मयोपरिलिखितग्रामः सजलस्थलः सहोहलवणाकरः समत्स्याकरः सगर्तोखरः समधूकाम्रवनबाटिकः विटपतृणयुतोगोचरपर्य्यन्तः सोर्ध्वावम्बत्तरः घटविबद्धः स्वसीमापर्य्यन्तः द्वयषीत्यधिकैका दशशत संवत्सरे 1182 माघेमासि कृष्णपक्षे षष्टयांतिथौ भृगावपिर्तः ग्रीवमतीस्थलेगङ्गायां स्नात्वा विधिवन्मन्त्रदेव मुनिमनुजभूत पितृगणां स्तर्पयित्वा तिमिर पटल पाटन पटुमहसमुद्धतार्चिषमुपस्थायौषधिपतिसकलशेखरं सप्रभ्यर्च्य त्रिभुवनत्रातुर्वासुदेवस्य पूजां विधायप्रचुरपायसेनह्विषा हविर्भुजंहुत्वा मातापित्रो रात्मनश्च पुण्ययशोभिवृद्धयेऽस्माभिरग्र करणकुशलतायुतकमतुलोदक पूर्वंगौतमगौत्राम्यांगौतमाङ्गिर समुद्गलत्रिः प्रवराभ्यांठक्कुर श्रीआल्हनपुत्राभ्यां श्रीछीछट श्रीवाछट शर्म्मभ्यां आचन्द्रार्कं यावच्छासती कृत्यप्रदत्तमत्वा यथा दीयमानभागभोगकर प्रवणिकरतुरुष्कदंड सर्वादायनाज्ञां विवेकीभूयक्षान्तव्योति । भवन्तिचात्र श्लोकाः ।

भूर्मियःप्रतिगृह्णाति यश्चभूमिंप्रयच्छति । उभौ तौपुण्यकर्माणौ नियतंस्वर्गगामिनौ॥1॥ सम्बन्धमासनंछत्र वराश्वावरवारणाः । भूमिदानस्यचिन्हानि फलमेतत्पुरन्दर॥2॥ सर्व्वानितान्भाविनःपार्थिवेन्द्रान्भूयो भूयो याचतेरामचन्द्रः । सामान्योऽयंधर्मसेतुर्नृपाणां कालेकालेपालनीयोभवद्भिः॥3॥ बहुभिर्वसुधाभुक्ता राजभिःसगरादिभिः । यस्ययस्ययदाभूमिस्तस्यतस्यतदाफलम्॥4॥ गामेकाम् स्वर्णमेकञ्च भूमेरप्येकमङ्गलम् । हरन्नरकमाप्नति यावदाहूतसंप्लवम्॥5॥ तड़ागानां सहस्रेणाप्यञ्च मेघशतेनच । गवांकोटिप्रदानेन भूमिहर्त्ता न शुद्धति"॥6॥ इति ।

पम्पासर का दानपत्र

यह दानपत्र गोदावरी के तीर पर एक खेतवाले को मिला है। यह पांच टुकड़ों में अच्छा गहिरा खुदा हुआ कपाली लिपि में पांचों टुकड़े एक तामे की सिकड़ी में बंधे हुए एक तामे के डिब्बे में बन्द और उसी डब्बे में शीशे की भांति किसी वस्तु के आठ टुकड़े और एक चोंगा जिस में सील लगी हुई थी निकला है। अनुमान होता है कि चोंगे में कागज रहा होगा, जो काल पा कर भीतर ही भीतर गल गया है। यह पत्र चन्द्रवंशी क्षत्री दो राजाओं के दिए सं. 197 के हैं और इनके पढ़ने से उस काल की बहुत सी चाल व्यवहार और उन के राज्य करने की नीति इत्यादि प्रगट होती है। इससे इनका यथास्थित संस्कृत का भाषानुवाद यहां प्रकाश होता है। इस वंश का और कहीं पता नहीं लगा है। केवल उन दोनों ताम्रपत्रों से जो कालेपानी से सं. 1857 में एशियाटिक सोसाइटी में आए थे इनका सम्बन्ध ज्ञात होता है, क्यौंकि उन में यही लिपि और इन्हीं दोनों वंशों का वर्णन है पर नाम अलग अलग है और उन दोनों में सम्बन्ध भी नहीं है।

विजनजवन नामक क्षत्रियों के दो प्राचीन कुल थे जिनकी संज्ञा ढढ़िया और पुछड़िया थी॥1॥

अपने बैरियों का सर्व्वस्व धन और धर्म्म नाश कर के और भोग कर के ढढ़िया वंश समाप्त हुआ॥2॥

पुछड़िया कुल के राजा जब दोनों कुलों के स्वामी हुए तब इन लोगों ने प्रजा का बड़ा आडम्बर से सत्कार किया और चक्रवर्त्ती हो गए॥3॥

विद्या में बड़े बड़े पद और सभाओं में बड़ी बड़ी वक्तृता और आदर के अनेक आकाशी चिन्हों से इनके अनुयायी सदैव शोभित रहते थे॥4॥

उदार ऐसे थे कि समाधि में भी रुपया नहीं बचने पाता था, चारों ओर केवल जाचक ही जाचक दिखाई देते थे॥5॥

कलानिपुण ऐसे थे कि इनके सिवा और कोई था ही नहीं और राजनीति के छल बल के तो एकमात्र बृहस्पति थे॥6॥

कहते हैं कि शौरसेन यादव वंश में बलदेवजी से इस वंश का साक्षात् सम्बन्ध है, क्योंकि अब तक ये जैसे हलीमद प्रिय भी हैं॥7॥

ये इतने चतुर थे कि और सब जाति के लोग इनके सामने मूर्ख ज्ञात होते थे और प्रबल भी इतने कि इनकी बात कभी दोहराई नहीं जाती थी॥8॥

इन में वेणु के पुत्र सगर के पौत्र द्वीपसिंह के प्रपौत्र नाभाग और त्रिशंकु नामक दो राजा हुए॥9॥

नाभाग को भोज मदमत्त और भगवान तीन पुत्र और त्रिशंकु को बावन नामक एक पुत्र था॥10॥

बावन को गौरचन्द्र और हनूमान दो पुत्र हुए, जो अब तमसा कृष्णा तक नीलगिरि से हिमगिरि के प्रान्त तक राज्य करते हैं॥11॥

इन के अभिषेक के जलकण से और हाथियों के मद से तथा शूरों के परिश्रम और रति शूरों के स्वेद जल और इन के शत्रुओं की स्त्री के नेत्रजल से मिल कर इनकी दान जलधारा नगर के चारो ओर खाई सी बन रही है॥12॥

जिन लोगों को ये जीतते थे उनकी ऐसी दुर्गति होती थी कि वे अन्न वस्त को भी दीन हो जाते थे तथापि ये ऐसे दयालु थे कि यही मात्र उन के शरण होते थे॥13॥

प्राचीन कर सब इन लोगों ने क्षमा कर दिए। इन के काल में केवल आठ दस कर बच गए। उस पर भी प्रजा को दुःखी देख कर ये उन का बड़ा प्रतिपालन करते थे॥14॥

वरंच ये ऐसे दयालु थे कि और राजाओं की भांति आप कर लेने में ये ऐसे लज्जित होते थे जिसका वर्णन नहीं। इसी से पाठशाला धर्म्मशाला इत्यादि धर्म्म कार्य्य के हेतु कर संगृहीत हो कर उन्हीं कामों में व्यय होता था॥15॥

शुकलानधान उसी को समझते थे जो इनके जातिवालों की नौकरी वा बनज के मिस आवे॥16॥

लक्ष्मी के एक मात्र आश्रय सरस्वती के पूरे दुर्गा के वर्ग तीनों शक्ति से ये सम्पन्न और त्रिदेव पुरजन के बड़े आग्रही थे॥17॥

इन धर्म्मावतारों ने पम्पासर तीर्थ पर चन्द्रमा के पूर्ण ग्रास पर फाल्गुनी पौर्णिमा सम्वत 197 पूर्वा फाल्गुनी नक्षत्र व्यतीपात योग वैद्रथ करण शनिवार कन्या पर गुरु मेष पर शुक्र मीन पर सूर्य्य कुम्भ में चन्द्रमा मिथुन में बुध करकट में मंगल और शनि में पम्पासर तीर्थ में स्नान कर परम धार्म्मिक परमेश्वर परम माहेश्वर भट्टारक महाराज गौरचन्द्र तथा हनुमच्चन्द्र मुड़ाल गोत्र गर्गाङ्गिरस मुड़ाल द्विजवर ठक्कुरनासी के पौत्र ठक्कुर उव्वट के पुत्र ठक्कुर चुप्पठ शर्म्मा को कलिंगदेशान्तर्गत खातावी प्रगने के छीछल प्रगने का पसेसरी और कारंस नामक दो ग्राम दे कर इस के सीर सायर आकास पाताल खेत खर्वट बाटी तिवारी जल थल सब पर इन का अधिकार करते हैं इन के वंश का जो होय वह उस को मानै कोई कर नहीं लगेगा।

मि. चैत्र 1 सं. 198 विक्रम के लिखे सूत्रधार प्रवासी राय और ब्राह्मण ब्राह्ममय ने शुभ।

(इस के आगे ये श्लोक लिखे हैं)

ये सर्वेस्युर्भाविनः पार्थिवेन्द्रान् तेभ्यो भूयोयाचते रामचन्द्रः।
सामान्योऽयं धर्म्मसेतुर्नृपाणां काले काले रक्षणीयो भवद्भिः।।
स्वदत्तां परदत्तां वा ब्रह्मवृत्ति हरेत्तुयः।
षष्ठि वर्ष सहस्राणि विष्ठायां जायते क्रिमिः।।
शुभम् श्रीः।।

कन्नौज के राजा का दानपत्र

यह प्रसिद्ध दानी कन्नौज के राजा गोविन्दचन्द के अन्यतर दानपत्र की प्रति है। यह राजा बड़ा ही दानी था।

ताम्रपत्र।

स्वस्ति। अकुंठोत्कुंठवैकुंठकंठपीठलुठत्करः।
संरम्भः सुरतारंभे सश्रियःश्रेयसेऽस्तुवः॥1॥
आसीदशीतद्युति वंशजातक्ष्मापालमालासुदिवंगतासु।
साक्षाद्विवस्वानिवभूरिधाम्ना नाम्ना यशोविग्रहइत्युदारः॥2॥
तत्सुतोभून्महीचन्द्रश्चन्द्रधामनिभंनिजं।
येनायारमकूपार पारेव्यापारितयशः॥3॥
तस्याऽभूत्तनयोनयैकरसिकः क्रान्तद्विषन्मंडलो
विध्वस्तादूभुतवीरयोध विजितः श्रीचन्द्रदेवोनृपः।
येनोदारतरप्रतापशमिताशेषप्रजोपद्रवं
श्रीमङ्गाधिपुराधिराज्यसममं दोविक्रमेनोर्जितं॥4॥
तीर्थाणि काशिकुशिकोत्तरकोसलेन्द्रस्थानीयकानि परिपायताभिगम्य।
हेमात्मतुल्यमनिशंददता द्विजेभ्यो येनांकिता वसुमती शतशस्तुलाभिः॥5॥
तस्यात्मजोमदनपालइतिक्षितीन्द्रचूड़ामणिर्विजययेनिजगोत्रचन्द्रः।
यस्याभिषेककलशोल्लसितैःपयोभिः प्रक्षालितंकलिरजःपटलंधरित्र्याः॥6॥
यस्यासी द्विजयःप्रयाणसमये तुंगाचलौघश्चलन
माद्यत्कुंभिपदक्रमात्समसरत्त्र्यस्यन्महीमंडले।
चूड़ारत्न विभिन्नतालुगलितस्थानास्टगुद्भासिताः
शेषःपेशवशादितःक्षणमसोक्रोडेनिलीनाननः॥7॥
तस्मादजायत निजायत बाहुबल्लिबद्धावरुद्धनवराष्ट्र गजोनरेंद्रः।
सांद्रामृतद्रवसुधा प्रभवी गवां यो गोविन्दचन्द्रइति चन्द्रइवांबुराशेः॥8॥
नकथमप्यलभन्तरणक्षमां स्तिस्टपुदिक्षुगजानथतक्षिणः।

ककुभिवभ्रमुरभ्रमुवल्लभ प्रतिभटाइवारस्यघटागजाः॥9॥

सोयं समस्तराजचक्रसंसेवितचरणः परमभट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर परममाहेश्वर निज भुजोपार्जित श्रीकान्यकुब्जाधिपत्य श्रीचन्द्रदेवपादानुध्यात परम भट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर परम माहेश्वर श्रीमदनपाल देव पदानुध्यात परम भट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर परम माहेश्वराश्वपति गजपति नरपति राजत्रयाधिपति विविध विद्याविचारवाचस्पति श्रीमद्गोविन्दचन्द्रदेवो विजयी खरकापत्तलायां मधुवाग्राम निवासिनो निखिलजन पदानुपगतानपि राजाराज्ञी युवराज मन्त्रिपुरोहित प्रतीहार सेनापति भांडागारिकाऽक्षपट लिकभिषग्नि मित्तिकान्तः पुरिकदूत करितुरगपत् तनाकरस्थानाऽऽगोकुलाधिकारि पुरुषान्समाज्ञापयति बोधयत्यादिशतिच यथा विदितमस्तुभवतां यथोपरिलिखितग्रामः सजलस्थलः सलोहलवणाकरः समत्स्यकारः सगर्तीखरः समधूकाम्रवनवाटिका विटपतृगप्रतिगोचरपर्यन्तश्रतुराघाटशुद्धस्वसीमापर्यन्तः सोङ्गाधः सम्वत 1195 माघ बदि 9 सोमदिने प्रयागे वेण्यां स्नात्वा विधिवन्मन्त्राद्देव मुनिमनुजभूत पितृणां स्तर्पयित्वा तिमिर पटल पाटन पटुसहस्रमुष्णरोचिषमुप स्थायौषधिपतिंसकलसप्तभंस मभ्यर्च्च त्रिभुवनत्रातुर्वासुदेवस्य पूजां विधायप्रचुरपायसेनहविषा हविभुजंहुत्वा मातापित्रोरात्मनश्च पुण्यशोभिवृद्धये कौशिकगोत्राय कौशिकावदल्य विश्वामित्र देवरातत्रिप्रवराय पंडित श्रीकैंकप्रपौत्राय पंडित श्रीमहादित्य पौत्राय पंडित श्रीसाक्षतपुत्रायपंडित श्रीविद्याकचसंभाराय ब्राह्मणाय अस्सा भिर्गोकर्णकुशलतापूतकरतलोदकपूर्वमाचन्द्रांर्क यावदाशासनी कृत्यप्रदत्तोमत्ताराद्यदीयमानभाग भोग कर प्रवणिकर प्रभृति समस्तादायानांविधियाम्रयदास्यन्निति भवन्तिचात्र। श्लोकाः।

भूमिंयःप्रातगृह्णाति यश्चभूमिंप्रयच्छति। उभौ तौपुण्यकर्माणौ नियतंस्वर्गगामिनौ। शंखंभद्रासनंछत्रं वराश्वाबरवारणाः। भूमिदानस्यचिन्हानि फलमेतत्पुरन्दर। सर्वानेतान्भाविनःपार्थिवेन्द्रान्भूयोभूयो याचतेरामभद्रः। सामान्योयंधर्मसेतु नृपाणां कालेकालेपालनीयोभवद्भिः। बहुभिर्वसुधाभुक्ता राजभिःसगरादिभिः॥ यस्ययस्ययदाभूमिस्तस्यतस्यतदाफलं। स्थलमेकंग्रामभेकं भूमेरप्येकमंगुलं। हरन्नरकमाप्नोति यावदाभूतसुसंप्लवं। ठक्कुर श्रीबालिकेन लिखितमिदम्।

राजा जनमेजय का दानपत्र

यह दानपात्र युधिष्ठिर के सम्वत 111 का है, जो गौज अगराहर तालुका अनन्तपुर जिला महानाद नगर इलाका मैसूर में मिला है। इस में सर्पयाग और सूर्य्यपर्व्व का वर्णन है। कर्नेल एलिस् साहिब सोचते हैं कि यह उस जन्मेजय का नहीं है, विजयनगर के राजाओं में से किसी का है। वह कहते हैं कि जैसा सूर्य्यग्रहण इस में लिखा है वैसा सं. 1521 ई. में हुआ था। कोलब्रुक साहिब कहते हैं कि यह प्राचीन काल में ब्राह्मणों ने जान कर के बनाया होगा। परन्तु उन दोनों साहिबों की बात का कोई दृढ़ प्रमाण नहीं। इस की लिपि प्राचीन वालवन्द अथवा नन्दिनागर अक्षरों में है। इस के पीछे का भाग बहुत सा टूट गया है और यहां हम भी इस का वह भाग नहीं लिखते जिस ने उन दक्षिण ग्रामों के और उन की चारों सीमाओं के वर्णन में बड़े कठिन कठिन कर्णाटकी शब्द लिखे हैं—

“जयत्याविष्कृतं विष्णोर्वाराहं क्षोभितार्णवम्।
दक्षिणोन्नतदंष्ट्राग्रे विश्रान्तम्भुवनंवपुः॥”

स्वस्ति समस्तभुवनाश्रय श्री पृथ्वी बल्लभ महाराजाधिराज परमेश्वर परम भट्टारक हस्तिनापुरवराधीश्वर आरोहभगदत्तरिपुराय कान्तादत्तवैरिवैधव्यपांडव कुलकमलमार्त्तंडकदन प्रचंड कलिङ्ग कोदण्ड मार्त्तंड एकाङ्गवीर रणरङ्गधीर अश्वपतिराय दिशापति गजपतिराय संहारक नरपतिराय मस्तक तलप्रहारिहयारूढ़ाप्रौढ़रेखरेवन्त सामान्त मृगचामर कोङ्कणचतुर्द्दश भयङ्करनित्यकर पराङ्गनापुत्र सुवर्णवराहलाञ्छनध्वजसमस्त राजावलिविराजित समालिङ्गित श्री सोमवंशोद्भव श्री परीक्षित चक्रवर्त्ती। तस्यपुत्रो जन्मेजयचक्रवर्ती हस्तिनापुरे सुखसंकथाविनोदेन राज्यङ्करोति। दक्षिण दिशावरे दिग्विजययात्रेयंविजयङ्करोमि। तुङ्गभद्राहरिद्रासङ्गमे श्री हरिहरेश्वरसन्निधौ कटकमुत्क्रमितचैत्रमासे कृष्णपक्षेदर्शके रवि वासरे ववकरणे उत्तरायण संक्रान्तौ व्यतीपातनिमित्त सूर्यपर्व्वणि अर्द्धग्रासग्रसित समये सर्पयागङ्करोमि॥

इसके पीछे 32000 ब्राह्मण जो वनवासे शान्तलिको गौतम ग्राम और दूसरे गांवों से आए थे जिन में मुख्य गौतमगोत्री कण्वशाखीय गोविन्द पट्टवर्धन कर्णाट ब्राह्मण,

काण्वशाखीय वशिष्ठगोत्री वामनपट्टवर्द्धन कर्णाट ब्राह्मण, कण्वशाखीय भारद्वाजगोत्री केशव यज्ञ दीक्षित कर्णाटक ब्राह्मण, कण्वशाखीय श्रीवत्सगोत्री नारायण दीक्षित कर्णाटक ब्राह्मण थे। उन को गौतम ग्राम के बारहो गांव नाद बल्लि, बूदबल्लि, चिक्कहार, कतरलगेरे, सुरलगोडु, ताग, रुड़गु, जिंअलूरु, वाचेन, हचूलंत्र, पगोडु और किरूसम्य गोडु सब सपर्य्या अष्टभोग समेत पूजन कर के दिया। इस के नीचे इन गांवों की सीमा लिखी है। उस के पीछे 'सर्ब्बानितान् भाविना पार्थिवेन्द्रान' यह और 'दानं वा पालनं वापि' ये दो प्राचीन श्लोक हैं।

चित्रकूटस्य रमाकुंड प्रशस्तिः

ओंनमः श्रीगणेशप्रसादात् सरस्वत्यै नमः॥ श्रीचित्रकोटाधिपति श्रीमहाराजाधिराज महाराणा श्रीकुम्भकर्ण पुत्री श्रीजीर्ण प्रकारे सोरठ पति महासया राय श्रीमंडलीक भार्या श्रीरमाबाई ए प्रासाद रामस्वामि रु रामकुंड कारायिता सम्वत् 1554 वर्षे चैत्र सुदि 7 रवौ मुहूर्त कृताः। शुभं भवतु।

श्रीमत्कुम्भ नृपस्य दिग्गज रदातिक्रान्त कीर्त्ये बुधेः। कन्या यादव वंश मंडन मसि श्रीमंडलीक प्रिया। संगीतागम दुग्ध सिन्धुजसुधा स्वादे परा देवता। प्राद्युम्नं कुरुते वनीपक जनं कं न स्मरन्तं रमा॥1॥ श्रीमत्कुम्भलमेर दुर्ग शिखरे दामोदरं मन्दिरं। श्रीकुंडेश्वर दक्षणा श्रित गिरे स्तीरे सरः सुन्दरं। श्रीमद्भूरि महाब्धि सिन्धु भुवने श्रीयोगिनी पत्तने भूयः कुंड मचीकरत्किल रमा लोकत्रये कीर्त्तये॥2॥ श्रीकुम्भोद्भवयां बुधि र्नियमितः किं वा सुधा दीधितेर्निक्षेप स्त्रिदशैरशोषण भिया किंवाप्सरा सुन्दरं। प्राप्तुं पौर पुरन्ध्रि वृन्द मभुजद्भूमी तलं मानसं चित्रं रामशर प्रहार भयतोब्धिर्वेह कंडायते॥3॥ यस्मिन्नीर विहारि कोक मिथुनं क्रीडासमुन्मीलिते शीतांशा वितरेतरेण नितरां विश्लेष मासाद्य वा। तापे नैव तनौ विभर्त्य विरतं सोपान भित्तिस्फुरत स्वीयांगे प्रतिबिम्ब संगम वशादूरेपि तीरे चरत्॥4॥ पानीय हार विहार सुन्दर सुन्दरी वदनं निजं प्रतिबिम्ब भूत मितीह निर्मल धीर नीरगमंबुजं। आदातु मुद्यत पाणिना जलदोलनेन गत श्रमा वितनोति कानन कुम्भ पूरणमत्र विस्मय विभ्रमा॥5॥ रसाल तरु मंजुलं पिक विनोद नादोत्कलं क्वचित् कनक केतकोदग पराग पिंगांचलं। सशीकर सुशीतलं सुरभि वृन्द मन्दानिलं तदीय मति निर्मलं जयति वीर भूमी तलं॥6॥ यदिय तट भूतलं हसित कुन्द पुष्पोज्वलं क्वचिद्विकच मालती कुसुम लोल भृंगेष्कलं। क्वचित् शरलसारणी तरल नीरता पेशलं स्तुवन्ति सुरयोषितः किमुत नन्दना दप्यलं॥7॥ एतद्भित्ति तटालयेषु रुचिरोत्कीर्णैः सुरीणां गणैः क्रीडो पागत पौरयौवत युतोपान्तै रबंतै रपि। तत्तादृक्प्रतिबिम्बितै रुपलसन्नागांगना संगिभिर्मन्ये कुंडमिदं रमा विरचितं लोकत्रया दद्भुतं॥8॥ यद्वारुण प्रतिष्ठा समये समुपेत विबुध वृंदस्य। कनकदुकूल विवरणं विदधाति रमेति लोलुपंति सुराः॥9॥ यावच्छेप शिरःसुशेखरपदं भूभूतधात्र्या मये मेरुर्मेरु गिरेरुपर्युपरितो ब्रह्मोदि लोकत्रयं। धत्ते यावदमुत्र वा दिनमणि माणिक्य नैराजनं तावच्चारुतरं रमा विरचितं कुंडं चिरं नन्दतु॥10॥

गोविन्ददेवजी के मन्दिर की प्रशस्ति

"सम्वत 34 श्री शकबन्ध अकबरशाह राज्ये श्रीकुर्मकुल श्रीपृथीराजाधि। राजवंश महाराज श्रीभगवन्तदास सुत श्रीमहाराजाधिराज श्रीमानसिंहदेव श्रीवृन्दावन जोग पीठस्थानकरा श्रीगोविन्ददेव को।"

इसके प्रारम्भ होने का यह सम्वत् जानना चाहिए।

"श्रीवृन्दाविपिने शिवादिदिविषद्वन्दालीवन्दिते...श्री गोविन्द...ष्णक्सदाराजते॥1॥ श्रीमानर्कवरोयदा भुवमयात्सर्वान्तदैवाधुनासर्वः सौख्यम...गणैः स्वन्धर्ममुच्चैर्भजन्। श्रीगोविन्द पदन्तदेतदृयिते वासायसद्वैष्णवालम्भलं...तस्मै सदै वा. पः॥2॥ तस्मिन्स्तस्य-सदान्वितक्षितिपतिः श्रीमानसिंहाभिधः पृथ्वीराज विराज...धेश्चन्द्रमाः। भूभृदभारहमल्लजात भगवद्वासात्मजोमन्दिरं कुर्वन्निन्दिरयाबलादचलया॥3॥...स्तथाविधमहाराजाधिराजाप्यसौ येर्नैवारि दिगनेन विजयीध्वस्त भ्रमः क्रीड़ति सश्रीमान. सिंह नवायुद्धेयस्य नियत्यं दिव्य पितृयाः कीर्त्तिध्रजत्वंगताः॥4॥ यः क. धिपजान्तिरेष विजयीश्री मानसिंहोनृपः...सदा विजत...दास सुधीः। श्रीगोविन्दपदारविन्द...स्तनमन्दिरं संमदान् कुर्व्वन्नुदयममत्रतूर्ण. ..पू...॥5॥ श्रीमानसिंहाद्भुतम॥6॥...इन्द्रप्रस्थनिवासि...षुगुरुर्गोविन्ददासाभिघः।...भवदाविष्य दखिल श्रीवैष्णवानांसुखं श्रीकर्ता हरिणासदानि जदयाया. याविनि...॥7॥ श्रीग्रसेनः कृती, तौद्वौश्रीयुतभानसिंहनृपति प्रस्थायितौनन्द ताम्। किम्वाग्ग्नद्ववनीय...प्रतिपदंसौख्यंम्म हद्विन्दतु॥8॥ मुनिवेदर्तुचन्द्राहू 1647 सम्वन्मन्दिर सम्भवे...॥9॥ श्रीमद्रूयसनातननामानौतौभजेतज॥10॥"

इन पद्यों का अविकल न होने से अर्थ लिखना हम उचित नहीं समझते। केवल एक दो बात स्मरण रखने के योग्य हैं।

1 म. अकबर का संस्कृत नाम 'अर्कबर' है, प्रायः भाषा-रसिक और संस्कृत रसिक लोगों के उपयोगी है। 2 य. मानसिंह की वंशपरम्परा यह है, राजा भारहमल्ल (वा भारामल्ल) राजा भागवतदास वा भगवन्तदास राजा मानसिंह। 3 य. श्रीरूपगोस्वामी और श्री सनातन गोस्वामी की प्रशंसा जैसी आजकल है वैसी तीन सौ बरस पहिले भी थी लोग आधुनिक कीर्त्ति कल्पना न समझें।

इस लिपि के निकट ही जगमोहन के द्वार के ठीक सामने भूमि पर एक पत्थर

की चट्टान में यह सफल सम्बन्धी लिपि है "राणा श्री अमर सिंहजी सुत श्री बागजी सुत श्री सबलसिंहजी की जात्रा सफल सम्वत् सतरै सै अगरोतरामंगसेर सुद 7 सो में लखन्त प्रोहेतजी जबारादास पधारो सम्वत् 1778।

पांच छोटे छोटे शिखर के दक्षिण, उत्तर में दो मन्दिर, दक्षिण मन्दिर की शिखर कुछ फूटी है और मन्दिर का द्वार दो किष्कु ऊंचा है। सीढ़ी के योग से चढ़ते हैं। भीतर एक तल घर में वृन्दादेवी (वा पातालदेवी) बिराजती हैं। घुमाव की बारह पक्कि सीढ़ी उतर कर नीचे दर्शन करना होता है। देवी की मूर्त्ति शृङ्गवर (संगमरमर) पाषाण की अष्टभुजी एवं सिंहवाहिनी 11 इंच ऊंची और 9 इंच चौड़ी है। पास ही एक शृङ्गवर की छोटी-सी चौकी पर श्रीराधिकाजी के चरणचिन्ह हैं। चौकी के तट पर यह पद्य लिखा है।

तप्तकाञ्चनगौराङ्गि राधेवृन्दावनेश्वरि।
वृषभानुसुतेदेवि प्रणमामिहरिप्रिये॥

एक मोरी जिस का निकास बाहर की ओर उत्तर दिशा में है उस के ऊपर यह प्रशस्ति है।

"सम्वत् 34 श्रीशकबन्ध अकबर महाराज श्री कर्म कुल श्री पृथीराजाधिराज वंश श्री महाराज श्रीभगवन्तदास सुत श्रीमाहाजाधिराज श्रीमानसिंहदेव श्रीवृन्दावन जोग पीठ स्थान मन्दिर कराजो श्रीगोविन्ददेव को काम उपरि श्रीकल्याणदास आज्ञा कारि माणिकचन्द चोपड़ शिल्पकारि गोविन्ददास दीलवरिकारिगरदः गोरषदासवीभवलृ॥"

मन्दिर के चारों ओर सङ्कीर्ण कच्चे चौक में कोई उत्तम स्थान नहीं है, केवल पूर्व द्वार की बाईं ओर कुछ थोड़ी फुलवारी है और पश्चिम द्वार की ओर अति निकट एक छत्री है। यह छत्री प्रथम नाट्य मन्दिर के सामने थी, परन्तु अबकी जीर्णोद्धार में परिष्कार एवं संस्कार कर के पश्चिम प्रान्त में एक चौतरे पर स्थापित कर दी गई। इसमें चरणचिन्ह शृङ्गवर के बने हैं और एक स्तम्भ पर लिपि है। ज्ञात होता है कि इस में किसी के अस्थि समूह संचित थे, क्योंकि चरणचिन्ह का व्यवहार प्रायः ऐसे ही स्थान में होता है। दूसरे राजाओं में ऐसी रीति भी प्रचलित है। पुण्यस्थान में अस्थि संचय किया जाय।

मंगलीश्वर का दानपत्र

यह दानपत्र मंगलीश्वर का कलादगी जिले में बदामो में हिन्दू मत की बड़ी गुहाओं के पास खुदा है, इसकी लम्बाई और चौड़ाई 25×43 इंच है। यह मंगलीश्वर कीर्त्ति वर्म्मा का भाई पुलकेशी का पुत्र था, जो शक 477 में राज्य करता था। यह दानपत्र श. 500 (ई. 578) में लिखा गया है जिस के 12 वर्ष पूर्व्व अर्थात् शाके 488 (ई. 566) में यह राज्य पर बैठा था। इस दानपत्र में मंगलीश्वर ने एक विष्णुमन्दिर बनाया और अपने बड़े भाई को स्मरणार्थ जो निपिम्मलिंगेश्वर ग्राम दिया है उसका वर्णन है।

स्वस्ति। श्रीस्वामिपादानुध्यातानां मंडव्यसगोत्राणाम् हारीति पुत्राणाम् अग्निष्टोमाग्निचयनवाजपेयपौंडरीक बहुसु वर्णाश्वमेधावभृथस्नान पवित्री कृतशिरसाम् चाल्क्यानांवंशेसम्भूतः शक्तित्रयसम्पन्नः चालक्यवशाम्बर पूर्णचन्दः अनेकगुणगणालंकृतशरीरः सर्वशास्त्रार्थतत्वनिविष्टबुद्धिः अतिबलपराक्रमोत्साहसम्पन्नः श्रीमंगलीश्वरोरणविक्रान्तः प्रबद्धंमानराज्यसंवत्सरे द्वादशेशकनृपतिराज्याभिषेक संवत्सरे ष्वतिक्रन्तेषु पंचसुशतेषु निजभुजावसम्बितखङ्गधारानमितनृपशिरो मकुट मणिप्रभारंजिपादयुगलः चतुःसागरपर्य्यन्तावनिविजयः माङ्गलिकागारः परमभागवतोलयने मयाविष्णुगृहअतिदैव मानुष्यकाम अत्यद्भुतकर्म विरचितभूमि भागोपभागो परिपर्य्यन्तातिशय दर्शनीय तमकृत्वातस्मिन् महाकार्तिक्यांपौर्णमास्यांब्राह्मणे भ्योमहाप्रदानंत्वाभगवतः प्रलयोदिताक्र्क मंडलाकारचक्षपितापकारिपक्षरय विष्णोः प्रतिमाप्रतिष्ठापनाभ्युदये निपिंमलिङ्गेश्वरम् नामग्रामंनारायणावल्युपहारार्थं षोड़शमूङ्ख्येभ्योब्राह्मणेभ्यश्च सत्रनिबन्धं प्रतिदिनंअनुविधानं कृत्वाशेषं च परिव्राजकभोज्यंदत्वा सकलजगन्मंडलावनसमर्थारथहस्त्यश्च पदातसंकुलानेकयुद्धलब्धजय पताकालम्बित चतुस्समुद्रोर्म्मिनिवारितयशः प्रतापनोपशोभिताय देवद्विजगुरुपूजिताय ज्येष्ठायस्मद्भ्रात्रे कीर्तिवर्मणेपराक्रमेश्वराततु पुण्यो पचयफलम् आदित्याग्निमहाजन समुक्षमुदक पूर्वविश्राणितमस्मद्भ्रातृशुश्रूषणे यत्फलंतन्मह्यंस्यादितिनकैश्चित्परि हापितव्यः। बहुभिर्व सुधादत्ताबहुभिश्वानुपालिता यस्ययस्ययदाभूमिस्तस्यंतस्यतदाफलमूं। स्वदत्तांपरदत्तांवा-पत्राद्रक्षयुधिष्ठिर। महीमही क्षितांश्रेष्टंदानाच्छे योनुपालनं। स्वदतांपरदत्तांवायोहरेतवंसुधराम्। श्वविष्ठायांकृमिर्भूत्वापितृभिस्सहमज्जति। व्यासगीताःश्लोकाः।

अकबर और औरंगज़ेब

काशी में राजा पटनीमल्ल बहादुर अग्रवाल कुल के भूषण हो गए हैं। इनके उद्योग, अध्यवसाय, साहस, धर्मनिष्ठा, गम्भीर गवेषणा, बुद्धि और अपूर्व औदार्य सभी गुण प्रशंसा के योग्य हैं। कई बेर राजविप्लव में ऐसे लुट गए कि कुछ भी पास न रहा, किन्तु अपने उद्योग से फिर करोड़ों की सम्पत्ति पैदा किया। गया, काशी, मथुरा, वैतरणी, किस तीर्थ में इन के बनाए मन्दिर, घाट, तालाब आदि नहीं हैं। कर्मनाशा का पक्का पुल अद्यापि इनकी अतुल कीर्त्ति का चिह्न वर्त्तमान है। फारसी विद्या के ये पारंगत थे। काशीखंड का सम्पूर्ण फारसी में इन्होंने स्वयं अनुवाद किया है। और भी कई ग्रन्थों को हिन्दी और फारसी में इन्होंने अनुवाद कराया था। वेद, स्मृति, पुराण, काव्य, कोष आदि विषय मात्र की पुस्तकैं इन्हों ने संग्रह की थीं। फारसी पुस्तकों के संग्रह की तो कोई बात ही नहीं। अंग्रेजी यद्यपि स्वयं नहीं जानते थे, किन्तु दस पन्द्रह हजार की पुस्तकैं अंग्रेजी भाषा की संग्रह की थीं और सब के ऊपर फारसी में उस का नाम, विषय, कवि, मूल्य आदि का वृत्तान्त लिखा हुआ था। उन का सरस्वती भंडार और औषधालय तीन लाख रुपये का समझा जाता था। किन्तु हाय! वह अमूल्य भंडार नष्ट हो गया। कीट, दीमक, छुईमुई, चूहे आदि उन अमूल्य ग्रन्थों को खा गए। उन के स्वकार्य निपुण छः पौत्र और अनेक प्रपौत्रों के होते भी यह अमूल्य संग्रह भस्मावशेष हो गया। मैं ने दो बेर इस भंडार का दर्शन किया था। रुपये का चार आना तो पहली ही बेर देखा था, दूसरी बेर एक आना मात्र बचा पाया। सो भी खंडित छिन्न भिन्न। उस पुण्य कीर्त्ति उदार मनुष्य की उदारता और अध्यवसाय और उस के संगृहीत वस्तु की यह दुर्दशा देख कर मेरी छाती फट गई। इस्कन्दरिया का पुस्तकालय मानो अपनी आंखों से जला हुआ देख लिया। अस्तु! ईश्वर की यही गति है!! नाशान्ताः संचयः सर्वे!!!

उनके प्रपौत्र और अपने फुफेरे भाई राय प्रह्लाद दास से कहकर उस संग्रह की भस्मावशिष्ट हड्डियों में से मैं टूटे फूटे दस पांच ग्रन्थ ले आया हूं। इनमें कुछ सर्कारी पुराने छपे हुए कागज़ और कुछ खंडित पुस्तकें हैं। इस प्रबन्ध में बहुत सी बात उन्हीं सबों में से चुनकर लिखी जाएंगी, इस हेतु उस सुगृहीतनामा महापुरुष का भी थोड़ा वृत्तान्त लिखे बिना जी न माना।

प्रकृति मनुसरामः

मैं ने बादशाहदर्पण नामक अपने छोटे इतिहास में अकबर और औरंगज़ेब की बुद्धि और स्वभाव का तारतम्य दिखलाया है। अब पूर्वोक्त राजा साहब की अंगरेज़ी किताबों में सन 1782 से लेकर 1802 तक के जो पुराने एशियाटिक रिसर्चेज़ के नम्बर मिले हैं, उनमें जोधपुर के राजा जसवन्त सिंह का वह पत्र भी मिला है जो उन्हों ने औरंगज़ेब को लिखा था और श्रीयुक्त राजा शिवप्रसाद सी. एस. आई. ने भी अपने इतिहास में जिसका कुछ वर्णन किया है। तथा मेरे मित्र पंडित गणेश रामजी व्यास ने मुझको कुछ पुस्तकें प्राचीन दी हैं, उन में महाकवि कालिदास के बनाए सेतुबन्ध काव्य की टीका मिली है, जिस में कुछ अकबर का वर्णन है। इन दोनों को हम यहां प्रकाश करते हैं, जिस से पूर्वोक्त दोनों बादशाहों का स्पष्ट चित्त और विचार Policy प्रकट हो जाएगा।

यह टीका राजा रामदास कछवाहे की बनाई है। अपना वंश उस ने यों लिखा है। कुलदेव को क्षेमराज, उनके पुत्र माणिक्यराय, फिर क्रम से मोकलराय, धीरराय, नापाराय, (उन के पौत्र) पातलराय; खाना राय, चन्दाराय और उदयराज हुए। इन्हीं उदयराज का पुत्र रामदास हुआ, जो सर्व भाव से अकबर का सेवक है। अकबर के विषय में वह लिखता है–

श्लोक

आमेरोरासमुद्रादवति वसुमर्ती यः प्रतापेन तावत्।
दूरे गाःपाति मृत्योरपि करममुचत्तीर्थवाणिज्य वृत्योः॥
अप्यश्रौषीत पुराणं जपति च दिनकृन्नाम योगं विधत्ते।
गङ्गाम्भोंभिन्नमम्भो न च पिवति जयत्येषजल्लालुदीन्द्रः॥3॥
अङ्ग बङ्ग कलिंङ्ग सिलिहट तिपुरा कामता कामरूपा
नान्धं कर्णाट लाट दाविड़ मरहट द्वारका चोल पाण्डयान।
भोटात्र मारुवारोत्कलमलयखुरासानखान्धारजाम्बू॥
काशी कश्मीर ढक्का बलक बदखशा काविलान यःप्रशास्ति ॥4॥
कलियुगमहिमाऽपचीयमानश्रुतिसुरभिद्विजधर्मरक्षणाच।
धृतसगुणतनं तमप्रमेयं पुरुषमकब्बरशाहमानतोस्मि॥5॥

अर्थ–जो समुद्र से मेरु तक पृथ्वी को पालता है, जो मृत्यु से गउओं की रक्षा करता है, जिस ने तीर्थ और व्यापार के कर छुड़ा दिए, जिस ने पुराण सुने, जो सूर्य्य का नाम जपता, जो योग्य धारण करता है और गंगाजल छोड़ कर और पानी नहीं पीता उस जलालुद्दीन की जय॥3॥

अंग बंग कलिंग सिलहट, तिपुरा, कामता (कामटी?) कामरूप अन्ध, कर्णाटक, लाट, द्रविड़, महाराष्ट्र, द्वारका, चोल, पांड्य, भोट, मारवाड़, उड़ीसा, मलय, खुरासान, कन्दहार, जम्बू, काशी, ढाका, बलख, बदखशां और काबुल को जो शासन करता है॥4॥

कलियुग की महिमा से घटते हुए वेद गऊ द्विज और धर्म्म की रक्षा को सगुण शरीर जिस ने धारण किया है उस अप्रमेय पुरुष अकबरशाह को हम नमस्कार करते हैं॥5॥

पाठक गण! अकबर की महिमा सुनी। यह किसी भाट की बनाई नहीं है, एक कट्टर कछवाहे क्षत्रिय महाराज की बनाई है, इसी से इस पर कौन न विश्वास करैगा। उस ने गो वध बन्द कर दिया था यह कवि परम्परा द्वारा तो श्रुत था, अब प्रमाण भी मिल गया। हिन्दूशास्त्रों को वह सुना करता था। यह तो और इतिहासों में लिखा है कि वह आदित्यवार को पवित्र समझता था। देखिए उस के इस कार्य्य से, गायत्री के देवता सूर्य्य के आदर से, हिन्दूमात्र उस से कैसे प्रसन्न हुए होंगे। मैं समझता हूं कि उस समय सूर्य्यवंशी राजा बहुत थे और सूर्य्य को यह सम्मान दिखा कर अकबर ने सहज उन लोगों का चित्त वश कर लिया था। योग साधने से हिन्दुओं की प्रसन्नता और शरीर की रक्षा दोनों काम हुए। विशेष यह बात जानी गई कि वह गंगाजल छोड़ कर और पानी नहीं पीता था। यह उस की सब क्रिया हिन्दुओं को वश करने को एक महामोहनास्त्र थीं। इसी से उस को परमेश्वर का अवतार तक कहने में हिन्दुओं ने संकोच न किया। उस को लोग जगद्गुरु पुकारते थे, यह आगे वाले महाराज जसवन्त सिंह के पत्र से प्रकट होगा। इस के विरुद्ध औरंगज़ेब से हिन्दुओं का जी कैसा दुःखी था और उस समय राज्य की भी कैसी अवनति थी यह भी इस पत्र ही से प्रकट हो जायगा, हम विशेष क्या लिखें।

विदित हो कि इस पत्र के लेखक महाराज जसवन्त सिंह जोधपुर के महाराज गज सिंह के द्वितीय पुत्र थे। सन 1638 में गज सिंह युद्ध में मारे गए। अपने बड़े पुत्र अमर सिंह को अति क्रूर और प्रजापीड़क समझ कर गज सिंह ने त्याग कर दिया। यही अमर सिंह फिर शाहजहां के दर्बार में रहा और वहां भी अपनी उद्धतता से एक दिन काम पर हाजिर नहीं हुआ। इस पर शाहजहां ने उस पर जुर्माना किया। जुर्माना अदा कराने को सलावत खां खजानची को भेजा। उस का भी अमर सिंह ने निरादर किया। इस पर बादशाह ने उस को दर्बार में बुला भेजा। यह अति क्रोधावेश में एक कटार लिए हुए दर्बार में निर्भय चला गया। बादशाह को क्रोधित देखकर रोषानल और भी भड़का ; पहले सलावत का प्राण संहार किया फिर वही शस्त्र बादशाह पर चलाया। खम्भे में लग कर कटार गिर पड़ी, किन्तु उस आघात में बल इतना था कि खम्भे का दो अंगुल पत्थर टूट गया। दर्बार में चारों ओर हाहाकार हो गया। पांच बड़े बड़े मोगल सर्दारों को अमर ने और मारा। अन्त में उस को उस का साला

अर्जुन गोरा (गौड़) (बूंदी का राजकुमार) पकड़ने चला, तो उस से भी लड़ा और उसी की तलवार से गिरा भी। अब तक तख़्त पर लहू की छींट और टूटा हुआ खम्भा उस के वीर दर्प का चिन्ह आगरे के किले में विद्यमान है। लाल किले का दरवाजा, जिस से अमर सिंह आया था, बुखारा दरवाजा कहलाता था; उस दिन से अमर फाटक कहलाता है। उसके सर्दार चम्पावत गोती और कम्पावत गोती भी दर्बार में अपनी निज सैन्य लेकर घुस आए और बहुत से मोगलों को मार कर मारे गए। अमर सिंह की स्त्री बूंदी की राजकुमारी पति का देह लेने को उसी हल्ले में अपने योद्धाओं को लिए किले में चली आई और देह ले गई और डेरे में जा कर सती हो गई। इस घटना के वर्णन में राजपूताने में कई ग्रन्थ, ख्याल आदि बने हैं और अब तक इस लीला को नट, सुथरेसाही, जोगी, भवैये, गवैये गाया करते हैं।

अथ पत्र

"सब प्रकार की स्तुति सर्वशक्तिमान जगदीश्वर को उचित है और आप की महिमा भी स्तुति करने के योग्य है, जो चन्द्र और सूर्य्य की भांति चमकती है। यद्यपि मैं ने आजकल अपने को आप के हाथ से अलग कर लिया है किन्तु आप की जो सेवा हो उस को मैं सदा चित्त से करने को उद्यत हूं। मेरी सदा इच्छा रहती है कि हिन्दुस्तान के बादशाह रईस मिर्जा राजे और राय लोग तथा ईरान तूरान रूम और शाम के सरदार लोग और सातो बादशाहत के निवासी और वे सब यात्री जो जल या थल के मार्ग से यात्रा करते हैं मेरी सेवा से उपकार लाभ करैं।

यह इच्छा मेरी ऐसी उत्तम है कि जिस में आप कोई दोष नहीं देख सकते। मैं ने पूर्व्वकाल में जो कुछ आप की सेवा की है, उस पर ध्यान कर के मुझ को अति उचित जान पड़ता है कि मैं नीचे लिखी हुई बातों पर आप का ध्यान दिलाऊं, जिस में राजा और प्रजा दोनों की भलाई है। मुझ को यह समाचार मिला है कि आप ने मुझ शुभचिन्तक के विरुद्ध एक सैना नियत की है और मैंने यह भी सुना है कि ऐसी सैनाओं के नियत होने से आप का खजाना जो खाली हो गया है उस को पूरा करने को आप ने नाना प्रकार के कर भी लगाए हैं।

आप के परदादा मुहम्मद जलालुद्दीन अकबर ने, जिन का सिंहासन अब स्वर्ग में है, इस बड़े राज्य को 52 बरस तक ऐसी सावधानी और उत्तमता से चलाया कि सब जाति के लोगों ने उस से सुख और आनन्द उठाया। क्या ईसाई, क्या मूसाई, क्या दाऊदी, क्या मुस्लमान, क्या ब्राह्मण, क्या नास्तिक सब ने उन के राज्ये में समान भाग से राजा का न्याय और राज्य का सुख भोग किया। और यही कारण है कि सब लोगों ने एक मुंह हो कर उन को जगत्‌गुरु की पदवी दिया था।

शाहनशाह मुहम्मदनूरुद्दीन जहांगीर ने, जो सब नन्दनवन में बिहार करते हैं,

उसी प्रकार 22 बरस राज्य किया और अपनी रक्षा की छाया से सब प्रजा को शीतल रक्खा। और अपने आश्रित या सीमास्थित राजवर्ग को भी प्रसन्न रक्खा और अपने बाहुबल से शत्रुओं का दमन किया।

वैसे ही परम प्रतापी शाहजहां ने बत्तीस बरस राज्य कर के अपना शुभ नाम अपने गुणों से विख्यात किया।

आप के पूर्व्व पुरुषों की यह कीर्त्ति है। उन के बिचार ऐसे उदार और महत् थे कि जहां उन्होंने चरन रक्खा, विजय लक्ष्मी को हाथ जोड़े अपने सामने पाया और बहुत से देश और द्रव्य को अपने अधिकार में किया। किन्तु आप के राज्य में वे देश अब अधिकार से बाहर होते जाते हैं और जो लक्षण दिखलाई पड़ते हैं उन से निश्चय होता है कि दिन दिन राज्य का क्षय ही होगा। आप की प्रजा अति दुःखी है और सब देश दुर्बल पड़ गए हैं। चारों ओर से बस्तियों के उजड़ ज़ाने की और अनेक प्रकार की दुःख ही की बातें सुनने में आती हैं। जब बादशाह और शाहजादों के देश की यह दशा है तब और रईसों की कौन कहे। शूरता तो केवल जिह्वा में आ रही है। व्यापारी लोग चारो ओर रोते हैं। मुसलमान अव्यवस्थित हो रहे हैं। हिन्द महा दुःखी है, यहां तक कि प्रजा को सन्ध्या को खाने को भी नहीं मिलता और दिन को सब मारे दुःख के अपना सिर पीटा करते हैं।

ऐसे बादशाह का राज्य कै दिन स्थिर रह सकता है, जिसने भारी कर से अपने प्रजा की ऐसी दुर्दशा कर डाली है? पूरब से पच्छिम तक सब लोग यही कहते हैं कि हिन्दुस्तान का बादशाह हिन्दुओं का ऐसा द्वेषी है कि वह ब्राह्मण से बड़ा योगी वैरागी और संन्यासी पर भी कर लगता है और अपने उत्तम तैमूरी वंश को इस धनहीन उदासीन लोगों को दुःख दे कर कलंकित करता है। अगर आप को उस किताब पर विश्वास है जिस को आप ईश्वर का वाक्य कहते हैं तो उस में देखिए कि ईश्वर को मनुष्य मात्र का स्वामी लिखा है, केवल मुसलमानों का नहीं। उस के सामने गबर और मुसलमान दोनों समान हैं। नाना रंग के मनुष्य उसी ने अपने इच्छा से उत्पन्न किए हैं। आप के मसजिदों में उस का नाम लेकर चिल्लाते हैं और हिन्दुओं के यहां देवमन्दिरों में घंटा बजाते हैं, किन्तु सब उसी को स्मरण करते हैं। इस से किसी जात को दुःख देना परमेश्वर को अप्रसन्न करना है। हमलोग जब कोई चित्र देखते हैं, उस के चितेरे को स्मरण करते हैं और कवि की उक्ति के अनुसार जब कोई फूल सूंघते हैं उस के बनानेवाले को ध्यान करते हैं।

सिद्धान्त यह है कि हिन्दुओं पर जो आप ने कर लगाना चाहा है वह न्याय के परम विरुद्ध है। राज्य के प्रबन्ध को नाश करनेवाला है और बल को शिथिल करनेवाला है तथा हिन्दुस्तान के नीत रीत के अति विरुद्ध है। यदि आप को अपने मत का ऐसा आग्रह हो कि आप इस बात से बाज न आवें, तो पहिले रामसिंह से,

जो हिन्दुओं में मुख्य है, यह कर लीजिए और फिर अपने इस शुभचिन्तक को बुलाइए, किन्तु यों प्रजापीड़न वा रण भङ्ग वीर धर्म्म उदारचित के विरुद्ध है। बड़े आश्चर्य की बात है कि आप के मन्त्रियों ने आप को ऐसे हानिकर विषय में कोई उत्तम मन्त्र नहीं दिया।''

महात्मा कर्नैल टाड साहब लिखते हैं कि यह पत्र महाराज जसवन्तसिंह ने नहीं लिखा था, महाराणा राजसिंह ने लिखा था।

क्वीन्स कॉलिज के फाटकों का लेख

तालुकदार दाउदपुर के राय पृथ्वीपाल सिंह ने
अपने कीर्त्ती के लिये दो द्वार रचवाये।

(1)

रामरास बाबू सुघर, वैश्यवंश औतार।
हर्षचन्द्र तिन के तनय, रचवाये दुइद्वार॥

(2)

राजा पटनीमल्ल के, पुत्र नारायण दास।
रचवाए दुइद्वार यह, अचल कीर्त्ति के आस॥

(3)

श्री देवकीनन्दन सूनुरासीघो जनकी पूर्वपद प्रसाद।
तदङ्गजोद्धारमिदं द्रव्य धत राम प्रसन्नोपमहीश्चरोये॥

(4)

श्री मत् बाबू देवकीनन्दन पौत्र उदार।
बाबू रामप्रसन्नो सिंह रचवाये यह द्वार॥सं. 1807॥

(5)

श्री बाबू भगवानदास बड़े दानि विदित।
मृजापुर बिच धाम तिन रचवाए द्वार दुइ॥

(6)

सुनय जानकिदास के, श्री विश्वेश्वर दास।
रचवाए दुई दुवार बर मुक्ति सुजस के आस॥

(7)

राजा दर्सन सिंह के, सुत कुल अति उजियार।
राजा रघुबरदयाल जस, चाहि किन दुइ दुयार॥

(8)

इंडियन म्यूज़ियम (Indian Musium) में एक पत्थर के मुंडेरे के एक टुकड़े पर नीचे की ओर निम्नलिखित लेख लिखा है। वह पत्थर अशोक के चारदिवाली का है, परन्तु यह लेख सन ईसवी दो सौ बरस पहले का नहीं हो सकता। यह गुप्ताक्षर में पुराचीन रीति से लिखा है–

दी पढंका कता येषां दान × × मशमनिनाचार्य्य।

सारनाथ आदि के लेख

''सम्वत् 1693 वरषे कातिक बदि 5 शुर्भादने हजरत श्री3 शाहजहां राज्ये राणा श्रीअमरसिंहजी को बेटो राजाश्रीभीमजी राणी श्रीरम्भावती चौखंडी सौराई छैजी''

बौद्धमत का श्लोक जो सारनाथ की धमेख में मिला था।

7 ये धम्महितु प्रभवाहेतुतेषां तथा गता ह्यवदत्
तेषांचयो निरोध एवंवादी महाश्रमणः।

— ● —

बिहार जिले में बहुतेरी प्राचीन बौध मूरतों पर यह श्लोक खुदा हुआ है, वरन् राजगृह के प्रसिद्ध जैन मन्दिर में भी जो बस्ती में है एक मूर्त्ति पर यही श्लोक खुदा है, और इसी कारण हम उसको प्राचीन बौधमती अनुमान करते हैं।

— ● —

जेनरल कनिङ्गहाम साहिब ने जो दो हज़ार बरस के लगभग पुराने राजा वासुदेव की अथवा राजा वासुदेव के सम्वत् नब्बे में बनवाई महावीर स्वामी की मूर्त्ति मथुरा में पायी है उस पर 90 का अंक लिखा है। जेनरल साहिब ने जो उस मूर्त्ति पर से हर्फो का छापा लिया है उसके एक (पहले) टुकड़े में (सिद्धओं नमो अरहत महावीरस्य. ..राजा वासुदेवस्य संवत्सरे 90) लिखी है। अफसोस है कि हर्फो के घिस जाने के सबब इससे अधिक उसकी इबारत पढ़ी ही नहीं जा सकती है।

— ● —

जिला गया के प्रसिद्ध स्थान देवमंगा में एक सूर्य्य का मन्दिर है उस पर यह श्लोक खुदा है। इस लेख से आश्चर्य होता है कि इतने दिनों का लेख वर्तमान हो।

शून्यव्योमनभोरसेंदुकरभेहीने द्वितीयेयुगे।
माघेवाणतिथौ शिते गुरुदिने, देवो दिनेशालुयं।।

प्रारम्भेदृष्टदांचयेरचयितुं सौम्यादिलायाम्भवो ।
यस्या सीत्सनराधिपः प्रभुतया लोकोविशोकोभुवि॥

अर्थ–दूसरे युग अर्थात् त्रेता युग के 1216000 वर्ष बीतने पर माघ शुक्ल पंचमी गुरुवार के दिन रेलपुरुरवा जो बुध से इला में उत्पन्न हुआ था उस ने पाषाणादिकों से दिनेश अर्थात् सूर्य्य का मन्दिर बनाना प्रारम्भ किया था। जब यह राज्य करता था तब इसकी प्रभुता से सब प्रजा भूमि में सुखी थी।

इंडियन म्यूजियम, अशोक की चारदीवारी तथा बोधगया के लेख

अशोक के चारदीवारी के मुंडेरे के पत्थर पर निचली ओर निम्नलिखित लेख लिखा है। यह दो लाइन (पंक्ति) में है और प्रत्येक लाइन 6 फीट लम्बा है।

1। कारितो यन्त्रवज्रासन वृहद्गर्भ्भकुटीं प्रेमादमर्द्धत्रिकोट्यां भश्मतैर्म्मधुलेपकस्यपुन लटिकः गिक रेदगतुट मादन्याक्कं तारकं भगवते बुद्धाय × × रदानेन घृतप्रदीपः × रारिध दिए प्रति समधने रदनी मायां च प्रदहं घृतप्रदीपैः गुणे शतदानेनापरेण कारितः बिहारेपि भगवते रेत्यपद्ध।

2। हग्रटां पाक्षय नः धिकरो धमशत तं दं वं ग प्रदेष च च नं पं × × × × पं × मनीनू माधुरं लातीतं तदसं सव्यं चा प्रहतत × क्षनुमत्पादितं तदेतत् सर्व्वं यन्मया बुद्धौ प्रचेतमभारंतन।

मेजर मीड (Major Mead) ने बोधगया के बड़े मन्दिर की एक कोठरी से एक मूर्त्ति निकाली थी उस के पांव के समीप निम्नलिखित लिपि थी–

इदमति रचित्रं सर्व्व सत्वानुकम्पिने।
भवनवरमदारजितमाराय पतये॥
सु (शु) द्धात्मा कारयामास बोधिमार्गरतोयतिः।
बोधि षे (से) णो (नो) तिबिख्यातो दत्तगल्लनिवासकः॥
भवबन्धविमुत्क्यार्थं पित्रोर्बन्धुजनस्य च।
तथोपाध्यायपूर्वाणामाहवाग्रनिवासिनां॥ली॥

— • —

ए. ग्रोट साहिब (A. Grote Esqr.) प्रेसिडेन्ट बंगाल एशियाटिक सोसाइटी ने निम्नलिखित लिपि, जो एक सांढ़ (नन्दी) की मूर्त्ति के पीठ पर लिखी हुई है, एशियाटिक सोसाइटी में भेज दी थी। यह लेख कुटिलाक्षर (Kutila Character) में लिखा हुआ है। भीमकउल्ला के पुत्र भी सुफन्दी भट्टारक ने यह मूर्त्ति सम्वत 781 में सन्तति के लिए चढ़ाई थी।

ए सम्ब 781 वैशाख बदि 9 षरुध्य ग्रामब × × × × त्तम भिमक उल्लसुतेन श्री सुफन्दिनभट्टारक अ (?) ग्र (?) त्त मतया × × । त्मनापत्यहेतोः वृषभट्टारकप्रतिष्ठितेति ।

— • —

जनरल कनिङ्गहम (General Cunningham) ने बोधगया के मन्दिर के फाटक के चूर के नीचे एक पत्थर देखा था जिस पर निम्नलिखित लिपि खुदी हुई है। यह लेख 20 लाइन में है और कुटिलाक्षर में लिखा हुआ है।

(1) नमोबुद्धाय॥ आसीद्दृप्तनरेन्द्रवृन्दविजयी श्रीराष्ट्रकूटान्वयः श्रीमान्नन्द इति त्रिलोकविदितस्तेजस्विनामग्रणीः। सत्येन प्रययेन शौचविधिना श्लाघ्येन विख्यापितस्त्यागैः कल्प महीरुहः प्रणयिरूरु प्राज्ञो नरेन्द्रात्मजः॥

(2) यो मत्तमातङ्गमभिद्रवन्तन्नरेन्द्रवीथ्यांऽतुरगेन्द्रगागी।
कशाभिघातेन विजित्य वीरः प्रख्यातवानूहस्तितलप्रहारः॥

(3) दुर्गं दुर्जयमूर्जितक्षितिभुजामत्युत्तमैर्विक्रमैः श्रीमद्धाम कृपाण पुण्यविभ वैरुच्चैर्विजिग्ये च यः। येनाद्यापि नरेन्द्रसंसदि सदा सम्भूतरोमोदग्मैर्व्वर्ण ङ्मैर्मणिपूरदुर्गधवलः संवर्ण्य सूरिभिः॥

(4) यः शौर्यातिशयादनल्पसदृशात्ख्यातो महोभृद्रकः (?) सन्मार्गेण गुणावलोक इति च श्लाध्यामभिख्यान्दधौ। गेयैर्बुद्धगुणाह्वयैरभिन वस्वान्तर्व्विशोषोद्गतैर्यश्चान्ते तनुमुत्ससर्ज विधि वद्योगीव तीर्थाश्रयः॥

(5) तस्यालि सूनुर्विजितारिवर्गः प्रतापसंतापितदिग् विभागः। प्रहर्षितार्थिव्रज पद्मषंडः पूषेव पादाश्रितसर्व्व लोकः॥

(6) धर्म्मार्थकामेषु गृहीतसारः श्रिया सदाराधितपादूषद्मः। अरातिमातङ्गकुलैक सिंहस्त्रिलोकविख्यातयशः पताकः॥

(7) कोपे यमः कल्पतरुः प्रसादे प्रयोगमार्गप्रणयी कलानां। अगण्यविक्रान्त विलासभूमिः प्रभूतसद्वर्णशशांककीर्त्तिः॥ रूपोदयैरर्पितचित्रयोनिर्मतङ्गजारोहनलब्ध शब्दः। तुरंतङ्गमाध्यासनकौशलाप्तः प्रभासते राजसु कीर्त्तिराजः॥

(8) तस्यात्मजः शुभशतोदितपुण्यमूर्त्तिः साक्षानमनोभव इव प्रयतात्मभावः। दृप्तद विषद्विपिनवन्हिरुदीर्णदीप्तिरस्तीह तुंग इतिसान्वयनामधेयः॥

(9) कामिनीवदनपङ्कजतिग्मभानुर्विद्वन्मनः कुमुदकाननकान्तरश्मिः। शास्त्रप्रयोगकुशलः कुशलानुवर्त्ती धर्म्मावलोकइति च प्रथितः पृथिव्याम्॥

(10) शैलेन्द्रस्य द्विमूर्त्तीननवरतगलद्दानमत्तद्विरेफश्रेणीसङ्कीर्णनादप्रतिगज-विजयोद्गारिभेरीविरावान्। दृष्ट्वा यो दन्तिशास्त्रेषु गुरु रिव गुरुः प्रो गु × × × × लोलः कालजः पुण्यपूतः कलयति मृगवद्वन्यकानूवारणेन्द्रान्॥

(11) येनागाधतया जितो जलनिधिः शान्त्या मुनिस्तेजसा भानुः कान्ततया शशी मृगपतिः शौर्य्येण नीत्या गुरुः।

कर्णस्त्यागितया विलासविधिना दैत्यद्विषामीश्वरः वाचालापितया यथार्थपदया नैवास्ति यस्योपमा॥

(12) धत्ते यः श्रीनिधानं हृतकलिचलितं धर्म्ममामूलमुच्चैरुत्तुंगैः स्वर्गमार्गप्रणयिभिरतुलैः कीर्त्तनैः शुद्धकीर्त्तिः कुर्वतसेवामनिन्द्यामनुदिनममलैरन्नपानैर्यतीनां शिष्टैस्मत्कारयत्रैर्भव इव चलितं रावणेनाचलेन्द्रम्॥

(13) तेन प्रसन्नमनसा जितमारशत्रोरुत्तीर्णजन्मजलधेरसृ × × भवैकवन्धोः। श्रीमद्विशुद्धगुणरत्नस–विप्रेन्द्रशेखरितपादसरोजरेणोः॥

(14) मोहान्धकारनिधनोद्गतभास्करस्य संग्रामरेणुशमनैकघनाधनस्य। द्वेषोरगोद्धरण-कर्म्मणि तार्क्ष्यस्य गिरिदारणवज्रधाम्नः॥

(15) स्फुर्ज्जत्प्रवादिकरियूथमृगाधिपस्य नैरात्म्यसिंहनिनदप्रविभावितस्य धर्म्माभिषेकपरिपूतजगत्त्रयस्य–गुणरत्नमहार्णवस्य॥

(16) निर्म्मापिता गन्धकुटीयमुच्चैः सोपानमालेव दिवो दिदेश। गृहीतसारेण धनोदयानामनित्यताभावितमा–॥

(17) तरामर्शविचक्षणेन शरत्प्रसन्नेन्दुमनोहरेण। मदानभिज्ञेन गुणाभिरामैरा वर्जिताजय्यसमागमेन॥

(18) मुनिरिह गुणरत्न–प्रजानामभयपथविदर्शी सन्निधत्तां सदैव। विदधदभिमतानां सिद्धिमभ्युन्नतीनामनयविमुखबुद्धेर्दायकस्यास्य भूयः॥ त देवराज सम्वत् 15 श्रावणदिनपंचम्यां। सिंहलद्वीपजन्मना पंडितरत्न श्रीजनभिक्षुणा॥

* * *

एक मूर्त्ति पर बोधगया में यह लेख लिखा है। यह दो पंक्ति में है जो प्रत्येक 6 फीट लम्बी है। पूर्णभद्र सुमंतस के पुत्र ने इस (मूर्त्ति) को बनवाया था। इस से उस का और उस के वंश का कुछ वृत्तान्त मालूम होता है।

1। बावस्तस्यैव स्वसङ्घतः सङ्घः।
2। सिध्धा। परः श्रीमान् तस्य सुतः श्रीधर्म्मः।
3। थ्र्थिय जगती कृत्तिक प्रतापनेग्रतां यातः॥ तेनयशः
1। सिन्धौ दातृ × गजो गल्लभूमज–
नरवर सिक्ष ग
2। नुसपुररन्ध्री सदुदयकम × पुनः पूतः श्री दुर्गजयसेनः
कुमा कु तर सयू शुभं
म्बोधिलासुकृत ग
1। ये धर्म्मा हेतुप्रभवा हेतुस्तेषां तथागतः ह्यवदत् तेषाञ्चयो निरोध स्वंवादी महा–
2। श्रमणः।
3। श्रीसामन्तस्तदात्मजस्तस्य। श्रीपुनुभद्रनामा प्रतापेन चन्द्रमः कोत्तिः। द्राक्ष

1। सु × यिष्ठो × × श्रीमान्
2। सेनोसन द्योतः। श्रीमति उदंडपूरे येन
3। तिलरलकता × सिंव चन्द्रनमवृतः सुधियः॥

— ● —

महाबोधी मन्दिर के समीप एक पत्थर के टुकड़े पर खोदी हुई निम्न लिखित लिपि डब्ल्यू हाथोर्न (W. Hawthorne Esqr.) ने पायी थी, उस पत्थर को बचनन हमिलटन (Mr. Buchanan Hamilton) ने ईस्ट इंडिया कम्पनी के म्यूजियम (Musium) में रख दिया था।

नमोबुद्धाय संकल्पोयं प्रवरमहावीरस्वामिनः परमोपासकस्य दैवज्ञचरणारविन्द-मकरन्दमधुकरहलकारभूपालवेश्मोत्पन्नाऽकृस्ननृपति गुरुह नारायण रिपुराज मत्तगज सिंहति रिवल महीपाल जनकेत्पादिनिजनिरखेल प्रशस्ति समलंकृतं सपादलक्ष शिखरिख समेण राजाधिराज श्रीमदशोकचन्द्रदेवनिष्ठभ्रातृ श्रीदशरथनामधेय- कुमारपादपद्मोपजीवि भारदागारिक सत्यव्रतपरायणाविनिवर्त्तनीयबोधिसत्व चरितस्कन्धिस्वकुलदीय श्री सहस्रपातु नामधेयस्य महात्मक श्रीचाट ब्रह्मसुतस्य महामहात्मक श्री ऋषि ब्रह्मपौत्रस्य यदत्रपुयं तद्धभट्टाचार्य्योपाध्याय मातापित्र शर्वाङ्गसङ्गता सकल पुण्यराशि रनन्तविज्ञानफलावाप्तव इति श्रीमल्लक्षण सेनदेवपादानामतीतराज्ये सं. 79 वैशाख वदि 12 गुरौ।

— ● —

बोधगया के बड़े मन्दिर के बारहदरी के सामने एक छोटे मन्दिर में एक संगमरमर के तख्ते पर तीन लिपि खोदी हुई है। यह तख्ता कुछ नीले रंग का चार फीट लम्बा और दो फीट तीन इंच चौड़ा है। इस के आगे की ओर दो लिपि है, पहली अपभ्रंश पालीभाषा में और दूसरी ब्रह्मा देश की भाषा में है? और तख्ते की पिछली ओर तीस पंक्ति ब्रह्मा देश की भाषा में है? परन्तु यह संस्कृत नहीं है। उन में से केवल पालीलिपि को यहां नागरी अक्षर में प्रकाश किया है–

1। नमस्तस्मै भगवते अरहते सम्यक् सम्बुद्धाय॥जयतु॥ बोधिमूले जिनाः सर्व्वे सर्व्वजुतो तथा अयं। जयतं धर्म्मगतापि बोधिप्रसादनेन सा। पथ्यावर्त्तश्लोक। अयं महाधर्म्मराजा अनेकशेनिभप्रतिच्छद्दन्तगजराजस्वामि अनेकशतामं आदित्यकुलसम्मतानं। पीतुपीतामहअव्ययकपाय्यकादिमहा धर्म्मराजनं सम्यक्दि।

2। ष्टिकानं धर्म्मिकानं प्रवरराजवंशानुक्रमेण असम्मितक्षेत्रिय वंशजो। सन्ध्याशीलाद्यनेकगुनाधिबासो। दानरागेण सन्तोषमानसो। धर्म्मिको धर्म्मगुरुधर्म्मकेतु धर्म्मध्वजो। बुद्धादिरतनत्रये सततं समितं निम्नपोण प × रहूदयो। नानाविधानि। शारिरिक, परिमोग उद्देश्यक चैत्यानि नानाप्रकारेण नन्दति माने।

3। ति पूजेति संस्करोति। मारजयनक्लेशविध्वंसनसर्ब्बंधर्म्मविधातनवीरभूतं महाबोधिम्बि। अभिप्रसादेन पुनप्पुनं मनसि × × × × । संमति परिवृन्दति कलैरारम्भने गन्य। सप्तपञ्चद्विके गते। वसूरतवभूवर्व्वे? । धर्म्म विहगे नमारबन्धः। पुराकपिल व × × माया देव्यो सुद्धोदनी। निक्षमित्वा × स्तनूले अनु × अ ×।

4। तं पदं तेन सुदेसिनो धर्म्मो संधो चास्यानुशासितो। दिश्यते दानिलोक। मू बोधित्वस्य न दिश्यते। इति हि पूराणतन्त्रागतानुरूपं। अयं महाधर्म्मरागमनसि करोनो विमसन्तो। परिपृच्छन्ती पीतामहच्छद्दन्त गजराजस्वामि महाधर्म्मराजकाले। मध्यपदैरागतैहि वाणिरैहि ब्राह्मणैहि × गीहि च।

5। मगधराष्ट्रे। गयाशीषपदे च नद्यानेरञ्जनाग्रतीरे सुसमे भूमिभागे। वनप्रतिभूत्वा प्रतिष्ठिभावं। अर्धखंडसाखाप्रमाणेन हस्तशत विस्ताराद् ये धर्म्मभावं। × कादी पाति हरार्य्य गृहणक। लेयय। षिद्दानं दक्षिण महासाखाय स्वयमेवच्छिन्नाकारदषा मानभावं बोधिमंडसंखानवज्रासनयानसिरिधम्मा सोके।

6। न नाम सकल जम्बुद्वीपेश्वर महाराज्ञाकृतचेतियस्य विद्यमानभावं। पूर्ब्बे षड्शतसप्तपन्नापसकराजे श्वेतगजेन्द्रमहाराजेन तं चैत्यमतिसंखरित्वा धर्म्मभासाय सेनज्ञ स्वामिनभावं च श्रुत्वा। तदेतद् वचनं अनेकतन्त्रागतवचनेन सं सन्दति समेति। यथातं गंगोदकेन यमुनोदकस्मि। युक्तायुक्तं बिदि।

7। त्वा। अवश्यमेवेषं भगवता सह जातो महाबोधीसि निसंषयं। सन्निधानमकासि। यथावत् कठोन विशेष नियमिते हि। मनुरपानं क्षेत्रवस्त्वादिकर्म्मकरण × ततो यथानुक्रममुन्नतभावेन षदवी युगेधे। अष्टराजकरोष मात्रविस्तारोकेष मश्रु प्रमाणानम्पिति णानमधिहल्ले। समन्तातिनलना।

8। गन्धं गुम्बबनघ्रतीनं प्रदक्षिणावद्याभिमूखपरिवारितों रजतवर्णबालुकाबिप्रकिर्ण। भेरितलमिव समे भूमिभागे। बोधिमंड संघायस्थ वज्रासनपल्लंकस्य अपस्मयफलकमिव सन्धुक्षुत्वा। साखा पर्ण × मणिपत्रमिव पटिच्छादेत्वा महाबोधिवृक्षः प्रतिष्ठाति तस्मिन् पनवज्रासनपल्लंके अत (न)।

9। न (त) ग्रेपि काले सर्व्वेपि असंख्येया सम्यक् समूबुद्धा आणाप्राणवस्तुज्ञानपादकन्धत्रिराकोटिषतसहमूसबिपस्सता ज्ञानसंघातं महाबज्रज्ञानं भावेत्वा अ।

10। मार्गपदष्ठान सर्ब्बज्ञान ज्ञानपति रभिसु। न याहिसे। सणूवहन्ते कल्पे पयस सणवहितो। विनाश्यन्तेपि प × विन्नश्यन्तो अचलपदेषो पृथुद्वीप × बो।

11। धिमंडो नाम होति॥ एवं अतिच्चरिय मन्वच्चरिय महाबोधिवृक्ष एकसत विदित्वा अभिप्रसादमानसो। यथा कालि × चक्रवृत्तिसिरिधम्मासोको प × महिकोसलो। महार्य्य यतिर्वो महाबोधिमभिपूजेसु। तथा पूजेतुकामो। सिरिपबर सुधम्ममहाराजाधिराजाति। मूलभासाय श्रीप्रबरधम्मिक राजा × × × मल।

12। ञ्चतो अनेकश्चेति × प्रतिसरदकुमुदकुन्दइन्दु प्रभासमानबर्णच्छद्दतन्गजराजस्वामिमहाधर्म्मराजा। पुरोहित महाराजिन्द अगूग महाधर्म्मराज गुरुभि ×

नं भूमिनन्दभारिकामत् पंचमहाराजाभिरूप सागरसूरनाभकं। अनेकशतपरिजनेहि
मूद। द्विसहस्सत्रिशतपञ्चषष्टिसासनबर्षे। एकसहस्मै

13। शिक शतत्याशीतिसकराजे कार्त्तिकमाससरदक्रतुपं। स्वबिजिनरक्ताङ्गदेन नु
सार जलजस्थलजमार्गण पेसेत्वा सरिच्चर महाराजिन्दाररता देवी नामिकाय
अग्गमहेसिया सार्द्धं। महाबोधिमूले बुद्धत प्राप्तं भगवन्तमुद्देष्य। दक्षिणादकं
पातन्तो। इमं महापृथुविं साक्षिं कृत्वा महार्घ्य।

14। हि सोर्ण रोप्य माणिवथ विचित्रेहि। ल। ×। छत्र। ध्वज। पद्योत। कलश।
मालाङ्ग लेहि महाबोधिमभिपूजेसि। संसारौधनिर्म्मुग्ग सत्वगणताणर्ह्म पि बुद्धत
प्रयतमकासि। मातापीतुपीतामहआय्यक पाय्यकादिनं पि सत्वानं पुण्यभागमदासि॥
यथानेह रविससि। यावत् क्षयाबतिष्ठति।

15। तथापि दसेलक्षरं। तिष्ठतं अनुमोदयति। इदमनेकश्चेतिभप्रतिच्छदन्दतगजरा-
जस्वामिमहाधर्म्मराजोत्तरं पुज्यसेलदारं। महाजेयसहस्नामेन पंडितामन्येन बन्धितं।
इदं सेलक्षरं सिरिराजिन्दमहाधर्म्मराजगुरुनामिकेन पुरोहितेन नागरीलेखाय लिक्षितं।

: ॥ : ॥

ऐतिहासिक रचनाएं

भूमिका

यह वंशावली परम्परा की जनश्रुति और प्राचीन लेखों से संगृहीत हुई है परन्तु इस का विशेष भाग भविष्य पुराण के उत्तर भाग में के श्रीमहालक्ष्मी व्रत की कथा से लिया गया है। इस में वैश्यों में मुख्य अगरवालों की उत्पत्ति लिखी है। इस बात का महाराज जय सिंह के समय में निर्णय हुआ था कि वैश्यों में मुख्य अगरवाले ही हैं। इन अगरवालों का संक्षेप वृत्तान्त इस स्थान पर लिखा जाता है। इन का मुख्य देश पश्चिमोत्तर प्रान्त है और बोली स्त्री और पुरुष सब की खड़ी बोली अर्थात् उर्दू है। इन के पुरोहित गौड़ ब्राह्मण हैं और इन का व्यवहार सीधा और प्रायः सच्चा होता है और इस जाति में एक विशेषता यह है कि इन में कोई ऊंचे नीचे नहीं होते और न किसी को कोई अल्ल (उपाधि) होती है। बनारस और मिरजापुर में तो पुरबियों का नाम भी सुनाता है पर जो देश में पूछो कि तुम पुरबिए हौ कि पछांही तो वे लोग बड़ा आश्चर्य करते हैं और कहते हैं कि पुरबिए शब्द का क्या अर्थ है। बनारस के पछांही लोगों में भी ठीक अगरवाले की रीतैं नहीं मिलतीं और उन की बोली भी वैसी नहीं है। केवल जो घर दिल्ली वाले लोगों के हैं उन में वे बाते हैं। इन लोगों में जैसा विवाहादिक में उत्साह होता है वैसा ही मरने में बरसों दुःख भी करते हैं परन्तु जो बूढ़ा मरता है तब तो विवाह से भी धूमधाम विशेष कर देते हैं!!!

देश में तो जामा पगड़ी पहन के सब दाल भात खाते हैं पर इधर यह व्यवहार नहीं करते और केवल पूरी खाने में जाति का साथ देते हैं। एक बात यह भी इस जाति में उत्तम है कि अगरवालों में मांस और मदिरा की चाल कहीं नहीं है पर हुक्का इन के पुरोहित और ये दोनों पीते हैं यों जो लोग नेमी हों वे न पियें पर जाति की चाल है। विवाह के समय इनका बहुत व्यय करना सब में प्रसिद्ध है और इसी बिपत से कई घर बिगड़ गए पर यह रीति छोड़ते नहीं। इन में कुछ लोग जैनी भी होते हैं। और देस में सब जनेऊ पहिरते हैं पर इधर पूरब में कोई कोई नहीं भी पहिरते। इन के पुरुषों का पहिरावा पगड़ी पायजामा या धोती और अंगा है और स्त्रियों का पहिरावा ओढ़ना घंघरा या छोटेपन में सुथना है। और दशों संस्कार होने की चाल इन में अब तक मिलती है। पुरबियों के अतिरिक्त मारवाड़ी अगरवाले भी होते हैं

पर इनका ठीक पता नहीं मिलता कि कब से और कहां से हैं। जैसे पछांही अगरवालों की चाल खत्रियों से मिलती है वैसे ही इन मारवाड़ियों की महेशारियों से मिलती है पर पुरबियों की चाल तो इन दोनों से विलक्षण है।

अगरवालों की उत्पत्ति की भूमिका में यह बात लिखनी भी आनन्द देने वाली होगी कि श्रीनन्दरायजी, जिन के घर साक्षात् श्रीकृष्णचन्द्र प्रगट हुए, वैश्य ही थे और यह बात श्रीमद्भागवतादि ग्रन्थों से भी निश्चय की गई है। जो हो, इस कुल में सर्व्वदा से लोग बड़े धनवान और उदार होते आए पर इन दिनों वे बातें जाती रही थीं। मुगलों के समय से इन की वृद्धि फिर हुई और अब तक होती जाती है।

मैंने इस छोटे से ग्रन्थ में संक्षेप से इन की उत्पत्ति लिखी है। निश्चय है कि इसे पढ़ के वे लोग अपनी कुछ परम्परा जानैंगे और मुझे भी अपने दीन और छोटे भाइयों में स्मरण रक्खैंगे।

श्री हरिश्चन्द्र

वैशाख शुद्ध 5 सं. 1928
काशी

अगरवालों की उत्पत्ति

वैश्यवंशावतंसाय भगवते श्रीकृष्णचन्द्राय नमः

अगरवालों की उत्पत्ति

दोहा

विमल वैश्य वंशावली, कुमुदबनी हित चन्द।
जयजय गोकुल, गोप, गो, गोपीपति नन्दनन्द॥

भगवान ने अपने मुख से ब्राह्मण और भुजा से क्षत्री और जांघ से वैश्य और चरण से शूद्रों को बनाया। उस में वैश्य को चार कर्म का अधिकार दिया—पहिला खेती, दूसरा गऊ की रक्षा, तीसरा व्यापार और चौथा ब्याज। जैसे वेद और यज्ञादिक का स्वामी ब्राह्मण और राज्य और युद्ध का स्वामी क्षत्री वैसे ही धन का स्वामी वैश्य है और ब्राह्मण क्षत्री वैश्य इन तीनों की द्विज संज्ञा है और तीनों वर्ण वेदकर्म के अधिकारी हैं। पहिला मनुष्य जो वैश्यों में हुआ उसका नाम धनपाल था, जिसे ब्राह्मणों ने प्रतापनगर में राज पर बिठा कर धन का अधिकारी बनाया। उस के यहां आठ पुत्र और एक कन्या हुई। उस कन्या का नाम मुकुटा था और वह याज्ञवल्क्य ऋषि से ब्याही गई। उन आठ पुत्रों के ये नाम थे—शिव, नल, अनिल, नन्द, कुन्द, मुकुन्द, बल्लभ और शेखर। इन पुत्रों को अश्वविद्या शालिहोत्र के आचार्य विशाल राजा ने अपनी आठ बेटियां ब्याह दी थीं। उन कन्या लोगों के ये नाम थे और यही वैश्य लोगों की मात्रिका हैं—पद्मावती, मालती, कान्ती, शुभ्रा, भव्या, भवा, रजा और सुन्दरी। इन का ब्याह नाम के क्रम से हुआ। इन आठ पुत्रों में नल नामा पुत्र जोगी दिगम्बर होकर वन में चला गया और सात पुत्रों ने सात द्वीप का अधिकार पाया। और पृथ्वी में इन का वंश फैल गया। जम्बू द्वीप में विश्य नामा राजा हुआ जो आठ पुत्रों में शिव के कुल में था और उस विश्य को वैश्य हुआ। उस के वंश में एक सुदर्शन राजा हुआ, जिस के दो स्त्रियां थीं जिन के नाम सेवती और नलिनी थे। उस का पुत्र धुरन्धर हुआ। इसी धुरन्धर का पड़पोता समाधि नामा वैश्य हुआ था। इसी समाधि के वंश में मोहन दास बड़ा प्रसिद्ध हुआ, जिस ने कावेरी के तट पर श्रीरंगनाथजी के बहुत से मन्दिर बनाए। इस का पड़पोता नेमिनाथ हुआ, जिस ने नैपाल बसाया

और उसका पुत्र वृन्द हुआ, जिसने श्री वृन्दावन में यज्ञ करके वृन्दा देवी की मूर्त्ति स्थापन किया। इस वंश में गुर्जर बहुत प्रसिद्ध हुआ, जिस के नाम से गुजरात का देश बसा है। इस के वंश में हीर नामा एक राजा हुआ, जिस के रंग इत्यादिक सौ पुत्र थे, जिन में रंग ने तो राज पाया और सब बुरे कर्मों से शूद्र हो गए और तप के बल से फिर इन लोगों ने वंश चलाये, जिन के वंश के लोग वैश्य हुए पर उन के कर्म शूद्रों के से थे। रंग का पुत्र विशोक हुआ, उस के पुत्र का नाम मधु और उसका पुत्र महीधर हुआ। महीधर ने श्री महादेवजी को प्रसन्न कर के बहुत से बर पाए। इस के वंश में सब लोग व्यौहार में चतुर और सब धन और पुत्र से सुखी थे।

इसी वंश में वल्लभ नामा एक राजा हुए और उस के घर में बड़े प्रतापी अग्र राजा उत्पन्न हुए। इस को अग्रनाथ और अग्रसेन भी कहते थे। यह बड़ा प्रतापी था। इस ने दक्षिण देश में प्रतापनगर को अपनी राजधानी बनाया। यह नगर धन और रत्न और गऊ से पूर्ण था। यह ऐसा प्रतापी था कि इन्द्र ने भी उस से मित्रता की थी। एक समय नाग लोक से नागों का कुमुद नाम राजा अपनी माधवी कन्या को लेकर भूलोक में आया और उस कन्या को देख कर इन्द्र मोहित हो गया और नागराज से वह कन्या मांगी। पर नागराज ने इन्द्र को वह कन्या नहीं दी और उस का विवाह राजा अग्र से कर दिया। यही माधवी कन्या सब अगरवालों की जननी है और इसी नाते से हम लोग सर्पों को अब तक मामा कहते हैं।

इन्द्र ने इस बात से बड़ा क्रोध किया और राजा अग्र से बैर मान कर कई बरस उन की राजधानी पर जल नहीं बरसाया और अग्रराजा से बड़ा युद्ध किया, तब भगवान ब्रह्मदेव ने दोनों को युद्ध से रोका। इस से राजा अपनी राजधानी में फिर आया और राज अपनी स्त्री को सौंप के आप तीर्थों में घूमने चला गया और सब तीर्थों में फिर कर महालक्ष्मी की उपासना किया और काशी में आकर कपिलधारा तीर्थ पर महादेवजी का बड़ा यज्ञ कर के बहुत सा दान किया, तब श्री महादेवजी प्रसन्न होकर प्रगट हुए और कहा कि बर मांगो तब राजा ने कहा कि मैं केवल यही बर मांगता हूं कि इन्द्र मेरे वश में होय। इस पर प्रसन्न होकर अनेक वर दिए और कहा कि तुम महालक्ष्मी की उपासना करो तुम्हारी सब इच्छा पूरी होगी। यह सुन कर राजा फिर तीर्थ में चला और एक प्रेत की सहायता से हरिद्वार पहुंचा और वहां से गर्गमुनि के संग सब तीर्थों में फिरा और जब फिर हरिद्वार में आया तब वहां महालक्ष्मी की बड़ी उपासना किया और देवी ने प्रसन्न होकर बर दिया हि इन्द्र तेरे वश में होगा और तेरे वंश में दुःखी कोई न होगा और अन्त में तुम दोनों स्त्री पुरुष ध्रुवतारा के आसपास रहोगे और इस समय तुम कोलापुर में जाओ, वहां नागराज के अवतार राजा महीधर की कन्याओं का स्वयंवर है वहां उन कन्याओं से ब्याह कर के अपना वंश चलाओ। देवी से ये वर पाकर राजा कोलापुर में गया और वहां उन कन्याओं से धूमधाम से ब्याह किया और फिर कर दिल्ली के पास के देशों में आया और पंजाब के सिरे से आगरे तक अपना राज

स्थापन किया और इन्हीं देशों में अपना वंश फैलाया। जब इन्द्र ने राजा के बर का समाचार सुना तब तो घबड़ाया और उस से मित्रता करनी चाही। और इस बात के हेतु नारदजी को भेजा और एक अप्सरा जिसका नाम मधुशालिनी था देकर मेल कर लिया। इस के पीछे राजा अग्रसेन ने जमुनाजी के तट पर श्री महालक्ष्मी का बड़ा तप किया और श्रीलक्ष्मीजी ने प्रसन्न होकर ये बर दिए कि आज से यह वंश तेरे नाम से होगा और तेरे कुल की मैं रक्षा करने वाली और कुलदेवी हूंगी और इस कुल में मेरा दीवाली का उत्सव सब लोग मानैंगे। यह वर देकर श्री महालक्ष्मी चली गईं। तब राजा ने आकर अपना राज बसाया। उस राज की उत्तर सीमा हिमालय पर्व्वत और पंजाब की नदियां थीं और पूर्व्व और दक्षिण की सीमा श्रीगंगाजी और पश्चिम की सीमा जमुनाजी से लेकर मारवाड़ देश के पास के देश थे। इन के वंश के लोग सर्व्वदा इन्हीं देशों में बसे। इस से मुख्य अगरवाले लोग वे ही हैं जो पंजाब प्रान्त से इधर मेरट आगरे तक के बसने वाले हैं। अगरवालों के मुख्य बसने के नगर ये हैं–1. आगरा, जिस का शुद्ध नाम अग्रपुर है। यह नगर राजा अग्र के पूर्व दक्षिण प्रदेश की राजधानी था। 2. दिल्ली, जिसका शुद्ध नाम इन्द्रप्रस्थ है। 3. गुड़गांवा, जिसका शुद्ध नाम गौड़ ग्राम है। यह नगर अगरवालों के पुरोहित गौड़ ब्राह्मणों को मिला था, इसी से प्रायः अगरवाले लोग यहीं की माता को पूजते हैं। 4. मेरट, जिस का शुद्ध नाम महाराष्ट्र है।[1] 5. रोहतक, जिस का शुद्ध नाम रोहिताश्व है। 6. हांसीहिसार, जिस का शुद्ध नाम हिंसारि देश है। 7. पानीपत, जिस का शुद्ध नाम पुन्यपत्तन जाना जाता है। 8. करनाल। 9. कोट कांगड़ा, जिसका शुद्ध नाम नगर कोट है। अगरवालों की कुलदेवी महामाया का मन्दिर यही है और ज्वालाजी का मन्दिर भी इसी नगर की सीमा में है। 10. लाहौर, इस नगर का शुद्ध नाम लवकोट है। 11. मंडी, इसी नगर की सीमा में रैवालसर तीर्थ है। 12. बिलासपुर, इसी नगर की सीमा में नयना देवी का मन्दिर बसा है। 13. गढ़वाल। 14. जींदसपीदम। 15. नाभा। 16. नारनौल, इस का शुद्ध नाम नारिनवल है। ये सब नगर उस राज में थे और राजधानी का नाम अग्र नगर था, जिसे अब अगरोहा कहते हैं। आगरा और अगरोहा[2] ये दोनों नगर राजा अग्रसेन के नाम से आज तक प्रसिद्ध हैं। राजा अग्रसेन ने अपनी राजधानी में महालक्ष्मी का एक बड़ा मन्दिर किया था।

राजा अग्रसेन ने साढ़े सत्रह यज्ञ किए। इसका कारण यह है कि जब राजा ने अट्ठारहवां यज्ञ आरम्भ किया और आधा हो भी चुका तब राजा को यज्ञ की हिंसा से बड़ी ग्लानि हुई और कहा कि हमारे कुल में यद्यपि कहीं भी कोई मांस नहीं खाता परन्तु दैवी हिंसा होती है, सो आज से जो मेरे वंश में हो उस को यह मेरा आन है कि दैवी हिंसा भी न करै। अर्थात पशुयज्ञ और बलिदान भी हमारे वंश में न होवै

---

[1] इसको कोई मयराष्ट्र भी कहते हैं।

[2] अब यह एक गांव सा बच गया है।

और इस से राजा ने उस यज्ञ को भी पूरा नहीं किया। राजा को सत्रह रानी और एक उपरानी थीं। उन से एक एक को तीन तीन पुत्र और एक एक कन्या हुई और उसी साढ़े सत्रह यज्ञ से साढ़े सत्रह गोत्र हुए। कोई लोग ऐसा भी कहते हैं कि किसी मनुष्य का ब्याह जब गोत्र में हो गया तो बड़े लोगों ने एक ही गोत्र के दो भाग कर दिए, इस से साढ़े सत्रह गोत्र हुए पर यह बात प्रमाण के योग्य नहीं है। राजा अग्र के उन बहत्तर पुत्र और कन्याओं के बेटा अग्रवाल कहाए। अग्रवाल का अर्थ अग्र के बालक हैं। अग्रवालों के साढ़े सत्रह गोत्रों के ये नाम हैं– 1. गर्ग, 2. गोइल, 3. गावाल, 4. बातसिल, 5. कासिल, 6. सिंहल, 7. मंगल, 8. भद्दल, 9. तिंगल, 10. ऐरण, 11. टेरेण, 12. ठिंगल, 13. तित्तल, 14. मित्तल, 15. तुंदल, 16. तायल, 17. गोभिल और गवन अर्थात गोइन आधा गोत्र है, पर अब नामों में के कुछ अक्षर उलट पुलट भी हो गए हैं। राजा अग्र ने अपने सहायक गर्ग ऋषि के नाम से अपना प्रथम गोत्र किया और दूसरे गोत्रों के नाम भी यज्ञों के अनुसार रक्खे। राजा अग्र ने अपने कुल पुरोहित गौड़ ब्राह्मण बनाए और उस काल में सब अगरवाले वेद पढ़नेवाले और त्रिकाल साधनेवाले थे। राजा अग्र बूढ़ा होकर तप करने चला गया और उस का पुत्र विभु राज पर बैठा और उस के कई वंश तक राजा लोग अपने धर्म्म में निष्ठ होकर राज करते रहे। इस वंश में दिवाकर एक राजा हुआ, जो वेदधर्म्म छोड़ कर जैनी हो गया और उस ने बहुत से लोगों को जैनी किया और उसी काल से अगरवालों में वेदधर्म्म छूटने लगा परन्तु अगरोहा और दिल्ली के अगरवालों ने अपना धर्म्म नहीं छोड़ा। इस वंश में राजा उग्रचन्द्र के समय से राज घटने लगा और जब शहाबुद्दीन ने चढ़ाई किया तब तो अगरोहा सब भांति नाश कर दिया। शहाबुद्दीन की लड़ाई में बहुत से लोग मारे गए और उन की बहुत सी स्त्री सती हुईं; जो हम लोगों के घर में अब तक मानी और पूजी जाती हैं। यह अगरवालों के नाश का ठीक समय था। इसी समय से इन में से बहुतों ने धर्म छोड़ दिए और यज्ञोपवीत तोड़ डाले। उस समय जो अगरवाले भागे वे मारवाड़ और पूर्व में जा बसे और उन के वंश में पुरबिये और मारवाड़ी अगरवाले हुए, और उतराधी और दखिनाधी लोग भी इसी भांति हुए, पर मुख्य अगरवाले पछांही वे ही कहलाए जो दिल्ली प्रान्त में बच गए थे। जब मुगलों का राज हुआ तब अगरवालों की फिर बढ़ती हुई और अकबर ने तो अगरवालों को अपना वजीर बनाया। उसी काल से अगरवालों की विशेष वृद्धि हुई। अकबर के दो मुख्य और प्रसिद्ध अगरवाले वजीर थे, जिन का नाम महाराज टोडरमल[1] और मद्‌धूशाह था। मद्‌धूसाही पैसा इन्हीं के नाम से चला है।

[द मेडिकल हाल प्रेस, बनारस से सन 1871
ई. में प्रकाशित]

---

[1] राजा टोंडरमल खत्री थे। (सं.)

महाराष्ट्र देश का इतिहास

महाराष्ट्र देश का इतिहास

महाराष्ट्र देश का शृंखलाबद्ध इतिहास नहीं मिलता। शालिवाहन राजा वहां के पुराने राजों ने गिना जाता है। इस से शाका चलाया है और यह भी प्रसिद्ध है कि इस ने किसी विक्रम को मारा था। इस की राजधानी प्रतिष्ठान थी, जिसे अब पैठण कहते हैं। देवगिरि का राज्य मुसलमानों के आगमन तक स्वाधीन था और रामदेव वहां का आखिरी स्वतन्त्र राजा हुआ। तेरहवें शतक में मुसलमानों ने देवगिरि (देवगढ़) विजय कर के उस का नाम दौलताबाद रक्खा। सन 1350 ई. के लगभग दिल्ली के बादशाह के जफर खां नामक सूबेदार ने दक्षिण में एक मुसलमानी स्वतन्त्र राज्य स्थापित किया और वह पहिले एक ब्राह्मण का सेवक था, इस से अपना पद ब्राह्मण रक्खा था। इस वंश ने पहिले गुलबर्गा में, फिर बिदर में, अन्दाज डेढ़ सौ बरस राज किया। सन 1500 के लगभग इस राज की पांच शाखा हो गई थीं, जिन में गोलकुंडा, बीजापुर और अहमदनगर वाले विशेष बली थे। इस वंश के राज में सन 1396 में बारह बरस का दक्षिण में एक बड़ा भारी अकाल पड़ा था। हिन्दुओं में उस समय कोंकण में सिरका नाम का केवल एक स्वाधीन सरदार था, बाकी सब लोग इन के अधीन थे। ब्राह्मणीराज्य नाश होने के समय सन 1496 ई. में वास्कोडिगामा ने पुर्तगाल लोगों के साथ कालीकट में प्रथम प्रवेश किया और सन 1510 में गोआ उन लोगों के आधीन हो गया। बीजापुर के बादशाह आदलशाही और गोलकुंडे के कुतुबशाही और अहमदनगर के निजामशाही कहलाते थे। सन 1628 में अहमदनगर की बादशाहत दिल्ली के अधिकार में हो गई और गोलकुंडा और बीजापुर भी सन 1687 ई. में दिल्ली में मिल गए।

महाराष्ट्रों का राजस्थापन करनेवाला शिवाजी सन 1627 ई. में उत्पन्न हुआ।

उस के पूर्वजों का नाम भोंसला था, जो लोग दौलताबाद के पास बेरुल गांव में रहते थे।

शिवाजी का दादा मालोजी भोंसला अपने वंश में पहिला प्रसिद्ध मनुष्य हुआ और उस ने अपने बेटे शहाजी का विवाह अहमदनगर के बादशाह के दशहजारी सरदार जादोराव की बेटी से किया और पूना सूबा बादशाह से जागीर में पाया और शिवनेरी और चाकण दोनों किलों का सरदार भी नियत हुआ।

अहमदनगर की बादशाहत बिगड़ने पर शहाजी दिल्ली में शाहजहां के पास गया और वहां से अपनी जागीर कायम रखने की सनद ले आया, पर थोड़े ही दिन पीछे किसी वैमनस्य से दिल्ली का अधिकार छोड़ कर वह बीजापुर के बादशाह से जा मिला और अपने राज्य में करनाटक के बहुत से गांव मिला लिए।

शिवाजी शिवनेरी किले में जनमा और तब उस का बाप करनाटक में रहता था, इस से उस ने छोटेपन में पूना प्रान्त में दादोजी कोणदेव से शिक्षा पाई थी। छोटे ही पन से इस में वीरता के चिन्ह और लड़ाई के उत्साह प्रगट थे।

उन्नीस बरस की अवस्था में तोरन का किला जीत लिया और दादोजी कोणदेव के मरने पर पूना के जिले का सब काम अपने हाथ ले लिया।

बीजापुर के पुरन्दर और दूसरे दूसरे कई किले अपने अधिकार में कर के उस पर सन्तोष न कर के दिल्ली के बादशाही देशों में भी लूट कर इस ने अपना बल, सेना और धन बढ़ाया।

मालवा नाम की सूर जाति के लोग इस की सेना में बहुत थे और सन 1648 ई. में बीजापुर के बादशाह से इस के कल्याण की सूबेदारी लिया, परन्तु जब बादशाह ने उस का बल बढ़ते देखा तो सन 1659 में अपने अफ़जल खां नामक सरदार को उस से लड़ने को भेजा, पर शिवाजी ने धोखा देकर इस सरदार को मार डाला।

सन 1664 ई. में शिवाजी का बाप मर गया और तब से उस ने अपना पद राजा रख कर अपने नाम की एक टकसाल जारी किया।

यह पहले राजगढ़ और फिर रायगढ़ के किले में रहता था। उस ने अपने बहुत से किले बनाए थे, जिन में राजगढ़ और प्रतापगढ़ ये दो मुख्य थे।

सन 1656 ई. में सामराज पन्त को शिवाजी ने पेशवा नियत किया।

बीजापुर का बादशाह तो शिवाजी को दमन करने में समर्थ न हुआ, औरंगज़ेब ने राजा जसवन्त सिंह को बहुत सी फ़ौज देकर शिवाजी को जीतने को भेजा, पर शिवाजी ने बादशाह के आधीन रहना स्वीकार कर के राजा से मेल कर लिया और सन 1666 में आप भी दिल्ली गया, पर वहां उस का यथेष्ट आदर न हुआ, इस से उस ने बादशाह को कटु वचन कहा, जिस से थोड़े दिन तक कैद में रह कर फिर अपने बेटे समेत दक्खिन भाग गया। कुछ दिन पीछे औरंगज़ेब ने उस को राजा का खिताब दिया और उसी अधिकार से उसने दक्खिन में सन 1670 में चौथ और सरदेशमुखी नाम के दो कर स्थापन किए। सन 1665 में इस ने पानी की राह से मालावार पर चढ़ाई की और दो बेर सूरत लूटा। जब यह दूसरे बेर सूरत लूटने जाता था तब 15000 फ़ौज इस के साथ थी और राह में हुबली नामक शहर लूटने से बहुत सा धन इस के हाथ आया और फिर तो वह यहां तक बलवान हो गया था कि जो अपने भाई बेंङ्कोजी से बाप की जागीर बंटवाने और बीजापुर का इलाका लूटने को करनाटक की तरफ गया था तो इस के साथ 4000 पैदल और 30000 सवार थे।

सामराज पन्त से पेशवाई लेकर मोरोपन्त पिंजले को उस स्थान पर नियत किया और प्रतापराव गूजर इस का मुख्य सेनापति था, जिस के मरने पर हम्बीर राव मोहिता उसी काम पर हुआ।

सन 1676 में रामगढ़ में शिवाजी का विधिपूर्व्वक राज्याभिषेक हुआ और तब इस ने आठ अपने मुख्य प्रधान रखे थे। पेशवापन्त, अमात्य, पन्तसचिव, मन्त्री, सेनापति, सुमन्त, न्यायाधीश और पंडितराव, यही आठ पद उस ने नियुक्त किए थे और अपने जीते हुए देशों का काम आकाजी सोनदेव के अधिकार में दिया।

जिस समय सब कोंकन और पूना का इलाका और करनाटक और दूसरे देशों में भी कुछ पृथ्वी इस के आधीन थी उस समय सन 1680 ई. में सम्भाजी और राजाराम नाम के दो पुत्र छोड़ कर तिरपन वर्ष की अवस्था में यह परलोक सिधारा।

शिवाजी के मरने के पीछे तेईस वर्ष की अवस्था में सम्भाजी गद्दी पर बैठा, पर यह ऐसा क्रूर और दुर्व्यसनी था कि इस से सब लोग दुखी थे। इस ने अपने छोटे भाई राजाराम की मां को मार डाला और सब पुराने कारबारियों को निकाल कर कलूसा नामक कनौजिया ब्राह्मण को सब राजकाज सौंप दिया। इस की दुष्टता से इस के पिता का सब प्रबन्ध बिगड़ गया और सब सरदार इस के अशुभचिन्तक हो गए और यहां तक कि सन 1889 ई. में जब यह संगमेश्वर की ओर शिकार खेलने गया था तो इस को मुगलों ने पकड़ कर औरंगज़ेब की आज्ञा से कलूसा ब्राह्मण समेत तुलापुर में मार डाला।

इस का पुत्र शिवाजी जिस को साहूजी कहते हैं, औरंगज़ेब की कैद में था, इस से इस का सौतेला भाई राजाराम गद्दी पर बैठा। इस ने सितारा में अपनी राजधानी स्थापन किया और पन्त प्रतिनिधि नाम का एक नया पद नियुक्त किया और बड़े भाई के बिगाड़े हुए सब प्रबन्धों को नए सिरे से संवारा। यह 1700 ई. में मरा और फिर आठ वर्ष तक इस की स्त्री ताराबाई ने अपने पुत्र शिवाजी को गद्दी पर बिठा कर उस के नाम से राज्य का काम चलाया।

इन लोगों के समय में औरंगज़ेब ने महाराष्ट्रों को बहुत बिगाड़ना चाहा, परन्तु कुछ फल न हुआ, यहां तक कि वह सन 1707 में आप ही मर गया। जब सम्भाजी का पुत्र शिवाजी औरंगज़ेब के पास रहता था तब औरंगज़ेब इस के दादा को लुटेरा शिवाजी और उस को साहू शिवाजी कहता था, इसी से दूसरे शिवाजी का नाम साहूराजा हुआ। सन 1708 ई. में जब साहू औरंगज़ेब की कैद से छूट कर आया तब सर्दारों ने उसे सितारे की गद्दी पर बिठाया, और तब उस की चाची ताराबाई ने अपने पुत्र शिवाजी को लेकर कोलापुर का एक अलग स्वतन्त्र राज स्थापन किया।

जब साहू राजा 17 वर्ष तक कैद में था तब औरंगज़ेब की बेटी उस पर और उस की मां पर बड़ी मेहरबान थी। इसी से औरंगज़ेब ने अपने यहां के दो बड़े बड़े मरहठे सरदारों की बेटी उसे ब्याह दी थी और उसे बहुत सी जागीर भी दी थी।

जब साहू राजा दिल्ली से सितारे आता था तब एक स्त्री ने अपना दूध पीने वाला बालक उस के पैर पर रख दिया था, जिस के वंश में अब अकलकोट के राजा है। साहू राजा का स्वभाव विषयी था, इसी से उस ने अपना सब काम धनाजी राव यादव को सौंप रक्खा था और उस ने आवाजी पुरन्दरे और बालाजी विश्वनाथ नाम के दो मनुष्य अपने नीचे रक्खे थे। धनाजी के मरने पर सन 1714 ई. में बालाजी विश्वनाथ पेशवा हुआ और महाराष्ट्र के इतिहास में इस का नाम सबसे प्रसिद्ध है।

साहू राजा बयालीस वर्ष राज कर के छाछठ वर्ष की अवस्था में सन 1749 ई. में मर गया और इस के पीछे सितारे का राज्य पेशवा के अधिकार में रहा। यह मरते समय लिख गया था कि ताराबाई के पोते राजाराम (रामराजा) को गोद लेकर हमारी गद्दी पर बिठा कर राजकाज पेशवा करैं।

राजाराज सन 1749 ई. में नाम मात्र का राजा होकर सन 1770 तक राज्य कर के अपुत्र मरा। फिर शिवाजी के भांजे के वंश का एक पुरुष दत्तक लेकर साहू महाराज के नाम से गद्दी पर बिठाया, जो सन 1808 ई. में मरा और उस के पीछे उस का पुत्र प्रताप सिंह गद्दी पर बैठा। इस को सन 1818 में सर्कार अंग्रेज बहादुर ने पेशवा के राज्य से बहुत मुल्क दिया, पर सन 1849 में इस पर दोषारोप होने से अंगरेजों ने इसे निकाल कर इसके छोटे भाई शाहाजी को गद्दी पर बिठाया, जो सन 1848 ई. में निर्वंश मर कर इस वंश का अन्तिम राजा हुआ और उस का सारा राज्य सरकारी राज्य में मिल गया।

दूसरा भाग

बालाजी विश्वनाथ ने पेशवा होकर सैयदों की सहायता से दिल्ली के परतन्त्र बादशाह से अपने स्वामी का गया हुआ सब राज्य फेर लिया और छह वर्ष पेशवाई कर के सन 1720 में सासवड़ गांव में मर गया। उसी साल में हैदराबाद के नवाबों का मूल पुरुष निज़ामुलमुल्क नर्मदा के इस पार आकर बादशाही सेना से लड़ाई कर रहा था और अपना अधिकार बहुत बढ़ा लिया था।

साहू राजा ने बालाजी विश्वनाथ के बड़े पुत्र बाजीराव को पेशवाई का अधिकार दिया। यह मनुष्य शूर और युद्ध में बड़ा कुशल था और उस का छोटा भाई चिमनाजी आप्पा भी बड़ा बुद्धिमान और वीर था और अपने बड़े भाई की राज्य और लड़ाई के कामों में बड़ी सहायता करता था। निजामुलमुल्क से इस ने तीन लड़ाई बड़ी भारी भारी जीती और गुजरात, मालवा इत्यादि अनेक देशों पर अपना इख्तियार कर लिया और अपनी सेना लेकर सारे हिन्दुस्तान को लूटता और जीतता फिरता था। सेन्धिया, हुल्कर और गाइकवाड़ ने इसी के समय उत्कर्ष पाया, पर सेन्धिया के पुरुषा पहले से बादशाही फौज के सार्दारों में थे। वरंच कहते हैं कि औरंगजेब ने इन्हीं पुरुषों में से किसी की बेटी साहू राजा को ब्याही थी। नागपुर वालों ने भी इसी के समय

राज पाया। चिमनाजी आप्पा ने पोर्तुगीज लोगों से साष्ठीवेट[1] का इलाका बड़ी बहादुरी से छीन लिया था। बाजीराव सन 1740 में मरा और उस का बड़ा पुत्र बालाजी उर्फ नाना साहब पेशवा हुआ। इस का एक छोटा भाई रघुनाथ राव नाम का था। इसने पूना को अपनी राजधानी बनाया। इस के छोटे भाई के अधिकार में राज्य का सब काम था। यद्यपि नाना साहब राज्य के कामों में बड़ा चतुर था पर कपटी और बड़ा आलसी मनुष्य था, पर उस के दोनों भाई अपने काम में ऐसे सावधान थे कि उस की बात में कुछ फरक न पड़ने पाया।

सदाशिव राव भाऊ ने रामचन्द्र बाबा शेणबी को साथ लेकर महाराष्ट्री राज्य का फिर से नया और पक्का प्रबन्ध किया। महाराष्ट्रों का बल उस समय पूरा जमा हुआ था और हिन्दुस्तान में ये लोग चारों ओर चढ़ाइयां करते फिरते थे। दिल्ली का बादशाह तो मानों इन की कठपुतली था। नाना साहब से नागपुर के सरदार राघोजी भोंसला से कुछ वैमनस्य हो गया था, पर साहू राजा ने बीच में पड़ कर बिहार, अयोध्या और बंगाल का मरहटी अधिकार भोंसला से छोड़वा कर आपस का द्वेष मिटा दिया।

सन 1748 ई. में एक सौ चार वर्ष का होकर निज़ामुलुमुल्क मर गया। उस के पीछे बारह वर्ष तक उस का राज्य अव्यवस्थित रहा; फिर उस के पुत्रों में से निज़ामअली नाम के एक मनुष्य ने वह राज्य पाया। रघुनाथ राव ने अटक से कटक तक हिन्दुस्तान को दो बेर जीता, पर वहां का रुपया वसूल करना हुल्कर और सेन्धिया के अधिकार में कर के आप फिर आया।

इसी अवसर में अहमदशाह अफगानों की बड़ी भारी फौज लेकर हिन्दुस्तान में मराठों को जीतने के लिए आया। तब सदाशिव राव भाऊ और पेशवा का बड़ा लड़का विश्वास राव ये दोनों सेन्धिया, हुल्कर, गाइकवाड़ और और सरदारों के साथ डेढ़ लाख पैदल, पचपन हजार सवार और दो सौ तोप की फ़ौज से दिल्ली की ओर चले और सन 1760 ई. में जब मरहठों ने दिल्ली जीती थी तब से इन की बहुत सी फ़ौज दिल्ली में भी थी सो वह फ़ौज भी इन लोगों के साथ मिल गई, पर दो महीने पीछे इन के फ़ौज में अनाज का ऐसा टोटा पड़ा कि मरहठों से सिवा लड़ने के और कुछ न बन पड़ा। यह बड़ी लड़ाई पानीपत के मैदान में सन 1761 ई. के जनवरी महीने की सातवीं तारीख को हुई। भाऊ निज़ामअली के जीतने से ऐसा गर्वित हो रहा था कि इस लड़ाई को वह बड़ी असावधानी से लड़ा। जब उस ने सुना कि विश्वास राव बहुत जख्मी हो गया है तब हाथी पर से उतर पड़ा और फिर उस का पता न लगा। जनकोजी सेन्धिया और इब्राहीम खां गारदी भी मारे गए और दूसरे भी अनेक बड़े बड़े सरदार मारे गए, और मरहठों की ऐसी भारी हार हुई कि सारे दक्खिन में सियापा पड़ गया और नाना साहब को तो इस हार से ऐसी ग्लानि और दुःख हुआ

---

1. सालसेट

कि थोड़े ही दिन पीछे परलोक सिधारे। इस मनुष्य के समय में जैसी पहिले महाराष्ट्रों की वृद्धि हुई थी वैसे ही एक साथ क्षय भी हो गया। सन 1861 में बालाजी बाजीराव उर्फ नाना साहेब के मरने के पीछे उन का पुत्र पहिला माधवराव गद्दी पर बैठा। यह स्वभाव का न्यायी सूर धीर और दयालु था। मराठी राज से बेगार की चाल इस ने एकदम उठा दी थी और गरीबों के पालने से इस का चित्त बहुत ही बहलता था। नाना फड़नवीस नामक प्रसिद्ध मनुष्य इस का मुख्य वजीर था और मराठी राज्य की आमदनी उस के समय सात करोड़ रुपया थी। इसी के काल में हैदरअली ने मैसूर के राज की नेव दी थी। इस ने राघोबा दादा को कैद करके पूने भेज दिया और आप न्याय और धर्म से ग्यारह बरस राज कर के अट्ठाईस बरस की अवस्था में क्षय रोग से मरा। इस के मरने के पीछे इस के भाई नारायण राव को गद्दी पर बैठाया, पर आठ ही महीने पीछे रघुनाथ राव ने उस को एक सूबेदार से मरवा डाला और आप गद्दी पर बैठा। इस से सब कारबारी इतने नाराज़ थे कि जब नारायण राव की स्त्री गंगाबाई (जो विधवा होने के समय गर्भवती थी) पुत्र जनी तो सवाई माधवराव के नाम से उस को राजा बना के उस के नाम की मुनादी फिरवा दी और नाना फड़नवीस सब काम काज करने लगा। राघोबा ने अंगरेज़ों से इस शर्त पर सहायता चाही कि साष्टीवेट, बसई गांव और गुजरात के कुछ इलाके अंगरेज़ सर्कार को दिए जाएं, पर पोर्तुगीज और बादशाह के कलह से अंगरेज़ों ने आप ही वह बेल्ट ले लिया और फिर कलकत्ते के गवर्नर के लिखे अनुसार नाना फड़नवीस ने साष्टीवेट अंगरेज़ो को लिख दिया और कोपर गांव में राघोबा को कुछ महीना कर के रख दिया। राघोबा दादा को बाजीराव, चिमना आप्पा और अमृतराव तीन पुत्र थे परन्तु अमृतराव दत्तक थे। राघोबा का कई मनोरथ पूरा नहीं हुआ और सन 1748 में मर गया। नाना फड़नवीस से महाजी सेन्धिया से कुछ लाग थी, इस से महाजी उस के ताबे कभी नहीं हुआ और सदा कुछ उत्पात करता रहा। नाना की फ़ौज के हरिपन्त फड़के और परशुराम पन्त पट्टवर्द्धन ये दो बड़े सरदार थे। सन 1795 में निज़ाम अली से महाराष्ट्र लोगों से एक लड़ाई, जिसमें मरहठे जीते और अंगरेज़ों से भी तीन बरस तक कुछ कलह रही, पर फिर मेल हो गया। सन 1796 में नाना फ़ड़नवीस के वंश में रहने के दुःख से माधव राव गिर के मर गया और राघोबा का बड़ा बेटा दूसरा बाजीराव पेशवा हुआ, पर इस से भी नाना फड़नवीस से खटपट चली ही गई। बाजीराव ने दौलतराव सेन्धिया को उभारा और उस ने छल बल कर के नाना फड़नवीस को नगर के किले में कैद कर लिया, पर बाजीराव को उस के कैद से छुड़ा कर फिर से दीवान बनाना पड़ा, क्यौंकि ऐसा चतुर मनुष्य उस काल में उस को दूसरा मिलना कठिन था। नाना फड़नवीस सन 1800 में मर गया और मराठी राज्य की लक्ष्मी और बल अपने साथ लेता गया। राज पर बैठने के पहिले बाजीराव ने दौलतराव से करार किया था कि हम पेशवा होंगे तो तुम को दो करोड़ रुपया देंगे, पर जब इतना रुपया आप न दे

सका तो दौलतराव के साथ पूना लूटा। सन 1802 में जब दौलतराव कहीं दौरा करने गया था तब यशवन्त राव हुल्कर ने पूना पर चढ़ाई किया और पेशवा और सेन्धिया दोनों की सेना को हरा कर पूने को खूब लूटा। बाजीराव इस समय भाग कर अंगरेजों की शरण गया और उन से बसई में यह बात ठहराई कि सर्कारी 8000 फ़ौज पूने में रहे और बाजीराव को शत्रुओं से बचावें और उस का सब खर्च बाजीराव दे। अंगरेजी फ़ौज पहुंच जाने के पूर्व्व ही हुल्कर पूना छोड़ के चला गया और बाजीराव फिर से पेशवा हुआ। बाजीराव ऊपर से तो अंगरेजों से मेल रखता था पर भीतर से बड़ा ही बैर रखता था और दूसरे राजों को बहकाने के सिवा आप भी छिपी छिपी फौज भरती करता जाता था। सन 1815 में गंगाधर शास्त्री पट्टवर्द्धन जो गाइकवाड़ का वकील होकर सर्कार अंगरेज की सलाह से बाजीराव के दरबार में गया था, उस को बाजीराव ने त्र्यम्बक डेंगला नाम के एक अपने मुंहलगे हुए सरदार से मरवा डाला, जो सर्कार के और बाजीराव के बैर का मुख्य कारण हुआ और सरकार ने उस त्र्यम्बक को सन 1818 में पकड़ कर चुनार के किले में कैद किया। सरकारी फ़ौज इस समय गवरनर जेनरल की आज्ञा से पिडारों को शमन करती फिरती थी कि इसी बीच में बाजीराव ने भी किसी बहाने से सर्कार से लड़ाई करनी आरम्भ कर दी और बापू गोखला को सेनापति नियत किया, पर अन्त में हार कर सन 1818 ई. की 3 जून को मालकम साहेब के शरण में जाकर आठ लाख रुपया साल लेकर बिट्ठूर में रहना अंगीकार किया और इसी बीच में अष्ट गांव पर छापा मार के सितारा के राजा को पकड़ लिया और इसी लड़ाई में बापू मारा गया। जब बाजीराव भागा फिरता था, उन्हीं दिनों में भीमा के किनारे कारै गांव में मरहठों की फ़ौज से और सरकारी फ़ौज से एक बड़ा घोर युद्ध हुआ, जिस में सरकारी 300 सिपाही और 20 अंगरेज़ मारे गए, पर इन लोगों ने बहादुरी से उनको आगे न बढ़ने दिया। सर्कार की ओर से यहां जयसूचक एक कीर्त्तिस्तम्भ बना है। सर्कार ने महाराष्ट्र देश का राज अपने हाथ में लेकर एलफिंस्टन साहेब को वहां का प्रबन्ध सौंपा और पूर्वोक्त साहब ने महाराष्ट्रों की परम्परा के मान और रीति का पालन कर के किसी की जागीर किसी के साथ बन्दोबस्त कर के वहां की प्रजा को ऐसा सन्तुष्ट किया कि वे लोग अब तक उऩ को स्मरण करते हैं।

[हरिश्चन्द्र चन्द्रिका खंड 3-4, सन 1875-76 में प्रकाशित,
सन 1880 में पुस्तकाकार प्रकाशित]

दिल्ली दरबार दर्प्पण

दिल्ली दरबार दर्प्पण

दोहा

जयति राजराजेश्वरी जय युवराज कुमार।
जय नृप प्रतिनिधि कवि लिटन जय दिल्ली दरबार॥
स्नेह भरन तम हरन दोउ प्रजन करन उंजियार।
भयो देहली दीप सो यह देहली दरबार॥

सब राजाओं की मुलाकातों का हाल अलग अलग लिखना आवश्यक नहीं, क्यौंकि सब के साथ वही मामूली बातें हुईं। सब बड़े बड़े शासनाधिकारी राजाओं को एक एक रेशमी झंडा और सोने का तगमा मिला। उसका समाचार पहिले लिख चुके हैं। झंडे अत्यन्त सुन्दर थे। पीतल के चमकीले मोटे मोटे डंडों पर राजराजेश्वरी का एक मुकुट बना था और एक एक पटरी लगी थी जिस पर झंडा पाने वाले राजा का नाम लिखा था और फरहरे पर जो डंडे से लटकता था स्पष्ट रीति पर उनके शस्त्र आदि के चिन्ह बने हुए थे झंडा और तगमा देने के समय श्रीयुत वाइसराय ने हरएक राजा से ये वाक्य कहे–

"मैं श्रीमती महारानी की तरफ से यह झंडा खास आप के लिए देता हूं, जो उन के हिन्दुस्तान की राजराजेश्वरी की पदवी लेने का यादगार रहेगा। श्रीमती को भरोसा है कि जब कभी यह झंडा खुलेगा आप की उसे देखते ही केवल इसी बात का ध्यान न होगा कि इंगलिस्तान के राज्य के साथ आप के खैरखाह राजसी घराने का कैसा दृढ़ सन्बम्ध है वरन् यह भी कि सरकार की यह बड़ी भारी इच्छा है कि आप के कुल को प्रतापी, प्रारब्धी और अचल देखे। मैं श्रीमती महारानी हिन्दुस्तान की राजराजेश्वरी की आज्ञानुसार आप को यह तगमा भी पहनाता हूं। ईश्वर करे आप इसे बहुत दिन तक पहिनें और आप के पीछे यह आप के कुल में बहुत दिन तक रह कर इस शुभ दिन की याद दिलावे जो इस पर छपा है।"

शेष राजाओं को उन के पद के अनुसार सोने या चांदी के केवल तगमे ही मिले। किलात के खां को भी झंडा नहीं मिला, पर उन्हें एक हाथी जिस पर 4000

की लागत का हौदा था, जड़ाऊ गहने, घड़ी, कारचोबी कपड़े, कमखाब के थान वगैरह सब मिलाकर 25000 की चीजें तोहफे में मिलीं। यह बात किसी दूसरे के लिए नहीं हुई थी। इस के सिवाय जो सरदार उन के साथ आए थे उन्हें भी कश्तियों में लगा कर दस हजार रुपये की चीजें दी गईं। प्रायः लोगों को इस बात के जानने का उत्साह होगा कि खां का रूप और वस्त्र कैसा था। निस्सन्देह जो कपड़ा खां पहने थे वह उन के साथियों से बहुत अच्छा था तो भी उन की या उन के किसी साथी की शोभा उन मुगलों से बढ़ कर न थी जो बाजार में मेवा लिए घूमा करते हैं। हां, कुछ फर्क था तो इतना था कि लम्बी गझिन दाढ़ी के कारण खां साहिब का चेहरा बड़ा भयानक लगता था। इन्हें झंडा न मिलने का कारण यह समझना चाहिए कि यह बिलकुल स्वतन्त्र हैं। इन्हें आने और जाने के समय श्रीयुत वाइसराय गलीचे के किनारे तक पहुंचा गए थे, पर बैठने के लिए इन्हें भी वाइसराय के चबूतरे के नीचे वही कुर्सी मिली थी जो और राजाओं को। खां साहिब के मिज़ाज में रूखापन बहुत है। एक प्रतिष्ठित बंगाली इनके डेरे पर मुलाकात के लिए गए थे। खां ने पूछा, क्यौं आए हो? बाबू साहिब ने कहा, आप की मुलाकात को। इस पर खां बोले कि अच्छा, आप हम को देख चुके और हम आप को, अब जाइए।

बहुत से छोटे छोटे राजाओं की बोलचाल का ढंग भी, जिस समय वे वाइसराय से मिलने आए थे, संक्षेप के साथ लिखने के योग्य है। कोई तो दूर ही से हाथ जोड़े आए, और दो एक ऐसे थे कि जब एडिडकांग के बदन झुका कर इशारा करने पर भी उन्होंने सलाम न किया तो एडिडकांग ने पीठ पकड़ कर उन्हें धीरे से झुका दिया। कोई बैठ कर उठना जानते ही न थे, यहां तक कि एडिडकांग को 'उठो' कहना पड़ता था। कोई झंडा, तगमा, सलामी और खिताब पाने पर भी एक शब्द धन्यवाद का नहीं बोल सके और कोई बिचारे इन में से दो ही एक पदार्थ पाकर ऐसे प्रसन्न हुए कि श्रीयुत वाइसराय पर अपनी जान और माल निछावर करने को तैयार थे। सब से बढ़ कर बुद्धिमान हमें एक महात्मा देख पड़े जिन से वाइसराय ने कहा कि आप का नगर तो तीर्थ गिना जाता है, पर हम आशा करते हैं कि आप इस समय दिल्ली को भी तीर्थ ही के समान पाते हैं। इस के जवाब में वह बेधड़क बोल उठे कि यह जगह तो सब तीर्थों से बढ़ कर है, जहां आप हमारे 'खुदा' मौजूद हैं। नौवाब लुहारू की भी अंगरेजी में बातचीत सुन कर ऐसे बहुत कम लोग होंगे जिन्हें हंसी न आई हो। नौवाब साहिब बोलते तो बड़े धड़ाके से थे, पर उसी के साथ कायदे और मुहावरे के भी खूब हाथ पांव तोड़ते थे। कितने वाक्य ऐसे थे जिन के कुछ अर्थ ही नहीं हो सकते, पर नौवाब साहिब को अपनी अंगरेजी का ऐसा कुछ विश्वास था कि अपने मुंह से केवल अपने ही को नहीं, वरन् अपने दोनों लड़कों को भी अंगरेज़ी, अरबी, ज्योतिष, गणित, आदि ईश्वर जाने कितनी विद्याओं का पंडित बखान गए। नौवाब साहिब ने कहा कि हमने और रईसों की तरह अपनी उमर खेल कूद में नहीं गंवाई

वरन् लड़कपन ही से विद्या के उपार्जन में चित्त लगाया और पूरे पंडित और कवि हुए। इस के सिवाय नौवाब साहिब ने बहुत से राजभक्ति के वाक्य भी कहे। वाइसराय ने उत्तर दिया कि हम आप की अंगरेजी विद्या पर इतना मुबारकबाद नहीं देते जितना अंगरेजों के समान आप का चित्त होने के लिए। फिर नौवाब साहिब ने कहा कि मैंने इस भारी अवसर के वर्णन में अरबी और फारसी का एक पद्य ग्रन्थ बनाया है जिसे मैं चाहता हूं कि किसी समय श्रीयुत को सुनाऊं। श्रीयुत ने जवाब दिया कि मुझे भी कविता का बड़ा अनुराग है और मैं आप सा एक भाई कवि (Brother poet) देख कर बहुत प्रसन्न हुआ, और आप की कविता सुनने के लिए कोई अवकाश का समय अवश्य निकालूंगा।

29 तारीख को सब के अन्त में महारानी तंजौर वाइसराय से मुलाकात को आईं। ये तास का सब वस्त्र पहने थीं और मुंह पर भी तास का नकाब पड़ा हुआ था। इस के सिवाय उन के हाथ पांव दस्ताने और मोजे से ऐसे ढंके थे कि सब के जी में उन्हें देखने की इच्छा ही रह गई। महारानी के साथ में उन के पति राजा सखाराम साहिब और दो लड़कों के सिवाय उन की अनुवादक मिसेस फर्थ भी थीं। महारानी ने पहले आकर वाइसराय से हाथ मिलाया और अपनी कुर्सी पर बैठ गईं। श्रीयुत वाइसराय ने उन के दिल्ली आने पर अपनी प्रसन्नता प्रगट की और पूछा कि आप को इतनी भारी यात्रा में अधिक कष्ट तो नहीं हुआ? महारानी अपनी भाषा की बोलचाल में बेगम भूपाल की तरह चतुर न थीं इसलिए जियादा बातचीत मिसेस फर्थ से हुई, जिन्हें श्रीयुत ने प्रसन्न होकर 'मनभावनी अनुवादक' कहा। वाइसराय की किसी बात के उत्तर में एक बार महारानी के मुंह से 'यस' निकल गया, जिस पर श्रीयुत ने बड़ा हर्ष प्रगट किया कि महारानी अंगरेजी भी बोल सकती हैं, पर अनुवादक मेम साहिब ने कहा कि वे अंगरेजी में दो चार शब्द से अधिक नहीं जानतीं।

इस वर्णन के अन्त में यह लिखना अवश्य है कि श्रीयुत वाइसराय लोगों से इतनी मनोहर रीति पर बातचीत करते थे जिस से सब मगन हो जाते थे और ऐसा समझते थे कि वाइसराय ने हमारा सब से बढ़कर आदर सत्कार किया। भेंट होने के समय श्रीयुत ने हर एक से कहा कि आप से दोस्ती कर के हम अत्यन्त प्रसन्न हुए, और तगमा पहिनाने के समय भी बड़े स्नेह से उन की पीठ पर हाथ रख कर बात की।

1 जनवरी को दरबार का महोत्सव हुआ।

यह दरबार, जो हिन्दुस्तान के इतिहास में सदा प्रसिद्ध रहेगा, एक बड़े भारी मैदान में नगर से पांच मील पर हुआ था। बीच में श्रीयुत वाइसराय का षट्कोण चबूतरा था जिसकी गुम्बदनुमा छत पर लाल कपड़ा चढ़ा और सुनहला रुपहला तथा शीशे का काम बना था। कंगूरे के ऊपर कलसे की जगह श्रीमती राजराजेश्वरी का सुनहला मुकुट लगा था। इस चबूतरे पर श्रीयुत अपने राजसिंहासन में सुशोभित हुए

थे। उन के बगल में एक कुर्सी पर लेडी साहिब बैठी थीं और ठीक पीछे खवास लोग हाथों में चंवर लिए और श्रीयुत के ऊपर कारचोबी छत्र लगाए खड़े थे। वाइसराय के सिंहासन के दोनों तरफ दो मेज (दामन बरदार), जिन में एक श्रीयुत महाराज जम्बू का अत्यन्त सुन्दर सबसे छोटा राजकुमार और दूसरा कर्नल बर्न का पुत्र था, खड़े थे और उन के दाहिने बाएं और पीछे मुसाहिब और सेक्रेटरी लोग अपने अपने स्थानों पर खड़े थे। वाइसराय के इस चबूतरे के ठीक सामने कुछ दूर पर उस से नीचा एक अर्द्धचन्द्राकार चबूतरा था, जिस पर शासनाधिकारी राजा लोग और उन के मुसाहिब, मदरास और बम्बई के गवर्नर, पंजाब, बंगाल और पश्चिमोत्तर देश के लेफ्टिनेंट गवर्नर, और हिन्दुस्तान के कमान्डरिनचीफ अपने अपने अधिकारियों समेत सुशोभित थे। इस चबूतरे की छत बहुत सुन्दर नीले रंग के साटन की थी, जिस के आगे लहरियादार छज्जा बहुत सजीला लगा था। लहरिए के बीच बीच में सुनहले काम के चांद तारे बने थे। राजाओं की कुर्सियां भी नीली साटन से मढ़ी थीं और हर एक के सामने वे झंडे गड़े थे जो उन्हें वाइसराय ने दिए थे और पीछे अधिकारियों की कुर्सियां लगी थीं, जिन पर भी नीली साटन चढ़ी थी। हर एक राजा के साथ एक एक पोलिटिकल अफसर भी था। इन के सिवाय गवर्नमेन्ट के भारी भारी अधिकारी भी यहीं बैठे थे। राजा लोग अपने अपने प्रान्तों के अनुसार बैठाए गए थे, जिस से ऊपर नीचे बैठने का बखेड़ा बिलकुल निकल गया था। सब मिला कर तिरसठ शासनाधिकारी राजाओं को इस चबूतरे पर जगह मिली थी, जिन के नाम नीचे लिखे हैं—

महाराज अजयगढ़, बड़ोदा, बिजावर, भरतपुर, चरखारी, दतिया, ग्वालियर, इन्दौर, जयपुर, जम्बू, जोधपुर, करौली, किशुनगढ़, पन्ना, मैसूर, रीवां, उर्छा, महाराना उदयपुर, महाराव राजा अलवर, बूंदी, महाराज राना झलावर, राना धौलपुर, राजा बिलासपुर, बमरा, बिरोंदा, चबा, छतरपुर, देवास, धार, फरीदकोट, जींद, खरोंद, कूचबिहार, मन्डी, नाभा, नाहन, राजपीपला, रतलाम, समथर, सुकेत टिहरी, राव जिगनी, टोरी, नौवाब टोंक, पटौदी, मलेरकोटला लुहारू, जूनागढ़, जौरा, दुलाना, बहावलपुर, जागीरदार अलीपुरा, बेगम भूपाल, निजाम हैदराबाद, सरदार कलसिया, ठाकुर साहिब भावनगर, गुर्वी, पिपलोदा, जागीरदार पालदेव, मीर, खैरपुर, महंत, कोंदका, नन्दगांव और जाम नवानगर।

वाइसराय के सिंहासन के पीछे, परन्तु राजसी चबूतरे की अपेक्षा उस से अधिक पास, धनुषखंड के आकार की दो श्रेणियां चबूतरों की ओर बनी थीं जो दस भागों में बांट दी गई थीं। इन पर आगे की तरफ थोड़ी-सी कुर्सियां और पीछे सीढ़ीनुमा बेंचें लगी थीं, जिन पर नीला कपड़ा मढ़ा था। यहां ऐसे राजाओं को जिन्हें शासन का अधिकार नहीं है और दूसरे सरदारों, रईसों, समाचारपत्रों के सम्पादकों और यूरोपियन तथा हिन्दुस्तानी अधिकारियों को, जो गवर्नमेंट के नेवते में आए थे या

जिन्हें तमाशा देखने के लिए टिकट मिले थे, बैठने की जगह दी गई थी। ये 3000 के अनुमान होंगे। किलात के खां, गोआ के गवर्नर जनरल, विदेशी राजदूत, बाहरी राज्यों के प्रतिनिधि समाज और अन्यदेश सम्बन्धी कांसल लोगों की कुर्सियां भी श्रीयुत वाइसराय के पीछे सरदारों और रईसों की चौकियों के आगे लगी थीं।

दरबार की जगह के दक्खिन तरफ 15000 से ज्यादा सरकारी फौज हथियार बांधे लैस खड़ी थी और उत्तर तरफ राजा लोगों की सजीली पलटनें भांति भांति की वरदी पहने और चित्र विचित्र शस्त्र धारण किए परा बांधे खड़ी थीं। इन सब की शोभा देखने से काम रखती थी। इस के सिवाय राजा लोगों के हाथियों के परे जिन पर सुनहली अमारियां कसी थीं और कारचोबी झूलें पड़ी थीं, तोपों की कतार, सवारों की नंगी तलवारों और भालों की चमक, फरहरों का उड़ना, और दो लाख के अनुमान तमाशा देखने वालों की भीड़ जो मैदान में डटी थी, ऐसा समा दिखलाती थी जिसे देख जो जहां था वहीं हक्का बक्का हो खड़ा रह जाता था। वाइसराय के सिंहासन के दोनों तरफ हाइलैंडर लोगों का गार्ड ऑव ऑनर और बाजेवाले थे, और शासनाधिकारी राजाओं के चबूतरे पर जाने के जो रास्ते बाहर की तरफ थे उन के दोनों ओर भी गार्ड ऑव ऑनर खड़े थे। पौने बारह बजे तक सब दरबारी लोग अपनी अपनी जगहों पर आ गए थे। ठीक बारह बजे श्रीयुत वाइसराय की सवारी पहुंची और धनुष खंड आकार के चबूतरों की श्रेणियों के पास एक छोटे से ख़ेमें के दरवाजे पर ठहरी। सवारी पहुंचते ही बिलकुल फ़ौज ने शस्त्रों से सलामी उतारी पर तोपें नहीं छोड़ी गई। ख़ेमें में श्रीयुत ने जाकर स्टार ऑव इंडिया के परम प्रतिष्ठित पद के ग्रांड मास्टर का वस्त्र धारण किया। यहां से श्रीयुत राजसी छत्र के तले अपने राजसिंहासन की ओर बढ़े। श्री लेडी लिटन श्रीयुत के साथ थीं और दोनों दामनबरदार बालक, जिन का हाल ऊपर लिखा गया है, पीछे दो तरफ से दामन उठाए हुए थे। श्रीयुत के चलते ही बन्दीजन (हेरल्ड लोगों) ने अपनी तुरहियां एक साथ बहुत मधुर रीति पर बजाईं और फौजी बाजे से ग्रांड मार्च बजने लगा। जब श्रीयुत राजसिंहासनवाले मनोहर चबूतरे पर चढ़ने लगे तो ग्रांडमार्च का बाजा बन्द हो गया और नेशनल ऐन्थेम अर्थात् (गाड सेव दि क्वीन–ईश्वर महारानी को चिरंजीवी रक्खे) का बाजा बजने लगा और गार्ड्स ऑव ऑनर ने प्रष्ठिता के लिए अपने शस्त्र झुका दिए। ज्यौंही श्रीयुत राजसिंहासन पर सुशोभित हुए, बाजे बन्द हो गए और सब राजा महाराजा, जो वाइसराय के आने के समय खड़े हो गए थे, बैठ गए। इस के पीछे श्रीयुत ने मुख्य बन्दी (चीफ हेरल्ड) को आज्ञा की कि श्रीमती महारानी के राजराजेश्वरी की पदवी लेने के विषय में अंगरेजी में राजाज्ञापत्र पढ़ो। यह आज्ञा होते ही बन्दीजनों ने, जो दो पांती में राज्यसिंहासन के चबूतरे के नीचे खड़े थे, तुरही बजाई और उस के बन्द होने पर मुख्य बन्दी ने नीचे की सीढ़ी पर खड़े होकर बड़े ऊंचे स्वर में राजाज्ञापत्र पढ़ा, जिस का उल्था यह है–

महारानी विक्टोरिया

ऐसी अवस्था में कि हाल में पार्लियामेंट की जो सभा हुई उन में एक एक्ट पास हुआ है, जिस के द्वारा परम कृपालु महारानी को यह अधिकार मिला है कि यूनाइटेड किंगडम और उस के अधीन देशों की राजसम्बन्धी पदवियों और प्रशस्तियों में श्रीमती जो कुछ चाहें बढ़ा लें और इस एक्ट में यह भी वर्णन है कि ग्रेट ब्रिटेन और आयरलैंड के एक में मिल जाने के लिए जो नियम बने थे उन के अनुसार भी यह अधिकार मिला था कि यूनाइटेड किंगडम और उस के अधीन देशों की राजसम्बन्धी पदवी और प्रशस्ति इस संयोग के पीछे वही होगी जो श्रीमती ऐसे राजाज्ञा पत्र द्वारा प्रकाश करेंगी, जिस पर राज की मुहर छपी रहे। और इस एक्ट में यह भी वर्णन है कि ऊपर लिखे हुए नियम और उस राजाज्ञापत्र के अनुसार जो 1 जनवरी सन 1801 को राजसी मुहर होने के पीछे प्रकाश किया गया, हम ने यह पदवी ली "विक्टोरिया ईश्वर की कृपा से ग्रेट ब्रिटेन और आयरलैंड के संयुक्त राज की महारानी स्वधर्म रक्षिर्णी," और इस एक्ट में यह भी वर्णन है कि उस नियम के अनुसार, जो हिन्दुस्तान के उत्तम शासन के हेतु बनाया गया था, हिन्दुस्तान के राज का अधिकार, जो उस समय तक हमारी ओर से ईस्ट इंडिया कम्पनी को सुपुर्द था, अब हमारे निज अधिकार में आ गया और हमारे नाम से उस का शासन होगा। इस नए अधिकार की हम कोई विशेष पदवी लें और इन सब वर्णनों के अनन्तर इस एक्ट में यह नियम सिद्ध किया गया है कि ऊपर लिखी हुई बात के स्मरण निमित्त कि हमने अपने मुहर किए हुए राजाज्ञापत्र के द्वारा हिन्दुस्तान के शासन का अधिकार अपने हाथ में ले लिया, हम को यह योग्यता होगी कि यूनाइटेड किंगडम और उस के आधीन देशों की राजसम्बन्धी पदवियों और प्रशस्तियों में जो कुछ उचित समझें बढ़ा लें। इसलिए अब हम अपने प्रीवी काउंसिल की सम्मति से योग्य समझ कर यह प्रचलित और प्रकाशित करते हैं कि आगे को, जहां सुगमता के साथ हो सके, सब अवसरों में और सम्पूर्ण राजपत्रों पर जिन में हमारी पदवियां और प्रशस्तियां लिखी जाती हैं, सिवाय सनद कमीशन, अधिकारदायक पत्र, दानपत्र, आज्ञापत्र, नियोगपत्र, और इसी प्रकार के दूसरे पत्रों के, जिन का प्रचार यूनाइटेड किंगडम के बाहर नहीं है, यूनाइटेड किंगडम और उस के अधीन देशों की राजसम्बन्धी पदवियों में नीचे लिखा हुआ वाक्य मिला दिया जाए, अर्थात् लैटिन भाषा में "इंडिई एम्परेट्रिक्स" [हिन्दुस्तान की राजराजेश्वरी] और अंगरेजी भाषा में 'एम्प्रेस ऑव इंडिया'। और हमारी यह इच्छा और प्रसन्नता है कि उन राजसम्बन्धी पत्रों में जिन का वर्णन ऊपर हुआ है यह नई पदवी न लिखी जाए। और हमारी यह भी इच्छा और प्रसन्नता है कि सोने चांदी और तांबे के सब सिक्के, जो आजकल यूनाइटेड किंगडम में प्रचलित हैं और नीतिविरुद्ध नहीं गिने जाते और इसी प्रकार तथा आकार के दूसरे सिक्के जो हमारी आज्ञा से

अब छापे जाएंगे, हमारी नई पदवी लेने से भी नीतिविरुद्ध न समझे जाएंगे और जो सिक्के यूनाइटेड किंगडम के अधीन देशों में छापे जाएंगे और जिन का वर्णन राजाज्ञापत्र में उन जगहों के नियमित और प्रचलित द्रव्य कर के किया गया है और जिन पर हमारी सम्पूर्ण पदवियां या प्रशस्तियां या उन का कोई भाग रहे, और वे सिक्के जो राजाज्ञा पत्र के अनुसार अब छापे और चलाए जाएंगे इस नई पदवी के बिना भी उस देश के नियमित और प्रचलित द्रव्य समझे जाएंगे, जब तक कि इस विषय में हमारी कोई दूसरी प्रसन्नता न प्रगट की जाएगी।

हमारी विंडसर की कचहरी से 28 अप्रैल को एक हजार आठ सौ छिहत्तर के सन में हमारे राज के उनतालीसवें बरस में प्रसिद्ध किया गया।

ईश्वर महारानी को चिरंजीव रक्खे!

जब चीफ हेरलूड राजाज्ञा पत्र को अंगरेजी में पढ़ चुका तो हेरलूड लोगों ने फिर तुरही बजाई। इस के पीछे फॉरेन सेक्रेटरी ने उर्दू में तर्जुमा पढ़ा। इस के समाप्त होते ही बादशाही झंडा खड़ा किया गया और तोपखाने से, जो दरबार के मैदान में मौजूद था, 101 तोपों की सलामी हुई। चौंतीस चौंतीस सलामी होने के बाद बन्दूकों की बाढ़ें दगीं और जब 101 सलामियां तोपों से हो चुकीं तब फिर बाढ़ छूटी और नैशनल ऐन्थेम का बाजा बजने लगा।

इस के अनन्तर श्रीयुत वाइसराय समाज को अड्रेस करने के अभिप्राय से खड़े हुए। श्रीयुत वाइसराय के खड़े होते ही सामने के चबूतरे पर जितने बड़े बड़े राजा लोग और गवर्नर आदि अधिकारी थे खड़े हो गए पर श्रीयुत ने बड़े ही आदर के साथ दोनों हाथों से हिन्दुस्तानी रीति पर कई बार सलाम कर के सब से बैठ जाने का इशारा किया। यह काम श्रीयुत का, जिससे हम लोगों की छाती दूनी हो गई, पायोनीयर सरीखे अंगरेजी समाचार पत्रों के सम्पादकों को बहुत बुरा लगा, जिन की समझ में वाइसराय का हिन्दुस्तानी तरह पर सलाम करना बड़े हेठाई और लज्जा की बात थी। खैर, यह तो इन अंगरेजी अखबारवालों की मामूली बातें हैं। श्रीयुत वाइसराय ने जो उत्तम अड्रेस पढ़ा उस का तर्जुमा हम नीचे लिखते हैं—

सन 1858 ईसवी की 1 नवम्बर को श्रीमती महारानी की ओर से एक इश्तिहार जारी हुआ था, जिस में हिन्दुस्तान के रईसों और प्रजा को श्रीमती की कृपा का विश्वास कराया गया था, जिस को उस दिन से आज तक वे लोग राज सम्बन्धी बातों में बड़ा अनमोल प्रमाण समझते हैं।

वे प्रतिज्ञा एक ऐसी माहरानी की ओर से हुई थीं, जिन्होंने आज तक अपनी बात को कभी नहीं तोड़ा, इसलिए हमें अपने मुंह से फिर उन का निश्चय कराना व्यर्थ है। 18 बरस की लगातार उन्नति ही उन को सत्य करती है, और यह भारी समागम भी उन के पूरे उतरने का प्रत्यक्ष प्रमाण है। इस राज के रईस और प्रजा

जो अपनी अपनी परम्परा की प्रतिष्ठा निर्विघ्न भोगते रहे और जिन को अपने उचित लाभों की उन्नति के यत्न में सदा रक्षा होती रही उन के वास्ते सरकार की पिछले समय की उदारता और न्याय आगे के लिए पक्की जमानत हो गई है।

हम लोग इस समय श्रीमती महारानी के राजराजेश्वरी की पदवी लेने का समाचार प्रसिद्ध करने के लिए इकट्ठे हुए हैं, और यहां महारानी के प्रतिनिधि होने की योग्यता से मुझे अवश्य है कि श्रीमती के उस कृपायुक्त अभिप्राय को सब पर प्रगट करूं जिस के कारण श्रीमती ने अपने परम्परा की पदवी और प्रशस्ति में एक पद और बढ़ाया।

पृथ्वी पर श्रीमती महारानी के अधिकार में जितने देश हैं—जिन का विस्तार भूगोल के सातवें भाग से कम नहीं है, और जिन में तीस करोड़ आदमी बसते हैं—उन में से इस बड़े और प्राचीन राज के समान श्रीमती किसी दूसरे देश पर कृपादृष्टि नहीं रखतीं।

सब जगह और सदा इंगलिस्तान के बादशाहों की सेवा में प्रवीण और परिश्रमी सेवक रहते आए हैं, परन्तु उन से बढ़ कर कोई पुरुषार्थी नहीं हुए, जिन की बुद्धि और वीरता से हिन्दुस्तान का राज सरकार के हाथ लगा और बराबर अधिकार में बना रहा। इस कठिन काम में जिस में श्रीमती की अंगरेजी और देशी प्रजा दोनों नें मिल कर भलीभांति परिश्रम किया है, श्रीमती के बड़े बड़े स्नेही और सहायक राजाओं ने भी शुभचिन्तकता के साथ सहायता दी है, जिन की सेना ने लड़ाई की मिहनत और जीत में श्रीमती की सेना का साथ दिया है, जिन की बुद्धिपूर्वक सत्यशीलता के कारण मेल के लाभ बने रहे और फैलते गए हैं, और जिन का यहां आज वर्त्तमान होना, जो कि श्रीमती के राजराजेश्वरी की पदवी लेने का शुभ दिन है, इस बात का प्रमाण है कि वे श्रीमती के अधिकार की उत्तमता में विश्वास रखते हैं और उन के राज में एका बने रहने में अपना भला समझते हैं।

श्रीमती महारानी इस राज को, जिसे उन के पुरखों ने प्राप्त किया और श्रीमती ने दृढ़ किया, एक बड़ा भारी पैतृक धन समझती हैं जो रक्षा करने और अपने वंश के लिए सम्पूर्ण छोड़ने के योग्य है, और उस पर अधिकार रखने से अपने ऊपर यह कर्त्तव्य जानती हैं कि अपने बड़े अधिकार को इस देश की प्रजा की भलाई के लिए यहां के रईसों के हक्कों पर पूरा पूरा ध्यान रख कर काम में लावें। इसलिए श्रीमती का यह राजसी अभिप्राय है कि अपनी पदवियों पर एक और ऐसी पदवी बढ़ावें, जो आगे सदा को हिन्दुस्तान के सब रईसों और प्रजा के लिए इस बात का चिन्ह हो कि श्रीमती के और उन के लाभ एक हैं और महारानी की ओर राजभक्ति और शुभचिन्तकता रखनी उन पर उचित है।

वे राजसी घरानों की श्रेणियां जिन का अधिकार बदल देने और देश की उन्नति करने के लिए ईश्वर ने अंगरेजी राज को यहां जमाया, प्रायः अच्छे और बड़े बादशाहों

से खाली न थीं परन्तु उन के उत्तराधिकारियों के राज्यप्रबन्ध से उन के राज्य के देशों में मेल न बना रह सका। सदा आपस में झगड़ा होता रहा और अंधेर मचा रहा। निर्बल लोग बली लोगों के शिकार थे और बलवान् अपने मद के। इस प्रकार आपस की काट मार और भीतरी झगड़ों के कारण जड़ से हिल कर और निर्जीव हो कर तैमूरलंग का भारी घराना अन्त को मिट्टी में मिल गया, और उस के नाश होने का कारण यह था कि उस से पच्छिम के देशों की कुछ उन्नति न हो सकी।

आजकल ऐसी राजनीति के कारण जिस से सब जात और सब धर्म्म के लोगों की समान रक्षा होती है, श्रीमती की हर एक प्रजा अपना समय निर्विघ्न सुख से काट सकती है। सरकार के समभाव के कारण हर आदमी बिना किसी रोक टोक के अपने धर्म्म के नियमों और रीतों को बरत सकता है। राजराजेश्वरी का अधिकार लेने से श्रीमती का अभिप्राय किसी को मिटाने या दबाने का नहीं है वरन् रक्षा करने और अच्छी राह बतलाने का। सारे देश की शीघ्र उन्नति और उस के सब प्रान्तों की दिन पर दिन वृद्धि होने से अंगरेजी राज के फल सब जगह प्रत्यक्ष देख पड़ते हैं।

हे अंगरेजी राज के कार्यकर्त्ता और सच्चे अधिकारी लोग—यह आप ही लोगों के लगातार परिश्रम का गुण है कि ऐसे ऐसे फल प्राप्त हैं और सब के पहिले आप ही लोगों पर मैं इस समय श्रीमती की ओर से उन की कृतज्ञता और विश्वास को प्रगट करता हूं। आप लोगों ने इस भारी राज की भलाई के लिए उन प्रतिष्ठित लोगों से जो आप के पहले इन कामों पर नियत थे किसी प्रकार कम कष्ट नहीं उठाया है और आप लोग बराबर ऐसे साहस, परिश्रम और सच्चाई के साथ अपने तन, मन को अर्पण कर के काम करते रहे जिस से बढ़ कर कोई दृष्टान्त इतिहासों में न मिलैगा।

कीत्ति के द्वार सब के लिए नहीं खुले हैं परन्तु भलाई करने का अवसर सब किसी को जो उस की खोज रखता हो मिल सकता है। यह बात प्रायः कोई गवर्नमेंट नहीं कर सकती कि अपने नौकरों के पदों को जल्द जल्द बढ़ाती जाए, परन्तु मुझे विश्वास है कि अंगरेजी सरकार की नौकरी में 'कर्त्तव्य का ध्यान' और 'स्वामी की सेवा में तन, मन को अर्पण कर देना' ये दोनों बातें 'निज प्रतिष्ठा' और 'लाभ' की अपेक्षा सदा बढ़ कर समझी जाएंगी। यह बात सदा से होती आई है और होती रहेगी कि इस देश के प्रबन्ध के बहुत से भारी भारी और लाभदायक काम प्रायः बड़े बड़े प्रतिष्ठित अधिकारियों ने नहीं किए हैं वरन जिले के उन अफसरों ने जिन की धैर्य्यपूर्व्वक चतुराई और साहस पर सम्पूर्ण प्रबन्ध का अच्छा उतरना सब प्रकार आधीन है।

श्रीमती की ओर से राजकाज सम्बन्ध और सेना सम्बन्धी अधिकारियों के विषय में मैं जितनी गुणग्राहकता और प्रशंसा प्रगट करूं थोड़ी है क्योंकि ये तमाम हिन्दुस्तान में ऐसे सूक्ष्म और कठिन कामों को अत्यन्त उत्तम रीति पर करते रहे हैं और करते हैं जिन से बढ़ कर सूक्ष्म और कठिन काम सरकार अधिक से अधिक विश्वासपात्र

मनुष्य को नहीं सौंप सकती। हे राजकाज सम्बन्धी और सेना सम्बन्धी अधिकारियों—जो कमसिनी में इतने भारी जिम्मे के कामों पर मुकर्रर होकर बड़े परिश्रम चाहनेवाले नियमों पर तन, मन से चलते हो और जो निज पौरुष से उन जातियों के बीच राज्य प्रबन्ध के कठिन काम को करते हो जिन की भाषा, धर्म और रीतें आप लोगों से भिन्न हैं—मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूं कि अपने अपने कठिन कामों को दृढ़ परन्तु कोमल रीति पर करने के समय आप को इस बात का भरोसा रहे कि जिस समय लोग अपने जाति की बड़ी कीर्त्ति को थामे हुए हैं और अपने धर्म्म के दयाशील आज्ञाओं को मानते हैं उसी के साथ आप इस देश के सब जाति और धर्म्म के लोगों पर उत्तम प्रबन्ध के अनमोल लाभों को फैलाते हैं।

उस पश्चिम की सभ्यता के नियमों को बुद्धिमानी के साथ फैलाने के लिए, जिस से इस भारी राज का धन बराबर बढ़ता गया, हिन्दुस्तान पर केवल सरकारी अधिकारियों ही का एहसान नहीं है, वरन् यदि मैं इस अवसर पर श्रीमती की उस यूरोपियन प्रजा को जो हिन्दुस्तान में रहती है पर सरकारी नौकर नहीं है, इस बात का विश्वास कराऊं कि श्रीमती उन लोगों के केवल उस राजभक्ति ही की गुणग्राहकता नहीं करतीं जो वे लोग उन के और उन के सिंहासन के साथ रखते हैं किन्तु उन लाभों को भी जानती और मानती हैं, जो उन लोगों के परिश्रम से हिन्दुस्तान को प्राप्त होते हैं तो मैं अपनी पूज्य स्वामिनी के विचारों को अच्छी तरह न वर्णन करने का दोषी ठहरूंगा।

इस अभिप्राय से कि श्रीमती को अपने राज के इस उत्तम भाग की प्रजा को सरकार की सेवा या निज की योग्यता के लिए गुणग्राहकता देखाने का विशेष अवसर मिले श्रीमती ने कृपापूर्व्वक केवल स्टार ऑव इंडिया के परम प्रतिष्ठित पद वालों और ऑर्डर ऑव ब्रिटिश इंडिया के अधिकारियों की संख्या ही में थोड़ी सी बढ़ती नहीं की है किन्तु इसी हेतु एक बिलकुल नया पद और नियत किया है जो 'ऑर्डर ऑव दि इंडियन एम्पायर' कहलावेगा।

हे हिन्दुस्तान की सेना के अंगरेजी और देशी अफसर और सिपाहियो,—आप लोगों ने जो भारी भारी काम बहादुरी के साथ लड़ भिड़ कर सब अवसरों पर किए और इस प्रकार श्रीमती की सेना की युद्धकीर्त्ति को थामे रहे, उसको श्रीमती अभिमान के साथ स्मरण करती हैं। श्रीमती इस बात पर भरोसा रख कर कि आगे को भी सब अवसरों पर आप लोग उसी तरह मिल जुल कर अपने भारी कर्त्तव्य को सच्चाई के साथ पूरा करेंगे, अपने हिन्दुस्तानी राज में मेल और अमन चैन बनाए रखने का विश्वास का काम आप लोगों ही को सुपुर्द करती हैं।

हे वालंटियर सिपाहियो—आप लोगों के राजभक्तिपूर्ण और सफल यत्न जो इस विषय में हुए हैं कि यदि प्रयोजन पड़े तो आप सरकार की नियत सेना के साथ मिल कर सहायता करें इस शुभ अवसर पर हृदय से धन्यवाद पाने के योग्य हैं।

हे इस देश के सरदार और रईस लोग,—जिन की राजभक्ति इस राजा के बल को पुष्ट करनेवाली है और जिन की उन्नति इस के प्रताप का कारण है, श्रीमती महारानी आप को यह विश्वास कर के धन्यवाद देती हैं कि यदि इस राज के लाभों में कोई विघ्न डाले या उन्हें किसी तरह का भय हो तो आप लोग उस की रक्षा के लिए तैयार हो जाएंगे। मैं श्रीमती की ओर से और उन के नाम से दिल्ली आने के लिए आप लोगों का जी से स्वागत करता हूं और इस बड़े अवसर पर आप लोगों के इकट्ठे होने को इंगलिस्तान के राजसिंहासन की ओर आप लोगों की उस राजभक्ति का प्रत्यक्ष प्रमाण गिनता हूं जो श्रीमान प्रिंस ऑफ वेल्स के इस देश में आने के समय आप लोगों ने दृढ़ रीति पर प्रकट की थी। श्रीमती महारानी आप के स्वार्थ को अपना स्वार्थ समझती हैं, और अंगरेज़ी राज के साथ उस के कर देने वाले और स्नेही राजा लोगों का जो शुभ संयोग से सम्बन्ध है उस के विश्वास को दृढ़ करने और उसके मेल जोल को अचल करने ही के अभिप्राय से श्रीमती ने अनुग्रह कर के वह राजसी पदवी ली है जिसे आज हम लोग प्रसिद्ध करते हैं।

हे हिन्दुस्तान की राज राजेश्वरी के देसी प्रजा लोग,—इस राज की वर्त्तमान दशा और उस के नित्य के लाभ के लिए अवश्य है कि उस के प्रबन्ध को जांचने और सुधारने का मुख्य अधिकार ऐसे अंगरेज़ी अफसरों को सुपुर्द किया जाए जिन्होंने राजकाज के उन तत्त्वों को भलीभांति सीखा है जिन का बरताव राज राजेश्वरी के अधिकार स्थिर रहने के लिए अवश्य है। इन्हीं राजनीति जाननेवाले लोगों के उत्तम प्रयत्नों से हिन्दुस्तान सभ्यता में दिन दिन बढ़ता जाता है और यही उस के राज काज सम्बन्धी महत्त्व का हेतु और नित्य बढ़नेवाली शक्ति का गुप्त कारण है और इन्हीं लोगों के द्वारा पच्छिम देश का शिल्प, सभ्यता और विज्ञान, (जिन के कारण आज दिन यूरोप लड़ाई और मेल दोनों में सबसे चढ़ बढ़ कर है) बहुत दिनों तक पूरब के देशों में वहां वालों के उपकार के लिए प्रचलित रहेगा।

परन्तु हे हिन्दुस्तानी लोग! आप चाहे जिस जाति या मत के हों यह निश्चय रखिए कि आप इस देश के प्रबन्ध में योग्यता के अनुसार अंगरेजों के साथ भली भांति काम पाने के योग्य हैं, और ऐसा होना पूरा न्याय भी है, और इंगलिस्तान तथा हिन्दुस्तान के बड़े बड़े राजनीति जानने वाले लोग और महारानी की राजसी पार्लियामेंट के व्यवस्थापकों ने बार बार इस बात को स्वीकार भी किया है। गवर्नमेंट ऑव इंडिया ने भी इस बात को अपने सम्मान और राजनीति में सब अभिप्रायों के लिए अनुकूल होने के कारण माना है। इसलिए गवर्नमेंट ऑव इंडिया इन बरसों में हिन्दुस्तानियों की कारगुजारी के ढंग से, मुख्यकर बड़े बड़े अधिकारियों के काम में पूरी उन्नति देख कर सन्तोष प्रगट करती है।

इस बड़े राज्य का प्रबन्ध जिन लोगों के हाथ में सौंपा गया है उन में केवल बुद्धि ही के प्रबल होने की आवश्यकता नहीं है वरन उत्तम आचरण और सामाजिक योग्यता

की भी वैसी ही आवश्यकता है। इसलिए जो लोग कुल, पद और परम्परा के अधिकार के कारण आप लोगों में स्वाभाविक ही उत्तम हैं उन्हें अपने को और अपने सन्तान को केवल उस शिक्षा के द्वारा योग्य करना आवश्यक है, जिस से कि वे श्रीमती महारानी अपनी राजराजेश्वरी की गवर्नमेंट की राजनीति के तत्त्वों को समझें और काम में ला सकें और इस रीति से उन पदों के योग्य हों जिन के द्वार उन के लिए खुले हैं।

राजभक्ति, धर्म्म, अपक्षपात, सत्य और साहस देश सम्बन्धी मुख्य धर्म्म हैं उन का सहज रीति पर बरताव करना आप लोगों के लिए बहुत आवश्यक है, और तब श्रीमती की गवर्नमेंट राज के प्रबन्ध में आप लोगों की सहायता बड़े आनन्द से अंगीकार करेगी, क्योंकि पृथ्वी के जिन जिन भागों में सरकार का राज है वहां गवर्नमेंट अपनी सेना के बल पर उतना भरोसा नहीं करती जितना कि अपनी सन्तुष्ट और एक जी प्रजा की सहायता पर जो अपने राजा के वर्त्तमान रहने ही में अपना नित्य मंगल समझ कर सिंहासन के चारों ओर जी से सहायता करने के लिए इकट्ठे हो जाते हैं।

श्रीमती महारानी निबल राज्यों को जीतने या आसपास की रियासतों को मिला लेने से हिन्दुतान के राज की उन्नति नहीं समझती वरन् इस बात में कि इस कोमल और न्याययुक्त राजशासन को निरुपद्रव बराबर चलाने में इस देश की प्रजा क्रम से चतुराई और बुद्धिमानी के साथ भागी हो। जो हो उन का स्नेह और कर्त्तव्य केवल अपने ही राज से नहीं है वरन् श्रीमती शुद्ध चित्त से यह भी इच्छा रखती हैं कि जो राजा लोग इस बड़े राज की सीमा पर हैं और महारानी के प्रताप की छाया में रह कर बहुत दिनों से स्वाधीनता का सुख भोगते आते हैं उन से निष्कपट भाव और मित्रता को दृढ़ रक्खे। परन्तु यदि इस राज के अमन चैन में किसी प्रकार के बाहरी उपद्रव की शंका होगी तो श्रीमती हिन्दुस्तान की राजराजेश्वरी अपने पैतृक राज की रक्षा करना खूब जानती हैं। यदि कोई विदेशी शत्रु हिन्दुस्तान के इस महाराज्य पर चढ़ाई करे तो मानो उस ने पूरब के सब राजाओं से शत्रुता की, और उस दशा में श्रीमती को अपने राज के अपार बल, अपने स्नेही और कर देने वाले राजाओं की वीरता और राजभक्ति और अपनी प्रजा के स्नेह और शुभचिन्तकता के कारण इस बात की भरपूर शक्ति है कि उसे परास्त करके दंड दें।

इस अवसर पर उन पूरब के राजाओं के प्रतिनिधियों का वर्त्तमान होना जिन्होंने दूर-दूर देशों से श्रीमती को इस शुभ समारम्भ के लिए बधाई दी है, गवर्नमेंट ऑव इंडिया के मेल के अभिप्राय, और आस पास के राजाओं के साथ उस के मित्र का स्पष्ट प्रमाण है। मैं चाहता हूं कि श्रीमती की हिन्दुस्तानी गवर्नमेंट की तरफ से श्रीयुत खान किलात और उन राजदूतों को जो इस अवसर पर श्रीमती के स्नेही राजाओं के प्रतिनिधि हो कर दूर दूर के अंगरेजी राज में आए हैं और अपने प्रतिष्ठित पाहुने पर श्रीयुत गवर्नर जनरल गोआ और बाहरी कान्सलों का स्वागत करूं।

हे हिन्दुस्तान के रईस और प्रजा लोग,—मैं आनन्द के साथ आप लोगों को

वह कृपापूर्व्वक सन्देसा जो श्रीमती महारानी आप लोगों की राजराजेश्वरी ने आज आप लोगों को अपने राजसी और राजेश्वरीय नाम से भेजा है सुनाता हूं। जो वाक्य श्रीमती के यहां से आज सबेरे तार के द्वारा मेरे पास पहुंचे हैं, ये हैं–

''हम, विक्टोरिया, ईश्वर की कृपा से, संयुक्त राज (ग्रेट ब्रिटेन और आयरलैंड) की महारानी, हिन्दुस्तान की राजराजेश्वरी, अपने वाइसराय के द्वारा अपने सब राज काज सम्बन्धी और सेना सम्बन्धी अधिकारियों, रईसों, सरदारों और प्रजा को, जो इस समय दिल्ली में इकट्ठे हैं, अपना राजसी और राजराजेश्वरीय आशीर्वाद भेजते हैं और उस भारी कृपा और पूर्ण स्नेह का विश्वास कराते हैं जो हम अपने हिन्दुस्तान के महाराज्य की प्रजा की ओर रखते हैं। हम को यह देख कर जी से प्रसन्नता हुई कि हमारे प्यारे पुत्र का इन लोगों ने कैसा कुछ आदर सत्कार किया, और अपने कुल और सिंहासन की ओर उन की राजभक्ति और स्नेह के इस प्रमाण से हमारे जी पर बहुत असर हुआ। हमें भरोसा है कि इस शुभ अवसर का यह फल होगा कि हमारे और हमारी प्रजा के बीच स्नेह और दृढ़ होगा, और सब छोटे बड़े को इस बात का निश्चय हो जाएगा कि हमारे राज में उन लोगों को स्वतन्त्रता, धर्म्म और न्याय प्राप्त हैं और हमारे राज का अभिप्राय और इच्छा सदा यही है कि उन के सुख की वृद्धि, सौभाग्य की अधिकता, और कल्याण की उन्नति होती रहे।''

मुझे विश्वास है कि आप लोग इन कृपामय वाक्यों की गुणग्राहकता करेंगे।

ईश्वर विक्टोरिया संयुक्त राज की महरानी और हिन्दुस्तान की राजराजेश्वरी की रक्षा करे।

इस अड्रेस के समाप्त होते ही नेशनल एन्थेम का बाजा बजने लगा और सेना ने तीन बार हुर्रे शब्द की आनन्दध्वनि की। दरबार के लोगों ने भी परम उत्साह से खड़े होकर हुर्रे शब्द और हथेलियों की आनन्दध्वनि कर के अपने जी का उमंग प्रगट किया। महाराज सेन्धिया, निजाम की ओर से सर सालारजंग, राजपूताना के महाराजों की तरफ से महाराज जयपुर, बेगम भूपाल, महाराज कश्मीर और दूसरे सरदारों ने खड़े होकर एक दूसरे को बधाई दी और अपनी राजभक्ति प्रगट की। इस के अनन्तर श्रीमती वाइसराय ने आज्ञा की कि दरबार हो चुका और अपनी चार घोड़े की गाड़ी पर चढ़ कर अपने खेमे को रवाने हुए।

श्रीमती महारानी के राजराजेश्वरी की पदवी लेने के उत्सव में गवर्नमेंट ऑव इंडिया ने हिन्दुस्तान के रईसों और साधारण लोगों पर जो अनेक अनुग्रह किए हैं उन्हें हम संक्षेप के साथ नीचे लिखते हैं।

सलामी

जम्बू, ग्वालियर, इन्दौर, उदयपुर और त्रावणकोर के महाराजों की सलामी उन की जिन्दगी भर के लिए 19 के बदले 21 तोप की हो गई और महाराज जयपुर की

17 से बढ़ कर 21।

जोधपुर और रीवां के महाराजों के लिए उन की जिन्दगी भर को 17 से बढ़ कर 19 तोप की सलामी हो गई।

किशुनगढ़ और उर्छा के महाराजों की सलामी उन के जीवन समय के लिए 15 तोप के बदले 17 हो गई, और नौवाब टोंक की 11 से बढ़ कर 17। भूपाल की बेगम के पति और हैदराबाद के शम्सुल उमरा नामी दूसरे मन्त्री की सलामी नए सिरे से 17 तोप की नियत हुई।

नौवाब रामपुर की सलामी उमर के लिए 13 से 15 तोप हुई, और भाव नगर के ठाकुर, नवा नगर के जाम, जूनागढ़ के नौवाब और काठियावाड़ के राजा की 11 से बढ़ कर 15। आरकट के शहजादे और बेगम भूपाल की सम्बन्धिनी कुदसिया बेगम को 15 तोप की सलामी नए सिर से मुकर्रर हुई।

महाराज पन्ना, राजा जींद और राजा नाभा की 11 से 13 तोप की सलामी जिन्दगी भर के लिए हो गई और महारानी तंजौर और महाराज बर्दवान को नए सिरे से 13 तोप की सलामी मिली।

मकला के नकीब और शिवहर के जमादार को 12 तोप की सलामी उमर भर के लिए मिली।

मलेरकोटला के नौवाब की सलामी जिन्दगी भर के लिए 9 से 11 हो गई, और मुरवी के ठाकुर साहिब और टिहरी के राजा के लिए नए सिरे से 11 तोप की सलामी कायम हुई।

नीचे लिखी हुई जगहों के राजाओं, सरदारों या ठाकुरों के जीवन समय के लिए नए सिर से नौ नौ तोप की सलामी मिली–

धरमपुर, ध्रोल, बलरामपुर, बंसडा, बिरोंदा, गोंदाल, जंजीरा, खरोंद, किलचीपुर, लिमरी, मैहर, पलिटाना, राजकोट, सुकेतरा (के सुल्तान), सुचीन, बादवान और वंकानेर।

यहां यह भी लिखना आवश्यक है कि 1 जनवरी सन 1877 से श्रीमती राजराजेश्वरी की आज्ञानुसार उन की सलामी 101 तोप की और राजसी झंडे तथा हिन्दुस्तान के गवरनर जेनरल की 31 तोप की नियत हुई।

नीचे लिखे हुए राजा और अधिकारी लोग 'काउंसिलर ऑव दि एम्प्रेस' (राजराजेश्वरी के सलाहकार) नियत हुए–

जीवन समय तक

महाराज कश्मीर, श्रीरणवीरसिंह जी. सी. एस. आई.।
महाराज बूंदी, श्रीरामसिंह जी. सी. एस. आई.।
महाराज ग्वालियर, श्रीजयाजीराव सेन्धिया जी. सी. एस. आई.।

महाराज इंदौर, श्रीतुंकाजीराव हुल्कर जी. सी. एस. आई.।
महाराज जयपुर, श्रीरामसिंह जी. सी. एस. आई.।
महाराज त्रावनकोर, श्रीरामवर्मा जी. सी. एस. आई.।
महाराज जींद, श्रीरघुबीर सिंह जी. सी. एस. आई.।
नौवाब रामपुर, कलबअलीखाँ जी. सी. आई.।

पद का अधिकार रहने तक

श्रीयुत रिचार्ड प्लांटाजिनेट कैम्बेल जी. सी. एस. आई. ड्यूक ऑव बंकिहैम ऐन्ड शान्डॉस, मदरास के गवरनर।

सर फिलिप उडहाउस जी. सी. एस. आई., के. सी. बी., बम्बई के गवरनर।

सर एफ. हेन्स के. सी. बी., हिन्दुतान के कमान्डरिनचीफ।

सर रिचर्ड टेम्पल के. सी. एस. आई. बंगाल के लेफ्टिनेंट गवरनर।

सर जॉर्ज कूपर सी. बी. पश्चिमोत्तर देश के लेफ्टिनेंट गवरनर।

सर रॉबर्ड डेवीस के. सी. एस. आई., पंजाब के लेफ्टिनेंट गवरनर।

सर जॉन स्ट्रैची के. सी. एस. आई. गवरनर जेनरल की काउंसिल के मेम्बर।

सर हेनरी नार्मन के. सी. गवरनर जेनरल की काउंसिल के मेम्बर।

आनरेबल ए. हॉबहाउस क्यू. सी., गवरनर जेनरल की काउन्सिल के मेम्बर।

सर ए. क्लार्क के. सी. एम. जी., सी. बी., गवरनर जेनरल की काउन्सिल के मेम्बर।

आनरेबल ई. बेली सी. एस. आई. गवरनर जेनरल की काउन्सिल के मेम्बर।

सर ए. आरबुथनाट के. सी. एस. आई., गवर्नर-जेनरल की काउंसिल के मेम्बर।

नीचे लिखे हुए राजाओं को प्रथम श्रेणी के स्टार ऑव इंडिया (जी. सी. एस. आई.) की पदवी मिली–

श्रीयुत महाराज रामसिंह, बूंदी।
श्रीयुत महाराज ईश्वरीप्रसाद नारायण सिंह, बनारस।
श्रीयुत महाराज जसवन्त सिंह, भरतपुर।
श्रीयुत प्रिंस अजीमजाह बहादुर, आर्कट।

इन लोगों को दूसरी श्रेणी के स्टार ऑव इंडिया (के. सी. एस. आई.) की पदवी मिली–

श्रीशिवाजी छत्रपति, राजा कोल्हापुर।
राजा आनन्दराव पंवार, धारवाले
श्रीमानसिंहजी, राजा ध्रांगध्रा।

श्रीविभवजी, जाम नवानगर।

आर. जे. मैकडोनल्ड, श्रीमती के ईस्ट इंडीज की जहाजी फौजों के कमान्डरिनचीफ।

सर जॉर्ज कूपर सी. बी. पश्चिमोत्तर देश के लेफ्टिनेंट गवरनर।

जेम्स स्टीवन साहिब, गवरनर जेनरल की काउन्सिल के पहले मेम्बर।

आर्थर हाबहाउस साहिब, गवरनर जेनरल की काउन्सिल के मेम्बर।

ई. सी. बेली साहिब सी. एस. आई. गवर्नर जेनरल की काउंसिल के मेम्बर।

तीसरे दरजे के स्टार ऑव इंडिया (सी. एस. आई.) कि पदवी 25 आदमियों को मिली, जिन में मथुरा के सेठ गोविन्द दास, कश्मीर के दीवान ज्वाला सहाय, और त्रावणकोर के दीवान शशिया शास्त्री को भी गिनना चाहिए।

नीचे लिखे हुए राजाओं को उन के नाम के सामने लिखी हुई पदवियां मिलीं।

महाराज गाइकवाड़ बड़ोदा–'फरजन्दि खास दौलति इंगलिशिया' (अंगरेजी सरकार के मुख्य बेटे)

महाराज ग्वालियर–'हिसामुस्सलतनत' (राज्य की तलवार)

महाराज कश्मीर–'इन्द्रमहेन्द्र बहादुर सिपरिसल्तनत' (राज्य की ढाल)

महाराज अजयगढ़–'सवाई'

महाराज बिजावर–'सवाई'

महाराज चरखारी–'सिपहदारुलमुल्क' (देश के सेनापति)

महाराज दतिया–'लोकेन्द्र'

नीचे लिखे हुए सरदारों और रईसों को 'महाराज' की पदवी अपनी जिन्दगी भर के लिए मिली–

आनन्दराव पंवार, धार के राजा।
छत्र सिंह, समूथर के राजा बहादुर।
धनुर्जय नारायणभंज देव, किलाक्योंझार के राजा, उड़ीसा।
देव्या सिंह देव, पुरी के राजा, उड़ीसा।
जगदेन्द्रनाथ राय, (राजा नाटौर के घराने की बड़ी औलाद)
राजा ज्योतीन्द्र मोहन ठाकुर।
कृष्णचन्द्र, मोरभन्ज वाले, उड़ीसा।
महीपत सिंह, पटना।
आनरेबल राजा नरेन्द्रकृष्ण, कलकत्ता।
राजा कृष्ण सिंह, सुसांग के राजा।
राजा रामनाथ ठाकुर, कलकत्ता।

नीचे लिखी हुई रानियों को उन के जीवन समय के लिए 'महारानी' की पदवी मिली–

रानी हरसुन्दरी देव्या, सिरसौल, बर्दवान।
रानी हींगन कुमारी, पैंदरा, मानभूम।
रानी सुरतसुन्दरी देव्या, राजशाही।

राजा सर दिनकरराव के. सी. एस. आई. को 'राजा मुशीरिखास बहादुर' (राजा मुख्य सलाहकार बहादुर) की पदवी उन की जिन्दगी भर के लिए मिली।

नीचे लिखे हुए सरदारों और रईसों को उन की जिन्दगी भर के लिए 'राजा बहादुर' की पदवी मिली–

रघुबीरदयाल सिंह, बिरोंदा के राजा।
खड्ग सिंह, सुरीला के राजा।
उदितप्रतापदेव, खरोंद के राजा।
राजा बिशेशर मालिया, सिरसौल, बर्दवान।
राजा हरिबल्लभसिंह, बिहार।
राजा हरनाथ चौधरी, दुबलहट्टी, राजशाही।
राजा मंगलसिंह; भिनाई, अजमेर।
राजा रामरंजन चक्रवर्त्ती, बीरभूम।

नीचे लिखे हुए मनुष्यों को उन के जीवन समय के लिए 'राजा' की पदवी मिली–

बाबू अजीत सिंह, तरौल, प्रतापगढ़।
बाबा बलवंत राव, जबलपुर।
बलवंत सिंह, गंगवाना।
डमरू कुमार वेंकटिया नयुदू, जमींदार कलाहस्थी, उत्तर आरकट।
देवा सिंह, राजगढ़।
दिगम्बर मित्र, कलकत्ता।
राव गंगाधरराम राव जमींदार पितापुर, गोदावरी प्रान्त।
राव छत्रसिंह, जमींदार, कन्याधन।
हरिश्चन्द्र चौधरी, मैमनसिंह।
कमलकृष्ण, कलकत्ता।
राय बहादुर क्षेत्रमोहनसिंह, दीनाजपुर।
कुंअर हरनारायण सिंह, हातरस।
कुंअर लछमन सिंह, डिप्टी कलेक्टर, बुलंदशहर।
सर टी. माधवराव के. सी. एस. आई. बड़ौदा के दीवान।
ठाकुर माधव सिंह, अजमेर।

प्रताप सिंह, अजमेर।
रामनारायण सिंह, मुंगेर।
श्यामनन्द दे, बलेसर।
श्यामशंकर राय, टिउटा।
सरदार सूरत सिंह मंजिठिया सी. एस. आई.।
राव साहिब त्र्यंबकजी नाना अहीर, नागपुर के राव।
कांदोकिशोर भूपति जमींदार सुकींदा, उड़ीसा।
पादोलब राव, जमींदार औल, उड़ीसा।

32 आदमियों को 'राव बहादुर' की पदवी मिली, जिन में गोपाल राव हरी देशमुख, अहमदाबाद की स्मालकाजकोर्ट के जज्ज और नारायण भाई दंडकर बरार के शिक्षा विभाग के डाइरेक्टर भी हैं।

29 मनुष्यों को 'राय बाहदुर' की पदवी मिली जिन में डॉक्टर राजेन्द्र लाल मित्र और बाबू कृष्णोदास पाल के नाम भी गिनने चाहिए।

8 आदमियों को 'राव साहिब' की पदवी मिली, 4 को 'राव' की और 5 को 'राय' की। इन में से अजमेर के पांच आदमी 'रावसाहिब' और तीन 'राय' हुए। निस्सन्देह अजमेर के चीफ कमिश्नर सिफारिश करने में बड़े उदार जान पड़ते हैं क्योंकि और भी बहुत सी पदवियां उधरवालों के हिस्से में आई हैं। हमारे पश्चिमोत्तर देश से तो सिवाय दो एक के कोई पूछा ही नहीं गया है यद्यपि योग्य पुरुषों की यहां कमी नहीं है।

राय मुंशी अमीचन्द अजमेर के जुडिशल असिस्टेंट कमिश्नर को 'सरदार बहादुर' की पदवी मिली, रतनसिंह मध्य भरतखंड के पुलीस सुपरिंटेंडेंट को 'सरदार' की; देवर परगना के ठाकुर हीरासिंह को 'ठाकुर रावत' की; और लछमीनरायन सिंह केरावाले को 'ठाकुर' की पदवी दी गई। 4 आदमी 'नौवाब' हुए। 40 को 'खां बहादुर' का खिताब मिला, जिन में से एक मौलवी अबदुल्लतीफ खां कलकत्ते के डिप्टी कलेक्टर भी हैं; और दो को 'खां' का खिताब मिला।

इन सरदारों को उन के नाम के सामने लिखे हुए खिताब खानदानी मिले—

महाराज सर जयमंगलसिंह बहादुर के. सी. एस. आई. गिद्धौर, मुंगेर—'महाराज बहादुर'।

धर्मजीत सिंह देव, सरदार उदैपुर, छोटानागपुर, महाल—'राजा उदयपुर'।

नौवाब ख्वाजा अलदुलग़नी, ढाका—'नौवाब'

दीवान गयासुद्दीनअली खां सज्जादानशीन, अजमेर, को उन की जिन्दगी भर के लिए 'शेखलूमशायख' का खिताब मिला और सरदार अतरसिंह बहादुर, भदौर, को 'मजालुलू उलमाउलफोजला' का।

इस के सिवाय एक को 'दीवान बहादुर' की, एक को 'दीवान' की ओर 13 को 'ऑनररी असिस्टेंट कमिश्नर' की पदवी दी गई।

दो यूरोपियन महाशयों को फारिन डिपार्टमेंट के आनरेरी असिस्टेंट सेक्रेटरी का और ऑनरेरी असिस्टेंट प्राइवेट सेक्रेटरी का पद भी अलग अलग दिया गया।

सेना के कितने अधिकारों के साथ भी 'सरदार बहादुर' और 'बहादुर' की पदवियां लगा दी गयी, और सब छोटे छोटे अधिकारियों, जहाज़ी नौकरों, सेना के सिपाहियों और गोरों को एक एक दिन की तनख़ाह इनाम मिली और दूसरी रियायतें भी इन के साथ की गयी। इस के सिवाय नेटिव कमीशन्ड आफ़िसर लोगों की तनख़ाह भी कुछ बढ़ा दी गई हैं।

रहीमखां खां बहादुर, असिस्टेंट सर्जन लाहौर को 'ऑनरेरी सर्जन' की पदवी मिली।

श्रीयुत रणवीर सिंह जी. सी. एस. आई. महाराज जम्बू और कश्मीर, और श्रीयुत जयाजीराव सेन्धिया जी. सी. एस. आई. महाराज ग्वालियर को सेना के जेनरल (जरनैल) का पद प्रतिष्ठा की रीति पर श्रीमती राजराजेश्वरी की ओर से दिया गया।

राजालोगों के सलामी की शोधी हुई नई फिहरिस्त।

राज की सलामी

21

गाइकवाड़ बड़ौदा, निजाम हैदराबाद और महाराज मैसूर।

19

महारानी मेवाड़, ख़ान क़िलात, बेगम भूपाल, महाराज जम्बू, इन्दौर, ग्वालियर, ट्रैवंकोर और कोल्हापुर।

17

बहावलपुर के नौवाब, बूंदी के महाराव राजा, कोटा के महाराव, कोचीन के राजा, कच्छ के राव और भरतपुर, बीकानेर, जैपुर, करौली, जोधपुर, पटियाला और रीवां के महाराजा।

15

धार, दतिया, ईडर, कृष्णगढ़, शिकम और उर्छा के महाराजा, देवास के छोटे बड़े राजा, प्रतापगढ़ के राजा, अलवर के महाराव राजा, राना धौलपुर डूंगरपुर और

जैसलमेर के महा रावल, झालावार के महाराज राना, खैरपुर के खां और सिरोही के राव।

13

महाराजा बनारस, जावरा और रामपुर के नौवाब, कोंच बिहार, रतलाम और त्रिपुरा के राजा।

11

चम्बा, छतरपुर, ध्रांगध्रा, फरीदकोट, झबुआ, जीद, कहंलूर, कपूरथला, मन्डी, नाभा, नरसिंहगढ़, राजपिम्पला, सीतामऊ, सिलहना, सिरमौर और सुकेत के राजे। बावनी, कम्बे, जूनागढ़, राधनपुर राजगढ़ और टोंक के नौवाब। अजयगढ़, बिजावर, चरखारी, पन्ना और समथर के महाराजे, बांसवारा के महारावल, भावनगर के ठाकुर, नबानगर के जाम, पालनपुर के दीवान और पोरबन्दर के राना।

9

अली राजपुर, बड़वानी और लुनवारा के राना, बैरिया, छोटा उदयपुर, नागोद और सोंठ के राजा; वालाशिनोर के वावी, फुलदी और लहज के सुलतान तथा सावन्तवाड़ी के देसाई और मालिवर कोटला के नौवाब।

शारीरक सलामी

21

महाराज दिलीप सिंह, महाराज जीयाजी राव सेन्धिया, महाराज तुकोजी राव होल्कर, महाराना सज्जन सिंहजी उदयपुर, महाराज राम सिंह सवाई जयपुर, महाराज रणवीर सिंह कश्मीर, महाराज श्रीराम वर्मा ट्र्यावेंकोर।

19

मुरशिदाबाद के नौवाब निजाम, महाराज जसवन्त सिंह जोधपुर, महाराज सर जंग बहादुर वजीर नेपाल, महाराज रघुराज सिंह रीवां।

17

बेगम भूपाल के पति, हैदराबाद के सालारजंग और शमसुलूउम्रा, महाराज पृथ्वी सिंह, कृष्णगढ़, महाराज महेन्द्रप्रताप सिंह उर्छा और नौवाब इब्राहीम खां टोंक।

15

आर्कट के प्रिन्स अज़ीमजाह, ठाकुर तख्त सिंहजी भावनगर, कुदसिया बेगम

भूपाल, राजा मानसिंह ध्रांगध्रा, नौवाब महाबत खां जूनागढ़, जाम श्रीविभवजी नवानगर, नौवाब कलबअली खां रामपुर।

13

महाराज महताबचन्द्र बर्दवान, महाराज जींद, महाराज पन्ना, महाराज विजयनगरम् राजा नाभा और रानी विजय महिम्नी मुक्ताबाई तंजौर।

12

उमर बिन सल्लह बिन मुहम्मद नकीब मकला, औध बिन उमर जमादार शहरा।

11

नवाब मालिय कोटला, ठाकुर मोरवी और राजा टेहरी।

9

महारावल बांसवाड़ा, महाराजा बलरामपुर, महारावल धरमपुर, ध्रोल गोंदल, लिमडी, पालीटाना, राजकोट और बादवान के ठाकुर, जंगीरा के और सुचीन के नौवाब, खंरोड़, बंकनीर बिरोंदा और मैहर के राजे और सुलतान सकोतरा तथा किलिचीपुर के राव।

विदित रहे कि महाराज नैपाल, सुलतान मसकत, सुलतान जंजीबार और अमीर काबुल की सलामी भी 21 है।

[हरिश्चन्द्र चन्द्रिका, जनवरी सन 1877 ई. में प्रकाशित]

उदयपुरोदय

उदयपुरोदय

पहिला अध्याय

मेवाड़ का शुद्ध नाम मेदपाट है और यहां के महाराज की संज्ञा सीसौन्धिया है। कहते हैं कि इन के वंश में कोई राजा बड़े धार्मिक थे। एक समय वैद्यों ने छल से औषध में मद्य मिला कर उन को पिला दिया, क्योंकि जिस रोग में वे ग्रस्त थे उस की औषधि मद्य ही के साथ दी जाती थी। शरीर स्वच्छ होने पर जब उन्होंने जाना कि हमने मद्य पीया था, तो उसके प्रायश्चित के हेतु गलता हुआ सीसा पीकर प्राण त्याग किया। तभी से सीसौन्धिया इस वंश की संज्ञा हुई। यही वंश भारतखंड में सबसे प्राचीन और सबसे माननीय है। इसी वंश में महात्मा मान्धाता, सगर, दिलीप, भगीरथ, हरिश्चन्द्र, रघु आदि बड़े बड़े राजा हुए हैं और इसी वंश में भगवान श्रीरामचन्द्र ने अवतार लिया है। इसी वंश के चरित्र में कालिदास, भवभूति, वरंच व्यास, बाल्मीकि ने भी वह ग्रन्थ बनाए हैं जो अब तक भारतवर्ष के साहित्य के रत्नभूत हैं। हिन्दुस्तान में यही वंश ऐसा बचा है जिस में लोग सत्ययुग से लेकर अब तक बराबर राज्यसिंहासन पर अचल छत्र के नीचे बैठते आए। उदयपुरवाले ही ऐसे हैं जिन्हों ने और और विलायत के बादशाहों की बेटी ली, पर अपनी बेटी मुसलमान को न दी।[1]

आज हम उसी बड़े पराक्रमशाली प्राचीन वंश का इतिहास लिखने बैठे हैं। इस में हमारे मुख्य सहायक ग्रन्थ टॉड साहिब का राजस्थान, उदयपुर क़े वंशचरित्र के भाषाग्रन्थ और प्राचीन ताम्रपत्र हैं। जैसे संसार के सब राजों के इतिहास प्रारम्भ में अनेक आश्चर्य घटना पूरित होते हैं वैसे ही इस के भी प्रारम्भ में अनेक आश्चर्य इतिहास हैं। उन से कोई इस के ऐतिहासिक इतिवृत्ति में सन्देह न करैं; क्योंकि प्रायः

---

1. कहते हैं कि जब औरंगज़ेब ने उदयपुर घेर लिया था तब राना साहब शिकार खेलते थे और उन को बादशाह की दो बेगम फ़ौज से बिछड़ी जंगल में भटकती हुई मिलीं, जिन को राना ने अपनी बहिन कह के पुकारा और रक्षापूर्व्वक लाकर उन को औरंगज़ेब को सौंप दिया। मुसलमान तवारीख लिखनेवालों ने अपनी क्षति इसी बहाने पूरी की और कहा कि उदयपुरवालों ने बेटी नहीं दी, तो क्या हुआ, बादशाह बेगम को अपनी बहिन बनाया तो सही। वरंच इसी हेतु उस दिन से उन बेगमों को उदयपुरी बेगम लिखा गया। भाषाग्रन्थों में इन बेगमों के नाम रंगी चंगी बेगम लिखे हैं।

प्राचीन इतिवृत्त अनेक अद्भुत घटना पूर्ण होते हैं और इतिहासवेत्ता लोग उन्हीं चमत्कृत इतिहासों का सारासार निस्सार पूर्व्वक सारा निर्णय बुद्धि बल से कर लेते हैं।

राजस्थान में मेवाड़ और जैसलमेर का राज्य सब से प्राचीन है। आठ सौ बरस से भारतवर्ष में विदेशियों का राज्य प्रारम्भ हुआ, तब से अनेक राज्य बिगड़े और बने पर यह ज्यौं का त्यौं है। राजनी के बादशाह लोग सिन्धु नदी का गम्भीर जल पार कर के हिन्दुस्तान में आए। उस समय जहां मेवाड़ के राज्य का सिंहासन था वहीं अब भी है। बहुत से राजा लोग उस राज्य के चारों ओर, बहुत से वहां से और कहीं जा बसे, पर इन के महल अब भी वहीं खड़े हैं जहां पहले खड़े थे। सतयुग से आज तक इसी वंश के सब पुरुष सिंहासन ही पर मरे।

भगवान रामचन्द्र के ज्येष्ठ पुत्र लव ने अपने राज्य समय में लवपुर अर्थात् लाहौर बसाया था और सुमित्रायु नामक राजा लव से पचपन पीढ़ी पीछे हुआ। पुराणों में लिखा है कि सुमित्र ने कलियुग में राज्य किया और बहुत से प्रमाणों से मालूम होता है कि ये विक्रमादित्य के कुछ पहले वर्त्तमान थे। इन के पीछे कनकसेन तक राजाओं का ठीक वृत्तान्त नहीं मिलता। जहां तक नाम मिले हैं उस में पहला महारथ, उस का पुत्र अन्तरीक्ष, उस का अचलसेन और उस का पुत्र राजा कनकसेन हुआ। राजा कनकसेन ही सौराष्ट्र देश में आए, परन्तु इस का नहीं पता लगता कि उन्होंने लाहौर किस हेतु से छोड़ा और किस पथ से सौराष्ट्र पहुंचे। यहां आकर इन्होंने किसी पंवार वंश के राज का अधिकार जीत कर सन 144 में वीर नगर नामक नगर संस्थापन किया। कनकसेन को महामदनसेन, उन को शोणादित्य और उन को विजय भूप हुआ। इस ने जहां अब धोल का नगर है वहां पर विज़यपुर नामक नगर संस्थापन किया और जहां अब सिहोर है तहां विदर्भ नगर बनाया और बल्लभीपुर नामक एक बड़ा नगर बसा कर उसे अपनी राजधानी बनाया। जब धोल नगर से पांच कोस उत्तर पश्चिम बालभी नामक जो गांव है वहीं इस प्रसिद्ध बल्लभीपुर का अवशेष है। शत्रुञ्जय माहात्म्य नामक जैन ग्रन्थ में भी इस नगर की बड़ी शोभा लिखी है। मेवाड़ के राजा लोग बल्लभीपुर से आए हैं यह प्रवाद बहुत दिन से था, पर कोई इस का पक्का प्रमाण नहीं था। अब उदयपुर के राज्य में एक टूटे शिवालय में एक प्राचीन खोदा हुआ पत्थर मिला है, उस से यह सन्देह मिट गया, क्यौंकि उस में लिखा है कि जिन महात्माओं का ऊपर वर्णन हुआ उस की साक्षी बल्लभीपुर के प्राचीर हैं। राणा राजसिंह के समय के बने हुए एक ग्रन्थ में भी लिखा है कि सौराष्ट्र देश पर बरबरों ने चढ़ाई कर के बालकानाथ को पराजय किया।

इस बल्लभीपुर के विप्लव में सब लोग नष्ट हो गए और केवल एक प्रमार की दुहिता मात्र बची। बल्लभीपुर शिलादित्य के समय में नाश हुआ। विजयभूप के पद्मादित्य, उन के शिवादित्य, उन के हरादित्य उन के सुयशादित्य, उन के सोमादित्य, उन के शिलादित्य।

शिलादित्य वा शीलादित्य तक एक प्रकार का क्रम लिख आए हैं। अब आगे नामों में और उन के समय में कितना गड़बड़ और उस के ठीक निर्णय में कितनी विपत्ति है यह दिखाते हैं। आर्यमत के अनुसार चार युग में काल बांटा गया है। इस में ब्रह्मा की उत्पत्ति से सत्ययुग माना जाता है। अब अनेक पुराणों से और प्रसिद्ध विद्वानों के मत से प्रारम्भ से काल लिखते हैं।

पुराण के मत से इक्ष्वाकु को 2185000 वर्ष हुए। जोन्स के मत से 6877 और विलफर्ड के मत से 4578, टॉड के मत से 4077, वेंटली के मत से 3405।

श्रीरामचन्द्र का समय पुराण. 868979 वर्ष, जोन्स. 3906, विलफर्ड. 3237, वेंटली. 2827, टॉड. 4000।

महाराज युधिष्ठिर का समय पुराण. 4979, वेंटली 2453, और जोन्सटॉड 3307 और विलफर्ड के मत से श्रीरामचन्द्र का और युधिष्ठिर का समय एक है, विल्सन के मत से 3307।

सुमित्र का समय पुराण. 3977, जोन्स 2906, विलफर्ड 2577, वेंटली 1996, विल्सन. 2802, ब्रह्मावालों के मत से 2477।

शिशुनाग का समय पुराण. 3836, जोन्स. 2747, विलफर्ड. 2477, बिल्सन. 2654, ब्रह्मावाले. 2477।

नन्द का समय पुराण. 3477, जोन्स. 2576, विल्सन. 2292, ब्रह्मावाले. 2281।

चन्द्रगुप्त का समय पुराण. 3379, जोन्स. 2477, विलफर्ड. 2227, विल्सन. 2192, टॉड. 2197, ब्रह्मावाले. 2269।

अशोक का समय पुराण. 3347, जोन्स. 2517, विल्सन. 2127, ब्रह्मावाले 2207।

जोन्स प्रिंसिप साहब के मत से परशुरामजी को 3053 वर्ष हुए और वेंटली साहब के मत से वाल्मीकि रामायण बने केवल 1586 वर्ष हुए।

कलियुग का प्रारम्भ पुलोम के समय तक भागवत के मत से 3734, ब्रह्मांडपुराण के मत से 3652, वायुपुराण के मत से 3606, जैनों के मत से 2955 और चीन और ब्रह्मा के मत से 2568 वर्ष से है। अंगरेजी विद्वानों के पुराणों के अनुसार इस समय तक पुलोम का समय जोड़ कर एक सम्मति है कि कलियुग बीते 5000 वर्ष लगभग हुए, परन्तु इस मत को वे सत्य नहीं मानते, क्यौंकि फिर आप ही लिखते हैं कि स्वायम्भु मनु को हुए 5883 वर्ष और ववस्वतमनु को 4827 वर्ष हुए।

युधिष्ठिर के 3044 सम्वत बीते विक्रम का सम्वत चला और विक्रम के 135 वर्ष पीछे शालिवाहन का शाका चला।

ऊपर जो कालनिर्णय में विद्वानों के परस्पर विरुद्ध मत वर्णन किए गए इस से यह बात प्रसिद्ध होगी कि प्राचीन समय निर्णय करना कितना दुरूह्य है, उस के आगे जो ब्रह्मा से लेकर सुमित्रा पर्यन्त नामावली दी जाती है उस के मध्यगत काल का

निर्णय न करके सुमित्र के समय से जो हमारे मत के अनुसार 2000 वर्ष बीते हुआ है काल का निर्णय प्रारम्भ करैंगे।

ब्रह्मा, मरीचि, कश्यप, विवस्वान, श्राद्धदेव, इक्ष्वाकु, विकक्षी 1. पुरंजय, काकुस्थ, 2. अनेनास, 3. पृथु, 4. विश्वगश्व, 5. अर्द, भाद्रआर्द, युवनाश्व, 6. श्रवस्थ, वृहदश्व, 7. कुवलयाश्व, दृढाश्व हर्यश्व, निकुम्भ, 8. संकटाश्व, 9. प्रसेनजित्, युवनाश्व, 10. मान्धाता, पुरुकुत्स, चित्रिशदश्व, अनारण्य, पृषदश्व, हयश्व, 11. बसुमान, 12. त्रिधन्वा, 13. त्रयारण्य, त्रिशंकु, हरिश्चन्द्र, रोहिताश्व, हारीत, 14. चुंचु, विजय, 15. रुरुक, वृक, 16. बाहु, सगर, असमंजस, अंशुमान्, दिलीप, भगीरथ, श्रुत, नाभाग, अम्बरीष, सिन्धुद्वीप, अयुताश्व, 17. ऋतुपर्ण, सर्वकाम, सुदास, कल्माषपाद, 18. असमक, 19. हरिकवच, 20. दशरथ, इलिवथ, विश्वासह, 21. खट्वांग, दीर्घबाहु, रघु, अज, दशरथ, श्रीराम, 22. कुश, अतिथि, निषध, नल, नाभ, पुंडरीक, क्षेमधन्वा, 23. द्वारिक, अहीनज, कुरुपरिपात्र, 24. दल, 25. छल, उक्थ, 26. बज्रनाभि, 27. शंखनाभि, 28. व्युथिताभि, 29. विश्वासह, हिरण्यनाभि, 30. पुष्प, 31. ध्रुवसन्धि, 32. अपवर्म, शीघ्र 33. मरु, प्रसव श्रुत, 34. सुसन्ध, आमर्ष, 35. महाश्व, वृहद्वाल, वृहद्शान, उरुक्षेप, वत्स, वत्सव्यूह प्रतिव्योम, 36. देवकर, सहदेव, 37. वृहदश्व, 38. भानुरत्न, 39. सुप्रतीक, मरुदेव, 40. सुनक्षत्र, केशीनर, 41. अंतरीक्ष, 42. सुवर्ण, अमित्रजित्, वृहद्राज, 43. धर्म, 44. कृतंजय, 45. रणंजय, संजय, शाक्य, 46. क्रोधदान, शाक्य सिंह, 47. अतुल, प्रसेनजित, क्षुद्रक, कुंदक, 48. सुरथ, सुमित्र।

1. नामान्तर काकुस्थ। 2-3 ना. अनपृथु। 4. ना. विश्वगन्धि। 5. ना. चन्द्र। 6. ना. स्वसव या श्रव। 7. ना. धुन्धुमार। 8. संकटाश्व के पीछे वरुणाश्व और कृशाश्व दो नाम और मिलते हैं। 9. ना. सेनजित। 10. ना. सुबन्धु इनको चक्रवर्ती लिखा है। 11. ना. महण या अरुण। 12. ना. त्रिविधन 13. ना. सत्यव्रत। 14. ना. चम्प, किसी पुस्तक में चम्प के पीछे सुदेव तब विजय लिखा है। 15. ना. भरुक। 16. ना. बाहुका। 17. ऋतुपर्ण के पीछे किसी पुस्तक में नल, तब सार्वकाम लिखा है। 18. ना. श्रामक। 19. ना. मूलक। 20. दशरथ और इलिबथ दो के बदले किसी पुस्तक में ऐड़विड़ एक ही नाम लिखा है। 21. ना. खरभंग। 22. कुश के समय से अनेक ग्रन्थकार द्वापर की प्रवृत्ति मानते हैं (इन्हीं कुश का एक पुत्र कूर्म नामक था जिस से कछवाहे लोग अपनी वंशावली मानते हैं।) 23. ना. देवानीक। 24. ना. अहीनग। 25. ना. रणच्छल। 26. ना. बल। 27. नाभि बज्र के पीछे कोई अर्क तब शंखनाभि को लिखता है। 28. ना. सगण। 29. ना. विधृत। 30. ना. विशित्राश्व। 31. ना. पुष्प। 32. ध्रुवसन्धि और अपवर्म के बीच में कोई सुदर्शन नामक और एक राजा मानता है। 33. ना. अग्निवर्म। 34. ना. मनु। 35. ना. सन्धि 36. ना. अवस्वान, इसी महाश्व के पीछे विश्वबाहु, प्रसेनजित और तक्षक नामक तीन राजा वृहद्वाल के पहले अनेक ग्रन्थकार मानते हैं और कहते हैं, कलियुग का प्रारम्भ इसी समय से हुआ। 37. प्रतिव्योम और देवकर के बीच में कोई भानु को

भी जोड़ते हैं। इसी देवकर को नामान्तर दिवाकर है। 38. सहदेव, तब बीर, तब वृहदश्व, यह किसी का मत है। 39. ना. भानुमत वा भानुमान, ग्रन्थकारों का मत है कि ईरान का जो प्रसिद्ध बहमन नामक राजा हुआ था वह यही भानुमान है। इस के और सुप्रतीक के बीच में कोई प्रतिशोश्व नामक राजा मानते हैं। 40. ना. पुश्चर 41. ना. रेख। 42. ना. सुतुपा। 43. ना. बाढ़ि। 44. कोई ग्रन्थकार कहते हैं कि यही कृतंजय प्रथम सौराष्ट्र में आया। 45. ना. जयरान। 46. ना. शुद्धोधन इसी का पुत्र प्रसिद्ध शाक्यसिंह है जो भादों सुदी 5 को जन्मा था, और बौद्ध और जैन के नाम से जिस का मत संसार के एक तिहाई में व्याप्त है। 47. ना. लांगल वा सिंघल वा रातुल। 48. ना. सुरत वा सौराष्ट्र कहते हैं कि इसी के नाम से सौराष्ट्र, देश बसा है।

महाराज जैसिंह के ग्रन्थ के अनुसार सुमित्र के पीछे महारितु, अन्तरित, अचलसेन, कनकसेन, महामदनसेन, सुदन्त वा प्रथम सोणादित्य, (विजयसेन वा अजयसेन वा विजयादित्य) पद्मादित्य, शिवादित्य, हरादित्य, सूर्यादित्य, शिलादित्य, ग्रहादित्य, नागादित्य, भागादित्य, देवादित्य, आशादित्य, कालभोज वा भोजादित्य, द्वितीय ग्रहादित्य और वापा। सुमित्र से महाऋतु तक चार नाम नहीं मिलते और इस क्रम से श्रीरामचन्द्र से वापा अस्सी पीढ़ी में हैं। तक्षक से लेकर के बाहुमान वा भानुमान तक आठ राजाओं का नाम कई वंशावली में नहीं मिलता। अनेक ग्रन्थकारों का मत है कि इसी तक्षक के समय से ईरान, तूरान, तुरकिस्तान इत्यादि देशों में इस का वंश राज करता था और तुरकिस्तान का प्राचीन नाम तक्षकस्थान बतलाते हैं और यूनान में जो अर्तक्षर्क नामक राजा हुआ है वह भी इसी तक्षक का नामान्तर मानते हैं।

राजा जैसिंह का मत है, कनकसेन के समय में अर्थात् सन 144 में सौराष्ट्र देश में इस वंश का राज हुआ और वही लिखते हैं कि विजय वा अजयसेन का नामान्तर नौशेरवां था। इस ने विजयपुर वा विराटगढ़ बसाया और सन 319 में बल्लभीशक स्थापन किया। उन्हीं का मत है कि शिलादित्य को यवनों ने जीता और सौराष्ट्र से यह राज छिन्न भिन्न हो गया और इस का पुत्र केशव वा गोप वा ग्रहादित्य भांडेर के जंगल में रहा और उस के पुत्र नागादित्य के समय से इस वंश का गोत्र गहलौत कहलाया और फिर आशादित्य ने मेवाड़ में अपने वंश की पहली राजधानी आशापुर और आहार बसाया और इस के पीछे वापा ने सन 714 में चित्तौड़ का राज्य पाया, दूसरे ग्रहादित्य का नाम द्वितीय नागादित्य भी लिखा है।

बापा तक नाम का क्रम हम पूर्व्व में लिख आए हैं, परन्तु प्राचीन ताम्रपत्रों से लेकर यदि वंशावली लिखी जाए, तो सेनापति वा भट्टारक तथा धरासेन, द्रोणसिंह (प्रथम), ध्रुवसेन, धरापति, गृहसेन, श्रीधरसेन (प्रथम), शिलादित्य (प्रथम), चारुग्रह वा खड़्ग्रह (द्वितीय), श्रीधरसेन (द्वितीय), ध्रुवसेन (तृतीय), श्रीधरसेन (तृतीय), शिलादित्य (इस के पीछे तीन नाम छूट गए हैं), शिलादित्य (तृतीय) और (चतुर्थ) शिलादित्य।

टॉड साहब की वंशावली और बल्लभीपुर की वंशावली में कितना अन्तर है यह ऊपर के नामों से प्रगट होगा। पादरी अंडरसन साहब ने दो नए ताम्रपत्र पढ़

कर इस वंशावली को शोधा है और वे कहते हैं कि इस में जहां जहां श्रीधरसेन लिखा है वह सब नाम धरासेन है और शिलादित्य का नाम क्रमादित्य वा विक्रमादित्य है और इन्हीं को धर्मादित्य भी कहते हैं।[1] और वंशावली के प्रथम पुरुष को सेनापति वा भट्टारक वा धर्मादित्य भी लिखा है। दोनों वंशावली में बल्लभीपुर का अन्तिम राजा शिलादित्य है और इन दोनों के सम्वत् भी पास पास मिलते हैं। पारसी इतिहासवेत्ताओं के मत से इसी शिलादित्य का पुत्र ग्रह वा ग्रहादित्य, जिस ने गहलोत वा ममोधिया गोत्र चलाया, नौशेरवां का रक्षित पुत्र था, परन्तु महाराज जैसिंह ने राजा अजयसेन का ही नामान्तर नौशेरवां लिखा है। पारसी इतिहासवेत्ताओं के मत से नौशेरवां के पुत्र नोशीजाद (हमारे यहां का नागादित्य) और यजदिजिर्द की बेटी माहबानू, जो इन्हीं राजाओं में से किसी को व्याही थी, इस वंश के मूल पुरुष हैं। विलफर्ड साहब के मत से बल्लभीशक के स्थापनकर्ता अजयसेन वा दूसरी वंशावली के अनुसार धरासेन को ही पुराणों में शूद्रक वा शूरक लिखा है, जिस ने 3290 वर्ष कलियुग बीते सन 191 वा 291 में प्रथम विक्रमादित्य के नाम से राज्य किया था।[2] मेजर वॉटसन के मत से सेनापति भट्टारक के सौराष्ट्र जीतने के दो वर्ष पीछे प्रसिद्ध स्कन्दगुप्त मरा।[3] इस से गुप्त सम्वत् के आस ही पास बल्लभी सम्वत् भी है और इस विषय के उन्होंने अनेक प्रमाण भी दिए हैं। इस बल्लभी सम्वत के निर्णय में इतिहासवेत्ता विद्वानों के बड़े बड़े झगड़े हैं, जिस से कई दरंजन कागज के बड़े ताव रंग गए हैं। लोग सिद्धान्त करते हैं कि गुप्तवंश जब प्रबल था तब बल्लभीवंश के लोग उस के वंश के अनुगत थे, यहां तक कि भट्टारक सेनापति गुप्त वंश बिगड़ने के पीछे स्वाधीन हुआ और अपने दूसरे बेटे द्रोणसिंह को महाराज किया। पांच छह ताम्रपत्र इस वंश के जो मिले हैं उन के परस्पर नामों में बड़ा फरक है, जैसा गुहसेन धरासेन शिलादित्य धरासेन शिलादित्य वा गुहसेन के दो पुत्र शिलादित्य और खड़्ग्रह के दो पुत्र धरासेन और ध्रुवसेन वा शिलादित्य के देरभट्ट, उन के शिलादित्य खड़ग्रह और ध्रुवसेन और शिलादित्य के बाद फिर शिलादित्य।

इन नामों के परस्पर अत्यन्त ही विरुद्ध होने से कोई निश्चित वंशावली नहीं बन सकती, अतएव इन झगड़ों को छोड़ कर राजा कनकसेन के समय से हमने पूर्व्व वृत्तान्त प्रारम्भ किया। कारण यह कि जब एक बड़ा वंश राज्य करता है तो उस की शाखा प्रशाखा आसपास छोटे छोटे राज्य निर्माण कर के राज करती हैं। इसमें क्या आश्चर्य है कि ताम्रपत्रों में ऐसे ही अनेक श्रेणियों की वंशावली का वर्णन हो जो वास्तव में सब बल्लभी वंश से सम्बन्ध रखती हैं। ऐसा ही मान लेने से पूर्वोक्त समय

---

1. Bomb. Jour. VLIII P. 216
2. as Ras VL IX pp. 135. 230.
3. In Ant. VL III P. XXXIII.

और वंश निर्णय की असमंजसता, जटिलता, धनता असम्बद्धता और विरोधिता दूर होगी।

सुमित्र से लेकर शिलादित्य तक एक प्रकार का निर्णय ऊपर हो चुका और इस से निश्चय हुआ कि महाराज सुमित्र कलियुग के अन्त में हुए थे और बल्लभपुर का नाश भए दो हजार वर्ष के लगभग हुए। कहा है कि बल्लभीपुर में सूर्य्यकुंड नामक एक तीर्थ था। युद्ध के समय शिलादित्य के आवाहन करने से इस कुंड में से सूर्य्य के रथ का सात सिर का घोड़ा निकलता था और इस अश्व के रथ पर बैठने से फिर शिलादित्य को कोई जीत नहीं सकता था और यह भी कथित है कि सूर्य्य की दी हुई शिलादित्य के पास एक ऐसी शिला थी जिस को दिखा देने से वा स्पर्श करा देने से शत्रुओं का नाश हो जाता था और इसी वास्ते इन का नाम शिलादित्य था। इन के किसी शत्रु ने इन्हीं के किसी निज भेदिये की सम्मति से उस पवित्र कुंड को गोरक्त द्वारा अशुद्ध कर दिया, जिस से बल्लभीपुर के नाश के समय राजा के बारम्बार आवाहन करने से भी वह अश्व नहीं निकला और राजा सपरिवार युद्ध में निहत हुआ और बल्लभीपुर नाश हुआ। जैनग्रन्थों के अनुसार सम्वत् 205 में बल्लभीपुर नाश हुआ और श्री महाराणा उदयपुर के राज्य कृत संग्रह के अनुसार राजा शिलादित्य का नाम सलादित्य था और बल्लभीपुर का नाम विजयपुर।

अंगरेजी विद्वानों का मत है कि नगरावरोधकारी शत्रुदल ने हिन्दुओं को दुःख देने के हेतु गोरक्त से बल्लभीपुर के जल कुंडों को अशुद्ध कर दिया होगा, जिस से हिन्दू लोग घबड़ा कर एक साथ लड़ने को निकल खड़े हुए होंगे। अलाउद्दीन बादशाह ने गागरौन देश के खीची राजाओं से यही छल किया था। बल्लभीपुर के शत्रुओं का यही छल मानो इस कथा का मूल है।

बल्लभीपुर को किस असभ्य जाति ने नाश किया इस का निर्णय भलीभांति नहीं होता। प्राचीन पारस निवासी लोग वृष को पवित्र समझते थे और सूर्य्य के सामने उस को बलिदान भी करते थे। इस से निश्चय होता है कि ये लोग पारसी तो नहीं थे। प्राचीन ग्रन्थों में पाया जाता है कि ख्रिष्टीय दूसरी शताब्दी में सिन्धु नद के किनारे पारद वा पार्थियन लोगों का एक बड़ा राज्य था। विष्णुपुराण में लिखा है कि सूर्य्यवंशी सगर राजा ने म्लेच्छों को चिन्ह विशेष देकर भारतवर्ष से निकाल दिया था, जिस में यवन सर्व शिरोमुंडित केश, अर्द्धशिर मुंडित, पारद मुक्त केश और पन्हव वा पल्हव श्मश्रुधारी बनाए गए थे। उसी काल में श्वेत वर्ण की एक हूण जाति भी सिन्धु के किनारे राज्य करती थी। हूण जाति नामक प्राचीन असभ्य मनुष्यों का लेख पुराणों और यूरप के इतिवृत्तों में भी पाया जाता है। सम्भावना होती है कि इन्हीं दो जातियों में से किसी ने बल्लभीपुर नष्ट किया होगा। पारद और हूण दो जातियों का आदिनिवास शाकद्वीप है। महाभारत में शाकद्वीपी और पूर्वोक्त हूणादिकों को इसी प्रकार यवन लिखा है। पुराणों में इन सबों को एक प्रकार का क्षत्री लिखा है। ये सब असभ्य

जाति शाकद्वीप से किस काल में यहां आए इस का पता नहीं लगता। वेंटली साहब का मत है कि शाकद्वीप इंग्लैंड का नामान्तर है। विशेष आश्चर्य का विषय यह है कि ये सब शाकद्वीपी काल पा के आर्य जाति में मिल गए, यहां तक कि ब्राह्मण और क्षत्रियों में भी शाकद्वीपी वर्त्तमान हैं।

यह निश्चय हुआ कि इन्हीं म्लेच्छ जाति के लोगों में से किसी जाति ने बल्लभीपुर नाश किया। सान्दोंराई से जो वंशपत्रिका मिली है उस में लिखा है कि बल्लभीपुर नाश होने के पीछे वहां के लोग भारवाड़ में आकर सान्दोंरावालों और नान्दोर नगर बसा कर रहने लगे और फिर गाजनी नामक एक नगर का और भी उल्लेख है। एक कवि अपने ग्रन्थ में लिखता है ''असभ्यों ने गाजनी हस्तगत किया, शिलादित्य का घर जनशून्य हुआ और जो वीर लोग उस की रक्षा को निकले वे मारे गए।''

हिन्दू सूर्य्य के वंश का यहां चौथा दिवस अवसान हुआ। प्रथम दिवस इक्ष्वाकु से श्रीरामचन्द्र तक अयोध्या में बीता, दूसरा दिन लव से सुमित्र तक अन्य राजधानियों में, तीसरा सुमित्र से विजयभूप तक अंधेरे मेघों से छिपा हुआ कहां बीता न जान पड़ा और यह चौथा दिन आज बल्लभीपुर में शिलादित्य के अस्त होने से समाप्त हुआ। पांचवें दिन का इतिहास बहुत स्पष्ट है, जो मुंह और वापा के विचित्र चित्रों से चित्रित होकर दूसरे अध्याय में वर्णन होगा।

इति उदयपुरोदय प्रथम अध्याय

दूसरा अध्याय

बल्लभी वंश की रात्रि का अवसान हुआ। उदयपुर के इतिहास की यहां से शृंखला बंधी। पूर्व्व में लिख आए हैं कि बल्लभीपुर को यवनों ने घेरा और राजा शिलादित्य ने सकुटुम्ब सपरिवार वीरों की गति पाया। अब और सीमन्तिनीगण राजा की सहगामिनी हुईं, किन्तु रानी पुष्पवती (वा कमलावती) मात्र जीवित रही।

रानी पुष्पवती चन्द्रावती नगर (साम्प्रत आबूनगर) के राजा की दुहिता थीं। बल्लभीपुर के आक्रमण के पूर्व्व ही यह रानी गर्भवती होकर अपने पिता के राज में जगदम्बा (आर्शाम्बिका) के दर्शन को गई थी और वहां से लौटती समय मार्ग में अपने प्राणबल्लभ और बल्लभीपुर का विनाश सुना और उसी समय अपना प्राण देना चाहा। परन्तु बीरनगर की एक ब्राह्मणी लक्ष्मणावती जो रानी के साथ थी उस के समझाने से प्रसव काल तक प्राण धारण का मनोरथ कर के मालिया प्रदेश के एक पर्वत की गुहा में कालयापन करना निश्चय किया। इसी गुहा में गुहा का जन्म हुआ और रानी ने सद्यःजात सन्तान उस ब्राह्मणी को देकर आप अग्नि प्रवेश किया। मरती समय रानी ब्राह्मणी को समझा गई थी कि इस पुत्र को ब्राह्मणोचित शिक्षा देकर क्षत्रिय कन्या से व्याह देना।

लक्ष्मणावती ब्राह्मणी उस बालक का लालन पालन करने लगी और द्वेषियों

के भय से भांडेरगढ़ और पराशर वन में क्रम से रही। गुहा में जन्म होने के कारण बालक का नाम भी गुहा (ग्रहादित्य वा केशवादित्य) रक्खा। गुहा की प्रकृति दिन दिन अति उत्कट होने लगी और बहुत से वनवासी बालकों को इन्होंने अपना अनुगामी बना लिया। इसी वृत्तान्त पर उस देश में यह कहावत अब भी प्रचलित है कि सूर्य्य की किरण को कौन छिपा सकता है।

मेवाड़ की दक्षिण सीमा पर ईदर के राज्य पर उस समय भीलों का अधिकार था और उस समय के भीलों के राजा का नाम मंडलिका था। प्रतिपालक शान्तिशील ब्राह्मणों के साथ गुहा का जी नहीं मिलता था। इस से सम स्वभाव उग्र प्रकृति वाले भीलों से अपनी उद्दंड प्रचंड प्रकृति की एकता देख कर गुहा उन्हीं लोगों के साथ वन वन घूमते थे और काल क्रम से भीलों के ऐसे स्नेहपात्र हो गए कि सबन पर्वत ईदर प्रदेश भीलों ने इनको समर्पण कर दिया। अबुलफ़ज़ल और भट्ट गण गुहा के भील राजप्राप्ति का वर्णन यों करते हैं। एक दिन खेल में भील बालक लोग एक बालक को राजा बनाना चाहते थे और सबने एक वाक्य हो कर गुहा ही को राजा बनाना स्वीकार किया। एक भील के बालक ने चट से अपनी उंगली काट के ताजे लहू से गुहा के सिर में राजतिलक लगाया। यह खेल का व्यापार पीछे कार्यतः सत्य हो गया, क्यौंकि भील राजा मंडलिका ने यह समाचार सुन कर प्रसन्न हो कर ईदर का राज्य गुहा को दे दिया। कहते हैं कि गुहा ने व्यर्थ भीलराज मंडलिका को पीछे से मार डाला। गुहा के नाम के अनुसार उन के वंश के लोग गोहिलोट (गहिलौत वा गिहलौट) कहलाए। टॉड साहब कहते हैं कि गहिलौट ग्राहिलोत का अपभ्रंश है।

गुहा (केशवादित्य) के पुत्र नागादित्य हुए। इन्हीं ने पराशर वन में नागह्रद नामक एक बड़ा ह्रद बनवाया। इन्हीं के नाम के कारण लक्ष्मणावती ब्राह्मणी के सन्तान वा वह वन और तालाब सब नागदहा के नाम से प्रसिद्ध हैं और सिसौन्धियों को भी नागदहा कहते हैं। नागादित्य के भोगादित्य। इन्होंने कुटिला नदी पर पक्का घाट बनाया और इन्द्र सरोवर नामक तालाब का जीर्णोद्धार किया। पूर्वोक्त तड़ाग इनके नाम से अब तक भोडेला कहलाता है। इन के पुत्र देवादित्य, जिन्होंने देलवाड़ा ग्राम निर्माण किया और उन के आशादित्य जिन्होंने अहाड़पुर नगर बसा कर अपनी राजधानी बनाया। यह अहाड़पुर अब राणा लोगों का समाधिस्थल है। कहते हैं कि अहाड़पुर में जो गंगोद्रव तीर्थ है वह इसी राजा का निर्माण किया है और इन्हीं की भक्ति से उस में गंगाजी का आविर्भाव हुआ था। उस प्रान्त में इस तीर्थ का बड़ा माहात्म्य है। यह तीर्थ उदयपुर से एक कोस पूर्व्व की ओर है। आशादित्य के पुत्र काल भोजादित्य और उनके पुत्र ग्रहादित्य (वा द्वितीय नागादित्य)। घासा गांव इन्हीं के नाम से प्रसिद्ध है। गुहा राजा से लेकर नागादित्य पर्यन्त छह (टॉड साहब के मत से सात) राजाओं ने इसी पर्वत भूमि का राज्य किया, पर इन में से कोई अत्यन्त प्रसिद्ध न था, किन्तु नागादित्य का पुत्र वापा बड़ा प्रसिद्ध और नामी मनुष्य हुआ, वरंच उदयपुर के राज

का इसे मूलस्तम्भ कहैं तो अयोग्य न होगा। वापा का वर्णन उदयपुर से जो लिख कर आया है उसे हम यहां पर अविकल प्रकाश करते हैं। ''ग्रहादित्य के वाष्प नामक पुत्र हुआ। कहते हैं कि वाष्प नन्दी गण के अवतार थे। यह कथा सविस्तर वायु पुराणान्तर्गत एकलिंग माहात्म्य में लिखी है। जब राजा ग्रहादित्य के एक शत्रु जंजावल नाम राजा ने घासा नगर को आन आवर्तन किया वहां राजा ग्रहादित्य बड़े पराक्रम के साथ मारे गए और घासा में जंजावल का अधिकार हो गया तब आपत्ति काल अवलोकन कर प्रमरवंशोद्भव ग्रहादित्य की राज्ञी ने अपने पुत्र वाष्प को शिशुता के भय से निज पुरोहित वशिष्ठ के गृह में गोपन कर पिहित रहना स्वीकार किया। बहुत समय व्यतीत होने के पीछे वाष्प ने वशिष्ठ की गो चारन का नियम लिया। लिखा है कि उस गो निकर में एक कामधेनु नामक धेनु थी, सो जब वाष्प गो चारन को जाते वहां उक्त गाय एक वेणु चय में प्रवेश करती। वहां एक स्फटिक का लिंग था उस पर अपने स्तनों से दुग्ध श्रवती। इस वास्ते गुरुपत्नी ने एक दिन वाष्प को उपालम्भ दिया कि इस धेनु के स्तनों में दुग्ध नहीं सो कहां जाता है। द्वितीय दिवस वाष्प ने उस गाय को दृष्टि से पिहित न होने दिया। वह सुरभी तो शिव लिंग पर पूर्वोक्त दुग्ध श्रवने लगी अरु वाष्प ने इस चरित्र को देख साक्षी बनाने को हारीत नामा ऋषि, ज्यों भृंगी गण का अवतार लिखा है वहां तपस्या करते हुए, को देख वाष्प ने निमन्त्रण कर वह चरित्र दिखाया। जब भृंगी गण ने कहा कि हे वाष्प, इस श्रीमदेकलिंगेश्वर के दर्शनार्थ तो मैं यहां ऐसा कठिन तप करता था अरु तू भी इन्हीं का सेवक नन्दीगण का अंशावतार है, तब वाष्प को भी स्वरूपज्ञान हुआ। फिर श्रीशंकर की स्तुति कर वर पाए हारीत ऋषि तो कैलास सिधारे और वाष्प ने राज्य की अपेक्षा करी। इस से उन को शंकर ने वरदान दिया कि तेरा शरीर अभिन्न और महत्तर होगा और तुझे इस भर्तृहरि के पर्वत में खनन करने से बहुत द्रव्य मिलेगा, जिस से सेना एकत्र कर अरु चित्तौड़ का राज्य अपने अधिकार में कीजियो और आज से तुम्हारे नाम पर रावल पद प्रख्यात रहैगा। यह लिंग प्रादुर्भाव विक्रमार्क गताब्द 290 वैशाख कृष्ण 1 को हुआ था, सो उक्त महीने की इसी तिथि को अब भी प्रादुर्भावोत्सव प्रति वर्ष होता है। फिर रावल वाष्प ने इष्टाला ले द्रव्य निष्कासन कर महत्तर सेना बनाए चित्तौड़ के राजा मानमोरी को जय किया और उसी दुर्ग को अपनी राजधानी बनाया। इस महिपाल ने समस्त भारतवर्ष को विजय किया।''

वापा के विषय में ऐसे ही अनेक आश्चर्य्य उपाख्यान मिलते हैं। पृथ्वी पर जितने बड़े बड़े राजवंश हैं उन में ऐसे कोई भी न होंगे जो कवि जनों की विचित्र कल्पना से अलंकृत न हों, क्योंकि उस समय में उनके विषय में विविध दैवी कल्पनाओं का आरोप ही मानो उनके प्राचीनता और गुरुत्व का मूल था। रोम राज्य के स्थापनकर्त्ता रमूलस देवता के पुत्र थे और बाघिन का दूध पी कर पले थे। ग्रीस राज्य के हर्क्यूलिस और इंगलैंड राज्य के आरथर राजाओं के दैत्यों से युद्ध इत्यादि अनेक अमानुष कर्म

प्रसिद्ध हैं। जगद्विजयी सिकन्दर की दो सींग थीं। औफार के अफ़रासियाब ने ज़ब देव सदृश अनेक कर्म किए, तो हिन्दुस्तान के बड़े बड़े उदयपुर, नैपाल, सितारा, कोल्हापुर, ईजानगर, डूंगरपुर, प्रतापगढ़ और अलीराजपुर इत्यादि राजवंशों के मूलपुरुष वापा के विषय में विचित्र बाते लिखी हों तो कौन आश्चर्य की बात है। वापा सैकड़ों राजकुल के आदि पुरुष, लोकातीत, संभ्रम भाजन और चिरजीवी, फिर उन के चरित्र अलौकिक घटनाओं से क्यौं न संघटित हों।

वापा बाल्यकाल से गोचारण करते थे, यह पूर्व्व में कह आए हैं। कहते हैं कि शरत्काल में गोचारण के हेतु वन में गमन कर के वापा ने एक साथ छः सौ कुमारियों का पाणिग्रहण किया। उस देश में शरद ऋतु में बालक और बालिका गन बाहर जा कर झूला झूलते हैं। इसी रीति के अनुसार नागेन्द्रनगर के सोलंखी राजा की क्वारी कन्या अपनी अनेक सखियों के साथ झूलने को आई थी, किन्तु उन के पास डोरी नहीं थी कि वह झूला बांधें। वापा को देख कर उन सबों ने इन से डोरी मांगी। इन्होंने कहा पहिले व्याह खेल खेलो तो डोरी दें। बालिका लोगों के हिसाब सभी खेल एक से थे, इस से इन लोगों ने पहिले व्याह खेल ही खेलना आरम्भ किया। राजकुमारी और वापा की गांठजोड़ कर गीत गाकर दोनों की सब ने सात फेरी किया। कुछ दिन पीछे जब राजकुमारी का व्याह ठहरा तब एक वरपक्ष ज्योतिषी ने हाथ देख कर कहा कि इसका तो व्याह हो चुका है। कुमारी का पिता यह सुन के बहुत ही घबड़ाया और इस की खोज करने लगा। वापा के साथी गोपाल गण यह चरित्र जानते थे, परन्तु वापा ने इस के प्रगट करने की उन से शपथ ली थी। यह शपथ भी विचित्र प्रकार की थी। एक गड़हे के निकट वापा ने अपने सब संगियों को बैठाया और हाथ में एक एक छोटा पत्थर देकर कहा कि तुम लोग शपथ करो कि 'तुमारा भला बुरा कोई हाल किसी से न कहैंगे, तुम को छोड़ के न जाएंगे और जहां जो कुछ सुनैंगे सब आकर तुम से कहैंगे। यदि इस में कोई बात टालैं, तो हमारे और पुरुषों के धर्म कर्म इस ढेले की भांति धोबी के गड़हे में पड़ैं।' वापा के संगियों ने यही कह कह के ढेला गड़हे में फेंका और उसके अनुसार वापा का विवाह करना उन के संगियों ने प्रकाश न किया। किन्तु छह सौ सरला कुमारियों पर जो बात विदित है, वह कभी छिप सकती है? धीरे धीरे यह विवाह खेल की कथा राजा के कान तक पहुंची। वापा को तीन वर्ष की अवस्था से भांडीर दुर्ग[1] से लाकर ब्राह्मणों ने इसी

---

[1] वापा भांडीर दुर्ग में भीलों के हाथ से पले थे। जिस भील ने वापा को पाला वह जदुवंशी था। उस प्रदेश में भीलों की दो जाति हैं। एक उजले अर्थात् शुद्ध भील वंश के दूसरे संकर भील। यह संकर भील राजपूतों से मिल कर उत्पन्न हुए हैं और पंवार, चौहान, रघुवंशी, जदुवंशी इत्यादि राजपूतों की जाति के नाम उन की जाति के भी होते हैं। यह भांडीर दुर्ग मेवाड़ में जारोल नगर से आठ कोस दक्षिण पश्चिम है।

नागेन्द्र नगर[1] के समीप निविड़ पराशर कानन में त्रिकूट पर्वत के नीचे अपने घर में रक्खा था, इस से वापा उसी सोलंखी राजा के प्रजा थे। राजा ने यह समाचार सुन लिया, यह जान कर वापा नागेन्द्र नगर छोड़ कर पर्वतों में छिपे रहे और उसी समय से उन का सौभाग्य संचार होने लगा। किन्तु इन छः सौ कुमारियों का फिर पाणिग्रहण न हुआ और वापा ही के गले पड़ीं। इसी कारण सैकड़ों राजा ज़मींदार सरदार सिपाही क्षत्री अपने को वापा[2] की सन्तान बतलाते हैं।

नागेन्द्र नगर से चलने के समय में दो भील वापा के सहगामी हुए थे। इनमें एक उन्द्री प्रदेशवासी और इसका नाम बालव, अपर[3] अगुणापानोर नामक स्थान निवासी, इस का नाम देव। इन दोनों भीलों का नाम वापा के नाम के साथ चिरस्मरणीय हो रहा है। चित्तौर के सिंहासन पर अभिषिक्त होने के समय वालव ने स्वीय करागुंलि कर्त्तन कर के सद्यो शोणित से वापा के ललाट में राजतिलक प्रदान किया था। तदनुसार अद्यावधि पर्यन्त वापा वंशीय राजगण के सिंहासनारोहण के दिवस इन्हीं दो भीलों के सन्तान गण आकर अभिषेक विधि सम्पादन करते हैं। अगुणा प्रदेश के भील स्वीय शोणित से राजललाट में तिलकार्पण और राजकीय बाहु धारण करके सिंहासन में अधिष्ठित कराते हैं। उन्द्री प्रदेश का भील तावत् काल दंडायमान होकर राजतिलक का उपकरण[4] द्रव्य का पात्र लिए रहता है। जो प्रथा पुरुषानुक्रम से इस प्रकार से प्रतिपालित होती चली आती है, उस का मूल किस प्रकार से उत्पन्न हुआ था यह अनुसन्धान कर के ज्ञात होने से अन्तःकरण कैसा विपुल आनन्द रस से आप्लुत हो जाता है।

मेवार के राज्याभिषेक के समुदय प्राचीन नियम रक्षा करने में विपुल अर्थ का व्यय होता है इसी कारण उस का अनेक अंग परित्यक्त हो गया है। राणा जगतसिंह

---

[1] नागेन्द्र नगर का नाम नागदहा प्रसिद्ध है। यह उदयपुर से पांच कोस उत्तर की ओर है। यहां से टॉड साहब ने अनेक प्राचीन लिपि संग्रह किया था। इन सबों में एक पत्थर ईसवी नवम शतक का है जिस में राजाओं की उपाधि (गोहिलोट) लिखी है।

[2] वापा दुलार में लड़के को कहते हैं। एक प्राचीन ग्रन्थ में वापा का नाम शिलाधीश लिखा है, किन्तु प्रसिद्ध नाम इन का वापा ही है।

[3] टॉड साहब कहते हैं, भारतवर्ष के मध्य अगुनापनोर प्रदेश अद्यावधि प्राकृतिक स्वाधीन अवस्था में है। अगुना एक सहस्र ग्राम में विभक्त। तत्रत्थ भीलगण जातीय जनैक प्रधान के आधीन में निर्विघ्नता से बास करते हैं। इस प्रधान की उपाधि भी राणा है, पर किसी राज के साथ इन लोगों का विशेष कोई संस्रव नहीं। विग्रह उपस्थित होने से अगुना का राणा धनुःशर पांच सहस्र जन एकत्र कर सकता है। आगुनापनोर मेवार राजा के दक्षिण पश्चिम प्रान्त में अवस्थित है।

[4] राजटीका का प्रधान और प्राचीन उपकरण जल संयुक्त तन्दुधल चूर्ण राजस्थान की चलित भाषा में उस राजटीका का नाम 'खुशकी' काल क्रम से सुगन्धि मिला हुआ चूर्ण तदुपकरण मध्य परिगणित हो गया है।

के पश्चात और किसी का अभिषेक पूर्ववत् समारोह के साथ सम्पन्न नहीं हुआ। उन के अभिषेक में नब्बे लक्ष रुपया व्यय हुआ था। मेवार के अति समृद्ध समय में समग्र भारतवर्ष की आय 90 लक्ष रुपया थी।

नागेन्द्र नगर से वापा के जाने का कारण पहिले वर्णित हुआ है, वह सम्पूर्ण संगत है, परन्तु भट्ट कविगण के ग्रन्थ में उन के प्रस्थान का अन्य प्रकार का विवरण दृष्ट होता है। उन लोगों ने कविजन सुलभ कल्पना प्रभाव से दैव घटना का आरोप कर के उस की विलक्षण शोभा सम्पादन किया है। काल्पनिक विवरण से अलंकृत न हो ऐसा सम्भ्रान्त वंश भारतवर्ष में अतीव दुर्लभ है, सुतरां हम भी भट्टगण वर्णित वापा के सौभाग्यसंचार का विवरण निम्न में प्रकटित करते हैं–

पहले कह आए हैं कि वापा ब्राह्मणगण का गोचारण करते थे।[1] उन की पालित एक गऊ के स्तन में ब्राह्मणगण ने उपर्य्युपरि कियद्दिवस तक दुग्ध नहीं पाया, इस से सन्देह किया कि वापा इस गऊ को दोहन कर के दुग्धपान कर लेते हैं। वापा इस अपवाद से अति क्रुद्ध हुए, किन्तु गऊ के स्तन में स्वरूपतः दुग्ध न देख कर ब्राह्मणगण के सन्देह को अमूलक न कह सके। पश्चात स्वयं अनुसन्धान कर के देखा कि यह गऊ प्रत्यह एक पर्व्वत गुहा में जाया करती थी और वहां से प्रत्यागमन करने से उस के स्तन पयःशून्य हो जाते हैं। वापा ने गऊ का अनुसरण कर के एक दिन गुहा में प्रवेश किया और देखा कि उस वेतसवन में एक योगी ध्यानावस्था में उपविष्ट है। उन के सम्मुख में एक शिवलिंग है और उसी शिवलिंग के मस्तक पर पयस्विनी का धवल पयोधर प्रचुर परिमाण से परिवर्षित होता है।

पूर्व्वकाल के योगी ऋषिगण· भिन्न यह प्राकृतिक और पवित्र देवस्थली इति पूर्व्व में और किसी को दृष्टिगोचर नहीं हुई थी। वापा ने जिन योगी का ध्यान अवस्था में दर्शन किया था उन का नाम हारीत।[2] जन समागम से जोगी का ध्यान भंग हुआ, वापा का परिचय जिज्ञासा करने से वापा ने आत्म वृत्तान्त जहां तक अवगत थे सब निवेदन किया। योगी के आशीर्वाद ग्रहणान्तर उस दिन गृह में प्रत्यागत भए। अतः पर वापा प्रत्यह एक बार योगी के निकट गमन कर के उन का पादप्रक्षालन, पानार्थ पयःप्रदान और शिवप्रीति काम होकर धतूरा, अर्क प्रभृति शिव प्रिय वन पुष्प समूह चयन किया करते। सेवा से तुष्ट होकर योगीवर ने उन को क्रम क्रम से नीति शास्त्र में शिक्षित और शैव मन्त्र से दीक्षित किया और स्वकर से उनके कंठ में पवित्र यज्ञसूत्र समर्पण पूर्व्वक 'एकलिंग को देवान' यह उपाधि प्रदान किया।

---

1. सूर्य्यवंशियों में ब्राह्मण की गोचारण करना प्राचीन प्रथा है। रघुवंश में दिलीप का इतिहास देखो।
2. हारीत के वंशीय ब्राह्मण लोग अद्यावधि एकलिंग के पूजक पद में प्रतिष्ठित है। टॉड साहब के समकालीन पुरोहित हारीत से षष्टाधिक षष्ठितम पुरुष थे उनके निकट में राणा के मध्यवर्त्तिता से शिवपुराण प्राप्त होकर टॉड साहब ने इंगलैंड के रॉयल एशियाटिक सोसाइटी (Royal Asiatie Society) समाज को प्रदान किया था।

तत्पश्चात वापा का यह क्रम था कि नित्यप्रति योगी का दर्शन करना और तत्कथित मन्त्र का अनुष्ठान करना। काल पा कर भगवती पार्वती ने मन्त्र प्रभाव से वापा को दर्शन दिया और राज्यादिक के वर प्रदान पूर्वक दिव्य शस्त्र से वापा को सुसज्जित किया।

कियत् कालानन्तर ध्यान से योगी ने अपने परमधाम जाने का समय निकट जान कर वापा को तद्वृत्तान्त विदित कर बोले "कल तुम अति प्रत्यूष में उपस्थित होना?" वापा निद्रा के वशीभूत हो कर आदेशानुरूप प्रत्यूष में उपस्थित हो नहीं सके और बिलम्ब कर के जब वहां गए तो देखा कि हारीत ने आकाश पथ के कियद दूर तक आरोहण किया है। उन का विद्युत निभ विमान उज्ज्वलांग अप्सरागण वहन करती हैं। हारीत ने विमान गति स्थगित कर के वापा को निकटथ होने का आदेश किया। उस विमान तक पहुंचने के उद्यम से वापा का कलेवर तत्क्षणात् 20 हाथ दीर्घ हो गया। किन्तु तथापि उन को गुरुदेव का रथ प्राप्त नहीं हुआ। तब योगी ने उन को मुख व्यादान करने को कहा। तदनुसार वापा ने वदन व्यादित किया। कथित है योगीश्वर ने उन के मुख विवर में उगाल परित्याग किया था।[1] वापा ने उस से घृणा कर के इस निष्ठीवन का पदतल में निक्षेप किया और इसी अपराध से उन को अमरत्वलाभ नहीं हुआ। केवल उन का शरीर अस्त्र शस्त्र से अभेद्य हो गया। हारीत अदृश्य हुए। वापा ने इस प्रकार सदेवानुगृहीत होकर और अपने को चित्तौर के मौरी राजवंश का दौहित्र जान कर और आलस्य में कालक्षेप करना युक्तिसंगत अनुमान नहीं किया। अब गोचारण से उन को अत्यन्त घृणा हुई और उन्होंने कतिपय सहचर समभिव्यवहार में लेकर अरण्यवास परित्याग करके लोकालय में गमन किया। मार्ग में[2] नाहर मगरा नामक पर्वत में विख्यात 'गोरखनाथ' ऋषि के साथ उन का साक्षात् हुआ था। गोरक्ष ने उनको और द्विधार तीक्ष्ण करवाल[3] प्रदान किया था। मन्त्रपूत कर के चलाने से उस तीक्ष्ण कृपाण के आघात से पर्वत भी विदीर्ण हो जाता था। वापा ने उसी के प्रताप से चित्तौर का सिंहासन प्राप्त किया था। भट्ट कविगण के ग्रन्थ में वापा के नागेन्द्र नगर से प्रस्थान का यह विवरण प्राप्त होता है और इस विवरण में मेवार निवासी लोगों का प्रगाढ़ विश्वास भी है।

मालव के भूतपूर्व अधिपति प्रमारवंशीय तत्काल में भारतवर्ष के सार्वभौम थे। इस वंश की एक शाखा का नाम मोरी। मोरी वंशियों का इस समय में चित्तौर पर

---

[1] कथित है मुसल्मानधर्मप्रचारक मुहम्मद ने स्वीय प्रिय दौहित्र हसन के बदन में ऐसा ही निष्ठीवन परित्याग किया था। क्या आश्चर्य है जो मुसल्मान लोगों ने यह कथा भारतवर्ष के इसी उपाख्यान से ली है।

[2] मेवार के राजधानी उदयपुर के पूर्व भाग में प्रवेश करने को रास्ते में कोस के अन्दर नाहर मगरा पर्वत अवस्थित है। इस पर्वत में राजा और तत्पारिषदवर्ग मृगया काल में उपवेशन करते थे। उन लोगों के बैठने के स्थान सब अद्यापि असंस्कृत और जीर्ण अवस्था में पतित हैं।

[3] कथित है वह करवाल अद्यावधि विद्यमान है राणा प्रति वत्सर में निरूपित दिवस में उस की पूजा करते हैं।

अधिकार था, किन्तु चित्तौर तत्काल प्रधान राजपाट था या नहीं यह निश्चित नहीं। विविध अट्टालिका और दुर्ग प्रभृति में इस वंश के राजत्व काल की खोदित लिपि विद्यमान हैं, उस से ज्ञात होता है कि मौरी राजगण उस समय में विलक्षण पराक्रमशाली थे।

वापा जब चित्तौर में उपस्थित हुए तत्काल में मोरीवंशीय मान राजा सिंहासनारूढ़ थे। चित्तौर के राजवंश के साथ उन का सम्बन्ध था।[1] सुतरां विशेष समादर से राजा ने उन को सामन्त पद में अभिषिक्त कर के तदुचित भूमिवृत्ति प्रदान किया। चित्तौर के सरदार गण सैनिक नियम भोग करते थे।[2] वे लोग सम्मानभाव से इति पूर्व में मान राजा के ऊपर विरक्त हो रहे थे। एक आगंतुक वापा के ऊपर उन के समधिक अनुराग संदर्शन से वे लोग और भी सातिशय ईर्षान्वित हुए। इसी समय में चित्तौर राज विदेशीय शत्रु कर्तृक आक्रान्त होने से सर्दार लोग युद्धार्थ आहूत हुए, परन्तु उन लोगों ने युद्धोद्योग नहीं किया। अधिकन्तु सैनिक नियमानुसार भुक्त भूमि का पट्टा प्रभृति दूर निक्षेप करके साहंकार वाक्य बोले कि राजा अपने प्रियतर सर्दार को युद्धार्थ नियोग करैं।

वापा ने यह सुन कर उपस्थित युद्ध का भार ग्रहण कर के चित्तौर से यात्रा किया। सरदार गण यद्यपि भूमि वृत्ति वंचित हुए थे तथापि लज्जावशतः वापा के अनुगामी हुए। समर में विपक्ष गण ने पराजित हो कर पलायन किया। वापा ने सरदार गण के साथ चित्तौर में प्रत्यागत न हो कर स्वीय पैत्रिक राजधानी गाजनी नगर में गमन किया। सलीम नामक जनैक असभ्य उस काल में गाजनी के सिंहासन पर था। वापा ने सलीम को दूरीभूत कर के वहां का सिंहासन जनैक चौर वंशीय राजपूत को दिया और आप पूर्वोक्त असन्तुष्ट सर्दार गण के साथ चित्तौर प्रत्यागमन किया। कथित है कि वापा ने इस समय सलीम की कन्या का पाणिग्रहण किया था। जातरोष सर्दार गण ने चित्तौर राजा के साथ वैरनिर्यातन में कृतसंकल्प होकर सब ने एक वाक्य हो कर नगर परित्याग कर के अन्यत्र गमन किया। राजा ने उन लोगों के साथ सन्धि करने के मानस से बारम्बार दूत प्रेरण किया, किन्तु किसी प्रकार सरदार गण का कोप शान्त नहीं हुआ। उन लोगों ने कहा, "हम लोगों ने राजा का नमक खाया

---

[1] वापा की माता प्रमारवंशीया थी। सुतराम वर्त्तमान प्रमार के सहित मामा भागिनेय का सम्बन्ध था।

[2] सैनिक नियम (Feudal System) इस नियमानुसार से भुक्त भूमि के कर के परिवर्त्तन में प्रत्येक सरदार को अपने अपने वृत्ति भूमि के परिमाणानुरूप नियमित संख्या की सेना ले कर विग्रह समय में विपक्ष के साथ संग्राम करना होता है। प्राचीनकाल में वृहत् वृहत् राज्य भूमि संक्रान्त यह नियम प्रचलित था। राजा और सरदारगण के मध्य और सरदार और तदधीन साधारण प्रजावर्ग के मध्य पूर्वोक्त मूल नियम के आनुषंगिक अन्यान्य नियम समुदय पृथक् पृथक् रूप से व्यवसित करते थे। राजस्थान के सैनिक नियम का विवरण इतः पर पृथक् एक खंड में सविस्तार से प्रगटित होगा।

है, इस से एक वत्सर काल मात्र प्रतीक्षा करैंगे। अनन्तर उन को व्यवहार के विहित प्रतिशोध देने में त्रुटि न करैंगे।'' वापा के वीरत्व और उदार प्रकृति के वंशवद होकर सर्दार गण ने उन को चित्तौर का अधिपति करने का अभिप्राय प्रकाश किया। वापा ने सर्दार गण के सहायता से चित्तौर नगर पर आक्रमण कर के अधिकार कर लिया। भट्ट कविगण ने लिखा है ''वापा मोर राजा के निकट से चित्तौर लेकर स्वयं उस के 'मौर' (अर्थात् मुकुट स्वरूप) हुए।'' चित्तौरप्राप्ति के पश्चात् सर्वसम्मति से वापा ने 'हिन्दूसूर्य' 'राजगुरु' और 'चक्कवै' यह तीन उपाधि धारण किया था। शेषोक्त उपाधि का अर्थ सार्वभौम।

वापा के अनेक पुत्र हुए थे। उन में किसी किसी ने स्वीय वंश के प्राचीन स्थान सौराष्ट्र राज्य में गमन किया। आईने अकबरी ग्रन्थ में लिखा है कि अकबर सम्राट के समय में इस वंश के पचास सहस्र पराक्रान्त सरदार सौराष्ट्र देश में वास करते थे। वापा के अपर पांच पुत्र ने मारवाड़ देश में गमन किया था। गोहिल वाल नामक स्थान में गोहिल वंशीय भी वापा की सन्तान हैं। परन्तु वे लोग अपने वंश का मूल विवरण आप भूल गए हैं। इति पूर्व्व में उन लोगों ने क्षीर[1] प्रदेश में आकर वास किया था और अब पूर्व्व काल के पूर्व्व पुरुषगण के नाम वा वंश का अन्य कोई विवरण वह लोग नहीं बतला सकते। घटनाक्रम से उन लोगों ने बालभी ग्राम में वास भी किया, किन्तु यह नहीं जाना कि यही स्थान उन लोगों की पैत्रिक भूमि है। यह लोग अब अरब गण के सहवास से वाणिज्य कर के जीविका निर्वाह करते हैं।

वापा के चरम काल का विवरण सर्वापेक्षा आश्चर्य है। कथित है परिणत वसय में उन्होंने स्वीय राजसन्तान गण को परित्याग कर के खुरासान राज्य में गमन किया था और तद्देश अधिकार कर के म्लेच्छ वंशीय अनेक रमणी का पाणिग्रहण किया था। इन सब रमणी के गर्भ से बहुसंख्यक सन्तान समुत्पन्न हुए थे।

सुना जाता है कि एक शत वर्ष की अवस्था में वापा ने शरीर त्याग किया। देलवारा प्रदेश के सर्दार के निकट एक ग्रन्थ है, उस में लिखा है कि वापा ने इस्पहान, कन्दहार, कश्मीर, इराक, तूरान और काफरिस्तान प्रभृति देश अधिकार कर के तत् समुदय देशीया कामिनियों का पाणिपीड़न किया था। उन म्लेच्छ महिला के गर्भ से उन को 130 पुत्र जन्मे थे। उन लोगों की साधारण उपाधि 'नौशीरा पठान है'। उन सब पुत्रों में से प्रत्येक ने अपने अपने मातृनामानुयायी नाम से एक एक वंश विस्तार किया है। वापा के हिन्दू सन्तान की संख्या भी अल्प नहीं। हिन्दू महिला गण के गर्भ में उन्होंने 98 पुत्र उत्पादन किया था। उन लोगों की उपाधि 'अग्नि उपासी सूर्य्यवंशी' है। उक्त ग्रन्थ में लिखा है, वापा ने चरम काल में सन्यास आश्रम अवलम्ब कर के सुमेरु शिखर[1] मूल में अवस्थिति किया था। उन का प्राण त्याग नहीं हुआ है,

---

[1] मारवाड़ प्रदेश के दक्षिण पश्चिम प्रान्त में लूणी नदी के निकट क्षीर भूमि है।

जीवदशा में ही इस स्थान में उन का समाधि क्रिया सम्पन्न हुई थी। अन्यान्य प्रवाद में कथित है कि वापा की अन्त्येष्टि क्रिया सम्बन्ध में उन के हिन्दू और म्लेच्छ प्रजागण के मध्य तुमुल कलह उपस्थित हुआ है। हिन्दू लोग उन का शरीर अग्निदग्ध और म्लेच्छ लोग मिट्टी में प्रोत्थित करने को कहते थे। उभय दल ने इस विषय का विवाद करते करते शव का आवरण खोल कर देखा शव नहीं है तत् परिवर्तन में कतिपय प्रफुल्ल शतदल विराजमान है। उन लोगों ने वह सब कमल लेकर ह्रद में रोपन कर दिया था। पारस्य देश के नौशेरवां की और काशी के प्रसिद्ध भगवद्भक्त कबीर की अन्त्येष्टि क्रिया का प्रवाद भी ठीक ऐसा ही है।

मेवाड़ के राजवंश के प्रधान पुरुष वापा का यह संक्षेपक इतिहास प्रकटित किया गया। प्राचीन कालीन अन्यान्य राजपुरुष की भांति वापा की कहानी भी सत्यमिथ्या से मिलित है। किन्तु इस विचार को छोड़ कर चित्तौर के सिंहासन में सूर्य्यवंशी राजगण ने दीर्घ कालावधि जो आधिपत्य किया था, उस आधिपत्य का वापा ही से प्रारम्भ है इस कारण गिहलोट गण का चित्तौर का राजत्व कितने दिन का है यह निरूपण करने को वापा का जन्मकाल का निरूपण करना अत्यन्त आवश्यक है। बल्लभीपुर 205 सम्वत् शिलादित्य के समय में विनष्ट हुआ था। शिलादित्य से वापा दशम पुरुष, परन्तु आश्चर्य का विषय यह है कि उदयपुर के राजभवन की वंशपत्रिका में वापा का जन्मकाल 191 सम्वत् में लिखा है। विशेषतः चित्तौर की एक खोदित लिपि से प्रकाश हुआ था कि 770 सम्वत् में चित्तौर नगर मोरी वंशीय मान राजा के अधिकार में था। इसी मान राजा के समय में असभ्य गण ने चित्तौर नगर आक्रमण किया था। उन लोगों को पराभव कर के उस के पश्चात् वापा ने पंचदश वर्ष की अवस्था में चित्तौर का सिंहासन प्राप्त किया था। इस कारण ईदृश विवरण से वापा का जन्मकाल 191 सम्वत् किसी प्रकार स्वीकृत नहीं हो सकता। परंतु उदयपुर के राजवंश के कुलाचार्य भट्ट गण पूर्वोक्त समुदय घटना स्वीकार कर के भी कहते हैं कि वापा ने 191 सम्वत् में जन्म ग्रहण किया था। टॉड साहब ने अनेक अनुसंधान कर के अवशेष में सौराष्ट्र देश में सोमनाथ के मन्दिर की एक खोदित लिपि से जाना

---

1. कोई-कोई कहते हैं हिन्दू ग्रन्थानुसार पृथ्वी के उत्तर केन्द्र का नाम सुमेरु। किसी किसी ग्रन्थ में तद्रूप अर्थ में व्यवहृत हुआ है, परन्तु पुराण के वर्णन से अनुमान होता है कि किसी विशेष पर्व्वत का नाम सुमेरु है। जम्बू द्वीप के मध्य इलावृत वर्ष में "कनकाचल सुमेरु विराजमान है, इस के दक्षिण में हिमवान, हेमकूट और निषध पर्व्वत, उत्तर नील और श्वेत पर्वत।" चन्द्रवंश का आदि पुरुष इला स्त्री रूप में जहां 'आवृत्ति' हुए थे, उस का नाम इलावृत्त वर्ष। 'सुमेरु के दक्षिण प्रथमतः भारतवर्ष'। इस से अनुमान होता है कि मध्य एशिया का नाम इलावृत्तवर्ष। अनुसंधान कर ने से सुमेरु आविष्कृत होकर पौराणिक भूगोल वृत्तान्त का अधिकांश परिष्कृत हो सकता है। केवल नाम परिवर्तन होकर इतना गबड़ा हुआ। कोई कोई कहते हैं कि पेशावर और जलालाबाद के मध्यस्थल में प्रायः चौदह सौ हस्त उच्च मारकोह नाम अति अनुर्वर जो एक पर्वत है वही हिन्दू पुराण का सुमेरु है।

था कि बल्लभी सम्वत नाम का एक और भी सम्वत प्रचलित था। वह सम्वत विक्रमादित्य के सम्वत से 375 बरस के पश्चात प्रारम्भ हुआ था, 205 बल्लभी सम्वत में बल्लभीपुर विनष्ट हुआ था, सुतरां विक्रमादित्य के संवतानुसार उस के विनाश का काल 580 हुआ। जिस प्रणाली से टॉड साहब ने चित्तौर के मान राजा का राजत्व, बल्लभीपुर का विनाश और कुलाचार्य्य गण लिखित वापा के जन्म समय का परस्पर समन्वय साधन किया है यह विलक्षण बुद्धि व्यंजक है, परन्तु जटिल और नीरस है इस कारण सविस्तार से इस स्थान में प्रगटित नहीं किया। उस की मीमांसा का स्थूलतात्पर्य यह कि बल्लभीपुर विनाश के 190 बरस पश्चात विक्रमादित्य के 769 सम्वत में वापा ने जन्म ग्रहण किया था। कुलाचार्य्य गण ने भ्रम वशतः इस 190 संख्या को विक्रमादित्य का सम्वत कर के लिखा है। तत्पश्चात् पंचदश वर्ष की अवस्था में वापा चित्तौर राज्य में अभिषिक्त हुए थे। सुतरां 784 सम्वत उन का चित्तौर प्राप्तकाल निरूपित हुआ। उस समय से सार्द्ध एकादश वत्सरावधि वापा ने वंशीय साठ राजा गण ने क्रमान्वय से चित्तौर के सिंहासन पर उपवेशन किया है।

यद्यपि भट्ट गण के ग्रन्थानुयायी वापा के जन्मकाल की प्राचीनत्व रक्षा नहीं हुई, परन्तु जो समय टॉड साहब ने निरूपित किया है वह भी नितान्त आधुनिक नहीं है। तदनुसार प्रकाश होता है कि वापा फरासी राजा के करोली भिंजिया वंशीय राज गण के और मुसलमान साम्राज्य के वलीद खलीफा के समकालवर्ती थे।

आइतपुर[1] नगर से मेवाड़वंशीय और एक खोदित लिपि संगृहीत हुई थी। वह लिपि 1024 सम्वत समय की है। तत्कालीन चित्तौर के सिंहासन में वापा के वंशीय शक्ति कुमार राजा प्रतिष्ठित थे। उस लिपि में शक्ति कुमार के चतुर्दश पुरुष के मध्य एक जन शील नाम से अभिहित हुए हैं। राजभवन की वंशावली अपेक्षा तल्लिपि में यही एक मात्र अतिरिक्त नाम लक्षित होता है, तद्भिन्न विषय में समता है। इंग्लैंड के प्रसिद्ध कवि ह्यूम ने कहा है "यद्यपि कविगण सूक्ष्म सत्य के तादृश अनुरागी नहीं, और यदि च वह इतिवृत्त का रूपान्तर कर देते हैं, तो भी उन लोगों की अत्युक्ति के मूल में सत्य की सत्वालक्षित होती है।" हमें वर्णित विषय में ह्यूम की एतदुक्ति का सारत्व प्रतीयमान होता है। जन समागम शून्य स्वापद पूर्ण आइतपुर के कानन में जो सब नाम विलुप्त हो जाते और उन सब नामों के कभी किसी के कर्णगोचर होने की सम्भावना नहीं थी, किन्तु भट्ट कविगण की वर्णना प्रभा में मेवाड़ राजवंश के प्राचीन काल के वह सब नाम चिरस्मरणीय हो रहे हैं।

इस 1024 सम्वत समय में वलीद खलीफा के सेनापति मुहम्मद बिन कासिम ने भारतवर्ष में आकर सिन्धु देश जय किया था। इस के पहिले मोरी वंशीय मानराजा

---

[1] आइतपुर–सूर्य्यपुर। आदित्य शब्द का अपभ्रंश आइत। आइत शब्द का संकीर्ण रूप एत, यथा एतवार आदित्यवार।

के समय जिस असभ्य राजा ने चित्तौर नगर पर आक्रमण किया था और वापा कर्तृक जो पराजित हुआ था, वह अनुमान होता है कि यही बिन कासिम है।

वापा और शक्ति कुमार के मध्यवर्त्ती नौ राजा ने चित्तौर में राजत्व किया था। उस समय से दो शत वर्ष के मध्य में नौ जन राजा का राजत्व असम्भव नहीं। तदनुसार मेवाड़ के इतिवृत्त का निम्नोक्त चार प्रधान काल निरूपित हुआ। प्रथम, कनकसेन का काल 144। द्वितीय, शिलादित्य और बल्लभीपुर विनाश का काल 524। तृतीय, वापा के चित्तौर प्राप्ति का काल खृष्टाब्द 728। चतुर्थ, शक्तिकुमार का राजत्व काल खृष्टाब्द 1068।

तृतीय अध्याय

वापा और समरसिंह के मध्यवर्त्ती राजगण, वापा का वंश, अरब जाति के भारतवर्ष आक्रमण का विवरण, मुसलमान गण से जिन सब राजाओं ने चित्तौर नगर रक्षा किया था उन लोगों की तालिका।

784 सम्वत में वापा को चित्तौर सिंहासन प्राप्त हुआ था। मेवाड़ के इतिवृत्त में तत्परवर्ती प्रधान समय समरसिंह का राजत्व काल सम्वत 1249। अतएव वापा के ईरान राज्यगमन के समय 820 सम्वत से समर सिंह के समय पर्यन्त भट्टगण के ग्रन्थानुसार मेवाड़ राज्य का वृत्तान्त सम्प्रति प्रकटित होता है। समर सिंह का राजत्व काल केवल मेवाड़ के इतिवृत्ति का प्रधान काल नहीं, स्वरूपतः समुदय हिन्दू जाति के पक्ष में एक प्रधान समय है। उन के राजत्व समय में भारतवर्ष का राज किरीट हिन्दू के सिर से अपनीत हो कर तातारी मुसलमान के सिर में आरोपित हुआ था। वापा के समर सिंह के मध्य चार शताब्दी काल का व्यवधान है। इस काल के मध्य में चित्तौर के सिंहासन पर अष्टादश राजाओं ने उपवेशन किया था। यदि च उन लोगों के राजत्व का विशेष विवरण प्राप्त नहीं होता, तो भी नितान्त नीरव में तत्तावत् काल उल्लंघन करना उचित नहीं। उन सब राजा की लोहितवर्ण पताका सुवर्णमयी प्रतिमा से शोभमान चित्तौर के सौध शिखर पर उड्डीयमान थी और तन्मध्य में अनेक का नाम उन लोगों के राज्यस्थ शैल शरीर में लोह लेखनी की लिपि योग से अद्यावधि विद्यमान है।

इस के पहिले आइतपुर की जिस खोदित लिपि का उल्लेख किया है, उस से वापा और समरसिंह के मध्यवर्ती शक्तिकुमार राजा का राजत्व काल सम्वत 1024 निरूपित हुआ। जैन ग्रन्थ से ज्ञात होता है कि शक्तिकुमार के चार पुरुष पूर्ववर्ती उल्लत नाम राजा 922 सम्वत में चित्तौर के सिंहासनारूढ़ हुए थे। 764 खृष्टाब्द में वापा ने ईरान देश में गमन किया। 1193 खृष्टाब्द में समरसिंह के समय में हिन्दू राजत्व का अवसान हुआ। इस उभय घटना के मध्यवर्ती समय में मेवाड़ राज्य और एकबार मुसलमान गण से आक्रान्त होने का विवरण राजवंश के ग्रन्थ में प्राप्त होता

है। तत्काल खुमान नामक एक राजा चित्तौर के सिंहासनस्थ थे। उन के राजत्व काल में 812 से 836 खृष्टाब्द के अन्तर्गत किसी समय में मुसलमानों ने चित्तौर नगर पर आक्रमण किया था। खुमान रासा नामक ग्रन्थ में तत् आक्रमण संक्रान्त वृत्तान्त सविस्तार निवृत्त हुआ। मेवाड़ राज्य के पद्य विरचित इतिहास ग्रन्थ समूह के मध्य खुमान रासा सर्वापेक्षा पुरातन है।

टॉड साहब कहते हैं भारतवर्ष का एतत् समय का इहिवृत्त नितान्त तमसाच्छन्न है। इस कारण खुमान रासा प्रभृति हिन्दू ग्रन्थ से तत् सम्बन्ध में जो कुछ आलोक लाभ हो सकता है वह परित्याग करना उचित नहीं। भारतवर्ष में एतत् काल में जो सब ऐतिहासिक विवरण सत्य कह कर प्रसिद्ध हैं सो हिन्दू ग्रन्थ में लिखित विवरण अपेक्षा अधिक असंगत वा परिच्छन्न नहीं। जो हो, तदुभय एकत्रित रहने से भावि कालीन इतिवृत्त प्रणेता उस में से अनेक उपकरण लाभ कर सकैंगे। इस कारण (मुसलमान साम्राज्य के आरम्भ से गजनगर राज्य संस्थापन पर्यन्त) भारतवर्ष में अरब जाति के समागम का संक्षिप्त विवरण इस अध्याय में सन्निविष्टि किया जाएगा। परन्तु अरब समागम का सविस्तार विवरण-विशिष्ट कोई ग्रन्थ नहीं मिलता, यह बड़े सोच की बात है। अलमकीन नामक ग्रन्थकार ने खलीफा गण के इतिवृत्त में भारतवर्ष का प्रायः उल्लेख नहीं किया है। अबुलफजल के ग्रन्थ में अनेक विषय का सविशेष विवरण प्राप्त होता है और वह ग्रन्थ भी विश्वास के योग्य है। फरिश्ता ग्रन्थ में इस विषय का एक पृथक् अध्याय है, परन्तु उस का अनुवाद यथोचित मत से निष्पन्न नहीं हुआ है[1]। अब पहिले वापा के वंशीय राजगण का वृत्तान्त विवरित किया जाता है, पश्चात् यथायोग्य स्थान में मुसलमान गण का भारतवर्ष संक्रान्त इतिवृत्त प्रकटित होगा।

गिहलोट वंश की चतुर्विंशति शाखा। तन्मध्य अनेक शाखा वापा से समुत्पन्न। चित्तौर अधिकार के पश्चात् वापा ने सौराष्ट्र देश में गमन कर बन्दर दीप के

---

1. टॉड साहब ने फ़िरिश्ता के अनुवाद में जो सब विषय परित्याग किया है तन्मध्य में अफगान जाति की उत्पत्ति का विवरण अतीव प्रयोजनीय है। मुसलमान गण के साथ हिजरी 62 अब्द में जिस काल में अफ़गान जाति का प्रथम आगमन हुआ तब वे लोग सुलेमान पर्वत के निकटस्थ प्रदेश में वास करते थे। फ़िरिश्ता ने जिस ग्रन्थ के ऊपर निर्भर कर के अफ़गान का विवरण लिखा है वह यह है "अफ़गान लोग कायर जाति के लोग फिर उस उपाधिकारी राजगण के अधीन वास करते थे। उन लोगों में बहुतों ने मूसा की प्रतिष्ठित नूतन धर्म व्यवस्था अवलम्बन किया था। जिन लोगों ने पूर्व की पौत्तलिकता त्याग नहीं किया वे लोग हिन्दुस्तान से भाग कर कोह सुलेमान के निकटवर्ती देश में वास करते थे। सिन्धु देश से आगत बिन कासिम के साथ उन लोगों का समागम हुआ था। हिजरी 143 अब्द में उन लोगों ने किरमान और पेशावर प्रदेश और तत् सीमावर्ती समुदयस्थान अधिकार किया था।" कोहिस्थान का भूगोल वृत्तान्त, रोहिला शब्द की व्युत्पत्ति और अन्यान्य प्रयोजनीय विषय टॉड साहब ने स्वीय अनुवाद में परित्याग किया है।

यूसुफगुल[1] नाम राजा की कन्या से विवाह किया। बन्दर द्वीप निवासी व्यानमाता नामक एक देवी की उपासना करते थे। वापा ने इस देवी की प्रतिमा और स्वीय बनिता सह चित्तौर में प्रत्यागमन किया था। गिहलोट वंशीय अद्यावधि व्यानमाता की उपासना करते हैं। वापा ने इस देवी को जिस मन्दिर में प्रतिष्ठित किया था, वह आज तक चित्तौर में विद्यमान है, तद्भिन्न तत्रत्य अन्यान्य अनेक अट्टालिका वापा कर्तृक विनिर्मित हैं, यह भी प्रवाद प्रचलित है। यूसुफगुल के कन्या के गर्भ में वापा का एक पुत्र जन्मा था, उस का नाम अपराजित। द्वारका नगरी के निकटवर्ती कालवायो नगर के प्रमार वंशीव जनैक राजा की कन्या से भी वापा ने विवाह किया था। उस रमणी के गर्भ में इस के पहिले वापा को और एक आसिल नामक पुत्र जन्मा था, यदि च आसिल ज्येष्ठ तथापि अपराजित चित्तौर में जन्मे थे, इस कारण उन्होंने वहां का राज प्राप्त किया। आसिल सौराष्ट्र देश के किसी एक राज्य में राजा हुए थे[2]। उन की सन्तान परम्परा से वहां विपुल वंश विस्तार हुआ था। इस वंश की उपाधि आसिला गिहलोट है।

[रचनाकाल सन 1877 ई.]

---

1. कथित है, समुद्र में बन्दर द्वीप और स्थल में चायाल नामक स्थान यूसुफगुल राजा के अधिकार में था। यूसुफगुल और वंशीय राजपूत, अनल परम का संस्थापनकर्त्ता रेणु राज अनुमान देता है। इसी यूसुफगुल का वृत्तान्त कुमार पालचरित नामक ग्रन्थ में लिखा है। रेणुराज के पूर्व्व पुरुष बन्दर द्वीप के अधिपति थे। बन्दर द्वीप आजकल पोर्त्तुगीस जाति के अधिकार में है। इस का आधुनिक नाम डिग्री है। यह नाम पोर्त्तुगीस जाति प्रदत्त है।
2. आसिला के नामानुसार एक किला का आसिला नाम रक्खा था, वह वंशपत्रिका से ज्ञात होता है। संग्राम देव नामक जनैक राजा के निकट से कुंबायत (कांबे) नगर अधिकार करने के अभिलाषा में आसिल के पुत्र विजयपाल समर में निहत हुए थे। विजय की इसी आकस्मिक मृत्यु घटना के पहिले तदगर्भस्थ पुत्र अकाल में भूमिष्ठ हुआ था, उस पुत्र का नाम सेतु। टॉड साहब कहते हैं अस्वाभाविक मृत्यु प्राप्त व्यक्तिगण भूतयोनि प्राप्त होते हैं। हिन्दूगण का यह संस्कार है और स्त्री भूत का हिन्दुस्तानी नाम चुरइल, सेतु की माता के अस्वाभाविक मृत्यु वशतः सेतु का वंश कचोराइल नाम से प्रसिद्ध हुआ। आसिल से द्वादशतम अधस्तन पुरुष बीजा गिरनार के राजा शृंगार देव के भांजें. ये और मातुल के निकट से इन्होंने सालन स्थान प्राप्त किया था। सुराट का राजा जयसिंह देव के साथ समर में बीजा निहत हुए थे। फ़िरिश्ता ग्रन्थ में जो देवी सालिमा वंश का उल्लेख है, अनुमान होता रहा है देवी और चोरइल, इन दो नाम के समता से तन्नाम की उत्पत्ति हुई है।

बूंदी का राजबंश

दोहा

चार वेद प्रिय चार पद चारहु जुग परमान।
जयति चतुर्भुज जासु जग बिदित बंश चौहान॥
बूंदी राज प्रसिद्ध अति राजपुताना देस।
जहं के भारत में प्रगट हाड़ा नाम नरेस॥
यह तिनकी बंशावली क्षत्रिन हित सानन्द।
लिखी अतिहि संक्षेप में ग्रन्थन सों हरिचन्द॥

बूंदी का राजबंश

बूंदी का राजवंश चौहान क्षत्रियों से है। इस वंश का मूल पुरुष अन्हल चौहान प्रसिद्ध है। भट्ट लोगों के मत से चौहान का शुद्ध नाम चतुर्भुज है। अन्हल अनल शब्द का अपभ्रंश है, क्योंकि अनल अग्नि को कहते हैं और आबू के पहाड़ पर जो चार क्षत्री वंश उत्पन्न किए गए वे अग्नि से उत्पन्न किए गए थे। जेम्स प्रिंसिप साहब को सन्देह है कि पार्थिअन[1] (पार्थिव?) Parthian Dynesty से यह वंश निकला है। उन्हीं के मत के अनुसार ईसामसीह से 700 वर्ष पूर्व्व अनल ने गढ़मंडला में राज स्थापन किया। अनल के पीछे सुवाच और फिर मल्लन हुआ (जिस ने मल्लनी वंश चलाया?) फिर गलन सूर हुआ। यहां तक कि ईसवी सन 145 में (विराट का सं. 202) अजयपाल ने अजमेर बसा कर राज किया। इस के पूर्व्व 800 बरस और पीछे 500 बरस ठीक ठीक नामावली नहीं मिलती। विल्फर्ड साहब के मत के अनुसार सन 500 ई. के अन्त तक सामन्तदेव, महादेव, अजयसिंह (अजयपाल?), वीरसिंह, बिन्दुसूर और वैरिबिहंड इन राजाओं के नाम क्रम से मिलते हैं। यदि अजयपाल से मिला कर यह क्रम माना जाए तो वैरिबिहंड तक एक प्रकार का क्रम मिलैगा, किन्तु दोलाराय (दुर्ल्लभराय?) जिस से सन 684 ईसवी में मुसलमानों ने अजमेर छीना उस के पूर्व्व दो सौ बरस के लगभग कौन राजे हुए इस का पता नहीं। दोलाराय के पीछे माणिक्य राय (सन 695 ई.) हुआ, जिस ने सांभर का शहर बसाया और सांभरी गीत स्थापन किया। फिर महा सिंह, चन्द्रगुप्त (?), प्रताप सिंह, मोहन सिंह, सेतराय, नागहस्त, लोहधार, वीर सिंह (?), बिबुध सिंह और चन्द्रराय के नाम क्रम से मिलते हैं। Bombay Government Selection Vol. III. P. 193 टॉड साहब लिखते हैं कि भट्ट लोगों ने दूसरे ग्यारह नाम यहां पर लिखे हैं परन्तु प्रिंसिप साहब के क्रम से दोलाराय के पीछे हरिहर राय (टॉड साहब के मत से हर्षराय) सन 775 ई. में हुआ और इस ने सुबुकतर्गी को लड़ाई में हराया, फिर बली अगराय (बेलनदेव Tod) हुआ जो सुल्तान महमूद के अजमेर के युद्ध में मारा गया। उस के पीछे प्रथमराय और उसका अंगराज

---

[1] और पठान शब्द भी इसी से निकला हुआ मालूम होता है, क्योंकि जो हिन्दुस्तान के पास के क्षत्रियधर्म्मा मुसलमान हैं वे ही पठान कहलाते हैं।

(अमिल्लदेव) हुआ। अमिल्लदेव के बाद विशालदेव राजा हुआ। (विल्फर्ड 1016 ई., लिपि 1031 से 1095 ई. तक टॉड साहब के मत में चन्द के राय से अनुसार सम्वत् 921 में और फीरोज की एक लिपि से (1220 सम्वत्) फिर सिरंगदेव (सारंगदेव वा श्रीरंगदेव), अन्हदेव (जिस ने अजमेर में अन्ह सागर खुदवाया), हिसपाल (हंसपाल), जयसिंह तारीख फिरिश्ता का जयपाल (जो प्रिंसिप साहब के मत से सन 977 ईसवी में हुआ), आनन्ददेव (आनन्दपाल वा अजयदेव सन 1000 ई. सोमेश्वर (जिस ने दिल्ली के राजा अनंगपाल की बेटी से ब्याह किया), पृथीराय (लाहौर का जिसे शहाबुद्दीन ने कत्ल किया 1176), रायनसी (रायनृसिंह जो 1192 में दिल्ली के युद्ध में मारा गया), विजयराज और उस के पीछे लकुनसी (लक्ष्मण सिंह) हुआ, जिस की सत्ताईसवीं पीढ़ी में वर्तमान समय के नीमरान को राजा हैं।

अब टॉड साहब का मत है कि हाड़ालोगों का वंश माणिक्य देव की शाखा में वा विशाल देव के पुत्र अनुराज से यह वंश चला है। प्रिंसिप साहब अनुराज ही से हाड़ा लोगों की वंशावली लिखते हैं। किन्तु बूंदी के भट्ट संगृहीत ग्रन्थों में और तरह से इस वंश की उत्पत्ति लिखी है। ये लिखते हैं[1] "वशिष्ठजी ने आबू पहाड़ पर यज्ञ किया। उस से चार उत्तम पुरुष उत्पन्न हुए, उन में से चतुर्भुज जी (चौहान वा चहुमान) से 156 पीढ़ी में भोमचन्द्र राजा हुआ। उस का पुत्र भानुराज राक्षसों (यवनों) की लड़ाई में मारा गया। तब आशापुरा देवी ने कृपा कर के भानुराज की अस्थि एकत्र करके जिला दिया और तब से भानुराज का नाम अस्थिपाल हुआ। अस्थिपाल के पीछे क्रम से पृथ्वीपाल, सेनपाल, शत्रुशल्य, दामोदर, नृसिंह, हरिवंश, सदाशिव, रामदास, रामचन्द्र, भागचन्द्र, रूपचन्द्र, मंडनजी (जिस ने दक्षिण में मांदलगढ़ बसाया), आत्माराम, आनन्दराम, राव हमीर, राव सुमेर, राव सरदार, राव जोधराज, राव रत्नजी, राव कील्हणजी, राव आशुपाल, राव विजयपाल और राव बंगदेवजी हुए।" राव बंगदेव से

---

1. अग्नि कुल की उत्पत्ति पुराणों में इस तरह लिखी है। जब परशुरामजी के मारे क्षत्रिय कुल का नाश हो गया तब उन्हीं ने पृथ्वी की रक्षा के हेतु चिन्ता कर के आबू पर्व्वत पर ऋषियों से इस विषय का परामर्श कर के सब के साथ क्षीरसागर पर जाकर भगवान की स्तुति किया। आज्ञा हुई कि चार कुल उत्पन्न करो। फिर ऋषियों के साथ ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र और इन्द्र आबू पहाड़ पर आए और वहां यज्ञ किया। इन्द्र ने पहले अपनी शक्ति से घास का पुतला बनाकर कुंड में डाला जिस से मार मार कहता हुआ भाला लिए हुए एक पुरुष निकला, जिस को ऋषियों ने प्रमार नाम देकर धार और उज्जैन का देश दिया। उसी भांति ब्रह्मा ने वेद और खड्ग लिए हुए एक पुरुष उत्पन्न किया एक चुलुक (चुल्लू) जल सेजी उठने से इस का नाम चालुक्य हुआ और अन्हलपुर इसकी राजधानी हुई। रुद्र ने तीसरा क्षत्री गंगाजल से उत्पन्न किया, यह धनुष लिए काला और कुरूप था, इस से इस का नाम परिहार रख कर पर्वतों और बनों की रक्षा इस को दी। अन्त में विष्णु ने चार भुजा का एक मनुष्य उत्पन्न चतुर्भुज नामक किया। इस की राजधानी अकावती (गढ़ मंडल) हुई। इन्हीं चार पुरुषों से क्रम से पंवार, सोलंखी, परिहार और चौहान वंश हुए। प्राचीन काल में चौहान लोगों का सामवेद, पंच प्रवर, मधु (मध्य?) शाखा वत्सगोत्र, विष्णु (श्रीकृष्ण) वंश होने से सोमवंश, अम्बिका देवी, अर्बुद अचलेश्वर शिव, भृगुलक्षण विष्णु और कालभैरव क्षेत्रपाल थे।

भट्टों की और प्रिंसिप साहब की वंशावली एक है। प्रिंसिप साहब के मत से अनुराज ने आसी (वा हांसी) का राज किया। उस के पीछे इष्टपाल वा इष्ठपाल (शायद अस्थिपाल यही है) ने 1024 ई. में असीरगढ़ में राज किया। उस का चंडकर्ण वाकर्णचन्द्र, उस का लोकपाल और उस का हम्मीर हुआ। इस हम्मीर का पृथ्वीराज रायसे में भी जिक्र है और पृथ्वीराज ही के युद्ध में यह 1193 ई. में मारा गया। हम्मीर के पीछे क्रम से कालकर्ण, महामग्द (महामत्त), राव बच (राव वत्स) और रावचन्द्र हुए। रावचन्द्र का परिवार शहाबुद्दीन ने सन 1298 में मारा। केवल एक पुत्र रायसी बच गया, जो चित्तौर में पाला गया और जिस ने भैसरोर में राज स्थापन किया। रायन्सी के कोलन राय हुए, जिस ने मध्यदेश में प्रमारों का राज्य किया और उन के बंगदेव हुए, जो हुन के राजा हुए और मैनाल लोगों पर प्रभुत्व किया। राव बंगदेव से वंश परम्परा में और भेद नहीं है, केवल समर सिंह के पुत्र हर राज (हाराराज, जिस से हाड़ा वंश चला) प्रिंसिप साहब वंशावली में विशेष मानते हैं। बूंदीवालों के मत से बंगदेव ने (सन 1341 ई. में) बंवावदा में राज किया और इन के पुत्र राव देव सिंह ने बूंदी में राज स्थापन किया और अपने पुत्र देव सिंह (सम्वत् 1298) को बूंदी राज देकर चले गए। यही राव देव लोधी लोगों के दरबार में बुलाए गए, जो प्रिंसिप साहब के मत से अपने पुत्र हरराज को राज देकर चले गए। बूंदी परम्परा में हरराज का नाम नहीं है, इस से सम्भव होता है कि हरराज और समरसिंह दोनों रावदेव के पुत्र हैं, हरराज ने कुछ दिन राज किया, फिर समरसिंह ने भीलों को जीता था। समरसिंह के पीछे क्रम से ये राजा हुए। राव रनपालसिंह (नापाजी) सम्वत् 1332। राव हम्मीर (हामाजी वा हामूजी) सं. 1343। राव बरसिंह वा वीरसिंह सं. 1393। राव बैरीशल्य (वा बैरीसाल वा बीरूजी) सं. 1450 (P. 4190. A.D.G.)। राव सुभांडदेव वा बांदाजी सं. 1490, इन के समय में बड़ा काल पड़ा (ई. 1487) और समरकन्दी अमरकन्दी नामक दो भाइयों ने इन को राज से उतार कर बारह बरस राज्य किया, राव नारायण दास इन्होंने पिता का राज्य अपने चचा लोगों से लिया। राव सूरजमल सम्वत् 1584 (1533 A.D.) में भट्ट लोगों के मत से इन्हीं ने महाराना रत्न सिंहजी का वध किया, किन्तु जेम्स प्रिंसिप साहब के मत से महाराना ने इन्हें मारा। इस से सम्भव होता है कि इन दोनों राजाओं में ऐसा घोर बैर हुआ कि दोनों परस्पर मृत्यु के कारण हुए। राव राजा सुरतानजी सं. 1588 (1534 A.D.), यह पागल थे, इस से पंचों ने इन को राज से अलग कर के नारायणदास के पुत्र अर्जुनराव को राजा किया। इन के बहुत थोड़े ही समय राज के पीछे चित्तौर की लड़ाई में मारे जाने से राजवली में इन की गिनती नहीं हुई। राव राजा सुरजनजी सं. 1611 (1575 A.D.), इन्होंने महाराजाधिराज अकबर से काशी और चुनार पाया और काशी में राजमन्दिर बसाया। राव राजा भोज सं. 1642, इन के समय से कोटा और बूंदी का राज अलग हुआ।

राव रतनजी सं. 1664 (T. 1578 A.D.), इन के पुत्र कुंवर माधवसिंह ने जहांगीर से कोटा पाया और कुंअर गोपीनाथ, जुवराज हुए। कुंअर गोपीनाथ भी (सं. 1671) युवराजत्व के समय ही में शान्त हुए, इस से उनके पुत्र रावराजा शत्रुशाल राव रत्नजी

के गोद बैठे (सं. 1688) और माधव सिंह कोटा के राजा हुए। यह राजा शत्रुशाल (प्रसिद्ध छत्रसाल) बड़ा वीर हुआ है, जिस ने कुलवर्गा जीता और उज्जैन की प्रसिद्ध लड़ाई में 12 राजाओं के साथ मारा गया[1], राव राजा भावसिंह सं. 1715 (1658 A.D.P.) इन्हौंने औरंगजेब से औरंगाबाद की सूबेदारी पाया। राव राजा अनिरुद्धसिंह सं. 1738 (P. 1681 A.D.), ये भावसिंह के छोटे भाई के पौत्र थे। राव राजा बुधसिंह सं. 1752 (P. 1718 A.D.), इन्हों ने बहादुरशाह की सहायता की थी, किन्तु जयपुरवालों ने इन्हें राज्यच्युत कर दिया। महाराव राज उमेदसिंह सं. 1805 (1743 A.D.), होलकर की सहायता से बूंदी फेर लिया (1747) और फिर विरक्त होकर राज छोड़ कर चले गए। अजीत सिंह सं. 1827 (1770), महाराव राजा विष्णुसिंह सं. 1830। इन्हों ने सं. 1874 में सरकार से अहदनामा किया। महाराज राजा रामसिंह ये वर्तमान बूंदी के महाराव हैं। सम्वत् 1878 में सावन कृष्णा 11 को इन्हौंने राज पाया और पूस सुदी 3 सं. 1866 को इन का जन्म है। ये महाराज बड़े धर्म्मनिष्ठ और संस्कृत के अनुरागी हैं।

कोटा की शाखा

राव माधो सिंह सन 1579 ई.
राव मुकुन्द सिंह सन 1630 ई.
राव जगत सिंह सन 1657 ई.
राव किशवर (किशोर) सिंह सन 1669 ई.
राव रामसिंह सन 1685 ई.
राव भीससिंह सन 1707 ई.
महाराव अर्जुनसिंह सन 1719 ई.
महाराव दुर्जनशाल (निस्सन्तान)
महाराव अजीत सिंह (विष्णुसिंह के पोते)
महाराज छत्रसाल
महाराज गुमानसिंह सन 1765 (अपने भाई छत्रसाल की गद्दी पर बैठे) जालिम सिंह इनके फौजदार थे।
महाराव उमेदसिंह सन 1770 ई.
महाराव किशोरसिंह सन 1819 ई.

[बोधोदय प्रेस, बांकीपुर से सन 1882 में पहली बार पुस्तकाकार प्रकाशित। बाबू शिवनन्दन सहाय ने इसका रचना काल 1880 माना है।']

---

1. दारासाहि औरंग जुरे हैं दोऊ दिल्ली दल एकै गए भाजि एक रहे रुंधि चाल में।
भयो घोर युद्ध उद्ध माच्यो अति दुन्द जहां कैसहु प्रकार प्रान बचत न काल में॥
हाथी तें उतरि हाड़ा जूझ्यो लोह लंगर दै एती लाज का मैं जेती लाज छत्रसाल में।
तन तनवारन में मन परमेश्वर में प्रन स्वामि कारज मैं माथो हर माल में॥

खत्रियों की उत्पत्ति

खत्रियों की उत्पत्ति

मेरी बहुत दिन से इच्छा थी कि इस जाति का पुरावृत्त संग्रह करूं परन्तु मुझे इस में कोई सहायक न मिला और जिन जिन मित्रों ने मुझ से पुरावृत्त देने को कहा था वे इस विषय में असमर्थ हो गए और इसी से मेरा भी उत्साह बहुत दिनों तक मन्द पड़ा रहा। परन्तु मेरे परम मित्र ने इस विषय में मुझे फिर उत्साहित किया और कुछ मुझे ऐसी सहायता भी मिल गई कि मैं फिर से इस जाति के समाचार अन्वेषण में उत्सुक हुआ।

लाहौर निवासी श्रीपंडित राधाकृष्णजी ने इस विषय में मुझे बड़ी सहायता दी और वैसी ही कुछ सहायता श्री मुंशी बुधसिंह के मिहिर प्रकाश और श्रीयुत शेरिंग साहब के जातिसंग्रह से मिली।

इस समय में प्रायः बहुत जाति के लोग अपनी अपनी उन्नति दर्शन में प्रवृत्त हुए हैं जैसा दूसर (जिन के वैश्यत्व में भी सन्देह है क्यौंकि उन के यहां फिर से कन्या का पति होता है) अपने को कहते हैं कि हम ब्राह्मण हैं, कायस्थ (जो शूद्रधर्म्म कमलाकर की रीति से संकर शूद्र हैं) कहते हैं कि हम क्षत्रिय हैं और जाट लोगों में भी मेरे मित्र बेसवां के राजा को ठाकुर गिरिप्रसाद सिंह ने निश्चय किया है कि वे क्षत्रिय हैं तो इस दशा में इस आर्य्य जाति का पुरावृत्त होना भी अवश्य है, जो मुख्य आर्य्य जाति के निवास स्थल पंजाब और पश्चिमोत्तर देश में फैली हुई है और जिस में सर्व्वदा से अच्छे लोग होते आए हैं। हमारे पूर्व्वोक्त आर्य्य शब्द के दो बेर के प्रयोग से कोई यह शंका न करै कि देश के पक्षपात से मैंने यह आग्रह से आदर का शब्द रक्खा है क्यौंकि आर्य्य जाति के लोग सारे भारतवर्ष में फैले हैं, यह अंग्रेरज़ी हिन्दुस्तान के इतिहासों के पाठ से स्पष्ट हो जाएगा। हमारे एक मित्र से इस बात का मुझ से बड़ा विवाद उपस्थित हुआ था। वह कहते थे कि पंजाब देश अपवित्र है क्यौंकि महाभारत में कर्ण पर्व्व के आरम्भ में शल्य राजा से कर्ण ने पंजाब देश की बड़ी निन्दा की है और वहां के बहुत बुरे आचरण दिखाए हैं परन्तु वह निन्दा निन्दा की भांति गृहीत नहीं होती क्यौंकि पश्चिम में गुजराती या मध्य देश के वासियों की भांति सोला पामरी का प्रचार नहीं है और न ऊपर से वे लोग स्वच्छ रहते हैं परन्तु यह

मैं निस्सन्देह कह सकता हूं कि यहां के काले चित्तवाले मनुष्यों से उन का चित्त कहीं उजला है। इस के अतिरिक्त कर्ण शल्य का शत्रु है इस से शत्रु की की हुई निन्दा निन्दा नहीं कहाती। हां, इस बात का हम पूर्ण रूप से प्रमाण देते हैं कि भारतवर्ष में पहिले पहिले आर्य्य लोग केवल पंजाब से लेकर प्रयाग तक बसते थे। श्रीमान जॉन म्योर साहब ने लाहौर के चीफ पंडित पंडित राधाकृष्ण को जो पत्र लिखा है उस में मुक्त कंठ से उन्होंने स्थापन किया है कि जहां तक मैंने प्राचीन वेदादिक पुस्तकें पढ़ीं, उनसे मुझे पूरा निश्चय है कि आर्य्य लोग पहले इन्हीं देशों में बसते थे। ऋग्वेद संहिता, दशम मंडल, 75 सू. 5 ऋक् ''इमं में गंगे यमुने सरस्वती शुतुद्रि स्तोमं सचता परुष्णया असिकन्या मरुद्वृधे वितस्तयार्जीकीये शृणुह्यासुषोमया।'' 6. मंडल सू. 45 ऋ. 31 'अधिवृवुः पर्णानां वर्षिष्ठे मूर्धन्नस्थात् उरुकक्षो न गांग्यः।' 10 मंड. सू. 75 ऋ. और 5 मं. 72 सू. ऋ. 17 'सप्तमे सप्तशाकिन एकमेकाशता ददुः यमुनायामश्रुतमुद्राधोगव्यं मृधे निराधो अशव्या मृधेः'। मंड 3 सू. 33 ऋ. 1 'प्रपर्वतानामुशर्ता उपस्था दश्वे इव विषिते हासमाने गावेव शुभ्रे मातरारिहाणे विपाट् छुतुद्री पयसा जवेते।' 3 मंड 23 सू. 4 ऋ. 'नित्वादधेवरेरायं आपृथिव्या इवापास्यदे सुनत्वे आन्हाम् दृषवृद्दृत्यां मानुषे आपयायां सरस्वत्यां रेवदग्ने दिदीहि।' 6 मंड 61 सू. ऋ. 2 ''इयंशुष्मेभर्वि सखाइ वारुजत् सानुगिरीणां तविषेभिरुर्म्मिभिः पारावतघ्नीमवसे सुवृत्तिभिः सरस्वतीणाविवासेमधीतिभिः'' इत्यादि श्रुतियों में गङ्गा, यमुना, व्यास, सतलज, सरस्वती इत्यादि नदियों की महिमा कही है और ऋग्वेद में पहले और दूसरे मंडल में कई ऋचाओं में सरस्वती की महिमा कही है। यास्क ने अपने निरुक्त में इन ऋचाओं के अर्थ में विश्वामित्र ऋषि के सतलज और व्यास के मुहाने पर यज्ञ करने का और इन नदियों के स्तुति करने का प्रकरण लिखा है।[1] और कीकट देश तथा अन्य प्रदेश और इत्यादि प्रदेश और गोमती इत्यादि नदियों के जो कहीं श्रुतियों में नाम आ गए हैं वे परस्पर विरुद्ध होने के कारण तादृश प्रमाणीभूत नहीं होते। इस से इस बात को हम पूर्ण रूप से प्रमाण प्रमित कर चुके कि आर्य्य लोगों के निवास का स्थान पंजाब से लेकर यमुना के किनारे तक के देश हैं तो इस से वहां के प्राचीन निवासियों को यदि हम परम आर्य्य कहैं तो क्या हानि है।

अब इस बात का झगड़ा रहा कि ये कौन वर्ण हैं? तो हम साधारण रूप से कहते हैं कि ये क्षत्री हैं। क्षत्री से खत्री कैसे हुए इस में बड़ा विवाद है। बहुत लोगों को तो यह सिद्धान्त है कि पंजाब के लोग क्ष उच्चारण नहीं कर सकते, इस से ये क्षत्री से खत्री कहलाए। कोई कहते हैं कि जब परशुरामजी ने निक्षत्र किया तब पंजाब देश में कई बालक खत्री कह कर बचा लिए गए थे। वे ब्राह्मण, वैश्य और शूद्रों के घरों में पले थे और अब उन्हीं के खत्री, अरोड़े, भाटिए इत्यादि अनेक उपजाति बन

---

[1] मनु ने भी इन्हीं को पुण्य देश कहा है 'सरस्वती दृदषद्वत्योर्देवनद्यार्यदन्तरं', 'कुरुक्षेत्रं च मत्स्याश्च पांचालाः शूरसेनकाः'।

गईं और उनके आचरण भी अपने अपने पालकों के अनुसार अलग अलग हो गए। तीसरे कहते हैं कि क्षत्री और खत्री से भेद राजा चन्द्रगुप्त के समय से हुआ क्योंकि चन्द्रगुप्त शूद्री के पेट से था और जब उसने चाणक्य ब्राह्मण के बल से नन्दो को मारा और भारतवर्ष का राजा हुआ तो सब क्षत्रियों से उसने रोटी और बेटी का व्यवहार खोलना चाहा तब से बहुत से क्षत्री अलग होकर हिमालय की नीची श्रेणी में जा छिपे और जब उसने क्षत्रियों का संहार करना आरम्भ किया तब से ये सब क्षत्री खत्रियों के नाम से बनिए बन कर बच गए। कोई कहते हैं कि ये लोग हैं तो क्षत्री पर कलजुग के प्रभाव से वैश्य हो गए हैं क्योंकि कलजुग के प्रकर्ण में लिखा है कि 'वैश्य वृत्यातु राजानः'। कोई ऐसा भी निश्चय करते हैं कि किसी समय सारे भारतवर्ष में जैनों का मत फैल गया था? तब सब वर्ण के लोग जैन हो गए थे, विशेष करके वैश्य और क्षत्री। उन में से जो क्षत्री आबू के पहाड़ पर ब्राह्मणों ने संस्कार देकर बनाए वे तो क्षत्री हुए और उन लोगों से सैकड़ों वर्ष पीछे जो क्षत्री जैन धर्म्म छोड़ कर हिन्दू हुए वे खत्री कहाए और क्षत्रियों के पंक्ति से न मिले। गुरु गोविन्द सिंह ने अपने ग्रन्थ नाटक के दूसरे तीसरे चौथे पांचवें अध्याय में लिखा है कि "सब खत्री मात्र सूर्यवंशी हैं। रामजी के दो पुत्र लव और कुश ने मद्र देश के राजा की कन्या से विवाह किया और उसी प्रांत में दोनों ने दो नगर बसाए। कुश ने कसूर, लव ने लाहौर। उन दोनों के वंश में कई सौ वर्ष लोग राज्य करते चले आए। एक समय में कुशवंश में कालकेतु नामक राजा हुआ और लव वंश में कालराय। इन दो राजाओं के समय में दोनों वंशों से आपुस में बड़ा विरोध उत्पन्न हुआ। कालकेतु राजा बलवान था, उस ने सब लववंशी क्षत्रियों को उस प्रान्त से निकाल दिया। राजा कालराय भाग कर सनौड देश में गया और वहां के राजा की बेटी से विवाह किया और उस से जो पुत्र हुआ उस का नाम सोढ़ीराय रक्खा। उस सोढ़ीराय के वंश के क्षत्री सोढ़ी कहाए। कुछ काल बीते जब सोढ़ियों ने कुश वंशवालों को जीता तो कुशवंश के लोग भाग कर काशी में चले आए और वे लोग यहीं रह कर वेद पढ़ने लगे और उन में प्रायः बड़े बड़े पंडित हुए। बहुत दिनों पीछे जब सोढ़ियों ने सुना कि हमारे दूसरे भाई लोग काशी में वेद पढ़ कर पंडित हुए हैं तो उन को काशी से बुलाया और वेद सुन कर अपना सब राज्य उन लोगों को दे दिया, जिन की वेद पढ़ने से वेदी संज्ञा हो गई थी। काल के बल से इन दोनों वंश के राज्य नष्ट हो गए और वेदियों के पास केवल बीस गांव रह गए और उन्हीं वेदियों के वंश में सम्वत् 1526 में कालू चोणे के घर बाबा नानक का जन्म हुआ और सोढ़ियों के वंश में गुरु गोविन्द सिंह हुए।" गुरु नानक साहब अपने ग्रन्थ साहब में जहां चारों वर्णों का नाम लिखते हैं वहां ब्राह्मण, खत्री, वैश्य, शूद्र लिखते हैं।

कोई कहते हैं कि बाबर के पहिले की किसी पुस्तक में खत्री का शब्द नहीं

मिलता। इस से निश्चय होता है कि बाबर ने जिन क्षत्रियों को अपने सेना में नौकर रक्खा था उन का नाम खत्री रक्खा।

परन्तु कोई कहते हैं कि पंजाब में नाग भाषा का बहुत प्रचार था और अब भी पंजाबी भाषा में उन के बहुत शब्द मिलते हैं और क्षत्री खत्री की नाग भाषा है। ऊपर के लेख से हम सिद्ध कर चुके कि खत्री क्षत्रिय हैं और उस में लोगों के जो अनेक विकल्प हैं, वे भी लिखे गए परन्तु हम कोई विकल्प नहीं करते क्यौंकि नीचे लिखे हुए वाक्य पुराणोपपुराण सारसंग्रह में दशावतार प्रकरण में परशुरामजी के दिग्विजय में मिले हैं; जिन से इन का क्षत्रिय होना स्पष्ट है, यथा–

यदा श्रीमत्परशुरामो गतो दिग्विजयेच्छया।
सकलाभूस्तदाजाता पूर्णं मोदान्विता यतः॥24॥
दुष्टसंहारकृद्धीमान् दुष्टभाराकुला रसा।
पर्यटन् सकलां पृथ्वीं जयन् बाहुबलेन च॥25
गतः पंचनदान्देशान्यद्राज्ञा क्रूरसंगरं।
कृतं परशुरामेण महाविक्रमशालिना॥26॥
एकाकिनापि तद्राज्ञः सैन्यं सर्वं विनाशितं।
कतिचिद्दुद्रुवुर्वीरा हतास्तु बहवोऽभवन्॥27॥
असृङ्मेदवती भूमिः शुशुभे रणमंडले।
धुनी लोहितपंकाढ्या बभूवातिभयंकरा॥28॥
धूलिः सैन्यस्य यस्यां सा मग्ना पंकीबभूवह।
जन्यभूमिगता यत्र बीराणां मृतमस्तकाः॥29॥
कमलाभां बहन्तो या कल्लोलैरावृताप्यभूत्।
राजानं संनिहत्यासौ रामस्तत्र तरोः पदे॥30॥
श्रान्तोऽतिष्ठत् क्षणं यावद्रिपुनार्यः समागताः।
अन्वेषयन्त्यः संग्रामभूम्यां स्वीयान्पतीन् मृतान्॥31॥
आक्रोशंत्योभिधेयेन पुत्रवृत्तगृहादिना।
विलपन्त्यो, योमुहुर्दुःखाद्घातयनत्य उरःस्थलं॥32॥
लक्ष्मीविलास नामैको वैश्यस्तावत्समागतः।
करुणापूर्ण ह्रदयो दृष्ट्वा तासां हि दुर्गतिम्॥33॥
पत्युर्नाशं महद्दुःखं ज्ञात्वा ताः शीलशालिनीः।
दानशौंडोधनाढ्यश्च सद्बुध्या ताः सुदुःखिताः॥34॥
बालाननाथान् मत्वा ऽसावनयत् स्वगृहं प्रति।
सान्त्वयित्वा विवेकेन परेण परमाः सतीः॥35॥
लालनं पालनं तेषां पोषणं ततस्त्रियामुत।

बालानां क्षत्रवंश्यानामकरोत् स्नेहभावतः॥36॥
एवमेव ततो रंगभूम्याः काश्चित् स्त्रियो हृताः।
दुष्टैः काश्चिद्धिड्निभैश्च दयालुभिरुपाहृताः॥37॥
लक्ष्मीविलास संज्ञेन विशा ते बालका यदा।
ब्रतबंधार्हतां प्राप्ताः समाकार्युपनायनं॥38॥
स्वधर्माचरणे चैवं विशा ते सुनियोजिताः।
एवमेवापरे बालाः स्त्रियो येन सुरक्षिताः॥39॥
पोषिताः स्वीयदत्तेन अन्नेनैव तथैव ते।
मत्वा तमेव चाचारं ववर्तुस्तेन सन्मुदा॥40॥
इमे लक्ष्मीविलासेन रक्षिताः क्षत्रवंशजाः।
शुद्धाः सदाचारयुक्ता बभूवुर्भाग्यशालिनः॥41॥
येषां कलियुगेपी मे चत्वारो वंशजा स्मृताः।
अग्निः सोमश्च सूर्य्यश्च नाग एते चतुर्विधाः॥42॥
अद्यापि भूमौ वर्तन्ते चतुस्सन्तानवर्द्धकाः।
दानशूराः सदाचारा भाग्यवन्तः सुविक्रमाः॥43॥

अर्थ–जब परशुरामजी दिग्विजय करने निकले तब सब पृथ्वी आनन्दपूर्ण हो गई क्यौंकि दुष्टों के भार से पृथ्वी व्याकुल हुई थी और इन्होंने दुष्टों का संहार किया। सब पृथ्वी पर घूमते और बाहुबल से जय करते हुए पंचनद देशों में गए और वहां के राजा से बड़ा संग्राम किया। यद्यपि भगवान अकेले थे तथापि वहां के राजा की सब सेना मार डाली–इत्यादि।

उन हत वीरों की स्त्रियों और बालकों को लक्ष्मीविलास नामक वैश्य ले गया और धर्म्मपूर्व्वक रक्षण किया और उन के पुत्रों का लालन पालन और यज्ञोपवीतादि संस्कार किया। इसी भांति उन मृत वीरों की स्त्रियां और बालक ब्राह्मण वा शूद्रादि जिन वर्णों के घर गए उन के ऐसे ही आचरण हुए और लक्ष्मीविलास का पालित क्षत्रियों का समूह जो अग्नि, सूर्य, और नागवंश का था, क्षत्रियसंस्कार पा कर भी वैश्य धर्म्म में निष्ठ हुआ इत्यादि।

इन का विशेष वर्णन भविष्य पुराण के पूर्वार्द्ध में जो लिखा है उस से और भी निश्चय होता है कि सब क्षत्रिय हैं। इन श्लोकों की संस्कृत ऐसी ही सहज है कि अर्थ लिखने की आवश्यकता नहीं। सिद्धान्त यह है कि वैश्यों की वा दूसरी वृत्ति करने वाले क्षत्रिय जो पंजाब देश में हैं वे क्षत्रिय ही हैं किन्तु परशुरामजी के समय से वहां के क्षत्रियों का युद्ध संस्कार छूट गया है और ऐसे लोगों की एक पृथक जाति, खत्री, रोड़े, भाटिए इत्यादि हो गई है। इस विषय के दोनों अध्याय यहां प्रकाशित किए जाते हैं।

सूत उवाच

एवं बहुविधे देशे स हत्वा क्षत्रियर्षभान्।
गतो पञ्चनदे देवो क्षत्रियान्वयसूदनः॥1॥
तत्र प्राप्तान् महाशूरान् क्षत्रियान् रणदुर्मदान्।
युयुधेऽतिबलो रामः साक्षान्नारायणांशजः॥2॥
जनन्या जनितो लोके कः शूरोयस्तु पार्थिवान्।
पाञ्चालान् जयते युद्धे बिना नारायणं स्वयं॥3॥
सर्व्वान् हत्वा महाराजान् क्षत्रियान् सद्विजोत्तमः।
रुरुधे पङ्कजवने यथा मत्त द्विपाधिपः॥4॥
एवं हत्वा रणे शूरान् तरुणान् रणदुर्म्मदान्।
प्रवृत्ते वृद्धबालेषु हन्तुं क्रोधाकुलेक्षणः॥5॥
हाहाकारो महानालोत्तत्र क्षत्रिय पर्य्यवि।
नार्य्यो वृद्धाश्च बालाश्च मुमुहुर्भयविह्वलाः॥6॥
हतेषु तेषु शूरेषु बालवृद्धेषु च क्रमात्।
अनाथाश्चाभवन् सर्व्वाः क्षत्रियाण्यो हतान्वयाः॥7॥
तत्र कश्चिन् महावैश्यः सुधर्म्मा नामकः प्रभुः।
आसीन् नागान्वये जातः क्षत्रियाणां प्रियंकरः॥8॥
हतेषु सर्वबालेषु व्याकुलाश्रुकुलेक्षणः।
चतुः पञ्चावशेषेषूपायंसमकरोत्तदा॥9॥
नीत्वा स बालान् तान् सर्व्वान् स्वप्रियायै प्रदत्तवान्।
तस्य भार्य्या महाप्राज्ञी सुशीला नाम नामतः॥
वात्सल्यमकरोत्तेषु यथा स्वोदरजेभृशं॥10॥
यदा निवर्त्तितो देवो निःक्षत्रीकृत्य पार्थिवान्।
ऊचुस्तस्मै समागत्यं तद्वृत्तं पिशुनास्तदा॥11॥
अस्ति कश्चिन् महावैश्यो क्षत्रियाणां प्रियंकरः।
रक्षितास्तेन बालास्ते क्षत्रियाणां नरोत्तम॥12॥
तच्छ्रुत्वा स द्विजो धावन्नुश्वसन्नुरगो यथा।
उद्यम्य परशु तत्र गतः क्रोधाकुलेन्द्रियः॥13॥
तं दृष्ट्वा स महान् वैश्यः प्राप्तं कालानलोपमं।
दुर्न्निवारं मनुष्येभ्यो भक्त्या बुध्याप्यपूजयत्॥14॥
सारस्वतास्तु ये विप्राः क्षत्रियाणां पुरोहिताः।
तेपि तत्रागमन् सर्व्वे यजमानहितेप्सवः॥15॥
ऊचुः प्राञ्जलयो विप्राः प्रणामानतकन्धराः।
वैश्यः सुधर्म्मा तत्पन्नी भार्गवं भर्गविक्रमं॥16॥

सर्व्व ऊचुः

नमोनमस्ते श्रितविग्रहाय। नमो नमस्तेहृत विग्रहाय।
नमो नमस्ते कृत विग्रहाय। नमो नमस्ते धृत प्रग्रहाय॥17॥
नमस्ते पूर्णकामाय दुष्ट वामाय ते नमः।
नमो रामाभिरामाय रूपश्यामाय ते नमः॥18॥
क्षात्रद्रुमकुठाराय चाकूपाराय ते नमः।
नमस्तेऽकृतदाराय चाकूपाराय ते नमः॥19॥
नमो नमस्ते सर्व्वायार्चितशर्व्वाय ते नमः।
हृतराजन्य गर्व्वायणा पूर्व्वखर्व्वाय ते नमः॥20॥
मीन कच्छप वाराह नृसिंह वटु रूपिणे।
कृत लीलावताराय विष्णवे प्रभविष्णवे॥21॥
रेणुका गर्भरत्नाय च्यवनानन्ददायिने।
भार्गवानूवय जाताय नमो रामाय विष्णवे॥22॥
नमः परशुहस्ताय खड्गिने चक्रिणे नमः।
गदिने शार्ङ्गिणे नित्यं शौरिणे ते नमोनमः॥23॥
नमस्तेऽद्भुतविप्राय धराभारापहारिणे।
शरणागतपालाय श्रीरामाय नमोनमः॥24॥

इति श्री भविष्यपुराणे पूर्वखंडे वर्णाचारनिर्णये चत्वारिंशोध्यायः॥

सूत उवाच

इत्थं स्तुतः स भगवान् उवाच श्लक्षणया गिरा।
वरं व्रणीध्वं भद्रं वो मा भैष्ट विगतज्वराः॥1॥

सारस्वता ऊचुः

नाशिता भवता देव राजन्या भूरिविक्रमाः।
सन्ति तेषान्दयासिन्धो बाला दीनास्त्रियस्तथा॥2॥
तेभ्योऽभयं वयं त्वत्तो देव वाञ्छामहे सदा।

सुधर्म्माउवाच

मया संरक्षिता ये तु मामकीं वृत्तिमाश्रिताः॥3॥
त्यक्तक्षत्रियधर्म्मास्ते सम्भविष्यन्ति बालकाः।
वैश्यस्तु भवताऽबध्यः सदा त्वत्पादसेवकः।
अनुकम्प्यो दयासिन्धो दीनोऽहं बन्धु वञ्चितः॥4॥

परशुरामउवाच

अत्राऽगतोहं नाशार्थं तेषामेव न संशयः।
किन्तु तत् स्तवनात्प्रीतो विरक्तोहं वधात्प्रति॥5॥
मत्प्रसादाद्भविष्यन्ति बाला विटधर्म्ममाश्रिताः।
लक्ष्मीवन्तः प्रजावन्तो नानाशस्त्रविचक्षणाः॥6॥
पण्यवीथीषु चतुरा राजसेवाविधायिनः।
पुरुषाश्च स्त्रियः सर्व्वा सुभगाः कूलमाश्रिताः॥7॥
यूयं सारस्वता विप्राः प्रतिगृहणन्तु बालकान्।
कुर्व्वन्तु चापि सर्व्वेषां संस्कारं क्षत्रियोचितम्॥8॥

सूतउवाच

इति संस्थाप्य भगवान् प्रजावीजं प्रजापतिः।
जगाम तपसे शैलं गौतमाचलमुत्तमं॥9॥
ततः प्रभृति ते सर्वे क्षत्रिया द्विजपालिताः।
त्यक्तक्षत्रियधर्म्माणो वणिग्वृत्तं समाश्रिताः॥10॥
ते सूर्य्य शशि वंशीया अग्निवंशसमुदभवाः।
उत्तमाः क्षत्रियाः ख्याताः इतरे मध्यमाः स्मृताः॥11॥
भोठ भिल्ल निवारादि महिषावत क्रोटकाः।
दैत्यवंश समुत्पन्नाः क्षत्रियास्तेपि विश्रुताः॥12॥
टिक्कसेल इति ख्याता प्रेतवंशोद्भवाः श्रुताः।
उन्नाइवंशसंभूतातेस्तु कायस्थ पूर्वजाः॥13॥
विसेना बर वाराश्च अवखास्तवखासतथा।
अङ्गाश्चामर गौडाद्या सूतवंशसमुद्भवाः॥14॥
कङ्कान कनवाराश्च मोरभंजास्तु वैश्यकाः।
सेंगराख्या सोनगृहावत्सा ब्राह्मणवंशजाः॥15॥
भरां भद्रा भार्गवाश्च मुंडिता नाकुलन्धरा।
एवमन्येपि बहुशो क्षत्रियत्वं समाश्रिताः॥16॥
नागवंशोद्भवा दिव्याः क्षत्रियास्समुदाहृताः।
ब्रह्मवंशोद्भवाश्चान्ये तथाऽरुट्वंशसम्भवाः॥17॥
एतेषु भविता ह्येको महात्मा विगतज्वरः।
उदासीनः कुलगुरु कलौ सार्द्धे चतुर्गते॥18॥
इत्येतत् कथितं तात क्षत्रियाणां विनाशनं।
पालनं चापि मद्रेषु किमन्यच्छ्रोतुमिच्छसि॥19॥

इति पूर्व्वभविष्ये एकचत्वारिंशोध्यायः।

श्रीयुत भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र महाशयेषु सविनय निवेदन

खत्री के उत्पत्ति विषय में मेरे मित्र पंडित चंडीप्रसादजी वर्णन करते हैं कि जब परशुराम श्री दशरथजी के समय में क्षत्रियों को मारते थे तौ वे सब खत्री कहि के बचि गए! तब से वे खत्री कहलाए अद्यावधि उसी नाम से प्रकट हैं। कोई कहते हैं कि (ख) आकाशनिवासी (त्रि) तीन ऋपियों के सन्तान हैं अतएव खत्री शब्द से प्रसिद्ध हैं। और जो परशुरामजी को शिरोनमन पूर्वक प्रणाम करि बद्धांजलि हो गए तब तो परशुरामजी ने प्रसन्न होकर कहा, धन्य हौ तुम निर्भय रहो क्यौंकि तुम अरुट् हौ अर्थात् क्रोध बिना हौ सोई अब अरोड़ा कहलाते हैं। और मेरे मित्र पंडित गोकुलचन्द्रजी के पास एक पुस्तक थी। जिस में लिखा है कि लवजी के वंश में एक राजा थे तिन्ह के दो स्त्री थी। जो कि छोटी थीं वह राजा को परम प्यारी थी जो दूसरी बड़ी थी उसमें कुछ रुचि कम थी एक एक पुत्र दोनों में प्रकट भए। छोटी स्त्री ने स्वामी से कहा कि राज्य मेरे पुत्र को देव। राजा ने न माना। अन्त में मन्त्री को भी उस रानी ने स्ववशवर्ति करि के कहवाया कि छोटे को राज्य देना चाहिए। मन्त्रियों ने कहा कि राजन्! एक को समस्त धन दे दो। एक को केवल राज्य दे दो। सुनि के राजा ने बड़े पुत्र को समस्त धन दे दिया। छोटे पुत्र को स्वकीय राज्य दे दिया। छोटे पुत्र ने राज्य पाय के बड़े भ्राता से कहा कि तुम मेरे देश से निकल जाओ, तब तो वह तिलाचार होकर मूलत्राणा नगर अर्थात् मुलमान के पास में चला आया। और उस के और और जातियों के मित्र जो थे वे भी चलि आए तब तो उस ने कहा कि हम सब एक जाति कहलावैं और एक अपने नाम पर ग्राम बसावैं जहां हमारी जाति सब सुख पूर्व्वक निवास करैं। इस सलाह को सबने माना तब उस राजकुमार ने सब को कहा कि हम सब रुट् (कोप) कभी करैं नहीं आपस में अतएव अरुट् हमारा नाम हुआ। सबने प्रसन्न होकर माना। वरंच जो जो पुरुष आए थे उन के नाम से अरुट् में भी कई जाति हो गईं सो सब इस पंचनद देश में विस्तृत हैं। उसी समय उस राजकुमार ने उक्त नगर के निकट में एक अरुट् कोट नाम ग्राम बनवा कर निवास किया जिस को आजकल आरोड़कोट कहते हैं। वह ग्राम अरोड़ों की पूर्व निवास भूमि है। आजकल भी कई एक पुरुष उसी स्थान में जाए के विवाहादि करि आते हैं, जिन्हों को इस देश में कन्या नहीं मिलती हैं। अब देश प्रभाव से उस देश के लोक आचार से हीन होते हैं दूसरे गदहा को अनेक ही पुरुष रखते हैं उस पर निःसंक सवार भी हो जाते हैं अतएव नीच गिने जाते हैं नहीं तो जाति में अच्छे हैं। जो लघु राजकुमार क्षत्री था उस को इस पांचाल देश के लोगों ने खत्री शब्द से प्रसिद्ध किया क्यौंकि जो श्री गुरु अंगदजी ने गुरुमुखी अक्षर बनाए उस में केवल

मूर्द्धन्य खकार है और (क्ष) अक्षर नहीं है अतएव देश बोली से सब खत्री कहलाने लगे। सोई रीति अद्यावधि चली आती है। इत्यादि प्रकार से प्रसद्धि है। जो आकाश निवासी तीन ऋषि हैं उनका नाम 1. आकर्ष 2. पद्माख्य 3. खर्त्रिंश इत्यादि सुदर्शन संहिता में लिखा है। खर्त्रिंश की सन्तान खत्री कहलाते हैं। यह आख्यायिका उक्त संहिता के द्वादश अध्याय में विदित है। इत्यलम्बहुना। (शालिग्रामदास)

– • –

आजकल बहुध लोग श्रेष्ठ वर्ण बनने के अधिकारी हुए हैं उन में एक खत्री भी हैं। ये लोग अपने को क्षत्री कहते हैं इस बात को मैं भी मानता हूं कि इनके आद्य पुरुष क्षत्री थे। क्यौंकि जो जो कहानियां इस विषय में सुनी गई हैं उन से स्पष्ट मालून होता है कि ये लोग क्षत्री वंश में हैं।

लोग कहते हैं कि खत्री हयहो वंश के वंश में हैं। सहस्त्रार्जुन से और परशुराम से जब युद्ध ठनी तो परशुराम ने उस वंश के क्षत्रियों को मार डाला और यह प्रतिज्ञा किया कि इस वंश के क्षत्री को निर्वंश कर डालैंगे। यह प्रतिज्ञा सुन कर उस वंश के दूषण कुलकलंक कई एक कायर यह कह कर बच गए कि हम बनियों के बालक हैं। और जब परशुरामजी चले गए तो ये जाकर हयहोवंशियों से कहने लगे कि भाई हम लोग विपत्ति में ऐसा कह कर बच गए। यह सुन कर उन सबों ने बहुत प्रकार से धिक्कार दिया और कहा कि रे चांडाल तुम सबों ने यह क्या किया अपनी जननी को कलंक लगाया। हाय! तुम सब क्षत्री कुल में कलंक पैदा हुए। जाओ यहां से भागो दूर हटो न तो अभी सिर काट लेंगे क्या तुम सब हम लोगों के तुल्य हो सकते हो? अपने वंश के लोगों की रक्षा क्या करोगे अपने बाप के माथे पाप चढ़ाए अब हम लोग तुम लोगों के साथ कोई व्यवहार न रक्खेंगे तुम लोगों ने अपने माता-पिता को कैसा कलंक लगाया। यह सुन कर ये सब अपनी श्री गंवाकर वहां से आ के वैश्यों से कहा कि भाई तुम लोग अपनी जाति अर्थात् वैश्य हम लोगों को बनाओ। कारण हम लोग बनियां के बालक कह कर बच गए हैं और अपनी सारी व्यवस्था कह गए। बनियांओं ने भी इस बात को अस्वीकार किया अर्थात् कहा कि आज विपति पड़ने पर तुम लोग बनियां के बालक कह कर बच गए कल विपत्ति पड़ने पर शूद्र के बालक कहोगे इस से हम लोग तुम लोग को वैश्य अर्थात् बनियां न बनावैंगे इस बात को सुन कर ये लोग बड़े बिपद में पड़े और आपस में सलाह कर के न क्षत्री न वैश्य एक विचित्र जाति खत्री बन गए।

कोई कोई कहते हैं कि खात नामक राजपूत के वंश में एक वेश्या से इन लोगों की उत्पत्ति है और कोई कोई कहते हैं कि नहीं ये लोग बढ़ई के वंश में हैं अर्थात् बढ़ई को खाति कहते हैं। काल प्रभाव से कुछ द्रव्य पाकर वैश्यों के गिनती में हो गए। जो

हो कोई ऐसा भी कहते हैं कि खेचर नामक राजपूत के वंश में खत्री हैं। कोई कहते हैं कि ये लोग क्षत्री हई नहीं हैं, क्योंकि परशुरामजी से जो लोग अभय पाए हैं वे लोग वैश्य क्षत्री हैं जो वैश्यवारे में रहते हैं। और खत्रियों की दास की पदवी अब तक प्रचलित है इस से ये लोग शूद्र हैं परन्तु बड़े अफसोस की बात है कि जिन का बाप दास उन के बेटा अपने को क्षत्री लिखते हैं। ठीक है, ''श्यार सुत सेर होत निधन कुबेर होत दीनन को फेर होत मेरू होत माटि को''। कोई कहते हैं कि यदि इन के मूल पुरुष क्षत्री थे तौ भी ये अब क्षत्री नहीं हो सकते कारण खानपान बैठब उठब सब क्षत्रियों से न्यारी है और मूल पुरुष तो पैठान के भी क्षत्री हैं क्योंकि प्राथियन से पैठान शब्द बना है और वेणु वंश के कोल भील खेरो आदि हैं तो क्या अब ये क्षत्री हो सकते, कदापि नहीं। कोई कहते हैं कि चीनी लवण आदि का व्यापार करने से ब्राह्मण शूद्र हो जाता है तो क्षत्री होकर लवणादि बेचे तो क्या रहा। इसी भांति से लोग अनेक प्रकार से खत्रियों की उत्पत्ति वा वर्णनिर्णय बतलाते हैं परन्तु मैं इन बातों को छोड़ कर नृपवंशावली से पता देता हूं कि ये लोग क्षत्री के वंश में हैं।

दोहा

एक समय बसुधा भई, कामधेनु को रूप।
पुलक गात रोमांच युत, झारि दियो तन कूप॥1॥
तेहि रोमांच के मूल ते, प्रगटेउ छत्री खानि।
ताको निज निज नाम सभ, विधिवत कहो बखान॥2॥
जादव वैश निशेन नृप, खत्रि खाति बिजवान।
अगरवार सुरवार भौ, पंचगोतिया नृप जान॥3॥
महीदहार कठिहार पुनि, धाकर और सिरमौर।
लकरिहार जनवास पुनि, बड़ गुंजर मड़िऔर॥4॥
भदवरिया प्रगटे बहुरि, काश्यप और सोमवंश।
मंडवलिया गाइ सहित, पाछिल भौ अवतंश॥5॥
कठहरिया उत्पन्न भौ, मलन हांस करिहार।
पोड पुंडर बुंदेल पुनि, गौरवार मिलवार॥6॥
हाडा भए नरवनी, छत्री अति रणधीर।
षड्ग दान वर्णन करी, विरदावलि अति वीर॥7॥
सोनकी ओर जगार भौ, बहुरि तरेढ गरेर।
ठकुराई सांवत कहौ, खीची और धंधेर॥8॥
पुवि भौ प्रगट स्निहोगिया, छत्री नृपति कुलीन।
किनवार सिंघल नृप, कुलपालक अघहीन॥9॥
पुनि प्रगटेउ महरौठ नृप, कामधेनु ते जानि।
करचोलिया छत्री भएउ, एहि प्रकार सभखानि॥10॥

नागवंशी छत्री भए, गडवरिया सकसेल।
जाति वंश कुल उत्तम, पुनि प्रगटेउ रकसेल॥11॥
अनटैया अगरेढ नृप, कुश भौ नाम निहार।
अपर वंश कहं लगि कहौं, भए धेनु औतार॥12॥

[शिवराम सिंह]

[हरिश्चन्द्र मैगजीन अक्टूबर सन 1873 ई. और दिसम्बर सन 1873 ई. तथा नवम्बर सन 1878 ई. की हरिश्चन्द्र चन्द्रिका में प्रकाशित। सन 1883 में खड्गविलास प्रेस बांकीपुर से पुस्तकाकार प्रकाशित]

काश्मीर कुसुम

अथवा

राजतरंगिणी कमल

'कोऽन्यः कालमतिक्रान्तं नेतुं प्रत्यक्षतां क्षमः ।
कवीन् प्रजापतींस्त्यक्त्वा रम्यनिर्माणशालिनः'॥

'भुजतरुवनछायां येषां निषेव्य महौजसां ।
जलधिरस - नामेदिन्यासीदसावकुतोभया॥

स्मृतिमपि न ते यान्ति क्ष्मापा बिना यदनुग्रहं ।
प्रकृतिमहते कुर्मस्तस्मै नमः कविकर्मणे'॥

DEDICATION

हे सौभाग्य काश्मीर,

केवल ग्रन्थकर्त्ता ही से नहीं इस ग्रन्थ से भी तुम से अनेक सम्बन्ध है। तुम कुसुम जाति हौ यह ग्रन्थ भी। काश्मीर के क्षेत्र से दर्शकों का मन प्रसन्न होता है। तुम्हारे दर्शन से हमारा। काश्मीर इस पृथ्वी का स्वर्ग है तुम हमारे हेतु इस पृथ्वी में स्वर्ग हौ। यह ग्रन्थ राजतरंगिणी कमल है, तुम वर्ण से राजतरंगिणी कमला ही नहीं हमारी आशाराजतरंगिणी में कमल हौ। तरंगिणी गण की रानी भोगवती भागीरथी है तुम हमारी हृदय पातालवाहिनी राजतरंगिणी हौ। कश्मीर भू स्वर्णमयी नीलमणि प्रभवा है तुम भी इन्हीं अनेक सम्बन्धों से समझो या केवल हमारे हृदय सम्बन्ध से यह ग्रन्थ तुम को समर्पित है।

भूमिका

भारतवर्ष के निर्मल आकाश में इतिहास चन्द्रमा का दर्शन नहीं होता, क्यौंकि भारतवर्ष की प्राचीन विद्याओं के साथ इतिहास का भी लोप हो गया। कुछ तो पूर्व्व समय में शृंखलाबद्ध इतिहास लिखने की चाल ही न थी और जो कुछ बचा बचाया था वह भी कराल काल के गाल में चला गया। जैनों ने वैदिकों के ग्रन्थ नाश किए और वैदिकों ने जैनों के। एक राजधानी में एक वंश राज्य करता था। जब दूसरे वंश ने उस को जीता तो पहले वंश की सम्पूर्ण वंशावली के ग्रन्थ जला दिए। कवियों ने अपने अन्नदाता की झूठी प्रशंसा की कहानी जोड़ लीं और उन के जो शत्रु थे उन की सब कीर्त्ति लोप कर दीं। यह सब तो था ही, अन्त में मुसलमानों ने आकर जो कुछ बचे बचाए ग्रन्थ थे जला दिए। चलिए छुट्टी हुई। ऐसी काली घटा छाई कि भारतवर्ष के कीर्तिचन्द्रमा का प्रकाश ही छिप गया। हरिश्चन्द्र, राम, युधिष्ठिर ऐसे महानुभावों की कीर्ति का प्रकाश अति उत्कट था इसी से घनपटल को वेध कर अब तक हम लोगों के अंधेरे दृश्य को आलोक पहुंचाता है। किन्तु ब्रह्मा से लेकर आज तक और जितने बड़े बड़े राजा या वीर या पंडित या महानुभाव हुए किसी का समाचार ठीक ठीक नहीं मिलता। पुराणादिकों में नाम मिलता है तो समय नहीं मिलता।

ऐसे अंधेरे में काश्मीर के राजाओं के इतिहास का एक तारा जो हम लोगों को दिखलाई पड़ता है इसी को हम कई सूर्य्य से बढ़ कर समझते हैं। सिद्धान्त यह कि भारतवर्ष में यही एक देश है, जिस का इतिहास शृंखलाबद्ध देखने में आता है और यही कारण है कि इस इतिहास पर हमारा ऐसा आदर और आग्रह है।

कश्मीर के इतिहास में कल्हण कवि की राजतरंगिणी ही मुख्य है। यद्यपि कल्हण के पहले सुव्रत, क्षेमेन्द्र, हेलाराज, नीलमुनि, पद्यामिहिर और श्री छविल्लभट्ट आदि ग्रन्थकार हुए हैं, किन्तु किसी के ग्रन्थ अब नहीं मिलते। कल्हण ने लिखा है कि हेलाराज ने बारह हजार ग्रन्थ कश्मीर के राजाओं के वर्णन के एकत्र किए थे। नीलमुनि ने इस इतिहास में एक बड़ा सा पुरांण ही बनाया था। किन्तु हाय! अब वे ग्रन्थ कहीं नहीं मिलते। कश्मीर के बचे बचाए जितने ग्रन्थ थे सब दुष्टों ने जला दिए। आर्य्यों की मन्दिर मूर्त्ति आदि में कारीगरी कीर्त्तिस्तम्भादिकों के लेख और पुस्तकों

का इन दुष्टों के हाथ से समूल नाश हो गया। परशुरामजी ने राजाओं का शरीर मात्र नाश किया, किन्तु इन्होंने देह, बल, विद्या, धन, प्राण की कौन कहै कीर्त्ति का भी नाश कर दिया।

कल्हण ने जयसिंह के काल में सन 1148 ई. में राजतरंगिणी बनाई। यह कश्मीर के अमात्य चम्पक का पुत्र था और इसी कारण से इस को इस ग्रन्थ के बनाने में बहुत सा विषय सहज ही में मिला था।

इस के पीछे जोनराज ने 1412 में राजावली बना कर कल्हण से लेकर अपने काल तक के राजाओं का उसमें वर्णन किया। फिर उस के शिष्य श्री वरराज ने 1477 में एक ग्रन्थ और बनाया। अकबर के समय में प्राज्यभट्ट ने इस इतिहास का चतुर्थ खंड लिखा। इस प्रकार चार खंडों में यह कश्मीर का इतिहास संस्कृत में श्लोकबद्ध विद्यमान है।

महाराज रणजीत सिंह के काल में जान मैकफेयर नामक एक यूरोपीय विद्वान् ने कश्मीर से पहले पहल इस ग्रन्थ का संग्रह किया। विल्सन साहब ने एशियाटिक रिसर्चेज में इस के प्रथम छह सर्ग का अनुवाद भी किया था।

इसी राजतरंगिणी ही से यह इतिहास मैंने लिखा है। इस में केवल राजाओं के समय और बड़ी बड़ी घटनाओं का वर्णन है। आशा है कि कोई इस को सविस्तर भी निर्माण कर के प्रकाश करैगा।

राजतरंगिणी छोड़ कर और और भी कई ग्रन्थों और लेखों से इस में संग्रह किया है। यथा आइने अकबरी,...का फारसी इतिहास, एशियाटिक सोसाइटी के पत्र, विल्सन, विल्फर्ड, प्रिंसिप, कनिंगहम, टॉड, विलिअम्स, गोशेन और ट्रायर आदि के लेख, बाबू जोगेशचन्द्रदत्त की अंगरेजी तावाख, दीवान कृपारामजी की फारसी तवारीख आदि।

बहुतों का मत है कि कश्मीर शब्द कश्यपमेरु का अपभ्रंश है। पहिले पहल कश्यप मुनि ने अपने तपोबल से इस प्रदेश का पानी सुखा कर इस को बसाया था। इन के पीछे गोनर्द तक अर्थात् कलियुग के प्रारम्भ तक राजाओं का कुछ पता नहीं है। गोनर्द से ही राजाओं का नाम शृंखलाबद्ध मिलता है। मुसलमान लेखकों ने इस के पूर्व्व के भी कई नाम लिखे हैं, किन्तु वे सब ऐसे अशुद्ध और प्रति शब्द में खां उपाधि विशिष्ट हैं कि उन नामों पर श्रद्धा नहीं होती।

गोनर्द से लेकर सहदेव तक पूर्व्व में सैंतीस सौ बरस के लगभग डेढ़ सौ हिन्दू राजाओं ने कश्मीर भोगा, फिर पूरे पांच सौ बरस मुसलमानों ने इस का उत्पीड़न किया। (बीच में बागी होकर यद्यपि राजा सुखजीवन ने 8 बरस राज्य किया था पर उस की कोई गिनती नहीं) फिर नाममात्र को कश्मीर कृस्तानी राज्यभुक्त होकर आज चौंसठ बरस से फिर हिन्दुओं के अधिकार में आया है। अब ईश्वर सर्व्वदा इस को उपद्रवों से बचावै। एवमस्तु।

काश्मीर की संक्षिप्त वंशपरम्परा

कश्मीर के वर्त्तमान महाराज की संक्षिप्त वंशपरम्परा यों है। ये लोग कछवाहे क्षत्री हैं। जैपुर प्रान्त से सूर्य्यदेव नामक एक राजकुमार ने आकर जम्बू में राज्य का आरम्भ किया। उस के वंश में भुजदेव, अवतारदेव, यशदेव, कृपालुदेव, चक्रदेव, विजयदेव, नृसिंहदेव, अजेनदेव और जयदेव ये क्रम से हुए। जयदेव का पुत्र मालदेव बड़ा बली और पराक्रमी हुआ। इस ने हंसी हंसी में पचास पचास मन के जो पत्थर उठाए हैं वह उस की अचल कीर्त्ति बन कर अब भी जम्बू में पड़े हैं। उस के पीछे हंबीरदेव, अजेव्यदेव, वीरदेव, घोगड़देव, कर्पूरदेव और सुमहलदेव क्रम से राजा हुए। सुमहल देव के पुत्र संग्रामदेव ने फिर बड़ा नाम किया आलमगीर इन की वीरता से ऐसा प्रसन्न हुआ कि महाराजगी का पद छत्र चंवर सब कुछ दिया। ये दक्षिण की लड़ाई में मारे गए। इन के पुत्र हरिदेव ने और उन के पुत्र गजसिंह ने राज को बहुत ही बसाया। सब प्रकार के नियम बांधे और महल बनवाए। गजसिंह के पुत्र ध्रुवदेव ने बहुत दिन तक ऐश्वर्यपूर्व्वक राज्यकिया। ध्रुवदेव के रणजीतदेव और सूरतसिंह पुत्र थे। रणजीतदेव को ब्रजराजदेव और उन को निज परम्परा सम्पूर्णकारी सम्पूणदिव हुए। सम्पूणदिव को संतति न होने के कारण रणजीतदेव के दूसरे पुत्र दलेल सिंह के पुत्र जैत सिंह ने राज्य पाया। महाराज रणजीत सिंह लाहौर वाले के प्रताप के समय में जैत सिंह को पिनशिन मिली और जम्बू का राज्य लाहौर में मिल गया। जैत सिंह के पुत्र रघुबीर देव के पुत्र पौत्र अब अम्बाले में हैं और सरकार अंगरेज से पिनशिन पाते हैं। ध्रुवदेव के दूसरे पुत्र सूरत सिंह को जोरावर सिंह और मियां मोटा सिंह दो पुत्र थे। मियां मोटा को विभूति सिंह और उन को एक पुत्र व्रजदेव हैं, जिन को वर्त्तमान महाराज जम्बू ने कैद कर रक्खा है। जोरावर सिंह को किशोर सिंह और उन को तीन पुत्र हुए, गुलाब सिंह, सुचेत सिंह और ध्यान सिंह। महाराज गुलाब सिंह ने महाराजाधिराज रणजीत सिंह से जम्बू का राज्य फिर पाया। सुचेत सिंह का वंश नहीं रहा। राजा ध्यान सिंह को हीरा सिंह, जवाहर सिंह और मोती सिंह हुए, जिन में राजा मोती सिंह का वंश है। महाराज गुलाब सिंह के उद्धव सिंह, रणधीर सिंह और रणवीर सिंह तीन पुत्र हुए। प्रथम दोनों नौनिहाल सिंह और राजा हीरा सिंह के साथ क्रम से मर गए, इस से महाराज रणवीर सिंह वर्त्तमान जम्बू और

कश्मीर के महाराज ने राज्य पाया। इन के एक वैमात्रेय भाई मियां हट्टू सिंह हैं, जिन को महाराज ने कैद कर रक्खा था, पर सुनते हैं कि आजकल वह कैद से निकल कर नैपाल प्रान्त में चले गए हैं। सन 1861 में महाराज को जी.सी.एस.आई. का पद सर्कार ने दिया और 1862 में दत्तक लेने का आज्ञापत्र भी दिया। इन को 21 तोप की सलामी है। दिल्ली दरबार में इन को और भी अनेक आदरसूचक पद मिले हैं। ये संस्कृत विद्या और धर्म्म के अनुरागी हैं। इन को तीन पुत्र हैं यथा युवराज प्रताप सिंह, कुमार राम सिंह और कुमार अमर सिंह[1]।

राजतरंगिणी की समालोचना

जिस महाग्रन्थ के कारण हम लोग आज दिन कश्मीर का इतिहास प्रत्यक्ष करते हैं उस के विषय में भी कुछ कहना यहां बहुत आवश्यक है। इस ग्रन्थ को कल्हण कवि ने शाके 1070 एक हजार सत्तर में बनाया था। उस समय तीसरे गोनर्द से तेईस सौ तीस बरस बीत चुके थे। इस ग्रन्थ की संस्कृत क्लिष्ट और एक विचित्र शैली की है। कवि के स्वभाव का जहां तक परिचय मिला है ऐसा जाना जाता है कि वह उद्धत और अभिमानी था, किन्तु साथ ही यह भी है कि उस की गवेषणा अत्यन्त गम्भीर थी। नीलपुराण छोड़ कर ग्यारह प्राचीन ग्रन्थ इस ने इतिहास के देखे थे। केवल इन्हीं ग्रन्थों के भरोसे इस ने यह ग्रन्थ नहीं बनाया वरंच आजकल के पुरातत्ववेत्ता (Antiquarians) की भांति प्राचीन राजाओं के शासनपत्र, दानपत्र तथा शिवालय आदि की लिपि भी इस ने देखी थी। (प्रथम तरंग 15 श्लोक देखो) यह मन्त्री का पुत्र था, इस से सम्भव है कि इन वस्तुओं को देखने में इस को इतना परिश्रम न पड़ा होगा जितना यदि कोई साधारण कवि बनाता तो उस को पड़ता। इस ग्रन्थ में आठ हजार श्लोक हैं। साढ़े छह सौ बरस कलियुग बीते कौरव पांडवों का युद्ध हुआ था, यह बात इसी ने प्रचलित की है। जरासन्ध के युद्ध में कश्मीर का पहला राजा गोनर्द मारा गया। यहां से कथा का आरम्भ है।[2] इसी आदि गोनर्द के पुत्र को श्रीकृष्ण

---

[1] वर्त्तमान महाराज के परिषदवर्ग भी उत्तम हैं। इन के एक बड़े शुभचिन्तक पंडित रामकृष्णजी को कई वर्ष हुए लोगों ने षड्चक्र कर के राज्य से अलग कर दिया था और अब उन के पुत्र पंडित रघुनाथजी काशी में रहते है। महाराज के अमात्य दीवान ज्वाला सहाय के पौत्र दीवान कृपाराम के पुत्र अनन्तरामजी हैं, जो अंगरेजी फारसी आदि पढ़े और सुचतुर हैं। बाबू नीलाम्बर मुकर्जी, पंडित गणेश चौबे प्रभृति और भी कई चतुर लोग राज्यकार्य में दक्ष हैं।

[2] इस ग्रन्थकर्त्ता के पिता श्रीयुत कविवर गिरिधरदासजी ने अपने जरासन्धवध नामक महाकाव्य में जरासन्ध की सेना में कश्मीर के आदि गोनर्द के वर्णन में कई एक छन्द लिखा है वह भी प्रकाश किया जाता है। (3 सर्ग 40 छन्द)

चलेउ भूप गोनर्द बर्द वाहन समान बल।
संग लिए बहु मर्द सर्द लखि होत अपर दल॥ →

ने गान्धार देश के स्वयंवर में मारा और उस की सगर्भा रानी को राज्य पर बैठाया। उस समय श्रीकृष्ण ने कश्मीर की महिमा में एक पुराण का श्लोक कहा। (1 त. 32 श्लोक) यही प्रकरण इस बात का प्रमाण है कि कश्मीर का राज्य बहुत दिन

→ फेंटा सीस लपेटा गल मुकुता की माला,
सिर केसर को पुंड्र धरे पचरंग दुसाला।
रथ चारु जराऊ सोहती रूप सवन मन मोहतो,
कश्मीर भूप भरि रिसि लसी मथुरापुर दिसि जोहतो॥
(6 सर्ग 25 छन्द)

छप्पय

मद्रक सुंभक पनस किंपुरुष द्रुम नृप कोसल,
सोमदत्त वाल्हीक भूरि सह भूरिस्रवा सल।
युधामन्यु गोनर्द अनामय पुनि उतमौजा,
चेकितान अरु अंग बंग कालिंग महौजा।
नृप बृहत छत्र कैसिल सुहित आहुति सहित भुआल सब
चढ़ि लरैं द्वार पश्चिम जबर, अरि पश्चिम गति देन ढव॥
(10 सर्ग 11 छन्द)
कैसिक नृप अति विक्रमवन्त। अरिमरदन संग भिर्‌यो तुरन्त॥
धरम वृद्ध गोनर्द महीप। करन लगे रथ जोरि समीप॥11॥

हरिगीत छन्द

तहं काश्मीरी भूमिपति गोनर्द धनु टंकारि कै।
भट धर्म वृद्धहि छाय दीनो मारु मारु पुकारि कै।
सुफलक सुवन धनु धारि निज अहि सरिस बान प्रहारिकै।
सब काटिकै दुसमन बिसिख महि मध्य दीनो डारिकै॥95॥
गोनर्द तब बोलत भयौ तू ज्वान प्रगट लखात है।
क्यों धर्म्म वृद्ध कहात है आचरज यह अधिकात है।
पै एक बात विचारि करि सन्देह मेरो जात है।
रन धरम वृद्धन को धरै अति सिथिल तेरो गात है॥96॥
जदुवीर अब बालत भयो नृप सांच तोहि बातैं कहै।
हम धर्म वृद्ध कहात हैं पै करम वृद्ध नहीं अहैं।
अरु धर्म वृख को नाम है सो वृद्ध बहु दिन को भयो।
गोनरद तू रद रहित बूढ़ो पतिहि क्यों चाहै नयो॥97॥
इमि बचन सुनि सुफलक सुवन के कासमीरी कोपि कै।
बहु बरखि आयुध वारिधर सम दियो पर रथ लोपि कै।
तिमि धर्म वृद्ध बजाय धनु सर त्याग कीने चोपि कै।
गोनर्द सस्र उड़ाय कै गरज्यो विजय पन रोपि कै॥98॥

से प्रतिष्ठित है। इस रानी के पुत्र का नाम द्वितीय गोनर्द हुआ, जो महाभारत के युद्ध में मारा गया। इसी से स्पष्ट है कि पूर्वोक्त तीनों राजा जवानी ही में मरे, क्यौंकि एक पांडवों के काल में तीनों का वर्णन आया है। इन लोगों के अनेक काल पीछे अशोक राजा जैनी हुआ। इसी ने श्रीनगर बसाया। इस के पीछे जलौकराजा प्रतापी हुआ, जिस ने कान्यकुब्जादि देश जीता। यह शैव था। (भारतवर्ष में मूर्त्तिपूजा और शैव वैष्णवादि मत बहुत ही थोड़े काल से चले हैं यह कहने वाले महात्मागण इस प्रसंग को आंख खोल कर पढ़ैं) (1 त. 113 श्लो.)। फिर हुष्क, जुष्क और कनिष्क ये तीन विदेशी (Bactro-Indian tribe) राजा हुए। इन के समय में शाक्य सिंह को हुए डेढ़ सौ बरस हुए थे। (1 त. 172 श्लो.) इस से स्पष्ट होता है कि राजतरंगिणी के हिसाब से शाक्य सिंह को हुए पचीस सौ बरस हुए। इसी समय में नागार्जुन नामक सिद्ध भी हुआ। इन के पीछे अभिमन्यु के समय में चन्द्राचार्य्य ने व्याकरण के महाभाष्य का प्रचार किया और एक दूसरे चन्द्रदेव ने बौद्धों को जीता। कुछ काल पीछे मिहिर कुल नामक एक राजा हुआ। इस के समय की एक घटना विचारने के योग्य है। वह यह कि इस की रानी सिंहल का बना रेशमी कपड़ा पहने थी। उस पर वहां के राजा के पैर की सोनहली छाप थी। इस पर कश्मीर के राजा ने बड़ा क्रोध किया और लंका जीतने चला। तब लंकावालों ने 'यमुषदेव' नामक सूर्य्य के बिम्ब के झापे का कपड़ा देकर उस से मेल किया। (1 त. 300 श्लो.) इस से स्पष्ट होता है कि चांदी सोने से कपड़ा छापना लंका में तभी से प्रचलित था। अद्यापि दक्षिण हैदराबाद में (लंका के समीप) छापा अच्छा होता है। उस समय का भट्टि (Bhatti), दारद (Dardareans) और गान्धार (Kandharians) ब्राह्मण होते थे।

फिर तुंजीन नामक राजा के समय में चन्द्रक कवि ने नाटक बनाया। (2 त. 16 श्लो.) इस के समय में एक बात और आश्चर्य की लिखी है कि एक समय बड़ा काल पड़ा था तो परमेश्वर ने कबूतर बरसाए थे। (2 त. 51 श्लो.) और हर्ष नामक एक कोई और राजा उस काल में हुआ था। इस राजा के कुछ काता पीछे सन्धिमान राजा की कथा भी बड़ी आश्चर्य की लिखी है कि वह सूली दिया गया था और फिर जी गया इत्यादि। विक्रमादित्य के मरने के थोड़े ही समय पीछे प्रवरसेन राजा के नाव का पुल बांधा और वह ललाट में त्रिशूल की भांति तिलक देता था (3 त. 356 और 367 श्लो.)।

जयापीड़ राजा का समय फिर ध्यान देने के योग्य है, क्योंकि इस के समय में कई पंडित हुए हैं, जिन में शंकु नामक कवि ने मम्म और उत्पल की लड़ाई में भुवनाभ्युदय नामक काव्य बनाया था (4 त. 25 श्लो.) इसी के समय में वामन नामक वैयाकरण पंडित हुआ है जिस की कारिका प्रसिद्ध है। (4 त. 487 से 494 श्लो. तक) इसी वामन का बोपदेव ने खंडन किया है। (बोपदेव महाग्राहग्रस्तो वामने कुंजरः)

इस से बोपदेव जयापीड़ के समय (75 ई.) के पीछे हुए हैं यह सिद्ध होता है। जयापीड़ ने द्वारका फिर से बसा कर मन्दिर बनवाए। (4 त. 560 श्लो) और उस समय नेपाल का राजा अरमुड़ि था (4 त. 529 श्लो.)।

राजा शंकरवर्म्मा का समय भी दृष्टि देने योग्य है। इस के पास 300 हाथी, लाख घोड़े और नौ लाख प्यादे थे। उस समय गुजरात में 'खालान खान' का जोर था। दरद और तुरुष्क देश के राजा भारत में बड़ा उपद्रव मचाए हुए थे। लल्लियशाह खालानखान का सरदार था (5 त. 153 से 160 श्लो. तक)। इस ग्रन्थ में मुसलमानों का वर्णन पहिले यहीं आया है। इस से स्पष्ट होता है कि ईसवी नौवीं शताब्दी के अन्त तक जो मुसलमान चढ़ाई करते थे वे गुजरात की राह से करते थे; उत्तर पश्चिम की राह नहीं खुली थी। इस तरंग में कायस्थों की बड़ी निन्दा की है (4 त. 625 श्लो. से और 5 त. 179 श्लो. आदि)।

चतुर्थ और पंचम तरंग में कई बात और दृष्टि देने के योग्य है। जैसे तांबे की 'दीनार' पर राजाओं का नाम खुदा रहना। (4 त. 620 श्लोक) जहां पथिक टिकें उस स्थान का नाम गंज (4 त. 592 श्लो.)। रुपयों की हुंडिका (हुंडी) का प्रचार। (5 त. 159 श्लो.) भेष के ताजे चमड़े पर खड़े होकर तलवार ढाल हाथ में लेकर शपथ खाना इत्यादि (5 त. 330 श्लो.) इसी तरंग में गानेवालों का नाम डोम लिखा है। (5 त. 358 श्लो.) यह दीनार, गंज, हुंडी और डोम शब्द अब तक भाषा में प्रचलित हैं, वरंच मीरहसन ने भी 'डोमनपना' लिखा है। जैसा इस काल में रंडी और इनकी बुढ़िया तथा भंडुओं के समझने की और साधारण लोग जिस में न समझैं[1] ऐसी एक भाषा प्रचलित है, वैसी ही उस काल में भी थी। गानेवाले को हेलू गांव दिया गया, इस की उस काल की भाषा हुई 'रसस्सहल्लुदिराणा' (5 त. 402 श्लो.)

षष्ठ तरंग में दिद्दारानी का उपद्रव और बहुत से राजाओं के नाम के पूर्व्व में शाहि पद ध्यान देने के योग्य है।

सप्तम तरंग (53 श्लो.) में हम्मीर नाम का एक राजा तुंग के समय में और (190 श्लो.) अनन्त के समय में भोज का राजा होना लिखा है। मान के हेतु लोगों को ठाकुर की पदवी दी जाती थी। (7 त. 29 श्लो.) तुरुष्क देश से सोने का मुलम्मा करने की विद्या हर्ष के समय में आई। (7 त. 53 श्लो.) इसी के काल में खस लोगों ने पहिले पहल बन्दूक का युद्ध किया। (7 त. 984 श्लो.) कलिंजर के राजा, राजा उदयसिंह आदि कई राजाओं के प्रसंग से (1300 श्लो. के आसपास) नाम

---

[1] वर्त्तमान काल में रंडियों की भाषा का कुछ उदाहरण दिखाते हैं। नगर की वारबधूगण की संकेत भाषा यथा—लूरा पुरुष, लूरी रंडी, चीसा अच्छा बीला बुरा, भीमटा रुपया आदि। ग्राम्य रंडियों की भाषा यथा सेरुआ पुरुष, सेरुइ स्त्री, कनेरी रुपया, सेमिल अच्छा है और छौलिआयल्यः अर्थात् रुपया सब ठग लो।.

आए हैं। युद्ध हारने के समय क्षत्रानियां राजपूताने की भांति यहां भी जल जाती थीं। (7 त. 1500 श्लो.)

अष्टम तरंग में भी कायस्थों की बहुत निन्दा की है। (8 त. 89 श्लो. आदि) कैदियों को भांग से रंग कर कपड़ा पहनाते थे। (8 त. 96 श्लो.) कल्याण के हेतु लोग भीष्मस्तवराज, गजेन्द्रमोक्ष, दुर्गापाठ आदि का पाठ करते थे (8 त. 106 श्लो.) टकसाल का नाम टंकशाला। (8 त. 152 श्लो.) उस समय में भी राजाओं को इस बात का आग्रह होता था कि उन्हीं के नाम के सिक्के का प्रचार विशेष हो। इस समय (बारहवीं शताब्दी के मध्य में) कालिंजर का राजा कल्ह था। (8 त. 205 श्लो.) कटार को कट्टार कहते थे। (8 त. 515 श्लो.) हर्ष का सिर काट कर लोगों ने भाले पर चढ़ाया, किन्तु इस के पहिले किसी राजा के सिर काटने की चाल नहीं थी। हर्ष का व्याख्यान इस तरंग में अवश्य पढ़ने के योग्य है, जिस से शृंगार, वीर आदि रसों का हृदय में उदय होकर अन्त में वैराग्य आता है।

राजतरंगिणी में राम लक्ष्मण की मूर्त्ति का पृथ्वी के भीतर से निकलना इस बात का प्रमाण है कि मूर्त्तिपूजा यहां बहुत दिन से प्रचलित है।

इस में देवी, देवता, भूत, प्रेत और नागों की अनेक प्रकार की आश्चर्य कथा हैं जिन को ग्रन्थ बढ़ने के भय से यहां नहीं लिखा। और भी वृक्ष, शस्त्र, औषधि और मणि आदिकों के अनेक प्रकार के वर्णन हैं। कोई महात्मा इस का पूरा अनुवाद करैंगे तो साधारण पाठकों को इस का पूर्ण आनन्द मिलैगा।

इस में एक मणि का वर्णन बड़ा आश्चर्यजनक है। एक बेर राजा नदी पार होना चाहता था किन्तु कोई सामान उस समय नहीं था। एक सिद्ध मनुष्य ने जल में एक मणि फेंक दी, उस से जल हट गया और सेना पार उतर गई। फिर दूसरी मणि के बल से इस मणि को उठा लिया। एक कहानी ऐसी और भी प्रसिद्ध है कि किसी राजा की अंगूठी पानी में गिर पड़ी। राजा को उस अमूल्य रत्न का बड़ा शोच हुआ। यह देख कर मन्त्री ने अपनी अंगूठी डोरे में बांध कर पानी में डाली। मन्त्री के अंगूठी के रत्न में ऐसी शक्ति थी कि अन्य रत्नों को वह खींच लेती थी, इस से राजा की अंगूठी मिल गई।

हर्षदेव

हर्षदेव के विषय में यद्यपि राजतरंगिणी में कुछ विशेष नहीं लिखा है किन्तु इस राजा का नाम भारतवर्ष में बहुत प्रसिद्ध है और एक इस बात की प्रसिद्धि पर कि रत्नावली इत्यादि काव्यग्रन्थ उस के समय में बने थे। इस राजा पर मेरी विशेष दृष्टि पड़ी। इस का समय विक्रम और कालिदास के समय के बहुत पीछे स्पष्ट होने से इस बात की मुझ को बड़ी चिन्ता हुई कि वह कौन पुण्यात्मा श्री हर्ष है, धावक ने जिस की कीर्त्ति आचन्द्रार्क स्थिर रक्खी है। वह श्री हर्ष निश्चय मम्मट, कालिदासादि के पूर्व्व और वत्सराज के पश्चात् हुआ है। वंशावलियों में खोजने से कई हर्ष मिले। यथा मालवा के राजाओं में एक हर्षमेध 191 ई.पू. हुआ है। यह युद्ध में मारा गया और कोई विशेष कथा इस की नहीं है। छतरपुर में एक लिपि में श्री हर्ष नाम का एक राजा बिहल का पुत्र यशोधर्मदेव का पिता लिखा है। और यह लिपि श्री हर्ष के प्रपौत्र की सं. 1019 की है। एक श्री हर्ष नैपाल का राजा 3631 ई.पू. हुआ है। एक विक्रमादित्य जिस का दूसरा नाम हर्ष था मातृगुप्त के समय में हुआ। शक 1000 में एक विक्रम और इस के कुछ ही पूर्व्व कान्यकुब्ज में एक हर्ष नामक राजा हुआ। कालिदास और श्री हर्ष कवि भी इसी काल में थे। जैन लोगों ने लिखा है कि वाराणसी के जयन्तीचन्द नामक राजा के दरबार में श्री हर्ष कवि था। (1089 शक) यह जैनों का भ्रम है। और हर्षो को छोड़ कर कान्यकुब्ज के हर्ष को यदि धावक कवि का स्वामी मानैं तभी कुछ लड़ सब बातों की मिलैगी। जैसा रत्नावली में जिस वत्सराज का चरित है वह कलियुग के प्रारम्भ में उरुक्षेप का पुत्र वत्स था। शुनकवंश का प्रथम राजा एक प्रद्यगेत हुआ है। (3000 ई.पू.) सम्भव है कि इसी प्रद्यगेत की बेटी वत्स को व्याही हो। धावक ने एक उदयन का भी वर्णन किया है। वह पांडवों के वंश की अन्तावस्था में हुआ था। यह सब अति प्राचीन है। इस से 3631 ई.पू. के नैपाल वाले श्रीहर्ष के हेतु धावक ने काव्य बनाया है, यह नहीं हो सकता। कन्नौज में जो श्रीहर्ष नामक राजा था, जिस की सभा में श्रीहर्ष नामक कवि का पिता रहता था वही श्रीहर्ष धावक का स्वामी था। छतरपुर की लिपि का काल 1019 है। चार पुश्त पहले यह काल 850 सम्वत् में जा पड़ैगा। यशोविग्रह के पहले कदाचित् राजविप्लव हुआ हो और श्रीहर्ष से यशोविग्रह तक दो एक राजे और हो गए हों तो

आश्चर्य नहीं। प्रशस्ति के 'क्षमापालमालासुदिवंगतासु' इस पद से ऐसा झलकता भी है। यशोविग्रह से लेकर जयचन्द तक नामों में जितनी प्रशस्ति मिली हैं उन में बड़ा ही अन्तर है। जो ताम्रपत्र मैंने देखा है उस का क्रम यह है—यशोविग्रह, महीचन्द, चन्द्रदेव, मदनपाल, गोविन्देन्द्र और जयचन्द्र। जैनों ने इसी जयचन्द्र को जयन्तीचन्द्र लिखा है और काशी का राजा लिखने का हेतु यह है कि 'तीर्थानि काशीकुशिकोत्तर कौशलेन्द्रस्थानीयकानि परिपालयताभिगम्य' इस पद से स्पष्ट है कि काशी भी उस समय कन्नौजवालों के अधिकार में थी, इसी से काशी का राजा लिखा। और जयचन्द्र के प्रपितामह या उस के भी पिता के काल में जो श्रीहर्ष कवि था उस को जयचंद्र के काल में लिख दिया। छतरपुर की लिप में जो श्रीहर्ष राजा का पुत्र यशोधर्म्म वा वर्म्म लिखा है, वही यशोविग्रह मान लिया जाए और जयचन्द्र उस के बड़े पुत्र का वंश और छतरपुर की लिपि वाले छोटे पुत्र के वंश में हैं, ऐसा मान लीजिए तो विरोध मिट जाएगा। चन्द्रदेव ने 'श्रीमद्गाधिपुराधिराज्यमखिलं दोर्विक्रमेनार्जितम्' इस पर से कान्यकुब्ज का राज्य अपने बल से पाया यह भी झलकता है। इस से यह भी सम्भव है कि श्रीहर्ष का राज्य कन्नौज में शेष न रहा हो और चन्द्रदेव ने नए सिरे से राज्य लिया हो। यशोविग्रह के वंश की कई शाखा हैं इस का प्रमाण प्रशस्तियों के भिन्न भिन्न नामों ही से है। इस से ऐसा निश्चय होता है कि सम्वत 900 के लगभग जो श्रीहर्ष नामक कान्यकुब्ज का राजा था, उसी के हेतु रत्नावली आदि ग्रन्थ बने हैं।[1] कालिदास, विक्रम, भोज सब इस काल के सौ बरस के आसपास पीछे उत्पन्न हुए हैं और इसी से कालिदास ने मालविकाग्निमित्र में धावक का परिचय दिया है। कल्हण कवि ने जो राज़तरंगिणी में कालिदास या इस श्रीहर्ष का नाम नहीं दिया उस का कारण यही है कल्हण का स्वभाव असहिष्णु था और कालिदास से कश्मीर के राजा भीमगुप्त से (जो 975 ई. के काल में राज्य करता था) महा वैर था, इस से उस ने कालिदास का या उस के स्वामी विक्रम का नाम नहीं लिखा। कल्हण प्रायः सभी राजाओं की कुछ कुछ निन्दा कर देता है, जैसा इसी हर्षदेव की, जिस की और स्थानों में बड़ी स्तुति है, कल्हण ने निन्दा की है। और ग्रन्थकारों के मत में श्रीहर्ष बड़ा न्यायपरायण स्वयं महा कवि अति उदार था। पुकार सुनने के हेतु महल की भित्तियों पर घंटियां लटकती थीं। रात दिन गुणियों से घिरा रहता था और अन्त में संसार को असार जानकर त्यागी हो गया। कल्हण से हर्षराज से द्वेष का यह कारण है कि इस के स्वामी जयसिंह का बाप सुस्सल हर्ष के भिक्षाचर को मारकर राज्य पर बैठा था।

[सन 1884 ई. में मल्लिकचन्द एंड कम्पनी काशी से प्रकाशित]

---

[1] पूर्व्व में तुंजनि के काल में एक हर्ष हुआ है यह लिख भी आए हैं।

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ट्रायर के मत से समय	कनिंड्हम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्य काल	विशेष वर्णन
1	आदि गोनर्द	688॥	0	0	1400 ई. पूर्व	35/6	2448 ईसवी पूर्व, जरासन्ध के युद्ध में बलदेवजी ने मारा, प्रिंसिप के मत से1045 ई.पू., नामान्तर गोनन्द वा अंगद, फारसीवालों के मत से राज्य 17 बरस; मुसलमानों का नाम आदि, गन्द।
2	दामोदर	724	0	0	0	35/6	गन्धार देश के स्वयंवर में श्रीकृष्ण ने इसको मारा और इसकी यशोवती रानी को जो सगर्भा थी राज्य पर बैठाया।
3	बालगोनर्द*	754	0	0	0	30	श्रीकृष्ण ने आप आ कर राज पर बैठाया, महाभारत के युद्ध में विद्यमान था।
38	पैंतीस राजे*	1464	0	0	0	710	इन के नाम कर्म कुछ भी विदित नहीं, मुसलमानों के मत से ये पैंतीस नहीं सैंतीस थे और पांडव वंश में थे।
39	लव	1499	0	0	570	35	लोलूर बसाया, नामान्तर बाललव, मुसलमानों का लू, लोलूर में बीस लाख अस्सी हजार मनुष्यों की बस्ती थी, 1709 ई.पू.।
40	कुशेशय	1502/8	0	0	0	3/8	नामान्तर कुश. 1664 ई.पू. मुसलमानों का किशन।
41	खगेन्द्र	1562/8	0	0	0	60	1660 ई.पू. मुसलमानों के मत से काकापुर और कथ नामक नगर बसाए। मुसलमानों का गुलकन्द।

इस चक्र में राजाओं के नाम पर जहां * बनाओ ऐसा चिह्न दिया है वहां समझना चाहिए कि पूर्व वंश समाप्त होकर आगे से नया वंश चला।

42	सुरेन्द्र	1593/2	0	0	0	30/6	मुसलमानों का सुन्दर। 1600 ई.पू. ईरान से माचास्प नामक हकीम को बुलवाया, ईरान के बादशाह बहमन को जीता। निस्सन्तान मरा। मुसलमानों के मत से इसकी बेटी बहमन को ब्याही थी।
43	गोधर	1628/9	0	0	0	35/70	1573 ई.पू.
44	सुवर्ण	1688/9	0	0	0	60	स्वर्ण नदी नाम की नदी पहाड़ खोद कर लाया। मुसलमानों का बसरन।
45	जनक	1694/9	0	0	0	6	1477 ई.पू.
46	शचीनर	1765/9	0	0	0	71	मुसलमानों का संजीनरायन। 1471 ई.पू.।
47	अशोक	1827/9	0	0	0	62	1394 ई.पू. वह शचीनर का भतीजा था। श्रीनगर इसी ने बसाया और जैन मत का प्रचार किया। मुसलमानों ने इसको शुकराज वा शकुनी का बेटा लिखा है। उस काल में श्रीनगर में छह लाख मनुष्य थे।
48	जलौक	1857/9	0	0	0	30	जाति विभाग किया, सप्त प्रकृति स्थापन किया। नन्दिपुराण सुना। इसी को और ग्रन्थकारों ने पटने के अशोक का पोता लिखा है। यवनराजा यूथिदेयुस को हराया। अन्तिओकस के साथ सुलहनामा किया। बड़ा प्रतापी था। 1332 ई.पू. मुसलमानों का चकबक।
49	दामोदरद्वितीय	1882/9	0	0	0	25	1302 ई.पू. शैवमत का प्रचारक हुआ।

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ट्रायर के मत से समय	कनिङ्हम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्य काल	विशेष वर्णन
52	हुष्क, जुष्क और कनिष्क	1942/9	0	0	0	60	1277 ई.पू. ये तीनों तुर्क (किंवा तातार) थे किन्तु बौद्ध थे। शाक्यसिंह को 150 बरस हुए थे। नागार्जुन सिद्ध इन्हीं के समय में हुआ और बौद्धमत को फैलाया।
53	अभिमन्यु	1977/9	0	0	0	35	मुसलमानों का अभिगुन वा अभिबलन। 1217 ई.पू. विल्फर्ड के मत से 423 ई.पू. प्रिंसिप के मत से 73 ई.पू. बौद्धों का उपद्रव हुआ, हिम बहुत पड़ा, चन्द्रदेव ब्राह्मण ने बौद्धों को जीता, नीलपुराण सुना, महाभाष्य का प्रचार हुआ।
54	गोनर्द (3)	2012/9	1182 ई. पूर्व	53/3 ई. पूव्व	1182 ई. पूव्व	35	प्रिंसिप के मत से 108 ई.पू., मुसलमानों ने इसका नाम कृष्ण लिखा है। विल्फर्ड के मत से 388 ई.पू. नागपूजा चलाया।
55	विभीषण	2058/3	1147	61/9	1147	45/6	विल्फर्ड के मत से 370 ई.पू., मुसलमानों के मत से पखनपति नाम राज्यकाल 54/6/7।
56	इन्द्रजित्	2088/9	1096/3	73/1	1096	30/6	वि. 352 मुसलमान लेखकों ने इन्द्रजित् रावण इन दोनों का राज्य 36 वर्ष लिखा है।

57	रावण	2119/3	1058	73/1	1060/6	30/6	वि. 334 मुसलमानों ने इस के बेटे बरवाल का नाम और लिखा है और उस का राज्य भी 35 बरस लिखा है।
58	विभीषण(2)	2154/3	1028	80/8	1030/6	35	वि. 316 मुसलमानों ने लिखा है कि यह त्यागी था। इस का नाम पखनपत था। यह आजाद राजा का बेटा और बड़ा कवि था। पहले इस का ज्येष्ठ पुत्र इन्द्रायन गद्दी पर बैठा किन्तु उसके दुष्कर्मों से दुखी होकर लोगों ने उस को मार डाला और इस को गद्दी पर बैठाया।
59	किन्नर	2194	992/6	89/2	993	39/9	वि. 298, नामान्तर नर, बौद्ध था, मुसलमानों ने इस को बड़ा क्रूर लिखा है और लिखा है कि दो वर्ष मात्र राज्य किया फिर राज्य कुछ दिन शून्य रहा।
60	सिद्ध	2254	952/9	99/2	953/3	60	वि. 280 मुसलमानों ने लिखा है कि धाय इस को छिपाए हुए थी।
61	उपल	2284/6	892/9	114/2	893/3	30/6	वि. 262, आईने अकबरी में इस का नाम आदित्यबल्लभ लिखा है, नामान्तर उत्पलाक्ष, मुसलमानों का गुरुदत्त वा पलाशन, यह आंख का कंजा था।
62	हिरण्य	2322/1	862/3	121/9	862/9	37/7	वि. 244, नामान्तर हिरण्याक्ष, मुसलमानों का हिरन्य।
63	हिरण्यकुल	2382/1	824/8	131/2	825/2	60	वि. 226, मुसलमानों का हिरनकुल।
64	बसुकुल	2442/1	764/8	146/2	765/2	60	वि. 218, आईने अकबरी का एविशाक बड़ा विषयी था।
65	मिहिरकुल	2512/1	704/8	163/8	705/2	70	वि. 200, ट्रायर के मत से नाम मुकुल, लंका पर चढ़ाई की, बड़ा क्रूर था, दारद गान्धरों और भाटियों का प्रागल्य

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ट्रायर के मत से समय	कनिङ्हम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्य काल	विशेष वर्णन
							हुआ, पहाड़ तोड़ कर हाथियों से ढोंके हटाकर एक नदी निकलवाई। लंका में राजा का पैर छपा कपड़ा होता था। यह ऐसा क्रूर था कि एक बेर हाथी का पहाड़ पर से गिरना उसको अच्छा मालूम हुआ इससे सौ हाथी पहाड़ पर से गिरवा दिए। बहुत सी स्त्रियों को भी इसने मार डाला।
66	बक	2548/1	634/8	174/8	635/2	36	वि. 182, मुसलमानों का जंग। इस को एक स्त्री ने बलि दे दिया।
67	क्षितिनन्दन	2578/1	571/8	187/8	572/2	30	वि. 164, क्षितिनन्द वा नन्दन, मुसलमानों का आनन्दकान्त, इसका बेटा कतानन्द, उसको बसुनन्द हुआ।
68	वसुनन्द	2631/1	541/8	195/2	542/2	52	वि. 146, आईने अकबरी का विस्तन्द कामशास्त्र बनाया।
69	नर(2)	2690/1	424/6	208/2	490	60	वि. 128, नामान्तर बर, आईने अकबरी का निर।
70	अक्ष	2750/1	439/6	223/2	430	60	वि. 100, आईने अकबरी का अज। मुसलमान इतिहास लेखकों ने इसका नाम लिखा ही नहीं है।
71	गोपादित्य	2810/1	369/6	238/2	370	60	वि. 82 ई.पू. आईने अकबरी का कुलवती, मुसलमानों का

							कोमानन्द, वैदिक धर्म की उन्नति की।
72	गोकर्ण	2867/1	309/6	253/2	310	57	वि. 64 ई.पू. आ.अ. का करन।
73	नरेन्द्रादित्य	2903/4	251/7	269/11	253	36/3	वि. 46 ई.पू. आ.अ. का नरेन्द्रावत, मुसलमानों का नरानन्द, नामान्तर खिंखिल।
74	अन्धयुधिष्ठिर*	2937/4	215/4	279	216/9	34	वि. 28 ई.पू. अन्धसंज्ञा कमती सूझने से हुई, विषयी था। अन्त में राज्य छोड़ कर भाग गया।
75	प्रतापादित्य	2969/4	167/3	287/6	168/9	32	वि. 10 ई.पू. किसी विक्रमादित्य का नातेदार था। मुसलमानों के मत से नाम बरतपात है और मालवा से वहां जाकर राजा हुआ।
76	जलौक(2)	3001/4	135/3	303/6	136/9	32	वि. 22 ई. सन् आ.अ. का जगुह।
77	तुंजीन*	3029/4	103/3	319/6	104/9	26	वि. 54 ई. मुसलमानों ने इस का नाम शनीचर और इस की रानी का नाम दक्षिणा लिखा है। नामान्तर बंजीर। बड़ा भारी काल पड़ा, खजाना सब गरीबों को बांट दिया। आकाश से लोगों के घर में कबूतर गिरे, बड़ा धर्मात्मा था। चन्द्रक कवि ने नाटक काव्य बनाए।
78	विजय	3035/4	67/3	338/6	66/9	88	वि. 90 ई. नामान्तर वेजिरी, मुसलमानों का विजयमल्ल।
79	जयेन्द्र	3072/4	59/3	341/6	60/9	37	वि. 98 ई. नामान्तर चन्द्र; मुसलमानों का विजयेन्द्र।
80	सन्धिमान	3119/4	22/3	369	23/9	47	नामान्तर आर्य्यराज, जयेन्द्र का मन्त्री था। इस के विषय में यह विचित्र बात प्रसिद्ध है कि फांसी पड़कर मरकर

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ट्रायर के मत से समय	कनिङ्हम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्य काल	विशेष वर्णन
							फिर जिया था। मुहम्मद अज़ीम ने अपने फारसी इतिहास में लिखा है कि जिस समय सन्धिमान शूली पर मर गया, उसी काल में राजा भी मर गया। तब प्रजा लोगों ने सन्धिमान मन्त्री के पुत्र अरिराय को राज पर बैठाया और इस भांति सन्धिमान के कपाल का लिखा पूरा हुआ। अरिराय विरागी होकर जंगल में चला गया। फिर युधिष्ठिर का पोता गोपाल राजा, जो बड़ा ही सुन्दर था, राजा हुआ, अपने ससुर खता के बादशाह की मदद से काश्मीर का राजा हुआ था और सूरत तक जीता।
81	मेघवाहन	3153/4	24/9 ई.सन	383	23/3 ई.सन	34	गान्धार (कन्दहार) का था, वहां के राजा गोपादित्य ने इस को पाला था। बौद्धों को बसाया।
82	श्रेष्ठसेन	3183/4	58/9	400	57/9	30	मुसलमानों के अनुसार खता के बादशाह की बेटी इस को ब्याही थी। इस ने प्रत्यक्ष पशु से घृणा करके पिष्ट की चाल चलाई। रुपये को दीनार कहते थे, आईने अकबरी

							का मेगदहन।
83	हिरण्य* (2)	3213/6	88/9	415	87/3	30/2	तोरमान कुमार का प्रतिद्वन्द्वी था। मुसलमानों ने लिखा है कि इसका भाई पुरवाहन इसका मन्त्री था।
84	मातृगुप्त*	3217/3	117/11	430	118/5	4/9	विक्रमादित्य ने उज्जैन से भेजा। जाति का ब्राह्मण था। इस विक्रमादित्य का नाम हर्ष था। उस काल में लोग ललाट में त्रिशूल की मुद्रा देते थे। किन्तु कालिदास वाला विक्रम नहीं है।
85	प्रबरसेन	3277/3	123/8	432/6	122/2	60	यह प्राचीन वंश का था। शिलादित्य नामक गुजरात के राजा के लड़ा। मुसलमानों के अनुसार पुरवाहन का बेटा था। श्रीनगर फिर से बसाया। मुसलमानों ने शिलादित्य को विक्रमादित्य का बेटा लिखा है।
86	युधिष्ठिर (2)	3316/3	183/8	464	185/2	39	मुसलमान लेखकों से यहां बड़ा भेद है। वे लिखते है प्रवरसेन का बेटा चन्द्रश्री, उसने 73 वर्ष 3 महीना राज्य किया, उस का बेटा लक्ष्मण, राज्यकाल 3 बरस उस का बेटा जयादित्य।
87	नरेन्द्रादित्य	3316/11/3	204/11	483	224/5	0/813	इसी का नामान्तर कोई लक्ष्मण मानते है वा नन्द्रावत। इस का
88	रणादित्य	3616/11/13	217/11	490	237/5	300	राज्यकाल ग्रन्थ में तीन सौ वर्ष लिखने से अनुमान होता है कि इस के पीछे के कुछ राजाओं के नाम छूट गए हैं। चोलराज की बेटी ब्याही। मुसलमानों ने लिखा है कि महात्मा मुहम्मद इसी के समय में उत्पन्न हुए थे

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ट्रायर के मत से समय	कनिड्हम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्य काल	विशेष वर्णन
							और इस को राज्य करते जब 258 वर्ष बीते थे तब वह मक्के से मदीने गए अर्थात् सन हिजरी आरम्भ हुआ।
89	विक्रमादित्य	3659/11/13	517/11	555/6	537/5	42	
90	बालादित्य*	3696/11/13	559/11	576/6	579/5	37	गोनर्दवंश का अन्तिम राजा, मुसलमानों का जयानन्द। मुसलमान लेखकों ने लिखा है कि उपलास नामक एक बड़ा पंडित इसके समय में हुआ। इस के पास पच्चीस हजार खासे के घोड़े और तीन लाख सवार और रात को प्रकाश करने वाले लाल थे। मुसलमानों के अनुसार पहले इस का बेटा चन्द्रानन्द, फिर उस का भाई रवाजीत, फिर उस से छोटा अलतादित गद्दी पर बैठा।
91	दुर्लभवर्धन	3732/11/13	597/3	594/6	615/5	36	नामान्तर प्रज्ञादित्य। कर्कोटक वंश का। यजदिजिर्द (Yezdejerd) का समकालीन।
92	प्रतापादित्य(2)	3782/11/13	633/3	630/6	651/5	50	नामान्तर दुर्लभक।
93	चन्द्रापीड़	3791/7/13	683/3	680/6	701/5	8/8	नामान्तर चन्द्रानन्द। बहुत धार्मिक था। इस के समय में भी क्षमाविक्रम नाम का कोई राजा था।

							मुसलमानों का रवाजीत।
94	तारापीड़	3795/8/7	691/11	689/2	710/1	4/0/24	चमार की एक झोपडी मन्दिर में पड़ती थी। वह नहीं देता था। राजा ने स्वयं उन को राजी किया। कन्नौज के यशोवर्म से लड़ा। खता और खुतन तथा बुखारा गुजरात, तिब्बत, बंगाल तक जीता। बड़ा प्रतापी था। पृथ्वी में से राम लक्ष्मण की मूर्त्ति मिली, उन की प्रतिष्ठा की। सनद और सुलहनामा लिखने की चाल थी। शाहि शब्द सरदारवाचक था। भवभूति महाकवि इसी के समय में था। इस समय में देवताओं के भीतर द्रव्य भी रहता था। राजा लोग जैन मतवालों का भी आदर करते थे।
95	ललितादित्य	3822/3/18	695/11	693/2	714/1	26/7/11	
96	कुवलयापीड़	3823/4/3	732/7	729/9	750/8	1/0/15	मुसलमानों से गुलाम बेंचने की चाल सीखी। मुसलमानों ने ललितादित्य का बेटा रमा वा रणानन्द, उस का पुत्र सगरानन्द या शकानन्द राजा हुआ, यह क्रम लिखा है और इस के पीछे ललितादित्य का छोटा लड़का प्रहस्त गद्दी पर बैठा। 31 वर्ष इन तीनों ने राज्य किया। इसके पीछे विजयानन्द 4 वर्ष राजा रहा, फिर 3 वर्ष सगरानन्द का बेटा रतिकाम राजा रहा और फिर 2 वर्ष असदानन्द राजा हुआ। करकोटक वंश का यह अन्तिम राजा था। इस वंश में 2000 वर्ष 5 महीना 20 दिन राज्य रहा और जब यह वंश समाप्त हुआ तब हिजरी सन 209 था।
97	वज्रादित्य*	3830/4/3	733/7	730/9	751/8	7	

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ट्रायर के मत से समय	कनिङ्हम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्य काल	विशेष वर्णन
98	पृथिव्यापीड़	3834/5/3	740/7	737/9	758/8	41/1	
99	संग्रामापीड़	3834/5/10	744/8	741/11	762/10	0/0/7	
100	जज्ज	3837/5/10	751/8	748/11	769/10	3	जज्ज जयापीड़ का साला था। जब जयापीड़ परदेश गया तब वह राज्य पर बैठ गया।
101	जयापीड़	3868/5/10	754/8	751/11	772/10	31	गौर देश के जयन्त राजा की बेटी ब्याही। गुजरात के राजा भीमसेन को जीता। विद्या का प्रचार किया। (841) महाभाष्य की पुस्तक मंगाई। क्षीर और उद्भट पंडित तथा मनोरथ, शंखदत्त, चटक सन्धिमान और वामन इत्यादि इस की संभा के कवि थे। द्वारका नगर बसाया और मूर्त्ति स्थापना की। तांबे के दीनार अपने नाम के चलाए। उस समय नैपाल का राजा अरमुड़ि था। शम्भु कवि ने भुवनाभ्युदय नामक काव्य मम्म और उत्पल की लड़ाई का बनाया। इस का नामान्तर विजयादित्य था। लोग गंजों में टिकते थे।
102	ललितापीड़	3880/5/10	785/8	782/11	803/10	12	

103	संग्रामा पीड़ (2)	3887/5/10	797/8	794/11	815/10	7	नामान्तर पृथिव्यापीड़।
104	वृहस्पति	3899/5/10	804/8	801/11	822/10	12	नामान्तर चिप्पटजय। वेश्यापुत्र था। इस के पांच भाइयों ने इस के नाम से राज चलाया।
105	अजितापीड़	3935/5/10	816/8	813/11	834/10	36	इन्हीं लोगों ने राज्य पर बैठाया।
106	अनंगापीड़	3938/5/10	852/8	849/11	870/10	3	
107	उत्पालपीड़*	4959/5/10	855/8	852/11	873/10	31	कर्कोटकवंश का अन्तिम राजा।
108	आदित्यवर्मा	4996/5/10	857/8	854/11	875/10	27	नामान्तर अवन्तिवर्मा। बड़ा काल पड़ा। बहुत से इतिहासवेत्ताओं का निश्चय है कि जालन्धर के यादव राजाओं से इस का वंश निकला है। मुसलमानों ने लिखा है कि यह सखतवर्मा (शक्तिवर्मा) का पुत्र था और अपने रिश्तेदार शिववर्मा मन्त्री की सहायता से गद्दी पर बैठा। इस का राज्य अट्ठाईस बरस तीन महीना तीन दिन।
109	शंकरवर्मा	4014/5/10	886/8	883/2	904/1	18	गुर्ज्जर और भोज से लड़ा। बड़ा उद्धत था। नामन्तर श्रीवर्मा या शिववर्मा। मु. राज्यकाल 17 बरस 7 महीना 19 दिन।
110	गोपालवर्मा	4016/5/10	904/8	901/10	922/9	2	जवानी में मारा गया। इस का मन्त्री प्रभाकरदेव बड़ा लोभी था। इस ने अपने जामाता सकुज को शाहराज की पदवी देकर बड़े पद पर पहुंचाया किन्तु यही पीछे से राजा मन्त्री दोनों की मृत्यु का कारण हुआ।

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ट्रायर के मत से समय	कनिङ्हम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्य काल	विशेष वर्णन
111	संकटवर्मा*	4016/6/0	906/8	903/10	924/9	20	वर्मवंश का अन्तिम राजा। मुसलमानों के मत के अनुसार यह गोपालवर्मा का वास्तविक भाई नहीं था, मुंहबोला भाई था।
112	सुगन्धारानी	4018/6	906/9	903/10	924/9	2	पार्थ को राज्य पर बैठाया। शंकरवर्मा की स्त्री थी।
113	पार्थ	4028/6	908/8	905/10	926/9	10	तातारी और एकांग जाति ने उपद्रव किया। निर्जितवर्मा का पुत्र था।
114	निर्जितवर्मा	4036/6	924/9	920/10	941/9	8	पंगु था।
115	चक्रवर्मा	4050/6	925/9	921/10	942/9	14	जातियुद्ध हुआ, राजचक्र में बड़ा गड़बड़ हुआ।
116	सूरवर्मा या शूरवर्मा	4051/6	936/9	937/10	952/9	1	मुसलमानों का शिववर्मा।
117	पार्थवर्मा	4056/6	937/9	932/10	953/9	5	फिर से गद्दी पर बैठा।
118	चक्रवर्मा	4056/6	938/9	933/4	954/3	0	फिर से बैठा।
119	शंकरवर्धन	4056/6	939/3	933/10	954/8	0	राजतरंगिणी में इस का नाम नहीं है। मुसलमानों ने इस का नाम शंकर दास लिखा है और लिखा है कि यह बड़ा ही क्रूर था।

120	चक्रवर्मा	4056/6	939/7	935/4	956/3	0	तीसरी बेर गद्दी पर बैठा।
121	उन्मत्तवर्मा	4058/6	939/11	936/8	957/7	2	अवन्तिवर्मा नामान्तर।
122	शूरवर्मा (2)*	4059/6	941/11	938/10	959/8	1	
123	यशस्करदेव तथा (वर्णद)	4068/6	942	939	960	9	इस के पीछे वर्णट ने 6 दिन राज्य किया। प्रभाकरदेव का पुत्र था। बड़ा ही उत्तम राजा हुआ है। अन्त में फकीर हो गया। कहते हैं कि मम्मट इस समय में था। मुसलमान लेखकों ने लिखा है कि संग्रामदेव का लड़का अमान था। इस को इस की मां ने मार डाला, उस का पुत्र एक बरस राज करके दादी के डर से फकीर हो गया। फिर त्रिभुवनगुप्त और वहमन (भीमगुप्त) गद्दी पर बैठे पर इन की दादी ने इन को मार डाला। फिर विग्रहदेव राजा हुआ। यह दिद्दा का भतीजा था। इस को भी नृसिंहराय नामक दिद्दा के साधक वज़ीर ने मार डाला।
125	संग्रामदेव*	4069	0	948	969	0/6/0	पर्वगुप्त ने मार डाला।
126	पर्वगुप्त	4070/4	951	948	969	9/4	सुरेश्वरी क्षेत्र में मारा गया।
127	क्षेमगुप्त	4074/10	952	950	971	4/6	बौद्धों के बहुत से बिहार तोड़ डाले। किसी के मत से आठ बरस।
128	अभिमन्युगुप्त	4088/8	961	958	979	13/10	
129	नन्दिगुप्त	4089/9	975	972	993	1/1	इस की दादी दिद्दारानी ने इस को मार डाला।

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ट्रायर के मत से समय	कनिड्हम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्य काल	विशेष वर्णन
130	त्रिभुवनगुप्त	4094/9	976	973	994	4	तथा।
132	भीमगुप्त*	4099/9	978	975	996	5	ध्रुवाचार्य और पिचुल पंडित इस की सभा में थे। कालिदास तथा श्रीहर्षादि कवि और एक विक्रम भी इसी के समय में थे। अर्थात् इस समय से हर्ष के राज्यारम्भ तक कवियों के उदय का काल था।
133	दिद्दा	4122/9	982	980	1001	23	पूर्वोक्त तीनों को मार कर राज पर बैठी।
134	संग्रामदेव	4146/9	1006/9	1003/6	1024/7	24	इस के काल में हम्मीर नामक तुर्क ने चढ़ाई की और हार पाई।
135	हरिराज और अनन्त देव	4199/1/7	0	1028	1032	52/4/7	सोमदेव ने वृहत्कथा में अनन्त का पिता संग्रामदेव लिखा। हरि ने 22 दिन मात्र राज्य किया था, फिर अनन्त राजा हुआ। अनन्त ने फौज के लोगों को एक बेर 92 करोड़ काश्मीरी रुपया बांटा था।
136	कलश	4207/2/7	0	1080	1054	8/1	मुसलमानों का गुलशन। विल्हण ने अपने विक्रमांक चरित में इस की बड़ी स्तुति लिखी है। इसकी माता का नाम सुभटा और मामा का नाम लोहराखंडल क्षितपति था। ये लोग वैष्णव उदार और पंडित थे।

139	हर्ष और	4207/3 उत्कर्ष	0	1088	1062	0/0/23	विल्हण ने इनका एक भाई विजयमल्ल नामक और लिखा है। सोमदेव ने वृहत्कथा इसी के समय में बनाई। और लेखकों के मत से इसने 12 वर्ष राज्य किया था। चालुक्य वंश में एक विक्रम उस समय भी था। और लेखकों का मत है कि यह पिता पुत्र भाई सब एक काल में जुदा जुदा राज्य बांट कर करते थे। मुसलमानों ने लिखा है कि 1200 मशालैं नित्य इस की सभा में बलती थीं और बड़ा ही न्यायी था।
138	उदयन	4254/7/2 विक्रम* हर्ष	0	1100	1062	10/4/2	हर्ष से राज्य पाया। नामान्तर उद्दाम विक्रम वा उच्चल। मुसलमानों का वाजिल।
140	शंखराज	4217/7/2	0	1100	1052	0	उच्चल को मार कर राज पर बैठा। नामान्तर रड्ड। इस को उच्चल के भाई सुस्सल ने मार डाला। मुसलमानों ने इसका नाम द्वैन लिखा है।
141	सल्ह	4217/8/22	0	1002/0	1/22		इन राजाओं के समय में बड़ी लड़ाई हुई। मुसलमानों ने इस का नाम असस और इस के भाई का नाम एजिल लिखा है।
142	सुसल्ह	4233/8/22	0	1111	1072	16	मल्लदेव का छोटा बेटा उच्चल का भाई।
143	भिक्षाचर	4234/2/22	0	1127	1088	0/6/0	
144	जयसिंहदेव	4256/2/22	0	1127	1088	22	मुसलमानों का जैनक। मुसलमानों ने इस के राज्य का अन्त 535 हिजरी में लिखा है। राजतरंगिणी बनी। शाके 1070 में यहां तक पूरा हिसाब करने से गत कलि ईसवी हिजरी सम्वत् शाका सब दस पन्द्रह बरस के हेर फेर में ठीक हो जाते हैं।

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ट्रायर के मत से समय	कनिङ्हम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्य काल	विशेष वर्णन
145	परमान	4265/8/22	0	1149	1110	916	
146	वन्दिदेव	4272/8/22	0	1159	1119	7	
147	वोप्यदेव	4281/8/22	0	1166	1126	9	
148	जस्सदेव	4306/8/22	0	1175	1135	25	वोप्यदेव का भाई था, खब्ती था, किसी के मत से 18 बरस।
149	जगदेव	4320/8/22	0	1193	1173	14	
150	राजदेव	4343/8/22	0	1208	1167	23	
151	संग्रामदेव	4359/8/22	0	1231	1190	16	
152	रामदेव	4380/9/22	0	1247	1206	21/1	
153	लक्ष्मणदेव*	4383/3/24	0	1268	1227	3/4	
154	सिंहदेव*	4398/7/24	0	1281	1261	14/4	
155	सिंहदेव (2)*	4417/7/24	0	1292	1270	19	
156	श्रीरिंछण*	4420/4/24	0	1318	1294	3/2	ट्रायर के मत से नाम उदयदेव, भोटवंश का।
157	कोटारानी	4436/10/24	0	1334	2294	16/1	रिछन सुलतान के काल में द्वितीय कालस्वरूप दुल्लच नामक मुग़ल ने (जो न मुसलमान था न हिन्दू) कश्मीर में प्रवेश करके वहां के नगर, मन्दिर, अट्टालिका, बगीचा सब

							निर्मूल कर दिया और मनुष्यों को घास की भांति काट कर देश उजाड़ कर दिया। मानो आर्यों का राज्य नाश होता है यह समझ कर ईश्वर ने कश्मीर की प्राचीन शोभा ही शेष नहीं रक्खी। फिर कोटारानी के साथ उस के पालित दास शाहमीर ने विश्वासघात और कृतघ्नता करके अपने को राजा बनाया और कोटा से विवाह करने को बिचारी (उस ने कोटा) को तंग किया। पहले कोटा भागी किन्तु पकड़ आने पर ब्याह करना स्वीकार किया। ब्याह की महफिल सजी गई। जब दुलहिन शृंगार कर के निकाह पढ़ाने आई, साथ में कटार छिपाकर लाई। ठीक विवाह के समय कटार पेट में मार कर मर गई। अन्त समय कहा 'ले विश्वासघातक जिस शरीर को तू चाहता है यह तेरे सामने है!!! हिन्दुओं का राज्य इसी के साथ समाप्त हुआ। कुछ कम चार हजार बरस आर्य लोगों ने कश्मीर का भोग किया।
158	शाहमीर	4441/0/24	0	1334/6/10	0	3/5	नामान्तर शम्सुद्दीन।
159	जमशैद	4442/11/24		1337/5		1/11	
160	अलाउद्दीन	4454/11/24		1339/4		12	
161	शहाबुद्दीन	4472/11/24		1352/0/23		18	
162	कुतुबुद्दीन	4488/11/24		1370/0/23		16	

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ट्रायर के मत से समय	कनिङ्हम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्य काल	विशेष वर्णन
163	सिकंदर	4512/11/24		1386/0/23		24	तैमूर का आना। यह ऐसा कट्टर मुसलमान था कि केवल कश्मीर के प्राचीन मन्दिर ही नहीं तोड़े, अपने सारे कश्मीर मंडल में संस्कृत के जितने ग्रन्थ मिले सब को दीवार की नींव में डाल दिया!!! हा! आज वे ग्रन्थ होते तो न जाने क्या क्या बात हम लोग जानते।
164	अलीशाह	4519/11/24	0	1410/0/23	0	7	फकीर होकर मक्के चला गया। कोई कहता है कि जैनलाबदीन की कैद में मरा।
165	जैनलाबदीन	4519/11/24		1417/0/23		50	नामान्तर बड्डशाह वा शाही खां। पंचाइत की आदलत (Local Self-Government) जारी किया।
166	हैदरशाह	4571/11/24		1467/0/23		2	बड़ा विषयी था। दीवार के नीचे दब कर मर गया।
167	हसन	4583/11/24		1467/0/23		12	बड़ा विषयी था।
168	मुहम्मद	4585/11/14		1481/0/28		2	
169	फतहशाह	4596/11/14		1483/7/28		11	
170	मुहम्मद (2 बेर)	4627/11/24		1491/7/28		31	

171	फतह (2 बेर)	4649/11/24		1513/5/7		22	
172	मुहम्मद (3 बेर)	4650/11/24		1514/5/7		1	
173	फतह (3 बेर)	4653/11/24		1517/5/7		3	
174	मुहम्मद (4 बेर)	4656/11/24		1520/5/7		3	
175	नाजुकशाह	4664		1527/5/7		7	
176	मुहम्मद (5 बेर)	4667		1530/5/7		3	
177	नाजुकशाह (2 बेर)	4674		1537/5/7		7	शम्सुद्दीन, इस्माइलशाह, इबराहीमशाह, हबीबशाह, अलीशाह और ग़ाज़ीशाह इतने बादशाहों के नाम यहां भिन्न भिन्न तवारीखों में और मिलते हैं।
178	मिरजाहैदर	4678		1541/5/7	0	4	शीओं को बड़ी दुर्दशा से मारा। नाज़ुकशाह के नाम से राज्य करता रहा।
179	हुमायूं	4678		0		11	बीच में हुमायूं के समय से उसके मरने तक कामरान् का काश्मीर में आना और उपद्रव करना और अनेक उपद्रवों में 25 या 30 वर्ष काल नष्ट हुआ।

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ट्रायर के मत से समय	कनिङ्हम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्य काल	विशेष वर्णन
180	गाज़ीशाह	4689				11	मुसलमानों के मत से नौ वर्ष, राजावली में 6 वर्ष। और लोगों का राज्य स्फुट रहा ऐसा लिखा है।
181	हुसैनशाह	4695				6	
182	अली खां आदिलशाह	4704				9	
183	युसुफ़शाह*	4705				1	
184	सैयदमुबारक खां	4706				1	
185	लोहरशाह	4706				0/2	राजावली में लोहर के पुत्र याकूब का राज्य एक वर्ष लिखा है।
186	युसुफ़शाह (2 बेर)	4709				3	
187	याकूबशाह	4710				1	राजा भगवानदास से लड़ कर अपने नाम का सिक्का जारी किया।
188	हुसैनशाह*	4710				0	
189	शमसी चक*	4711				0	

190	अकबर	4730				19	1583 में अकबर ने कश्मीर लिया। इस प्रसिद्ध और बुद्धिमान बादशाह की कहानी संसार में प्रसिद्ध है।
191	जहांगीर	4752				22	सन 1605 में तख़्त पर बैठा, 1627 ई. में मरा।
192	शाहजहां	4783				31	1628 में तख़्त पर बैठा, 1659 में औरंगजेब ने कैद किया। 1664 में मरा।
193	औरंगजेब	4831				48	1707 में मरा।
194	मुअज्ज़मबहादुर शाह शाहआलम	4836				5	औरंगजेब के पीछे मुसलमानों का राज्य शिथिल हो गया इस से कई बादशाह हुए। सब नाम यथाक्रम लिए जाएं तो पहले आज़िम, फिर मुअज्ज़म, जहांदारशाह फर्रुख़सियर, रफीउल्दरजात, रफीउल्दौलत, निकोसियर, मुहम्मदशाह, इबराहीमशाह, अहमदशाह, आलमगीरसानी, शाहजहां, शाहआलम, बदखख़्त, अकबरसानी और बहादुरशाह ये नाम होंगे।
195	जहांदारशाह	4837				1	
196	फ़रुखसियर	4843				6	
197	मुहम्मदशाह*	4863				20	1719 में तख़्त पर बैठा।[1]
198	नादिरशाह*	4878				15	सन 1151 हिजरी में नादिरशाह का खुतबा कश्मीर में पढ़ा गया। किन्तु नादिर के मरने पर कश्मीर फिर कुछ दिन गड़बड़ में रहा। 1161 हिजरी में अहमद शाह के वजीर असमतुद्दीन खां ने चढ़ाई की थी पर हार गया।

सन 1739 ई. में नादिरशाह आया था इसी से वीस वर्ष दिया गया है, यद्यपि मुहम्मदशाह सन 1748 ई. तक दिल्ली का सम्राट था।

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ट्रायर के मत से समय	कनिङ्हम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्य काल	विशेष वर्णन
199	अहमदशाह	4879				1	1166 हिजरी में पूरी तरह कश्मीर अहमद के अधिकार में आया।
200	राजासुखजीवन	4887				8	इस ने बागी होकर आठ वर्ष चार महीने राज्य किया।
201	अहमदशाह (2 बेर)	4896				9	1175 हिजरी में फिर अहमदशाह की सेना ने जीता। महानन्द पंडित और कैलाश पंडित नामक इस के दीवानों ने प्रबन्ध किया। 1179 में बड़ी बड़ी लड़ाई हुई।
202	तैमूरशाह	4920				24	1184 में गद्दी पर बैठा। 3 महीने बड़ा भूकम्प हुआ। पहले वजीर ने बड़ा उपद्रव किया, बहुत से लोग जल में डुबा दिए। तब पंडित दिलाराम नामक बड़ा बुद्धिमान यहां का सूबा हुआ। यह बड़ा बुद्धिमान था। अन्त में पहले वजीर के बेटे को फिर सूबेदारी मिली और इस ने भी बाप की भांति महा अनर्थ किया।
203	जमांशाह	4946				26	1208 हिजरी में गद्दी पर बैठा। दीवान नन्दराम कश्मीर का सूबेदार हुआ।

							इन दोनों के काल का विशेष वृत्त नहीं ज्ञात हुआ।
204	सुलतानमहमूद					0	जमांशाह के 26 वर्ष में इन दोनों का भी समय समझना चाहिए।
205	शाहशुजा*					0	*महाराज रणजीतसिंह ने कोहनूर हीरा इसी से लिया था।
206	महाराजरणजीत सिंह	4946				20	*1234 हिजरी अर्थात् 1818 ईस्वी 1875 सम्वत में कश्मीर जीता। कश्मीर जीतने की तारीख।
207	महाराजखड्ग सिंह	4947				1/4	बोलोजी वाह गुरुजी का खालसा, बोलोजी वाह गुरुजी फतेह।
208	कुंअरनौनिहालसिंह	4947				0/0/1	ये अपने पिता की क्रिया करके आए उसी समय पत्थर के नीचे दबकर मर गए। 1896 सम्वत् में महाराजा रणजीतसिंह मरे और ये राज पर बैठे।
209	महाराजशेरसिंह	4950				3	इनको सिन्धावालों ने मार डाला।
210	महाराज दलीपसिंह	4952				2	बालक अवस्था में नाममात्र को राजा थे। अब विलायत में पिनशिन पाते हैं।
211	राजराजेश्वरी विक्टोरिया	4952				0/0/7	सन 1846 ईस्वी सम्वत 1902 में सरकार ने पंजाब जीता। सात दिन मात्र कश्मीर सरकार के अधिकार में रहा।
212	महाराज गुलाब सिंह	4963				11	1846 ईस्वी के 16 मार्च को सरकार से कश्मीर इन्होंने पाया।
213	महाराजरणबीर सिंह	4970					सम्वत 1914 में महाराज गुलाबसिंह के मरने पर ये राजा हुए अब कश्मीर का रकबा 25000 और आमदनी 50000 समझी जाती है।

नोट : कश्मीर का संक्षिप्त इतिहास, राजाओं के नाम और उनका समय चक्र, राजतरंगिणी की समालोचना, श्रीहर्ष और वर्तमान महाराज कश्मीर के वंश का संक्षिप्त इतिहास–द मेडिकल हाल प्रेस बनारस से पहिली बार सन् 1884 ई. में छपा। खंगविलास प्रेस बांकीपुर पटना से भी सन 1887 ई. में प्रकाशित।

रामायण का समय

रामायण का समय

(रामायण बनने के समय की कौन कौन बातें विचार करने के योग्य हैं)

पुराने समय की बातों को जब सोचिए और विचार कीजिए तो उन का ठीक ठीक पता एक ही बेर नहीं लगता। जितने नए नए ग्रन्थ देखते जाइए उतनी ही नई नई बातें प्रकट होती जाती हैं। इस विद्या के विषय में बुद्धिमानों के आजकल दो मत हैं। एक तो वह जो बिना अच्छी तरह सोचे विचारे, पुराने अंगरेज़ी विद्वानों की चाल पर चलते हैं और उसी के अनुसार लिखते पढ़ते भी हैं और दूसरे वे लोग जिन को किसी बात का हठ नहीं है, जो बातें नई जाहिर होती गईं उन को मानते गए। दूसरा मत बहुत दुरुस्त और ठीक तो है, पर पहिला मत माननेवालों की ऐंटिक्वेरियन (Antiquarian) बनने का बड़ा सुभीता रहता है। दो चार ऐसी बंधी बातें हैं जिन्हें कहने ही से वे ऐंटिक्वेरियन हो जाते हैं। जो मूर्त्तियां मिलीं वह जैनों की हैं, हिन्दू लोग तातार से वा और कहीं पच्छिम से आए होंगे, आगे यहां मूर्त्तिपूजा नहीं होती थी इत्यादि कई बातें बहुत मामूली हैं, जिन के कहने ही से आदमी ऐंटिक्वेरियन हो सकता है। जो कुछ हो इस बात को लेकर हम इस समय हुज्जत नहीं करते, हम सिर्फ यहां वाल्मीकीय रामायण में से ऐसी थोड़ी सी बातें चुन कर दिखाते हैं जो बहुत से विद्वानों की जानकारी में आज तक नहीं आई हैं।

रामायण बनने का समय बहुत पुराना है, यह सब मानते हैं। इस से उस में जो बातें मिलती हैं वे उस जमाने में हिन्दुस्तान में बरती जाती थीं, यह निश्चय हुआ। इस से यहां वे ही बातें दिखाई जाती हैं जो वास्तव में पुरानी हैं पर अब तक नई मानी जाती हैं और विदेशी लोग जिन को अपनी कह कर अभिमान करते हैं।

रामायण कैसा सुन्दर ग्रन्थ है और इस की कविता कैसी सहज और मीठी है, इसे जिन लोगों ने इस की सैर की है वे अच्छी तरह जानते हैं, कहने की आवश्यकता नहीं। और इस में धर्मनीति कैसी चाल पर कही है, इस से हम यहां पर और बातों

को छोड़ कर केवल वही बातें दिखाना चाहते हैं जो प्राचीन विद्या (ऐंटीक्वेटी) से सम्बन्ध रखती है।

बालकांड–अयोध्या के वर्णन में किले की छत पर यन्त्र रखना लिखा है। यन्त्र का अर्थ कल है[1] इससे यह स्पष्ट होता है कि उस जमाने में किले की बचावट के हेतु किसी तरह की कल अवश्य काम में लाई जाती थी, चाहे वे तोप हों या और किसी तरह की चीज़ (या यन्त्र से दूरबीन मतलब हो)।

शतघ्नी[2] यह उस चीज़ को कहते हैं जिस से सैकड़ों आदमी एक साथ मारे जा सकैं। कोषों में इस शब्द के अर्थ यह दिए हैं कि शतघ्नी उस प्रकार की कल का नाम है जिससे पत्थर और लोहे के टुकड़े छूट कर बहुत से आदमियों के प्राण लेते हैं और इसी का दूसरा नाम वृश्चिकाली है। (सर राजा राधाकान्त देव का शब्दकल्पद्रुम देखो) इस से मालूम होता है कि उस समय में तोप या ठीक उसी प्रकार का कोई दूसरा शस्त्र अवश्य था।

अयोध्या के वर्णन में उस की गलियों में जैन फ़क़ीरों का फिरना लिखा है, इस से प्रकट है कि रामायण के बनने से पहिले जैनियों का मत था।

---

1. यन्त्र उस को कहते हैं जिस से कुछ चलाया जाए। श्रीगीताजी में लिखा है "ईश्वरः सर्व्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति। भ्रामयन् सर्व्वभूतानि यन्त्रारूढ़ानि मायया"। ईश्वर प्राणियों के हृदय में रहता है और वह भूत मात्र को जो (मानो) कल पर बैठे हैं माया से घुमाता है। तो इस से स्पष्ट होता है कि यन्त्र से इस श्लोक में किसी ऐसी चीज़ से मतलब है जो चरखे की तरह घूमती जाए। कल शब्द भी हिन्दी है, 'कत गतौ' से बना हो वा 'कल प्रेरणे' से निकला होगा (कवि कल्पद्रुम कोष देखो) देनों अर्थ से उस चीज़ को कहैंगे जो आप चलै वा दूसरे को चलावै।

2. शतघ्नी को भी यन्त्र कर के लिखा है। शतघ्नी कौन चीज़ है इस का निश्चय नहीं होता। तीन चीज़ में इस का सन्देह हो सकता है, एक तोप, दूसरे मतवाले, तीसरे जम्हीरे में। इस के वर्णन में जो जो लक्षण लिखे हैं उन से तोप का तो ठीक सन्देह होता है, पर यह मुझे अब तक कहीं नहीं मिला कि ये शतघ्नियां आग के बल से चलाई जाती थीं, इसी से उन के तोप होने में कुछ सन्देह हो सकता है। मतवाले से शतघ्नी के लक्षण कुछ नहीं मिलते, क्यौंकि मतवाले तो पहाड़ों वा किलों पर से कोल्हू की तरह लुढकाए जाते हैं और इस के लक्षणों से मालूम होता है कि शतघ्नी वह वस्तु है जिस से पत्थर छूटैं। जहमीरा वा जम्हीरा एक चीज़ है उस से पत्थर छूट छूट कर दुश्मन की जान लेते हैं (हिन्दुस्तान की तवारीख में मुहम्मद क़ासिम की लड़ाई देखो)। इस से शतघ्नी के लक्षण बहुत मिलते हैं। पर रामायण में लिखा है कि लोहे की शतघ्नी होती थीं और फिर सुन्दरकांड में टूटे हुए वृक्षों की उपमा शतघ्नी की दी है। इस से फिर सन्देह होता है कि हो न हो यह तोप ही हो। रामायण के सिवा और पुराणों में भी किले पर शतघ्नी लिखा है? (मत्स्य, पुराण में राज्यधर्म वर्णन में) दुर्गेयन्त्राः प्रकर्त्तव्याः नाना प्रहरणान्विताः। सहस्रघातिनो राजंस्तैस्तुरक्षाबिधीयते॥1॥ दुर्गंच परिस्वोपेतं वप्राट्टालसंयुतं। शतघ्नी यन्त्र मुख्यैश्च शतशश्च समावृतं॥2॥ इस में ऊपर के श्लोकों में शतघ्नी के बदले सहस्रधाती शब्द है(यहां शत और सहस्र शब्दों से मुराद अनगिनत से है) तोप की भांति सुरंग उड़ाना भी वहां लोग अति प्राचीन काल से जानते हैं। आदि पर्व का 378 श्लोक देखो। सुरंग शब्द ही भारत में लिखा है।

जिस समय राजा दशरथ ने अश्वमेध यज्ञ किया उस समय का वर्णन है कि रानी कौशिल्या ने अपने हाथ से घोड़े को तलवार से काटा। इस बात से प्रगट होता है कि आगे की स्त्रियों को इतनी शिक्षा दी जाती थी कि वह शस्त्रविद्या में भी अति निपुणता रखती थीं।

अभी एशियाटिक सोसाइटी के जरनल में पंडित प्राणनाथ एम.ए. ने इस का खंडन किया है कि वराहमिहिर के काल में श्रीकृष्ण की पूजा ईश्वर समझ के नहीं करते थे और वराहमिहिर के श्लोकों ही से श्रीकृष्ण की पूजा और देवतापन का सबूत भी दिया है। और भी बहुत से विद्वान इस बात में झगड़ा करते हैं। और योरोप के विद्वानों में बहुतों का यह मत है कि श्रीकृष्ण की पूजा चले थोड़े ही दिन हुए, पर 40वें सर्ग के दूसरे श्लोक में नारायण के वास्ते दूसरा शब्द वासुदेव लिखा है और फिर पच्चीसवें श्लोक में कपिलदेवजी को वासुदेव का अवतार लिखा है; इस से स्पष्ट प्रगट है कि उस काल से श्रीकृष्ण को लोग नारायण कर के जानते और मानते हैं।[1]

अयोध्याकांड–20वें सर्ग के 29 श्लोकों में रानी कैकेयी ने रामजी को वन जाते समय आज्ञा दिया कि मुनियों की तरह तुम भी मांस न खाना, केवल कंदमूल पर अपनी गुजरान करना। इस से प्रकट है कि उस समय मुनि लोग मांस नहीं खाते थे।[2]

30वें सर्ग के 37 श्लोक में गोलोक का वर्णन है। प्रायः नए विद्वानों का मत है कि गोलोक इत्यादि पुराणों के बनने के समय के पीछे निकाले गए हैं और इसी से सब पुराणों में इन का वर्णन नहीं मिलता। किन्तु इस वर्णन से यह बात बहुत स्पष्ट हो गई कि गोलोक का होना हिन्दू लोग उस काल से मानते हैं जब कि रामायण बनी।[3]

32वें सर्ग में तैत्तिरीय शाखा और कठकलाप शाखा का नाम है। इस से प्रकट होता है कि वेद उस काल तक बहुत से हिस्सों में बंट चुके थे।

रामजी के वन जाने की राह इस तरह बयान की गई है। अयोध्या से चल कर तमसा अर्थात टोंस नदी के पार उतरे। फिर वेदश्रुति[4], गोमती, स्यंदिका[5] और गंगा पार होते हुए प्रयाग आए और वहां से चित्रकूट (जोकि रामायण के अनुसार 10

---

[1] भारत के भी आदि पर्व का 247 से 253 श्लोक तक और 2427 से 2432 श्लोक तक देखो, श्रीकृष्ण को परब्रह्म लिखा है। और भी भारत में सभी स्थानों में है, उदाहरण के हेतु एक पर्व्व मात्र लिखा।

[2] यहां मांस से बिना यज्ञ के मांस से मुराद होगी।

[3] वेद में ब्रह्म के धाम के वर्णन में लिखा है कि वहां अनेक सीगों की गऊ हैं।

[4] वेदसा नाम की एक छोटी नदी गोमती में मिलती है, शायद उसी का नाम वेदश्रुति लिखा है।

[5] जिसको अब सई कहते हैं।

कोस है)[1] गए। यह बिल्कुल सफर उन्होंने पांच दिन में किया। और सुमन्त उनको पहुंचा कर शृंगवेरपुर अर्थात् सिंगरामऊ से दो दिन में अयोध्या पहुंचा। पहली बात से प्रकट हुआ कि पुराने जामने के कोस बड़े होते थे। और दूसरी बात से विदित हुआ कि सड़क उस समय में भी बनाई जाती थी, नहीं तो इतनी दूर की यात्रा का पांच दिन में तै करना कठिन था।

भरतजी जब अपने नाना के पास से, जो कि कैकय अर्थात् गक्कर देश का राजा था, आने लगे तो उस ने कई बहुत बड़े और बलवान कुत्ते दिए और तेज दौड़ने वाले गदहों (खच्चर) के रथ पर उन को बिदा किया। वे सिन्धु और पंजाब होते हुए इक्षुमती को पार कर अयोध्या आए। इस से दो बात प्रकट हुई; एक तो यह कि उस काल में कैकय देश में गदहे और कुत्ते अच्छे होते थे, दूसरे यह वहां की हिन्दुस्तान से राह सिन्धु देकर थी।

77वें सर्ग में मूर्त्तियों का वर्णन है, इस से दयानन्द सरस्वती इत्यादि का यह कहना कि रामायण में कहीं मूर्त्तिपूजन का नाम नहीं है अप्रमाण होता है।

इसी स्थान में निषाद का लड़ाई की नौकाओं के तैयार करने का वर्णन है, जिस से यह बात प्रमाणित होती है कि उस काल के लोग स्थल की भांति पानी पर भी लड़ सकते थे।

दक्षिण के लोगों की सिर में फूल गूंधने की बड़ी प्रशंसा लिखी है। इस से यह बात झलकती है कि उत्तर के देश में फूल गूंधने का विशेष रिवाज नहीं था।

108 सर्ग में जाबालि मुनि ने चार्वाक का मत वर्णन किया है। और फिर 109 सर्ग में बुध का नाम और उन के मत का वर्णन है। इस से प्रगट है कि ये दोनों वेद के विरुद्ध मत उस समय में भी हिन्दुस्तान में फैले हुए थे। अभी हम ऊपर बालकांड में जैनियों के उस काल में रहने का जिक्र कर चुके हैं तो अब ये सब बातें रामायण के बनने के समय, बुध के जन्म का और बौद्ध और जैन मत अलग होने के समय की विवेचना में कितनी हलचल डालेंगी प्रगट है।

अरण्यकांड–चौथे सर्ग के 223वें श्लोक में लिखा है कि असुरों की यह पुरानी चाल है कि वे अपने मुर्दे गाड़ते हैं। इस से प्रगट है कि वेद के विरुद्ध मत माननेवालों में यह रीति सदा से चली आती है।

किष्किन्धाकांड–13वें सर्ग के 16वें श्लोक में क़लम अर्थात् जोंधरी के खेत का बयान है, और कोष में 'लेखनी कलमित्यपि' लिखा है। इस वाक्य से प्रगट होता है कि क़लम लिखने की चीज़ का नाम संस्कृत में भी है और वह और चीज़ों के

---

1. यह बड़े सन्देह की बात है, अब जो चित्रकूट माना जाता है वह प्रयाग से तीन चार मंजिल है पर यहां दस कोस लिखा है। इस दस कोस से यह आशय है कि वहां से उस पर्वत की श्रेणी (लाइन) आरम्भ होती है, पर जहां डेरा किया था वह स्थान दूर होगा।

साथ जोंधरी का भी होता था; और इसी से यह भी साफ़ हो जाता है कि सिवा ताड़ के पत्र के काग़ज़ पर भी आगे के लोग लिखते थे, क्यौंकि ताड़ पर मिटने के डर से सिर्फ़ लोहे की क़लम से लिखा जा सकता है जैसा कि अब तक बंगाले और ओड़ीसे में रिवाज़ है।[1]

62वें सर्ग के 3 श्लोक में पुराणों का वर्णन है, जिस से नई तबीयत और नई तलाश (लाइट) के लोगों का यह कहना कि पुराण सब बहुत नए हैं कहां तक ठीक है, आप लोगों पर आप से आप विदित होगा।

इस कांड में और बातों की भांति यह भी ध्यान करने के योग्य है कि रामजी ने बालि से मनु के 2 श्लोक कहे हैं और यह भी कहा है कि मनु भी इस को प्रमाण मानते हैं। इस से प्रगट हुआ कि मनु की संहिता उस काल में भी बड़ी प्रामाणिक और प्रतिष्ठित समझी जाती थी।[2]

सुन्दरकांड–तीसरे सर्ग के 18वें श्लोक में किले के शस्त्रालय (सिलहगाह) के वर्णन में लिखा है कि जिस तरह से स्त्री गहनों से सजी रहती है वैसे ही बुर्ज यन्त्रों से सजे हुए थे। इस से स्पष्ट प्रगट होता है कि तोप या और किसी प्रकार का ऐसा हथियार जिस से कि दूर से गोले की भांति कोई वस्तु छूट कर जान ले उस समय में अवश्य था।

चौथे सर्ग के 18वें श्लोक में फिर किले पर शतघ्नी रखने का वर्णन है।

5वें सर्ग के पहिले श्लोक में लिखा है कि चन्द्रमा सूर्य्य के प्रकाश से चमकता है। इस से स्पष्ट प्रकट हो सकता है कि उस समय में ज्योतिष विद्या की बड़ी उन्नति थी।

9वें सर्ग के 13वें श्लोक में लिखा है कि पुष्पक विमान के चारों ओर सोने के हुंडार बने थे और खाने पीने की सब वस्तु उस में रक्खी रहा करती थीं और वह बहुत से लोगों को बिठला कर एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाता था। इस से सोचा जाता है कि यह विमान निस्सन्देह कोई बेलून की भांति की वस्तु होगी और हुंडार उस में पहचान के हेतु लगाए गए होंगे।

9वें सर्ग के 25 और 26वें श्लोकों में वर्णन है कि लंका में जो गलीचे बिछे थे उन में घर, नदी, जंगल इत्यादि बने हुए थे। अब यदि विलायत का कोई गलीचा आता है, जिस में मकान, उद्यान इत्यादि बने रहते हैं तो देख कर हम लोग कैसा आश्चर्य्य करते हैं। कैसे सोच की बात है कि हम लोग नहीं जानते कि हमारे हिन्दुस्तान में भी इस प्रकार की चीज़े पहिले बनती थीं। यहीं पर जब हनुमानजी ने रावण के मन्दिरों को जाकर देखा है तो उस में भोजन के अनेक प्रकार के धातुओं के, मणियों

---

[1] इस विषय के लिए 'सज्जनविलास' देखो।

[2] भारत में भी कई स्थान पर मनु का नाम है। उदाहरण के हेतु आदि पर्व का 1722 श्लोक देखो।

के और कांच के पात्रों को भी देखा है। चिमचा, कांटा आदि भी उस समय होता था और बड़ी शोभा से खाना चुना जाता था। और भी अंगरेजी चाल के पात्र और गहने भुवनेश्वर के मन्दिर में भी बहुत प्राचीन काल के बने हैं। बाबू राजेन्द्र लाल मित्र का उड़ीसा प्रथम भाग देखो।

इसी स्थान में अशोक वन में जानकी के शिंशिपा के दरख्त के नीचे रहने का वर्णन है।

हिन्दुस्तान के बहुत से पंडितों का निश्चय है कि शिंशिपा शीशम वृक्ष को कहते हैं। किन्तु हमारी बुद्धि में शिंशिपा सीताफल अर्थात् शरीफे के वृक्ष को कहते हैं। इस के दो बड़े भारी सबूत हैं। प्रथम तो यह कि यदि जानकीजी से शरीफे से कुछ सम्बन्ध नहीं तो सारा हिन्दुस्तान उस को सीताफल क्यों कहता है। दूसरे यह कि महाभारत के आदि पर्व में राजा जन्मेजय की सर्पयज्ञ की कथा में एक श्लोक है जिस का अर्थ यह है कि आस्तिक की दोहाई सुन कर जो सांप न जाएगा उस का सिर शिंश वृक्ष के फल की तरह सौ टुकड़े हो जायगा[1]। शिंश और शिंशपा दोनों एक ही वृक्ष के नाम हैं, यह कोषों से और नामों के सम्बन्ध से स्पष्ट है। शीशम के वृक्ष में ऐसा कोई फल नहीं होता जिसमें बहुत से टुकड़े हों। और शरीफ़े का फल ठीक ऐसा ही होता है जैसा श्लोक में लिखा है। इस से लोग निश्चय करैं कि सीताजी शरीफे ही के वृक्ष के नीचे थीं।

18वें सर्ग के 12वें श्लोक में गुलाब पाश का वर्णन है। इसलिए हमारे भाई लोग यह न समझैं कि यह निधि हम को मुसलमानों से मिली है, यह हिन्दुस्तान ही की पुरानी वस्तु है।

30वें सर्ग के 18-19वें श्लोक में लिखा है कि ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य प्रायः संस्कृत बोलते थे, किन्तु जब छोटे लोगों से बात करते थे तो यह संस्कृत से नीच भाषा में बोलते थे। इस से बहुत लोगों का यह कहना कि संस्कृत कभी बोली ही नहीं जाती थी खंडित होता है। हां, इस में कोई सन्देह नहीं, तब से इस को काम में नहीं लाते थे।

64वें सर्ग के 24वें श्लोक में लिखा है कि हनुमानजी राक्षसों के सिर इस तरह से तोड़ तोड़ कर फेंकते थे जेसे यन्त्र से ढेले छूटैं। इस से ऊपर जहां हम यन्त्रों का वर्णन कर आए हैं उस से लोग समझैं कि वह निस्सन्देह कोई ऐसी वस्तु थी, जिस से गोली या कंकड पत्थर छोड़े जाते थे।

लंकाकांड–(3 सर्ग 12 श्लोक) (3 सर्ग 13 श्लोक) (3 सर्ग 16 श्लोक)

---

[1] आस्तीक वचनं श्रुत्वा यः सर्पो न निवर्त्तते।
शतधाभिद्यतेमूर्ध्ना शिंशिवृक्ष फलं यथा॥

(3 सर्ग 17 श्लोक) (4 सर्ग 23 श्लोक) (21 सर्ग श्लोक अन्त का) (39 सर्ग 26 श्लोक) (60 सर्ग 54 श्लोक) (61 सर्ग 32 श्लोक) (76 सर्ग 68 श्लोक) (86 सर्ग 22 श्लोक)। इन श्लोकों में यन्त्र और शतघ्नी का वर्णन है।

यन्त्र और शतघ्नी ये रामायण में किस किस प्रकार से वर्णन की गई है यह ऊपर के श्लोकों के देखने से प्रगट होगा। इन दोनों के विषय में हमें कुछ विशेष कहना नहीं है, क्यौंकि हमारे पाठकों पर आप से आप यह प्रगट होगा कि यन्त्र और शतघ्नी का कोई रूप रामायण से हम ठीक नहीं कर सकते।

पत्थर ढोने की कल किसी चाल की वाल्मीकिजी के समय में अवश्य रही होगी और किवाड़ भी किसी चाल के कल से बन्द किए जाते होंगे।

यन्त्र बहुत ऊंचे ऊंचे भी होते थे, जैसा कि कुम्भकर्ण की उपमा में कहा गया है। शतघ्नी फ़ौलाद की बनती थी और वृक्षों की तरह लम्बी होती थी और केवल किले ही पर नहीं रहती थी परन्तु लड़ाई में भी लाई जाती थी। इन बातों से हमारा यह कहना तो ठीक ज्ञात होता है कि आगे कल[1] अवश्य थी पर शतघ्नी किस चाल का हथियार था यह हम नहीं कह सकते।[2]

115 सर्ग 42वें श्लोक में राजा भोज के बेटे के नाम से जो सिंह और रीछ की कहानी प्रसिद्ध है वह ठीक ठीक यहां कही गई है।

(150 सर्ग 27 श्लोक) रामजी से ब्रह्मा ने कहा कि सीता लक्ष्मी हैं और आप कृष्ण हैं। (इससे हमारा वासुदेव शब्द वाला पहिला प्रमाण और भी दृढ़ होता है।[3]

(129 सर्ग 3 श्लोक) पुराणों का वर्णन है।

(130 सर्ग) जब राजा लोग राज पर बैठते थे तब नज़र खिलअत इत्यादि आगे भी ली और दी जाती थी। इसी सर्ग में लिखा है कि रामायण वाल्मीकिजी ने जो पहिले से बनाया है वह जो सुनता है सो सब पापों से छूट जाता है। इस में (पुराकृत) पद से जैसे मनु का शास्त्र भृगु ने एकत्र किया है वैसे ही वाल्मीकिजी की कविता भी किसी ने एकत्र किया है, यह सन्देह होता है। इसी सर्ग के 120 श्लोक में लिखा है कि जो रामायण लिखते हैं उन को भी पुण्य होता है। इस से उस काल में पोथियां लिखी जाती थीं, यह भी स्पष्ट है।

---

[1] महाभारत की टीका में युद्ध में नीलकंठ चतुर्धर ने यन्त्र का अर्थ अग्नि यन्त्र लिखा है, पर राजा राधाकान्त ने अग्नियन्त्र और अग्नयस्त्र इन दोनों शब्दों का अर्थ बन्दूक किया है ("कामान बन्दूक इति भाषा") और दारुयन्त्र का अर्थ कल लिखा है। महाभारत में एक जगह लिखा है "यन्त्रस्यगुण दोषौ न विचार्य्यौ मधुसूदन। अहं यन्त्रो भवान् यन्त्री ने मे दोषी न मे गुणः।

[2] विजय रक्षित ग्रन्थ में लिखा है "अयः कंटक संछन्ना शतघ्नी महती शिला' अर्थात् लोहे के कांटों से छिपाई हुई शिला का नाम शतघ्नी है। मेदिनीकोष में करंज भी इस का नाम है।

[3] पाणिनि के सूत्रों में वासुदेव आदि शब्द मिले हैं। इस विषय का विस्तार हमारे प्रबन्ध 'वैष्णवता और भारतवर्ष' में देखो।

उत्तरकांड–उत्तरकांड में बहुत-सी बातें अपूर्व और कहने सुनने के योग्य हैं पर अंगरेज़ विद्वानों ने उस के बनाने का काल रामायण से पीछे माना है, इस से हमारा उन बातों के लिखने का उत्साह जाता रहा तब भी जो बातें विशेष दृष्टि देने के योग्य हैं यहां लिखी जाती हैं।

(44 सर्ग श्लोक 42/43) रावण शिवजी की पूजा करता था,[1] इस से दयानन्द स्वामी का यह कहना कि रामायण में मूर्त्तिपूजा नहीं है, खंडित होता है। हां, यदि वे भी कह दें कि यह कांड क्षेपक है या नया बना है तो इस का उत्तर नहीं।

(53 सर्ग श्लोक 20, 21, 23) श्रीकृष्णावतार का वर्णन है।[2] विदित हो कि तीसर सर्ग के 12 श्लोक में भी एक जगह विष्णु का नाम गोविन्द कहा है 'गोविन्द कर निस्मृता' और गोविन्द श्रीकृष्ण का नाम तब पड़ा है जब गोबर्द्धन उठाया है, यह विष्णुपुराणादिक से सिद्ध है, यथा 'गोविन्द इतिचाभ्यधात्' तो इस से भी हमारी बालकांड वाली युक्ति सिद्ध हुई।

(94 सर्ग श्लोक 8) छन्दोविदः पुराणज्ञान् इस वाक्य में पुराणों का वर्णन किया है। पुराणज्ञैश्च महात्मभिः इत्यादि वाक्यों में और भी कई स्थानों पर पुराणों का वर्णन है और पुराणों की अनेक कथा भी इस कांड में मिलती हैं। इस से यह निश्चय होता है कि उत्तरकांड के बनने के पहले पुराण सब बन चुके थे।

पुराणों के विषय की बहुत सी शंकाएं काल क्रम से मिट गईं। जिन पुराणों को विलायती विद्वानों ने चार पांच सौ बरस का बना बतलाया था उन की सात सात सौ बरस की प्राचीन पुस्तकें मिलीं। लोग भागवत ही को बोपदेव का बनाया कहते थे, कितु चन्द के रायसे में भागवत का वर्णन मिलने से और प्राचीन पुस्तकों से यह सब बातें खंडित हो गईं।

उत्तरकांड से मालूम होता है कि अयोध्या, काशी और प्रयाग ये तीनों राज्य उस समय अलग थे और उस समय हिन्दुस्तान में तीन सौ राज्य अलग अलग थे।

इसी कांड के चौरानबे सर्ग में यह लिखा है कि उत्तरकांड भार्गव ऋषि ने बनाया है। यह भी एक आश्चर्य्य की बात है। इस वाक्य से तो अंगरेजी विद्वानों का सन्देह सिद्ध होता है।

॥ इति ॥

---

[1] यत्रयत्रस्मयातीह रावणोराक्षसेश्वरः जाम्बूनदमयं लिंङ्ग तत्रस्मनीयते॥42॥
बासुका बेदि मध्येतुतल्लिङ्गस्थाप्य रावणः। अर्चयामासगन्धैश्चपुष्पैश्चामृतगन्धिभिः॥43॥

[2] उत्पत्स्यतेहिलोकेऽस्नि् यदूनां कीर्तिवर्द्धनः।
वासुदेव इति ख्यातो विष्णुःपुरुषविग्रहः॥20॥
स ते मोक्षयिता शापात् राजंस्तस्माद्भविष्यसि।
कृता च तेन कालेन निष्कृतिस्ते भविष्यति॥21॥
भारावतरणार्थेहि नरनारायणवुभौ। उत्पत्स्येते महावीर्यौकलौयुगउपस्थिते॥22॥

एक श्लोकी रामायणम्

आदौ रामतपोवनादिगमनं हत्वा मृगं कांचनम्,
वैदेहीहरणं जटायुमरणं सुग्रीवसंभाषणम् ।
वालीनिग्रहणं समुद्रतरणं लङ्कापुरीदाहनम्,
पश्चाद्रावणकुम्भकर्णहननम् एतद्धि रामायणम्॥

[रचनाकाल—सन 1884 ई., खड्गविलास प्रेस बांकीपुर, पटना से प्रकाशित]

पंच पवित्रात्मा

मुसलमानी मत के मूलाचार्य्य अर्थात महात्मा मुहम्मद
आदरणीय अली, बीबी फातिमा
इमाम हसन और इमाम हुसैन
की संक्षिप्त जीवनी

पंच पवित्रात्मा

महात्मा मुहम्मद

जिस समय अरब देशवाले बहुदेवोपासना के घोर अन्धकार में फंस रहे थे उस समय महात्मा मुहम्मद ने जन्म लेकर उन को एकेश्वरवाद का सदुपदेश दिया। अरब के पश्चिम ईसामसीह का भक्तिपथ प्रकाश पा चुका था, किन्तु वह मत अरब, फारस इत्यादि देशों में प्रबल नहीं था और न अरब ऐसे कट्टर देश में महात्मा मुहम्मद के अतिरिक्त और किसी का काम था कि वहां कोई नया मत प्रकाश करता। उस काल के अरब के लोग मूर्ख, स्वार्थतत्पर, निर्दय और वन्यपशुओं की भांति कट्टर थे। यद्यपि उन में से अनेक अपने को इब्राहीम के वंश का बतलाते और मूर्ति पूजा बुरी जानते, किन्तु समाजपरवश होकर सब बहुदेवोपासक बने हुए थे। इसी घोर समय में मक्के से मुहम्मद चन्द्र उदय हुआ और एक ईश्वर का पथ परिष्कार रूप से सब को दिखलाई देने लगा।

महात्मा मुहम्मद इब्राहीम के वंश में इस क्रम से हैं—इब्राहीम, इस्माईल, कबजार, हमल, सलमा, अलहौसा, अलीसा, ऊद, आद, अदनान, साद, नजार, मजर, अलपास, बदरका, खरीमा, किनाना, नगफर, मलिक, फहर, गालिब, लवी, काब, मिरह, कलाव, फजी, अबद्मनाफ, हाशिम, अब्दुलूमतलब, अब्दुल्लाह और इन के अबुल कासिम मुहम्मद।

अब्दुलमतलब के अनेक पुत्र थे, जैसा हमज़ा, अब्बास, अबूतालिब, अबुल्हब, अईदाक। कोई कोई हारिस, हजब, हकूम, जरार जुबैर, कासमे असगर, अबदुलकाबा और मकूम को भी कुछ विरोध से अब्दुलमतलब का पुत्र मानते हैं। इन में अबदुल्लाह और अबूतालिब एक मां से हैं। अबूतालिब के तीन पुत्र अक़ील, जाफर और अली। यह अली महात्मा मुहम्मद से मुसलमानी सत्य मत प्रचार करने के मुख्य सहायक और रात दिन के इनके दुःख-सुख के साथी थे और यह अली जब महात्मा मुहम्मद ने दूतत्व का दावा किया तो पहिले पहल मुसलमान हुए।

महात्मा मुहम्मद की मां का नाम आमिना है, जो अबद्मनाफ के दूसरे बेटे

वहब की बेटी हैं और आदरणीय अली की मां का नाम फातमा है, जो असद की बेटी है और यह असद हाशिम के पुत्र हैं। इस से मुहम्मद और अली पितृकुल और मातृकुल दोनों रीति से हाशिमी हैं।

महात्मा मुहम्मद 12वीं रबीउलूऔवल सन 569 ईसवी को मक्का में पैदा हुए।

महात्मा मुहम्मद के पिता के इनके जन्म से पूर्व्व (एक लेखक के मत से इन के जन्म के दो वर्ष पीछे) मर जाने से उन के दादा इन का लालन पालन करते थे। अरब के उस समय की असभ्य रीति के अनुसार कोई दाई अनाथ लड़के को दूध नहीं पिलाती थी और इस में वहां की स्त्रियां अमंगल समझती थीं, किन्तु अलीमा नामक[1] एक स्त्री ने इन को दूध पिलाना स्वीकार किया। इस दाई को बालक ऐसा हिए लग गया कि एक दिन अलीमा ने आकर महात्मा मुहम्मद की माता अमीना से कहा कि मक्के में संक्रामक रोग बहुत से होते हैं इस से इस बालक को मैं अपने साथ जंगल में ले जाऊंगी। उन की मां ने आज्ञा दे दी और साढ़े चार बरस तक महात्मा मुहम्मद अलीमा के साथ वन में रहे। परन्तु इन के दैवी चमत्कार से कुछ शंका कर के दाई फिर इन को इन की माता के पास छोड़ गई। इन की छः बरस की अवस्था में इन की माता अमीना का भी परलोक हुआ और आठ बरस की अवस्था के इन के दादा अब्दुलमतलब भी मर गए। तब से इन के सहोदर पितृव्य अबूतालिब पर इन के लालन पालन का भार रहा। अबूतालिब महात्मा मुहम्मद ने बारह और पितृव्यों में इन के पिता के सहोदर भ्राता थे। हाशिम महात्मा मुहम्मद के परदादा का नाम था और यह मनुष्य ऐसा प्रसिद्ध हुआ कि उस के समय से उस के वंश का नाम हाशिमी पड़ा। यहां तक कि मक्का और मदीने का हाकिम अब भी 'हाशिमियों के राजा' के पद से पुकारा जाता है। अब्दुलूमतलब महात्मा मुहम्मद को बहुत चाहते थे और नाम भी उन्हीं का रक्खा हुआ था। इस हेतु मरती समय अबूतालिब को बुला कर महात्मा की बांह पकड़ा कर उनके पालन के विषय में बहुत कुछ कह सुन दिया था। अबूतालिब ने पिता की शिक्षा अनुसार महात्मा मुहम्मद के साथ बहुत अच्छा बरताव किया और इन को देश और समय के अनुसार शिक्षा दिया और व्यापार भी सिखलाया।

उन्होंने किस रीति मत से विद्या शिक्षा किया था इस का कोई प्रमाण नहीं मिला। पचीस बरस की अवस्था तक पशुचारण के कार्य में नियुक्त थे। चालीस बरस की अवस्था में उन का धर्म भाव स्फूर्ति पाया। ईश्वर निराकार है और एक अद्वितीय है; उन की उपासना बिना परित्राण नहीं है। यह महासत्य अरब के बहुदेवोपासक आचारभ्रष्ट दुर्दान्त लोगों में वह प्रचार करने को आदिष्ट हुए। तैंतालिस बरस की अवस्था के समय में अग्निमय उत्साह और अटल विश्वास से प्रचार में प्रवृत्त हुए। 'रौजतुः शोहदा' नामक मुहम्मदीय धर्म ग्रन्थ में उन की उक्ति कह कर ऐसा उल्लिखित है।

---

[1] An Ethiopian Female Slave.

"हमारे प्रति इस समय ईश्वर का यह आदेश है कि निशा जागरण कर के दीन हीन लोगों की अवस्था हमारे निकट निवेदन करो, आलस्य शय्या में जो लोग निद्रित हैं उन लोगों के बदले तुम जागते रहो, सुख-गृह में आनन्द विह्वल लोगों के लिए अश्रुवर्षण करो।" पैगम्बर मुहम्मद जब ईश्वर का स्पष्ट आदेश लाभ कर के ज्वलन्त उत्साह के साथ पौत्तलिकता के और पापाचार के विरुद्ध खड़े हुए और 'ईश्वर एक मात्र अद्वितीय है' यह सत्य स्थान स्थान में गम्भीरनाद से घोषणा करने लगे, उस समय वह अकेले थे। एक मनुष्य ने भी उन को सम विश्वासी रूप से परिचित होकर उन के उस कार्य में सहानुभूति दान नहीं किया। किन्तु उन्होंने किसी की मुखापेक्षा नहीं किया, किसी का अणु मात्र भय नहीं किया, बुद्धि विचार तर्क की तृसीमा में भी नहीं गए, प्रभु का आदेश पालन करना ही उन का दृढ़ व्रत था। जब वह ईश्वर के आदेश से 'ला इलाह इल्लिल्लाह' (ईश्वर एक मात्र अद्वितीय है) इस सत्य प्रचार में प्रवृत्त हुए, तब सब अरबी लोग, उन के कई एक पितृव्य और समस्त ज्ञाति सम्बन्धी निज अवलम्बित धर्म के विरुद्ध वाक्य सुन कर भयानक क्रोधान्ध हुए और उनके स्वदेशीय और आत्मीय गण "मुहम्मद मिथ्यावादी और ऐन्द्रजालिक हैं" इत्यादि उक्ति कह के उन के प्रति और सबों का मन विरक्त और अविश्वस्त करने लगे। स्वजन सम्बन्धियों के द्वारा क्लेश अपमान प्रहार यन्त्रणा आदि उन को जितनी सह्य करनी पड़ती थी उतनी दूसरे किसी महापुरुष को नहीं सहनी पड़ी। विपरीत लोगों के प्रस्तराघात से उन का शरीर क्षत विक्षत हुआ था। किसी के प्रस्तराघात से उन का दो दांत भग्न और ओठ विदीर्ण तथा ललाट और बाहु आहत हुआ था। किसी शत्रु ने उन को आक्रमण कर के उन का मुखमंडल कंकड़मय मृत्तिका में घर्षण किया था, उस से मुंह क्षत विक्षत और शोणिताक्त हुआ था। एक दिन किसी ने उन के गले में फांसी लगा कर स्वांसरोध कर के उन को बध करने का उपक्रम किया था। एक दिन किसी ने उन का गला लक्ष्य कर के करवालाघात किया था, तब गह्वर में छिप कर उन्होंने अपने प्राण की रक्षा किया था। कई बार उन की जीवनाशा कुछ भी नहीं थी। एक दिन उन के पितृव्य और जातिवर्ग उन को बध करने को कृत संकल्प हुए थे। उन की प्रियतमा दुहिता फ़ातिमा ने जान कर रोते रोते उन से निवेदन किया। उस में धर्मवीर विश्वासी मुहम्मद अकुतोभय भाव से बोले कि वत्से! मत रो, हम को कोई बध नहीं कर सकेगा, हम उपासनारूप अस्त्र धारण करैंगे, विश्वास वर्म से आवृत्त होंगे। जब हजरत मुहम्मद को प्रहार-क्षत कलेवर और निःसहाय देख कर उनके पितृव्य हमज़ा महाक्रोध से अबुलूहब और अबूजोहल प्रभृति मुहम्मद के परम शत्रु पितृव्य और दूसरे दूसरे ज्ञाति सम्बन्धियों को प्रहार करने जाते थे, उस समय वह बोले, "जिन ने हम को सत्यधर्म प्रचार के हेतु मनुष्य मंडली में प्रेरणा किया है, उस सत्य परमेश्वर के नाम पर शपथ कर के हम कहते हैं, यदि तुम सुतीक्ष्ण करवाल के द्वारा नीच बहुदेवोपासक लोगों को निहत करो और उसी भाव से हमारी सहायता करने को अग्रसर

हो तो तुम अपने को शोणित में कलंकित कर के पुण्यमय सत्य परमेश्वर से दूर जा पड़ोगे। ईश्वर के एकत्व में और हम उन के प्रेरित हैं, इस सत्य का विश्वास जब तक न करोगे तब तक तुम को युद्ध विवाद में कोई फल नहीं होगा। पितृव्य, यदि तुम वात्सल्यरूप औषध हम को प्रदान करना चाहते हो, और हमारे आहत हृदय में आरोग्य का औषध लेपन करना चाहते हो, तो "ला इलाह इल्लिल्लाह मुहम्मद रसूलल्लाह" (ईश्वर एकमात्र अद्वितीय और मुहम्मद उस का प्रेरित है) यह वाक्य उच्चारण करो। यह सुन कर हमज़ा विश्वासी हो कर कलमा उच्चारण पूर्वक एक ईश्वर के धर्म में दीक्षित हुए। तीन बरस शत्रु मंडली से अवरुद्ध होकर हजरत मुहम्मद को महा क्लेश से एक गिरिगुहा में कालयापन करना पड़ा था। इस बीच में बहुत से मनुष्यों ने उन के साथ उस उन्नत विश्वास में योग दिया था और उन के निकट एक ईश्वर के धर्म में दीक्षित हुए थे। ईश्वर की आज्ञापालन के लिए वह दस बरस मक्का नगर में अपरिसीम क्लेश और अत्याचार सहन करके पीछे मदीना नगर में चले गए। वहीं शत्रुगण से आक्रान्त होकर उन लोगों के अनुरोध से और आवाहन से युद्ध करने को बाध्य हुए। वह विपन्न अत्याचारित होकर कभी तनिक भी भीत और संकुचित नहीं हुए थे। जितनी बाधा और विघ्न उपस्थित होता था उतना ही अधिक उत्साहानल से प्रज्चलित हो उठते थे। सब विघ्न अतिक्रम कर के अटल विश्वास से वह ईश्वरादेश पालन व्रत में दृढ़ व्रती थे। वह ईश्वर और मनुष्य के प्रभु भृत्य का सम्बन्ध अपने जीवन में विशेष भांति प्रदर्शन करा गए हैं। वह स्वामी आदेश शिरोधार्य कर के स्वर्गीय तेज और अलौकिक प्रभाव से कोटि कोटि मनुष्य को अंधेरे से ज्योति में लाए। लक्ष लक्ष जन का सांसारिक बल एक विश्वास के बल से चूर्ण कर के जगत् में अद्वितीय ईश्वर की महिमा को महीयान् किया। एकेश्वर की पूजा और सत्य का राज्य प्रतिष्ठित किया। प्रभु का आदेशपालन के हेतु सब प्रकार का दारिद्र, क्लेश, अपमान और आत्मीय जन का निग्रह अम्लान बदन से सिर नीचा कर के सहन किया। धन्य! ईश्वर के विश्वास किंकर मुहम्मद! आज मुसलमान धर्म्म के प्रवर्त्तक ईश्वर के आज्ञाकारी विश्वस्त भृत्य मुहम्मद के नाम और उन के प्रवर्त्तित पवित्र एकेश्वर के धर्म में एशिया से योरोप अफ्रीका तक कोटि कोटि मुसलमान एक सूत्र में ग्रथित हैं। वह ऐसा आश्चर्य धर्म्म का बन्धन जगत् में संस्थापन कर गए हैं कि आज दिन उस के खोलने की किसी को सामर्थ्य नहीं है।

बीबी फ़ातिमा

अब हम लोग उस का जीवन चरित्र लिखते हैं जिस को करोड़ों मनुष्य सिर झुकाते हैं और जिस के दामन से प्रलय पीछे करोड़ों मनुष्य को ईश्वर के सामने अपने अपराधों की क्षमा मिलने की आशा है। यह बीबी फ़ातिमा मुसलमान धर्माद्याचार्य महात्मा मुहम्मद की प्यारी कन्या थी। महात्मा मुहम्मद जैसे दुहितृवत्सल थे वैसी ही बीबी फ़ातिमा

पितृभक्त थीं। यह बाल्यावस्था ही में मातृहीना हो गईं, क्योंकि इन की माता महात्मा मुहम्मद की प्रथमा स्त्री बीबी ख़दीजा इनको शैशवावस्था ही में छोड़ कर परलोक सिधारीं। यद्यपि महात्मा मुहम्मद को अनेक सन्तति थीं पर औरों का कोई नाम भी नहीं जानता और इन को आबालवृद्ध वनिता सब जानते हैं। मुहम्मद ने अपने मुख से कहा है कि ईश्वर ने संसार की सब स्त्रियों से फ़ातिमा को श्रेष्ठ किया। इन्होंने आठ बरस तक जिस असाधारण निष्ठा और परम श्रद्धा से पिता की सेवा की पराक़ाष्ठा की है वैसी सन्देह है कि किसी स्त्री ने भी न की होगी और न ऐसी पितृगतप्राणा नारीरत्न और कहीं उत्पन्न हुई होगी। महात्मा मुहम्मद क्षण भर भी दृष्टि से दूर रखने में कष्ट पाते थे। पिता के अलौकिक दृष्टान्त और उपदेशों के प्रभाव से शैशवावस्था ही से इन को अत्यन्त धर्म्मनिष्ठा थी। इन का मुख भोला भाला सहज सौन्दर्य्य से पूर्ण और सतोगुणी तेज से देदीप्यमान था। कभी इन्होंने सिंगार न किया। सांसारिक सुख की और यौवनावस्था में भी इन्होंने तृणमात्र चित्त न दिया। मर्म की विमल ज्योति और ईश्वरीय प्रताप इनके चेहरे से प्रगट था। धर्म्मसाधन और कठिन वैराग्य व्रतपालन ही में इन को आनन्द मिलता था और अनशनादिक नियम ही इन का व्यसन था। इन के समस्त चरित्र में से दो एक दृष्टान्त रूप यहां पर लिखे जाते हैं।

महात्मा मुहम्मद के चचेरे भाई और परम सहायक आदरणीय अली से इन का विवाह हुआ और सुप्रसिद्ध हसन हुसैन इन के दो पुत्र थे।

एक बेर कुरेशवंशीय अनेक सम्भ्रान्तजन महात्मा मुहम्मद के पास आए और बोले कि यद्यपि हमारा आप का धर्म्म सम्बन्ध नहीं है पर हम आप एक ही वंश के और एक ही स्थान के हैं, इस से हम लोगों की इच्छा है कि हम लोगों के यहां जो अमुक आप के सम्बन्धी का अमुक से विवाह होनेवाला है उस कार्य का आप की पुत्री फ़ातिमा चल कर अपने हाथ से सम्पादन करे। महात्मा मुहम्मद ने अच्छा कह कर विदा किया और फ़ातिमा के निकट आकर कहने लगे—वत्से! लोगों से सद्भाव तथा शत्रुओं का उत्पीड़न सहन करना और शत्रुतारूपी विष को कृतज्ञता रूपी सुधा भाव से पान ही हमारा धर्म्म है। आज अरब के अनेक मान्य लोगों ने अपने विवाह में तुम को बुलाया है। यह हमारी इच्छा है कि तुम वहां जाओ, परन्तु तुम्हारी क्या अनुमति है हम जानना चाहते हैं। फ़ातिमा ने कहा—ईश्वर और ईश्वर के भेजे हुए आचार्य्य की आज्ञा कौन उल्लंघन कर सकता है? हम तो आप की आज्ञाधीना दासी हैं, इस से हमारी सामर्थ्य नहीं कि आप की आज्ञा टालें। हम विवाह सभा में जाएंगे, परन्तु शोच यह है कि हम कौन-सा वस्त्र पहन के जाएंगे। वहां और स्त्री लोग महामूल्य वस्त्राभरणादिक धारण कर के आवेंगी और हमारी फटी चद्दर देख कर वे लोग हमारा और आप का उपहास करेंगी। अबूजुहल की बहिन आनवा की स्त्री और शवा की बेटी इत्यादि अनेक अरब की स्त्री कैसी असभ्यचारिणी और मन्दप्रकृति हैं यह आप भली भांति जानते हैं और हमालन की बेटी आप के चलने की राह में कांटा बिछा

आती थी तथा अबूसफिनान की स्त्री को आप की निन्दा के सिवा कोई काम ही नहीं है, यह भी आप को अविदित नहीं। सब उस सभा में उपस्थित रहैंगी और रूम और मिश्र के बहुमूल्य अलंकार धारण कर के मणिपीठ के ऊंचे आसन पर बड़े गर्व से बैठेंगी। उस सभा में आप की कन्या को एक मैली फटी पुरानी चद्दर ओढ़ कर जाना होगा। हम को देख कर वे सब कहैंगी कि इस कन्या को क्या हुआ। इस की माता की अतुल सम्पत्ति क्या हो गई जो इस वेश से यहां आई है। पिता! इन लोगों को धर्मज्ञान और अन्तरचक्षु नहीं है, केवल जगत् के बाह्याडम्बर में भूली हैं, इस से हम को देख कर वह आप की निन्दा करैंगी और केवल हमारे कारण आप का अपमान होगा।

फ़ातिमा पिता से यह कहती थीं और उनके नेत्रों से जल बहता था। महात्मा मुहम्मद ने उत्तर दिया—बेटी! तुम किंचित्मात्र भी सोच मत करो। हमारे पास उत्तम वस्त्राभरण और धन तो निस्सन्देह कुछ भी नहीं है,परन्तु निश्चय रक्खो कि जो आज लाल पीले वस्त्र पहन कर अलंकार के उद्यान में फूली फूली दिखाई पड़ती है। वे अपने दुष्कर्मों से कल तृण से भी तुच्छ होकर नर्क की अग्नि में जलैंगी। हम लोगों का वस्त्र और शोभा वैराग्य है। महात्मा मुहम्मद और भी कुछ कहना चाहते थे कि फ़ातिमा ने कहा—पिता! क्षमा कीजिए अब विलम्ब करने का कुछ प्रयोजन नहीं, आप की आज्ञा हम को सर्वथा शिरोधार्य है।

यह कह कर बीबी फ़ातिमा घर से निकलीं[1] और उस विवाह सभा की ओर अकेली चलीं परन्तु लिखा है कि ईश्वर के अनुग्रह से उन के अंग पर दिव्य अमूल्य वस्त्राभरण सज्जित हो गए। कुरेशवंश में और अरब की स्त्री लोग अभिमान से फ़ातिमा की मार्ग की परीक्षा (प्रतीक्षा) कर रही थीं और कहती थीं कि आज हम लोगों की सभा में महात्मा मुहम्मद की बेटी फटा कपड़ा पहन कर आवैगी और हम लोगों को उत्तम वस्त्राभूषण देख के आज वह भलीभांति लज्जित होगी। इतने में विद्युल्लता की भांति सामने से फ़ातिमा की शोभा चमकी और विवाह मंडप में इन के आते ही एक प्रकाश हो गया। फ़ातिमा ने नम्र भाव से सब स्त्रियों को यथायोग्य अभिवादन किया, परन्तु वे सब स्त्रियां ऐसी हत् बुद्धि और धैर्यरहित हो गईं कि सलाम का उत्तर न दे सकीं। फ़ातिमा का मुखचन्द्र देख कर अभिमानिनी स्त्रियों के हृदय-कमल मुरझा गए और आंखों में चकाचौंधी छा गई। सब की सब घबड़ा कर उठ खड़ी हुईं और आपस में कहने लगीं कि यह किस महाराज की कन्या और किस राजकुमार की स्त्री है। एक ने कहा, यह देवकन्या है।

---

[1] हमारे पुराणों में भी लिखा है कि सती जब उदास होकर दक्ष के यज्ञ में बिना सिंगार किए ही चलीं तो मार्ग में कुबेर ने उन को उत्तम उत्तम वस्त्राभूषण पहिना दिया। वैसे ही अनुमान होता है कि अपने आचार्य महात्मा मुहम्मद की बेटी को वस्त्रहीन देख कर उन के किसी धनिक सेवक ने अमूल्य वस्त्राभूषण से उन को सजा दिया।

दूसरी बोली नहीं, कोई तारा टूटकर गिरा है। कोई बोली सूर्य्य की ज्योति है। किसी ने कहा, नहीं नहीं, आकाश से चन्द्रमा उतरा है। परन्तु जिसके चित्त में धर्मवासना थी उन्होंने कहा कि यह ईश्वरीय ज्योति है। यह अनेक अनुमान तो लोगों ने किए, परन्तु यह सन्देह सब को रहा कि कोई हो पर यह यहां क्यौं आई है? अन्त में जब लोगों ने पहचाना कि यह बीबी फ़ातिमा है तो सब को अत्यन्त लज्जा और आश्चर्य हुआ। सब से ऊंचे आसन पर उन को लोगों ने बैठाया और आप सब सिर झुका कर उन के आसपास बैठ गईं। कई उन में से हाथ जोड़ कर बोलीं–हे महापुरुष मुहम्मद की कन्या! हम लोगों ने आप को बड़ा कष्ट दिया, हम लोगों के कारण जो आप के नित्य कर्म में व्यवधान पड़ा हो उसे क्षमा कीजिए और हमारे योग्य जो कार्य हो आज्ञा कीजिए। हम लोगों को जैसा आदेश हो वैसा भोजन और शरबत आप के वास्ते सिद्ध करैं। बीबी फ़ातिमा ने विनयपूर्वक उत्तर दिया–भोजन और शरबत से हमारा सन्तोष नहीं, हमारा और हमारे पितृदेव का विषय में विराग सहज स्वभाव है। अनशन व्रत हम लोगों को सुस्वादु भोजन के बदले अत्यन्त प्रिय है। हमारा और हमारे पिता का सन्तोष ईश्वर की प्रसन्नता है। तुम लोग देवी, देवता, भूत, प्रेत इत्यादि की पूजा और पाखंड छोड़ कर सत्य धर्म के प्रकाश में आओ, एक परमेश्वर की भक्ति करो, परस्पर बैर का त्याग और आपस में प्रीति करो। अनेक स्त्रियां फ़ातिमा का यह अतुल प्रभाव देखकर उसी समय मुसलमान हुईं और जिन्हों ने उन का धर्म्म नहीं ग्रहण किया उन्होंने भी उन का बड़ा आदर किया।

किसी विशेष रोग के कारण इन की मृत्यु नहीं हुई। पितृवियोग का शोक ही इन की मृत्यु का कारण है। कहते हैं कि महात्मा मुहम्मद की मृत्यु के पीछे फ़ातिमा शोक से अत्यन्त विह्वल रहीं। किसी भांति भी इन को बोध नहीं होता था,रात दिन रोती थीं और बारम्बार मूर्च्छित हो जाती थीं। एक दिन उन्होंने कुछ स्वप्न देखा और मृत्यु के हेतु प्रस्तुत होकर अपने प्रिय स्वामी आदरणीय अली को बुला कर कहा "कल पितृदेव को स्वप्न में देखा है जैसे वह चारों ओर नेत्र फैला कर किसी के मार्ग की प्रतीक्षा कर रहे हैं। हमने कहा, पिता! तुम्हारे विच्छेद से हमारा हृदय विदग्ध और शरीर अत्यन्त जीर्ण हो रहा है। उन्होंने उत्तर दिया, पुत्री! हम भी तो मार्ग ही देख रहे हैं। फिर हमने ऊंचे स्वर से कहा–पिता! आप किस का मार्ग देख रहे हैं? तब उन्होंने कहा –कि तुम्हारा मार्ग देख रहे हैं। पुत्री फ़ातिमा! हमारा तुम्हारा वियोग बहुत दिन रहा, इस से तुम्हारे बिना अब हमारे प्राण व्याकुल हैं। तुम्हारे शरीर त्याग का समय उपस्थित है; अब तुम अपनी आत्मा को शरीर सम्पर्क शून्य करो। इस निकृष्ट संकीर्ण जगत् का परित्याग कर के उस प्रसारित उन्नत देदीप्यमान आनन्दमय जगत् में गृहस्थापन करो। संसाररूपी क्लेश कारागार से छुट कर नित्य सुखमय परलोक-उद्यान की ओर यात्रा करो। फ़ातिमा! जब तक तुम न आओगी तब तक हम नहीं जायंगे। हमने कहा–पिता! हम भी तुम्हारी दर्शनार्थी हैं, तुम्हारी सहवास

सम्पत्ति लाभ करैं यही हमारी भी आकांक्षा है। इस पर उन्होंने कहा–तो फिर विलम्ब मत करो, कल ही हमारे पास आओ। इसके पीछे हमारी नींद खुली, अब उस उन्नत लोक में जाने के लिए हमारा हृदय ब्याकुल है। हम को निश्चय है कि आज सांझ या पहर रात तक हम इस लोक का त्याग करैंगे। हमारे पीछे तुम अत्यन्त शोकाकुल रहोगे, इस से जिस में हमारे सन्तान भूखे न रहें हम आज रोटी कर के रख देते हैं और पुत्र कन्या का वस्त्र भी धो देते हैं। हमारे पीछे यह कौन करैगा! इस हेतु हम आप ही इन कामों से छुट्टी कर रखते हैं। हमारे अभाव में हमारे पुत्रों को कौन प्यार करैगा? हमारी इच्छा थी कि आज इन का सिर संवारें, परन्तु हम को सन्देह है कि कल कोई उन के मुंह की धूल भी न झारैगा।''

अली यह सुन अत्यन्त शोकाकुल होकर रोने लगे और कहा कि फ़ातिमा! तुम्हारे पिता के वियोग से हृदय में जो क्षत है वह अब तक पूरा नहीं हुआ और उन महात्मा के चरण दर्शन बिना जो शोक है वह किसी प्रकार से नहीं जाता। इस पर तुम्हारा वियोग भी उपस्थित हुआ। यह आघात पर आघात और विपत्ति पर विपत्ति पड़ी। फ़ातिमा ने कहा–अली! उस विपत्ति में धैर्य्य किया है और इस में भी करो, इस क्षण में मुहूर्त भर भी हम से अलग मत रहो, हमारे श्वासवायु अवसान का समय निकट है; नित्यधाम में हम तुम फिर मिलैंगे यह प्रतिज्ञा रही।

बीबी फ़ातिमा यह कहती थीं और हसन हुसेन के मुख की ओर देख कर दीर्घश्वास के साथ अश्रुवर्षण करती जाती थीं। माता की यह बात सुन कर हसन-हुसेन भी रोने लगे। फ़ातिमा ने कहा–प्यारे बच्चो! थोड़ी देर के वास्ते तुम लोग मातामह के समाधि उद्यान में जाओ और हमारे हेतु प्रार्थना करो। वे लोग माता के आज्ञानुसार चले गए। फ़ातिमा तब बिछौने पर लेट गईं और अली से कहा, प्रिय तुम पास बैठो। बिदा का समय उपस्थित है। अली बैठे और शोक से रोने लगे। तब फ़ातिमा ने आसमा नाम की दासी को बुला कर कहा कि अन्न प्रस्तुत रक्खो, हमारे प्यारे हसन हुसेन आकर भोजन करैंगे। जब वे घर आवैं तब उन लोगों को अमुक स्थान पर बैठाना और भोजन कराना। उन को हमारे निकट मत आने देना, क्योंकि हमारी अवस्था देख कर वे घबड़ाएंगे। आसमा ने वैसा ही किया। इधर फ़ातिमा ने अली से कहा–हमारा सिर तुम अपनी गोद में ले बैठो, अब जीवन में केवल कुछ ही क्षण बाकी है। अली ने कहा–फ़ातिमा! तुम्हारी ऐसी बातें हम नहीं सुन सकते। फ़ातिमा ने उत्तर दिया–अली! पथ खुला है, हम प्रस्थान करैंगे ही और मन अत्यन्त शोकाकुल है और तुम से कुछ कहना भी अवश्य है। हमारी बात सुनो और हमारे वियोग का शरबत बाध्य होकर पान करो। अली फ़ातिमा का सिर गोद में लेकर बैठे। फ़ातिमा ने नेत्र खोल कर अली की ओर देखा; उस समय अली ने नेत्रों से आंसू के बूंद फ़ातिमा के मुख पर टपकते थे। अली को रोते देख कर फ़ातिमा ने कहा–हे नाथ! यह रोने का समय नहीं है, अवकाश बहुत थोड़ा है। अन्तिम कथा सुन लो। अली ने कहा–कहो क्या कहती हो? फ़ातिमा ने कहा–हमें चार बात कहनी है; पहली यह कि

हम तुम्हारे साथ बहुत दिन तक रहे। यदि हम से कोई अपराध हुआ हो तो क्षमा करो। अली रोने लगे और बोले—कभी तुमने आज तक कोई ऐसी बात ही नहीं किया जो हमारे प्रतिकूल हो। प्यारी तुम तो सर्वदा हमारी मनोरंजनी रही, भूल कर भी तुम ने हम को कोई कष्ट नहीं दिया, तुमने सब आपत्ति अपने ऊपर सहन किया, परन्तु हम को दुःख न दिया, तुम उपकारिणी थीं, अपकारिणी नहीं। तुम को हमने कोमल पुष्पमाला की भांति अपने हृदय पर धारण किया कंटक की भांति नहीं। बोलो, और बोलो और कौन बात है? फ़ातिमा ने कहा, दूसरे यह कि हमारे प्यारे हसन हुसैन की रक्षा करना। जिस लाड़ प्यार और राव चाव से हम ने उस को पाला है उस में कुछ न्यूनता न हो; उन की सब अभिलाषा पूरी करना। तीसरे यह कि हमारे शव को रात्रि को भूमिशायी करना, क्योंकि जीवन दशा में जैसे पर पुरुष की दृष्टि हमारे शरीर पर नहीं पड़ी है वैसा ही पीछे भी हो। चौथे हमारी समाधि पर कभी कभी आ जाना। इतने में हसन हुसेन भी आ गए और माता की यह अवस्था देख कर बहुत रोने लगे। फ़ातिमा ने किसी प्रकार समझा कर फिर बाहर भेजा और दासी को बुला कर बीबी फ़ातिमा[1] ने स्नान किया और एक धौत वस्त्र परिधान कर के एक निर्जन गृह में दक्षिण पार्श्व से शयन कर के ईश्वर का स्मरण करने लगीं। इसी अवस्था में उन्होंने परलोक गमन किया।

आदरणीय अली की मृत्यु का समाचार

परम धार्मिक सुप्रसिद्ध अली मुसलमान धर्म्म के प्रवर्त्तक हज़रत मुहम्मद के जामाता और शिया सम्प्रदाय के पहिले इमाम (आचार्य्य) थे। हज़रत मुहम्मद के लोकान्तर गमन पीछे मुसलमान धर्म्म की स्थिति और उन्नति अली के ही ऊपर निर्भर थी। जैसे भक्तिभाजन ईसा को उन के शिष्य जूडा ने विंशति मुद्रा के लोभ से शत्रुहस्त में समर्पण कर के वध किया था वैसे ही इब्नमुलज़म नामक एक व्यक्ति ने एक दुश्चारिणी नारी के प्रलोभन में उस की कुमन्त्रणा से स्वीय धर्म्माचार्य्य अली को स्वयं करवालाघात से निहत किया। यह उस से भी भयंकर व्यापार है। इब्नमुलज़म के भाव चरित्र की चंचलता देख कर पहिले ही उस के ऊपर अली का सन्देह हुआ था। एक दिन इब्नमुलज़म ने अली को एक उत्कृष्ट सामग्री उपहार दी थी। अली उस उपहार के प्रति अनादर प्रदर्शन कर के बोले कि हम तुम्हारे इस उपढौकन ग्रहण में नहीं प्रस्तुत हैं; तुम परिणाम में हम को जो उपढौकन प्रदान करोगे उस के लिए हम विशेष चिन्तित हैं। इस के कुछ दिन पीछे अली शिष्यमंडली के साथ कूफ़ा नगर में उपस्थित हुए। वहां इब्नमुलज़म ने कुत्तामा नाम की एक दुश्चरित्रा विधवा युवती के सौन्दर्य से मुग्ध हो कर उस से परिणय अभिलाषा प्रगट की। कुत्तामा ने उसे प्रलोभन जाल में आबद्ध कर के कहा—हमारे तीन प्रण हैं

---

[1] इफ़ताम अरबी में बच्चे को दूध से छुड़ाने को कहते हैं। इनका फ़ातिमा नाम इसी हेतु पड़ा था कि छोटेपन ही में इनकी मृत्यु हुई थी।

सो पूर्ण करने से हम तुम्हारे साथ ब्याह में सम्मत हैं। एक सहस्र दिरहम (ताम्रमुद्रा विशेष), एक जन सुगायिका सुन्दरी दासी और मुहम्मद के जामाता अली का वध साधन। यह सुन कर इब्नमुलज़म बोला–पहिले दोनों पण कठिन नहीं हैं वह संसाधन कर सकेंगे, किन्तु तीसरा पण गुरुतर है इस के संसाधन में हम अक्षम हैं। कुत्तामा बोली–शेषोक्तपण ही सब में प्रधान है, अली हमारे पितृकुल का शत्रु है, उस का प्राणसंहार बिना किए कोई भांति विवाह नहीं हो सकता है। दुरात्मा इब्नमुलज़म उस का सुदृढ़ पण देख कर उस में भी सम्मत हुआ एवं विषाक्त तीक्ष्ण करवाल के द्वारा गुरु की हत्या करने का सुयोग देखने लगा। एक दिन निशीथ समय में अली कूफा की जामा मस्जिद के दरवाजे पर खड़े होकर नमाज में प्रवृत्त हैं, उस समय सुयोग समझ कर अतर्कित भाव से उस ने अली के सिर में एक आघात किया। अली आघात पाकर चिल्लाकर भूतलशायी हुए। शोणित स्रोत से मस्जिद प्लावित हो गई। उन के आहत मस्तक से मस्तिष्क उद्भिन्न होकर गिरा। दुरात्मा इब्नमुलज़म उसी क्षण धृत होकर बन्दी हुआ। पीछे उस ने दुष्कर्म का समुचित प्रतिफल भोग किया। अली ने दो दिवस विष की विषम यन्त्रणा भोग कर के बन्धुवर्ग को शोकसागर में मग्न कर के परलोक गमन किया। मृत्युकाल में स्वीय प्रियतम पुत्र हसन को यह अनुमति दिया कि हमारा देह निशीथ समय में किसी निभृत स्थान में निहित करना, वही कार्य्य में परिणत हुआ। जब हसन पितृदेह भूमि निहित कर के लौटते थे उस समय एक व्यक्ति के रोने का शब्द सुन पड़ा। वह क्रन्दन को लक्ष कर के वहां उपस्थित हुए, देखा कि एक दरिद्र अंध वृद्ध आकुल होकर रो रहा है। हसन ने रोने का कारण पूछा, तो वह बोला कि प्रति दिन रात को एक महापुरुष आकार हम को आहार देते थे और सुमिष्ट वचन से परितोष करते थे। आज तीन दिन से वह नहीं आते हैं और वह मधुर वचन नहीं सुनने पाते हैं, हम अनाहार हैं। हसन ने पूछा–उनका नाम क्या है? अंधा बोला–उन्हों ने हम को अपना परिचय नहीं दिया। परिचय पूछने से वह कहते थे, हमारे परिचय से तुम्हारा कोई प्रयोजन नहीं है, तुम हमारी सेवा ग्रहण करो। उन का कंठस्वर ऐसा था, वह अल्ला अल्ला की सदा ध्वनि करते थे। हसन अंधे की बात से जान गए कि वह महापुरुष उन के पिता थे। तब अश्रुपात कर के बोले कि आज वह महात्मा परलोक सिधारे हैं। अभी उन की अन्त्येष्टि क्रिया समाधान कर के हम चले आते हैं। वृद्ध यह सुन कर शोक से मूर्छित हो गिर पड़ा। पीछे रोते रोते बोला–तुम लोग हम को अनुग्रह कर के उन की पवित्र समाधि भूमि में ले चलो। हसन हाथ पकड़ कर वृद्ध को वहां ले गए। वृद्ध ने वहां शोक और अनाहार से प्राण त्याग किया।

एक दिन किसी विपथगामी ईश्वरविरोधी व्यक्ति ने परम प्रेमिक अली से पूछा था कि हे ज्ञानवान् अली! गृह और उच्च प्रासाद शिखर पर भी ईश्वर तुम्हारे रक्षक हैं, यह तुम स्वीकार करते हो? अली बोले–"हां, शैशव में, यौवन में, सर्वक्षण सर्वस्थान

में वह हमारे प्राण के रक्षक हैं।'' यह बात सुन कर वह बोला, ''तुम अपने को, इस अट्टालिका पर से गिरा कर ईश्वर तुम को रक्षा करते हैं, इस विश्वास की पूर्णता प्रदर्शन करो, तब तुम्हारे विश्वास का हम विश्वास करैंगे और तुम्हारी ईश्वरनिष्ठा प्रमाण युक्त होगी।'' तब अली बोले ''चुप रहो और चले जाओ और स्पर्द्धा कर के जीवन को कलंकित मत करो। मनुष्य का क्या साध्य है कि ईश्वर को परीक्षा में बुलावै। केवल उन को परीक्षा करने का अधिकार है। वह प्रति मुहूर्त्त में मनुष्य के निकट परीक्षा उपस्थित करते हैं। वह हम लोगों के पास हैं। हम लोग क्या हैं वह प्रकाश कर देते हैं। अन्तर में हम लोग कि भांति धर्म्मभाव रखते हैं, वह दिखला देते हैं। कौन मनुष्य ईश्वर को ऐसी बात कह सकता है कि यह सब पाप अपराध कर के हम ने तुम्हारी परीक्षा किया। हे ईश्वर! देखें, तुम्हारी कितनी सहिष्णुता है! हा! ऐसा कहने का किस को अधिकार है? तुम्हारी बुद्धि अत्यन्त दुष्ट हुई है! तुम्हारी यह उक्ति सब पापों से बढ़ कर है। जो यह सुविशाल नभोमंडल का रचयिता है उस की तुम परीक्षा करने क्या जानो? तुम अपना शुभाशुभ तो जानते ही नहीं हो। पहिले अपनी परीक्षा करो, पीछे दूसरे की परीक्षा करना। पथप्रदर्शक अग्रगामी गुरु की जो शिष्य परीक्षा करता है वह मूर्ख है। जिस को तुम ने परीक्षक किया है, हे अविश्वासी, यदि उन्हीं की धर्म्ममार्ग में तुम परीक्षा करो, तो तुम्हारी दुस्साहसिकता और मूर्खता प्रकाश होगी। तुम ईश्वर की क्या परीक्षा करोगे? धूलिकणिका क्या पर्वत की परीक्षा कर सकती है? मनुष्य अपने बुद्धिगत अनुमान से तुला यन्त्र प्रस्तुत कर के ईश्वर को उस में स्थापन करने जाता है, किन्तु ईश्वर बुद्धि के अनायत्त है, उन के द्वारा बुद्धि निर्मित परिमाण यन्त्र चूर्ण हो जाता है। ईश्वर की परीक्षा करना और उन को आयत्त करना एक ही है। तुम एतादृश महाराज को आयत्त करने की चेष्टा मत करो, चित्रित वस्तु किस प्रकार से चित्रकार की परीक्षा करेगा। उन के असीम ज्ञान में जो सब चित्र विद्यमान हैं उन के पास परिदृश्यमान विश्वचित्र क्या पदार्थ है? जब परीक्षा ग्रहण की कुबुद्धि के द्वारा तुम आक्रान्त होते हो, तब जानना तुम को संहार करने के लिए दुर्भाग्य उपस्थित हुआ है। अकस्मात् ईश्वर में ऐसी कुबुद्धि उपस्थित हो तो भूमिष्ठ प्रणत होना। भूमि को शोकाश्रुस्रोत से अभिषिक्त करना और कहना, हे ईश्वर! इस कुचिन्ता से हमारी रक्षा करो। तब परम परीक्षक ईश्वर तुम को रक्षा करैंगे।''

इमाम हसन और इमाम हुसैन

महात्मा मुहम्मद के जन्म का समाचार पूर्व में लिखा जा चुका है। इनको अठारह सन्तति हुई, किन्तु वंश किसी के आगे नहीं चला, केवल बीबी फ़ातिमा को वंश हुआ। यह बीबी फ़ातिमा आदरणीय अली से ब्याही थीं। जब तक यह जीती थीं और विवाह आदरणीय अली ने नहीं किया केवल इन्हीं को अली मान कर इन्हीं

के मुखपंकज के अली बने रहे। बीबी फ़ातिमा को पांच सन्तति हुईं, तीन पुत्र हसन, हुसैन और मुहसिन, और ज़ैनब और उम्म कुलसुम यह दो बेटियां थीं। इन में मुहसिन छोटेपन ही में मर गए। अली ने बीबी फ़ातिमा के मरने के पीछे उमुल्लनवीन से विवाह किया। उस से चार पुत्र अब्बास, जाफ़र, उसमान और अब्दुल्लाह उत्पन्न हुए, जो चारों अपने भाई इमाम हुसेन के साथ करबला में वीर गति को गए। इन में से अब्बास की सन्तति चली। तीसरी स्त्री क़ैसी, उस से अब्दुल्लाह और अबूबकर, यह दोनों भी करबला में मारे गए। चौथी स्त्री इसमानित से मुहम्मद और यहिया दो पुत्र हुए। इन चारों को सन्तति नहीं है। पांचवीं स्त्री सहबाई से उभर और रकिया, जिन में से उमर की सन्तति है। छठवीं स्त्री अम्मामा। इस को मुहम्मद मध्यम नामक पुत्र हुआ, किन्तु आगे सन्तति नहीं। सातवीं स्त्री इन की खूला है, जिन के पुत्र बड़े मुहम्मद हुए, जिन का वंश वर्त्तमान है। आदरणीय अली को इन बेटों के सिवा चौदह बेटियां भी हुईं। इन सब से इमाम हसन, इमाम हुसैन, अब्बास, मुहम्मद और उमर का वंश है, जिन में इमाम हसन और इमाम हुसैन की सन्तति सैयद कहलाती है और शेष तीनों की साहबजदों के नाम से पुकारी जाती है। किन्तु शिया लोगों में अनेक इमाम हसन के वंश को भी सैयद नहीं कहते हैं और कहते हैं कि ठीक सैयद केवल इमाम जैनुलआबदीन (इमाम हुसैन के मध्यम पुत्र) का वंश है। आदरणीय अली सबके पहिले मुसलमान हुए और दाहिनी भुजा की भांति महात्मा मुहम्मद के सदा सहायक रहे। इन्हीं अली के पुत्र इमाम हुसैन थे, जिन का दुष्टों ने करबला में बध किया, जिस का हम क्रम से वर्णन करते हैं।

महात्मा मुहम्मद के (632 ई.) मृत्यु के पीछे अबूबकर (632 ई.) खलीफा हुए और उन के पीछे उमर (634 ई.)। इस में कुछ सन्देह नहीं कि महात्मा मुहम्मद के पीछे उन के सब शिष्यों को धन और देश और शासन के लोभ ने ऐसा घेर लिया था कि सब धर्म्म को भूल गए थे। केवल आड़ के वास्ते धर्म था। यद्यपि उपद्रव तो मुहम्मद महात्मा की मृत्यु के साथ ही हुआ, किन्तु तीसरे ख़लीफ़ा (महन्त) के काल से उपद्रव बढ़ गया। यह हम पक्षपात छोड़ कर कह सकते हैं कि ऐसे घोर समय में आदरणीय अली ने बड़ा सन्तोष प्रकाश किया था। शाम (Asia minor) के लोग इन सब उपद्रवों की जड़ थे। उन में भी कूफा के सन 656 में इन उपद्रवियों ने उसमान महन्त का व्यर्थ बध किया और आदरणीय अली को खलीफ़ा बनाया। यही समय मुहर्रम के अन्याय की जड़ है। उसमान खलीफ़ा के समय में महात्मा मुहम्मद ने निज शिष्यों में एक मनुष्य मुआविया (जो इन का गोत्रज भी था) नामक शाम और मिस्र आदि देशों में गवर्नर था। जब अली खलीफ़ा हुए तो इस मुआविया ने चाहा कि उन को जय कर के आप खलीफ़ा हों। यहां तक कि अनेक युद्धों में मुसलमानों पर अपना अधिकार जमाता गया। सन 661 में पांच बरस खलीफा रह कर अली एक दुष्ट के हाथ से मारे गए। इन के पीछे इन के बड़े पुत्र और महात्मा

मुहम्मद के नाती इमाम हसन खलीफ़ा हुए, किन्तु मुआविया ने इन को भी अपने राज्य लोभ से भांति भांति का कष्ट देना आरम्भ किया। उस समय के लोग ऐसे क्रूर, लोभी और दुष्ट थे कि धर्म्म छोड़ कर लोभ से बहुत मुआविया से मिल गए और अपने परमाचार्य्य की एक मात्र सन्तति हसन हुसैन को दुःख देने लगे। इमाम हसन यहां तक दुःखी हुए कि चार लाख साल पिंशन पर निराश होकर खिलाफत से बाज आए। कुछ ऊपर छह महीने मात्र ये खलीफ़ा थे। किन्तु इस पिंशन के देने में भी मुआविया बड़ी देर और हुज्जत करता रहा। यहां तक कि सन 49 हिजरी (670 ई.) में मुआविया के पुत्र यज़ीद ने इमाम हसन की एक दुष्टा स्त्री जादा के द्वारा उन को विष दिलवाया। कहते हैं कि दो बेर पहिले भी इस दुष्टा स्त्री ने इस लोभ से कि वह यजीद की स्त्री होगी, इमाम को विष दिया था, किन्तु तीसरी बार का विष ऐसा था कि उस से प्राण न बच सके और इस असार संसार को छोड़ गए। पन्द्रह पुत्र और आठ कन्या इन को हुई थीं। अब लोग इन दुष्टों के धर्म्म को देखें कि साक्षात परमाचार्य्य ईश्वर प्रिय 'वरंच ईश्वर तुल्य', अपने गुरु की सन्तति और गुरु पुत्र और स्वयं भी गुरु उस का इन लोगों ने कैसे आनन्द से वध किया।

इमाम हसन के मरने के पीछे यज़ीद बहुत प्रसन्न हुआ और अपने राज्य को निष्कंटक समझने लगा। अब केवल इन लोगों की दृष्टि में इमाम हुसैन बचे जो कि रात दिन खटकते थे, क्योंकि धर्म्मी और श्रद्धालु लोग इन के पक्षपाती थे। मुआविया और उस के साथी लोग सब इस सोच में हुए कि किसी प्रकार इन को भी समाप्त करो तो निर्द्वन्द्व राज्य हो जाए। सन 49 के अन्त में मुआविया मर गया और यज़ीद नारकी मुसलमानों का महन्त हुआ। यह मद्यप, पर स्त्रीगामी और बेईमान था, इसी हेतु इस के महन्त होने से अनेक लोगों ने अप्रसन्नता प्रकट की। मक्के और मदीने में सभ्य और अनेक प्राचीन लोग उस के धर्म्म शासन से फिर गए और अनेक लोग नगर छोड़ छोड़ कर दूर जा बसे। इमाम हुसैन का तो मानो वह शत्रु ही था। मदीना के हाकिम को लिख भेजा कि या तो इमाम हुसैन हमारा शिष्यत्व स्वीकार करैं या उन का सिर काट लो। मदीने के हाकिम ने यह वृत्त इमाम हुसैन से कहा और उन पर अधिकार जमाने को नाना प्रकार की उपाधि करने लगा। यह बिचारे दुःखी हो कर अपने नाना और मां की समाधि पर बिदा होने गए और रो रो कर कहने लगे कि नाना तुम्हारे धर्म्म के लोग निरपराध हुसैन को कष्ट देत हैं, हसन को विष दे कर मार चुके पर अभी इन को सन्तोष नहीं हुआ। तुम्हारे एक मात्र पुत्र और उत्तराधिकारी दीन हुसैन को महन्तों का पद त्याग करने पर भी यह लोग नहीं जीता छोड़ा चाहते। इसी प्रकार अनेक विलाप कर के अपनी मां और भाई की समाधि पर से भी बिदा हुए और अपनी सपत्नी नानियों और सम्बन्धियों से बिदा हो कर मक्के की ओर चले। इसी समय कूफा के लोगों ने इमाम को एक पत्र लिखा। उस में उन लोगों ने लिखा कि "हम लोग यज़ीद मद्यप के धर्म्मशासन से निकल चुके हैं, आप यहां

आइए, आप ही वास्तव में हमारे गुरु हैं, हम लोग आप के चरण के शरण में रहैंगे और प्राण पर्यन्त आप से अलग न होंगे। इस बात की हम शपथ करते हैं।'' इस पत्र पर कूफा के हजारों मनुष्यों के हस्ताक्षर थे। इस पत्र को पाकर इमाम ने कूफा जाना चाहा। उन के बन्धुओं ने उन से बहुत कहा कि कूफे के लोग झूठे होते हैं, आप उन का विश्वास न कीजिए। पर उन के ईश्वर की शपथ खाने पर विश्वास कर के इमाम ने किसी का कहना न सुना और अपने मक्का की यात्रा के समय अपने चचेरे भाई मुसलिम को कूफियों के पास भेजा कि उन को मक्का से लौटती समय इमाम के कूफा आने का संवाद पहिले से दें। इन को इधर भेज कर आप बन्दना के हेतु मक्के चले। मुसलिम जब कूफे पहुंचे तो इन का वहां के लोगों ने बड़ा शिष्टाचार किया और इमाम हुसैन के गुरुत्व को सब ने स्वीकार किया। यह देख कर इन्होंने इमाम को पत्र लिखा कि आप निश्शंक कूफा आइए; यहां के लोग सब आप के दासानुदास हैं और तीस हज़ार आदमियों ने आप को गुरु माना है। इस पत्र के विश्वास पर इमाम हुसैन कूफे की ओर और भी निश्चित हो कर चले और बान्धवों का वाक्य स्वीकार न किया। किन्तु शोच की बात है कि बिचारे मुसलिम वहां मारे जा चुके थे। कारण यह हुआ कि यज़ीद ने जब सुना कि कूफा में मुसलिम इमाम हुसैन का आचार्यत्व चला रहे हैं तो उस ने वहां के हाकिम को बदल दिया और उबैदुल्लाह ज़ियाद नन्दन को हाकिम बनाया और आज्ञा भेजा कि हुसैन को बकरे की भांति जिबह करो और मुसलिम को तो जाते ही मार डालो। जब ज़ियाद पुत्र शाम का हाकिम हुआ तो मुसलिम के पकड़ने की फिक्र में हुआ। पहिले तो कूफे के लोग मुसलिम के साथ उस के मकान पर चढ़ गए, परन्तु जब उस ने उन लोगों को धमकाया और लालच दिया तो एक एक कर के सब मुसलिम का साथ छोड़ कर चले गए और मुसलिम बिचारे भाग कर एक घर में जा छिपे। परन्तु लोगों ने उन को वहां भी जाने न दिया और पकड़ लाए और इब्ने ज़ियाद की आज्ञा से उन का सिर काटा गया और उन का साथी हानी भी मारा गया, वरंच उन के दो लड़कों को भी मार डाला। महात्मा मुसलिम मरने के समय यही कहते थे कि मुझे अपने मरने का कष्ट नहीं, क्यौंकि सत्य मार्ग स्थापन में मेरे प्राण जाते हैं। मुझे शोच यही है कि मेरे पत्र के विश्वास पर इन कृतघ्नी और विश्वासघाती कूफा वालों के विश्वास पर इमाम हुसैन यहां चले आवैंगे और उन महापुरुष के साथ भी ये कापुरुष कुपुरुष यही व्यवहार करैंगे और आचार्य्य मुहम्मद की सन्तान को निरपराध ये लोग वध कर डालैंगे। हाय! उन के भाई मुसलिम कूफे में यों अनाथ की भांति मारे गए, यह हुसैन को नहीं मालूम था और वे मंजिल मंजिल इधर ही बढ़े आते थे यहां तक कि जब शाम के हाते के भीतर पहुंच चुके तब उन्होंने मुसलिम का मरना सुना। उस समय आप ने अपने साथ के लोगों से कहा कि भाई अब तुम सब लोग अपने देश लौट जाओ, हम तो प्राण देने जाते हैं। उस समय वे सब लोग, जो अरब से

साथ आए थे, प्राण के भय से अपने सच्चे स्वामी को छोड़ कर चले गए। यहां तक कि हज़ारों की जमात में केवल बहत्तर मनुष्य साथ रह गए। जब इन लोगों के साथ इमाम सरलफ नामक स्थान पर पहुंचे तो हुर नामी उबेदुल्लाह का सेनापति दो हज़ार सिपाहियों के साथ मिला और वह इन लोगों को घेरकर शाम की तरफ बढ़ता हुआ ले चला। इस समय इमाम ने फिर सब लोगों को जाने को कहा, परन्तु अब तो वे लोग साथ थे जो सच्चे बन्धु थे। ऐसे कठिन समय में कौन साथ छोड़ कर जा सकता था। इसी समय शाम से और भी फौजें आने लगीं। इमाम ने उन लोगों को बहुत समझाया और कहा कि हम यज़ीद के राज्य के बाहर चले जाएं, किन्तु किसी ने उनकी बात न सुनी। जब इमाम का डेरा करबला नामक स्थान में पड़ा था, उस समय शिमर नामक इब्ने ज़ियाद के सेनापति ने फुरात नहर का पानी भी इन पर बन्द कर दिया। एक तो गरमी के दिन, दूसरे सफर की गरमी और उस पर यह आपत्ति कि पानी बन्द। शिंमर और उमर इस लश्कर में मुख्य थे। यदि इन में से किसी को भी कभी दया और धर्म्म सूझता भी, लोभ उसे हटा देता।

कहते हैं कि यज़ीद हिमदानी ने साद से जाकर इमाम के बास्ते पानी मांगा और कहा कि क्या तुम को ईश्वर को मुंह नहीं दिखलाना है जो अपने गुरुपुत्र को निरपराध वध कहते हो? इस के उत्तर में उस दुष्ट ने कहा कि हम रै की हाकिमी को धर्म्म से अच्छी समझते हैं। अन्त में उबैदुल्लाह ने सादपुत्र को आज्ञा लिखा कि क्यौं इतनी देर करते हो? या तो हुसैन का सिर लाओ या उन को यज़ीद के मत में लाओ। इस आज्ञा के अनुसार (सन 61 हिजरी के) 9वीं मुहर्रम की सन्ध्या को अट्ठाईस हजार सेना से उमर ने इमाम का लश्कर घेर लिया। इमाम उस समय सन्ध्या की वन्दना में थे। उठ कर सेना से कहा कि रात भर की मुझे और फुरसत दो। उमर ने इस बात को माना। इमाम ने साथ के लोगों से कहा कि अब अच्छा है चले जाओ और मेरे पीछे प्राण मत दो। परन्तु किसी ने न माना और सब मरने को उद्यत हुए। रात भर सब लोग ईश्वर की स्तुति करते रहे। सबेरे इमाम ने स्त्रियों को धैर्य्य और सन्तोष का उपदेश दिया और आप ईश्वर का स्मरण करते हुए सब हथियार बांध कर अपने साथियों के साथ मरने को निकले। इन के साथ जितने लोग मारे गए उन की संख्या बहत्तर है। इन में बत्तीस सवार और चालीस पैदल थे। सरदारों में मुसलिम बिन उन का जरगामः, वहब उन्स, मालिक, हुज्जाज, ज़हीर, असदी, आमिर, उम्मग, उमरान, शईब यमर, शूदब और हबीब इब्ने मज़ाहिर (एक वृद्ध मनुष्य) थे ओर इमाम के नातेदारों में इन की बहिन ज़ैनब के दो लड़के मुहम्मद और ऊन, और तीन मुसलिम के भाई, पांच इमाम हुसैन के विमात्र भाई अब्बास, उसमान, मुहम्मद अब्दुल्लाह और जाफर और तीन पुत्र इमाम हसन के अब्दुल्लाह, जैद और कासिम (किसी के मत से पांच अबूबकर और उमर भी) और एक पुत्र इमाम हुसैन के अली अकबर (अठारह बरस के) इतने मनुष्य थे। युद्ध होने के पूर्व

इमाम एक ऊंट पर बैठ कर सेना के सामने आए और मृदु और गम्भीर स्वर से बोले कि हम ने किसी की स्त्री छीनी या किसी का धन हरण किया या कोई और बात धर्म्म विरुद्ध की? किस बात पर तु लोग हम को निरपराध बध करते हो? इस का उत्तर किसी ने न दिया, तब इमाम यह कह कर उस ऊंट पर से उतरे कि हमने संसार में तुम से हुज्जत समाप्त कर ली, अब ईश्वर के यहां हमारा तुम्हारा झगड़ा है और घोड़े पर सवार हुए। युद्ध आरम्भ हुआ और बड़ी वीरता से इन के साथी सब मारे गए। अन्त में इमाम अपने एक छोटे बच्चे को, जो प्यास से व्याकुल हो रहा था, उन लोगों के सामने लाए और कहा कि इस नौ महीने के बच्चे पर दया करके केवल इसके पीने को तो पानी दो। इस के उत्तर में उन दुष्टों में से एक ने ऐसा तीर मारा कि वह बच्चा वहीं मर गया। और फिर चारों ओर से घेर कर हज़ारों वार लोगों ने किए, यहां तक कि वे घोड़े पर से गिरे। उस समय किसी ने उन का सिर काटा, किसी नें मरे पर भाला मारा, किसी ने हाथ की उंगली नोची। इस पर भी इन लोगों को सन्तोष न हुआ और उन लोगों के मरे शरीर पर घोड़े दौड़ाए। हाय! इतने बड़े मनुष्य की यह गति! भूख प्यास से दुःखी और दीन मनुष्य को निरपराध बाल बच्चे समेत स्त्रियों के सामने मारना इन्हीं लोगों का काम है, उस पर भी गुरु पुत्र को।

नं.	नाम	बाप का नाम	मां का नाम	जन्म का समय	अवस्था
1	मुहम्मद	अब्दुल्लाह	अमीना	12 रबीउलऔवल 52 हिजरी के पूर्व	63
2.	फ़ातिमा	मुहम्मद	ख़दीजा	604 ईसवी	28
3.	अली	अबूतालिब	फ़ातिमा (असद की बेटी)	599 ईसवी 11 रजब मक्के में	62
4.	हसन	अली	फ़ातिमा	15 शाबान सन 2 हिजरी 625 ई.	45½
5.	हुसैन	अली	फ़ातिमा	5 शाबान सन 4 हिजरी 626 ई.	51 वर्ष 5 महीना 5 दिन
6.	अबूबकर	अबीक़हाफ़	उमउल् खैर	571 ईसवी	63

मृत्यु का समय	सन्तति	गाड़े जाने का स्थान	विशेष विवरण
12 रबीउल्औ. 632 ईसवी 11 हिजरी	4 पुत्र, 4 कन्या	मदीना	बहु देववादी भूतपिशाचोपासी अरब जाति में इन्हीं ने एकेश्वरवाद स्थापन करके मुसलमानी मत चलाया; ग्यारह विवाह किए बुद्धि आश्चर्य कौशल सम्पन्न थी। किसी के मत में 14 विवाह 18 सन्तति।
11 हिजरी	3 पुत्र, 2 कन्या	मदीना	महात्मा मुहम्मद की एक मात्र वंश रखनेवाली प्यारी कन्या थी। स्वभाव बहुत नम्र और दयालु था।
40 हिजरी 19 रमजान	17 पुत्र वा 19, 17 कन्या	कूफा. नजफ ठीक नहीं मालूम	सुन्नियों के चौथे खलीफ़ा। शियाओं के पहले इमाम। पांच बरस तीन महीना खिलाफ़त किया। माता और पिता दोनों सम्बन्ध में यह म. मुहम्मद के बहुत पास थे अर्थात् चचेरे और मौसेरे भाई थे। यह सैयदों के वंशकर्त्ता और फकीरों के मूल गुरु हैं। नौ विवाह किए थे।
1 रबीउल् औवल 99 हिजरी 670 ईसवी	19 पुत्र, 8 कन्या	मदीना	सुन्नियों के पांचवें खलीफ़ा तथा शियाओं के दूसरे इमाम थे। छह महीना खिलाफत किया। विष से शहीद हुए। पांच पुत्रों का वंश है।
10 मुहर्रम 61 हिजरी 683 ई.	6 पुत्र, 8 कन्या	करबला	शियाओं के तीसरे इमाम। करबला के प्रसिद्ध युद्ध में शहीद हुए।
13 हिजरी 634 ई.	3 पुत्र, 2 कन्या	मदीना	सुन्नियों के पहले खलीफ़ा थे। महात्मा मुहम्मद के पीछे दो बरस तीन महीना खलीफ़ा रहे। महात्मा मुहम्मद की छोटी स्त्री आयशा के पिता थे। चार स्त्री थीं और मुसलमानी धर्म फैलाने को इन्होंने बहुत सा द्रव्य व्यय किया था।

नं.	नाम	बाप का नाम	मां का नाम	जन्म का समय	अवस्था
7.	उमर	ख़िताब	ख़तमा	582 ईसवी	63
8.	उसमान	अफ़ान	अरदी	575 ईसवी	82
9.	इमाम जैनुलाबदीन	इमाम हुसैन	शहरबानू (नौशेरवां से पांचवीं)	36 हिजरी	58
10	इमाम बाकर	हुसैन के पुत्र अली	उस्म (अबदुल्ल हुई इमन की बेटी)	58 हिजरी	63
11	इमाम जाफर सादिक	बाकर	उम्मे फरदा (अबूबकर की पोती)	80 वा 83 हिजरी	67
12	इमाम मूसा काज़िम	जाफर	हमीरा	128 हिजरी	45 या 55
13	अलीरजा	मूसा काजि	तकीम	153 हिजरी	49
14	अबूजाफर नकी	अली	रहीना	195 हिजरी	25
15	अबूलहसन असकरी तकी	नका	समाना	214 हिजरी	40
16	अबूमहम्मद	असकरी	सौसन	232 हिजरी	28

मृत्यु का समय	सन्तति	गाड़े जाने का स्थान	विशेष विवरण
23 हिजरी 44 ई.	9 पुत्र, 3 कन्या	मदीना	दूसरे खलीफ़ा थे, 10 बरस आठ महीने खलीफ़ा रहे। शहीद हुए, 6 पत्नी और दो उप पत्नी थीं।
35 या 34 हिजरी 652 ई.	3 पुत्र, 4 कन्या	मदीना	तीसरे खलीफ़ा थे। 12 बरस खलीफ़ा रहे। इनको महात्मा मुहम्मद की दो बेटियां ब्याही थीं किन्तु उनको सन्तति नहीं थीं। आठ स्त्री थीं। पूर्वोक्त तीनों खलीफ़ा की सन्तति शेख कहलाती हैं।
94 हिजरी	9 पुत्र, 8 कन्या	मदीना	शीआ लोग केवल इन्हीं की सन्तति को सैयद मानते हैं।
118 वा 117 हिजरी	11 पुत्र, 4 कन्या	मदीना	
148 हिजरी	6 पुत्र, 3 कन्या	मदीना	
183	2 पुत्र, 1 कन्या	बुगदाद	शीआ कहते हैं कि सुन्नियों के उपद्रव से अरब छोड़ कर चले गए। किन्तु सुन्नी कहते हैं कि उस काल के खलीफ़ा बुगदाद में रहते थे इस से आदर के हेतु इन को भी वहीं बुला कर बसाया। ये बड़े भारी वंशकर्त्ता हुए हैं।
203	8 पुत्र, 22 कन्या	बुगदाद	शीआ मत का विशेष प्रचार किया। किन्तु सुन्नी लोग कहते हैं कि ये लोग भी सब सुन्नी थे।
220	5 पुत्र, 1 कन्या	बुगदाद	
254	2 पुत्र, 2 कन्या	सरमनराय	
260	2 पुत्र, 1 कन्या	सरमनराय	

नं.	नाम	बाप का नाम	मां का नाम	जन्म का समय	अवस्था
17.	अबुल्कासिम मिहदी	अबूमुहजकी	नरगिस	255 हिजरी	0
18.	इमाम अबूहनीफ	साबित		80	77
19.	इमाममालिक	उन्स	उमउलूमुहसिन (इमामहसन के परपोते की बेटी)	95	84
20.	इमाम शाफई	इरदोस		150	54
21.	इमाम जुमल	मुहम्मद		165	76
22.	इनाम गौस	अबासालिह (इमामहुसेन के वंश में)	फातिमा उम उलूखैर (इमाम हसन के वंश में)	470	91

मृत्यु का समय	सन्तति	गाड़े जाने का स्थान	विशेष विवरण
267	1 पुत्र 0	बुगदाद	शीआओं के मत से 9 वर्ष की अवस्था में पर्वतगुहा में चले गए फिर प्रलय के समय निकलेंगे। सुन्नियों के मत से अभी जन्म ही नहीं हुआ, प्रलय में पैदा होंगे।
150	0	मदीना	
179	0	मिस्र	नं. 18 से 21 तक ये सुन्नी मत के चार इमाम हैं, शीआ इन को नहीं मानते। ये चारों पृथक् मत के प्रवर्तक हैं यथा हानिफी, मालिकी, शाफेई और जम्बूली।
204	0	बुगदाद	अकबर के वंश के बादशाह हानिफी थे। दत्तात्रेय की भांति अबूहनीफा ने अनेक गुरु किए थे, जिनमें इमाम जाफर
242	0	बुगदाद	भी थे। सुन्नियों में इन्हीं चारों की चार मुख्य मत शाखा हैं। ये क्रम से एक के दूसरे
561	0	बुगदाद	शिष्य भी थे। सुन्नियों में ये एक प्रसिद्ध इमाम हुए हैं, हसनी हुसैन सैयद थे और बड़े भारी विद्वान् और सिद्ध थे। शीआ लोग इनको नहीं मानते हैं वरंच सैयद भी नहीं कहते।

[रचनाकाल—सन 1884 ई., विक्टोरिया प्रेस बनारस से पुस्तकाकार प्रकाशित]

बादशाहदर्पण

अर्थात

[हिन्दुस्तान के मुसलमान बादशाहों के समय और
जन्म आदिक मुख्य बातों के वर्णन का चक्र]

भूमिका

रामायण में भगवान बाल्मीकिजी ने कहा है जो वस्तु हुई हैं नाश होंगी, जो खड़ी हैं गिरैंगी, जो मिलैं हैं बिछुड़ैंगे, और जो जीते हैं, अवश्य मरैंगे। सच है इस जगत की गति पहिए की आर की भांति है। जो आर अभी ऊपर थी नीचे गई और जो नीचे थी ऊपर हो गई। आधी रात को सूर्य्य का वह प्रचंड तेज कहां है जो दोपहर को था? दिन को ठंडी किरनों से जी हरा करने वाला चन्द्रमा कहां है? संसार की यही गति है। जो भारतवर्ष किसी समय में सारी पृथ्वी का मुकुटमणि था, जिस की आन सारा संसार मानता था और जो विद्यावीरता और लक्ष्मी का एकमात्र विश्राम था वह आज हीन दीन हो रहा है—यह भी काल का एक चरित्र है।

जब से यहां का स्वाधीनता सूर्य्य अस्त हुआ उस के पूर्व समय का उत्तम शृंखलाबद्ध कोई इतिहास नहीं है। मुसलमान लेखकों ने जो इतिहास लिखे भी हैं उन में आर्य्य की कीर्ति का लोप कर दिया है। आशा है कि कोई माई का लाल ऐसा भी होगा जो बहुत सा परिश्रम स्वीकार कर के एक बेर अपने 'बाप दादों का' पूरा इतिहास लिख कर उन की कीर्ति चिरस्थायी करैगा।

इस ग्रन्थ में तो केवल उन्हीं लोगों का चरित्र है जिन्होंने हम लोगों को गुलाम बनाना आरम्भ किया। इस में उन मस्त हाथियों के छोटे छोटे चित्र हैं जिन्होंने भारत के लहलहाते हुए कमलवन को उजाड़ कर पैर से कुचल कर छिन्न भिन्न कर दिया। मुहम्मद, महमूद अलाउद्दीन, अकबर, और औरंगज़ेब आदि इनमें मुख्य हैं।

प्यारे भोले भाले हिन्दू भाइयो! अकबर का नाम सुन कर आप लोग चौंकिए मत। यह ऐसा बुद्धिमान शत्रु था कि उस की बुद्धि बल से आज तक आप लोग उस को मित्र समझते हैं। किन्तु ऐसा नहीं है। उसकी नीति (Policy) अंगरेजों की भांति गूढ़ थी। मूर्ख औरंगज़ेब उस को समझा नहीं, नहीं तो आज दिन हिन्दुस्तान मुसलमान होता। हिन्दू-मुसलमान में खाना पीना ब्याह शादी कभी चल गई होती। अंगरेजों को भी जो बात नहीं सूझी वह इस को सूझी थी।

यद्यपि उस उर्दू शे'र के अनुसार 'बागबां आया गुलिस्तां में कि सैयाद आया। जो कोई आया मेरी जान को जल्लाद आया।' क्या मुसलमान, क्या अंगरेज भारतवर्ष

को सभी ने जीता, किन्तु इन में उन में तब भी बड़ा प्रभेद है। मुसलमानों के काल में शत सहस्र बड़े बड़े दोष थे किन्तु दो गुण थे। प्रथम तो यह कि उन सबों ने अपना घर यहीं बनाया था इस से यहां की लक्ष्मी यहीं रहती थी। दूसरे बीच बीच में जब कोई आग्रही मुसलमान बादशाह उत्पन्न होते थे तो हिन्दुओं का रक्त भी उष्ण हो जाता था इस से वीरता का संस्कार शेष चला आता था। किसी ने सच कहा कि मुसलमानी राज्य हैज़े का रोग है और अंगरेज़ी क्षयी का। इन की शासन प्रणाली में हम लोगों का धन और वीरता निःशेष होती जाती है। बीच में जाति-पक्षपात, मुसलमानों पर विशेष दृष्टि आदि देख कर लोगों का जी और भी उदास होता है। यद्यपि लिबरल दल से हम लोगों ने बहुत सी आशा बांध रक्खी है पर वह आशा ऐसी है जैसे रोग असाध्य हो जाने पर विषवटी की आशा। जो कुछ हो, मुसलमानों की भांति इन्होंने हमारी आंख के सामने हमारी देवमूर्त्तियां नहीं तोड़ीं और स्त्रियों को बलात्कार से छीन नहीं लिया, न घास की भांति सिऱ काटे गए और न जबरदस्ती मुंह में थूक कर मुसलमान किए गए। अभागे भारत, को यही बहुत है। विशेष कर अंग्रेजों से हम लोगों को जैसी शुभ शिक्षा मिली है, उस के हम इन के ऋणी हैं। भारत कृतघ्न नहीं है। यह सदा मुक्तकंठ से स्वीकार करैगा कि अंगरेज़ों ने मुसलमानों के कठिन दंड से हम को छुड़ाया और यद्यपि अनेक प्रकार से हमारा धन ले गए किन्तु पेट भरने को भीख मांगने की विद्या भी सिखा गए।

मेरे प्रमातामह राय गिरधरलाल साहब, जो यावनी विद्या के बड़े भारी पंडित और काशीस्थ दिल्ली के शहज़ादों के मुख्य दीवान थे,उन की इच्छा से दिल्ली के प्रसिद्ध विद्वान सैयद अहमद ने एक ऐसा चक्र बनाया था, जिस में तैमूर से लेकर शाहआलम तक सब बादशाहों के नाम आदि लिखे थे। उस फारसी ग्रन्थ से इस में बहुत सी बातें ली गई हैं, इस कारण तैमूर के पूर्व के बादशाहों का वर्णन इतना पूरा नहीं है जितना तैमूर के पीछे है। फिर मेरे मातामह राय खिरोधरलाल ने बहादुरशाह के काल के आरम्भ तक शेष वृत्त संग्रह किया। और और बातें और स्थानों से एकत्र की गई हैं। इस में परम्परागत बहुत से बादशाहों के नाम हैं जो और इतिहासों में नहीं मिलते।

यद्यपि इससे कुछ विशेष उपकार नहीं है किन्तु हम लोगों का इससे बहुत सा कौतूहल शांत होगा जब हमलोग इसमें बादशाहों की माता आदि के नाम जो अन्य इतिहासों में नहीं है, पढ़ैंगे।

क्र.स.	बादशाहो के नाम	बाप का नाम	जाति	राज्य पाने का समय	अवस्था	मरने का समय	मृत्यु का कारण	विवरण
1.	कुतुबुद्दीन ऐबक	0	गोरी बादशाहों का दास	1206	बूढ़ा होकर मरा	1210	घोड़े से गिर कर	पहले शहाबुद्दीन मुहम्मद-गोरी का गुलाम था। सन् 1193 में जब पृथ्वीराज से दिल्ली ली तब मुहम्मद इसी को यहां का राज दे गया। यही गुलाम हिन्दुओं की गुलामी का मूल है। (सन् 1206 में मुहम्मद मरा। सं.)
2.	आरामशाह	क़ुतुबुद्दीन	0	1210	नहीं मालूम	0	0	साल भर तख्त पर नहीं रहा कि शमसुद्दीन अलतिमश ने उतार दिया।
3.	शमशुद्दीन अलतिमश	0	0	1210	0	1236	स्वाभाविक	बहुत देश जीते। चंगेजखां इसी के काल में आया।
4.	रुकनुद्दीन फीरोजशाह	शमसुद्दीन अलतिमश	0	1236	0	0	0	सात ही महीने तख़्तपर रहा। बड़ा विषयी और निकम्मा था।
5.	रज़िया बेगम	तथा	0	1236	0	1239	मारी गई	बड़ी सावधान थी। हबशी गुलाम पर विशेष कृपा करने के कारण लोगोंने मार डाला।
6.	मुईजुद्दीन बहराम	तथा	0	1239	0	1241	कैद में मरा	बड़ा मूर्ख था।
7.	अलाउद्दीन मसऊद	फीरोज़शाह	0	1241	0	1246	मारा गया	

8.	नासिरुद्दीन महमूद	अलतिमश	0	1246	बूढ़ा होकर मरा	1266	स्वाभाविक	बहुत अच्छे स्वभाव का था।
9.	ग़यासुद्दीन बलबन	0	0	1266	80 वर्ष	1286	0	महमूद का बहनोई था।
10.	मुईजुद्दीन कैकुबाद	कुराखो (बलबन का बेटा)	0	1286	20 वर्ष	1288	मारा गया	मूर्ख था।
11.	जलालुद्दीन फरोज-खिलजी	0	खिलजी पठान	1288	बूढ़ा	1295	तथा	सीधा था।
12.	अलाउद्दीन	जलालुद्दीन का भतीजा	तथा	1295	अधेड़	1616	स्वाभाविक	बड़ा दुष्ट था। पहले अपने बूढ़े चाचा को मरवाया फिर अनेक पाप किए। चित्तौर, रणथम्भौर, प्रथम विश्वनाथ का मन्दिरादि इसी चांडाल ने तोड़ा। बड़ा ही क्रूर और उपद्रवी था।
13.	कुतुबुद्दीन मुबारक-शाह	अलाउद्दीन	तथा	1616	0	1321	हिंदू गुलाम के हाथ मारा गया	बाप की भांति गोत्रहंता और क्रूर था। विशेषता यह थी कि आप विषयी और नीच भी थे। इसके पीछे चार महीने इसके गुलाम खुसरो खां ने सिक्का चलाया।
14.	गयासुद्दीन	0	तुगलक	1321	0	1325	काठ के मकान के नीचे दबकर मरा	अच्छा था।

15.	फखरुद्दीन महम्मद तुगलक (अलगखां)	गयासुद्दीन	तथा	1325	0	1351	स्वाभाविक	राजा शिवप्रसाद के लिखने के अनुसार बड़ा दाता, बड़ा पंडित, बड़ा बुद्धिमान, बड़ा भाग्यवान, बड़ा वीर, बड़ा मूर्ख, बड़ा क्रूर, बड़ा झक्की और बड़ा पागल था।
16.	फ़ीरोजशाह	मुहम्मद	तथा	1351	90	1388	तथा	अच्छा था। बहुत से धर्मार्थ काम किए।
17.	ग़यासुद्दीन	फ़ीरोजशाह	तथा	1388	0	1389	मारा गया	पांच, महीने राज्य किया। मूर्ख था।
18.	अबूबकर	तथा (पोता)	तथा	1389	0	0	कैद में मरा	एक वर्ष भी पूरा राज्य न किया।
19.	नासिरुद्दीन मुहम्मद	तथा	तथा	1390	0	0	स्वाभाविक	
20.	हुमायूं सिकंदरशाह	नासिरुद्दीन	तथा	1394	0	1394	तथा	केवल 45 दिन बादशाह था।
21.	नासिरुद्दीन महमूद	सिकंदरशाह	तथा	1394	0	1412	तथा	

क्र. सं.	बादशाहों के नाम	बाप का नाम	मां के जाति नाम	जन्म का वर्ष	कहां राज्य पर बैठे	किस अवस्था में राज्य पर बैठे	किस सन में राज पाया	फारसी में राज पर बैठने की तारीख
22.	अमीर तैमूर साहब किरान कुतुबुद्दीन	अमीरतुराग़ान	नगीना चुग़त्ताई ख़ातून	सन् 736 हिजरी में शाबान की 27 को मंगल की रात	बलख	35 वर्ष 15 दिन, परन्तु जब दिल्ली में राज पर बैठे तब 65 वर्ष 4 महीने कुछ दिन के थे	बुधवार 12 रमजान सन 771 हि.। दिल्ली में राज पर बैठने का सन् शुक्रवार मुहर्रम मास सन् 801 हिजरी	सुलतान तैमूर कि मिस्ल ओ शाह नबूद। दर हफ्त सद हफ्ताद यके कर्द जलूस॥
23.	नुसरत शाह	बरोमंदखां	0 लोदी	9 रजब सन् 762 हिजरी	दिल्ली	38 वर्ष 8 महीना कुछ दिन के थे	रबीउलऔवल सन् 801 हिजरी	ज़द चू सुसरत शाह बर औरंग, सुलतानी कदम। दाद अल्को दार्निश अफ़ज़ूमी व फर्हंग दाद॥ फिक्र तारीखश हमीकर्दम कि, अज़रूए जलाल। हातिफे गूफ्ता बिगो आराइशे औरंग दाद॥

कब तक राज किया	सिक्का	अवस्था	किस सन् में मरे	फारसी में मरने की तारीख	मरने के पीछे उपनाम क्या हुआ	कहाँ गाड़े गए	ईसवी सन् जुलूस	ईसवी सन् मरने का	विवरण
35 वर्ष 11 महीना 5 दिन दिल्ली में	एक ओर कलमा एक ओर नाम	70 वर्ष 11 मास 20 दिन	बुध की रात 17 शावान सन् 808 हिजरी	सुलतान तैमूर कि मिस्ल ओ शाह नबूद। दर हफ्त सदो सी व शश आमद वजूद॥ दर हफ्तसदो हफ्ताद यके कर्द जलूस। दर हश्तसदो हफ्त कर्द आलम पिदरूद॥	उलमी मकां	समरकंद	1398	1434	दिल्ली के मनुष्यों को साग घास की भाँति काटा। भारतवर्ष के अन्तिम बादशाह इसी के वंश में हुए हैं, बड़ा ही निर्दय था। एक पाँव का लँगड़ा था इसी से इसको तैमूर लंग कहते हैं।
11 मास	इस भय से कि अमीर-तैमूर की ओर से कुछ उपद्रव न हो अपना सिक्का नहीं चलाया।	46 वर्ष 4 महीने 19 दिन	27 ज़ीकाद सन् 808 हिजरी	नुसरत शह सिपहर मुलाजिम चु शुद बखुल्द।0 दर सरेशक ता सरे मिज़गां बसिफते अल्क॥ बूदम बफिक्रे साल वफातश कि नागहां। साले वफाते कब्र मुकर्रर बगुफ्त अल्क॥		मेवात के देश	1398	1396	नाम मात्र का राज्य किया

24.	एकबाल खां	ज़फर खां	0	लोदी	7 सफर सन् 759 हिजरी	दिल्ली	43 वर्ष कुछ दिन के थे	सफर सन् 802 हिजरी	शाह अकबाल खां नुसरतमंद। जायश तख्त शुद बअज्म शही॥ साल तारीख गुफ्त हातिफ शुद। महफिले इज़ बज्मे शही॥
25.	दौलत खां	महमूद खां	0	लोदी	7 सफर सन् 759 हिजरी	मुल्तान की ओर	49 वर्ष 2 मास कुछ दिन	29 जमादिउल औवल सन् 808 हिजरी	
26.	अखतियार खां	0	0	लोदी	आखिर सन् 761 हिजरी	0	47 वर्ष	0	
27.	सुल्तान महमूद	0	0	लोदी	8 रजब सन् 746 हिजरी	दिल्ली	61 वर्ष 11 मास 14 दिन के थे	जमादिउस्मानी सन् 808 हिजरी	शुद चू बर तख्ते शह गाजी सुलतान महमूद। दौलतश बेश व गुलामानः अश इकबाल अज़ बस॥ हातिफ अज़ मनज़र कुदूस आमद : आवाज कुनां। कुदरते अदल बूद साल जलूस अकदस॥
28.	दौलत खां (दूसरी बेर)	महमूद खां	0	लोदी	सफर सन्	कैथल 759 हिजरी	45 वर्ष 8 की ओर दिन	1 ज़िलहिज् मास कुछ हिजरी	कर्द दौलत खां बताई दे खुदाए जुल्मनन। सन् 815 रूए दौलतरा बहुस्न सई झूं रूए अरूस॥ गुप्त हातिफ अज़ सरे इकबाल बा सद खुर्रमी। रोजगारे ऐश आमद साल तारीखेजलूस॥
29.	खिज़िर खां	मलिक सुभान	0	सैयद	10 रंबीउल औवल सन् 749 हिजरी	दिल्ली	45 वर्ष 5 दिन	15 रबीउल औवल सन् 817 हिजरी	चूं खिजिर खां बतख्त कर्द जलूस। मरहम सीन : हाए रेश आसद॥ बहर तारीख ओ जलूस सरोश। गुफ्त हुस्न फाद पेश आमद॥

6 वर्ष 2 मास कुछ दिन	एक ओर कलमा एक ओर नाम	49 वर्ष 2 मास कुछ दिन	27 जमादि- उल औवल सन् 808 हिजरी	चू शहे इकबाल खाँ फर्मान्दहे किश्वरसितां। दावरे इल्कीमगीरो परवरिश फर्माए खुल्क॥ याफ्त जा दर सायए तौबा बकस्रे हूर ऐन। सालश अज़रूए बका शुद आह वावैलाए खुल्क। गुफ्त हातिफ साल ओ यक साहबे दौलत बमुर्द।	0	मुल्तान की ओर	1399	1404	नाम मात्र को राज्य किया
23 दिन	0	53 वर्ष 2 मास कुछ दिन	जमादिउल औवल सन् 817 हिजरी		0	फिरोज़ा- बाद के प्रान्त में	1405	1404	तथा
0	0	नहीं मिला	नहीं मिला		0	नहीं मिला	0	0	तथा
7 वर्ष 5 मास 7 दिन	एक ओर कलमा एक ओर नाम	69 वर्ष 4 मास 21 दिन	21 ज़िकाद सन् 815 हिजरी	ज़द कोसे फना ज़े बसकि सुलतान महमूद। आमद ग़म अज़ी हादस : अज़ ग़म दिल खून॥ हातिफ़ बग़मो अलम शुद्ध बेह गुफ्त अज़ हेफ। साज़द अलमो दर्द बमन रोज़ अफजूं॥	0	कैथल	1405	1412	तथा
1 वर्ष 5 मास कुछ दिन	एक ओर कलमा एक ओर नाम	58 वर्ष 2 मास कुछ दिन	जमादिउल औवल सन् 817 हिजरी	रह चु दौलत खाँ बसूए जिन्नत अल्मावा गिरिपफ्त। आलमे अज़ दर्दो ग़म सद नालः राबर चर्ख बुर्द॥ सर बजेबे फिक्र बुर्दम ताकि तारीखे बेह नज़म। गुफ्त हातिफ साल ओ एक साहबे दौलत बमुर्द॥	0	फिरोजा- बाद	1412	1413	तथा
7 वर्ष 2 मास 2 दिन	एक ओर कलमा एक ओर नाम	65 वर्ष 2 मास 7 दिन	17 जमादि- अल औवल सन् 824 हिजरी	चूँ रख्त अजीं जहाँ खिज़खाँ बर बस्त। नख्ले तबें जहां बयफ्ताद अज़ बेख॥ हातिफ अज़ जेबे फिक्र बरज़दः गुफ्त। दर्द अर्ज़ा रोज़ अफजूं तारीख॥	0	दिल्ली	1416	1421	पंजाब का हाकिम था। स्वयं बादशाह बन बैठा।

30.	मुइजुद्दीन ऐवानफतह मुबारकशाह	ख़िज़्र खां	मालिका जहान	सइयद	20 शाबान सन् 795 हिजरी	दिल्ली	28 वर्ष 8 मास 29 दिन	19 जमादि-उज्औवल सन् 824 हिजरी	गश्त चूं बादशाह मुबारक शाह। शादी आमाद : गश्त व बरपा जश्न॥ साल तारीख है खुजस्त : जलूस। शुद निगहबान आलम आरा जश्न॥
31.	मोहम्मद शाह	फरीद खां बेटा खिज़्र खां	0	सैयद	रबीउलऔवल सन् 825 हिजरी	दिल्ली	12 वर्ष 6 मास कुछ दिन	5 रमजान सन् 838 हिजरी	शुद मुहम्मदशाह चूंबर तख्ते दौलत कामयाब। ताबअ फर्मान ओ शुद बादशाह रूमो रूस॥ बदम अन्दर फिक्र तारीखश कि, हातिफ गुफ्त जूद। आसफे इनसाफो सिकंदर अद्ल तारीखे जलूस॥
32.	सुल्तान अलाउद्दीन	मुहम्मदशाह	जहान-आरा बेगम	सैयद	20 मोहर्रम सन् 840 हिजरी	दिल्ली	9 वर्ष 9 मास 2 दिन	22 शौव्वाल सन् 849 हिजरी	सुलतान अलाउद्दीन चु दर वक्ते सईद। बर सर बनिहाद ताज अज जोरे हिसाम॥ गुफ्तम कि ज़े साल चेगोयम हातिफ़। फर्मूद कि ताज बादशाहे इस्लाम।
33.	सुल्तान बहलूल	कालाबहादुर	0	लोदी	ज़ीकाद सन् 824 हिजरी	पंजाब की ओर	31 वर्ष कुछ दिन	सन् 855 हि. दिल्ली में 25 जिलहिज सन् 856 हिजरी	शाह बहलोल चूँ बतख्त नशस्त। अदलो साज़ो ज़ेब मुमलकत अस्त। गुफ्त दिल साल चीस्त हातिफ गुफ्त। कि बहारे जलूस सलतनत अस्त॥

13 वर्ष 3 मास 16 दिन	कुछ दिन अमीर तैमूर के नाम से रक्खा फिर अपने नाम का चलाया	47 वर्ष 15 दिन	5 रमजान सन् 837 हिजरी	आमाद : चू शुदाय सफर अज़ दुनिया। सुलतान मुबारक शहे दौलत बदोश॥ आवाज़ आमद बराय तारीख वफ़ात। सई सफ़रे रूहे मुजस्सिम जे सरोश॥	0	दिल्ली	1421	1446	मारा गया
12 वर्ष 2 मास 3 दिन	एक ओर कलमा एक ओर नाम	24 वर्ष 7 मास कुछ दिन	30 शौव्वाल सन् 849 हिजरी	चू मुहम्मदशह यगानद कि बूद। दौलत श बंद : चाकर इकबालश॥ शुद बजिन्नत सरोश गैबी गुफ्त। नौह : व आह अश दर सालश॥	0	दिल्ली	1434	1446	
7 वर्ष 2 मास 3 दिन	एक ओर कलमा एक ओर नाम	42 वर्ष कुछ महीना कुछ दिन	आखिर सन् 883 हिजरी		0	बदाऊं	1446	1477	बहलूल लोदी को दिल्ली की सल्तनत देकर आप बदाऊं चला गया उस समय दिल्ली की बादशाहत केवल छह कोस के घेरे में रह गई थी।
38 वर्ष 7 मास 7 दिन दिल्ली में 17 वर्ष 7 मास दिन	एक ओर कलमा एक ओर नाम	69 वर्ष 8 मास कुछ दिन	2 शाबान सन् 894 हिजरी	शाहनशहे आलम शहे बहलोल कि दीदी। उफ्ताद दर एतराफ जनां सुल्ले जलालश॥ दर खुल्द व गुफ्त सरोश अज सरे जिन्नत। कस्द सफरे आलमे अरवाह रिसालश॥	0	दिल्ली	1450	1488	अमल्दारी बढ़ाई, प्रबन्ध भी किया।

34. निज़ाम खां उपनाम अलाउद्दीन सिकंदर शाह	सुलतान बहलूल	पन्ना जो एक सोनार की बेटी थी उपनाम बीबी सोनारी	लोदी	जमादिउल्-औवल सन् 825 हिजरी	कसब : जलाली	65 वर्ष 3 मास कुछ दिन	12 शाबान सन् 894 हिजरी	
35. सुल्तान इब्राहीम	सिकंदर शाह	0	लोदी	5 ज़ीकाद सन् 856 हिजरी	दिल्ली	59 वर्ष 16 दिन	21 जिकाद सन् 915 हिजरी	चूं अफसरे दौलत अज़ सरे इब्राहीम। गर्दीद चू चतर ओ सआदत आमोद॥ साल तारीख है हुमायूं साअत हातिफ। गुफ्ता नह ताज दौलत आसूद॥
36. जहीर-उद्दीन मुहम्मद शाह बाबर	उमर शेख मिर्ज़ा	कतलक निगार खानम यूनास खां की बेटी	चुराताई	6 मुहर्रम सन् 888 हि. यही तारीख पैदाइश की है	अन्दोजान समर्कन्द	11 वर्ष 7 मास 29 दिन दिल्ली में 44 वर्ष 6 मास	5 रमजान सन् 899 हि. पानीपत में दिन शुक्रवार 7 रजब सन् 932 हिजरी	नसीरुद्दीन मुहम्मद शाह बाबर। कसकंदर दौलतौ बहराम सौलत॥ बदौलत कर्द फत्हे खत्तए हिंद। कि तारीख आमदश फत्हे बदौलत। कुश्त दर पानीपत इब्राहीम रा। शाह आदिल बाबरे आली लकब॥ रोज़ माह साल वक्तुल् जफर। सुब्ह बूदो जुम्म : व हफ्त रजब॥

11 वर्ष 3 मास 1 दिन	एक ओर कलमा एक ओर नाम	86 वर्ष 6 मास कुछ दिन	दिन अतवार 13 ज़ीकाद सन् 915 हिजरी	चूं कर्द रूखसते आलम निजाम खां सुलतान। जे जां बतंग जहाने बा आहोजारी शुद॥ जहां सियह शुद : दरचश्म हरकस जे हरकस। ज़े हाल आलम गुफ्ता सरोश बारी शुद॥	0	दिल्ली	1488	1516	बड़ा बादशाह हुआ किन्तु हिन्दुओं को बहुत दुःख दिया, गाजी मियां की पूजा बन्द कर दी। कबीर इसी के समय में हुए हिन्दुओं को फारसी पढ़ाई।
16 वर्ष 7 मास 15 दिन 37 वर्ष 8 मास 1 दिन	एक ओर कलमा एक ओर नाम	5 वर्ष 8 मास कुछ दिन	7 रज्जब सन् 932 हिजरी	कर्द चूं सुलतान इब्राहीम कूच। हफ्तुम शहर रज्जब अज़ई सराय॥ हस्ब दिल अज़ हातिफ इलहाम कुन। साल वफात शह गर्दू गिराय॥ गुफ्त कि दर जिन्नते बालाए पाक। याफ्तः सुलतान इब्राहीम जाय॥	0	पानीपत	1516	1526	मारा गया।
दूसरे मुल्क में 32 वर्ष 10 मास 2 दिन दिल्ली में 4 वर्ष 9 मास 29 दिन	एक ओर कलमा एक ओर नाम	49 वर्ष 4 मास	सोमवार 6 जमादि-उल्-औवल सन् 937 हिजरी	बादशाहे दह बाबर बा कमाले अदलो दाद। वाकिफे इसरारे आलम सस्दरे लुत्फे अल्ला॥ साल जां ओ गुज़ीदन जाय फिरदौसश बिगो। जाय फिर्दौस आमद : बेगुजीद बाबर बादशाह॥	फिरदौस आरामगाह	पहिले 6 महीने आगरे के पास रामबाग में गाड़ा था जाने के समय हुमायूं मुर्दा फिर काबुल ले गया	1526	1530	बड़ा प्रसिद्ध मनुष्य हुआ है, पहले समर्कन्द और काबुल का बादशाह था फिर हिन्दुस्तान में आया।

37. नसीर-उद्दीन मुहम्मद हुमायूं बादशाह पहली बार	बाबर बादशाह	माहम बेगम	चुगताई	सनीचर की रात 14 जीकाद सन् 913 हिजरी	आगरा	23 वर्ष 5 मास कुछ दिन	जमादिउल्-औवल सन् 937 हिजरी सोमवार	मुहम्मद हुमायूं शहे नेक बख़्त। कि खैरूल मलूक अस्त अन्दर सलूक॥ चू बर मसनदे बादशाही नशस्त। शुदश साल तारीख खैरूल् मुलूक॥
38. शेरशाह उपनाम फरीद खां	हसन खां	0	अफ़ग़ान	रजब सन् 871 हिजरी	सुल्तानपुर बंगले की तरफ	60 वर्ष कुछ दिन दिल्ली में 69 वर्ष 4 मास कुछ दिन	सन् 931 हिजरी दिल्ली में 27 शौव्वाल सन् 948 हिजरी	शाहनशह : शेरशाह गर्दू रफअत। कस हस्त नेस्त रफीअ आली दूदः॥ ब नशस्त ब बस्त हफ्तुम शव्वाल। ब तख़्त शाहाने जहां बयाये आली दूदः। तारीख जलूस गुफ्त हातिफ जे गैब। जेब औरंग सलतनत अफजूदः॥
39. इसलाम शाह उपनाम शाहज़ादः जलाल खां नामांतर सलीम शाह	शेरशाह	बीबी गुमानी	अफगान	सफर सन् 903 हिजरी	कालिंजर के किले के नीचे	1 वर्ष 6 दिन	17 रबी-उल्-औवल सन् 953 हिजरी	सुलतान सलीम शाह बाकर शिकोह। कर्द अदलशजुल्म दर अदम महबूस अस्त॥ बे नशस्त ब तख़्त अज़ रहे इन्साफश। दर मुल्कश जे आमदन मानूस अस्त॥ तारीख जलूस सईद ओ अज नयूश। सामान जलूस मैमनत पाबोस अस्त॥

1 वर्ष 5 मास कुछ दिन	एक ओर कलमा एक ओर नाम	49 वर्ष 3 मास 26 दिन	11 रबउल-औवल सन् 963 हिजरी	हूमायूं बादशाह आं शाहे आदिल। कि फैजे खास ओबर आम उफ्ताद॥ चु खुशीद अज जहां ताबे बलंदी। बियाबां दर निमाजे शाम उफताद॥ जहां तारीक शुद दर चश्मे मरदुम। खलल दर कार खासो आम उफ्ताद॥ कजा अज बहव तारीखश रकम जद। हुमायूं बादशाह अज बाम उफ्ताद॥	जन्नत आशियां	दिल्ली	1530	1555	शेर खां से हारकर लाहौर गया फिर सिंध और मारवाड़ में रहा, वही अकबर का जन्म हुआ, फिर डेढ़ बरस अमरकोट के राजा के यहां रहा, वहां से काबुल चला गया।
14 वर्ष दिल्ली में 4 वर्ष 4 मास 15 दिन	एक ओर कलमा ओर नाम	74 वर्ष 8 मास कुछ दिन	12 रबी-अलऔवल सन् 953 हिजरी	शेरशाहे कि अज महाबत ओ। शेरो बज आब रा बहम मीखुर्द। चूं बरफ्त अज जहां बदारे बका। गश्त तारीख ओ ज़े आतिश मुर्द॥	0	सहसराम	1540	1545	इसका बाप हसन खां सहसराम में 500 घोड़ों का जागीरदार था, जब इसने कालिंजर का किला घेरा तो एक गोले से इसके मेगजीन में आग लग गई जिससे यह झुलसकर मर गया।
8 वर्ष 2 मास 8 दिन	एक ओर कलमा एक और नाम	58 वर्ष 3 मास कुछ दिन	25 जमादि-उलऔवल सन् 661 हिजरी	सुलतान सलीमशाह चूं अज हुस्ने आकबत। आराम ज़ेर सायए अर्श खुदाई याफ्त॥ बूदम वफिक्रे साल वफातश कि नागहां। हातिफ बज़द नवा कि बजिन्नात जाय याफ्त॥	0	सहसराम	1545	1553	नामांतर जलाल खां

40.	फिरोज खां वा फिरोज़ शाह	इस्लाम शाह सलीम शाह	बीबी मानी	अफगान	रबीउस्सानी सन् 949 हिजरी	दिल्ली	12 वर्ष कुछ दिन	26 जमादि-उस्सानी सन् 961 हिजरी	चू शुद फीरोज़ खां बादशाह। कस गुलाम दर बूद इजलाल हा॥ याफ्त तख्ते सलतनत जाए पिदर। कर्द जेरे चतर इस्ततलाल हा॥ साल तारीखश चुनीं कर्दम रकम। बादशाही याफ्त जू इकबाल हा॥
41.	मुहम्मद आदिल शाह उपनाम मुबारिज़ खां	निज़ाम खां	0	अफगान	शाबान सन् 911 हिजरी	दिल्ली	49 वर्ष 10 मास कुछ दिन	जमादिउल्-औवल सन् 961 हिजरी	जाय बर मुमलिकत मुबारिज खां। कि शुद : दर रहे सितम मालिक॥ तख्त फीरोज खां गिरफ्त बजुल्म। गश्त : बर मुल्क दौलतश मालिक॥ साल तारीख दौलश गुफ्तम। बादशह शुद मुबारिज मुहलिक॥
42.	सुल्तान इब्राहीम सूर	0	0	अफगान	सन् 903 हिजरी	दिल्ली	59 वर्ष	6 जमादि-उस्सानी सन् 962 हिजरी	गश्त चूं तख्त मुनौवर ज़े तन इब्राहीम। रफ्त बर दोस्त दिलासा व बदुश्मत तो बेख॥ साल तारीख जलूसश ज़े खिरद चूं जस्तम्। रौनके कालबंद सलतनत आमद तारीख॥
43.	सिकंदर शाह उपनाम अहमद खां	हुसेन	0	अफगान	रबी-उल्-औवल सन् 911 हिजरी	फरह	51 वर्ष 2 मास दिल्ली में 51 वर्ष	पंजाब में जमा-दिउस्सानी सन् 962 हिजरी 4 मास रज्जब सन् 962 हिजरी	दाम अफजालहू दिल्ली में 9
44.	दूसरी बार नसीरूद्दीन बादशाह उपनाम मुहम्मद हमायूं शाह	बाबर	माहरू बेगम किसी-किसी ने इसका नाम 'माहम बेगम' लिखा है	चुगत्ताई	मंगल की रात 14 ज़ीकाद सन् 913 हिजरी	दिल्ली	48 वर्ष 9 मास कुछ दिन	रमजान 962 हिजरी	मुंशिए खिरद तालए मैयूं तलबद। इंशाए सखुन जे तबअ मौजूं तलबद॥ तहरीर चु कर्द फत्ह हिन्दुस्तान रा। तारीख जे शमशेर हुमायूं तलबद॥

3 दिन	अपने नाम का रुपया पैसा नहीं बनवाने पाया था कि मर गया	12 वर्ष कुछ दिन	29 जमादि-उल्-औवल सन् 961 हिजरी	शहे दौलत दौलत अफ्रोज फीरोज़ खां। कि मीकर्द मुल्क सितम रा खराब॥ जे सैले अजल नागहां शुद खां। ब मुनियार मामूर : उमर शजे आब॥ चुनीं गुफ्त साले वफातश खिरद। जवांमर्द शुद शाह बेजा जवाब॥	0	0	1553	1553	इसके मामा ने इस को मार डाला।
11 मास 7 दिन	मिला नहीं	50	0	0	0	0	1553	0	बड़ा मूर्ख और बदकार था लोग अंधली कहते थे।
2 मास 3 दिन	0	72 वर्ष	सन् 975 हिजरी	0	0	उड़ीसा	1554	0	शेर शाह का चचेरा भाई।
दिल्ली में 2 मास कुछ दिन	0	0	सन् 962	0	0	0	1555	0	शेर शाह का चचेरा भाई।
1 ले 6 मास कुछ दिन वलायत में 13 वर्ष 10 मास कुछ दिन दिल्ली में 12 वर्ष कुछ दिन सब सल्तनत 25 वर्ष 10 मास कुछ दिन	एक ओर कलमा एक ओर नाम	49 वर्ष 3 मास 26 दिन	रवी-उल्-औवल सन् 961 हिजरी	हुमायूं बादशाह आं शाह आदिल। कि फैजे खास ओ बर आम उफ्तादा॥ चू खुर्शीदे जहांताब अज बलंदी। बियाबां दर निमाजे शाम उफ्ताद॥ जहां तारीके शुद दर चश्मे मदुम। खलल दर कार खासो आम उफ्ताद॥ कज़ा अज़ बहर तारीखश रकम ज़द। हुमायूँ बादशाह अज़ बाम उफ्ताद॥	जन्नत आशियानी	दिल्ली में नाम हमकबरा हुमायूं है जुलाई 1555	जनवरी 1656		फिर हिन्दुस्तान जीतने पर छह महीने राज्य किया और सीढ़ी पर से पैर फिसलने के कारण गिरकर मर गया।

45.	अबुल फलह जलाल-उद्दीन मुहम्मद अकबर बादशाह	हुमायूं बादशाह	हमीदा बानू बेगम मरने के बाद मरियम मकानी उपनाम हुआ	चुगत्ताई	मंगल की रात 5 रजब 949 हिजरी 1542 ई.	कलांवर (कलानौर)	12 वर्ष 8 मास 27 दिन	रबीउस्सानी सन् 963 हिजरी	अज़ खुतबए शाह रफअत मुनीर शुद। बज़ सिक्कए अदल कारहा खू ज़र शुद। वेह नशस्त ब तख्त सलतनत अकबर शाह। तारीख जलूस नुसरत अकबर शुद॥
46.	अबुल मुज़फ्फर नूरउद्दीन मुहम्मद जहांगीर बादशाह	अकबर बादशाह	राजा भारामल की लड़की	चुगत्ताई	बुध 17 रबी-उल-औवल सन् 977 हिजरी	अकबराबाद	37 वर्ष 2 - मास 27 दिन	बृहस्पति 14 जमादि-उस्सानी सन् 1014 हिजरी	शाह जहांगीर चु अज़ मेहरे बख्त। गश्त शहनशाह दो आलम चु मेहर॥ गुफ्त खिरद साल जलूस सईद। शाह जहांगीर नसीबे सिपहर॥
47.	सुल्तान दावर बख्श उपनाम मिर्जा बुलाकी	शाहज़ाद : सुल्तान खुसरो	0	चुगत्ताई	जीकाद सन् 1010 हिजरी	राजापुरी	25 वर्ष 4 मास	रबी-उल-औवल सन् 1036 हिजरी	चु शुद सुलतान दावरबख्श अज तख्त। बसां खोरे बरूए तख्त वाला॥ वजेबे फिक्रे सर बुर्दम किशानश। खिरद तारीख गुफ्ता बख्त बाला॥

51 वर्ष 2 मास 11 दिन	एक ओर कलमा एक नाम ओर आखिर बादशाहों में अल्लाह अकबर और जुलूस का सन्	64 वर्ष 11 मास 8 दिन	बुधवार 13 जमादि-उत्सानी सन् 1014 हिजरी	फौत अकबर शाह अज़ कजाए अल्लाह। गश्त तारीख फौत अकबर शाह। जहांगीर अज़ जहां अज़्मे सफर कर्द।	अर्श आशि. यानी	बिहिश्ताबाद उप. सिकंदरा अकबराबाद (आगरा) के पास	1556	1605	बड़ा बादशाह हुआ हिन्दुओं से स्नेह उत्पन्न किया। बादशाहत बढ़ाई। ऐसा नामी मुसलमान बादशाहों में कोई नहीं हुआ।
21 वर्ष 8 मास 13 दिन	पहिले कलमा पीछे फारसी का शेर	58 वर्ष 11 मास 10 दिन	27 सफर सन् 1036 हिजरी	0	जन्नत मकानी	शाहदरा लाहौर बाग़ नूरजहां बेगम	1605	1627	बड़ा बादशाह हुआ हिन्दुस्तान की बादशाहत इस के समय में पूरे ओज पर थी।

सिका जद दर अहमदाबाद अज़ एनायात अलः। रूए ज़र रा साख्त नूरानी बरंगे मेहरोमाह॥
बहुक्मे शाह जहांगीर याफ्त सद जेवर। बनाम नूरजहां बादशाह बेगम ज़र॥
जिस वक्त नूरजहां बेगम महल में आई उस वक्त एक ओर सन् एक तस्वीर बादशाह और नूरजहां बेगम की।

एक वर्ष 2 मास कुछ दिन	एक ओर कलमा एक ओर नाम मगर बहुत नहीं नहीं चला	26 वर्ष 3 मास कुछ दिन	17 जमादि-उस्सानी सन् 1037 हिजरी	नमॉद मालिको इकबाल बाबर द्रौलत।	0	बाग हात लाहौर	1627	1628	इसका नाम तवारीखों में नहीं है आसिफ खां ने शाहजहां के लौट आने तक बादशाह बनाया था और फिर आप ही मार डाला।

48.	शहाबुद्दीन मुहम्मद शाहजहां बादशाह	जहांगीर बादशाह	नव्वाब जोधा बाई बेटी राजा भगवान दास राजा जोधपुर	चुगत्ताई	.... की 1 रबी-उल-औवल सन् 1000 हिजरी	लाहौर	37 वर्ष 3 मास 7 दिन	8 जमादि-उस्सानी सन् 1037 हिजरी	बादशाहे जमान : शाहजहां। खुर्रमो शाद कामरां बाशद॥ हुक्म ओ बर खलायके आलम। हम चु हुक्मे कजा रवां बाशद॥ बहर साल जुलूस ओ गुफ्तम्। दर जहां बाद बाजहां बाशद॥
49.	अबुल मुज़फ्फर मुहीउद्दीन औरंगजेब आलमगीर बादशाह	शाहजहां बादशाह	अरजुमंद बानू उपनाम बेगम मुमताज़-महल	चुगत्ताई	अतवार की रात 11 जीकाद सन् 1028 हिजरी	एजाबाद	39 वर्ष 11 मास 20 दिन	शुक्रवार 1 ज़ीकाद सन् 1068 हिजरी	आफ्ताब आलम ताबम्।
50.	मुहम्मद मुअज्जम उपनाम शाह आलम बहादुर शाह	औरंगजेब आलमगीर बादशाह	नव्वाब बाई	चुगत्ताई	रज्जब सन् 1053 हिजरी	लाहौर	65 वर्ष 5 मास	1 जिलहिज सन् 1118 हिजरी	नशस्त चूं बसरीर जहां बहादुर शाह। रसीद मुज्द : दौलत जे आलमे बाला॥ जे मंजर फलक आवर्द सिर सिरूं हातिफ। बगुफ्त साल जलूसश निज़ाम मुल्क दिला॥

9 वर्ष 4 मास 22 दिन	एक ओर कलमा एक ओर नाम	76 वर्ष 4 मास 6 दिन	सोमवार 26 रज्जब सन् 1076 हिजरी	साल तारीख फौत शाहजहां। रज़ी अल्लाह-गुफ्त अशरफ खां॥	उल्मी मकान	ताजगंज मुमताज उलजमानी के कब्र के पास अकबराबाद	1628	1664	दुष्ट औरंगजेब ने राज्य के लोभ से बीमारी में कैद कर लिया। यह भी बड़ा बादशाह था। इसका समय मुसलमानों के राज्य का ठीक मध्याह्न था। दिल्ली का ऐसा ऐश्वर्य न पहले कभी था न फिर हुआ। ताजगंज किला आदि अनेक उत्तम स्थान बनाए।
50 वर्ष 27 दिन	सिक्कः जद बर चू बद्रो मुनीर। शाह औरंगजेब आलमगीर।	90 वर्ष 17 दिन	शुक्रवार 26 जीकाद सन् 1117 हिजरी	आफ्ताव आम ताबमन।	खुल्द मकाँ	औरंगाबाद	1659	1707 21 जनवरी	शुद्ध स्वारथी महादुष्ट किन्तु उद्योगी था। हिन्दुओं के बहुत से मन्दिर तोड़े शिवाजी ने दक्षिण का राज्य ले लिया।
5 वर्ष 1 मास	0	70 वर्ष 6 मास	सनीचर 1 ली मुहर्रम सन् 1024 हिजरी	दूर वफातश बे सरो बे पा शुदद। फैजो फजले ने अमते लुतफो जरम॥ खुल्द मंजिल	गांव महरौली दिल्ली के पुराने होते में	1707	1712		सिक्खों का उदय इन लोगों के नाम मात्र की बादशाही किया था।

51.	खुजिस्त : अख्तर जहान शाह	मुहम्मद मुअज्ज़म उपनाम बहादुर शाह	निज़ाम बाई	चुगत्ताई	0	दिल्ली	0	8 सफर सन् 1124 हिजरी	
52.	रफीउ-ल्शान	मुहम्मद मुअज्ज़म उपनाम बहादुर शाह	निज़ाम बाई	चुगत्ताई	0	दिल्ली	0	22 सफर सन् 1124 हिजरी	
53.	मुहम्मद मुगीसुद्दीन जहांदार शाह	मुहम्मद मुअज्ज़म उपनाम बहादुर शाह	निज़ाम बाई	चुगत्ताई	बुधवार 10 रमज़ान सन् 1072 हिजरी	लाहौर	52 वर्ष 5 मास 5 दिन	रबी-उल् औवल सन् 1124 हिजरी	
54.	जलालु-द्दीन मुहम्मद फर्रुख-सियर	अजीमउल-शान बेटा मुहम्मद मुअज्जम उपनाम बहादुर शाह	0	चुगत्ताई	बृहस्पति 13 रज्जब सन् 1095 हिजरी	दिल्ली	29 वर्ष 5 मास 5 दिन	23 जीकाद सन् 1124 हिजरी	शाहः फर्रुखसियर कि असफर ओ। आफ्ताब सिपहरे मुमलिक अस्त॥ गुफ्त हातिफ कि साल सलतनतश। आफ्ताब कमाल सलतनत अस्त॥

4 दिन	0	0	22 सफर सन् 1224 हिजरी	0	0	दिल्ली	1712	0	पहले तीनों भाई ने मिलकर इकतीस दिन राज किया फिर लड़े अन्त को पहले दोनों मारे गए।
8 दिन	0	एक ओर कलमा एक ओर नाम	सफर सन् 1124 हिजरी	0	0	दिल्ली	1712	0	0
10 मास 23 दिन	बज़द सिक्क : बर मुल्क चूं मेहो माइ। शहनशाह गाजी जहांदार शाह॥	53 वर्ष 3 मास 28 दिन	शुक्रवार 8 मुहर्रम सन् 1125 हिजरी	0	0	मकबिरः हुमायूं दिल्ली में	1712	1713	फर्रुखसियर की लड़ाई में कैद हो कर मरा।
6 वर्ष 3 मास कुछ दिन	सिक्कः अज फजले हकबर सीमो जर। बादशाह बहरो बर फर्रुखसियर॥	35 वर्ष 8 मास 20 दिन	8 रबीउ-स्सानी फुगां सन् 1131 हिजरी	गुप्त हातिफ ब : तारीख फौत।	0	मकबिरः हुमायूं दिल्ली में	1713	1719	अब्दुल्लाह खां और हुसैन अली खां ने जहर देकर मार डाला।

55. मुहम्मद अबुल् बरकात सुल्तान रफीउल्-दरजात	रफीउल्दर्जात बेटा मुहम्मद मुअज्जम उपनाम बहादुर शाह	नूरूल्-निसा बेगम	चुगत्ताई	7 जमादिउल् आखिर सन् 1111 हिजरी	दिल्ली	19 वर्ष 10 मास 2 दिन	9 रबीउस्सानी सन् 1131 हिजरी	नशस्त बतख्त चूं रफीउद्दर्जात। गुये बर अर्श सर कशीद अज़ उर्फात॥ सर खरोश चु दीद बा फरो शिकोह। तारीख आमद लकब रफीउद्दर्जात॥
56. शमशुद्दीन रफीउद्दौला मुहम्मद शाहजहां बादशाह गाज़ी	रफीउल्शान बेटा मुहम्मद मुअज्जम उपनाम बाहदुर शाह	नूरूल्-निसा बेगम	चुगत्ताई	7 जमादिउल् आखिर सन् 1111 हिजरी	दिल्ली	19 वर्ष 10 मास 2 दिन	9 रबीउस्सानी सन् 1131 हिजरी	नशस्त बतख्त चूं रफीउद्दर्जात। गुये बर अर्श सर कशीद अज़ उर्फात॥ सर खरोश चु दीद बा फरो शिकोह। तारीख आमद लकब रफीउद्दर्जात॥
57. रौशन अख्तर उपनाम मुहम्मद शाह (अबुल् फतह नासिरूद्दीन) साहब-किरान सानी	खुजिस्तः अख्तर जहान शाह बेटा मुहम्मद मुअज्जम उपनाम बहादुर शाह	0	चुगत्ताई	26 रबी-उल् औवल सन् 1114 हिजरी	दिल्ली	12 वर्ष 7 मास 21 दिन	17 जीकाद सन् 1131 हिजरी	शहे किश्वरसिताने रौशनअख्तर आंकि दर आलम। गवाह आमद फरोगे बख्त रा नामे हुमायूंनश॥ दर्री बुर्दम कि गोयम नज्म तारीखश की अज़ हातिफ। सरीर आएए जाहो दौलत आमद साल तारीखश॥

मास 1 दिन	मुहम्मद अबुल बरकात सुलतान रक्तीउद्दर्जात् बादशाह गाजी	20 वर्ष 1 मास 13 दिन	मंगलवार रज्जब सन् 1131 हिजरी	चूं खां शहनशह रफीउद्दर्जात। रहे जन्नत बसायद निहाल तौबा॥ रिज़्वां बदर बिहिश्त इकदाम कुनां। गुल्पा खुल्द बरीं मुकाम व मारा॥	0	दिल्ली के हाते में	1719	1719	पोस्त बहुत पीकर मर गया।
3 मास 27 दिन	शम्शुद्दीन मुहम्मद शाहजहां गाज़ी	28 वर्ष 9 मास 12 दिन	17 ज़ीकाद सन् 1131 हिजरी		0	मकबिर : हुमायूं	1719	1719	पोस्त पीकर मर गया तब अब्दुल्लाह खां ने रौशन अख़्तर को कैद से निकालकर बादशाह बनाया।
1 वर्ष 1 मास 11 दिन	पहिले चौकोर रुपये पर एक ओर कलमा एक ओर नाम पीछे गोल रुपए पर मुहम्मद शाह गाजी साहिबकिरां	47 वर्ष 1 मास 11 दिन	27 रबी-उस्सानी सन् 1161 हिजरी	0	फिरदौस आराम-गाह	दिल्ली सुलतान मशायख की दरगाह में	1719	1748	बड़ा विषयी था। किंतु औरंगजेब के पीछे इतने दिन तक स्थिर होकर इसी ने दिल्ली भोगी। नादिरशाह इसी के काल में आया। कहते हैं कि इसके पहले मुहम्मद निकोसियर नामक शाहजादा दो चार दिन के हेतु बादशाह हुआ था।

58.	सुल्तान मुहम्मद इब्राहीम	तीसरा बेटा रफीउलूशा बेटा मुहम्मद मुअज्ज़म उपनाम बहादुर शाह	नूरूलू-निसा बेगम	चुगत्ताइ	26 रबी-उलू औवल सन् 1115 हिजरी	दिल्ली	17 वर्ष 9 मास 2 दिन	29 ज़िलाहिज सन् 1132 हिजरी	
59.	रौशन अख्तर उपनाम मुहम्मद शाह (दूसरी बेर)	खुजिस्तः अख्तर जहान शाह बेटा मुहम्मद मुअज्ज़ाम उपनाम बहादुर शाह	0	चुगत्ताई	26 रबी-उलू औवल सन् 1114 हिजरी	शेरगढ़	18 वर्ष 9 मास 17 दिन	13 ज़ीकाद सन् 1133 हिजरी	दिल्ली में नादिर शाह के आने की तारीख 16 सन् 1151 हिजरी
60.	मजाहि-दुलूदीन अबुल नसर मुहम्मद बादशाह गाजी	मुहम्मद शाह	अहमद बाई उपनाम मुमताज़-महल	चुगताई	मंगलवार 27 रबी-उस्सानी सन् 1938 हिजरी	पानीपत	23 वर्ष 4 मास	2 रबी-उल औवल सन् 1161 हिजरी	चूं शाह जवांबख्त अज सरे तख्त। चूं खुर्शीद अज़ फलक बिनमूद जिल्वः॥ खिरद साल जलूसश बर लब आबुर्द। सरीर सलतनत अफजूद जिल्वः॥
61.	अज़ीजुद्दीन आलम गीर सानी बादशाह गाजी	मुगीसुद्दीन जहांदारद शाह	अनूपबाई	चुगत्ताई	शुक्रवार सन् 1109 हिजरी	दिल्ली	68 वर्ष कुछ मास कुछ दिन	मंगलवार 10 शाबान सन् 1167 हिजरी अहमद शाह दुर्रानी के आने की तारीख 7 जमादि-उलूऔवल सन् 1170 हिजरी।	शाहवाला निज़ाद आलमगीर। अज़ अज़ल नामवर बफैज़ आमद। गश्त चूं जिल्व : गर बरूये सरीर। गश्त तारीख मजहरे एज़िद॥ फज़्ले रब्बानी

15 दिन	सानी कोई रुपया अपने नाम का नहीं चलाया	0	0	0	0	0	1702	1720	मुहम्मद शाह के बादशाह होने के पीछे अब्दुल्लाह खां ने 15 दिन के हेतु बादशाह बनाया था।
28 वर्ष 3 मास 14 दिन	पहिले चौकोर रु. पर एक ओर कलमा एक ओर नाम पीछे गोल रु. पर मुहम्मद शाह बादशाह गाजी साहिबकिरां	47 वर्ष 1 मास . नादिर के दिल्ली से जाने की तारीख 7 सफर सन् 1152 हिजरी	27 रबी-उस्सानी सन् 1161 हिजरी	शहे फलके हश्म रविश अख्तर आंकि अज़ो। चु आफ्ताब जहां जुमलगी फरोग गिरफ्त॥ चु शुद बजाद : फिरदौस अजों सराय सिपंज। सरोद हातिफे गैबी कि गो बजिन्नत रफ्त॥	फिरदौस आराम-गाह	दिल्ली हजरत सुलतान उल्मशायख की दरगाह में	1720	1748	नादिरशाह आया। मृत्यु से मरा।
6 वर्ष 8 मास 3 दिन	एक ओर कलमा एक ओर नाम	50 वर्ष 3 मास 13 दिन	मंगलवार 10 शावान सन् 1188 हिजरी	बर बस्त चू मुजाहिद दीं रख्त जिंदगी। हर कस दर रश्के बेहमिजगाने खेश मुफ्त॥ हातिफ बराय साल वफातश कि नागहां। साले वफात साल वफात हाय हाय गुपम्त॥	शुल्द आरामगाह	दिल्ली	1748	1754	मृत्यु से मरा।
1 वर्ष 7 मास 27 दिन	एक ओर कलमा एक और नाम	73 वर्ष कुछ मास कुछ दिन	बृहस्पतिवार 7 रबी-उस्सानी सन् 1173 हिजरी	शाह आली नसब अजीजुद्दीन। कस बूद दर जवान रहमत जाय॥ गुफ्त हातिफ चु रफ्त दर जिन्नत। दावरे अर्स व मुल्क मुर्द वाय॥	अर्श मंज़िल	दिल्ली के हाता मकबिर : हुमायूं में	1754	1769	एमादुलमुल्क के कहने से मेहदी कुली खां ने कत्ल कर दिया।

62.	अबुल मुजफ्फर जलालु- द्दीन सुल्तान आली गौहर शाह आलम बादशाह	अज़ीजुद्दीन आलमगीर दूसरा	बी नन्ही	चुगत्ताई	17 ज़ीकाद सन् 1040 हिजरी	इलाहाबाद	32 वर्ष 5 मास 17 दिन	14 जमादि- उल्-औवल सन् 1137 हिजरी	दूसरी बेर अहमद शाह आया और मरट्ठों की लड़ाई सन् 1173 हिजरी, सरकार ने दिल्ली लिया 1219 हिजरी
63.	अबुल् नसर नुइज़ुद्दीन मुहम्मद अकबर शाह बादशाह	राह आलम बादशाह	मुबारक महलशाह आलम के वक्त तक और अकबरशाह के वक्त में नवाब कुदसिः	चुगत्ताई	बृहस्पति की रात 7 रमज़ान सन् 1173 हिजरी	दिल्ली	48 वर्ष 1 मास	सबेरे के पहर बुध के दिन 7 रमजान सन् 1221 हिजरी	बबर चु कर्द लिबासे खिलाफ्त अकबर शाह। बशर्फो दौलतो इकबालो इज्जते मानूस॥ सरोश गैब जे रूये बदीदः यक नागाह। जहेज़ इशरत बिरवद गुफ्त साल जलूस॥
64.	अबुल् सिराजुद्दीन मुहम्मद बहादुर शाह बादशाह	ज़फर मुहम्मद शाह	अकबर लालबाई	चुगत्ताई	मंगलवार 28 शाबान सन् 1189 हिजरी सूरज डूबने के वक्त	दिल्ली	63 वर्ष 10 मास	शुक्रवार की 28 जमादि- उस्सानी सन् 1253 हिजरी	रात चिरागे़ देहली

48 वर्ष 4 मास 3 दिन	हाजी दीन मुहम्मद सायः फज्ले अलाइ। सिक्काः जद बर हफ्त किश्वर शाह आलम बादशाह॥	80 वर्ष 9 मास	7 रमजान सन् 1221 हिजरी सुबह के वक्त	आह दरेग़ा या दिल ज़े रूये नाल : गुफ्ता हफ्तुम शहर स्याम रहने वाले दिल्ली के	फिरदौस मंजिल	दिल्ली	1759	1805	अन्तिम स्वतन्त्र बादशाह इसी के समय से अंगरेजों का राज्य दिल्ली में हुआ 1803 ई.
31 वर्ष 9 मास 21 दिन	सिक्कः मुबारक साहिबकिरां सानी। मुहम्मद अकबर बादशाह गाजी॥	79 वर्ष 10 मास 21 दिन	शुक्रवार के दिन 28 जमादिउस्सानी सन् 1253 हिजरी मग़रिब की नमाज के पीछे	चूं बरफ्त अज़ जहां शहे अकबर। शुद सियह आस्मां जे दूदे जिगर। पाय शादी शिकस्त व अहमद गुक्त। साल तारीख ओ गमे अकबर॥	अर्श आरामगाह	दिल्ली	1805	1837	नाम मात्र।
20 वर्ष	ब सलीमो ज़र ज़दः शुद सिक्कः ब फज्ले अल्लाह। सिराजुद्दीन अबुल्ज़फर शाह बहादुर शाह॥	90	1279	बुझो है चिरागे देहली या हे हे अबुल् मुजफ्फर	एक ओर कलमा एक ओर नाम	रंगून	1837	1863	दिल्ली के बलवे में अंगरेजों ने बिचारे बुड्ढे के नाम मात्र होने पर भी कैद करकेरंगून भेज दिया। और इस की आंखों के सामने इसके भाई भतीजे लड़के पोते सब काटे गये।

मुसलमान-राज्यत्व का संक्षिप्त इतिहास

सन 570 में मुहम्मद का जन्म हुआ। 40 वर्ष की अवस्था में उन्होंने मुसलमान धर्म्म का प्रचार किया। सन् 632 में इनकी मृत्यु हुई। इन के उत्तराधिकारियों में वलाद खलीफ़ा ने अपने भतीजा क़ासिम को 6000 फौज के साथ सिन्धु देश जय करने को भेजा। सिन्धु का राजा दाहिर युद्ध में मारा गया और इस की दो बेटियों के कौशल से क़ासिम को भी वलीद ने मार डाला।

सन् 812 में मामूं ने हिन्दुस्तान पर फिर चढ़ाई किया किन्तु चित्तौर के राजा खुमान ने 24 बेर युद्ध कर के उस को भगा दिया।

बुख़ारा के पांचवें बादशाह अब्दुलमालिक का अलप्तगीन नामक एक गुलाम था जो मालिक के मरने पर बादशाह हुआ। सुबुक्तगीन इस का एक दास था। स्वामीपुत्र के मरने पर यही खुरासान का राजा हुआ और गज़नी को अपनी राजधानी बनाया। सन् 970 में इस ने हिन्दुस्तान पर चढ़ाई किया और लाहौर के राजा जैपाल को जीता। सन् 999 में उस के मरने के पीछे अपने भाई को कैद कर के सुलतान महमूद बादशाह हुआ। सन् 1001 में महमूद ने हिन्दुस्तान पर चढ़ाई किया और अपने पुराने शत्रु जैपाल को कैद कर लिया। सन् 1004 में भटनेर के राजा को जीतने को महमूद की दूसरी चढ़ाई हुई। मुलतान के गवर्नर अब्दुलफतह लोदी को जीतने को वह तीसरी बेर हिन्दुस्तान में आया (1005 ई.)। चौथी चढ़ाई उस ने जयपाल के पुत्र आनंद पाल को जीतने को की। आनन्दपाल भी असंख्य हिन्दू सैन्य लेकर उस से भिड़ा, किन्तु ठीक युद्ध के समय उस के हाथी के बिचलने से वह लड़ाई भी महमूद जीता और नगरकोट लूट कर भारतवर्ष की अनंत लक्ष्मी ले गया। इस में 20 मन तो केवल जवाहिर था। (1008 ई.)। अबुलफतह के बागी होने से मुलतान पर उस की पांचवीं चढ़ाई हुई (1010)। छठीं बेर उसने थानेश्वर लूटा (सन 1011)। सातवीं और आठवीं चढ़ाई इस ने सन् 1013 और 1014 में कश्मीर पर किया, किन्तु वहां के राजा संग्रामदेव ने इस को हटा दिया। नवीं बार यह सन् 1017 में बड़ी धूम से कन्नौज पर चढ़ा, किन्तु कन्नौज के राजा के दासत्व स्वीकार करने से मथुरा नाश करता हुआ लौट गया। 10वीं चढ़ाई इस की सन् 1022 में कालिंजर पर हुई और उसी बरस 11वीं

चढ़ाई इस की फिर लाहौर पर हुई। 12वीं बेर गुजरात पर चढ़ाई कर के सन 1024 में सोमनाथ का प्रसिद्ध मन्दिर तोड़ा। इसके पीछे वह हिन्दुस्थान में नहीं आया और सन् 1030 में मर गया। इस के वंश वालों का हिन्दुस्थान में केवल पंजाब पर कुछ अधिकार रहा।

ग़ज़नी राज्य निर्बल होने पर जगतदाहक अलाउद्दीन ग़ोरी ने ग़ज़नी के अन्तिम राजा बहराम को मार कर अपने को बादशाह बनाया और कुछ दिन पीछे उस के भतीजे शहाबुद्दीन मुहम्मद गोरी ने बहराम के पोते को मार कर ग़ज़नी के राज्य का नाम भी शेष नहीं रखा। यही मुहम्मद हिन्दुस्तान में मुसलमानों के राज्य का मूल है। इसने सन 1176 से लेकर 16 बरस तक कई बेर हिन्दुस्थान पर चढ़ाई किया किन्तु कुछ फल नहीं हुआ। कन्नौज के राजा जयचन्द के बहकाने से इस ने सन 1191 में दिल्ली के चौहान राजा पृथ्वीराज पर बड़ी धूम से चढ़ाई किया था, किन्तु तरौरी नामक स्थान में घोर युद्ध के पीछे पृथ्वीराज से हारकर वह अपने देश को लौट गया। सन् 1193 में यह बड़ी धूम और कौशल से फिर दिल्ली पर चढ़ा। हिन्दुओं की सेना भी बड़ी धूम से इस के मुकाबले को बाहर निकली। चित्तौर के समर सिंह इस सेना के सेनापति थे। युद्ध के डेरे पड़ने पर सुलह की बातचीत होने लगी। शहाबुद्दीन ने कहा हमने अपने भाई को सब वृत्तान्त लिखा है, उत्तर आने तक लड़ाई बन्द रहै। हिन्दू सेना इस बात पर विश्वास कर के शिथिल हो गई थी कि धोखा देकर एकाएक शहाबुद्दीन ने लड़ाई आरम्भ की। बहुत से हिन्दू वीर मारे गए। समरसिंह भी वीरगति को गए। पृथ्वीराज और उन के कवि चन्द को कैद करके गजनी भेज दिया। कहते हैं कि शब्दभेदी बान से अन्धे होने की अवस्था में एक दिन पृथ्वीराज ने शहाबुद्दीन के भाई गयासुद्दीन का प्राण विनाश किया और उसी समय पूर्व्व संकेतानुसार चन्द्र कवि ने उन को मारा और उन्होंने चन्द[1] को। भारतवर्ष से हिन्दुओं के स्वाधीनता का सूर्य्य सदा के हेतु अस्त हो गया। पीछे शहाबुद्दीन ने कन्नौज का राज भी ले लिया और बनारस को भी ध्वंस किया।

भाई के मरने पर शहाबुद्दीन सन् 1202 में पूरा बादशाह हुआ, किन्तु 8 बरस भी राज्य करने नहीं पाया था कि बदमाशों के हाथ से (1210) मारा गया। उस समय हिन्दुस्तान उस के दास कुतुबुद्दीन ऐबक के हाथ में था क्योंकि इसी को वह यहां का प्रबन्ध सौंप गया था। यों भारतवर्ष के राजेश्वरों का राज्य एक दास के अधीन हुआ।

कुतुबुद्दीन ऐबक को शहाबुद्दीन के भतीजे महमूद गोरी ने बादशाह का खिताब भेज दिया और तब से हिन्दुस्तान का राज्य निष्कंटक इस के अधिकार में आया। 4 बरस राज्य कर के यह मर गया। इस का पुत्र आरामशाह साल भर भी राज्य

---

[1] चन्द की उक्ति= 'अब की चढ़ी कमान को जानै फिरि कब चढ़ै।
जिनि चुक्कै चौहान इक्कै मारय इक्क सर॥'

करने न पाया था कि इस के बहनोई शमसुद्दीन ने जो पहले एक गुलाम था इस को सिंहासन से उतार मुकुट अपने सिर पर रखा। इस के समय में बंगाला, मुलतान, कच्छ, सिन्धु, कन्नौज, बिहार, मालवा और ग्वालियर तक दिल्ली के राज्य में मिल चुका था। इस के मरने के पीछे इस का बेटा रुकुनुद्दीन फिरोज़ बादशाह हुआ किन्तु यह ऐसा नष्ट था कि इस को उतार कर लोगों ने इस की बहन रजिया बेगम को बादशाह बनाया। साढ़े तीन बरस राज्य करके बलवाइयों के हाथ से यह मारी गई। इस का भाई मुइज़ुद्दीन बहराम दो बरस दो महीना बादशाह रहा फिर लोगों ने इस को कैद कर के इस के भतीजे अलाउद्दीन मसऊद को बादशाह बनाया। किन्तु चार बरस बाद यह भी मारा गया और इस का चाचा नसीरुद्दीन महमूद बादशाह हुआ। अल्तिमश का दास और दामाद बलबन इस के समय में मन्त्री था और इस ने नरवर और चंदेरी का किला तथा ग़ज़नी का राज्य जय किया था। सन् 1266 में नसीर के मरने पर बलबन बादशाह हुआ और 20 बरस राज्य कर के 80 बरस की अवस्था में मर गया। इस का पोता कैकुबाद राजा हुआ किन्तु यह ऐसा विषयी था कि दो बरस भी राज्य न करने पाया कि लोगों ने इस को मार डाला और दिल्ली का राज्य गुलामों के वंश से निकल कर खिलज़ियों के हाथ में आया।

पंजाब से आकर सत्तर वर्ष की अवस्था में जलालुद्दीन ख़िलजी तख़्त पर बैठा। मालवा और उज्जैन उस के समय में विजय हुए। इस के भतीजे अलाउद्दीन ने सन् 1294 में देवगढ़ भी जीत लिया। किन्तु दुष्ट अलाउद्दीन ने इस विजय के पीछे ही अपने वृद्ध चाचा को प्रयाग में मिलने के समय कटवा दिया और आप बादशाह हुआ। (1295) बादशाह होते ही इस ने जलालुद्दीन के दो लड़के और उस के पक्षपाती कई सरदारों को कत्ल किया और फिर बड़ी निर्दयता से गुजरात जीता। अनेक प्रकार के दुखदाई कर प्रचलित किए। 1300 में रणथम्भौर का प्रसिद्ध किला एक बरस की लड़ाई में टूटा और शरणागतवत्सल परम वीर हम्मीर[1] राजा सकुटुम्ब वीरों की गति को गया। 1303 में इस ने चित्तौर पर चढ़ाई की। राजा रतनसेन से प्रथम मित्रता दिखला कर विश्वासघात कर के उन को बन्दी किया किन्तु रानी पद्मावती अपनी बुद्धि और वीरता से राजा को छुड़ा ले गई। फिर तो क्षत्रियों ने जीवनाशा छोड़ कर बड़ा युद्ध किया और सब के सब वीरगति को गए। छत्रानियां सब चिता पर बैठ कर भस्म हो गईं। 1306 में देवगढ़ के राजा के कर न देने से फिर से उस पर

---

[1] मीर मुहम्मदशाह मंगोल नामक एक सर्दार पर अपनी एक उपपत्नी से व्यभिचार के सन्देह से अलाउद्दीन ने क्रोध कर के उस के वध की आज्ञा दी थी। वह हम्मीर की शरण गया। बादशाह ने हम्मीर से मंगोल को मांगा किन्तु धीर वीर हम्मीर ने अपने शरणागत को नहीं दिया। इसी पर अलाउद्दीन चढ़ दौड़ा। राजा हम्मीर के विषय में यह दोहा जगतप्रसिद्ध है, सिंह सुवन सुपुरुष बयान, कदलि फलै इक सार। तिरिया तेल हम्मीर हठ चढ़ै न दूजी बार॥

चढ़ाई हुई और किला तोड़ा। 1310 में कर्नाटक में द्वारसमुद्र के राजा बल्लालदेव को और तैलंग के राजा लक्षधर को जीता। 1311 में विद्रोह के कारण एक दिन में इस ने अपने पन्द्रह हजार मुगल सिपाही कटवा दिए। यह अति उग्र अभिमानी और निष्ठुर था। इस के मृत्यु के वर्ष 1316 में देवगढ़ के राजा के जामाता राजा हरपाल ने देवगढ़ और गुजरात को जीत कर स्वतन्त्र कर दिया। इस के मरने पर मलिक काफूर नामक एक इस के गुलाम ने जिसे इस ने सरदार बनाया था इस के दो बड़े बेटों को अन्धा कर दिया और तीसरे मुबारक को अन्धा करते समय आप ही मारा गया। कुतुबुद्दीन मुबारक ने बादशाह होकर (1317) अपने छोटे भाई को अन्धा किया और बहुत से सरदारों को मार डाला। यह अति विषयी और मूर्ख था। इस के एक हिन्दू गुलाम ने, जिस का मुसलमान होने पर खुसरो नाम हुआ था, 1319 में मालाबार जीता और 1320 में मुबारक को सकुटुम्ब काट कर आप राज पर बैठा। दिल्ली में चार महीने तक इस का सिक्का चलता रहा। इस के समय में हिन्दुओं ने मुसलमान सरदारों की स्त्रियों को दासी और वेश्या बनाया, मसजिदों में मूरतें बिठा दीं और कुरान की चौकी बना कर उस पर बैठते थे। यह उपद्रव सुन कर पंजाब का सूबेदार गाजी खां सेना लेकर दिल्ली में आया और खुसरो को मार कर आप बादशाह बना।

गाजी खां ने बादशाह होकर अपना नाम गियासुद्दीन तुग़लक़ रक्खा (1321)। इस का बाप बलबन का गुलाम था। बीडर और वारंगल जीता। तुगलकाबाद का किला बनाया। तिरहुत जीत कर जब लौटा, तो नगर के बाहर इस के बेटे जूना ने एक काठ का नाचघर जो इस के लौटने के आनन्द में बनाया था उस के नीचे दब कर मर गया। (1325) जूनाखां ने गद्दी पर बैठ कर अपना नाम मुहम्मद तुगलक रक्खा। (1325) इस का प्रकृत नाम फ़खरूद्दीन अलग़खां था। पहिले यह बड़ा बुद्धिमान और बड़ा दानी था। हजार दर का महल बनाया। मुगलों से सुलह किया और दक्षिण में अपना अधिकार फैलाया। पर पीछे से ऐसे काम किए कि लोग उसे पागल समझने लगे। हुकुम दिया कि दिल्ली की प्रजा मात्र दिल्ली छोड़ कर देवगढ़ में रहे, जिस को दक्षिण में दौलताबाद नाम से बसाया था। इस का फल यह हुआ कि देवगढ़ तो न बसा किन्तु दिल्ली उजड़ गई। अन्त में फिर दिल्ली लौट आया। फारस और खुरासान जीतने के लिए तीन लाख सतरह हजार सवार इकट्ठे किए। इन में से एक लाख को चीन लेने के लिए भेजा। ये सब के सब हिमालय में नष्ट हो गए, कोई न बचा। बहुत से कर प्रचलित किए। लोग शहर छोड़ कर जंगलों में भाग गए पर वहां भी पीछा न छोड़ा और जानवरों की भांति उन लोगों का शिकार किया गया। कागज का सिक्का चलाया। बड़ा भारी दुर्भिक्ष पड़ा। लाखों मनुष्य मरे। चारों ओर विद्रोह हो गया। बंगाल और तैलंग स्वाधीन हो गए। मालवा, पंजाब और गुजरातवाले विद्रोही हो गए। कर्णाटक में विजयपुर नाम का एक नया राज्य हो गया। हुसैन बामनी ने मध्यप्रदेश में एक नया राज्य बनाया। अन्त में विद्रोह शान्ति के लिए स्वयं सब जगह

घूमा किन्तु मालवा और पंजाब छोड़ कर कहीं शान्त न हुआ, रास्ते में सिन्धु के पास ठट्ठा में इस की मृत्यु हुई (1351)। मुहम्मद का भाई, फिरोज़शाह बादशाह हुआ (1351)। इस ने स्थान स्थान पर हम्माम, चिकित्सालय, सराय, पुल, तालाब, पाठशाले और सुंदर महल बनवाए थे। कर्नाल से हांसी हिसार तक जमुनाजी नहर निकाली। इस ने अपने को अति वृद्ध समझ कर नसीरुद्दीन को राज्य दिया। किन्तु इस के दो बरस पीछे नसीरुद्दीन के दो भाइयों ने बलवा कर के इस को निकाल दिया और फिरोज़ शाह के पोते गियासुद्दीन को तख्त पर बैठाया। 1389 में नब्बे बरस की अवस्था में फीरोज मरा और उसके पांच ही महीने बाद 1389 में इन्हीं बलवाइयों ने गियासुद्दीन को भी मार डाला और उस के भाई अबूबकर को बादशाह किया। अबूबकर साल भर भी राज्य नहीं करने पाया था कि नसीरुद्दीन उस को जीत कर आप बादशाह बन बैठा। चार बरस राज्य कर के यह मर गया और इस का बड़ा बेटा हुमायूं अपने को सिकंदर शाह प्रसिद्ध कर के बादशाह हुआ। यह केवल 45 दिन जीआ और इस के पीछे इस का छोटा भाई महमूद तुग़लक़ बादशाह हुआ (1394)। इस की अवस्था छोटी होने के कारण राज्य में चारों ओर अप्रबन्ध हो गया और गुजरात, मालवा और खानदेश के सूबे स्वतंत्र हो गए और वजीर बिगड़ कर जौनपुर का स्वतन्त्र राजा बन बैठा। इसी समय अमीर तैमूर लंग जो कि परमेश्वर की मानो मूर्त्तिमयी संहार शक्ति थी बहुत से तातारियों को लेकर हिन्दुस्तान में आया (1398)। यह लंगड़ा था। इस के नाम तैमूर साहबकिरां और गोरकां थे और जगद्दाहक चंगेज़ खां के वश में था। पंजाब के रास्ते में भटनेर इत्यादि जितने नगर या गांव मिले उन को प्रलय की तरह लूटता और जलाता हुआ दिल्ली को भी खूब लूटा और जलाया। लाख मनुष्य जो रास्ते में पकड़ गए थे कतल किए गए। 15 बरस से छोटे लड़के गुलामी के लिए नहीं मारे गए। महमूद गुजरात में भाग गया और तैमूर के नाम का खुतबा पढ़ा गया। सन 1399 में मेरठ लूटता हुआ यह अपने देश चला गया। महमूद फिर आया और 6 बरस राज्य कर के मर गया। और दौलत खां लोदी ने पन्द्रह महीने तक राज्य किया। तैमूर के सूबेदार खिज्र खां सैयद ने इस से राज्य छीन लिया। सैयद अहमद ने अपने जामेजम नामक चक्र में नसीरुद्दीन आदि दो-तीन बादशाह और लिखे हैं जो और तवारीखों में नहीं हैं। 1414 से 1421 तक खिज्र खां बादशाह रहा और उस के मरने पर उस का बेटा मुबारकशाह बादशाह हुआ। 1436 में उस के मन्त्री अब्दुल सैयद और सदानन्द खत्री ने उस को मार कर उस के भतीजे मुहम्मद को बादशाह बनाया। 1444 ई. में इस के मरने पर इस का बेटा अलाउद्दीन बादशाह हुआ। उस समय की बादशाहत नाम मात्र को था। 1450 ई. में बहलूल ल़ोदी ने पंजाब से आकर तख्त छीन लिया और अलाउद्दीन बदायूं चला गया।

बहलूल के बादशाह होने से पंजाब दिल्ली में मिल गया। जौनपुर वालों से छब्बीस बरस तक लड़ कर उस ने वह बादशाहत भी दिल्ली में मिला ली। 1488

में इस के मरने पर इस का बेटा सिकन्दर बादशाह हुआ। इस ने हिन्दुओं को अनेक कष्ट दिए। तीर्थ बन्द कर दिए। पोर्चुगीज लोग पहले पहल इसी के काल में यहां आए। 1516 में इस के मरने पर इस का बेटा इबराहीम बादशाह हुआ। यह ऐसा नीच और दुष्ट और अभिमानी था कि सब सूबेदार इस से फिर गए। पंजाब का सूबेदार सिकन्दर लोदी जो इस का गोती था इस से ऐसा दुखी हुआ कि इस ने काबुल के बादशाह बाबर जो तैमूर से छठी पुश्त में था उस को अपनी सहायता को बुलाया। बाबर ने आते ही पहले सिकन्दर ही का राज नाश किया, फिर 1516 में पानीपत के प्रसिद्ध युद्ध में इबराहीम को जीत कर आप हिन्दुस्तान का बादशाह हुआ।

बाबर ने बड़ी सावधानी से राज्य करना आरम्भ किया। दिल्ली के अधीनस्थ जो सबू फिर गए थे सब जीत गए। 1527 में मेवाड़ के राजा संग्राम सिंह ने बहुत से देश जीत लिए थे, इस से कई बेर इन से घोर संग्राम हुआ, 1428 में चन्देरी का किला टूटा। सब राजपूत बड़ी वीरता से खेत रहे। इसी साल राणा संग्राम सिंह ने रंतभंवर का किला ले लिया। 1529 में बिहार, लाहौर, बंगाल आदि में अफ़गानों को बाबर ने पराजित किया। 1530 सन् में 26 दिसम्बर को बाबर की मृत्यु हुई। कहते हैं हुमायूं बहुत बीमार हो गया था। बाबर ने इस बात का इतना सोच किया कि आप ही बीमार होकर मर गया। बाबर में कई गुण सराहने के योग्य थे। हुमायूं ने राज्य पर बैठ कर अपने तीनों भाई कामरानु, हिंदाल और अस्करी को यथाक्रम काबुल, संभल और मेवात का देश दिया। पहले जौनपुर का विद्रोह निवारण कर के फिर वह गुजरात पर चढ़ा और वहां के बादशाह बहादुर शाह को बड़ी बहादुरी से जीत लिया। 1537 में शेरशाह ने बंगाला जीत लिया और जब इधर हुमायूं शेरशाह से लड़ने को आया तो बहादुर शाह फिर स्वतन्त्र हो गया। शेरशाह पहले बाबर का एक सेनाध्यक्ष था। हुमायूं ने पहले तो चुनार शेरशाह से जीता, किन्तु पीछे शेरशाह ने विश्वासघात कर के रोहतासगढ़ के राजा को मार कर उस के किले में अपना परिवार रख कर हुमायूं पर एकबारगी ऐसा धावा किया कि बनारस और कन्नौज तक जीत लिया। 1539 में फिर एक बेर शेरशाह ने हुमायूं का पीछा किया और गंगा में कूद कर हुमायूं ने अपने को बचाया। सन् चालीस में फिर हुमायूं शेरशाह से हारा और गंगा में तैर कर किसी तरह फिर बच गया। दिल्ली पहुंच कर अपना परिवार लेकर वह लाहौर गया, किन्तु वहां भी शेरशाह ने पीछा न छोड़ा, इस से वह सिन्ध होता हुआ राजपूताने में आया। यहीं इसी आपत्ति के समय अमरकोट में 1542 में अकबर का जन्म हुआ। डेढ़ बरस अमरकोट के राजा के आश्रय में रह कर हुमायूं ईरान में चला गया और वहां के बादशाह की सहायता से वहीं रहने लगा।

शेरशाह ने (1540) हुमायूं के अधीनस्थ सब राज्य अधिकार कर के रायसेन, माड़वार और मालवा जीता। (1545) चित्तौर जीतने का दृढ़ संकल्प कर के मार्ग में कालिंजर का किला घेरे हुए पड़ा था कि रात को मेगज़ीन में आग लगने से झुलस

कर प्राण त्याग किया। यह बड़ा धीर और बुद्धिमान था। घोड़े की डांक, राजस्वकर, सराय, तहसीलदार और कई नियम उस ने उत्तम बांधे थे। बंगाल से मुलतान तक एक राजमार्ग इस ने बनवाया था। इस के मरने पर इस का छोटा बेटा जलालखां सलीमशाह सूर नाम रख कर बादशाह हुआ। 1553 में इस के मरने पर इस के बेटे फीरोजशाह को मार कर इस का साला मुहम्मदशाह अदली बादशाह हुआ। राज्य का सब भार हेमू नामक एक बनिए के ऊपर छोड़ कर आप अति विषय में प्रवृत्त हुआ। चारों ओर बलवा हो गया। इसी वंश के इबराहीम सूर ने दिल्ली, आगरा, सिकंदर सूर ने पंजाब और मुहम्मद सूर ने बंगाल जीत लिया। हुमायूं, जो हिन्दुस्थान जीतने का अवसर देख ही रहा था, इस समय को अनुकूल समझ कर पन्द्रह हजार सवार ले कर सिन्ध उतर कर हिन्दुस्थान में आया और (1555) पंजाब जीतता हुआ दिल्ली में पहुंच कर फिर से भारतवर्ष के सिंहासन पर बैठा। जितने देश अधिकार से निकल गए थे सब जीते गए। किन्तु मृत्यु ने उस को राज भोगने न दिया और एक दिन सन्ध्या को महल की सीढ़ी पर से पैर फिसल कर गिरने से (1556) परलोक सिधारा।

इस की मृत्यु पर इस का पुत्र जगद्विख्यात अबुलमुज़फ्फर जलालुद्दीन मुहम्मद अकबर शाह साढ़े तेरह बरस की अवस्था में बादशाह हुआ। बैरम खां खानखानां राज्य का प्रबन्ध करता था। बदखशां के बादशाह सुलेमान शाह ने काबुल दखल कर लिया है, यह सुन कर बैरम अकबर को ले कर पंजाब के मार्ग से काबुल गया। इधर हेमु[1] बनिया ने तीस हजार सैन्य ले कर दिल्ली और आगरा जीत लिया और पंजाब की ओर अकबर के जीतने को आगे बढ़ा। बैरम खां ने यह सुन कर शीघ्र ही दिल्ली को बाग मोड़ी और पानीपत में हेमू से घोर युद्ध हुआ, जिस में हेमू मारा गया और बैरम की जीत हुई। इस जय से बैरम को इतना गर्व हो गया कि वह अकबर को तुच्छ समझने लगा। परिणामदर्शी अकबर उस की यह चाल देख कर बहाने से निकल कर दिल्ली चला आया और वहां (1560) यह इश्तिहार जारी किया कि सल्तनत का सब काम उस ने अपने हाथ में ले लिया है। बैरम इस बात से खिसिया कर बागी हुआ, किन्तु बादशाही फ़ौज से हार कर बादशाह की शरण में आया। अकबर ने उस के सब अपराध क्षमा किए और भारी पिनशन नियत कर दी। किन्तु बैरम को उसी वर्ष मक्का जाती समय मार्ग में एक पठान ने मार डाला। इसी बैरम का पुत्र अब्दुलरहीम खां खानखाना संस्कृत और हिन्दी भाषा का पड़ा पंडित और कवि हुआ है। यों 18 बरस की अवस्था में अकबर इतने बड़े राज्य का स्वतन्त्र कर्त्ता हुआ। इस ने अपनी परम्पारगामिनी बुद्धि से यह बात सोच लिया कि बिना हिन्दुओं का जी हाथ में लिये उस की राज्यश्री स्थिर नहीं रह सकती। इस ने

---

1. इसका वास्तव में बसन्तराय नाम था। कई तवारीखों में इसकी जाति ढूसर लिखी है। किन्तु अगरवालों के भाट इस को अगरवाला कहते हैं।

हिन्दू-मुसलमान दोनों को बड़े बड़े काम दिए। जोधपुर और जयपुर के राजाओं की बेटियों से ब्याह किया। मत का आग्रह छोड़ दिया। यहां तक कि कई हिन्दुओं के तोड़े हुए मन्दिर इस ने फिर से बनवा दिए। लखनऊ, जौनपुर, ग्वालियर, अजमेर इत्यादि इस के राज्य के आरम्भ ही में इस के अधीन हो गए थे। 1561 में मालवा भी, जो अब तक राजा बाजबहादुर के अधिकार में था, इस के सेनापति ने जीत लिया। राजा के पहले ही पकड़े जाने पर उस की रानी दुर्गावती बड़ी शूरता से लड़ी। दो बेर बादशाही फौज को इस ने भगा दिया, किन्तु तीसरी लड़ाई में जब हार गई तो आत्मघात कर के मर गई। इस पवित्र स्त्री का चरित्र अब तक बुंदेलखंड में गाया जाता है। अकबर ने बाजबहादुर को अपना निज मुसाहिब बना कर अपने पास रक्खा। 1568 में अकबर ने चित्तौर का किला घेरा। राणा उदयसिंह पहाड़ों में चले गए, किन्तु उन के परम प्रसिद्ध वीर जयमल्ल नामक सेनाध्यक्ष ने दुर्ग की बड़ी सावधानी से रक्षा किया। एक रात जयमल्ल किले के बुर्जों की मरम्मत करा रहा था कि अकबर ने दूरबीन से देख कर गोली का ऐसा निशाना मारा कि जयमल्ल गिर पड़ा। इस सेनाध्यक्ष के मरने से क्षत्री लोग ऐसे उदास हुए कि सब बाहर निकल आए। स्त्रियां चिता पर जल गईं और पुरुष मात्र लड़ कर वीर गति को गए। उस युद्ध में जितने क्षत्री मारे गए उन सबका जनेऊ अकबर ने तौलवाया तो साढ़े चौहत्तर मन हुआ। इसी से चिट्ठियों पर 74॥ लिखते हैं, अर्थात् जिस के नाम की चिट्ठी है उस के सिवा और कोई खोले तो चित्तौर तोड़ने का पाप हो। यद्यपि चित्तौर का किला टूटा किन्तु बह बहुत दिनों तक बादशाही अधिकार में नहीं रहा। राणा उदय सिंह के पुत्र राणा प्रताप सिंह सदा सर्वदा लड़भिड़ कर बादशाही सेना का नाश किया करते थे। जहां बरसात आई और नदी नालों से बाहर आने का मार्ग बन्द हुआ कि वह क्षत्रियों को ले कर उतरे और बादशाही फौज को काटा। मानसिंह का तिरस्कार करने से अकबर की आज्ञा से 1576 में जहांगीर और महावत खां के साथ बड़ी सेना लेकर मानसिंह ने राणा पर चढ़ाई की। प्रताप सिंह ने हल्दीघाट नामक स्थान पर बड़ा भारी युद्ध किया, जिस में बाईस हजार राजपूत मार गए। इस पर भी राणा ने हार नहीं माना और सदा लड़ते रहे। अपने बाप के नाम से जयपुर का नगर भी बसाया और बहुत सा देश भी जीत लिया। 1573 में गुजरात, 76 में बंगाल और बिहार, 86 में कश्मीर, 92 में सिन्ध और 95 में दक्खिन के सब राज्य अकबर ने जीत लिए। अहमद नगर के युद्ध में (1600) चांद सुल्ताना नामक वहां के बादशाह की चाची ने बड़ी शूरता प्रकाश की थी। इसी समय युवराज सलीम बागी हो गया और इलाहाबाद आदि अपने अधिकार में कर लिया। किन्तु अकबर जब दक्खिन से लौटा तो जहांगीर इस के पास हाजिर हुआ। अकबर ने अपराध क्षमा करके बंगाल और बिहार इस को दिया। 1783 में युसुफजाइयों की लड़ाई में अकबर के प्रिय सभासद महाराज बीरबल मारे जा चुके थे, और अबुलफ़जल को जहांगीर के विद्रोह के समय उरछा के राजा

ने मार डाला था, तथा उस का दूसरा लड़का मुराद भी अति मद्यपान कर के मर चुका था, अब (1605) में अकबर को इस के तीसरे लड़के दानियाल को भी अति मद्यपान से मर जाने का समाचार पहुंचा। इतने प्रियवर्ग के मर जाने से इस का चित्त ऐसा दुखी हुआ कि बीमार हो कर 63 वर्ष की अवस्था में आगरे में अकबर ने इस असार संसार को त्याग किया।

अकबर अति बुद्धिमान और परिणामदर्शी था। आलस्य तो इस को छू नहीं गया था। प्रथमावस्था में तो कुछ भोजन पानादि का व्यसन भी था किन्तु अवस्था बढ़ने पर यह बड़ा ही सावधान हो गया था। बरस में तीन महीना मांस नहीं खाता था। आदित्यवार को मांस की दुकाने बन्द रहती थीं। जिज़िया नामक कर और प्रत्यक्ष गोहिंसा उस ने उठा दिया था। कर का भी बन्दोबस्त अच्छा किया था। महाराज टोडर मल्ल (टन्नन खत्री), अबुलफ़ज़ल, खानखानां, मानसिंह, तानसेन, गंग, जगन्नाथ पंडितराज और महाराज बीरबल आदि सब प्रकार के चुने हुए मनुष्य इस की सभा में थे। कागज, हुंडी, बही आदि का नियम इन्हीं टोडर मल्ल का बांधा हुआ है। विधवाविवाह के प्रचार में भी इस ने उद्योग किया था और तीर्थों का कर भी छूट गया था। भूमि की उत्पत्ति से तृतीयांश लिया जाता था और पन्द्रह सूबों में राज बंटा हुआ था।

अकबर के मरने पर सलीम नूरुद्दीन जहांगीर के नाम से सिंहासन पर बैठ। इस ने बहुत से कर जो अकबर के समय भी बच गए थे बन्द कर दिए। नाक कान काटने की सजा, बादशाही फौज का जमींदार या प्रजा से रसद लेना और अफीम और मद्य का प्रचार इस ने बन्द कर दिया। महल में एक सोने की जंजीर लटकाई थी कि किसी दीन दुखी की पुकार जो कोई राजपुरुष न सुनै तो वह जंजीर हिला दे। जंजीर की घंटी के शब्द पर वह आप बाहर निकल आता था और न्याय करता था। किन्तु 1606 में जब उस का लड़का खुसरो पंजाब में बाग़ी हो गया था तब जहांगीर ने उस के सात सौ साथियों को बड़ी निर्दयता से उस के आंख के सामने मरवा डाला। 1810 से चार बरस तक मलिक अंबर और अहमद से लड़ाई होती रही। 1614 में खुर्रम (शाहजहां) के साथ एक बड़ी सेना इस ने उदयपुर जीतने को भेजी थी, किन्तु राजा ने मेल कर लिया। 1611 में जहांगीर ने नूरजहां से ब्याह किया। नूरजहां का पिता गियासबेग ईरान का एक धनी था किन्तु विपत्ति पड़ने से वह व्यापार को हिन्दुस्थान आता था। मार्ग में नूरजहां का जन्म हुआ। गियास यहां आ कर अकबर के दरबार में भरती हो गया था। उसी समय से जहांगीर की नूरजहां पर दृष्टि थी, किन्तु अकबर के डर के मारे कुछ कर न सका और शेर अफ़गान नामक एक पठान अमीर के साथ जिसे अकबर ने बंगाला और बिहार में जागीर दी थी, नूरजहां का ब्याह हो गया था। बादशाह होते ही जहांगीर ने बंगाले के सूबेदार को नूरजहां को किसी प्रकार भेज देने को लिखा। शेर अफ़गन बड़ी वीरता से मारा गया और नूरजहां

बादशाह के पास भेज दी गई। 4 बरस तक जहांगीर ने इस की सुश्रूषा कर के इस के साथ विवाह किया। फिर तो नूरजहां ही सारी बादशाहत करती थी; जहांगीर नाम मात्र को बादशाह था। यह स्त्री चतुर भी अतिशय थी। 1621 में जहांगीर का बड़ा बेटा खुसरो मर गया। परवेज़ मूर्ख था, इस से जहांगीर ने खुर्रम शाहजहां को ही अपना उत्तराधिकारी बनाना चाहा। किन्तु नूरजहां की बेटी जहांगीर के चौथे पुत्र शहरयार को ब्याही थी, इस से नूरजहां ने उसी को बादशाह बनाने की इच्छा से जहांगीर का मन शाहजहां से फेर दिया। पिता का मन फिरा देख शाहजहां बाग़ी हो गया। दक्षिण में और बंगाले में यह बराबर लड़ता रहा और बादशाही फौज इस का पीछा किए फिरती थी। अंत में एक अर्जी भेज कर बाप से इस ने अपराध की क्षमा चाही और अपने दो लड़कों को दरबार में भेज कर आप दक्षिण की सूबेदारी पर चला गया। नूरजहां ने एक बेर बंगाले के सूबेदार प्रसिद्ध वीर महाबतखां को हिसाब देने को बुला भेजा। महाबतखां इस आशा से शंकित होकर आया सही, किन्तु पांच हजार चुने हुए राजपूत अपने साथ लाया। इस समय जहांगीर क़ाबुल जाता था। ज्यौंही झेलम पार इस की सेना उतर चुकी थी कि महाबतखां ने बादशाह और बेगम को घेर कर अपने अधिकार में कर लिया। किन्तु नूरजहां की चालाकी से कुछ दिन पीछे (1626) जहांगीर महाबतखां के अधिकार से निकल आया। 1627 में कश्मीर में जहांगीर ऐसा रोगग्रस्त हुआ कि लाहौर में आकर साठ बरस की अवस्था में मर गया। आसफ़खां नामक नूरजहां के भाई ने जिस के हाथ में सारा राज्यचक्र था खुसरों के बेटे दावरबख़्श को नाममात्र बादशाह कर के आप काम काज करने लगा और शाहजहां को दक्खिन से बुला भेजा। शाहजहां के पहुंचने पर आसफखां ने दावरबख़्श को मार डाला। कहते हैं कि चौदह महीने यह नाम मात्र को बादशाह था। इंग्लिस्तान के बादशाह जेम्स (1) का एलची सर टामस रो जहांगीर की सभा में आया था।

शाहजहां 1628 में बड़ी धूमधाम से दिल्ली के तख़्त पर बैठा। डेढ़ करोड़ रुपया उसी दिन व्यय हुआ था। महाबतखां और आसफ़खां इस के मुख्य मन्त्री थे। दिल्ली फिर से बसाई गई। सात करोड़ दस लाख रुपया लगाकर तखतोताऊस (मोर का सिंहासन) बनवाया। आगरे में ताजगंज नामक प्रसिद्ध स्थान इसी बादशाह का बनवाया है। नूरजहां जहांगीर के पीछे 20 बरस जीती रही और शाहजहां पच्चीस लाख रुपया साल इस को देता था। शाहजहां ने जैसा राज भोगा और सुख किया और हिन्दुस्थान की बादशाहत को चमकाया, पहले कभी ऐसा किसी और ने नहीं किया था। बत्तीस करोड़ साल इस की आमदनी थी। प्रति वर्ष सालगिरह में डेढ़ करोड़ व्यय होता था। मकानों में सोना और हीरा जड़ा जाता था। इस पर भी मरने के समय यह बयालीस करोड़ रुपया नक्द छोड़ गया था। 1632 में कन्दहार के ईरानी सूबेदार अलीमर्दानखां के शाहजहां से मिल जाने से कन्दहार फिर हिन्दुस्थान के राज्य में मिल गया था, किन्तु इक्कीस बरस पीछे ईरानियों ने फिर जीत लिया। 1646 में बुखारा भी बादशाह

ने जीता। 1647 में कई बरस की लड़ाई के पीछे दक्षिण में भी शान्ति स्थापन हुई और अबदुल्ला शाह गोलकुंडे के बादशाह से सन्धि हो गई। इसी सन्धि में कोहनूर नामक प्रसिद्ध हीरा बादशाह के हाथ लगा। शाहजहां को चार पुत्र थे। दाराशिकोह, शुजा, औरंगज़ेब और मुराद। दाराशिकोह बड़ा बुद्धिमान, नम्र और उदार था, किन्तु औरंगज़ेब इस के विरुद्ध दीर्घदर्शी और महा छली था। शुजा वीर था, पंरतु अव्यवस्थित था और मुराद चित्त का बड़ा दुर्बल था। 1657 में शाहजहां बहुत ही अस्वस्थ हो गया। दारा के हाथ में राज का शासन था। औरंगज़ेब ने इस अवसर को उत्तम समझ कर मुराद को बहकाया कि बेदीन दारा से बादशाहत तुम ले लो, हम तुम्हारी सहायता करेगे और तुम को तख्त पर बैठा कर मक्के चले जायंगे। मुराद दारा से लड़ने चला। औरंगज़ेब भी आगे बढ़ कर उस से मिल गया। 1662 में बंगाल से शाहशुजा भी फौज ले कर चढ़ा, किन्तु सुलेमान शिकोह (दाराशिकोह के बेटे) से बनारस के पास लड़ाई में हार कर फिर बंगाले चला गया। मुराद और औरंगज़ेब इधर यशवंत सिंह को जीतते हुए आगरे से एक मंजिल श्यामगढ़ में आ पहुंचे। दारा एक लाख सवार लेकर इन से युद्ध करने को निकला। राजा रामसिंह, राजा रूपसिंह, छत्रसाल आदि कई क्षत्री राजे उस की सहायता को आए थे और बड़ी वीरता से मारे गए। परमेश्वर को मुसलमानों का राज्य स्थिर नहीं रखना था इस से हाथी बिचलने से दारा की फौज भाग गई और औरंगज़ेब ने आगरे में प्रवेश कर के विश्वासघातकता से मुराद को कैद कर के 1658 में अपने को बादशाह बनाया। अन्त में एक दिन मुराद को भी मरवा डाला और सुलेमानंशिकोह को भी, जो कश्मीर से पकड़ आया था, मरवा डाला। शुजा लड़ाई हार कर अराकान भागा और वहीं सवंश मारा गया। दारा ने सिन्ध की राह से अजमेर आकर बीस हजार सेना एकत्र कर के औरंगज़ेब पर चढ़ाई किया, किन्तु युद्ध में हार गया और औरंगज़ेब ने बड़ी निर्दयता से उन को मरवा डाला। उस के पुत्र सिपहरशिकोह को ग्वालियर के किले में कैद किया और फिर बहुत से शाहजादों को, जिन का बादशाह से दूर का भी सम्बन्ध था कटवा डाला। कहते हैं कि दाराशिकोह बादशाह होता तो लोग अकबर को भी भूल जाते। इस के पीछे शाहजहां सात बरस जिया था।

औरंगज़ेब के राज्य के आरम्भ ही से मुसलमानी बादशाहत का वास्तविक ह्रास समझना चाहिए। जिजिया का कर फिर से जारी हुआ। हिन्दुओं के मेले और त्योहार बन्द किए। तीर्थ और देवमन्दिर ध्वंस किए गए। इसी से 'तीन पुश्त की कमाई' स्वरूप हिन्दुओं की जो दिल्ली के बादशाहों से प्रीति थी वह नाश हो गई। इधर दक्षिण में महाराष्ट्रों का उदय हुआ। शिवाजी नामक एक वीर पुरुष ने, जो यादवराव का नाती और मालोजी का पुत्र था, दक्षिण में अपनी स्वतन्त्रता का डंका बजाया। पहले विजयपुर के राज में लूटपाट कर के अपनी सामर्थ्य बढ़ा कर 1662 में बादशाही देशों को लूटना आरम्भ किया। बादशाही सेनाध्यक्ष शाइस्ताखां ने इन के विरुद्ध आ

कर पूने में अपना अधिकार कर लिया। किन्तु असम साहसी शिवाजी केवल पच्चीस मनुष्य साथ ले कर एक रात उस के डेरे में घुस गए और शाइस्ता बिचारे प्राण ले कर भागे। शिवाजी ने अब की पूने से ले कर गुजरात तक अपना प्रताप बढ़ाया और तंजौर और मंदराज जीत कर 1664 में अपने को राजा प्रसिद्ध किया। औरंगज़ेब शिवाजी के इस साहस से बहुत ही खिसिया गया और जयसिंह के साथ बहुत सी सेना उसे जीतने को भेजी। राजा जयसिंह और शिवाजी से सन्धि हो गई और उस से मरहठे दक्षिण में बादशाही मालगुजारी की चौथ लेने लगे। 1665 में शिवाजी दिल्ली आए और औरंगज़ेब ने जब उन को नजरबन्द कर लिया तो कुछ दिन पीछे बड़े सावधानी से वह दिल्ली से निकल गए। 1667 में औरंगज़ेब ने शिवाजी को राजा की पदवी भेज दी और बीजापुर और गोलकुंडा के बादशाहों से लड़ने को इन को कहला भेजा। शिवाजी इन दोनों बादशाहों से लड़े और अंत में जब सन्धि हुई तो अपने राज्य का शिवाजी ने सुप्रबन्ध किया। 1669 में शिवाजी का प्रभुत्व दक्षिण में स्थिर हो गया था, इस से औरंगज़ेब ने क्रोध कर के महाबतखां को बड़ी सेना के साथ उन को दमन करने को भेजा, किन्तु (1670) शिवाजी ने उन को परास्त कर दिया। इसी समय सत्तनामी और सिख नामक दो दल हिन्दुओं के और औरंगज़ेब के विरुद्ध खड़े हुए। 1378 में जोधपुर के राजा यशवंत सिंह के सिन्धुपार मारे जाने पर उन की स्त्री और पुत्र को निरपराध औरंगज़ेब ने कैद करना चाहा। यद्यपि दुर्गादास नामक सेनापति की शूरता से लड़के तो क़ैद नहीं हुए, किन्तु बादशाह की इस बेईमानी से राजपूताना मात्र विरुद्ध हो गया। उदयपुर के राणा राज सिंह, जयपुर के राम सिंह और सभी राजाओं ने बादशाह के विरुद्ध शस्त्र धराण किया। इधर दुर्गादास ने औरंगज़ेब के लड़के अकबर को बहका कर बागी कर दिया और सत्तर हजार सेना लेकर अजमेर में बादशाही सेना से बड़ा युद्ध किया। 1680 में बिरार, खानदेश, विल्लोर, मैसूर आदि देश में अपनां अधिकार, यश और प्रताप विस्तार कर के शिवाजी मर गए। शिवाजी का पुत्र शम्भुजी राजा हुआ और बादशाह के पुत्र मुअज्जम को जीत कर बहुत देश लूटा, किन्तु एक युद्ध में बादशाही सेना से घिर कर पकड़ा गया और औरंगज़ेब ने उस को मरवा डाला। इधर बीस बरस के रगड़े झगड़े के पीछे गोलकुंडा और बीजापुर भी औरंगज़ेब ने जीत लिया। यद्यपि इस जीत से औरंगज़ेब का गर्व बढ़ गया, किन्तु साथ ही उस का आयुष्य और प्रताप घट गया। दक्षिण की लड़ाई के मारे खजाना खाली हो गया। हिन्दुओं का जी अति खट्टा हो गया। अन्त में 1707 में 89 वर्ष की अवस्था में औरंगज़ेब मर गया और मुग़लों का सौभाग्य भी उसी के साथ कब्र में समाहित हुआ।

औरंगज़ेब के तीन लड़कों में से आज़म और मुअज्ज़म दोनों ही बादशाह बन बैठे, किन्तु आजम लड़ाई में मारा गया और कामबख्श भी दक्खिन में मारा गया, इस से मुअज्ज़म ही बहादुर शाह के नाम से बादशाह हुआ। इस ने उदयपुर, महाराष्ट्र

आदि प्रबल राजों से सन्धि की। सिक्खों ने इस के समय में भी बड़ा उपद्रव किया। बहादुर शाह पांच बरस राज कर के मर गया। इस के पीछे सभी बादशाह बनने लगे और बहुत सा रुधिर बहने के पीछे (1712) जहांदार शाह बादशाह हुआ। यह भी साल भर नहीं रहा कि इस का भतीजा फर्रुखसियर इस को सपरिवार मार कर आप बादशाह हो गया (1713)। इस के समय में भाई बन्दा नामक सिख बड़ी धर्मवीरता से मारा गया। 1719 में सैयद अब्दुल्ला और सैयद हुसेन, जो इस के मुख्य सहायक थे, इस से बिगड़ गए और फर्रुखसियर मारा गया। सैयदों ने रफीउल्दरजात और रफीउल्शान को सिंहासन पर बैठाया, किन्तु वे चार चार महीने में मर गए। जहांदार और फर्रुखसियर ने इतने शाहजादे मार डाले थे कि सैयदों ने बड़ी कठिनता से रौशनअख़्तर नामक एक शहजादे को खोज कर कैद से निकाला और मुहम्मद शाह के नाम से बादशाह बनाया। (1713) विद्रोह चारों ओर फैल गया। 1720 में मालवा और 1725 में हैदराबाद स्वतन्त्र हो गए। सैयद लोग इस के पूर्व्व ही मारे जा चुके थे। इधर भरतपुर में जाटों ने नया राज्य स्थापन कर के लूटपाट आरम्भ कर दी। इधर प्रताप शाली बाजीराव पेशवा ने दिल्ली के द्वार तक जीत कर चंबल के दक्षिण का सब देश अपने अधिकार में मिला लिया। (1737) इस के सरदारों में से हुल्कर ने इन्दौर, सेन्धिया ने ग्वालियर, गायकवाड़ ने बड़ौदा और भोंसला ने नागपुर राज्य स्थापन किया। इसी समय ईश्वर के क्रोध का एक पंचम अवतार ईरान का बादशाह नादिरशाह हिन्दुस्थान में आया। करनाल में मुहम्मदशाह ने इस से मुक़ाबला किया, किन्तु जब हार गया तो नादिरशाह के पास हाज़िर हुआ। नादिर ने इस का बड़ा शिष्टाचार किया। दोनों बादशाह साथ ही दिल्ली आए। उस समय दिल्ली ऐसे निकम्मे और लुच्चे लोगों से भरी हुई थी कि दूसरे ही दिन लोगों ने यह गप्प उड़ा दी कि नादिरशाह मारा गया। बदमाशों ने उस के मनुष्यों को काटना आरम्भ कर दिया। इस बात पर नादिर ने ऐसा क्रोध किया कि सारी दिल्ली को काट देने का हुक्म दिया। डेढ़ पहर तक शाक की भांति लाख मनुष्यों के ऊपर काटे गए। अंत को मुहम्मदशाह रोता हुआ उस के समाने गया, तब नादिरशाह ने आज्ञा दिया कि काटना बन्द हो जाय। उस की आज्ञा ऐसी मानी जाती थी कि उस के प्रचार होते ही यदि किसी ने किसी के शरीर में आधी तलवार गड़ाई थी तो वहीं से उठा ली—दिल्ली को यों उजाड़ कर के अट्ठावन दिन वहां रह कर सत्तर करोड़ का माल साथ लेकर नादिर अपने मुल्क को लौट गया (1379)। कुछ दिन पीछे उसके देशवालों ने नादिरशाह को मार डाला और अहमदशाह नामक उस का एक सेन्याध्यक्ष कन्दहार, बलख, सिन्ध और कश्मीर का बादशाह बन बैठा। लाहौर लेते हुए। (1747) हिन्दुस्थान में भी उसने प्रवेश करना चाहा, किन्तु मुहम्मद शाह का पुत्र अहमद शाह ने सरसिंह में युद्ध कर के उस को पीछे हटा दिया। इस के पूर्व्व (1730) बाजीराव मर गए थे, किन्तु उन के पुत्र बालाजी राव ने मालवा ले लिया था। 1748 में मुहम्मद शाह मर

गया। यह अति रागरंगप्रिय और विषयी था। इस का पुत्र अहमद शाह बादशाह हुआ। इस के समय में रुहेलों ने बड़ा उपद्रव उठाया था किन्तु मरहट्टों ने इन का दमन किया। 1754 में ग़ाजिउद्दीन ने अहमद शाह को अन्धा और कैद कर के जहांदारशाह के एक लड़के को तख्त पर बैठाया और आलमगीर सानी उस का नाम रक्खा। ग़ाजिउद्दीन ने अहमदशाह दुर्रानी के पंजाब के सूबेदार की मां को कैद कर लिया था। इस बात से अहमदशाह ने ऐसा क्रोध किया कि बड़ी भारी सेना लेकर सीधा दिल्ली पर चढ़ दौड़ा। ग़ाजिउद्दीन बड़ी दीनता से उस के पास हाजिर हुआ, किन्तु वह बिना कुछ लिए कब जाता था। (1745) बल्लभगढ़ और मथुरा लूटी और काटी गई। दिल्ली और लखनऊ के लोगों से भी रुपया वसूल किया गया। अन्त में नजीबुद्दौला को दिल्ली का प्रधानमन्त्री बना कर अपने देश को लौट गया। ग़ाजिउद्दीन ने मरहट्टों से सहायता चाही और पेशवा का भाई रघुनाथ राव दिल्ली पर चढ़ आया। नजीबुद्दौला भाग गया और गाजिउद्दीन फिर वज़ीर हुआ। इधर मरहट्टों ने अहमदशाह दुर्रानी के लड़के तैमूर को पंजाब से निकाल कर वह देश भी अधिकार में कर लिया, अर्थात् अब मरहठे सारे भारतवर्ष के अधिकारी हो गए। इसी समय में गाज़िउद्दीन ने बादशाह को मार डाला और आप दिल्ली छोड़ कर भाग गया। अहमदशाह दुर्रानी इस बात से ऐसा क्रोधित हुआ कि बहुत बड़ी सेना ले कर फिर हिन्दुस्थान में आया। पेशवा ने यह सुन कर अपने भतीजे सदाशिवराव भाऊ के साथ तीन लाख सेना और अपने पुत्र विश्वास राव को उस से युद्ध करने को भेजा। मरहट्टों ने पहले दिल्ली को लूटा, फिर पानीपत के पास डेरा डाला। पहले कुछ सुलह की बातचीत हुई थी, किन्तु अंत को 6 जनवरी, 1761 को दोनों दल में घोर युद्ध हुआ, जिस में दो लाख से ऊपर मरहट्टे मारे गए और अहमदशाह की जय हुई। इस हार से मरहट्टों का उत्साह, बल, प्रताप, सभी नष्ट हो गए और साथ ही मुग़लों का राज्य ही अस्त हो गया। शुजाउद्दौला ने आलमगीर के बेटे अलीगौहर को शाहआलम के नाम से बादशाह बनाया (1761)। यह दस बरस तक तो पहले नजीबुद्दौला के डर से इलाहाबाद में पड़ा रहा, फिर उस के मरने पर मरहट्टों की सहायता से दिल्ली में गया। थोड़े ही दिन पीछे गुलामकादिर नामक नजीबुद्दौला के पोते ने दिल्ली लूट कर बादशाह को पृथ्वी पर पटक कर छाती पर चढ़ कर कटार से आंख निकाल ली और हाथ बांध कर वहीं छोड़ दिया। महादजी सेन्धि या यह सुन कर दिल्ली में आया और गुलामकादिर को पकड़ कर बड़ी दुर्दशा से मारा और अन्धे शाहआलम को फिर से तख्त पर बैठाया। चारों ओर उपद्रव था। 1803 में लार्ड लेक ने अंग्रेज़ी सेना ले कर दिल्ली को मरहट्टों के हाथ से लिया और शाहआलम को पिनशन नियत कर दी। शाहआलम को अकबर सानी और उस को बहादुरशाह हुए। ये लोग साढ़े सोलह लाख की जागीर और पिनशन भोगते रहे। अन्त को वह भी न रही। यों मुसलमानों का प्रतापसूर्य आठ सौ बरस तप कर अस्ताचल को गया।

कनकपात्र रत नगजटित, फेंकत जौन उगार।
तिन की आजु समाधि पर, मूतन स्वान सियार॥
जे सूरज सों बढ़ि तपे, गरजे सिंह समान।
भुज बल विक्रम पारि निज, जीत्यो सकल जहान॥
तिन को आजु समाधि पै, बैठ्यो पूछत काक।
'को' हौ तुम अब 'का' भए 'कहाँ' गए करि साक॥

॥इति॥

ग्रन्थ का उपष्टम्भक

अकबर ने काश्मीर में हिन्दुओं के हेतु एक मन्दिर का जीर्णोद्धार कराया था, क्यौंकि उस को मुसलमान लोग तोड़ डाला करते थे। और उस पर उस की एक आज्ञा भी खुदी हुई है, जो यहां प्रकाशित होती है। इस से लोग उसका चित्त देखें।

किताबए अबुलफ़जल बरलौह संग कलीसाए कश्मीर कि बमूजिब हुक्म अकबर तामीर याफ़्तः बूद व आंरा औरंगज़ेब आलमगीर ग़ाज़ी मिस्मार साख्त। इलाही बहर कुजा कि मीनिगरम् जूयाये तवानद व बहर जुबान कि मीशनूम गोयाये तवानद। शैर–

कुफ्रो इस्लाम दर रहश पोयां।
वहदः लाशरीफ वलह गोयां॥

अगर मस्जिदस्त बयाद तो नारः कुद्दूस मीज़नन्द व अगर कलीसास्ता बशौक तो नाक़ाम मीजुंबानन्द। शैर–

गहे मुहतक़िफ़ दैरम व गहे साकिने मस्जिद।
यानी कि तुरा मीतलमबम् खानः बखानः॥

गर्चे खासान तररा बकुफ्रो इस्लाम कारे न पस ईं हर दोरा दरपर्दाः इसरार तो बारी नः। शैर–

कुफ्र काफिर रा व दीन दीनदार रा।जर्रः दर्दे दिल अत्तार रा॥

ई खानः कि बनीयत तालीफ कुलूब महिदान हिन्दुस्थान खसूसा माबूद परस्तां अर्सए कश्मीर तामीर याफ़्तः। शैर–

बफ्र्माने खदीवे तख्तो अफ़सर। चिरागे आफरीनशशाह अकबर॥

हरखानः खराब कि नज़र बर सिद्क नः अन्दाख्तः ईं खानः रा खराब साज़द बायद कि नखस्त मोबिद खुद रा बर अन्दाजद गर्चे नज़र बदिल अस्त बाहमः साख्तनीस्त व अगर चश्म बर आबो गिलस्त हमः अंदाख्तनीस्त। शैर–

खुदावन्दा चु दारी कार दादी।
सदारे कार बर नीयत निहादी॥
तुई बर बारगाहे नीयत आगाह।
व पेशे शाह दादी नीयते शाह॥

हे परमेश्वर! जिस स्थान को देखता हूं वहां सब तेरे ही खोज में हैं और जिस से सुनता हूं तेरी ही बात करते हैं। धर्म्माधर्म्म सब तेरे ही मार्ग में चलते हैं और एक ब्रह्माद्वैत ही का भाषण करते हैं। यदि तेरे बन्दना के स्थान हैं तो वहां तेरे पवित्र नाम की शब्दध्वनि करते हैं और यदि देवस्थान हैं तो परिक्रमा करता हूं और कभी तेरे वन्दनालय में रहता हूं, अर्थात तुझी को घर घर ढूंढ़ता हूं। यद्यपि जो लोग तुझ में ही लवलीन हो रहे हैं, उन्हें इस द्वैतता से कुछ प्रयोजन नहीं और इन दोनों को तेरे अन्तर भेद में गम्य नहीं। मूर्तिपूजकों को मूर्तिपूजा और वन्दनावालों को वन्दना किसी प्रकार चित्तरोग की शान्ति है।

यह मन्दिर भारतवर्ष के ब्राह्मद्वैतवादियों के विशेष कर काश्मीर प्रान्त के प्रिय मूर्तिपूजकों के चित्त तोषार्थ सिंहासन और मुकुट के स्वामी साम्राज्य के मणिद्वीप महाराजाधिराज अकबर की आज्ञा से बनाया गया। जो सत्यानाशी सत्य पर दृष्टि न रख कर इस घर को गिरावैगा वह मानों अपने इष्ट का मन्दिर ढहावैगा। यदि ईश्वर से सच्चे चित्त से सम्बन्ध है तो सब मत के स्थानों को बनाना चाहिए और मिट्टी पत्थर पर दृष्टि है तो सब को गिराना चाहिए।

हे ईश्वर! तू सब कर्मों के तत्त्व को समझनेवाला है और कर्मों की मूल मति है और तू ही हमलोगों की अन्तर मति को जानता है और तू ही ने राजा को राजा योग्य मति दी है।

किन्तु इस आज्ञापंत्र पर दुष्ट औरंगज़ेब ने कुछ ध्यान न दिया और अपनी आज्ञा से इसे तोड़वा दिया।

औरंगज़ेब ने एक आज्ञा सन् 1069 हिजरी में ऐसी प्रचलित की थी कि बनारस में न कोई मन्दिर तोड़े जायें, न हिन्दुओं को दुःख दें। 1068 में विश्वनाथ का मन्दिर उस ने तुड़वाया था, उस के साल भर पीछे न जानैं क्या दया आप के चित्त में आई कि यह आज्ञा प्रचलित की गई, किन्तु यह आज्ञा उस की किसी विशेष युक्ति से शून्य नहीं थी और यह आज्ञा कार्य में परिणित भी नहीं हुई, क्यौंकि 1077 में इसी काशी में कृत्तवासेश्वर का मन्दिर इसी की आज्ञा से तोड़ा गया था। वहां जो मस्जिद है उस का लेख भी यहां प्रकाशित होता है, इसी से उस के चित्त की कुटिलता स्पष्ट

होगी। मन्दिर न तोड़नेवाला असली आज्ञापत्र काशी में महादेव नामक एक ब्राह्मण के पास अद्यापि विद्यमान है।

बिस्मिल्ला अलरहमान अलरहीम

तुग़रा बादशाह **मुहर बादशाह**

खुदा

लायक़ल एनायः व अलमरहमः अबुलहसन बइल्तफात शाहानः उम्मीदवार बूदः बिदानद कि चूं बमुकत्जाय मराहिम जाती व मकारिम जबली हमगी हिम्मत वाला नहिम्मत व तमामी नीयत हक़्र तबीयत मा-बर-रिफाहियत जम्हूर व इंतजाम अहवाल तबक़ात खवास व अवाम मसरूफस्त व अज़ रूये शरअ शरीफ न मिल्लत मनीफ मुकर्रर चुनीं अस्त कि दैरहाए देरीन बरअंदाख्तः न शबद व बुतकदः हाए माजः बिना नयाबद व दरीं अय्याम मादलत इन्तजाम बगरज अशरफ़ अकदस अर्फा आला रसीद कि बाज़ मर्दुम अज़ राह अनफ़ व तादी बहनूद सकनः कस्बः बनारस व बर्खे अमकनः दीगर कि बनिवाहे आं वाकः अस्त व जमाअः बिरहमनान सदनः आं महाल कि सदानत बुतखानः हाय कदीम आंजा व आंहा ताल्लुक दारद मुजाहिम व मोतरिज मीशवंद व मीख्वाहंद कि एशांरा अज़ सदानत आं कि अज़ मुद्दत मदीद व आंहा मुतअल्लिक अस्त बाज दारद व ईं मआनी बाएस परेशानी व तफरकः हाल ईं गरोह मी गर्दद लिहाजा हुम्म वाला सादिर मीशवद कि बाद अज़ वरूद ईं मनशूर लामअलनूर मुकर्रर कुनद कि मन बाद अहदे बवजूद बेहिसाब तआरुज व तशवीश बअहवाल बिरहमनान व दीगर हनूद मुतवतनः आं महाल नरसानद ता आं हा बदस्तूर एय्याम पेशीं बजा व मुक़ाम खुद बूदः बजमैयत खातिर बदुआए बकाए दौलत दाद अबद मुद्दत अज़ल बुनियाद कयाम नुमायंद दरीं बाब ताकीद दानद। बतारीख 15 शहर जमादिउस्सानियः सन् 1069 हिजरी नविश्तः शुदः।

शाहजादा सुलतान मुहम्मद

सुलतान

बरिसालए नवाब कुदसी अलक़ाब नौ बादः बर सितान खिलाफत गुर्जी समरः शजरः रफअत चिराग दूदमान अबहत फरोग़ खानदान शौकत कुरः नासिरः दौलत व इकबाल तरह नामिया हशमत व इजलाल गिरामी नसब समीउल् मकान अल ममदूह बलसानुल् बाद वातुहर शाहज़ादः नामदार कामगार वालातबार मुहम्मद सुलतान बहादुर।

यह आज्ञापत्र शाहज़ादे मुहम्मद सुल्तान बहादुर के नाम है। इस का आशय

यह है—'कुरान में लिखा है कि पुराने मन्दिर को नहीं गिराना और नए नहीं बनाने देना। ऐसा सुना गया है कि बनारस के ब्राह्मणों को लोग दुःख देते हैं, इस हेतु यह आज्ञा दी जाती है कि आगे से कोई हिन्दुओं के स्थानों को न छेड़े और ब्राह्मणों को निर्विघ्न पाठ पूजा करने दे (इत्यादि) 15 जमादिउरसानी 1069।

इस के पीछे का कृत्तवासेश्वर की मस्जिद पर का लेख।

ज़े हुक्मे शाह सुलताने शरीअत। दलीले ज़हद बुर्हाने तरीक़त॥
शहावे आसमाने सरफ़राज़ी। मुहम्मदशाह आलमगीर ग़ाजी॥
सरे अस्नाम बुतखानः शिकस्तः। जहूरे मस्जिदे दिलख्वाह गश्तः॥
ब इस्तसवाब नूरुल्लाह मुक्ती। गुलामे दरगहे पीराने चिश्ती॥
सनाए खानः जीनत अस्त पैदा। जे दौलतखाना तारीखश हुवेदा॥

(1077 हि.)

अर्थ—मुसलमानी धर्म के स्वामी (इत्यादि) औरंगज़ेब बादशाह की आज्ञा से देव मन्दिर के देवताओं के सिर तोड़ कर यह मस्जिद बनाई गई (इत्यादि) 1077 हिजरी।

[रचनाकाल—सन 1884 ई.]

कालचक्र

अर्थात्

संसार में जो बड़ी-बड़ी घटना हुई हैं उनका समय निर्णय

ॐ कालात्मने भगवते श्रीकृष्णाय नमः

भूमिका

हाय! इस 'कालचक्र' को पूरा कर के छपाने की भी नौबत न पहुंची कि पूज्यपाद भारतेन्दुजी आप ही कालचक्र के कराल गाल में जो फंसे! अस्तु भगवदिच्छा, अब कोई वश नहीं।

यह उन का परिश्रम आप लोगों की सेवा में भेंट किया जाता है, यदि इस से आप लोगों को कुछ भी सहायता मिलैगी तो सब परिश्रम सुफल हो जायगा।

बनारस — सेवक
वैशाख कृष्ण 1 सं. 1949 — श्री राधाकृष्ण दास

ॐ कालात्मने भगवते श्रीकृष्णाय नमः

कालचक्र

[ईसवी के पूर्व का काल]

घटना	समय	विशेष
सृष्टि का प्रारम्भ	1972947101	आर्य लोगों के मत से।
सत्ययुग का प्रारम्भ	3891101	
त्रेतायुग का प्रारम्भ	2163101	
द्वापरयुग का प्रारम्भ	867101	
कलियुग का प्रारम्भ	3101	ज्योतिष के मत से
कलियुग का प्रारम्भ	1857	भागवत मत से
कलियुग का प्रारम्भ	1775	ब्रह्मांड पुराण मत से
कलियुग का प्रारम्भ	1729	वायुपुराण मत से
कलियुग का प्रारम्भ	10780	बौद्ध लोग मत से
इक्ष्वाकु का जन्म और प्रथम बुद्ध	2183102	पौराणिक मत से
इक्ष्वाकु का जन्म और प्रथम बुद्ध	5000	जोंस मत से
इक्ष्वाकु का जन्म और प्रथम बुद्ध	2700	विल्फ़र्ड मत से
इक्ष्वाकु का जन्म और प्रथम बुद्ध	1528	बेंटली मत से
इक्ष्वाकु जन्म, प्रथम बुद्ध	2200	टॉड मत से
इक्ष्वाकु जन्म, प्रथम बुद्ध	3500	जोंस ने स्थानान्तर में माना है।
श्रीराम	867102	पौराणिक मत से
श्रीराम	2029	जोंस मत से
श्रीराम	1360	विल्फ़र्ड मत से
श्रीराम	950	बेंटली के मत से

श्रीराम	1100	टॉड मत से
युधिष्ठिर	3102	पौराणिक मत से
युधिष्ठिर	576	बेंटली मत से
युधिष्ठिर	1430	विल्फ़र्ड मत से
युधिष्ठिर	1391	डेविस मत से
युधिष्ठिर	1180	जोंस और कोलब्रुक मत से
महाभारत का युद्ध	1367	बिल्सन के मत से
कश्मीर राज्य स्थापन	3714	
परीक्षित	3101	
श्री विष्णु स्वामी	3000	
श्री निम्बार्क स्वामी	3000	
जनमेजय	1300	
सुमित्र और प्रद्योत	2100	पौराणिक मत से
सुमित्र और प्रद्योत	1029	जोंस मत से
सुमित्र और प्रद्योत	700	विल्फर्ड मत से
सुमित्र और प्रद्योत	119	बेंटली मत से
सुमित्र और प्रद्योत	915	विल्सन मत से
सुमित्र और प्रद्योत	600	बर्मावाले मत से
स्वायंभुवमनु	4006	
जयगुप्त ने नैपाल राज्य की स्थापना की	2595	
सृष्टि का प्रारम्भ	4004	हिबरू धर्म पुस्तक के मत से
सृष्टि का प्रारम्भ	5872	अन्य विद्वानों के मत से
सृष्टि का प्रारम्भ	4700	समारतिन मत से
सृष्टि का प्रारम्भ	4710	जूलियन मत से
आदम की उत्पत्ति	4004	
कायन की उत्पत्ति	4003	
नूह का प्रलय	2349	
चीन राज स्थापन	2207	
मिश्र राज्य स्थापन	2188	
इब्राहीम का जन्म	1996	

हिन्दुस्तान से एथिओपियन लोगों का मिश्र में जाना	1615	
मूसा की उत्पत्ति	1571	
यूनान की सभ्यता	1500	
यूरोप में पहले पहल जहाज़ चलना	1485	
शाक्य सिंह	1027 ई.पू.	चीनियों के अनुसार
शाक्य सिंह	962 ई.पू.	तिब्बत के अनुसार
दाऊद का काल	1034	
रुस्तम हिन्दुस्तान में आकर कन्नौज में शिवराजवंश स्थापन किया	1027 ई.पू.	फरिश्ता
सुलेमान का उदय	992	
क्वीन सेमीरैमिस अर्थात् शमीरामा देवी	810	तृतीय बलबश की स्त्री कहते हैं कि यह भारतवर्ष में आई थी।
शिशु नाग	1962	पौराणिक मत से
शिशु नाग	870	जोन्स मत से
तिब्बत राज्यारम्भ	962 ई.पू.	तिब्बत के अनुसार
विलायत में चांदी तथा सोने का सिक्का बनना	894	
मालवा का राज्य चला (धनंजयस)	840	
विलायत में चन्द्रग्रहण गिना जाना	721	किसी के मत से इसी साल गौतम का जन्म
शिशुनाग	777	
वलीद के काल में मुसलमानों ने भारतवर्ष में उपद्रव मचाया	711	
अन्हल चौहान	700	
शंकर ने गौर (लखनौती नगर) बसाया	731 ई.पू.	
चौहान (राज्यस्थापन, अन्हल चौहान)	700 ई.पू.	दिल्ली अजमेर का राज्य इस वंश में अब निमरान के राजा हैं।

चीनी और तातारियों में बड़ी लड़ाई	636	
नन्द और तातारियों में बड़ी लड़ाई	1600	पौराणिक मत से
नन्द और तातारियों में बड़ी लड़ाई	1699	जोन्स मत से
महावीर स्वामी (जैनों के)	629	
भारतवर्ष से विजयराज ने लंका में जाकर जीतकर राज स्थापन किए	543 ई.पू.	
ब्रह्माराज्य स्थापन	691 ई.पू.	
विलायत में गानविद्या का नियमित रूप से चलना	600	
चन्द्रगुप्त	1502	पौराणिक मत से
चन्द्रगुप्त	600	जोन्स मत से
गौतम (बौद्ध मत का प्रचार)	608 ई.पू.	बर्मा वालों के मत से
रोम नगर में पहिले पहल मर्दुमशुमारी	566	
नौशेरवां की सेना हिन्दुस्तान में आई	530	
एथीन्स नगर में पहिले पहल दुःखान्त नाटक खेला जाना	535	
पयथागोरस मिश्र में आया	534	
अशोक मिश्र में आया	1470	पौराणिक मत से
अशोक मिश्र में आया	540	जोन्स मत से
सिंहल द्वीप को भारतवर्ष से विजय राजा ने जाकर जीत कर राज्य स्थापन किया	543	
अरस्तू का अन्त और सुकरात का उदय	468	
नन्द	415	नवीन विद्वानों के मत से।
दहलू ने दिल्ली बसाई	471 ई.पू.	
सिकन्दर का जन्म	356	
चन्द्रबीज (मगध का अन्तिम राजा)	452	पौराणिक मत से
चन्द्रबीज (मगध का अन्तिम राजा)	300	जोन्स मत से

चन्द्रगुप्त(मगध का अन्तिम राजा)	315 ई.पू.	
अशोक (मगध का अन्तिम राजा)	330 ई.पू.	
सिकन्दर (मगध का अन्तिम राजा)	334	
सिकन्दर ने हिन्दुस्तान पर चढ़ाई की	331 ई.पू.	
दूसरे अरस्तू जुकरात, बुकरात आदि का उदय	330	
सिकन्दर का भारतवर्ष में आगमन	337	
सिकन्दर की मृत्यु	323	
क़हक़हा दीवाल का बनना	300	
बली दीवाल का बनना	908 ई.पू.	पौराणिक मत से
बली दीवाल का बनना	149	जोन्स मत से
जैसलमेर में यादवों का राज्य स्थापन	150 ई.पू.	
विक्रमादित्य	56 ई.पू.	

ईसवी सन से पूर्व या ईसवी सन में

विक्रमादित्य गद्दी पर बैठा	57	
कैसर का उदय	50	
ईसा मसीह फांसी पड़े	33 ई.	
रोमवालों ने लंडननगर बनवाया	50 ई.	
सौराष्ट्र में वल्लभी वंश	1 ई.	
मनीपुर राज्यारम्भ (पाखंबा)	35 ई.	
फारस राज्य स्थापन (अर्द शेर)	226 ई.	
आमेर राज्य स्थापन (नल नरवर गढ़)	294 ई.	
कर्णाट राज्य स्थापन	300 ई.	
यूनान और एशिया में महाभूकम्प हुआ 150 नगर नष्ट हो गए	358	
राठौर राज्य कन्नौज में स्थापन (यवनाश्व)	300	
भोज	483 ई.	
मुहम्मद	594 ई.	जन्म 569 ई. मृत्यु 653 ई.
भारतवर्ष से यूरोप में रेशम गया	551 ई.	
एलोमार्चिश	648	Poulomeon of Chinese
अबूबकर	632 ई.	
उमर	634	
उसमान	644	

अली	656
हुसैन	661
करबला का युद्ध	681
मुहम्मद का मदीने पलायन	622
हिजरी सन का स्थापन	
मुसलमानों ने इसकन्दरिया का प्रसिद्ध पुस्तकालय जला दिया जिसमें केवल पुस्तकों की अग्नि से महीनों सब काम हुआ। हा!	640
गुजरात राज्य स्थापन (शैलदेव द्वारा)	669 ई.
बापारावल	713 ई.
हारूरशीद	786
ईसा मसीह के जन्म से ईस्वी सम्वत की गणना चली	748
वकील विद्या की यूनान और रोम में सृष्टि हुई	788
मेवाड़ राज्य स्थापन	750
रुरिक ने रूस बसाया	861
इंगलैंड के लोगों ने ईंटा और मोमबत्ती बनाना सीखा	884
चालुक्य वंश राज्य	810
सुबुक्तगीन की भारतवर्ष पर चढ़ाई	970
जयपाल और सुबुक्तगीन का युद्ध	977 ई.
दूसरे आरडोनों ने स्पेन में सत्तर हजार मुसलमानों को मारा।	918
इंगलैंड में फ्रीमैसन चला	926
यूरोप में गणित विद्या चली	941
तैलंग राज्य स्थापन (राजधानी बारंगगोला)	951
महमूद ग़ज़नबी की पहली चढ़ाई	1001
सोमनाथ का टूटना	1024
यूरप में कागज गूदर से बना	1000
क्रूसेउ का प्रसिद्ध धर्मयुद्ध तीन लाख कृस्तानों ने आरम्भ किया	1096

हारावती (हाड़ा) राज्य स्थापन	1024 ई.	अब कोटा बूंदी
बंगाल राज्य-स्थापन (भूपाल)	1000	
विजय नगर राज्य स्थापन (नन्द) विद्यानगर	1034	
पृथ्वीराज राज्य-स्थापन (नन्द) विद्यानगर	1192 ई.	
मुहम्मद गोरी राज्य-स्थापन (नन्द) विद्यानगर	1193	
श्री रामानुज	1137	
श्री शंकराचार्य	1122	
शहाबुद्दीन की पहली चढ़ाई	1191	
पृथ्वीराज की हार, भारत की स्वाधीनता का अन्त	1193	
युक्लिड इंगलैंड में गई	1130	
पुस्तक बेंचने की चाल इंगलैंड में चली	1100	
इंगलैंड में कर में रुपया लेना चला अब तक अन्न आदि लिया जाता था	1136	
वेंकटगिरि राज्य स्थापन (पाटलमारि बेताल)	1140	
गया उद्धार के हेतु उदयपुर के नौ रानाओं का वीरगति पाना	1200 ई.	
रणथम्भौर का हम्मीर	1299 ई.	
चंगेज़खां	1206	
हलाकू	1259	
कुतुबुद्दीन ऐबक	1206	
चंगेज़ खां का भारत में उपद्रव	1212	
रजिया बेगम स्त्री बादशाह हुई	1236	
दक्षिण पर मुसलमानों की पहली चढ़ाई	1294	
हलाकू ने तातार राज्य स्थापन किया	1259	
बंगाले में (लखनौती गौड़) मुसलमान राज्यारम्भ (बखतियार खिलजी)	1203	इन लोगों ने अकबर के समय तक राज्य किया
इंगलैंड में जिआग्रफी गई	1210	
प्रसिद्ध मैगनाचार्टा पर हस्ताक्षर हुए और पार्लियामेन्ट इंगलैंड में चली	1215 25 जून	
कम्पनी बनाकर व्यापार करने की चाल चली	1232	
इंगलैंड में प्रतिष्ठित लोगों को इस्क्वायर कहने की चाल चली।	1244	

वहां राजकवि का पद प्रतिष्ठित हुआ	1251	
वहां पहिले पहल सोने का सिक्का बना	1257	
राठौरों का जोधपुर में बसना	1210	
वीरबुक्कराज विजयपुर का राजा, माधवाचार्य्य	1334 ई.	
तैमूर	1393	
श्रीममध्व	1300	
जौनपुर की शाही स्थित हुई (ख्वाजा जहां)	1394	सन 1476 में यह राज बंगाले के मुसलमानी राज्य में मिल गया।
गुजरात राज नाश	1309	अलाउद्दीन मुहम्मद शाह ने जीता।
कुलबर्गा की बहमनी बादशाहत का आरम्भ	1347	
यूरप में चांदी के बरतन चिमचे चले और अलजेबरा आया।	1300	
बही हुंडी की चाल चली।	1307	
गोटा किनारी चला (यूरप में)	1320	
छठे चार्लुस फ़रासीस के बादशाह के वास्ते ताश का खेल बना	1391	
मालवा राज्य ध्वंस	1330 ई.	मुसलमानी राज्य में मिल गया।
गुरु नानक	1419	
गुरु अंगद	1430	
बीजापुर की बादशाहत का आरम्भ	1489	
इंगलैंड में बारूद बनी	1418	
काठ के टाइप से यूरोप में पहिले पहल छापना चला	1430	
वहां शीशा बनाना चला	1457	
वहां तौल नियत हुई	1492	
वास्कोडिगामा का हिन्दुस्तान खोजने को चलना	1497	
कोलम्बस के साथियों द्वारा अमेरिका का प्रादुर्भाव	1499	
बीकानेर राज्य स्थापन (बीका)	1458	
आसाम राज्यारम्भ	1400	

मैसूर राज्य स्थापन (बट्टावाड्डियार)	1490	
सांगा राणा का बाबर को जीतना।	1508	
राणा प्रताप सिंह अकबर का घोर युद्ध।	1583	
गुरु अमरदास	1552	
गुरु रामदास	1574	
गुरु अर्जुन	1581	
श्रीवल्लभाचार्य्य	1535	
श्री कृष्ण चैतन्य	1542	
श्री हितहरिवंशजी	1582	
बाबर का दिल्ली राज्य पर बैठना	1526	
सक्के ने चमड़े का सिक्का चलाया	1539	
गोलकुंडा की बादशाही का आरम्भ	1512	
डिफेंडर ऑफ दी फेथ का पद हेनरी (7) को दिया गया जो अब भी महारानी को है।	1521	Defender of the faith
प्रोटेस्टेंट मत स्थापन	1529	
इंगलैंड में डाकखानों की सृष्टि	1531	
वहां के लोगों ने सूई बनाना सीखा।	1545	
मेरी स्काटलैंड की रानी का सिर काटा गया।	1587	एलिजाबेथ ने व्यर्थ यह पाप किया। एलिजाबेथ बड़ी पापासक्त थी किन्तु प्रकट में धार्मिक बनी थी।
इंगलिश मर्क्यूरी नामक प्रथम समाचारपत्र चला	1588	English Mercury
कवि शेक्सपीयर का उदय	1595	
शिवाजी	1647 ई.	
गुरु हरिगोविन्द	1606	
गुरु हरिराय	1644	
गुरु हरिकृष्ण	1661	
गुरु तेगबहादुर	1664	
गुरु गोविन्दसिंह	1675	
व्यासजी	1612	
अकबर का मरना	1605	
शिवाजी का जन्म	1627	

ईस्ट इंडिया कम्पनी स्थापित हुई	1600	
मदरास में अंगरेज जमे	1620	
तथा बंबई में	1661	
बन्दा साहब	1708	
लंका का राज्य अंगरेजों ने लिया	1798	
हैदराबाद का राज्य आसिफजाह ने स्थापन किया	1717	
बाजीराव का अन्त	1718 ई.	
लखनऊ राज्यारम्भ	1700	
पानीपत में भाऊ की हार	1759	
शाहआलम को गुलाम कादिर ने अन्धा किया	1788	
सिंहल (लंका) का अन्तिम राजा श्रीविक्रमराजसिंह	1798 ई.	अंगरेज़ों ने लिया
सर न्यूटन जोत्सी	1700	
इंगलिस्तान में सूत की कल तथा फारस में प्रथम बैल्यून	1730	
कलकत्ता अंगरेज़ों ने स्वाधीन किया	1756	
बकसर की सिराजुद्दौला की लड़ाई	1764	
यह बात जानी गई कि जल दो वायु से मिलकर बनता है	1781	
अमेरिका स्वतन्त्र हुआ, सवा अरब रुपया, पचास हजार प्राणी और कई टापू गवां कर अंगरेज़ शान्त हुए	1872	
विद्युतशक्ति प्रचारक बेनजामिन फैंकलिन मरा	1790	
नेपोलियन बोनापार्ट	उदय 1794 अस्त 1821	
वारन हेस्टिंग्स जिसने राजा चेतसिंह से महा अन्यायपूर्व्वक बनारस का राज्य छीना था, सात लाख रुपया पार्लियामेंट में व्यय करके सात बरस में उन लोगों की दृष्टि में दोष मुक्त हुआ	1795	किन्तु न्यायकर्त्ता परमेश्वर के सामने से दोष कब हो सकता है?
फ़रासीस में अंगरेज़ों को अति दुःखित जानकर दयालु आर्यों ने केवल बंगदेश से पंदरह लाख और अन्य	1798	इलबर्टबिल विद्वेषी इसको पढ़कर भी हम लोगों से कृतघ्नता

अन्य देश में से करोड़ों रुपया भेजा।		करने में न चूकेंगे?
टीपू हारा, अंगरेज़ों ने श्रीरंगपट्टन लिया।	1799	
हैदराबाद में निजाम राज्य स्थापन (आसिफ़जाह)	1717	
बनारस में सरकार का राज्य	1763	
राजा चेतसिंह को निकाल दिया	1781	
वजीर अली की उपद्रव	1798	
मथुरा में क़त्लेआम	1758	
नादिरशाही	1739 ई.	
कलकत्ता सरकार ने लिया	1758	
पलासी की लड़ाई	1763	
विजयनगर (विद्यानगर) राज्य नाश	1756	राजा त्रिमल्ल राव को सुलतान खां ने राज्य से उतारा।
पेशवा राज्यारम्भ (बाला जी)	1740	
नागपुर राज्यारम्भ (रघु जी)	1734	भोंसले
सेन्धिया राज्यारम्भ (रानू जी)	1724	
हुलकर राज्यारम्भ (मल्हार राव)	1724	
गाइकवाड़ राज्यारम्भ (दामाजी)	1720	
महाराज रणजीतसिंह	1805	
लखनऊ में बादशाही पर गाजीउद्दीन	1814	
लखनऊ का नाश	1847	
लॉर्ड लेक ने दिल्ली ली	1803	
तार की खबर का प्रचार	1800	
इंजिन से नाव चलाना चला	1812	
शाहशुजा से महाराज रणजीतसिंह ने कोहनूर हीरा लिया।	1814	
महारानी विक्टोरिया का जन्म	1819 मई 20	
लॉर्ड बेंटिंक ने सती होना बन्द किया।	1829	
अमेरिका से पहिले पहल जहाज़ में बरफ़ भर के कलकत्ते में आया।	1833	
अंगरेज़ी राज्य के सब टापू में लौंडी गुलाम स्वतन्त्र कर दिए गए।	1834	
महारानी विक्टोरिया	1837	उस समय अंगरेजी राज्य की आमदनी

राज्य पर बैठी	20 जून	साढ़े छियालिस करोड़ थी।
महारानी विक्टोरिया का विवाह। दोस्त मुहम्मद का पकड़ा जाना।	1841 फरवरी 10	
रेल का नियमित रूप से चलना		
प्रिंस ऑफ वेल्स का जन्म	1841	
प्रिंसेस ऑफ वेल्स का जन्म	1844	
हिन्दुस्तान में बलवा	1857	
महारानी का ईस्ट इंडिया कम्पनी से राज्य अपने हाथ में लेना	1858	
ड्यूक ऑफ एडिनबरा का भारतवर्ष में आना	1870 ई.	
प्रिन्स ऑफ वेल्स का शुभागमन	1875 ई.	
स्वामी दयानन्द का उदय	1870	
महारानी का इम्प्रेस ऑफ इंडिया का पद धारण करना	1877	
हिन्दी में प्रथम नाटक (नहुष नाटक)	1859	
तथा द्वितीय–(शकुन्तला)	1863	
तथा तृतीय (विद्यासुन्दर)	1871	
हिन्दी नए चाल में ढली	1873	
हिन्दी का प्रथम समाचार पत्र (सुधाकर)	1850	
तीर्थों का कर छूटा	1837	
बनारस में पसेरी का उपद्रव	1842	
काशी में दो महीने का महा भूकम्प	1837	
पीपे में आग लगी	1850	
लाट भैरो की हिन्दू मुसलमान की लड़ाई	1809	
पेशवा राज्यान्त बाजीराव	1818	
नागपुरराज्यान्त (मूडाजी)	1818	
इलबर्ट बिल और आर्यों में ऐक्य का बीज	1883	
गवर्नर जेनरल वारेन हेस्टिंग्स	1774-1785 ई.	
मैकफर्सन ब्यारोनेट	1786-1786 ई.	
कॉर्नवालिस	1786-1793 ई.	
सर जान शोर	1793-1798 ई.	
एलुरेड क्लार्क	1798-1798 ई.	
वेल्सली	1798-1805 ई.	
मार्क्विस कॉर्नवालिस	1805-1805 ई.	

मार्लो	1805-1807 ई.
मिन्टो	1807-1813 ई.
हेस्टिंग्स	1813-1823 ई.

घटना	समय	विशेष
जान एडम	1823-1823 ई.	
एमहर्स्ट	1823-1828 ई.	
बेली	1828-1828 ई.	
बेंटिक	1828-1835 ई.	
मेटकॉफ़	1935-1836 ई.	
ओकलैंड	1836-1842 ई.	
एलेनबरा	1842-1844 ई.	
हार्डिग्ज	1844-1848 ई.	
डलहौसी	1848-1856 ई.	
कैनिंग	1856-1862 ई.	
एलगिन	1862-1863 ई.	
रॉबर्ट नेपियर	1863-1863 ई.	
विलियम डेनिसन	1863-1864 ई.	
लारेन्स	1864-1869 ई.	
मेयो	1869-1872 ई.	
स्ट्राची	1872-1872 ई.	
मार्चिस्टून (लॉर्ड नेपियर ऑव)	1872-1872 ई.	
नॉर्थब्रुक	1872-1876 ई.	
लिटन	1876-1880 ई.	
रिपन	1880-1884 ई.	
ब्राह्म मत का प्रचार	1827 ई.	
पहिली पुस्तक छपी	1457 ई.	
एशियाटिक सोसाइटी स्थापन	1748 ई.	
काबुल युद्ध	1842 ई.	
भारत में प्रथम ईस्ट इंडियन रेल का खुलना		1854 ई.
महाराज जंगबहादुर की मृत्यु		1877 ई.
मिस्टर ग्लैडस्टन का जन्म		1809 ई.
गारी बाल्डी का जन्म		1807 ई.
गारी बाल्डी की मृत्यु		1882 ई.
बुद्ध का जन्म		550 ई.पू.

इसके अनन्तर के बड़े लाटों की सूची इस प्रकार है—

घटना	समय	विशेष
डफरिन	1884-1888 ई.	
लैन्सडाउन	1888-1894 ई.	
एल्गिन	1894-1899 ई.	
कर्जन	1899-1904 ई.	
एम्टहिल	1904-1904 ई.	
कर्जन	1904-1905 ई.	
मिन्टो	1905-1910 ई.	
हार्डिंग	1910-1916 ई.	
केम्सफोर्ड	1916-1921 ई.	
रीडिंग	1921-1926 ई.	
अर्विन	1926-1931 ई.	
विलिंग्डन	1931-1936 ई.	
लिनलिथगो	1936-1943 ई.	
वाबेल	1943-1946 ई.	
माउंटबेटन	1946—	
कुष्ट की बीमारी भारतवर्ष में देखी गई	1300 ई.पू. । डॉक्टर राजेन्द्रलाल मित्र लिखते हैं कि कुष्ट की बीमारी ऐत्रे ऋषि के समय में प्रथम भारतवर्ष में दिखाई दी जिसे आज 32 सौ वर्ष हुए होंगे।	

जयपुर राजवंश

नाम	राज्यारम्भ सन	मृत्यु सन
पृथ्वी सिंह	1503	1528 ई.
भारमल्ल	1528	1574 ई.
भगवानदास	1574	1590 ई.
मानसिंह[1]	1590	1615 ई.
भावसिंह	1615	1621 ई.
जयसिंह	1622	1667 ई.
रामसिंह	1667	1699 ई.
जयसिंह	1700	1744 ई.

---

[1] मानसिंह वर्तमान नरेश हैं। यह सूची अधूरी है, बीच बीच में भी नाम छूट गए हैं। मृत्यु के कारण भारतेन्दुजी इसे ठीक नहीं कर सके। (सं.)

ईश्वरीसिंह	1744	1751 ई.
माधोसिंह	1751	1778 ई.
प्रतापसिंह	1779	1803 ई.
जगतसिंह	1803	1819 ई.
रामसिंह	1835	1880 ई.
माधोसिंह	1880	0

भरतपुर के राजाओं का नाम

न.	नाम रईस	गद्दीनशीनी का सम्वत्	देहान्त सम्वत्	मुद्दत हुकूमत
1	बदनसिंह	सम्वत् 1779 चैत सुदी 1	सवंत् 1812 ज्येष्ठ सुदी 10	33 बरस, 2 माह, 10 दिन।
2	सूरजमल	सम्वत् 1812 ज्येष्ठ सुदी 12	सम्वत् 1820 पौष कृष्ण12	8 साल, छः माह, 15 दिन।
3	जवाहिरसिंह	सम्वत् 1820 पौष कृष्ण 13	सम्वत् 1825 श्रावण सुदी 15	4 साल, 7 माह, 17 दिन।
4	रत्नसिंह	सम्वत् 1825 भाद्रपद कृष्ण 1	सम्वत् 1826 चैत्र सुदी 5	7 माह, 20 दिन।
5	केसरीसिंह	सम्वत् 1826 चैत्र सुदी 6	सम्वत् 1834 चैत्र कृष्ण 15	7 साल, 11 माह, 24 दिन।
6	रणजीतसिंह	सम्वत् 1834 चैत्र सुदी 1	सम्वत् 1862 मृगशिर सुदी 15	27 साल, 8 माह, 15 दिन।
7	रणधीरसिंह	सम्वत् 1862 पौष कृष्ण 1	सम्वत् 1880 आश्विन सुदी 4	17 साल, 9 माह, 19 दिन।
8	बलदेवसिंह	सम्वत् 1880 आश्विन सुदी 5	सम्वत् 1881 फागुन सुदी 11	1 साल, 4 माह, 16 दिन।
9	दुर्जनशाल	सम्वत् 1881 चैत्र कृष्ण 9	सम्वत् 1882 पौष सुदी 10	9 माह, 17 दिन।
10	बलवन्तसिंह	सम्वत् 1882 पौष सुदी 11	सम्वत् 1909 फाल्गुन सुदी 10	27 साल, 2 माह, 2 दिन।
11	महाराज जसवन्तसिंह	सम्वत् 1910 आषाढ़ कृष्ण 2	सम्वत् 1942 तक मौजूद	32 साल जारी।

[सन 1884 ई. में भार [redacted]
बाद में राधाकृष्णदास

□□□

[redacted]

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

जन्म : सितम्बर 1850 ई., बनारस के एक समृद्ध वैश्य परिवार में।

शिक्षा : घर और क्वींस कालेज बनारस में स्कूली शिक्षा का सिलसिला अचानक टूट गया लेकिन पढ़ने-लिखने का सिलसिला जारी रहा। शिवप्रसाद 'सितारे हिन्द' जैसे मशहूर व्यक्ति से उन्होंने अंगरेजी पढ़ी।

अल्पायु में पिता की मृत्यु और विवाह से पारिवारिक जिम्मेदारियों में इजाफा पर उनके निर्वहन में पूरी तरह असफल।

अद्भुत साहित्यिक प्रतिभा के धनी, नाटक, काव्य, निबन्ध, कहानी, यात्रावृत्तान्त, अनुवाद आदि अनेक विधाओं में विविध विषयों पर प्रचुर साहित्य का लेखन।

कविवचन सुधा, बालाबोधिनी, हरिश्चन्द्र मैगजीन, हरिश्चन्द्र चन्द्रिका आदि पत्रिकाओं के माध्यम से हिन्दी पत्रकारिता का प्रारम्भ और विकास। धर्म और ईश-भक्ति के प्रचारार्थ अनेक तरह के प्रयास।

निधन : 6 जनवरी, सन 1885 ई.

ओमप्रकाश सिंह

जन्म : सन 1958 ई., उ.प्र. में जौनपुर जिले के एक गांव टड़वां में।

शिक्षा : आरम्भिक शिक्षा गांव और आसपास के विद्यालयों में। उच्च शिक्षा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी में। अक्टू. 1988 से नवम्बर 1990 तक एनसीईआरटी में कार्य। दिसम्बर 1990 ई. से ज.ने.वि०, नयी दिल्ली के भारतीय भाषा केन्द्र में अध्यापन और शोध।

रचनाएं : + आदिकाल एवं मध्यकाल के प्रमुख हिन्दी कवि + प्रेमचन्द के कथा साहित्य में हिन्दू-मुसलिम सम्बन्ध + प्रेमचन्दोत्तर कथा साहित्य और साम्प्रदायिक समस्याएं + आधुनिक काव्यधारा : विचार और दृष्टि + चिन्तामणि भाग-4 (सम्पादन)

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ग्रन्थावली (आठ भागों में सम्पादन)

प्रकाशन संस्थान

4715/21 दयानंद मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली-110002
फोन: 23253234, 65283371, फैक्स: 23287713